

महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्य विरचित श्रीभागवत व्याख्या

तामस इल प्रकरण

सुबोधिनी

(दशमस्कन्ध अन्तर्गत अध्याय १९-३२)



जय श्रीकृष्ण



श्रीवल्लभाधीशो जयति

प्रकाशक : श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट, मांडवी-कच्छ

महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्य विरचित श्रीभागवत व्याख्याः

# तामस इल प्रकरण सुओधिनी

(सुओधिनी अनुसार अध्याय २६-३२  
प्रचलित क्रमानुसार अध्याय २६-३५)

अनुवादक :

गो.वा.श्रीगोविंदलाल हरगोविंद भट्ट



श्रीवल्लभाधीशो जयति

# श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट

श्रीवल्लभाचार्य विद्यापीठ, कुलाभाई पार्क, छालोल, जि.पंचमहाल पिन.३८६३५०.

फोन : ८३१३४ ३६२००

पुष्टिमार्गनी प्राथमिक समज माटे	अन्यभ्यातिवादीया विद्वत्संगोष्ठी	१५०
लेखक: गोस्वामी श्रीशरदकुमाळ	कार्यकारणभावमीमांसा विद्वत्संगोष्ठी	२००
प्रवेशिका, (गुजराती)	१० प्रत्यक्षप्रमाण विद्वत्संगोष्ठी	१५०
प्रवेशिका, (हिन्दी)	१० अन्धकारवाढ विद्वत्संगोष्ठी	२००
Praveshika, (अंग्रेज)	१० वल्लभवेदान्त	निःशुल्क
पुष्टिप्रवेश १-२, (गुजराती)	२०	नित्यस्तोत्रपाठ
पुष्टिप्रवेश १-२, (हिन्दी)	२०	पुष्टिपाठावली (गुजराती) कायं बाईडिंग
पुष्टिपथ, (गुजराती)	३०	पुष्टिपाठावली (गुजराती) नानी साईज
पुष्टिपथ, (हिन्दी)	३०	पुरुषोत्तमसदस्यनामत्रिविधलीवानामावली
प्रमेयरत्नसंग्रह, (गुज.)	५०	अध्ययनोपयोगी ग्रन्थो
Manual of the devotionalpath of Pushti.	श्रीभागवतमहापुराण (चारभाग. महाप्रभु	
श्रीभागवतसुबोधिनी गुजराती भाषान्तर	श्रीवल्लभाचार्य सम्मत अर्थवाणुं	५००
प्रथमस्कन्ध	१००	षोडशग्रन्थ (सरण गुजराती भावार्थ-विवेचन
द्वितीयस्कन्ध	१००	साथे. पेज सं. २३०)
तृतीयस्कन्ध	४००	निःशुल्क
जन्मप्रकरण	१५०	भगवद्गीता
तामस प्रमाण प्रकरण	१२५	१००
तामस प्रमेय प्रकरण	१२५	अनुवादक : श्रीनानुवाल गांधी. शब्दार्थ,
तामस साधन-इण प्रकरण	२२५	स्वोकार्थ, विवेचन, पादानुक्रमणिका, गीतातात्पर्य
साम्प्रदायिक विचारगोष्ठीमां प्रस्तुत थयेला		तथा न्यासादेशविवरण गुजराती अनुवाद साथे.
शोधपत्रो तथा तेना पर थयेल यर्था नुं संकलन		द्रव्यशुद्धि. अपरस-सुतक बाभतनो निर्णय
वार्तापरिचर्या	१५	ग्रन्थ. ले.: गो.श्रीपुरुषोत्तम
अधिकारपरिचर्या	१००	निःशुल्क
साधनाप्रणाली	(अप्राप्य)	भागवत शास्त्र-स्कन्ध-प्रकरण-अध्यायनो
पुष्टिभक्तिमां कथासाधना	(अप्राप्य)	अर्थ. लेखक: श्रीनानुवाल गांधी
शरणागति विचारगोष्ठी	५०	१५०
शरणागति (पूरक प्रश्नोत्तरी)	(अप्राप्य)	श्रीभागवतार्थप्रकरण,
सेवा-समर्पण	५०	अनुवादक:गो.वा.श्रीनानुवाल गांधी. श्रीवल्ल-
जघन्याधिकार	८०	भाचार्य रचित तत्त्वार्थदीपनिबन्ध अन्तर्गतनुं
पुष्टिभक्ति-प्रपत्ति साधनामां प्रतिबन्ध	१००	प्रकरण. श्रीमद्भागवत ना शास्त्र-स्कन्ध-प्रकरण
पुष्टिभक्ति-प्रपत्ति साधनामां इण	१००	अने अध्याय ना अर्थोनुं विस्तृत विवेचन.)
तत्त्वदर्शनविषयक राष्ट्रीय सेमिनारमां प्रस्तुत		श्रीकृष्णचरित्र
थयेल विभिन्न शोधपत्रो तथा यर्था नो संग्रह		१२५
शब्दभंडीया विद्वत्परिचर्या	२००	(दशमस्कन्धनो गुजराती भावानुवाद)
		अनुवादक : गो.वा.श्रीनानुवाल गांधी
		सिद्धान्तनुं आयमन प्रश्नोत्तरी
		निःशुल्क
		साधनप्रकरण
		२५

પુષ્ટિવિધાનમ્-૩(બ્રજભાષા)

૧૫૦

ગો.શ્રીશ્યામ મનોહરજી રચિત ગ્રન્થો

શ્રીવલ્લભાચાર્ય-શ્રીગોપીનાથજી-શ્રીગુસાંઈજી રચિત  
ષદ્ગ્રન્થોંકા શબ્દાર્થ-શ્લોકાર્થ-વિવેચન-  
પાદાનુક્રમણિકા.

પુરુષાર્થવ્યવસ્થા

નિ:શુલ્ક

ભક્તિયોગ(હિન્દી-ગુજરાતી)

નિ:શુલ્ક

પુરુષોત્તમયોગ(હિન્દી-ગુજરાતી)

નિ:શુલ્ક

તત્ત્વાર્થદીપનિબન્ધાન્તર્ગત શાસ્ત્રાર્થપ્રકરણમ્

પુરુષોત્તમ પ્રતિષ્ઠાપ્રકાર

નિ:શુલ્ક

સર્વનિર્ણયપ્રકરણમ્ (બ્રજભાષાટીકા)

૧૦૦

લે:ગો.શ્રીશ્યામ મનોહરજી (શ્રીગુસાંઈજી)રચિત

વેદાન્તચિન્તામણી (હિન્દી અનુવાદ સહિત)

૫૦

સેવ્ય સ્વરૂપને પુષ્ટ કરાવવાની વિધિનું વિસ્તૃત

તથા સત્સિદ્ધાન્તમાર્ટંડ (ગુજરાતી પ્રશ્નોત્તર સંક્ષેપ)

ગુજરાતી વિવેચન)

ગૃહસેવા અને વ્રજલીલા(હિન્દી-ગુજ.) નિ:શુલ્ક

શ્રીગટ્ટલુલજી વિરવિચત.

શ્રીપુરુષોત્તમગ્રન્થાવલી-૫(સંસ્કૃત)

૧૦૦

સેવા : ઋતુ-ઉત્સવ-મનોરથ,

નિ:શુલ્ક

(દશદિગન્તવિજયી ગો.શ્રીપુરુષોત્તમજી રચિત

દ્રવ્યશુદ્ધિદીપિકા, ભક્તિમાર્ગીય અપરાધનિરૂપણ

વિવૃતિ તેમજ ઉત્સવપ્રતાન મૂળ ગ્રન્થો તેમજ

તેનો વ્રજભાષા-હિન્દી-ગુજરાતી અનુવાદ)

શ્રીપુરુષોત્તમગ્રન્થાવલી-૬(સંસ્કૃત)

૨૦૦

લે. : ગો. શ્રીશ્યામ મનોહરજી (ગુજરાતી/હિન્દી)

(દશદિગન્તવિજયી ગો.શ્રીપુરુષોત્તમજી રચિત

ઉપનિષદો, ભગવદ્ગીતા તથા ન્યાસાદેશતાત્પર્ય ની

સંસ્કૃત ટીકા)

તૃતીયસ્કન્ધ સુબોધિની (સંસ્કૃત)

૧૦૦૦

સન્દર્ભ ગ્રન્થો

શ્રીમદ્બ્રહ્મસૂત્રાણુભાષ્યમ્ : સપ્રદીપ-વિવરણમ્.

(સંસ્કૃત) ત્રીન ખંડોંમેં.

૧૦૦૦

પુષ્ટિવિધાનમ્ પાદાનુક્રમણિકા. ૧૦

શ્રીવલ્લભાચાર્ય-શ્રીગોપીનાથજી-શ્રીગુસાંઈજી

રચિત ૨૬ ગ્રન્થોની પાદાનુક્રમણિકા

Summary of Shuddhadvaita  
Vangmaya.

15

Aut.:SriSharad Goswami

મહાપ્રભુ શ્રીવલ્લભાચાર્ય વિરચિત બ્રહ્મસૂત્રાણુભાષ્યં

તથા ઉસપર ભગવદીય શ્રીચ્છારામ તથા ગો.શ્રી

ગિરિધરજી વિરચિત 'પ્રદીપ' તથા 'વિવરણ' ટીકા.

પુષ્ટિઅસ્મિતા સંવર્ધક શિબિર, રાષ્ટ્રીય સંમેલન,

ભરૂચ (પ્રશ્નોત્તરી)

૨૫

શ્રીમહાપ્રભુજી, શ્રીગોપીનાથજી તથા

શ્રીગુસાંઈજીના ગ્રન્થોનો અંગ્રેજીમાં ટુંક પરિચય.

ગોશાળા : મહિલાબાગ પાસે, માંડવી-કચ્છ તથા શ્રીવલ્લભાચાર્ય વિદ્યાપીઠમાં, હાલોલ.

જીર્ણોદ્ધાર : શ્રીબાલકૃષ્ણજીના બેઠકજી. ગામ : વિંજાણ, તા.અબડાસા-કચ્છ

શ્રીવલ્લભાચાર્ય વિદ્યાપીઠ :

શ્રીવલ્લભાચાર્ય નગર, રેફરલ હોસ્પિટલ પાછળ, હાલોલ, જિ. પંચમહાલ.

અધ્યયનોપયોગી ગ્રન્થાલય, આચાર્યભવન, હસ્તલિખિત ગ્રન્થાગાર, અધ્યયનકક્ષ,

છાત્રાલય, વૈષ્ણવ આવાસ, ભોજન, અધ્યાપક વગેરે અત્યાવશ્યક સુવિધાઓથી સુસજ્જ

પુષ્ટિસ્વાધ્યાય :

અઠવાડીયાના લગભગ બધા દિવસ આબાલ-વૃદ્ધ બધા પુષ્ટિમાર્ગીઓ માટે સમ્પ્રદાયના

મૂળ ગ્રન્થોનું અધ્યાપન વિદ્વાન આચાર્યવંશજો દ્વારા ટેલિફોનિક કોન્ફરન્સ માધ્યમથી

કરવામાં આવે છે : વધુ માહિતિ માટે ફોન સમ્પર્ક : ૯૪૨૬૬૨૩૫૬૫

गोस्वामी श्रीश्याम मनोहरजीद्वारा सम्पादित-पुनर्मुद्रित  
शुद्धाद्वैत पुष्टिभक्ति सम्प्रदायके मूल संस्कृत ग्रन्थ

१. सव्याख्यषोडशग्रन्थ

संयुक्तप्रकाशन, दुर्लभ

खंड १. श्रीयमुनाष्टकम् से सिद्धान्तरहस्यम्

खंड २. नवरत्नम् से भक्तिवर्धिनी

खंड ३. जलभेदः से सेवाफलम्

ष. प्रकाश-रश्मि सहित ब्रह्मसूत्राणुभाष्यम्

खंड १. प्रथमाध्याय नाथद्वारा टेम्पलबोर्ड, अतिदुर्लभ

खंड २. प्रथमाध्याय नाथद्वारा टेम्पलबोर्ड, अतिदुर्लभ

खंड ३. द्वितीयाध्याय

खंड ४. तृतीयाध्याय

खंड ५. चतुर्थाध्याय

३. श्रीमद्भागवतसुबोधिनी

खंड १. प्रथम-द्वितीयस्कन्ध

खंड ४. जन्मप्रकरण

खंड ५. तामसप्रमाणप्रकरण

खंड ६. तामसप्रमेय-साधनप्रकरण

खंड ७. तामसफलप्रकरण

खंड ८. राजसप्रमाण-प्रमेयप्रकरण

खंड ९. राजससाधन-फलप्रकरण

खंड १०. सात्त्विकप्रमेयसाधनफलप्रकरण

खंड ११. गुणप्रकरण तथा यावत्प्राच्य

एकादशस्कन्ध

४. तत्त्वार्थदीपनिबन्ध

खंड १. शास्त्रार्थ-सर्वनिर्णयप्रकरण

खंड २. भागवतार्थप्रकरण स्कन्ध १-५

खंड ३. भागवतार्थप्रकरण स्कन्ध ६-१४

५. सव्याख्यषड्ग्रन्थाः

संयुक्तप्रकाशन, दुर्लभ

६. वेदान्ताधिकरणमाला-भावप्रकाशिका

७. विविधविवरणोपेत पत्रावलम्बनम्

८. प्रस्थानरत्नाकर

९. विद्वन्मण्डनम्

१०. श्रीबालकृष्णग्रन्थावली

११. श्रीवल्लभमहाप्रभुस्तोत्राणि

१२. श्रीपुरुषोत्तमप्रतिष्ठाप्रकारः

१३. वल्लभाख्याना (सप्तटीकोपेत)

१४. पुष्टिविधानम्

गुजराती, ब्रज तथा संस्कृत संस्करण

१५. वादावली

ब्रह्मवाद, वादकथा, विग्रहवाद, प्रपंचवाद,

प्रपंचसंसारभेदवाद,

ब्रह्मजीवतदैक्यस्वरूपनिरूपणम्,

विरुद्धधर्माश्रयत्वविवेचनम्, आत्मवादः,

प्रश्नोत्तरसाहस्रीपर्यालोचनम्,

प्रश्नोत्तरसाहस्रीचर्चित-प्रकृत्यधिकरण-

समालोचनम्,

केवलाद्वैतवादाभिमतविद्यास्वरूपविमर्शः,

अक्षरपुरुषोत्तम-द्वैतनिरासवादः

१६. अवतारवादावली

खंड २. भेदाभेदवाद, सृष्टिभेदवाद,

आविर्भावतिरोभाववाद, ख्यातिवाद,

प्रतिबिम्बवाद, अन्धकारवाद.

खंड ३. ब्राह्मणत्वादिदेवतावादः,

जीवव्यापकत्वखण्डनवाद,

जीवप्रतिबिम्बत्व-खण्डनवादः,

भागवतस्वरूपविषयकशंका निरासवादः,

उपदेशादिविषयकशंका निरासवादः, भग

वत्प्रतिकृति-पूजनवादः,

ऊर्ध्वपुण्ड्रधारणवादः,

तुलसीमालाधारणवादः,

शंखचक्रधारणवादः, भक्तिरसत्ववादः,

भक्त्युत्कर्षवादः,

नामफलादिप्रकारवादः,

जयश्रीकृष्णोच्चारणवादः,

स्ववृत्तिवादः, वस्त्रादिसेवावादः,

मूर्तिपूजनवादः, भागवतपाठादेः

शंका निरासवादः.

१७. सत्सिद्धान्तमार्तण्डः. भारतमार्तण्ड-पञ्चनदी

श्रीगोवर्धन(गड्डुलाल)शर्मा विरचित.

१८. वेदान्तचिन्तामणी. भारतमार्तण्ड-पञ्चनदी  
श्रीगोवर्धन(गट्टुलाल)शर्मा विरचित.

४क्र.१, ष तथा ४/१, ४/ष को छोड कर  
सभी ग्रन्थ श्रीवल्लविद्यापीठ-  
श्रीविठ्ठलेश्वर-प्रभुचरण आ.हो.ट्रस्ट  
(कोल्हापुर) द्वारा प्रकाशित.

- वाल्लभवेदान्त निबन्धसंग्रह (हिन्दी)
- पुष्टिप्रवाहमर्यादाभेद (गुजराती)
- विवेक (हिन्दी)
- विशोधनिका (चार खंड) (गुज-हिन्दी)
- पुरुषोत्तमयोग (गुजराती-हिन्दी)
- नवरत्नम् (गुजराती-हिन्दी)
- श्रीयमुनाष्टकम् (हिन्दी)
- सिद्धान्तनुं आचमन (गुजराती)
- सिद्धान्तसूक्ति (गुजराती)
- भगवद्गीतासु भक्तियोग
- वार्तान्की सैद्धान्तिक संगति
- पुरुषार्थव्यवस्था (हिन्दी-गुजराती)
- चतुःश्लोकी (हिन्दी)
- रसदृष्टिनी तरफेणमां (हिन्दी-गुजराती)
- गृहसेवा और ब्रजलीला (गुजराती-हिन्दी)
- ब्रह्मवाद (वादावली सम्पादकीय)
- सेवाकौमुदी/नवधाभक्ति (हिन्दी)
- चिरकुट चर्चा समीक्षा (हिन्दी-गुज)
- पुष्टिमागीय पीठाधीश स्वरूप और कर्तव्य
- अणुभाष्य(साधनफलाध्याय) भूमिका (गुज.)
- नवरत्नोपदेशका मानसविश्लेषण(गुज-हिंदी)
- श्रीवल्लभाचार्यके दर्शनका यथार्थ स्वरूप
- शरणागतिविचारगोष्ठी एक पूरक प्रश्नोत्तरी (गुजराती)
- धर्म-अर्थ-काम-मोक्षकी पुष्टिमागीय विवेचना(हिन्दी-गुजराती)
- भगवत्सेवानो सिद्धान्तशुद्ध प्रकार : एक प्रश्नोत्तरी (गुजराती)
- साकारब्रह्मवाद (तत्त्वचिन्तन भक्ति और संस्कृति विमर्श) (हिन्दी)
- तत्त्वार्थदीपनिबन्धान्तर्गत गुज.)

शास्त्रार्थप्रकरणोपक्रम(गुज.)

- तत्त्वार्थदीपनिबन्धान्तर्गत संक्षिप्त शास्त्रार्थ-  
सर्वनिर्णयप्रकरण तथा विवेकधैर्याश्रय, नवरत्न,  
सिद्धान्तमुक्तावली एवं भक्तिवर्धिनी का गुजराती  
अनुवाद-विवेचन(गुज.)
- श्रीवल्लभाख्या : श्रीमद्भागवतको प्रारूप और  
श्रीवल्लभाख्या
- सूक्तित्रय : सिद्धान्त, उत्सव, भक्ति.
- पुष्टिभक्तिका व्यापारीकरण (कुशंका,  
खिलवाड-समाधान)
- ब्राह्मिक याथार्थ्य और ब्रह्मवाद की  
नानावादानुरोधिता (लघुग्रन्थसंग्रह-२)
- पुष्टिमार्गकी आचार्यत्रयी
- अमृतका आचमन
- गोपीगीत
- नलकूबर-मणिग्रीव स्तुति

**सम्पर्क :**

गोस्वामी श्रीश्याम मनोहरजी,  
ब्रजकमल, ६३ स्वस्तिक सोसायटी,  
४था रास्ता, जुहु स्कीम,  
विलेपार्ले(पश्चिम) मुम्बई-५६  
**लायब्रेरी, श्रीवल्लभ सुखधाम,**  
३रा माला, ठठाई भाटीया सेवा फंड हॉल,  
फ्लय् ऑवर् के सामने, एस्.वी. रोड,  
कान्दीवली, पश्चिम.  
समय : सायं ०४ से ०६.  
सम्पर्क : कृष्णाबेन: ७५०६०८७४६२;  
९८२०१२४५३४

## ॥ प्रकाशकीय ॥

महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्यचरण विरचित श्रीभागवतना दशमस्कन्ध पूर्वधना सुबोधिनीञ्जना 'तामस साधन प्रकरण तेमज तामस इण प्रकरण (अध्याय १९ थी ३२; प्रयलित कमानुसार अध्याय २२ थी ३५) सुबोधिनीना गुजराती अनुवादनुं श्रीवल्लभवाङ्मयना अध्येताओ समक्ष प्रकाशन करतां आनन्द अने कृतार्थता नो अनुभव थर्छ रह्यो छे.

### तामस साधन प्रकरणः

वैष्णवसेवामंडल, मंभर्छना संयावक गो.वा.भगवटीय श्रीयुनिवाल परीभ ना अथक उत्साहपूर्णा प्रयत्नोथी तामस साधन प्रकरणना सुबोधिनीना अनुवादनुं प्रकाशन वि.सं.१९९१ मां करवामा आव्युं हतुं. आनो अनुवाद गो.वा.भगवटीय श्रीधरीजलाल सांकणीया अे क्यो हतो.

आ ग्रन्थना पूर्व संस्करणना प्रकाशनमां अमारा पितामहचरण नि.वी. गोस्वामी श्रीद्वारकेशलालञ्ज (मांडवी-कच्छ) नो सहयोग रह्यो हतो जेनो उल्लेख करतां पूर्वप्रकाशक लभे छे :

प्रभुकृपाअे त्यार पछी मारो सहवास गोस्वामी श्रीद्वारकेशलालञ्ज (कच्छ-मांडवीवाणा) तथा गोस्वामी श्रीव्रजनाथलालञ्ज (योपासेनीवाणा) ...साथे यालु रह्यो... (तेओश्रीना) तरङ्गथी वभतो वभत प्रोत्साहन आपीने ...जे सहकार थयो तेमाटे तेमनो सर्वेनो हुं आत्मार मानुं छुं.

### तामस इण प्रकरणः

तामस इण प्रकरणनी सुबोधिनीना अनुवादनुं प्रकाशन वि.सं.१९९९ मां गो.वा.श्रीवाडीलाल शाह, मुम्भर्छ अे पूनाना गो.वा.श्रीहडमयंद ईश्वरदास नी पेढीना संयावकोना द्रव्यसहयोगथी क्यो हतो. आना अनुवादक अने सम्पादक हता : वडोहरा कॉलेजना संस्कृत प्राध्यापक गो.वा.श्रीगोविन्दलाल हरगोविन्द भट्ट.

आ ञंडमां पणु श्रीसुबोधिनीना अध्ययनमां उपकारक अेवा महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्यचरण विरचित श्रीभागवतार्थ प्रकरणनो संभाधित अंश तथा श्रीरघुनाथचरण विरचित नामयन्द्रिका टीकाना गुजराती अनुवाद सहित श्रीपुरुषोत्तमनामसहस्र स्तोत्रमांना सम्बन्धित नामो तथा ग्रन्थनी विगतवार

અનુક્રમણિકા છાપવામાં આવી છે.

સમ્પૂર્ણ તામસ સાધન તથા ફળ પ્રકરણના સુબોધિનીજીનું પ્રુફરીડીંગ ભરૂચ નિવાસી શ્રીમતી પ્રીતિબેન દલાલે કર્યું છે, ગ્રન્થને પ્રેસમાં મોકલવા લાયક તૈયાર કરવાનું તેમજ છપાવવા નું કાર્ય શ્રીપીયૂષ ગોંધીયા તથા શ્રીપ્રવીણભાઈ એ કર્યું છે જે આ પ્રસંગે અવિસ્મરણીય છે.

કોરોના મહામારીના પ્રતિબન્ધને કારણે સામુદ્રિક પ્રવચન-અધ્યાપનસત્ર આદિ શક્ય ન હોવાને કારણે સમયની પર્યાપ્ત સાનુકુળતા પ્રાપ્ત થતાં ઘણા ગ્રન્થોનું સમ્પાદન-પ્રકાશન સમ્ભવ બન્યું છે.

શ્રીસુબોધિનીના અનુવાદના પ્રકાશનની શૃંખલામાં શેષ રાજસ પ્રકરણ, સાત્વિક પ્રકરણ, ગુણ પ્રકરણ તથા યાવત્પ્રાપ્ય એકાદશ સ્કન્ધ ના સુબોધિનીના અનુવાદનું પણ શીઘ્ર પુનઃપ્રકાશન થઈ જાય એવી પ્રબલ અભિલાષા છે.

શ્રીમત્પ્રભુચરણોત્સવ

શ્રીવલ્લભાચાર્ય ટ્રસ્ટ, માંડવી-કચ્છ દ્વારા

શ્રીવલ્લભાબ્દ ૫૪૨ ; વિક્રમસંવત ૨૦૭૭

શરદ્ ગોસ્વામી





# ॥ अनुक्रमशिका ॥

श्रीभागवतार्थप्रकरणमां निरूपित तामस साधन-इण प्रकरणानो प्रकरणार्थ तथा अध्यायार्थ.

श्रीपुरुषोत्तमनामसहस्र स्तोत्रमां निरूपित तामस साधन प्रकरणाना भगवन्नामो तथा तेना पर श्रीरघुनाथचरण विरचित नामचन्द्रिका टीकानो गुजराती अनुवाद.

## दशमस्कन्धाण्त्तर्गत तामस इण प्रकरण

(श्रीसुबोधिनी अनुसार अध्याय २६-३२)

अध्याय २६. (गोपीजनो साथे भगवाननी रासक्रीडानो आरंभ, गोपीजनो नो गर्व अने तेथी भगवाननुं तिरोधान) २८५

शरदनी रात्रिनुं वर्षन. भगवाननुं अव्यक्त क्लगान. तेने सांभणीने गोपीजनोनुं जे स्थितिमां एता तेमां भगवान पासे पधारवुं. अन्तर्गृहगता गोपीजनोनुं भगवान् साथे सायुज्य. ते विषयमां शंका-समाधान. भगवान् पासे आवेलां दशविध गोपीजनोने प्रति भगवानना मोहक वचनो. भगवानना वचनोथी व्यथित बनेला गोपीजनो नो क्रोध मिश्रित प्रेमथी प्रत्युत्तर. प्रसन्न भगवाननुं गोपीजनो साथे रमण. गोपीजनोने सौभाग्यमद यतां भगवान तिरोहित थयां.

अध्याय २७. (भगवानना तिरोधानथी गोपीजनोनी भगवल्लीलामां तत्परता, भगवाननी शोध अने आन्तरलीला) ३७८

भगवानना तिरोधानथी दुःखी गोपीजनोनुं लीलानुकरण अने भगवानने पामवा वनस्पतिओथी पुष्पपरछ. अयानक भगवच्यरणयिहोनां दर्शन थवां. उन्मत्त गोपीजनोनुं तदात्मक बनी लीलानुकरण. पुनः कोठ वधूना चरणयिहोनी साथे भगवच्यरणयिहोनां दर्शन थतां गोपीजनोनी विकलता. भगवान जेने साथे लठ पधार्या एता ते गीपीने वरिष्ठ होवानुं अभिमान थवुं. तेना सामेथी पण भगवान् तिरोहित थयां. सर्वे गोपीजनोने स्वदोषनुं ज्ञान थवुं. यमुनातट पर आवी भगवदागमननी वाट ज्ञेतां गोपीजनोनुं भगवन्मय बनी भगवाननुं गुणगान करवुं.

अध्याय २८.(गोपीगीत)

४२५

स्वदोषनुं ज्ञान थतां विरल सन्तप्त गोपीजनोनुं भगवद्गुणगान.

अध्याय २९.(गोपीजनोनी दीनताथी भगवाननी प्रसन्नता अने प्राकट्य) ४७५

કૃષ્ણદર્શનની લાલસાવાળા ગોપીજનોનું રુદ્ધન. પ્રસન્ન ભગવાનનું ગોપીજનો વચ્ચે પ્રાકટ્ય. ભગવદ્દર્શનથી ગોપીજનોને પરમોત્સવ અને તેમના શોકની નિવૃત્તિ. ગોપીજનોને લઈને ભગવાનનું યમુનાતટ પર પધારવું. ભગવાને ગોપીજનોની પૂજા સ્વીકારી. ભગવાનમાં કૃતઘ્નતાનો દોષ છે કે નહીં તેનો નિર્ણય કરવા ગોપીજનોએ પ્રશ્ન કર્યો. ભગવાનનો ઉત્તર.

**અધ્યાય ૩૦. (ગોપીજનો સાથે ભગવાનની રાસક્રીડા; પરીક્ષિતની શંકા અને શુકદેવજીએ કરેલું સમાધાન)**

૫૩૫

ભગવાનનો ઉત્તર સાંભળીને ગોપીજનોના વિરહતાપની નિવૃત્તિ. ભગવાનની ગોપીજનો સાથે રાસક્રીડા. જોટલાં ગોપીજનો હતાં તેટલાં રૂપ ધારણ કરી ભગવાનનું ગોપીજનો સાથે રમણ તથા જલક્રીડા. પરીક્ષિતનો પ્રશ્ન: ધર્મસંસ્થાપનાર્થ પ્રકટેલ ભગવાને પરસ્ત્રીસંગનું જુગુપ્સિત કાર્ય કેમ કર્યું? શુકદેવજી દ્વારા પરીક્ષિતનું સમાધાન. ગોપીજનોનું સ્વગૃહે જવું. લીલાશ્રવણનું ફળ.

**અધ્યાય ૩૧. (અન્યાયશ્રયથી થતું દુઃખ, અને તેમાંથી મુક્ત કરનાર ભગવાન.**

**સર્પના ગ્રાસમાંથી નન્દનો ભગવાને કરેલો મોક્ષ. 'સુદર્શન' નામના વિદ્યાધરનો સર્પ યોનિમાંથી મોક્ષ. ભગવાન અને બલદેવજીનું ગાન અને રમણ. શંખચૂડનો વધ.)**

૬૨૫

શિવરાત્રિના અવસરે નન્દરાયજીની અમ્બિકાવનની યાત્રા, સરસ્વતીમાં સ્નાન, શિવ-અમ્બિકાનું પૂજન અને રાત્રિ મુકામ. અજગરનું નન્દરાયજીને ગળવું. ભગવાનના ચરણસ્પર્શથી તેને 'સુદર્શન' નામના વિદ્યાધરના સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ અને તેના દ્વારા શાપની કથાનું વર્ણન. સંકટમુક્ત વ્રજવાસીઓનું વ્રજગમન. રાત્રે બલરામ-કૃષ્ણનો વનમાં ગાયો-ગોપીજનો સાથે વિહાર. કુબેરના અનુચર શંખચૂડ દ્વારા ગોપીજનોનું હરણ. બલરામ-કૃષ્ણને આવતાં જોઈ શંખચૂડનું પલાયન. શ્રીકૃષ્ણ દ્વારા શંખચૂડનો વધ અને તેના માથાપરના મણિને બલરામને આપવું.

**અધ્યાય ૩૨. (યુગલગીત)**

૬૫૭

શ્રીકૃષ્ણના વનમાં પધારતાં કૃષ્ણપ્રવણચિત્તવાળાં ગોપીજનોનું કૃષ્ણગુણનું ગાન કરવું.



મહાપ્રભુ શ્રીવલ્લભાચાર્ય વિરચિત તત્ત્વાર્થદીપનિબન્ધનો

## શ્રીભાગવતાર્થ પ્રકરણ

(ગો.વા.શ્રીનાનુલાલ ગાંધી અનુદિત શ્રીભાગવતાર્થ પ્રકરણમાંથી સંકલિત)

અતસ્તામસભક્તાનામ્ અષ્ટાવિંશતિભિઃ ક્રમાત્ ॥૪૦॥

માન-મૈયૈઃ સાધનૈશ્ચ ફલૈશ્ચાપિ પૃથક્ પૃથક્ ॥

ભગવાન્ સપ્તધા લીલાં કુર્વન્ ઉદ્ધારકઃ પરઃ ॥૪૧॥

પુરુષોત્તમરૂપેણ યચ્ચકાર તદ્દુચ્યતે ॥

પ્રમાણ, પ્રમેય, સાધન અને ફલ થી આમ સાત પ્રકારે જુદી-જુદી લીલા કરતાં તામસભક્તોનો ઉત્તમ ઉદ્ધાર કરનાર ભગવાને પુરુષોત્તમ સ્વરૂપથી જે કર્યું, તે હવે અનુક્રમે અઠાવીસ અધ્યાયોથી કહેવામાં આવે છે.

આ તામસ પ્રકરણના ચાર પેટાપ્રકરણો છે: અ.તામસપ્રમાણ, આ. તામસપ્રમેય ઈ. તામસસાધન અને ઈ. તામસફલ.

તે દરેક સાત-સાત અધ્યાયોના છે. આ પ્રકરણમાં ભગવાને જે લીલા કરી તે વ્યૂહ સ્વરૂપથી કરેલી નથી, પરન્તુ પુરુષોત્તમ સ્વરૂપે જ કરેલી છે. નટની પેઠે પ્રાકૃત મનુષ્યના જેવો દેહ ધારણ કરી આ લીલા કરતાં તામસભક્તોનો ઉત્તમ ઉદ્ધાર કરનાર પુરુષોત્તમે પોતાના સ્વરૂપથી જે લીલા કરી તે આ તામસપ્રકરણમાં કહેલી છે.

### [ઈ. તામસ ફલ પ્રકરણ. અધ્યાય ૨૬-૩૨]

અતઃ પરં સપ્તભિર્વૈ ફલં કૃષ્ણો નિરૂપ્યતે ।

ષડ્ગુણૈઃ સહિતઃ પૂર્વમ્ ઐશ્વર્યં ત્રિવિધં મતમ્ ॥૯૫॥

અહીંથી હવે સાત અધ્યાયોથી છ ગુણો સાથે ફલરૂપ શ્રીકૃષ્ણનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે. આરંભમાં (પહેલા અધ્યાયમાં) ત્રણ પ્રકારનું ઐશ્વર્ય કહેલ હોવાનો નિર્ણય થાય છે.

સાધન પ્રકરણમાં કહેલ પાંચ સાધન કરવારૂપ આસક્તિ ઘણી વધતાં ત્યાર પછી છ ગુણવાળા પૂર્ણ ભગવાનરૂપ ફલ પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી આ ફલ પ્રકરણ કહેવાય છે. પાછલા પ્રકરણોમાં પહેલા છ અધ્યાયોમાં ભગવાનના છ ગુણોનું અને સાતમા અધ્યાયમાં ધર્મીભગવાનનું નિરૂપણ કરેલ, તે ક્રમ આ પ્રકરણમાં નથી. પહેલા (૨૬ મા) અધ્યાયમાં ભગવાનના ત્રણ પ્રકારના ઐશ્વર્યનું નિરૂપણ કરે છે.

‘ધ્વનિનાડ્ડહૂય’વાક્યેન પ્રેષયત્યેવ નિશ્ચિતમ્ ।

ફલે વાક્યં ન કર્તવ્યં દોષશ્ચેદ્ વારયિષ્યતિ ॥૯૬॥

ઈતિ તાસામ્ અગમનં ગર્વેડન્તર્ભાવ ઈર્થતે ।

ભગવાન્ ધ્વનિથી બોલાવીને વાક્યથી જવાનું કહે છે એ નકકી કરેલું છે. ફલ પ્રાપ્તિમાં આજ્ઞા પાળવાની નથી. 'જો દોષ હશે તો ભગવાન્ તેને દૂર કરશે' એવા વિચારથી તેઓ ગઈ નહિ. ગર્વ થવામાં અંદરનો (ભગવાન્ ઉપરનો) ભાવ કારણ હોવાનું કહેલ છે.

ભગવાને વેણુનાદ કરી ગોપીઓને બોલાવી (અ. ૨૬।૩) અને પછી તેઓને ઘેર જવા કહ્યું (શ્લો. ૧૪-૨૭). તેઓ ઘેર ન ગઈ. (શ્લો. ૨૮-૨૯). પછી ભગવાને સ્મરણ કર્યું, ત્યારે તેમને ભગવાન્ ઉપરના અંદરના ભાવને લીધે ગર્વ-માન થયો (શ્લો. ૪૭-૪૮). ૧. વેણુનાદ કરી બોલાવવાની શક્તિ જણાવી, ૨. વચનથી તે કરેલું ન કરેલું કરવાની શક્તિ જણાવી, ૩. પછી ઘેર મોકલવાનું કાર્ય કરી, કરેલું કેરવવાની શક્તિ જણાવી.

અયમેવ હરેર્માર્ગઃ સર્વોત્કૃષ્ટો હિ બુધ્યતામ્ ॥૯૭॥

સમ્બન્ધમાત્રે સમ્જાતે બહિર્વાન્તરથાપિ વા ।

કાચેન મનસા વાપિ વચસા વાપિ સર્વથા ॥૯૮॥

રમયત્યેવ હિ નિજાન્ સર્વથા નૈવ મુચ્યતિ ।

આ જ હરિનો સર્વથી ઉત્તમ માર્ગ હોવાનું જાણો, કે અંદરથી અથવા તો બહારથી માત્ર સમ્બન્ધ થતાં ભગવાન્ કાયાથી મનથી અથવા વાણીથી પણ પોતાના સેવકોને સમ્પૂર્ણ રીતે રમણ કરાવે છે જ, પરન્તુ જરાએ ત્યાગ કરતા નથી.

ભગવાનનો અંદરથી અથવા બહારથી પણ માત્ર સમ્બન્ધ થતાં ભગવાન્ પોતાના સેવકોને કાયા મન અથવા વાણી થી પણ રમણ કરાવે છે જ અને જરાએ તેમનો ત્યાગ કરતા નથી. ગોપીઓને ભગવાનનો બહારથી સમ્બન્ધ થતાં તેમને કાયાથી રમણ કરાવ્યું (અ. ૨૬।૪૨-૪૬), પછી ભગવાન્ અન્તર્ધાન થયા ત્યારે તેમને ભગવાનનો અંદરથી સમ્બન્ધ થતાં તેમને મનથી રમણ કરાવ્યું (અ. ૨૭।૧૫-૨૩), પછી તેમને વાણીથી રમણ કરાવ્યું (અ. ૨૮).

અન્તર્ધાનકથા પ્રોક્તા વાક્યં ચાપિ નિરૂપિતમ્ ॥૯૯॥

અધ્યાયદ્વિતયેનૈવ સકૃદ્ભોગં નિવારયન્ ।

આવિર્ભાવં કરોત્યેષ તથા વાક્યાનિ તુષ્ટયે ॥૧૦૦॥

(એ રીતે ૨૭ તથા ૨૮ એ) બે અધ્યાયોથી ભગવાન્ અન્તર્ધાન થયા ત્યારની કથા કહેલી છે અને વળી ગોપીઓનું વાક્ય પણ જણાવેલ છે. એક વાર ભોગને અટકાવતાં ભગવાન્ પ્રકટ થાય છે અને ગોપીઓને સન્તોષ આપવા વાક્યો કહે છે.

અધ્યાય ૨૯ માં ભગવાન્ અંદરના ભોગને અટકાવી પ્રકટ થાય છે (શ્લો. ૨) અને ગોપીઓ પ્રશ્ન પૂછે છે (શ્લો. ૧૬) તેનો તેઓને સન્તોષ આપવા ઉત્તર કહે છે (શ્લો. ૧૭-૨૨).

રમતે ચ રમાતોઽપિ વિશેષેણ રતિપ્રદઃ ।

પરોક્ષોઽપિ રતિં ચક્રે તેન વીર્યમ્ ઉદીરિતમ્ ॥૧૦૧॥

અને ગોપીઓને રમાથી પણ અધિક રતિ આપનાર ભગવાન તેઓની સાથે રમણ કરે છે. અદૃશ્ય રહેવા છતાં તેમણે રતિ કરેલી, તેથી વીર્ય કહેલું છે.

અ.૩૦ માં ગોપીઓને ભગવાન લક્ષ્મીથી પણ અધિક આનન્દનું દાન કરી તેમની સાથે રમણ કરે છે(શ્લો.૨-૨૬). ભગવાન જ્યારે અદૃશ્ય રહેલા ત્યારે પણ તેમણે ગોપીઓને વિપ્રયોગરસનું દાન કરેલ (અ.૨૭). આ ભગવાનનું વીર્ય દર્શાવે છે.

યશસ્તુ વચનૈઃ સ્પષ્ટં શ્રીશ્યાવિભાવતઃ સ્ફુટા ।

ચતુષ્ટયં નિરૂપ્યાગ્રે ધર્મીકૃષ્ણો નિરૂપિતઃ ॥૧૦૨॥

યશ તો (ગોપીગીતનાં) વચનોથી સ્પષ્ટ છે અને ભગવાન પ્રકટ થયા તેથી શ્રી સ્પષ્ટ જણાય છે. ચાર ગુણો દર્શાવી પછી ધર્મીશ્રીકૃષ્ણ વર્ણવેલા છે.

અ.૨૮, ગોપીગીતનાં વચનોથી ભગવાનનો યશ સ્પષ્ટ જણાય છે. અ.૨૯ માં ભગવાન પ્રકટ થયા એ તેમની શ્રી દર્શાવે છે. (ઐશ્વર્ય એટલે કરવાની, ન કરવાની અને કરેલું ફેરવવાની એવી ત્રણ પ્રકારની શક્તિ અ.૨૬ માં દર્શાવ્યાનું ઉપર કા.૯૬-૯૭ માં કહેલ છે). એવી રીતે ઐશ્વર્ય, વીર્ય, યશ અને શ્રી એ ચાર ગુણો ૨૬-૨૯ સુધીના ચાર અધ્યાયોથી જણાવી, ત્રીસમા અધ્યાયમાં ભગવાન શ્રીકૃષ્ણના સ્વરૂપનું વર્ણન કરેલું છે.

ભોગે મધ્યે મહત્સૌખ્યં તસ્માદ્ એવં નિરૂપિતમ્ ।

સ્વરૂપેણ રતિઃ પ્રોક્તા ન ધર્મે રસરૂપતઃ ॥૧૦૩॥

વચ્ચે ભોગ કરવાથી ઘણું સુખ થાય છે, તેથી એવી રીતે વર્ણન કરેલું છે. ભગવાન પોતે રસરૂપ હોવાથી સ્વરૂપથી તેમણે આનન્દ પ્રાપ્ત કરાવ્યાનું કહેલ છે, ગુણોથી પ્રાપ્ત કરાવ્યાનું કહેલ નથી.

તતો વૈરાગ્યભાવેન ફલદાતા નિરૂપ્યતે ।

કૌતુકેનાપિ પૂર્વેષાં કરણં ન સુખાય હિ ॥૧૦૪॥

પછી વૈરાગ્યગુણથી ફલ આપનારા ભગવાનનું નિરૂપણ કરેલું છે, કારણ કે ધર્મબુદ્ધિથી કરેલાં પણ પહેલાનાં કર્મોથી સુખ થયું ન હતું.

પછી ૩૧ મા અધ્યાયમાં વૈરાગ્યગુણથી ફલ આપનાર ભગવાનનું નિરૂપણ કરેલું છે. પહેલા ધર્મબુદ્ધિથી કરેલા ઈન્દ્રયાગ વગેરે અવૈષ્ણવ કર્મોથી પણ સુખ થયું ન હતું.

અતઃ કૌતુકરીત્યાઽપિ ગતાઃ સર્વે હરાન્તિકે ।

કાલેનાઽઽગ્રસ્તમૂર્ધાનઃ કૃષ્ણેનૈવ વિમોચિતાઃ ॥૧૦૫॥

તેથી વળી ધર્મબુદ્ધિના પ્રકારે સર્વ મહાદેવ પાસે ગયા, તેઓમાંના મુખ્યને કાલે ગળતાં શ્રીકૃષ્ણે જ તેઓને છોડાવ્યા(શ્લો.૯).

અતસ્તત્કર્મ હરિસાત્કૃત્વા વ્રજમુપાયયુઃ ।

તમસિ ત્રિતયં પ્રોક્તં હરિસ્તત્રાધિદૈવિકઃ ॥૧૦૬॥

स तु तूष्णीं भवत्यत्र कालस्त्वाध्यात्मिको मतः ।

हरभृत्यास्तु भूतानि स्त्रीषां हर्ता ततो निशि ॥१०७॥

शंभयूडं ઈતિ પ્રોક્તઃ તં ચ હત્વા વિમોચિતાઃ ।

તેથી તે કર્મ હરિને અર્પણ કરીને વ્રજ આવ્યા. અંધકારમાં ત્રણ કહેલા છે તે પૈકી ૧.હરિ આધિદૈવિક છે, તે તો અહીં શાંત રહેલા છે, ૨.કાલ તો આધ્યાત્મિક વિચારેલો છે, ૩.શંકરના સેવકો તો આધિભૌતિક છે. તેથી ‘શંખચૂડ’ નામનો શંકરનો સેવક મધ્યરાત્રે સ્ત્રીઓને હરનારો કહેલો છે, અને તેને હણીને ભગવાને સ્ત્રીઓને છોડાવી.

તેથી તે કર્મ ભગવાનને જ અર્પણ કરી તેઓ વ્રજ આવ્યા (શ્લો.૧૯). આથી એમ જણાવ્યું છે કે કોઈવાર દૈવગતિથી મૂર્ખાઈને લીધે બીજા દેવના સમ્બન્ધવાળું કાંઈ કર્મ થઈ ગયું હોય, તો પણ તે ભગવાનને અર્પણ કરવું. તમોગુણવાળા સર્વને, શબ્દબ્રહ્મનો આનન્દ પ્રાપ્ત કરાવવા ભગવાને બલભદ્ર સાથે રહી રાસ કર્યો.

આ અધ્યાયમાં ત્રણ કહેલા છે; ૧. આધિદૈવિક ભગવાન છે તે તો અહીં શાંત રહે છે. ગોપો બળતાં લાકડાંથી નન્દને સર્પથી છોડાવવા પ્રયાસ કરે છે, પણ ભગવાન તો શાન્ત રહે છે. સર્વને શબ્દબ્રહ્મનો આનન્દ પ્રાપ્ત કરાવવાનો હોઈ બલભદ્ર સાથે ગાન કરે છે (શ્લો.૨૩), ૨. અધ્યાત્મિક કાલ છે. શબ્દબ્રહ્મ (વેદ)માં કર્મ મુખ્ય છે, અને કર્મ અમુક કાલે જ કરવાનાં હોય છે. તેથી અહીં કાલનું સન્માન કર્યાનું કહેલું છે (શ્લો.૨૨), ૩. શંકરના સેવકો આધિભૌતિક છે. તેઓ પૈકી કુબેરનો સેવક શંખચૂડ મધ્યરાત્રે આવી સ્ત્રીઓને ઉપાડી ચાલતો થયો (શ્લો.૨૫-૨૬), તેને ભગવાને મારી નાખી સ્ત્રીઓને છોડાવી (શ્લો.૩૦-૩૨).

सुदर्शनो यथा ज्वः तथा सत्त्ववरो मणिः ॥१०८॥

કર્મ સ્વસ્મિન્ પ્રતિષ્ઠાપ્ય રામે રત્નં ન્યરૂપયત્ ।

એવં કાલાદિસમ્બન્ધાત્ તામસાન્ સ્વાન્ ન્યવારયત્ ॥૧૦૯॥

જેમ સુદર્શન જીવ હતો તેમ મણિ સત્ત્વવૃત્તિવાળાઓમાં ઉત્તમ હતો. તેથી ભગવાને કર્મ પોતામાં રાખી રત્ન બલભદ્રને આપ્યું. એ પ્રમાણે પોતાના તામસ સેવકોને કાલ વગેરેના સમ્બન્ધથી દૂર રાખ્યા.

તેથી જેમ સુદર્શનનો ચરણથી સ્પર્શ કરી ઉદ્ધાર કર્યો શ્લો.૮-૯ તેમ શંખચૂડના માથામાંથી મણિ કાઢી લીધો. સુદર્શનનો સર્પયોનિમાંથી ઉદ્ધાર કરવાનું અને મણિ શંખચૂડના માથામાંથી કાઢી લેવાનું કર્મ ભગવાને પોતામાં જ રાખ્યું અને રત્ન(મણિ) બલભદ્રને આપ્યો (શ્લો.૩૨). આથી એમ જણાવ્યું છે કે પ્રમાણની પૂર્ણતા કરવા ભગવાન જે કાંઈ કરે છે તે, તે પ્રમાણના અધિષ્ઠાતા બલભદ્રને આપે છે. એ રીતે ભગવાને પોતાના તામસ સેવકોને કાલ વગેરેના સમ્બન્ધથી દૂર રાખ્યા.

पूर्वसिद्धपरित्यागो वैराग्यं कालदोषत; ।

જ્ઞાનં તુ ગુણગાનં હિ પરોક્ષે તત્પ્રતિષ્ઠિતમ્ ॥૧૧૦॥

પ્રત્યક્ષે ભજનં શ્રેષ્ઠમ્ ... ..

કાલના દોષથી પહેલાં જે પ્રાપ્ત થયેલ હોય તેનો ત્યાગ તે વૈરાગ્ય. જ્ઞાન તો ભગવાનના ગુણોનું ગાન છે. ભગવાન્ અદૃશ્ય હોય ત્યારે તે થાય છે. ભગવાન્ પ્રત્યક્ષ હોય ત્યારે ભજન શ્રેષ્ઠ છે.

કાલ (શિવરાત્રિ)ના દોષથી પશુપતિનું પૂજન વગેરે પ્રાપ્ત થયાં. તેનો ત્યાગ ગોપોએ કર્યો, તે વૈરાગ્ય. ભગવાનમાં વૈરાગ્ય ગુણ હોવાથી તેમઅંકતોને પણ વૈરાગ્યવાળા કર્યા. વળી કાલના દોષથી શંખચૂડ પાસેથી મણિ આવ્યો, તેનો પણ ભગવાને ત્યાગ કર્યો, એ પણ ભગવાનનો વૈરાગ્ય ગુણ દર્શાવે છે.

બત્રીસમા અધ્યાયમાં 'જ્ઞાન' ગુણ જણાવેલો છે. ભગવાનના ગુણોનું ગાન તે જ્ઞાન. બત્રીસમા અધ્યાયમાં યુગલગીતથી ગોપીઓ ભગવાનના ગુણોનું ગાન કરે છે, તે તેમનું જ્ઞાન છે. ભગવાન્ અદૃશ્ય હોય ત્યારે તેમના ગુણોનું ગાન (જ્ઞાન) થાય છે, ભગવાન્ ભક્તોને જ્ઞાન પણ કરાવે છે, કારણ કે તેમનામાં તે ગુણ છે. ભગવાન્ જ્યારે પ્રત્યક્ષ હોય ત્યારે તેમનું ભજન(સેવા) કરવું એ શ્રેષ્ઠ છે.

... .. એવં ચેદ્ રોધનં સ્થિરમ્ ।

પુરુષાણાં તથા સ્ત્રીણાં રાત્રૌ ચ દિવસે તથા ॥૧૧૧॥

જ્ઞાનં ભક્તિશ્ચ સતતં ચક્રવત્ પરિવર્તતે ।

જો એ પ્રમાણે નિરોધ સ્થિર થયો હોય તો પુરુષોમાં તથા સ્ત્રીઓમાં જ્ઞાન અને ભક્તિ રાત્રે તથા દિવસે સદા પૈડાની પેઠે ફરી-ફરી આવે છે.

જો નિરોધ સ્થિર થયો હોય તો પુરુષોને રાત્રે (ભગવાન્ અદૃશ્ય હોય ત્યારે) જ્ઞાન અને દિવસે (ભગવાન્ સાથે હોય ત્યારે) ભક્તિ થાય છે; જ્યારે સ્ત્રીઓને રાત્રે ભક્તિ અને દિવસે જ્ઞાન થાય છે. એ રીતે સ્થિર નિરોધમાં જ્ઞાન અને ભક્તિ સદા ચક્રની પેઠે એક પછી એક થયા જ કરે છે.



મહાપ્રભુ શ્રીવલ્લભાચાર્યવિરચિત  
**શ્રીપુરુષોત્તમનામસહસ્ર સ્તોત્રના**  
**નિરોધલીલા-દશમસ્કન્ધ અન્તર્ગત**  
**તામસ ક્ષણ પ્રકરણના નામો**

વેણુવાદ-સ્મરક્ષોભ-મત્ત-ગોપી-વિમુક્તિ-દઃ ॥૮૫૨॥

વેણુવાદ - મનોહર મુરલીનાદને શ્રવણ કરતામાં કામવિકારને પ્રાપ્ત થઈ મદોન્મત્ત બનેલાં ભગવાનનાં સમીપમાં જવાને તૈયાર થયેલાં છતાં આપ્તજનોએ ન જવા દેતા ઘરમાં પૂરી રાખેલાં ગોપીજનોએ પ્રાણોને ત્યાગ કર્યા, તેવાં ગોપીજનોને વિશેષ કરી મુક્તિ ( અહન્તામમતાત્મક સંસારમાંથી છૂટવું જન્મ - મરણ રહિત થવું તે ) આપનાર એવા પ્રભુ. ૧૦૧૨૬।૧૧.

સર્વભાવપ્રાપ્તગોપીસુખસંવર્ધનક્ષમઃ ॥૮૫૩॥

સર્વભાવ - સર્વત્ર ભગવાન જ છે એમ વિચારી અનેક સાંસારિક ભાવનાઓને વિસારી પરમાત્મા શ્રીકૃષ્ણચન્દ્રને શરણ આવેલાં ગોપીજનોના સુખને-રાસોત્સવોથી થનારા આનન્દને સારી રીતે વૃદ્ધિ કરવામાં સમર્થ.

ગોપીર્ગવપ્રણાશાર્થતિરોધાનસુખપ્રદઃ ॥૮૫૪॥

રાસલીલાના મહાન આનન્દથી ગોપીજનોને થયેલા ગર્વ-અભિમાનનો સારી રીતે વિનાશ કરવા તિરોધાન-અન્તર્ધાન( ગુપ્ત થઈ જવું તે ) અર્થાત્ ગોપીજનોના માણસમાંથી અદૃશ્ય થઈને અન્તઃકરણમાં સ્થિતિ કરી સર્વ ગોપાંગનાઓને ( વિરહાનુભવપૂર્વક આસક્તિનું ) ઉત્તમ પ્રકારનું સુખ આપનાર રાસેશ્વર પ્રભુ.

કૃષ્ણભાવવ્યાપ્તવિશ્વગોપીભાવિતવેશધૃક્ ॥૮૫૫॥

શ્રીકૃષ્ણમય સર્વ ભાવનાઓથી આખું વિશ્વ જેમને વ્યાપ્ત થયેલું જણાય છે એવાં ગોપીજનોએ પોતાના હૃદયમાં જેવા-જેવા પ્રકારની લીલા સમ્બન્ધી વેશની ભાવના કરીને સ્મરણ કર્યું તેવા-તેવા પ્રકારનાં વેશોને-સ્વરૂપોને ધારણ કરનાર વિવિધ રૂપધારી શ્રીકૃષ્ણ પૂર્ણ પુરુષોત્તમ.

રાધાવિશેષસમ્ભોગપ્રાપ્તદોષનિવારકઃ ॥૮૫૬॥

શ્રીરાધાજીની સાથે અન્યથી અધિક થયેલા સમ્ભોગ-સંયોગવડે તેમનામાં ઉપજેલા દોષ-ગર્વ-અભિમાનને પ્રથમની માફક અન્તર્ધાન થઈ-ગુપ્ત થઈ નિવારણ કરનાર-દૂર કરનાર એવા શ્રીહરિ.



પરમપ્રીતિસંગીતસર્વાદ્રુતમહાગુણઃ ॥૮૫૭॥

અત્યન્ત પ્રેમમયી ભાવનાઓથી ( અન્તર્ધાન થયા પછી ગોપિકાઓએ ) જેમનું ગાન કરેલું છે એવા, સર્વને મહાન આશ્ચર્યકારક તથા કોઈમાં પણ ન હોઈ શકે તેવા સર્વોત્તમ ગુણોને ધારણ કરનાર શ્રીકૃષ્ણ પ્રભુ.

આ સ્કન્ધની રાસપંચ્યાધ્યાયીમાં ગોપીજનોએ ભગવાનનાં વિપ્રયોગથી પીડા પામતાં ગોપીગીતમાં “જ્યતિ તે અધિકં” વગેરે શ્લોકથી ભગવાનના ગુણોનું ગાન કરેલું છે. ત્યાં જ સર્વને આશ્ચર્ય લાગે તેવાં પ્રભુનાં ચરિત્રો દર્શાવ્યાં છે. તે જ આશયોનું આ નામ છે.

માનાપનોદનાકન્દગોપીદષ્ટિમહોત્સવઃ ॥૮૫૮॥

માન-અભિમાન દૂર થવાથી ભગવાનના વિરહવડે થયેલા આકન્દમાં - રુદનમાં લીન બનેલા વ્રજંગનાઓનાં નયનકમલોને જેમનાથી મહાન ઉત્સવ આનન્દ ( શ્રીકૃષ્ણ પ્રકટ થયા ) થાય છે એવા રાસાભિલાષી શ્રીકૃષ્ણચન્દ્ર.

ગોપિકાવ્યાપ્તસર્વાંગઃ ॥૮૫૯॥

૧. ગોપીજનોમાં જેમનું અંગે - અંગ વ્યાપ્ત થયેલું છે. અર્થાત્ અંગે- અંગો મેળવીને ગોપાંગનાઓને દૃઢ આલિંગન કરનાર,

૨. ગોપિકાઓએ સર્વ અંગોથી જેમને આલિંગન કર્યું છે, એવા શ્રીગોપીજનવલ્લભ શ્રીકૃષ્ણ.

સ્ત્રીસમ્ભાષાવિશારદઃ ॥૮૬૦॥

સ્ત્રી - ગોપીજનોને સારી રીતે પ્રશ્નનો પ્રત્યુત્તર આપવામાં ચતુર - કુશળ.

રાસોત્સવમહાસૌખ્યગોપીસમ્ભોગસાગરઃ ॥૮૬૧॥

૧. રાસોત્સવ - રાસક્રીડામાં ઉત્પન્ન થતું મહાસુખ - અધિક આનન્દ તે સમ્બન્ધી વ્રજવનિતાઓ વિષે સમ્ભોગ અર્થાત્ ઉત્તમ પ્રકારના અનુભવ, સ્વસ્વરૂપાનન્દ સમ્બન્ધી અનુભવ તેના સાગરરૂપ - પરિપૂર્ણ અખંડ આનન્દ સ્વરૂપ એવા રાસવિહારી ગિરિરાજધારી શ્રીપુરુષોત્તમ.

૨. રાસોત્સવના મહાસુખનો ગોપીજનોને સમ્ભોગ - સારી રીતે ઉપભોગ થવા સારું સાગર-સમુદ્ર સમાન પરિપૂર્ણ પરમાત્મા.

જલસ્થલરતિવ્યાપ્તગોપીદષ્ટ્યભિપૂજિતઃ ॥૮૬૨॥

જલ અને સ્થલ એટલે શ્રીયમુનાજી તથા શ્રીવૃન્દાવનમાં રમણ કરવાથી પરિપૂર્ણ રીતે પ્રસન્ન થયેલાં ગોપીજનોની દષ્ટિઓવડે પ્રેમપૂર્વક કટાક્ષ નિક્ષેપ કરવાવડે સર્વ તરફ પૂજાએલા, અલંકૃત થયેલા, શોભાયમાન બનેલા એવા શ્રીકૃષ્ણ પ્રભુ.

शास्त्रानपेक्षकामैकमुक्तिद्वारविवर्धनः ॥८६३॥

१. शास्त्रની અપેક્ષા, મર્યાદાથી રહિત એટલે અલૌકિક દિવ્ય એવા કામની અભિલાષા રૂપ મુખ્ય મુક્તિદ્વારને વિશેષ કરી વધારનાર,

૨. શાસ્ત્રની અપેક્ષા વિના કેવળ સ્નેહવેડે - પ્રેમલક્ષણા ભક્તિવેડે ભગવત્સ્વરૂપમાં કામના-નિષ્ઠા પ્રાપ્ત કરનાર એટલે કે ચિત્તને ઉત્તમ રીતે ભગવદ્રૂપમાં સ્થાપન કરનાર ભક્તજનોને રાસોત્સવ સમ્બન્ધી કથાના કથનરૂપે મુક્તિ મેળવવાના દ્વારરૂપ ઉપાયને વિશેષ રીતે વૃદ્ધિ કરનાર શ્રીપુરુષોત્તમ.

સુદર્શનમહાસર્પગ્રસ્તનન્દવિમોચકઃ ॥૮૬૪॥

‘સુદર્શન’ નામના મહાન સર્પ - અજગરથી ગળાયેલા નન્દરાયજીને વિશેષ મુક્ત કરનાર - છોડાવનાર શ્રીકૃષ્ણ પરમાત્મા.

‘સુદર્શન’ નામનો વિદ્યાધર સૌન્દર્યના ગર્વમાં મદોન્મત્ત થયેલો હોવાથી સર્વનો અનાદર કરતો હતો. એક દિવસે વિમાનમાં બેસી જતા માર્ગમાં આવતાં કદ્રૂપા અંગિરા મુનિને જોઈ રૂપના ગર્વથી છકેલો બની હાસ્ય કરવા માંડ્યું. તે હેતુથી અંગિરામુનિના શાપને લીધે અજગર ભાવને પામેલો તે શાપથી મુક્ત થવા શ્રીનન્દરાયને ગળ્યા એટલે નન્દરાયજીને મૂકાવતાં, શ્રીકૃષ્ણના ચરણનો સ્પર્શ થતાં પુનઃ વિદ્યાધરના સ્વરૂપને પામેલો છે. તેથી અહીં ‘સુદર્શન’ નામનો મહાસર્પ એમ જણાવ્યું. તેનાથી નન્દરાયજીને આપે છોડાવેલા છે. માટે નન્દરાયજીને મુક્ત કરનાર પ્રભુ એમ કથન કરે છે.

ગીતમોહિતગોપીધૃક્શંખચૂડવિનાયકઃ ॥૮૬૫॥

ભગવાનની મુરલીના ગાનથી મોહિત બની ગયેલાં જેથી પ્રભુના સન્નિધાન પધારતાં ગોપીજનોને માર્ગમાં પકડી હરણ કરી જનાર શંખચૂડ નામના પ્રચણ્ડ યક્ષને સારી રીતે નાશ કરનાર - મારનાર મદનમોહન.

ગુણસંગીતસન્તુષ્ટિ ॥૮૬૬॥

ગુણોનું સારી રીતે ગાન કરવાથી સન્તોષ પામનાર એવા પ્રભુ.

જ્યારે શ્રીકૃષ્ણ ગાયોને ચરાવવા દિવસે વૃન્દાવનમાં પધારે ત્યારે પ્રભુમાં પ્રેમનિમગ્ન બનેલાં ગોપીજન વિરહવ્યાકુળ થઈ ઉચ્ચસ્વરથી ગોવિન્દના ગુણોનું ગાન કરતાં હતાં. પરમ દયાનિધાન પોતે વનમાં પધાર્યા છતાં પણ નિરન્તર અન્તર્યામી રૂપે તેમના અન્તરમાં નિવાસ કરી ગુણગાનોને શ્રવણ કરી બહુ જ સન્તુષ્ટ બનતા હતા, અને તેમને પણ સન્તુષ્ટ કરતા હતા. એ હેતુને દર્શાવનાર આ નામ છે.

गोपीसंसारविस्मृतिः ॥८६७॥

१. गोविन्दना गुणगानमां लीन बनेलां गोपीजनने संसार - प्रपञ्चनी  
विस्मृति करावनार-संसारने भूलावनार,

२. गोपांगनाओना हृद्यमन्दिरमां विराज तेमने भगवत्सम्बन्धी साहित्य-  
सामग्रीनुं सारी रीते स्मरण आपनार.

आ प्रकरणमांनां पुरुषोत्तमनामसदसनां नामोनी श्रीरघुनाथजीनी  
टीकानुं भाषांतर संपूर्ण.



# દશમસ્કન્ધ સુબોધિની

## તામસ ફલ પ્રકરણ

(અધ્યાય ૨૬ થી ૩૨)

॥ અધ્યાય છઠ્ઠીસમો ॥

ગોપીજનો સાથે ભગવાનની રાસક્રીડાનો આરંભ, ગોપીજનોનો ગર્વ અને તેથી ભગવાનનું તિરોધાન.

બ્રહ્માનન્દાત્ સમુદ્ધૃત્ય ભજનાન્દયોજને ।

લીલાયાયુજ્યતે સમ્યક્ સા તુર્યે વિનિરૂપ્યતે ॥કા.૧॥

પચીસમા અધ્યાયમાં ભગવાને સર્વ ગોકુલના જીવોને બ્રહ્માનંદનો અનુભવ કરાવ્યો અને તેમાંથી તે સર્વનો ઉદ્ધાર કરીને શ્રીગોપીજનોને ભજનાનંદનું દાન કરવાને માટે તેમણે જે લીલા કરી તેનું યથાર્થ નિરૂપણ ફલપ્રકરણ નામના આ ચોથા પ્રકરણમાં કરવામાં આવે છે. ૧.

લૌકિકસ્ત્રીષુ સંસિદ્ધઃ તદ્દ્વારા પુરુષે ભવેત્ ।

સ્વાનન્દાનુભવાર્થં હિ યોગ્યતાપિ નિરૂપિતા ॥કા.૨॥

આ ભજનાનંદ લોકના સંબંધવાળી-ભગવાનથી અન્ય લોકમાં વિવાહ સંબંધવાળી-સ્ત્રીઓમાં, શ્રીગોપીજનમાં, સારી રીતે સિદ્ધ થાય છે; અને આ કથાના શ્રવણથી શ્રીગોપીજનના જેવો ભાવ ઉત્પન્ન થતાં પુરુષમાં પણ આ ભજનાનંદનો રસ સિદ્ધ થઈ શકે છે. ભગવાનનો આનંદ શ્રીગોપીજન અનુભવી શકે તેટલા માટે ભગવાને તેમને બ્રહ્માનંદનું દાન કરીને લક્ષ્મીજીની તુલ્ય બનાવ્યાં અને તે પ્રકારે ભગવાનની સાથે રમણ કરવાની તેમની યોગ્યતાનું પણ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. લક્ષ્મીજીને પણ જે રસ દુર્લભ છે તે રસ શ્રીગોપીજન અનુભવે છે એટલે તેમની રમણને માટે યોગ્યતા સ્પષ્ટ છે. વળી ભગવાનની પ્રસાદ-અનુગ્રહ-રૂપી શક્તિએ શ્રીગોપીજનમાં પ્રવેશ કરેલો છે એટલે પ્રભુની સાથે સંબંધ બાંધવામાં તેમની યોગ્યતા રહેલી છે. ગોપોમાં આ પ્રકારની યોગ્યતા ન હોવાથી ભગવાનની સાથે રમણ કરવાનો તેમને અધિકાર નથી. ૨.

તતો હિ ભજનાનન્દઃ સ્ત્રીષુ સમ્યગ્ વિધાર્થતે ।

તદ્દ્વારા પુરુષાણાં ચ ભવિષ્યતિ ન ચાન્યથા ॥કા.૩॥

તેથી ભજનાનંદ સ્ત્રીઓમાં સારી રીતે સ્થાપન કરવામાં આવે છે, અને તેમની કૃપાથી અથવા તો ભગવાનની પ્રસાદરૂપી શક્તિના પ્રવેશથી પુરુષો પણ આ ભજનાનંદનું પાન કરી શકે છે; બીજે કોઈ પણ પ્રકારે પુરુષો ભજનાનંદનો અનુભવ કરી શકતા નથી. ૩.

સ્ત્રિય એવ હિ તં પાતું શક્તાસ્તાસુ તતઃ પુમાન્ ।

અતો હિ ભગવાન્ કૃષ્ણઃ સ્ત્રીષુ રેમે દ્વલર્નિશમ્ ॥કા.૪॥

જ્યાં ભગવાનની પ્રસાદરૂપી શક્તિનો પ્રવેશ હોય અથવા તો શ્રીગોપીજન જેવા ભક્તોનો અનુગ્રહ હોય ત્યાં પણ સ્ત્રીત્વ વિના ભજનાનંદના રસનો અનુભવ થઈ શકતો નથી; એટલે ભગવાનમાં રહેલા આનંદનું પાન કેવળ સ્ત્રીઓ જ કરી શકે છે, અને સ્ત્રીઓ આ આનંદનું પાન કરી લે ત્યાર પછી પુરુષરૂપ ભગવાન તે સ્ત્રીઓમાં તે જ આનંદ-રસનું પાન કરી શકે છે. તેથી ભગવાન કૃષ્ણ રાત્રિ અને દિવસ સ્ત્રીઓની સાથે રમણ કર્યા કરે છે. ૪.

બાહ્યાભ્યન્તરભેદેન આન્તરં તુ પરં ક્લમ્ ।

તતઃ શબ્દાત્મિકા લીલા નિર્દૃષ્ટા સા નિરૂપ્યતે ॥કા.૫॥

રમણ બે પ્રકારનું છે-બાહ્ય અને આંતર. તેમાં આંતર રમણ બાહ્ય રમણ કરતાં શ્રેષ્ઠ છે અને તેથી તે ફલરૂપ છે. જેમ જગતમાં નામ અને રૂપ એ બે વિભાગ છે તેમ લીલામાં પણ નામ અને રૂપ એ બે વિભાગ છે; અને તેમાંની ભગવાનના ગુણગાન રૂપી જે દોષરહિત નામલીલા છે તે આ ફલપ્રકરણના સાતમા અધ્યાયમાં નિરૂપણ કરવામાં આવી છે, અને પ્રવૃત્તિરૂપ જે સદોષ શબ્દાત્મિકા લીલા છે તેનું વર્ણન આ પ્રકરણના છઠ્ઠા અધ્યાયમાં કરવામાં આવેલું છે અને અહિં શંખચૂડના વધનું વર્ણન કરવાથી લીલા નિર્દૃષ્ટ થાય છે. આ પ્રમાણે પ્રવૃત્તિરૂપ અને નિવૃત્તિરૂપ નામલીલાનું વર્ણન આ પ્રકરણના છેલ્લા બે અધ્યાયોમાં કરેલું છે. ૫.

૧. “મહા ઈત્યપિ પાઠઃ”.

તતો રૂપપ્રપચ્ચસ્ય પચ્ચધા રમણં મતમ્ ।

આત્મના પ્રથમા લીલા મનસા તુ તતઃ પરા ॥કા.૬॥

ભગવાનનું રૂપ પાંચ પ્રકારનું છે અને તેથી પંચાત્મક રૂપનું દાન પાંચ પ્રકારે સંભવે છે, એટલે આ રમણ પાંચ પ્રકારનું માનવામાં આવેલું છે. છઠ્ઠીસમા અધ્યાયમાં આત્મા વડે પ્રથમ લીલા કરવામાં આવી છે અને સત્તાવીસમા અધ્યાયમાં બીજી લીલા મન વડે કરવામાં આવી છે. ૬.

૨. “માનસીત્યપિ પાઠઃ”.

વાકપ્રાણૈસ્તુ તૃતીયા સ્યાદ્ ઈન્દ્રિયૈસ્તુ તતઃ પરા ।

શારીરી પચ્ચમી વાચ્યા તતો ડ્વં પ્રતિષ્ઠિતમ્ ॥કા.૭॥

અઠાવીસમા અધ્યાયમાં વાણી અને પ્રાણ વડે ત્રીજી લીલા, અને ઓગણ-ત્રીસમા અધ્યાયમાં ઈન્દ્રિયો વડે ચોથી લીલા કરવામાં આવી છે. ત્રીસમા અધ્યાયમાં પાંચમી લીલા શરીરની છે. આ પ્રમાણે પાંચ પ્રકારની ડ્વંપલીલાનું પાંચ અધ્યાયોમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે; અથવા તો છઠ્ઠીસથી તે ત્રીસ સુધીના દરેક અધ્યાયમાં પાંચ પ્રકારની ડ્વંપલીલાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે એમ પણ માની શકાય. આ પ્રમાણે ભગવાનને પ્રિય એવાં શ્રીગોપીજનમાં ભગવાનનું પંચાત્મક સ્વરૂપ સ્થિર થયું, અર્થાત્ ભગવાને પોતાના પૂર્ણ સ્વરૂપના આનંદનું દાન શ્રીગોપીજનને કર્યું. ૭.

ષડ્વિંશે તુ હરિઃ પૂર્વ જીવાનાનન્દ્યત્ સ્વયમ્ ।

તે ચેત્ સમર્પિતાત્માનઃ તત્રોપાયશ્ચ ડ્વંપ્યતે ॥કા.૮॥

છઠ્ઠીસમા અધ્યાયમાં ભગવાને પોતે જ પહેલાં જીવોને આનંદ આપ્યો. જો ભક્તો સર્વાત્મભાવવાળા હોય તો જ તે સ્વરૂપાનંદના રસનું પાન કરી શકે છે, અન્યથા નહિ. આ સર્વાત્મભાવનું દાન પણ ભગવાન્ પોતે જ કરે છે, અને તે દર્શાવવાને માટે રમણ કરવાની ઈચ્છા, ચંદ્રનો ઉદય, ગાન અને નિષેધવચનોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. ૮.

આત્મા યાવત્ પ્રપત્તો ભૂત્ તાવદ્ વૈ રમતે હરિઃ ।

સોઽન્તઃ કરણસમ્બન્ધી તિરોધત્તે હરિશ્ચ સઃ ॥કા.૯॥

જ્યાં સુધી આત્મા ભગવાનને શરણે રહે છે ત્યાં સુધી ભગવાન્ તેની સાથે રમણ કરે છે. ભગવાન્ અંતઃકરણના સંબંધી છે. ભગવાનને મેળવવાનો એક જ ઉપાય છે અને તે તેમનું સર્વભાવપૂર્વક શરણ. આ સર્વભાવશરણ અંતઃકરણનો ધર્મ છે. અને જ્યાં સુધી અંતઃકરણમાં સર્વભાવપ્રપત્તિ આવી ન હોય ત્યાં સુધી ભગવાન્ મળતા નથી. તે તો તિરોહિત થઈ જાય છે. ૯.

ભજનાનંદનું નિરૂપણ કરવાને માટે સ્ત્રીઓમાં પોતાનો આનંદ સ્થાપવો જોઈએ; એટલે રમણને માટે ભગવાને ઈચ્છા કરી એમ શુકદેવજી પહેલાં કહે છે:

॥શ્રીશુક ઉવાચ ॥

ભગવાનપિ તારાત્રીઃ શરદોત્કુલ્મલ્લિક્ષિકાઃ ।

વીક્ષ્ય રન્તું મનશ્ચક્રે યોગમાયામ્ ઉપાશ્રિતઃ ॥૧॥

શુકદેવજી કહે છે: શરદ્ ઋતુમાં વિકાસ પામેલાં મલ્લિકાના પુષ્પોવાળી તે રાત્રીઓને જોઈને ભગવાને પણ યોગમાયાનો આશ્રય કરીને રમવાનું મન કર્યું. ૧.

‘તમે આ રાત્રીઓમાં મારી સાથે રમણ કરજો’ (ભાગ.૧૦|૧૯|૨૭) એ પ્રમાણે કુમારિકાઓને રમણ કરવાને માટે ભગવાને જે રાત્રિઓનું વરદાન આપેલું હતું તે રાત્રિઓનું ભગવાને ગ્રહણ કર્યું અને બધીય લૌકિક રાત્રિઓમાં તે આધિદેવિક રાત્રિઓનો આરોપ કર્યો. તે રાત્રિઓ પૂર્ણ હોવાથી તેમને પૂર્ણિમાની રાત્રિઓ બનાવી. ભગવાને ઋતુ પણ શરૂ જ બનાવી અને તે ઋતુના કાર્યરૂપે મલ્લિકાનાં પુષ્પો પણ બનાવ્યાં. આ પ્રમાણે રસને ઉદ્દીપન કરે એવી બધી સામગ્રી ભગવાને ઉત્પન્ન કરી અને પછીથી રમણ કરવાને માટે પોતાનામાં રહેલા આનંદને પ્રકટ કરનાર અને કામના પિતામહ મનને ઉત્પન્ન કર્યું. (મનને કામનો પિતામહ કહેવામાં આવે છે, કારણ કે કામને ઉત્પન્ન કરનાર સંકલ્પ અને સંકલ્પને ઉત્પન્ન કરનાર મન છે.) ભગવાનમાં વ્રજસ્ત્રીઓની સાથે રમણ કરવાનો જે સંકલ્પ રહેલો છે તે તેમણે બધીય વ્રજસ્ત્રીઓને ગાન દ્વારા જણાવવો જોઈએ. વ્રજસ્ત્રીઓને આ સંકલ્પ જણાવવાના કાર્યમાં ગાન સાધન છે અને વેણુ સહાયભૂત છે. પછીથી આ ગાનમાં કામનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. તેથી પહેલાં ભગવાને રમણ કરવાનું મન કર્યું-ઈચ્છા કરી. જો કે આ પ્રકારથી બીજે પ્રકારે પણ ભગવાન્ પોતાનામાં રહેલો આનંદ વ્રજસ્ત્રીઓમાં સ્થાપી શકે એમ છે, છતાં પણ રસશાસ્ત્રની મર્યાદાનું પાલન થાય એ હેતુથી ભગવાને પણ મન કર્યું.

શંકા- ઉપર કહ્યું તે પ્રમાણે ભગવાનમાં રહેલો આનંદ રમણ દ્વારા ભગવાન માંથી વ્રજભક્તોમાં જાય તો પોતાના મૂલ સ્થાનનો ત્યાગ થાય અને તેથી તે આનંદ વિકૃત થઈ જાય; અને પછીથી તે સ્વરૂપમાંથી પણ ચ્યુત-ભ્રષ્ટ થઈ જાય અને તેથી તે પૂર્ણ પુરુષોત્તમનો આનંદ કહેવાય નહિ. (અને તેમ થાય તો પછી એવા વિકૃત અને સ્વરૂપચ્યુત આનંદનું વ્રજભક્તોમાં સ્થાપન કરવામાં કોઈ જાતનું પ્રયોજન રહ્યું નહિ.)

સમાધાન- આ પ્રમાણે શંકા થાય તો શુકદેવજી પોતે કહે છે કે ‘યોગમાયામુપાશ્રિતઃ’-ભગવાને યોગમાયાનો આશ્રય લીધો છે. યોગમાયા એક સ્થલે જે સ્થિતિમાં પદાર્થ હોય છે તે જ સ્થિતિમાં તે પદાર્થને બીજે સ્થલે લઈ જાય છે. જેમ બલદેવજીના જન્મપ્રસંગે ભગવાનની આજ્ઞાથી યોગમાયા દેવકીજીના ગર્ભને તેજ સ્થિતિમાં લઈ જઈ રોહિણીજીમાં સ્થાપન કરે છે, જેમ મથુરામાં રહેલા આનંદરૂપ પ્રભુને પોતે પ્રકટ થઈ ગોકુલમાં સ્થાપે છે, તેમ પહેલાં ગોપોના ઘરમાં રહેલી શ્રુતિરૂપા ગોપીઓને હવે ભગવાનમાં સ્થાપે છે અને ભગવાનમાં રહેલા આનંદને શ્રુતિરૂપામાં સ્થાપે છે. યોગમાયાનો આશ્રય લેવો એ કાંઈ અપૂર્વ વાત નથી;

કારણ કે પહેલાં પણ (દશમસ્કંધના બીજા અધ્યાયમાં) ભગવાને લીલાને માટે યોગમાયાનો આશ્રય લીધો છે અને તે દ્વારા બલદેવજીનો ગર્ભ રોહિણીજીમાં સ્થાપ્યો છે. જેમ વેદરૂપી પ્રમાણની બાબતમાં અને રક્ષણ કરવાના કાર્યમાં ભગવાન બલભદ્રનો ઉપયોગ કરે છે તેમ ભજનાનંદનું દાન કરવાના કાર્યમાં તે યોગમાયાનો ઉપયોગ કરે છે. (દશમસ્કંધના અગીઆરમા અધ્યાયમાં વત્સાસુરનો પ્રસંગ આવે છે, અને ત્યાં વત્સનો વધ કરવો એ અનુચિત છે એમ શંકા થતાં વેદરૂપ બલદેવજીની સંમતિને માટે તે તરફ બલદેવજીનું ધ્યાન ખેંચવામાં આવે છે.) તેમાં પણ જે અંતરંગ યોગમાયા છે તે એક સ્થલે રહેલા પ્રમાણને બીજા સ્થલે યોગ્ય રીતે ઘટાવે છે, અને એક સ્થલે રહેલા આનંદને બીજે સ્થલે બરોબર સ્થાપે છે; તેથી ભવિષ્યકાળમાં જગતમાં બે માર્ગોનો પ્રચાર થશે:—એક પ્રમાણાતિરિક્ત માર્ગનો અને બીજો ભક્તિમાર્ગનો.

ભગવાને જે રાત્રીઓ રમણને માટે જ બનાવી હતી તે જ રાત્રિઓનું તેમણે આ પ્રસંગે ગ્રહણ કર્યું. જો આ પ્રમાણે ન કર્યું હોત અને સાધારણ રાત્રિઓનો સ્વીકાર કર્યો હોત તો આખા જગતમાં બધેય આનંદ પ્રકટ થઈ જાય.

શરદ્ ઋતુમાં ઉત્કુલ્લ-વિકસિત-થએલાં છે મલ્લિકા પુષ્પો જેમાં એવી રાત્રિઓને ભગવાને બરોબર જોઈ અને રમણને માટે મન કર્યું, અને યોગમાયાનો સમીપમાં જ આશ્રય લીધો. ૧.

ભગવાને જે નવું મન ઉત્પન્ન કર્યું તેમાં તેનો અધિષ્ઠાતા દેવ ન હતો, અને જે વસ્તુમાં અધિષ્ઠાતા દેવ ન હોય તે વસ્તુ પોતાનું કાર્ય કરી શકતી નથી, તેથી ભગવાને મનના અધિષ્ઠાતા દેવ ચંદ્રને ઉત્પન્ન કર્યો એમ શુકદેવજી કહે છે :

તદોદુરાજઃ કકુભઃ કરૈર્મુખં પ્રાચ્યા વિલિમ્પન્નરુણેન શન્તમૈઃ ॥

સ ચર્ષણીનામુદગાત્ શુચો હરન્ પ્રિયઃ પ્રિયાયા ઈવ દીર્ઘદર્શનઃ ॥૨॥

જેમ લાંબે કાળે મળેલો પતિ પોતાની પ્રિયાનો શોક દૂર કરે છે તેમ શાંત કિરણોની રતાશથી પૂર્વ દિશાના મુખને લેપન કરતો ચંદ્રમા ઉદય પામ્યો અને લોકોના તાપને દૂર કરવા લાગ્યો. ૨.

ભગવાને જે સમયે મન કર્યું તે જ સમયે મનનો અધિષ્ઠાતા દેવ, નક્ષત્રોનો રાજા, ચંદ્ર, ઉદય પામ્યો. જો કે બધી રાત્રિઓનું દર્શન એક જ સમયે થએલું છે, છતાં પણ તે બધી રાત્રિઓ એક પછી એક એમ ક્રમ પ્રમાણે આવે છે; એટલે બહુ રાત્રિઓમાં એક જ ચંદ્રથી નિર્વાલ થાય છે અને ભગવાન પણ આગળ ઉપર ‘આ રાત્રિ’ એ પ્રમાણે કહે છે. ભગવાનના મનનો અધિષ્ઠાતા દેવ ચંદ્ર આધિદૈવિક છે



એટલે તે પૂર્ણ અને કલંકરહિત છે. મનનો આવિર્ભાવ થાય કે તરત જ ચંદ્રનો આવિર્ભાવ થાય છે, ક્રીડા બંધ થાય કે તરત જ ચંદ્ર પણ સ્થિર થાય છે અને આકાશના મધ્ય ભાગ સુધી જ જાય છે, પણ કોઈ દિવસ ચંદ્રનો અસ્ત થતો નથી. વળી જેનો ઉદય થયો છે તે ચંદ્ર છે, અને વ્રજસ્ત્રીઓનાં મન નક્ષત્ર જેવાં છે, એટલે ચંદ્ર સ્ત્રીઓનાં મનરૂપી નક્ષત્રોનો પણ રાજા બની તેમનું રક્ષણ કરે છે. આ લીલાને માટે જ ચંદ્રનો પ્રથમ ઉદય થયો છે એટલે પૂર્વ દિશામાં જ ચંદ્ર ઉદય પામ્યો છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. અને શ્રુતિ પણ કહે છે કે ‘તે-પૂર્વ દિશા-દેવોની દિશા છે.’ પૂર્વ દિશાનો દેવ અને અધિપતિ ઈન્દ્ર છે. હમણાં તો ભગવાન્ જ ઈન્દ્ર છે એટલે ભગવાનના રેતસૂ-વીર્ય-રૂપ ચંદ્રનો પૂર્વ દિશામાં ઉદય થયો. તેથી પૂર્વ દિશાના મુખને-મધ્યભાગને-પોતાનાં કિરણો વડે રંગીને ચંદ્ર ઉદય પામ્યો. રાત્રિના સમયે પૂર્વ દિશાના મધ્યભાગમાં રતાશ ન હતી, જ્યારે પૂર્વ દિશાની સ્પર્ધા કરનારી પશ્ચિમ દિશામાં સૂર્યના સંબંધથી રતાશનો સંભવ હતો, તેથી આ પૂર્વ દિશાના મધ્યભાગને પણ કુંકુમના જેવાં કિરણોથી રાતો બનાવવામાં આવ્યો છે. જો ચંદ્ર પોતાની દિશાના-પૂર્વ દિશાના-મુખને રાતું ન બનાવે તો ભગવાનનું મન પણ સ્ત્રીઓનાં હૃદયને રંજિત કરી શકે નહિ. કિરણો શંતમ છે-શીતલતાને લીધે તાપનું હરણ કરનારાં છે. વળી અરુણ-રાતા-ગુણને લીધે તે કિરણો અત્યંત કલ્યાણરૂપ છે. અરુણ રાગપ્રધાન છે. પુરુષ પણ જો અનુરાગ-સ્નેહ-થી સ્પર્શ કરે તો સુખ થાય છે.

શંકા- જો આ ચંદ્ર માત્ર મનના અધિષ્ઠાતા દેવ તરીકે જ હોય તો પછી તેનો ઉદય મનમાં જ થવો જોઈએ. જો અંધકાર દૂર કરવાના પ્રયોજન માટે ચંદ્રનો ઉદય થયો હોય તો ભગવાન્ પોતે જ અંધકારને દૂર કરી શકે એમ છે. જો રસના ઉદીપનને માટે ચંદ્રનો ઉદય છે તો ભગવાન્ પોતે જ રસનું ઉદીપન કરી શકે એમ છે. તો પછી આ ચંદ્રના ઉદયનું શું પ્રયોજન-અસાધારણ કાર્ય-છે તે કહેવાની જરૂર છે.

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ચંદ્ર ઉદય પામીને લોકોનો શોક દૂર કરે છે. ચર્ષણીઓ સર્વત્ર પરિભ્રમણ કરનારી શક્તિઓ છે. તેઓ બધેય સ્થળે ડર્યાં પણ કોઈ પણ ઠેકાણે તેમને પરમાનંદનો સંબંધ થયો નહિ. જો કોઈ સંસારમાંથી મુક્ત થાય અને મોક્ષ મેળવે તો પણ આ ચર્ષણી શક્તિઓનો તે મોક્ષમાં પણ પ્રવેશ થતો નથી, કારણ કે મોક્ષ પહેલાં જ તેઓ ત્યાંથી પાછાં ફરે છે. મોક્ષાવસ્થામાં મુક્ત આત્માને પરિભ્રમણ હોતું નથી એટલે ચર્ષણીરૂપી પરિભ્રમણ-શક્તિઓનો તે અવસ્થામાં ઉપયોગ રહેતો નથી. તેથી આ શક્તિઓનો શોક હજુ સુધી વિદ્યમાન છે જ, ગયો નથી. અથવા તો મૂલ શ્લોકમાં ‘સચર્ષણીનામ્’ એ પ્રમાણે

અન્વય કરવો. આ પ્રમાણે અન્વય કરવાથી 'સચર્ષણીનામ્' એ પદનો અર્થ 'ચર્ષણી સહિત જીવો' થશે. ચર્ષણીશક્તિઓનો શોક હમણાં જ, ચંદ્રનો ઉદય થયો ત્યારે જ, જતો રહ્યો. પરિભ્રમણ કરાવનારી ચર્ષણીશક્તિઓનો રાસક્રીડામાં નૃત્યાદિ ભ્રમણમાં ઉપયોગ હોવાથી તે શક્તિઓ જતી રહેતી નથી, પણ પરિભ્રમણશક્તિ-વાળી વ્રજસ્ત્રીઓને રાસમાં પરમાનંદનો અનુભવ થવાનો છે એવું જાણવાથી ચર્ષણીઓનો શોક દૂર થાય છે. જે શક્તિસહિત જીવો છે તેમને જ પરમ આનંદનો અનુભવ થવાનો છે. સાધારણ રીતે તે સમયના રાસલીલામાં અંગીકાર કરવામાં આવેલા જીવો પરિભ્રમણશક્તિવાળા હતા. જ્યારે ચંદ્રનો ઉદય થયો ત્યારે તે જીવોને પરમાનંદનો અનુભવ અવશ્ય થવાનો જ. આ પ્રમાણે ચંદ્રના ઉદયનાં ત્રણ પ્રયોજનો છે :

૧. પૂર્વ દિશાના મુખનું સંમાર્જન કરવું,
૨. ચર્ષણીશક્તિઓનો શોક દૂર કરવો, અને
૩. અંધકારને દૂર કરવો વિગેરે કાર્ય.

પહેલાં બે પ્રયોજનો મૂલ શ્લોકમાં સ્પષ્ટ શબ્દોમાં જણાવેલાં છે, છતાં પણ આ બંને પ્રયોજનો એક જ વસ્તુ-ચંદ્રનો ઉદય-સિદ્ધ કરે છે એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી પતિ અને પ્રિયાનું ઉદાહરણ આપે છે. લાંબે કાળે દર્શન થયું છે જેનું એવો પ્રિય-પતિ-દીર્ઘદર્શન કહેવાય છે. લાંબે કાળે આવેલો પ્રિય ભર્તા પોતાની પ્રિય અને પતિવ્રતા સ્ત્રીનો શોક દૂર કરે છે અને તેના મુખનું બરોબર માર્જન કરે છે. પૂર્વ દિશાના મુખનું માર્જન અને ચર્ષણીશક્તિઓના શોકની નિવૃત્તિ ચંદ્રના ઉદય વિના સંભવી શકતાં નથી. ૨.

આ પ્રમાણે શુકદેવજીએ મન અને તેના અધિષ્ઠાતા દેવ ચંદ્રની ઉત્પત્તિનું વર્ણન કર્યું. હવે સ્વામિનીજીઓમાં સંકલ્પ ઉત્પન્ન થાય એટલા માટે મન (અને તેનો અધિષ્ઠાતા ચંદ્ર) વેણુનાદના શબ્દનું કારણ છે એમ શુકદેવજી નિરૂપણ કરે છે અને કહે છે કે ચંદ્રના દર્શનથી વેણુનાદ ઉત્પન્ન થયો :

દદ્ધ્વા કુમુદ્વન્તમ્ અખણ્ડમણ્ડલં રમાનનાભં નવકુકુમારુણમ્ ।

વનં ચ તલ્કોમલગોભિરન્નિતં જગૌ કલં વામદશાં મનોહરમ્ ॥૩॥

પૃથ્વીમાં સર્વત્ર આનંદ ઉત્પન્ન કરનાર, અખંડિતમંડલવાળા, લક્ષ્મીજીના મુખના જેવી શોભાવાળા તથા નવા કુંકુમ જેવા રાતા ચંદ્રને, અને તેના કોમલ કિરણોથી રંગાએલા વનને દેખીને, સુંદર દષ્ટિવાળી સ્ત્રીઓનાં મનને હરણ કરે એવું અવ્યક્ત અને મધુર ગાન ભગવાને કર્યું. ૩.

કુમુદાન્ એટલે ચંદ્ર. ચંદ્ર પૃથ્વીમાં બધેય ઠેકાણે આનંદ ઉત્પન્ન કરે છે એટલે

તેને કુમુદ્રાન્ કહેવામાં આવે છે. ચંદ્ર આખાય વિશ્વમાં આનંદ ઉત્પન્ન કરી શકે છે તેનું કારણ કે તે ‘અખણ્ડમાણ્ડલ’ છે એમ શુક્રદેવજી કહે છે. અખંડમંડલ એટલે જેનું મંડલ ખંડિત નથી તે. રસ ઉત્પન્ન કરવામાં આ ચંદ્ર આલંબનવિભાવરૂપ પણ છે એમ દર્શાવવાને શુક્રદેવજી ચંદ્રનું ‘રમાનનાભ’ એ પ્રમાણે વર્ણન કરે છે. ભગવાનને જ્યારે રમણ કરવાની ઈચ્છા થઈ ત્યારે રસની પૂર્તિને માટે તેમણે લક્ષ્મીજીરૂપ નાધિકાને-બ્રહ્માનંદને-ઉત્પન્ન કર્યો. ચંદ્ર આ બ્રહ્માનંદનું રમણ કરવાનું સ્થાન છે એટલે રસને પૂર્ણ કરવાને માટે તેનો-ચંદ્રનો-પણ ઉદય થયો. આ પ્રમાણે ચંદ્ર લક્ષ્મીજીનો ભાઈ થાય છે એટલે ચંદ્રની શોભા લક્ષ્મીજીના મુખની શોભા જેવી છે. તેથી ચંદ્રને ‘રમાનનાભ’ કહેવામાં આવેલો છે. વળી નવા કુંકુમની માફક આ ચંદ્રનો રંગ રાતો છે એટલે આ કારણથી પણ તે ચંદ્ર રસને પ્રકટ કરવામાં ઉદ્દીપનવિભાવરૂપ થાય છે. આ ઉપરથી એટલું સમજાય છે કે વિવાહ વખતે જેવું લક્ષ્મીજીનું મુખ હતું તેવો જ આ વખતે ચંદ્ર છે. તેથી આ ચંદ્ર નવા કામને ઉત્પન્ન કરે છે. વળી વન પણ રસનું પોષણ કરનાર છે. ચંદ્રનાં કોમલ કિરણોથી-અલ્પ કિરણોથી-આ વન ચારેય બાજુ રંગાએલું છે. કિરણો રસ ઉત્પન્ન કરનારાં છે અને તેમનું વનમાં જ પાલન કરવા યોગ્ય છે એ બે ભાવ દર્શાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં કિરણોને માટે ‘ગો’ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે. પહેલાં ચંદ્રને ‘રમાનનાભ’ તરીકે વર્ણવામાં આવ્યો છે, એટલે જેમ લક્ષ્મીજીનાં નવાં નવાં કટાક્ષો ભાવને ઉત્પન્ન કરે છે તેમ આ ચંદ્રનાં કિરણો પણ ભાવ ઉત્પન્ન કરે છે એમ દર્શાવવાને માટે પણ મૂલમાં ‘ગો’ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે. ‘ગો’ પદનો અર્થ ઈન્દ્રિય પણ થાય છે એટલે તેથી ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. હમણાં ભગવાને શ્રીગોપીજનોમાં ફક્ત ભાવ જ ઉત્પન્ન કર્યો છે, અને આ ભાવનું પોષણ આગળ ઉપર જ્યારે સ્વામિનીજીઓ આવશે અને બીજી ક્રિયાઓ કરશે ત્યારે થશે એ અર્થ દર્શાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘કોમલ’ એ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે. જ્યારે ચંદ્ર વનને પણ રાતું બનાવે છે ત્યારે જે શ્રીગોપીજનોને માટે આ ચંદ્રનો ઉદય થયો છે તે ચંદ્ર તેમનામાં રાગ-રનેહ કેમ ઉત્પન્ન ન કરે? ચંદ્ર અને વનને જોઈને ભગવાને સંકલ્પથી કામ ઉત્પન્ન થતાં બધું કાર્ય થશે એમ વિચારી અવ્યક્ત અને મધુર ગાન કર્યું. ગાન વામદક્-સુંદર દષ્ટિવાળી-સ્ત્રીઓનાં મનને હરણ કરનારું હતું. શ્રુતિ પણ કહે છે કે ‘સ્ત્રીઓ ગાન કરનાર માણસને ચાહે છે.’ આ બધાનો અર્થ એટલો જ કે ગીત વડે ભગવાને બધાં શ્રીગોપીજનોને બોલાવ્યાં. જો ભગવાને વ્યક્ત-સ્પષ્ટ-અને મધુર ગાન કર્યું હોત તો શ્રીગોપીજનો તે ગાનનું જ શ્રવણ કરતાં કરતાં ગોકુલમાં જ રહ્યાં હોત અને ભગવાનની પાસે ન આવ્યાં હોત. જે ભક્ત પુષ્ટિમાર્ગને અનુસરીને

ભગવાનનું ભજન કરે છે તે ભક્તની દષ્ટિ ઉત્તમ કહેવાય છે. જે ગોપીજનોની દષ્ટિ ઉત્તમ ન હતી તેમને તો ભગવાને બોલાવ્યાં જ નહિ. આ ભાવ સ્પષ્ટ કરવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં 'વામ' પદ મૂકવામાં આવેલું છે. ૩.

વેણુનાદ થયા પછી બધાં શ્રીગોપીજન આવ્યાં એમ શુકદેવજી નીચેના શ્લોકમાં કહે છે:

નિશમ્ય ગીતં તદ્ અનુગ્વર્ધનં વ્રજશ્ચિયઃ કૃષ્ણગૃહીતમાનસાઃ ।

આજ્ઞમુરન્થોન્યમ્ અલક્ષિતોદ્યમાઃ સ યત્ર કાન્તો જવલોલકુણ્ડલાઃ ॥૪॥

કામને વધારનાર તે ગીતનું શ્રવણ કરીને, કૃષ્ણમાં જ જેમનું મન ગએલું છે, જેમણે એક બીજાના ઉદ્યમો જાણ્યા નથી, અને વેગને લીધે જેમનાં કુંડલો હાલે છે એવાં વ્રજસ્ત્રીઓ જ્યાં કાન્ત-ભગવાન-હતા ત્યાં આવ્યાં. ૪.

પહેલાં ભગવાને કુમારિકાઓને જ અલૌકિક રાત્રિઓમાં રમણ કરવાનું વરદાન આપેલું હતું. તેને અનુસરીને જો કે ભગવાને એકલાં કુમારિકાઓને જ બોલાવ્યાં હતાં છતાં પણ બધાંય શ્રીગોપીજન ત્યાં આવ્યાં, કારણ કે કુમારિકાઓએ અને બીજાં ગોપીજનોએ જે ગાન સાંભળ્યું તે સરખું જ હતું, કારણ કે તે બધાંનો નિરોધ કરવાનો હતો. વળી ભગવાને જે ગાન કર્યું તે અનંગને-કામને જ વધારે છે, પણ અંગનો-દેહાદિનો તો નાશ જ કરે છે. આ પ્રમાણે વેણુનાદ ભક્તોના જૂના દેહનો લય કરી નવો અલૌકિક દેહ અને પ્રપંચ ઉત્પન્ન કરે છે. ગાન શ્રવણ કર્યા પછી નવો જ-પહેલા કરતાં વધારે ઉત્કટ જ-કામ ઉત્પન્ન થયો અને તે કામે ગોપીજનોને ભગવાનની પાસે આણ્યાં. વળી વ્રજની સ્ત્રીઓ તો પહેલેથી જ ભગવદીય હતી; તેથી તેમનું મન કૃષ્ણે જ ખેંચી લીધું હતું. તેથી જ્યાં કૃષ્ણ ભગવાનરૂપી કાન્ત હતા ત્યાં તરત જ તે ગોપીજનો આવ્યાં. આ રીતે જેમને બોલાવવામાં આવ્યાં હતાં તે કુમારિકાઓ જ પ્રથમ આવ્યાં એમ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે કુમારિકાઓને પ્રભુ મુખ્ય કાન્ત હતા.

આ કારણથી એક બીજાનો ઉદ્યમ તે કુમારિકાઓ જાણી શક્યાં નહિ. દરેક કુમારિકાએ ભગવાનનો પતિ તરીકે સ્વીકાર કર્યો હતો. મૂલમાં જે 'સઃ' પદ છે તે પહેલાં જે કાન્તનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તેને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યું છે. કુમારિકાઓ ઉતાવળથી આવતી હતી એટલે તેમનાં કુંડળ હાલતાં હતાં એમ કહી શુકદેવજી એમ દર્શાવવા માગે છે કે કુંડળો હાલવાથી કાનને જે દુઃખ થતું હતું તેનું અનુસંધાન વ્રજસ્ત્રીઓને ન હતું અને તેથી તેમને પોતાના શરીરનો વિચાર પણ થયો નથી. આ સ્ત્રીઓ ગૌડદેશની હતી. કુમારિકાઓ ગૌડ દેશમાંથી જ આવી હતી.

પહેલાં મથુરા દેશમાં રહેનારી અનાગરી-નગરમાં ન રહેનારી, ગામડામાં રહેનારી અર્થાત્ વ્રજમાં રહેનારી-સ્ત્રીઓ પણ કુંડળો જ ધારણ કરતી હતી. અથવા તો કુંડળનો અર્થ 'કર્ણનું ભૂષણ' જ એ પ્રમાણે કરવો. ૪.

અહિં બે પ્રકારના પક્ષ સંભવે છે. એક પક્ષ તો એ કે ભગવાને એકલાં કુમારિકાઓને જ મુખ્યત્વે બોલાવ્યાં; અને બીજો પક્ષ એ કે ભગવાને કોઈ પણ પ્રકારના ભેદ વિના બધાંય શ્રીગોપીજનોને બોલાવ્યાં. જો પહેલો પક્ષ સ્વીકારવામાં આવે તો પ્રસંગવશાત્ બીજાં પણ ગોપીજનો ભગવાનની પાસે આવ્યાં એમ નીચેના શ્લોકનો અર્થ થાય; અને જો બીજો પક્ષ સ્વીકારવામાં આવે તો અનેક જાતની ક્રિયા કરતાં ગોપીજનો આવ્યાં એમ શ્લોકનો અર્થ થાય. શુકદેવજી કહે છે કે :

દુહન્ત્યોભિયયુઃ કાશ્ચિત્ દોહં હિત્વા સમુત્સુકાઃ ।

પયોધિશ્ચિત્ય સંયાવમ્ અનુદ્વાસ્યાપરાયયુઃ ॥૫૧॥

કેટલાંક ગોપીજનો જે ગાયને દોહતાં હતાં તે બહુ ઉત્સુક થઈને દોહવાનું કામ પડતું મૂકીને ભગવાનની પાસે આવ્યાં; કેટલાંક ચૂલા ઉપર દૂધ ઉકળતું રહેવા દઈને આવ્યાં, અને કેટલાંક ઘઉંની ખીર ચૂલા ઉપરથી ઉતાર્યા વિના આવ્યાં. ૫.

તેમાં નિર્ગુણ સોળ હજાર કુમારિકાઓથી જૂદાં અને નવ પ્રકારનાં કેટલાંક ગોપીજનો આવ્યાં. અથવા તો દસ પ્રકારનાં ગોપીજનો ભગવાનની પાસે આવ્યાં. સત્ત્વ, રજસ્ અને તમસ્ એ ત્રણ ગુણો છે. ગુણનો અર્થ આ બધા પ્રકરણમાં 'ભાવ' કરવાનો છે. આ ત્રણ ગુણોમાંના દરેક ગુણમાં પાછા સત્ત્વ, રજસ્ અને તમસ્ એ પ્રમાણે ત્રણ ગુણો રહેલા છે; આ પ્રમાણે બધા મળીને ગોપીજનોના નવ પ્રકાર થાય છે. દશમો પ્રકાર નિર્ગુણ ગોપીજનોનો છે. જાતિધર્મ, કુલધર્મ અને લોકધર્મ-એ પ્રમાણે ત્રણ ધર્મોવાળાં ત્રણ ત્રણ ગોપીજનોનું આ સ્થલે વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. આ રીતે પણ ગોપીજનોના નવ પ્રકાર સિદ્ધ થાય છે. તેમાં ગોપજાતિના ધર્મવાળાં જે ગોપીજનો છે તે દૂધની સાથે સંબંધ ધરાવનારાં છે. ગોપજાતિના ધર્મવાળાં ત્રણ પ્રકારનાં ગોપીજનો દૂધની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને નાશ કરે છે અને પ્રથમ તેમનું વર્ણન આ પાંચમા શ્લોકમાં કરવામાં આવેલું છે. આ ત્રણ પ્રકારનાં ગોપીજનોનું યૂથ રાજસી છે. તેમાં જે ગોપીજનો દૂધ દૂલે છે અને તે રીતે દૂધની ઉત્પત્તિ કરે છે તે રાજસરાજસી છે; જે ગોપીજનો દૂધને ચૂલા ઉપર મૂકે છે અને તે રીતે દૂધની સ્થિતિ સિદ્ધ કરે છે તે સાત્ત્વિકરાજસી છે; અને જે ગોપીજનો ઘઉંની ખીરને ચૂલા ઉપરથી ઉતાર્યા વિના ચાલ્યા ગયાં છે અને તે રીતે જમણે દૂધનો નાશ કર્યો છે તે તામસરાજસી છે. આ દરેક પ્રકારનાં ગોપીજનોનાં પણ યૂથ છે એમ જણાવવાને

શુકદેવજીએ મૂલ શ્લોકમાં ‘દુલ્નત્ય:’ વિગેરેમાં બહુવચનનો પ્રયોગ કરેલો છે. કેટલાંક રાજસરાજસી ગોપીજનો દૂધ દહોતાં દહોતાં જ દહોવાનું કામ વચમાં જ મૂકી દઈને ભગવાનની પાસે ચાલ્યાં ગયાં. ગાય અને વાછરડાને બાંધવામાં આવેલાં છે, દોહવાના પાત્રમાં અડધું દૂધ દહોવાએલું છે. આ સમયે દહોવાનું કાર્ય કોઈ પણ રીતે છોડી શકાય એમ નથી. આવા બારીક સમયે પણ આ રાજસરાજસી ગોપીજનો ભગવાનની સમીપ ચાલ્યાં ગયાં. આ પ્રમાણે તે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ચાલ્યાં ગયાં તેનું કારણ એ કે તે ઘણાં ઉત્સુક થઈ ગયાં હતાં. સમુત્સુક એટલે બહુ જ ઉત્સુક; અર્થાત્ ગોપીજનો એમ માનવા લાગ્યાં કે કોણ જાણે એક ક્ષણ પછી ભગવાન ક્યાં જતા રહેશે; આ કારણથી તે ઘણાં ઉત્સુક બની ગયાં હતાં. બીજાં કેટલાંક સાત્ત્વિકરાજસી ગોપીજનો દૂધને ચૂલા ઉપર મૂકીને જ ભગવાનની પાસે ચાલી ગયાં. ભોજનને માટે દૂધની અંદર ઉકાળેલા ઘઉંને ‘સંયાવ’ કહેવામાં આવે છે. અર્થાત્ ‘સંયાવ’ એટલે ઘઉંની ખીર. જ્યારે આ ખીર બળી જાય ત્યારે તો બધાંનો નાશ જ થઈ જાય. ‘સંયાવ’ શબ્દ મૂલ શ્લોકમાં વાપરવામાં આવેલો છે તેનો અર્થ બરોબર ઉકળેલી અને ચઢી ગએલી ઘઉંની ખીર એ પ્રમાણે જ કરવાનો છે. એટલે કે આવી ઉકળી ગએલી અને પકવ બનેલી ઘઉંની ખીરને ચૂલા ઉપરથી નીચે ઉતાર્યા વિના જ બીજાં કેટલાંક તામસરાજસી ગોપીજનો ભગવાન પાસે ચાલ્યાં ગયાં. મૂલ શ્લોકમાં ‘અપરા:’ એ શબ્દ છે તેનો ભાવ એવો છે કે બધેય શ્રીગોપીજનો સત્ત્વ, રજસ્ અને તમસ્ એ ત્રણ ગુણોને લીધે જુદા જુદા સ્વભાવનાં છે. આ પ્રમાણે આ શ્લોકમાં ગોપજાતિના ધર્મવાળાં સાત્ત્વિક, રાજસ અને તામસ એમ ત્રણ પ્રકારનાં રાજસી ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. ૫.

નીચેના શ્લોકમાં શુકદેવજી કુલધર્મવાળાં સાત્ત્વિક ગોપીજનોનાં ત્રણ યૂથનું વર્ણન કરે છે:

પરિવેષયન્ત્યસ્તદ્ લિત્વા પાયયન્ત્ય: શિશૂન્ અથ ।

શુશ્રૂષન્ત્ય: પતીન્ કાશ્ચિદ્ અશનન્ત્યોપાસ્ય ભોજનમ્ ॥૬॥

કેટલાંક ગોપીજનો પીરસતાં હતાં તે પીરસવાનું કામ છોડી દઈને ભગવાનની પાસે ચાલ્યાં ગયાં; બીજાં કેટલાંક ગોપીજનો બાળકોને ધવડાવતાં હતાં તે ધવડાવવાનું કામ છોડી દઈને ભગવાનની પાસે ચાલ્યાં ગયાં; કેટલાંક ગોપીજનો પતિની સેવા કરતાં હતાં તે પતિની સેવા છોડી દઈને ચાલ્યાં ગયાં; અને બીજાં કેટલાંક ગોપીજનો ભોજન કરતાં હતાં તે ભોજનનો ત્યાગ કરીને ચાલ્યાં ગયાં. ૬.

પતિ અને બાળકોની સેવા કરવી એ સ્ત્રીઓનો ધર્મ છે. તેમાં ભોજન સમયે

અને શયન સમયે પતિની જે સેવા કરવામાં આવે છે તે સ્ત્રીઓનો સ્વધર્મ છે. વળી તદ્દન નાનાં બાળકોને સ્તનપાન કરાવવું તે પણ સ્ત્રીઓનો સ્વધર્મ છે. પીરસવાની ક્રિયા એ સૃષ્ટિ જ છે, કારણ કે ભોજન દ્વારા રેતસૂ-વીર્ય-ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે પીરસનારાં ગોપીજનો રાજસસાત્ત્વિક છે. બાળકોને સ્તનપાન કરાવવાની ક્રિયા એ તેમનું રક્ષણ કરવા બરોબર છે, એટલે સ્તનપાન કરાવનારાં ગોપીજનો સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક છે. બાકી રહેલી પતિની સેવા તામસ છે, કારણ કે પતિસેવામાં ભોગ મુખ્ય હોય છે એટલે પારમાર્થિક બુદ્ધિનો નાશ થાય છે, અને નાશ કરવું એ તમોગુણનું કાર્ય છે. આ પ્રમાણે પતિની સેવા કરનારાં ગોપીજનો તામસસાત્ત્વિક છે. આ બધાંય ગોપીજનોની બાબતમાં એક વાત લક્ષમાં રાખવાની કે તે બધાં જે જે કાર્યો કરતાં હતાં તે તે કાર્યોનો ત્યાગ કરીને ભગવાનની પાસે ગયાં. અને તે તે કાર્યો ત્યાગ કરનારાં ગોપીજનો ભિન્નભિન્ન છે એમ સમજવાનું છે. હવે લોકધર્મવાળાં તામસી ગોપીજનોનું શુકદેવજી ‘અશ્નન્ત્યોડપાસ્ય ભોજનમ્’ વિગેરે શબ્દોમાં નિરૂપણ કરે છે. અર્થાત્ કેટલાંક ગોપીજનો ભોજન કરતાં હતાં તે ભોજનનો ત્યાગ કરીને ભગવાનની પાસે ચાલી ગયાં. ભોજનનો ત્યાગ કરીને ચાલી ગએલાં ગોપીજનો રાજસતામસ છે. ૬.

**વિમ્પન્ત્યઃ પ્રમૃજન્ત્યોડન્યા અઞ્નન્ત્યઃ કાશ્ચ લોચને ।**

**વ્યત્યસ્ત-વશ્ચાભરણાઃ કાશ્ચિત્ કૃષ્ણાન્તિકં યયુઃ ॥૭॥**

કેટલાક ગોપીજનો શરીરનું અનુલેપન કરતાં કરતાં, અથવા તો જમીન લિપતાં લિપતાં, કેટલાંક સ્નાન કરતાં કરતાં, કેટલાક આંખ્યો આંજતાં આજતાં, અને કેટલાંક જેમનાં વસ્ત્રો તથા આભરણ ઉલટ સુલટ થઈ ગયાં છે તેવાં ગોપીજનો કૃષ્ણની પાસે ચાલ્યાં. ૭.

કેટલાંક ગોપીજનો લિપન કરતાં હતાં, એટલે પોતાના શરીરનું અનુલેપન કરતાં હતાં, આ ગોપીજનો સાત્ત્વિકતામસ છે. બીજાં ગોપીજનો પ્રમાર્જન કરતાં હતાં, એટલે કે ઉદ્ધર્તન-શરીરને લેપન-કરતાં હતાં. આ ગોપીજનો તામસતામસ છે. અથવા તો ‘વિમ્પન્ત્યઃ’ અને ‘પ્રમૃજન્ત્યઃ’નો બીજો અર્થ પણ સંભવી શકે છે: અને તે એ કે ‘વિમ્પન્ત્યઃ’ એટલે ઘર લિપતાં લિપતાં અને ‘પ્રમૃજન્ત્યઃ’ એટલે આભરણો અથવા વાસણોને સાફ કરતાં કરતાં. આ ગોપીજનોની બાબતમાં પણ પહેલાંની માફક રાજસ, સાત્ત્વિક અને તામસ એ પ્રકારે ક્રમ રહેલો છે.

આ પ્રમાણે અત્યાર સુધીમાં રાજસ, સાત્ત્વિક અને તામસનાં મુખ્ય યૂથનું, અને તે દરેક યૂથમાં પાછા રાજસ, સાત્ત્વિક અને તામસ એ પ્રકારના ત્રણ વિભાગોનું

વર્ણન કરવામાં આવ્યું. શ્રીગોપીજનોનાં રાજસ, સાત્ત્વિક અને તામસ એ પ્રકારનાં ત્રણ યૂથો થવાનું કારણ એ છે કે કેટલાંક ગોપીજનો શરીરની સેવા કરે છે, કેટલાંક ગોસેવા કરે છે અને કેટલાંક પતિસેવા કરે છે. તેમાં શરીરસેવા કરનારાં ગોપીજનો તામસ છે, ગાયની સેવા કરનારાં ગોપીજનો રાજસ છે અને પતિની સેવા કરનારાં ગોપીજનો સાત્ત્વિક છે. શરીરસેવા કરતાં ગોસેવા મુખ્ય છે અને ગોસેવા કરતાં પતિસેવા મુખ્ય છે. ભોજન, લેપન અને પ્રમાર્જન કરનારાં ગોપીજનો શરીરસેવા કરે છે; ગાયને દોહનારાં, દૂધને ચૂલા ઉપર મૂકનારાં અને ઘઉંની ખીરને ચૂલા ઉપર ઉકળતી રાખનારાં ગોપીજનો ગોસેવા કરનારાં છે; અને પતિને પીરસનારાં, બાળકોને સ્તનપાન કરાવનારાં અને પતિની સેવા કરનારાં ગોપીજનો પતિસેવા કરનારાં છે, અને તેથી આ બધાં ગોપીજનો અનુક્રમે તામસ, રાજસ અને સાત્ત્વિક છે.

‘કેટલાંક ગોપીજનો આંખ્યો આંજતાં-આંજતાં ચાલ્યાં ગયાં’ આ પ્રકારે ગુણાતીત-નિર્ગુણ-ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. તેથી મૂલ શ્લોકમાં ‘કાશ્ચ લોચને’-કેટલાંક આંખ્યો આંજતાં-એમ કહીને શુકદેવજી સૂચન કરે છે કે આવા પ્રકારના ગુણાતીત ભક્ત થવાનો અધિકાર દુર્લભ છે. દોહન વિગેરે ક્રિયાઓ કરતાં આંખમાં અંજન કરવાની ક્રિયા અંતરંગ છે, અને શરીરને બીજાં આભૂષણોથી શોભાયમાન કર્યું હોય છતાં પણ જો અંજન ન હોય તો શરીરની શોભા પૂર્ણ થતી નથી, તેથી અંજન બીજી બધી ક્રિયાઓ કરતાં મુખ્ય છે; અને આ મુખ્ય ક્રિયાનો ત્યાગ કરવો અશક્ય છે; છતાં પણ આ ગોપીજનોએ આવી મુખ્ય અને આવશ્યક અંજનરૂપી ક્રિયાનો ત્યાગ કર્યો તે જ બતાવી આપે છે કે આ અધિકાર દુર્લભ છે. આ ગોપીજનો જ્ઞાનમાર્ગનું શોધન કરનારાં છે એટલે તેમને નિર્ગુણ કહેવામાં આવે છે.

આ ગોપીજનો ભગવાનની પાસે આવ્યાં તે વખતે તેમને પોતાના દેહનો પણ વિચાર આવ્યો ન હતો; અને જ્યારે દેહનો વિચાર ન હતો તો પછી તેમને લજ્જા વિગેરે દેહના ધર્મોનો તો વિચાર ક્યાંથી જ આવી શકે?—આ બધો ભાવ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ગોપીજનોનાં વસ્ત્રો અને આભરણો ઉલટાં સુલટાં થઈ ગયાં હતાં. વ્યત્યસ્ત-ઉલટાં સુલટાં-થઈ ગયાં છે વસ્ત્રો અને આભરણો જેમનાં એવાં ગોપીજનો ‘વ્યત્યસ્તવસ્ત્રાભરણાઃ’ કહેવાય છે. બધાંય ગોપીજનોનો આ પ્રકારનો ઉદ્યોગ સરખો જ હતો. કેટલાક ટીકાકારો એમ કહે છે કે વ્યત્યાસ એટલે રસ્તામાં ચાલવું તે-અર્થાત્ રસ્તે ચાલતાં વસ્ત્ર અને આભરણ ઉલટાં સુલટાં થઈ ગયાં. જેમનાં વસ્ત્રો અને આભરણો ઉલટાં સુલટાં થઈ ગયાં છે એવાં ગોપીજનો



માંથી પણ કેટલાંક ગોપીજનો કૃષ્ણ ભગવાનની પાસે ગયાં અને કેટલાંક ન ગયાં.

જે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે આવવાને માટે તૈયાર થયાં હતાં છતાં પણ પોતાના પતિઓએ ઘરની બહાર જવાનું ના કહેવાથી પતિની આ આજ્ઞાનો જ વિચાર કરવા લાગ્યાં તે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે આવી શક્યાં નહિ. પણ જે ગોપીજનોએ પતિની આજ્ઞાનો વિચાર કર્યો નથી, જેમણે કોઈ પણ પદાર્થની અપેક્ષા રાખી નથી અને જેમનાં વસ્ત્ર અને આભરણરૂપી દેહના આવશ્યક ધર્મો વિપરીત-ઉલટાં સુલટાં-થઈ ગએલા છે એવાં ગોપીજનો કૃષ્ણ ભગવાનની પાસે આવ્યાં. ૭.

બધાં ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ન ગયાં તેનું કારણ શુકદેવજી નીચેના શ્લોકમાં આપે છે :

તા વાર્યમાણાઃ પતિભિઃ પિતૃભિઃ પુત્રબન્ધુભિઃ ।

ગોવિન્દાપહ્તાત્માનો નન્યવર્તન્ત મોહિતાઃ ॥૮॥

તે ગોપીજનોને તેમના પતિઓએ, માબાપોએ, પુત્રોએ અને સંબંધીઓએ રોક્યાં છતાં પણ તેમનું-ગોપીજનોનું-અંતઃકરણ ગોવિંદ ભગવાને ખેંચી લીધેલું હોવાથી અને તેઓ-ગોપીજનો-મોહિત થએલાં હોવાથી પાછાં ફર્યાં જ નહિ. ૮.

‘પિતા કુમારિકાનું રક્ષણ કરે છે; પરણેલી સ્ત્રીનું રક્ષણ પતિ કરે છે; વૃદ્ધાવસ્થામાં પુત્ર રક્ષણ કરે છે; અને આ ત્રણેય ન હોય તો જ્ઞાતિજનો-સંબંધીઓ-સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરે છે. આ પ્રમાણે સ્ત્રીઓને કોઈ પણ વખતે સ્વતંત્રતા મળતી નથી.’ આ રીતે ચાર જણ સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરનારા છે. તેથી જે ગોપીજનો પરણેલાં હતાં તેમને તેમના પતિઓએ અટકાવ્યાં; જે કુંવારાં હતાં તેમને તેમનાં માબાપોએ અટકાવ્યાં; જે વૃદ્ધ હતાં તેમને તેમના પુત્રોએ અટકાવ્યાં, અને જેમને પાસેનું કોઈ સગું ન હતું તેમને તેમના સંબંધીઓએ અટકાવ્યાં. ગોપીજનોના પતિઓ, માબાપો, પુત્રો અને સંબંધીઓનો જો કે નિરોધલીલામાં અંગીકાર કરવામાં આવેલો હતો છતાં પણ તેમણે ફલરસ જાણ્યો ન હતો, કારણ કે તે બધા સાધનોમાં આસક્ત હતા. તેઓ એમ માનતા હતા કે જો સ્ત્રીઓ પોતાના પતિની દ્વારા જ ભગવાનનું ભજન કરે તો જ તે ખરેખરું ભજન કલી શકાય, પણ જો પતિથી સ્વતંત્ર બનીને સ્ત્રીઓ ભગવાનનું ભજન કરે તો તે ખરેખરું-શાસ્ત્રીય-ભજન કલી શકાય નહિ. પતિ, માબાપ, પુત્ર અને સંબંધીઓએ ગોપીજનોને અટકાવ્યાં છતાં પણ ગોપીજનોનો આત્મા-અંતઃકરણ-ગોવિંદ ભગવાને ખેંચી લીધો હતો. ગોપીજનોને ભગવાનની પાસે જતાં તેમના પતિ વિગેરેએ શબ્દ દ્વારા અટકાવ્યાં હતાં અને શબ્દની અસર કર્ણ ઉપર થાય છે અને કર્ણ એ બ્રાહ્મ ઈન્દ્રિય છે; જ્યારે અંતઃકરણ એ આંતર

ઈન્દ્રિય છે અને અંતઃકરણમાં રહેલા ભગવાન્ તે અંતઃકરણના પ્રવર્તક બને છે. પુરુષો-જીવો-અંતઃકરણને વશ હોય છે એમ પુરંજનના પ્રસંગમાં સિદ્ધ થએલું છે. જ્યારે નૌકા પાણીના પ્રવાહમાં ચાલતી હોય છે ત્યારે તેને ‘ઉભી રહે, ઉભી રહે’ એમ કહેવામાં આવે તો પણ તે ઉભી રહેતી નથી. તે પ્રમાણે પતિઓ, માબાપો વિગેરેએ ગોપીજનોને ‘ના જાવ, ના જાવ’ એ પ્રમાણે કહ્યું છતાં પણ ભગવાન્ જેમાં રહેલા છે તેવા અંતઃકરણને અધીન થઈને ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ચાલ્યાં ગયાં. આ પ્રમાણે જે ગોપીજનો પોતાના પતિ વિગેરેની આજ્ઞાનો વિચાર કરતાં હતાં તેમનું અંતઃકરણ ભગવાને પોતાનામાં ન પરોવ્યું. અર્થાત્ બધાંય ગોપીજનોને અટકાવવામાં આવ્યાં હતાં; તેમાંથી જેમનું મન ગોવિંદ ભગવાનમાં લાગેલું હતું તે જ પાછાં ફર્યાં નહિ. વળી જેમ મર્યાદામાર્ગમાં સ્ત્રીઓને પોતાના પતિ, માબાપ વિગેરેનો ભય રહે છે તેમ આ ગોપીજનોને કોઈ પણ પ્રકારનો ભય હતો નહિ, કારણ કે તે મોહિત થએલાં હતાં એમ શુકદેવજી કહે છે. જો આ ગોપીજનો કૃષ્ણ ભગવાનની પાસે ન જાય તો મૂર્છા પામેલા માણસની માફક પોતાના પ્રાણનો ત્યાગ કરે; અને પ્રાણ ત્યાગ કરવાની પરિસ્થિતિ ઉભી થાય ત્યારે તો ભય વિગેરે સ્વધર્મનો વિચાર કરવો પ્રાપ્ત થતો નથી એમ શાસ્ત્ર પોતે જ કહે છે.

(જે ગોપીજનો પતિ વિગેરેની આજ્ઞા માન્યા વિના ભગવાનની પાસે ગયાં તેમનામાં સર્વાત્મભાવ હતો એ દર્શાવવાને માટે જ ભગવાને હમણાં વ્રજમાં રહેનારા ગોપોને ‘આ ગોપીજનો ભગવાન્ પાસે જાય છે’ એ પ્રમાણે જ્ઞાન કરાવ્યું એમ સમજવું. જો આ પ્રમાણે આપણે ન સમજીએ તો પછી આગળ ઉપર ‘પોતાની પાસે જ પોતાની સ્ત્રીઓ સૂઈ રહી છે એમ ગોપો માનવા લાગ્યા’ એ શુકદેવજીના વચન ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ગોપીજનો વનમાં છે એનું અજ્ઞાન ભગવાને ગોપોને કર્યું તે પ્રમાણે પહેલાં પણ ભગવાને ગોપીજનોના જવાની બાબતનું અજ્ઞાન ગોપોને કેમ ન કર્યું? ‘ચોખ્ખા પગને કાદવમાં નાખીને પછીથી પગનો કાદવ ધોવો’ એ ન્યાય પ્રમાણે ગોપીજનોના જવાની બાબતનું જ્ઞાન ભગવાને પહેલાં ગોપોને કર્યું અને પાછું એ જવાની બાબતના જ્ઞાનથી જે દોષો સંભવે છે તેને દૂર કરવાનો પ્રયત્ન કર્યો. ભગવાનની આવી પ્રવૃત્તિ નકામી છે. તેના કરતાં તો ભગવાને પહેલેથી જ ગોપીઓના જવાની બાબતનું જ્ઞાન ગોપોને ન કર્યું હોત તે જ વધારે સારું હતું. પણ ભગવાને ગોપીઓના આગમનનું જ્ઞાન ગોપોને પહેલાં કર્યું છે. તેથી આપણે માનવું જ પડે છે કે ગોપીજનોમાં ભગવાનને વિષે સર્વાત્મભાવ હતો તે બતાવવાને માટે જ ભગવાને ગોપીઓના આગમનનું જ્ઞાન ગોપોને કર્યું છે.) ૮.

આ પ્રમાણે નવ પ્રકારનાં સગુણ ગોપીજનો અને દસમાં ગુણાતીત ગોપીજનો-એ રીતે દસ પ્રકારનાં ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ગયાં એમ શુકદેવજીએ કહ્યું. હવે જે ગોપીજનોને ભગવાનમાં જારબુદ્ધિ હતી તેમનો કાલે પ્રતિબંધ કર્યો-ગોપીઓના પતિ વિગેરેએ ગોપીઓના ભજનમાં પ્રતિબંધ કર્યો એટલે તે બધા કાલનો અંશ ગણાય છે; પહેલાં સાધનાવસ્થામાં આ ગોપીઓમાં ભક્તિ હતી પણ ફલદશામાં જારબુદ્ધિ હોવાથી ભજનનાંદનો તેમણે અનુભવ કર્યો જ નહિ અને જારબુદ્ધિથી તેમનો પ્રતિબંધ જ થયો અને ભગવાનનું સાયુજ્ય તેમણે પ્રાપ્ત કર્યું એમ શુકદેવજી નીચેના ત્રણ શ્લોકોમાં કહે છે:

અન્તર્ગૃહગતાઃ કાશ્ચિદ્ગોખ્યોઽલબ્ધવિનિર્ગમાઃ ।

કૃષ્ણં તદ્ભાવનાયુક્તા દધ્યુર્મીલિતલોચનાઃ ॥૯॥

કેટલીક ગોપીઓ ઘરની અંદર હતી; અને તેમને જ્યારે બહાર આવવાનો લાગ ન મળ્યો ત્યારે તેમણે આંખ્યો મીંચી દઈને કૃષ્ણ ભગવાનમાં જારની ભાવના રાખીને તેમનું-કૃષ્ણ ભગવાનનું-ધ્યાન ધર્યું. ૯.

દુઃસહપ્રેષ્ટવિરહ-તીવ્રતાપદ્યુતાશુભાઃ ।

ધ્યાનપ્રાપ્તાચ્યુતાશ્લેષ-નિર્વૃત્યા ક્ષીણમડ્ગલાઃ ॥૧૦॥

કૃષ્ણરૂપી પોતાના પ્રિયતમના દુઃસહ વિરહથી ગોપીઓને તીવ્ર તાપ થયો અને તેથી તેમનાં બધાં પાપો બળી ગયાં. ગોપીઓ ભગવાનનું ધ્યાન કરતી હતી, એટલે તે ધ્યાનમાં તેમને અચ્યુતનો-કૃષ્ણ ભગવાનનો સમાગમ થયો અને તેથી તેમને એટલો બધો આનંદ થયો કે તેમનાં બધાં પાપકર્મો પણ ક્ષીણ થઈ ગયાં. ૧૦.

તમેવ પરમાત્માનં જારબુદ્ધયાપિ સડ્ગતાઃ ।

જહુર્ગુણમયં દેહં સદ્યઃ પ્રક્ષીણબન્ધનાઃ ॥૧૧॥

આ પ્રકારનાં ગોપીજનોએ ભગવાનમાં જે કે જાર બુદ્ધિ રાખી હતી છતાં પણ તે જ પરમાત્માનો તેમને સમાગમ થયો, અને તેથી તેમનાં બધાં કર્મનાં બંધનો નાશ પામ્યાં અને તેમણે તરત જ ગુણમય દેહનો ત્યાગ કર્યો. ૧૧.

દૈવગતિએ કેટલાંક ગોપીજનો ઘરની અંદર હતાં. આ સ્ત્રીઓ ગોપીઓ હતી એટલે તેમનામાં ચાતુર્ય ન હતું, વળી તેમની ઉંમર મોટી ન હતી એટલી તેમની પાસે તેમના પતિઓ હતા અને આ પતિઓ જ તેમનું રક્ષણ કરતા હતા એટલે ગોપીજનોને બહાર નીકળવાનો લાગ મળ્યો નહિ. પછીથી આ પ્રતિબંધ દૂર કરવાને તે ગોપીજનોએ કૃષ્ણ ભગવાનનું જ ધ્યાન ધર્યું, પણ આ ધ્યાનમાં તેમણે એવી ભાવના રાખી કે ભગવાન જાર છે અને અમે પોતે અભિસારિકાઓ છીએ. જે આ

પ્રમાણે ભગવાનમાં જરબુદ્ધિ ગોપીજનોએ રાખી ન હોત તો ભગવાનની પાસે જવામાં કોઈ પણ જીવ પ્રતિબંધ કરી શકત નહિ. ગોપીજનોએ ભગવાનમાં જરબુદ્ધિ રાખીને પણ પોતાની આંખ્યો મીંચી દીધી અને ભગવાન કૃષ્ણનું ધ્યાન ધર્યું, અને પછીથી તેઓ મુક્ત થઈ ગયાં. ૯.

શંકા- ગોપીજનોમાં જ્ઞાન ન હતું, વિહિત-શાસ્ત્રીય-મર્યાદા ભક્તિ પણ ન હતી, અને ભગવાન પણ પાસે ન હતા; તો પછી તે કેવી રીતે મુક્ત થયાં?

સમાધાન- શુકદેવજી ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરે છે કે ગોપીજનોનાં બધાં સારાં અને ખરાબ કર્મો-પુણ્ય અને પાપ કર્મો-નાશ પામ્યાં અને તેથી તેમને મુક્તિ મળી. આ બધાં પાપ અને પુણ્ય કર્મોનો ક્ષય કેવી રીતે થયો તે શુકદેવજી ‘દુઃસલ’ ઈત્યાદિ દસમા શ્લોકમાં બતાવે છે. ગોપીજનોના પ્રિયતમ કૃષ્ણ ભગવાન; તેમનો વિરલ સલન ન થઈ શકે એવો. આ દુઃસલ વિરલ જ મોટો અગ્નિ છે, અને આ અગ્નિનો તાપ ઘણો સખત છે; એટલે તે સખત તાપથી ગોપીજનોનાં બધાં અશુભ-પાપ-કર્મો બળી ગયાં છે. કર્મનાં ફલનો ભોગ કર્યા પછી કર્મનો નાશ થાય છે એ વાત નિર્વિવાદ છે. બ્રહ્માના કરોડો કલ્પોની અંદર કુંભીપાક જેવાં નરકોમાં જે દુઃખનો અનુભવ થાય છે તે બધા દુઃખનો અનુભવ ભગવાનથી વિરલ થતાં ગોપીજનોને એક ક્ષણમાં જ થયો. એટલે ગોપીજનોએ પોતાનાં બધાં પાપોનું ફલ ભોગવી દીધું અને તેથી તેમનાં બધાં પાપકર્મો નાશ પામ્યાં.

ગોપીજનોનાં પુણ્ય કર્મોનો નાશ કેવી રીતે થયો તે શુકદેવજી ‘ધ્યાનપ્રાપ્ત’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં સમજાવે છે. ગોપીજનોનાં બધાં પાપ નાશ પામ્યાં એટલે તેમણે ધ્યાનમાં ભગવાનનાં દર્શન કર્યાં. ગોપીજનોને ધ્યાનમાં જેમનાં દર્શન થયાં તે અચ્યુત-પરમાત્મા-હતા. ગોપીજનોએ ભગવાનમાં જરબુદ્ધિ રાખીને તેમનું ધ્યાન ધર્યું હતું છતાં પણ ભગવાને જ્યારે ગોપીજનોને ધ્યાનમાં દર્શન આપ્યું ત્યારે તેમણે ગોપીજનોના જર તરીકે દર્શન આપ્યું ન હતું. જો ભગવાન જર તરીકે ગોપીજનોને ધ્યાનમાં મળ્યા હોત તો પછી કર્મનો કેટલોક ભાગ બાકી રહેત અને તેથી બધાં કર્મોનો નાશ થાત નહિ. ગોપીજનોને ધ્યાનમાં જે સમાગમ થયો તેથી તેમને ઘણું સુખ થયું, અને તેને પરિણામે તેમનાં બધાં મંગલ-પુણ્ય-કર્મો નાશ પામ્યાં. બ્રહ્માના કોટિ કલ્પોની અંદર સ્વર્ગાદિ લોકોમાં જેટલા સુખનો અનુભવ થાય છે તેટલા સુખનો અનુભવ ભગવાનના સમાગમથી ગોપીજનોને એક ક્ષણમાં જ થઈ ગયો. આ રીતે બધાં પુણ્ય કર્મોનું ફલ ભોગવી લેવાથી તેમનાં બધાં પુણ્ય કર્મો નાશ પામ્યાં. ૧૦.

આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોનાં પાપ અને પુણ્ય કર્મો નાશ પામ્યાં ત્યારે

તેમને મુક્તિ મળી એમ શુકદેવજી ‘તમેવ પરમાત્માનમ્’ ઈત્યાદિ અગીઆરમા શ્લોકમાં કહે છે. સુખ ભોગવવાને માટે જ ગોપીજનોએ પહેલાં ભગવાનની સાથે સમાગમ કર્યો; અને ગોપીજનોને સંયોગ રસનો અનુભવ થયો, છતાં પણ તે રસમાં વિઘ્ન નાખી ગોપીજનોનો ભગવાનથી વિયોગ કરે એવું ગોપીજનો પાસે પાપ ન હતું એટલે તેમનો ભગવાનથી વિયોગ થયો નહિ. તેથી તેમણે ભગવાનના સમાગમનું સુખ અનુભવ્યા જ કર્યું. ગોપીજનોનાં પ્રારબ્ધ કર્મો નાશ પામ્યાં હતાં એટલે તેમના શરીરનો તો નાશ થયો. જેમની સાથે ગોપીજનોનો સમાગમ થયો હતો તે જો ભગવાન ન હોત તો ગોપીજનોનો પ્રવેશ બીજા શરીરમાં થાત અને તેથી શરીરની સાથે સંબંધ ધરાવતા ધર્મ અને અધર્મનું ફલ તેમને ભોગવવું પડત. પણ તેમનો પ્રવેશ ભગવાનમાં થયો હતો એટલે જ તે બધાં ગોપીજનો મુક્ત જ થઈ ગયાં. આ જ વાત શુકદેવજી ‘તમેવ પરમાત્માનમ્’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં કહે છે. પહેલાં જ્યારે ગોપીજનો નો ભગવાનની સાથે સંબંધ થયો ત્યારે ગોપીજનોએ જો કે જાનબુદ્ધિથી જ ભગવાનનો સમાગમ કર્યો છતાં પણ અચ્યુત ભગવાન કૃષ્ણના સમાગમથી જ તેમનાં બધાં કર્મનાં બંધનો નાશ પામ્યાં અને તેથી તેમણે ગુણમય-પ્રાકૃત-દેહનો ત્યાગ કર્યો. તે વખતે ગોપીજનોના પ્રાકૃત દેહો અમંગલ ન ગણાય તેટલા સારુ ભગવાને વ્યવહારને માટે તેમાં બીજો જીવ મૂકી આપ્યો. જ્યારે ગોપીજનોનો ભગવાનની સાથે સમાગમ થયો ત્યારે ગોપીજનોને ભગવાનના સ્વરૂપનું જ્ઞાન ન હતું અને તેમને ભગવાનમાં જાનબુદ્ધિ હતી. આ પ્રમાણે ગોપીજનોમાં અનુક્રમે અજ્ઞાન અને અન્યથાજ્ઞાન-વિપરીત જ્ઞાન-હતાં. ભગવાનની સાથે ગોપીજનોનો સમાગમ થયો ત્યારે ગોપીજનોનાં અજ્ઞાન અને અન્યથાજ્ઞાન ત્રણ જ ક્ષણ રહ્યાં હતાં એટલે તે બે-અજ્ઞાન અને અન્યથાજ્ઞાન-ગોપીજનોને મુક્તિ મેળવવામાં પ્રતિબંધ કરી શક્યાં નહિ. જો ભગવાનથી ગોપીજનોનો વિયોગ થાય તો જ ગોપીજનોનું ભગવત્સ્વરૂપ વિષેનું અજ્ઞાન સ્થિર રહે અને નાશ ન પામે; તે જ પ્રમાણે જો ભગવાનથી ભિન્ન કોઈ બીજા શરીરમાં તેમનો પ્રવેશ થયો હોત તો જ ગોપીજનોનું જાનબુદ્ધિરૂપી અન્યથાજ્ઞાન પણ સ્થિર રહેત. પણ ભગવાનથી ગોપીજનોનો વિયોગ કરી શકે એવું એક પણ તત્ત્વ અસ્તિત્વમાં ન હતું, તેમજ અન્ય શરીર ઉત્પન્ન કરી શકે એવું પણ તત્ત્વ ન હતું. આ પરિસ્થિતિમાં ગોપીજનોને મુક્તિ મળવામાં કોઈ પણ પ્રતિબંધ ન થયો. જો કે ભગવાનની સાથે જ્યારે ગોપીજનોનો સમાગમ થયો ત્યારે અવિદ્યા હતી, પણ તે અવિદ્યા ભગવાનની શક્તિ છે, એટલે ભગવાનની સાથે જેનો સમાગમ થયો છે તેને તે કોઈ રીતે વ્યામોહ ઉત્પન્ન કરી શકતી નથી. એટલે અવિદ્યા પણ

ગોપીજનોને મુક્તિ મેળવવામાં પ્રતિબંધ કર્યા વિના જ જતી રહી. આ પ્રમાણે ગોપીજનોનાં બધાં શુદ્ધ અશુદ્ધ કર્મોનો નાશ થયો એટલે તેમને મુક્તિ મળી એ આ શ્લોકનો ભાવાર્થ છે. ૧૧.

અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોને ભગવાનમાં જ્ઞરબુદ્ધિ હતી તો પણ તેમને મુક્તિ મળી એમ સાંભળીને પરીક્ષિત્ રાજાને શ્રુતિનો વિરોધ જણાયો અને તેથી તેમણે નીચેના શ્લોકમાં શંકા ઉઠાવી:

॥ રાજોવાચ ॥

કૃષ્ણં વિદુઃ પરં કાન્તં ન તુ બ્રહ્મતયા મુને ।

ગુણપ્રવાહોપરમઃ તાસાં ગુણધિયાં કથમ્ ॥૧૨॥

પરીક્ષિત્ રાજા કહે છે કે :- હે મુનિ, આ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોએ કૃષ્ણ ભગવાનને પોતાના શ્રેષ્ઠ કાન્ત તરીકે માન્યા હતા, બ્રહ્મ તરીકે નહિ. તો પછી ગુણબુદ્ધિવાળાં આ ગોપીજનોને ગુણપ્રવાહરૂપ આ સંસારનો નાશ કેમ થયો? ૧૨.

‘તે પરમાત્માનું જ્ઞાન મેળવીને જ માણસ મૃત્યુની પેલે પાર જાય છે; મોક્ષ મેળવવાને માટે પરમાત્માના જ્ઞાન વિના બીજો એક પણ માર્ગ નથી.’-આ શ્રુતિમાં મોક્ષ મેળવવાનું સાધન ફક્ત જ્ઞાન છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. વળી જ્યારે મોક્ષના સાધનોનો વિચાર કરીએ છીએ ત્યારે ભક્તિને પણ મોક્ષના સાધન તરીકે વર્ણવવામાં આવી છે એમ જણાય છે, અને તે વાત નીચેના શ્લોકમાં જ આપેલી છે:- ‘વિષ્ણુ ભગવાન કેવલ ભક્તિથી પ્રસન્ન થાય છે, બીજા કોઈ સાધનથી નહિ. તે જ વિષ્ણુ ભગવાન મુક્તિ આપનારા છે, અને મુક્તિ મેળવવામાં ભક્તિ જ સાધનભૂત છે.’ આ પ્રમાણે જ્ઞાન અને ભક્તિ મોક્ષ મેળવવાનાં સાધનો છે. તે બે વિષેનો નિર્ણય આ પ્રમાણે છે. ‘જ્ઞાનમાર્ગ અને ભક્તિમાર્ગ મારામાં રહેલા છે અને તેથી તે નિર્દુષ્ટ છે. જ્ઞાન અને ભક્તિ એ બંનેય માર્ગનું ફલ એક જ છે અને તે ભગવાન.’ વળી ગીતાજી માં પણ ભગવાન કહે છે કે ‘ભક્તિ વડે જ મને મનુષ્ય બરોબર જાણે છે.’ આ ઉપરથી એટલું સ્પષ્ટ જણાય છે કે મર્યાદામાર્ગમાં જ્ઞાન વડે જ મુક્તિ મળે છે, જ્યારે પુષ્ટિમાર્ગમાં ભક્તિ વડે અથવા જ્ઞાન વડે મુક્તિ મળે છે. આ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોમાં એક પણ સાધન ન હતું. તેમની ભક્તિ પણ ભગવાનમાં જ્ઞરબુદ્ધિ હોવાને લીધે સગુણ હતી, અને તેમનું જ્ઞાન પણ મોહને લીધે સગુણ હતું. આ પ્રમાણે આ ગોપીજનોનાં ભક્તિ અને જ્ઞાન તામસ હતાં. આવી સ્થિતિમાં તે ગોપીજનોને મુક્તિ કેમ મળી એમ પરીક્ષિત્ રાજાને આ શ્લોકમાં શંકા થાય છે. કાન્ત એટલે પતિ અથવા જ્ઞર. ગોપીજનોએ કૃષ્ણ ભગવાનને પોતાના પતિ અથવા જ્ઞર તરીકે માન્યા

હતા, બ્રહ્મ તરીકે માન્યા ન હતા. પરીક્ષિત્ રાજા શુકદેવજીને ‘મુનિ’ કહીને સંબોધે છે. તેનો ભાવ એ છે કે શુકદેવજી મુનિ હોવાથી આ વાતનો નિર્ણય જાણતા હશે અને તેથી પરીક્ષિતની શંકાનું સમાધાન થઈ શકશે. અંતર્ગૂહગતા ગોપીજનોને મુક્તિ મળી એ વાતનો શ્રુતિ સાથે જે વિરોધ થાય છે તે સ્પષ્ટ છે. ભગવાનમાં અને પોતાનામાં ગોપીજનોને ગુણબુદ્ધિ જ હતી, અને ગુણબુદ્ધિ એ ગુણપ્રવાહરૂપી સંસારનું મૂલ છે. ગુણબુદ્ધિને ગુણપ્રવાહનું કારણ જો ન માનીએ તો પછી ગુણબુદ્ધિનો નાશ કરનારાં બધાંય શાસ્ત્રો વ્યર્થ થઈ જાય. ‘બ્રહ્મને જે જાણે છે તે બ્રહ્મ જ થાય છે’ એમ ઉપનિષદ્માં જે બ્રહ્મભાવ દર્શાવવામાં આવ્યો છે તે વૈદિક પક્ષ તો આ ગોપીજનોમાં અસંભવિત જ છે, કારણ કે ગોપીજનોએ ઉપનિષદ્નું શ્રવણ મનન વિગેરે કરેલું જ નથી, કેમ કે તેમને તે કરવાનો અધિકાર ન હતો. આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનો ગુણબુદ્ધિવાળાં હતાં તો પછી તેમનો ગુણપ્રવાહ-સંસાર-કેમ નાશ પામ્યો એમ પરીક્ષિત્ શુકદેવજીને પ્રશ્ન પૂછે છે. ૧૨.

શુકદેવજી પરીક્ષિતના પ્રશ્નનો ઉત્તર નીચેના ચાર શ્લોકોમાં આપે છે:

||શ્રીશુક ઉવાચ||

ઉક્તં પુરસ્તાદ્ એતત્ તે ચૈદ્યઃ સિદ્ધિં યથા ગતઃ ।

દ્વિષન્નપિ હૃષીકેશં કિમ્ ઉતાઘોક્ષજપ્રિયાઃ ॥૧૩॥

શુકદેવજી કહે છે કે:- પહેલાં સપ્તમ સ્કંધની અંદર મેં તમને કહ્યું હતું કે શિશુપાલ ભગવાન કૃષ્ણ ઉપર દ્વેષ કરતો હતો છતાં પણ તે ભગવત્સાયુજ્ય પ્રાપ્ત કરી શક્યો, તો પછી આ ભગવાનનાં પ્રિયજનો-ગોપીજનો-સિદ્ધિ, મુક્તિ, પામે તેમાં શું આશ્ચર્ય? ૧૩.

નૃણાં નિઃશ્રેયસાર્થાય વ્યક્તિભગવતો નૃપ! ।

અવ્યયસ્યા પ્રમેયસ્ય નિર્ગુણસ્ય ગુણાત્મનઃ ॥૧૪॥

હે રાજા! અવ્યય, અપ્રમેય, નિર્ગુણ અને સર્વ ગુણોના આત્મારૂપ ભગવાનનું પ્રાકટ્ય મનુષ્યોના કલ્યાણને માટે જ છે. ૧૪.

કામં ક્રોધં ભયં સ્નેહમ્ ઐક્યં સૌહૃદમેવ વા ।

નિત્યં હરૌ વિદધતો યાન્તિ તન્મયતાં હિ તે ॥૧૫॥

જે કૃષ્ણ ભગવાન ઉપર હંમેશાં કામ, ક્રોધ, ભય, સ્નેહ, એકતા અથવા ભક્તિ રાખે છે તે ભગવદ્રૂપ થઈ જાય છે. ૧૫.

ન ચૈવં વિસ્મયઃ કાર્યો ભવતા ભગવત્યજે ।

યોગેશ્વરેશ્વરે કૃષ્ણે યત એતદ્ વિમુચ્યતે ॥૧૬॥

જેનાથી આ મુક્ત થાય છે એવા અજ, યોગેશ્વરના ઈશ્વર, કૃષ્ણ ભગવાન્ વિષે તમારે આ પ્રમાણે વિસ્મય કરવો જોઈએ નહિ. ૧૬.

સપ્તમ સ્કંધમાં જ શિશુપાલની મુક્તિના પ્રસંગે આ વાત મેં તમને કહી છે. જેમ ભક્તિ અને જ્ઞાનનું પ્રતિપાદન કરનારું શાસ્ત્ર-ઉપાસનાકાંડ અને જ્ઞાનકાંડ-મોક્ષનું સાધન છે તેમ ભગવાનનું સ્વરૂપ પણ મોક્ષનું સાધન છે. ભગવાન્ મોક્ષ આપવાને માટે જ અવતાર લે છે અને સચ્ચિદાનંદરૂપે પ્રકટ થાય છે. માટે ગમે તે મનુષ્ય કોઈ પણ ઉપાયથી ભગવાનની સાથે સંબંધ પ્રાપ્ત કરે તો તેને મોક્ષ મળે છે જ. જ્ઞાન અને ભક્તિનો ઉપયોગ ભગવાનનું પ્રાકટ્ય સિદ્ધ કરવામાં થાય છે. પણ જો ભગવાનનું પ્રાકટ્ય બીજા કોઈ પ્રકારે સિદ્ધ થાય તો પછી જ્ઞાન અને ભક્તિનો ઉપયોગ રહેતો નથી. અહિં વ્રજમાં તો ભગવાન્ પોતે જ પોતાની ઈચ્છાથી જ પ્રકટ થયા છે. અને સર્વને મુક્તિનું દાન કરવાના છે, કારણ કે ઈશ્વરની ઈચ્છાનું નિયમન થઈ શકતું નથી. ઈશ્વર જે ઈચ્છા કરે છે તેમાં કોઈ બાધ કરી શકતું નથી. તેથી ભગવાનનો આવિર્ભાવ કાં તો પોતાની ઈચ્છાથી થાય, કાં તો ભક્તિથી થાય અથવા તો જ્ઞાનથી થાય. ભગવદિચ્છાથી ભગવત્પ્રાકટ્ય પુષ્ટિમાર્ગમાં થાય છે, જ્યારે જ્ઞાન અથવા ભક્તિથી ભગવત્પ્રાકટ્ય મર્યાદામાર્ગમાં થાય છે. જે સમયે ભગવાનનું પ્રાકટ્ય ન થયું હોય તે સમયે માત્ર જ્ઞાન અને ભક્તિ એ બે જ સાધનો ભગવાનનું પ્રાકટ્ય સિદ્ધ કરવામાં ઉપયોગમાં આવે છે. પણ જ્યારે ભગવાને અવતાર લીધો હોય ત્યારે તો જ્ઞાન અને ભક્તિનો ઉપયોગ રહેતો નથી. આ ઉપરથી એમ ન માનવું કે જ્ઞાન અને ભક્તિ નકામાં છે. જેમ ચોમાસામાં બધેય સ્થલે પાણી સહેલાઈથી મળે છે છતાં પણ કૂવા અને નદીઓ નકામાં નથી મનાતાં, તેમ ભગવાન્ જ્યારે સ્વેચ્છાથી અવતાર-દશામાં પ્રકટ થાય છે છતાં પણ જ્ઞાન અને ભક્તિને નિરુપયોગી માનવાં નહિ. આ જ વાત શુકદેવજી ‘પુરસ્તાત્’ વિગેરે શબ્દોમાં કહે છે. ‘પુરસ્તાત્’ એટલે પહેલાં-ભાગવતના સાતમા સ્કંધમાં. ઉદાહરણ તરીકે ચૈદ્ય-શિશુપાલ-ભગવાનનો દ્વેષ કરતાં કરતાં પણ સિદ્ધિ-ભગવત્સાયુજ્ય-પામ્યો. જો કે ભગવાન્ ઉપર દ્વેષ રાખવાથી દોષ ઉત્પન્ન થાય છે અને આ દોષ મુક્તિ મેળવવામાં પ્રતિબંધ કરે છે, છતાં પણ દ્વેષ દ્વારા ભગવાનનું સ્મરણ કરવાથી દ્વેષથી ઉત્પન્ન થતું પાપ નાશ પામે છે અને અંતે તે માણસ ભગવાનમાં સાયુજ્ય પ્રાપ્ત કરે છે. વળી, શિશુપાલ ભગવાન્ ઉપર દ્વેષ કરતો હતો તેમાં તેનો કોઈ જાતનો દોષ નથી, કારણ કે ભગવાને જ તે દ્વેષ વિગેરે ભાવનાઓને ઉત્પન્ન કરેલી છે. આ વાત શુકદેવજી ‘હૃષીકેશમ્’ એ શબ્દ દ્વારા કહે છે. ભગવાન્ હૃષીકેશ છે, ઈન્દ્રિયોના પ્રેરક છે, અને તેથી પોતાને જે પ્રકારે સુખ થાય તે



પ્રકારે જુદાજુદા ભાવો ઉત્પન્ન કરે છે. જ્યારે શિશુપાલના દષ્ટાંતમાં પણ મોક્ષનું સાધન બને છે, તો પછી કૃષ્ણ ભગવાનને પ્રિય એવાં ગોપીજનોને જ્ઞરબુદ્ધિથી પણ મુક્તિ મળે તેમાં શું જ કહેવું? ૧૩.

આ પ્રમાણે ભગવાનનું સ્વરૂપ પણ મુક્તિ આપે છે એ વાત સિદ્ધ થઈ. આ સિદ્ધાંતના અનુમોદનમાં શુકદેવજી ‘નૃણાં નિઃશ્રેયસાર્થાય’ એ શ્લોકમાં મુખ્ય યુક્તિ આપે છે. બધાંય પ્રાણીઓને, નિઃસાધન પ્રાણીઓને પણ, મોક્ષ આપવાને માટે જ ભગવાન પોતે પ્રકટ થયા છે. તેથી ભગવાનનું જે આ પ્રકટ્ય છે તે લોકોના કલ્યાણને માટે જ છે. જો એમ ન માનીએ તો ભગવાન પોતે પ્રકટ જ ન થાત, કારણ કે પછી ભગવત્પ્રકટ્યનું બીજું કોઈ અસાધારણ પ્રયોજન રહેતું નથી. પૃથ્વીનો ભાર દૂર કરવો, ધર્મની રક્ષા કરવી, સૃષ્ટિ કરવી વિગેરે કાર્યો વ્યૂહ દ્વારા પણ થઈ શકે છે. માટે ભગવાનની અભિવ્યક્તિ, પ્રકટ્ય, પ્રાણીઓના કલ્યાણને, ઉદ્ધારને, માટે જ છે. શુકદેવજી પરીક્ષિતને ‘હે નૃપ’ એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તેમાં નીચે જણાવેલું પ્રયોજન રહેલું છે. જેમ રાજા સાધારણ રીતે બીજા માણસો દ્વારા જ બધાં કામ કરાવે છે અને પોતે કોઈક દિવસ જ ક્રીડાને માટે બહાર જાય છે, તેમ ભગવાન પણ પૃથ્વીનો ભાર દૂર કરવો, ધર્મનું રક્ષણ કરવું વિગેરે કાર્યો પોતાના વ્યૂહ દ્વારા કરાવે છે, અને સર્વ પ્રાણીઓનો ઉદ્ધાર કરવાનું કાર્ય પોતે જ કરે છે. આ બધો ભાવ ‘હે નૃપ’ એ સંબોધનમાં રહેલો છે. બીજે કોઈ પ્રકારે ભગવાનનું સ્વતંત્ર પ્રકટ્ય સંભવી શકતું નથી એમ જણાવવાને માટે શુકદેવજી ભગવાનનાં અવ્યય વિગેરે વિશેષણો આપે છે. પ્રથમ તો કૃષ્ણ ભગવાન છે એટલે તેમનામાં બધા પ્રકારનાં એશ્વર્ય રહેલાં છે. તેથી તે કોઈને અધીન નથી, અને કાલ, કર્મ અને સ્વભાવ એ ત્રણના નિયામક બને છે. આ પ્રમાણે જેમને કોઈની અપેક્ષા નથી એવા કૃષ્ણ ભગવાન શા માટે વ્યાપિવૈકુંઠમાંથી આવીને ભૂતલ ઉપર પ્રકટ થાય? વળી, ભગવાન પોતાના કાર્ય માટે વ્યાપિવૈકુંઠમાંથી ભૂતલ ઉપર ન આવે, તો પણ બીજાઓના સાધન સિદ્ધ કરવાને માટે કદાચિત્ ભૂતલ ઉપર ભગવાન પ્રકટ થાય. આ પણ સંભવતું નથી એમ ‘અવ્યયસ્ય’ વિગેરે ચાર શબ્દોમાં શુકદેવજી કહે છે. જે પદાર્થ ક્રિયાનો વિષય બને છે, અથવા તો જ્ઞાનનો વિષય બને છે તે પદાર્થ બીજાઓના ઉપયોગમાં આવે છે. ભગવાન તો ‘અવ્યય’ છે, અવિકારી છે, તેથી તે ક્રિયાનો વિષય બની શકશે નહિ, ક્રિયાથી સિદ્ધ થઈ શકશે નહિ. ભગવાન ‘અપ્રમેય’, જેમનું જ્ઞાન થઈ શકે નહિ એવા, છે; તેથી તે જ્ઞાનનો વિષય પણ નહિ બને. દેહ વિગેરેની ભક્તિ, સેવા, દ્વારા ભગવાનની ભક્તિ, સેવા થઈ શકશે એમ પણ નથી, કારણ કે ભગવાન ‘નિર્ગુણ’ છે. નિર્ગુણ એટલે

જેમનામાંથી ગુણો જતા રહ્યા છે તે. જો એક પદાર્થમાં ગુણો હોય તો જ તે પદાર્થને બીજા પદાર્થો ઉપયોગમાં આવી શકે. દાખલા તરીકે, ભૂખ લાગે ત્યારે જ અન્ન આપી શકાય, કામ હોય ત્યારે જ સ્ત્રીનો ઉપયોગ થઈ શકે, ઈન્દ્રિયો હોય તો જ તે ઈન્દ્રિયોના વિષયોનો ઉપયોગ થઈ શકે. પણ ભગવાનમાં ગુણો નથી, એટલે ભગવાનમાં એવો એક પણ અંશ નથી કે જે ભક્ત પૂરો પાડી શકે. આ પ્રમાણે ભગવાનનું ભજન પણ થઈ શકે એમ નથી. વળી લીલાને માટે જો ભગવાનને કોઈની અપેક્ષા રહે તો પણ બધું ભગવાનનું જ છે, કારણ કે ભગવાન જ સર્વ ગુણોના આત્મા છે. માટે સાધન તરીકે કોઈ પણ અન્ય પદાર્થનો ઉપયોગ થઈ શકે એમ નથી. આ રીતે જ્યારે ભગવાનને પોતાનું પ્રયોજન નથી, તેમ જ બીજાઓનું પણ પ્રયોજન નથી, અને તે છતાં પણ સાધનની અપેક્ષા રાખ્યા વિના જ જો તે મુક્તિ ન આપે, તો ભગવાનનું પ્રાકટ્ય પ્રયોજન વગરનું જ થઈ જાય. માટે ભગવાનનું પ્રાકટ્ય નિઃસાધન પ્રાણીઓના ઉદ્ધારને માટે જ છે એમ સિદ્ધ થાય છે. ૧૪.

આ પ્રમાણે જ્યારે ભગવાનનું પ્રાકટ્ય સર્વ પ્રાણીઓના-નિઃસાધન જનોના પણ-ઉદ્ધારને માટે થયું છે ત્યારે તો જે માણસનો કોઈ પણ ઉપાયથી ભગવાનની સાથે સંબંધ થાય તેની મુક્તિ જ થાય છે એમ શુકદેવજી ‘કામમ્’ ઈત્યાદિ પંદરમા શ્લોકમાં કહે છે. કામ, ક્રોધ, ભય, સ્નેહ, ઐક્ય અને સૌહૃદ એ છ ભગવાનની સાથે સંબંધ બાંધવામાં સાધનભૂત છે. આ છ સાધનોમાં કામ સ્ત્રીઓમાં જ હોય છે, ક્રોધ શત્રુઓમાં જ હોય છે, ભય વધ્ય-જેનો વધ કરવા યોગ્ય છે તે-મનુષ્યોમાં જ હોય છે, સ્નેહ સંબંધીઓમાં જ હોય છે, ઐક્ય જ્ઞાનીઓમાં જ હોય છે, અને સૌહૃદ-અવિહિત ભક્તિ-ભક્તોમાં જ હોય છે, કારણ કે સખ્ય ભક્તોમાં જ સિદ્ધ થાય છે. તેથી પહેલાં સિદ્ધ થએલાં જ્ઞાન અને ભક્તિનો અર્હિ ઉપયોગ નથી, કારણ કે તે બધા શાસ્ત્રોક્ત ધર્મોનો મર્યાદા માર્ગની રીતે ભગવાનનો સ્વતંત્ર આવિર્ભાવ કરાવવામાં ઉપયોગ થાય છે. ભગવાન જ્યારે અવતાર ધારણ કરે છે તે સમયે મર્યાદામાર્ગીય ભક્તોને માટે તેમને પાછો બીજો જ અવતાર લેવો પડે છે કે તેના તે જ અવતારથી જ મર્યાદામાર્ગીય ભક્તોને ફલ આપે છે-આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો પૂર્વભીમાંસાના ન્યાય પ્રમાણે નિર્ણય કરવો. (આ ન્યાયનું સ્વરૂપ ‘એકસ્ય તૂભયત્વે સંયોગપૃથક્ત્વમ્’ એ પ્રમાણે છે; અને તેનો અર્થ એ કે કોઈ પણ દ્રવ્યનો બે જુદા જુદા પદાર્થોની સાથે જ્યારે સંબંધ હોય ત્યારે તે જ દ્રવ્ય એક જ સમયે તે બંને પદાર્થોના ઉપયોગમાં આવી શકે છે. ઉદાહરણ તરીકે:-લોમમાં જ વપરાતી જુલ્ જ્યારે પર્ણની બનેલી હોય છે ત્યારે તે જુલ્ એક જ વખતે બે કાર્ય સાધે છે: એક લોમ

અને બીજું અકીર્તિનો-નિંદાનો-નાશ. અર્થાત્ હોમ સિદ્ધ કરવાને માટે એક જુલૂ અને અકીર્તિ દૂર કરવાને માટે બીજી જુલૂની જરૂર પડે છે એમ નથી. આ પ્રમાણે ભગવાનનો એક જ અવતાર એક જ સમયે પુષ્ટિભક્તોનું કાર્ય અને મર્યાદાભક્તોનું કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે.) ( શ્રીવિક્લનાથજી આ વિષયમાં લખે છે કે જ્યારે કેવલ મર્યાદામાર્ગનું સ્થાપન કરવાને માટે પ્રભુનું પ્રાકટ્ય થયું હોય ત્યારે પુષ્ટિમાર્ગીય ભક્તોને અવતારમાં ભગવાન ફલ આપી શકતા નથી; જ્યારે કેવલ પુષ્ટિમાર્ગને માટે જ ભગવાનનું પ્રાકટ્ય હોય ત્યારે ભગવાન મર્યાદામાર્ગના ભક્તોને ફલ આપતા નથી. શ્રીપુરુષોત્તમજી પણ શ્રીવિક્લનાથજીના આશયને અનુસરીને લખે છે કે મૂલ શ્રીસુબોધિનીજીમાં આચાર્યશ્રીએ જે પૂર્વમીમાંસાનો ન્યાય આપ્યો છે અને તે પ્રમાણે નિર્ણય કરવાની આજ્ઞા કરી છે તે વાસ્તવિક રીતે આચાર્યશ્રીનો અભિપ્રાય નથી. પૂર્વમીમાંસાનો ન્યાય આપીને આચાર્યશ્રીને એટલું જ કહેવું છે કે ભગવાનની ઈચ્છા સ્વતંત્ર છે એટલે કોઈક વખત એક જ અવતાર દ્વારા પુષ્ટિમાર્ગીય ભક્તો અને મર્યાદામાર્ગીય ભક્તો-એ બંનેય પ્રકારના ભક્તોને ભગવાન ફલ આપી શકે છે.)

મૂલ શ્લોકમાં શુકદેવજીએ જે ‘વા’ પદ મૂકેલું છે તેનો અર્થ એ કે શ્લોકમાં જણાવેલાં છ સાધનો જ ખરાં છે, તેમાં જ શુકદેવજીનો આદર છે, તેનો જ તેમને આગ્રહ છે, અને બીજાં સાધનો નકામાં છે એમ ન માનવું. શ્લોકમાં જણાવેલાં છ સાધનો વિના બીજું પણ કોઈ સાધન હોય. પરંતુ તેમાં એક જ વાત ધ્યાનમાં રાખવાની કે કામ, ક્રોધ વિગેરે જે સાધનો જણાવ્યાં છે, અને બીજાં જે કાંઈ સંભવિત સાધનો હોય, તે બધામાંથી જે એક ભાવ સ્વીકારવામાં આવ્યો હોય તે ભાવ ભગવાનમાં હંમેશા જ-અવિચ્છિન્ન-રાખવો. જો આ પ્રમાણે મનુષ્ય પોતાનો ભાવ ભગવાનમાં અવિચ્છિન્ન-નિરંતર-ન રાખે તો પછી ‘અંતે જે મતિ તે ગતિ’ એ ન્યાય પ્રમાણે તેને પોતાના ભાવનું ફલ ભગવાન વિના બીજું જ મળે. મનુષ્યના અંત સમયે કર્મને લીધે જેમ પુત્ર વિગેરે પદાર્થોનું સ્મરણ થાય છે તેમ ભગવાનનું સ્મરણ થતું નથી, કારણ કે ભગવાન અને જગત્ એ બે વચ્ચે વિરોધ છે. તેથી જ લોકો ભગવાનમાં હંમેશા જ એક કે બીજો ભાવ રાખે છે તે ભગવન્મય થઈ જ જાય છે.

શંકા- જો મનુષ્ય ભગવાનમાં કામ ક્રોધ વિગેરે કરે તો તેને બીજાં દુઃખો સહન કરવાં પડે છે; તો પછી કામ, ક્રોધ વિગેરે ભાવ ભગવાનમાં નિત્ય શી રીતે રાખી શકાય?

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું નિરાકરણ કરવાને માટે શુકદેવજી મૂલ શ્લોકમાં ‘હરૌ’ એ પ્રમાણે કહે છે. ભગવાન તો હરિ છે, સર્વ દુઃખના હરનાર છે. જ્યારે

મનુષ્ય કોઈ પણ ભાવ ભગવાનમાં નિત્ય રાખે છે ત્યારે તેને આખું જગત્ જ ભગવન્મય જણાય છે. જ્યારે શ્રીગોપીજનોએ ભગવાનમાં કામબુદ્ધિ નિત્ય રાખી અને તે ભાવના દ્વારા જ્યારે તેમને આખું જગત્ જ ભગવન્મય જણાયું, ત્યારે તો તેમનો પોતાનો આત્મા ભગવન્મય જણાય તેમાં શું આશ્ચર્ય? આ ઉપરથી એટલું સિદ્ધ થાય છે કે જે લોકો ભગવાનમાં કોઈ પણ ભાવ હંમેશા જ રાખે છે તેમને, બધેય ભગવાનનો આવેશ થવાથી, આખું જગત્ જ ભગવન્મય જણાય છે; અને તે પોતે ભગવન્મય જ થાય છે.

મનુષ્યની ભગવદ્ભાવના જ્યારે અતિ તીવ્ર થાય છે ત્યારે તેના પોતાના જીવ, અંતઃકરણ, પ્રાણ, ઈન્દ્રિય, દેહ, વિષય, ઘર, અર્થ અને પુત્રાદિકમાં ભગવાનનો આવેશ થાય છે; માટે તેણે કામ ક્રોધ વિગેરે ઉપાયોથી એવી ભગવદ્ભાવના કરવી કે, જે પ્રમાણે જ્ઞાન પ્રાપ્ત થતાં જ્ઞાનીને જગતનો લય થાય છે તે પ્રમાણે, તેને-ભક્તને-જગતનો નાશ થાય. ૧૫.

વળી પહેલાં-સારસ્વત કલ્પમાં-જ ગોપીજનો મુક્ત થઈ ગયાં. તેમાં શું આશ્ચર્ય? કારણ કે આગળ ઉપર ઘણાય માણસો મુક્ત થશે. આ વાત શુકદેવજી 'ન ચૈવમ્' એ સોળમા શ્લોકમાં કહે છે. હે રાજન્, આ પ્રમાણે તમારે ભગવાનમાં અસંભાવનારૂપ-ભગવાનમાં આવું સંભવી શકે નહિ એવો-વિસ્મય કરવો જોઈએ નહિ; કારણ કે ભગવાનમાં આવી અસંભાવનાની બુદ્ધિ રાખવાથી બીજું જ સ્કુરે એવો નિયમ છે. તમારે પ્રભુની બાબતમાં જરા પણ આશ્ચર્ય પામવું નહિ, કારણ કે તે તો ભગવાન છે. મોક્ષ મેળવાવાને માટે જ્ઞાન વિગેરે જે સાધનની જરૂર હોય છે તે સર્વ ભગવાનમાં જ છે. જો તમે એમ માનશો કે જ્ઞાન વિના મોક્ષ નહિ મળે, તો જ્ઞાન ભગવાનમાં પહેલેથી સિદ્ધ છે, એટલે ભગવાન તો જ જ્ઞાન પોતાના ભક્તોને આપશે. વળી બીજો માણસ તો કદાચ સંદેહ કરે પણ ખરો, કારણ કે તેણે ભગવાનના માહાત્મ્યનો અનુભવ કર્યો નથી; પરંતુ તમારે તો આવો સંદેહ ભગવાનને વિષે કરવો જોઈએ નહિ, કારણ કે તમે ગર્ભાવસ્થામાં જ ભગવાનના માહાત્મ્યનો અનુભવ કર્યો છે. વળી જે પદાર્થ દોષરહિત છે તેમાં બધું સંભવી શકે છે. દોષોનું મૂલ કારણ જન્મ છે, અને જ્યાં જન્મ ન હોય ત્યાં દોષ પણ હોતો નથી. માટે ભગવાન પોતે અજ-જન્મરહિત-છે, એટલે તે નિર્દુષ્ટ-દોષરહિત-છે. ભગવાન વિના બીજા બધાય પદાર્થો જન્મ પામે છે, તેથી તેમના દ્વારા દોષવાળા મનુષ્યોને મુક્તિ મળતી નથી, કારણ કે ભગવાન વિનાના અન્ય પદાર્થો અને મનુષ્યો એ બંનેય દોષવાળા હોવાથી સરખા છે. વળી જે સાધન કરે છે તે મુક્ત થાય છે. જે મન બધેથી નિવૃત્ત થએલું છે તે

મુક્તિ મેળવવાને માટે સાધન બને છે. યોગ કરવાથી મન બધેથી નિવૃત્ત થાય છે, અને આ યોગના નિયામક - ઈશ્વર-ભગવાન જ છે. જો બીજા કોઈ માણસને પણ મોક્ષ મળે તો તે ભગવદ્દિશ્ચાથી જ થાય છે, કારણ કે યોગ વિગેરે મુક્તિ મેળવવાનાં સાધનોનું નિયમન ભગવાન જ કરે છે. વળી સદાનંદ કૃષ્ણ ભગવાન ઈલરૂપ છે. જે કોઈ માણસ મુક્ત થશે તે આ ભગવાન કૃષ્ણને જ પ્રાપ્ત કરશે. તેથી સાધનો વડે પણ આ કૃષ્ણ ભગવાનની જ પ્રાપ્તિ થવાની છે. આ જ ઈલરૂપ કૃષ્ણ પરમાત્મા વ્રજમાં પોતાની મેળે જ પ્રકટ થયા છે અને તેમની સાથે જ ગોપીજનોનો સંબંધ થયો છે એટલે એમાં કાંઈ પણ અયોગ્ય નથી. વળી કૃષ્ણ ભગવાનને લીધે જ આ દેખાતું બધું જગત્ મુક્તિ મેળવશે. આ પ્રમાણે શુકદેવજી ભાવના વડે ગોકુલમાં જઈને કહે છે અથવા તો જ્ઞાનદષ્ટિથી કહે છે. ભગવાન સાક્ષાત્ અથવા પરંપરાથી સર્વને જ મુક્ત કરશે એમ આગળ ઉપર અગીઆરમા સ્કંધના પહેલા અધ્યાયમાં ‘સ્વમૂર્ત્યા’ ઈત્યાદિ બે શ્લોકમાં શુકદેવજી કહેશે. ૧૬.

(અથવા તો ૧૨ થી ૧૬ શ્લોક સુધીનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ આપી શકાય એમ શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી કહે છે). (ગોપીજનોએ પોતાના ગુણમય દેહનો ત્યાગ કર્યો તે સંબંધમાં પરીક્ષિત્ રાજા ‘કૃષ્ણમ્’ ઈત્યાદિ બારમા શ્લોકમાં શંકા ઉઠાવે છે કે આ ગોપીજનો કૃષ્ણ ભગવાનને પોતાના શ્રેષ્ઠ કાન્ત તરીકે ઓળખે છે, નહિ કે બ્રહ્મ તરીકે, તો પછી તેમનો ગુણપ્રવાહ-સંસાર-કેમ નાશ પામ્યો? પરીક્ષિત્ જે શંકા કરે છે તેનો ખરેખરો ભાવ આ પ્રમાણે છે. ભગવાનનું બ્રહ્મ તરીકે જ્ઞાન મેળવવું તે શાસ્ત્રીય છે, અને તે સાત્ત્વિક હોવું જોઈએ, કારણ કે ‘સત્ત્વમાંથી જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે’ એમ ભગવાને ગીતાજીમાં આજ્ઞા કરી છે. આ ગોપીજનો તો ગુણાતીત, આનંદમાત્રકરપાદમુખોદરાદિ, પ્રકટ અને અનંતગુણપૂર્ણ ભગવાનના સૌંદર્યાદિ ગુણોમાં આસક્ત થએલાં છે. એટલે વાસ્તવિક રીતે તે નિર્ગુણ છે. અને જ્યારે ગોપીજનો નિર્ગુણ જ છે તો પછી એમનો ગુણપ્રવાહ-સંસાર-નાશ કેવી રીતે પામે? કારણ કે નાશ એ અભાવરૂપ છે, અને અભાવને પોતાના પ્રતિયોગીની અપેક્ષા રહે છે, અને ગોપીજનોમાં આ પ્રતિયોગીનો જ અભાવ છે. તાત્પર્ય એ કે જ્યારે ગોપીજનો નિર્ગુણ જ છે અને તેથી તેમનામાં ગુણપ્રવાહ હોવાનો સંભવ જ નથી, તો પછી તેમનો ગુણપ્રવાહ નાશ પામ્યો એમ શી રીતે કહી શકાય? જે વસ્તુ હોય તેનો જ નાશ થાય; ગોપીજનો નિર્ગુણ છે એટલે તેમનામાં ગુણપ્રવાહ જ નથી, તો પછી તેના નાશની વાત જ કેવી? પરીક્ષિત્ શુકદેવજીને ‘હે મુને’ એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તેનો ભાવ એવો છે કે શુદ્ધ સત્ત્વ જ્યારે પ્રકટ થાય છે ત્યારે જ્ઞાનનો ઉદય

થાય છે એવો અનુભવ શુકદેવજીએ પોતે જ મુનિ હોવાથી કરેલો છે એટલે સત્ત્વમાંથી જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે એ સિદ્ધાંતને તેમનો પોતાનો જ ટેકો મળે છે.

શુકદેવજી પરીક્ષિતના પ્રશ્નનો ઉત્તર ‘ઉક્તમ્’ ઇત્યાદિ તેરમા શ્લોકમાં આપે છે. પહેલાં સાતમા સ્કંધના પહેલા અધ્યાયમાં ‘ગોપીઓ કામથી’ ઇત્યાદિ શબ્દોમાં આ પ્રશ્નનું નિરાકરણ કરવામાં આવ્યું છે. આ વિષયમાં આ પ્રમાણે અર્થ છે. જેમ શિશુપાલ વિગેરેની બુદ્ધિ ગુણાતીત ભગવાનમાં જ રહેલી હતી છતાં પણ તેમાં દ્રેષ વિગેરે કારણ હોવાથી તેઓ તામસ ગણાય છે, તેમ આ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોની બુદ્ધિ નિર્ગુણ ભગવાનમાં જ રહેલી છે છતાં પણ તેમાં જ્ઞરબુદ્ધિ કારણ હોવાથી તેઓ સગુણ જ છે એમ જણાય છે. ભગવાનમાં રહેલા આ અલૌકિક રસની પ્રાપ્તિ કેવલ સર્વભાવપૂર્વક પ્રપત્તિ કરવાથી થાય છે. જ્યારે ગોપીજનોની ભગવાનમાં જ્ઞરબુદ્ધિ હોય ત્યારે તો તેમનામાં સર્વભાવપ્રપત્તિ હોઈ શકે નહિ, કારણ કે ભગવાન કામ પૂર્ણ કરે છે એમ ધારવાથી જ જ્ઞરબુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે એ નિયમ છે. ભગવાનમાં દ્રેષ, જ્ઞરબુદ્ધિ વિગેરે રાખવાથી ભક્ત સગુણ બને છે. અને આ સગુણત્વ સર્વભાવથી ભગવાનને શરણે જવામાં પ્રતિબંધ કરે છે. તેથી જેમ શિશુપાલ વિગેરેએ પોતાના અધિકાર પ્રમાણે પોતાના દ્રેષમય શરીરનો નાશ થતાં ભગવાનના ચરણાવિંદની પ્રાપ્તિ કરી તે પ્રમાણે આ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોએ પણ પોતાના અધિકાર પ્રમાણે પોતાના જ્ઞરબુદ્ધિવાળા શરીરનો નાશ થતાં સગુણત્વનો નાશ થવાથી સર્વભાવપ્રપત્તિથી જ પોતાના પતિ કૃષ્ણ ભગવાનનું ભજન કર્યું. એટલે આ બાબતમાં કોઈ જાતનો દોષ નથી. જો આ પ્રમાણે માનવામાં ન આવે તો ‘જે લોકો જે પ્રકારે મારે શરણે આવે છે’ એ ગીતાજીમાં જણાવેલી મર્યાદાનો ભંગ થાય. આ બધાનો વિચાર કરીને શુકદેવજીએ કહ્યું કે ‘ઉક્તં પુરસ્તાદેતત્તે’-આ તો તમને પહેલા કહેવામાં આવ્યું છે.

શંકા- પણ ગોપીજનો ભગવાનમાં જ્ઞરબુદ્ધિ રાખીને ભગવાનને શરણે ગયાં છે, અને આ પ્રકારની જ પ્રપત્તિ મૂલમાં હોવાથી સર્વભાવપ્રપત્તિ વડે મળનારું ફલ ગોપીજનોને કેવી રીતે મળશે?

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘દ્વિષત્રપિ’- દ્રેષ કરતો હોય તો પણ. આનો અર્થ આ પ્રકારનો છે. શિશુપાલને મોક્ષનું સુખ મેળવવાની ઈચ્છા ન હતી, ઉલટું તે ભગવાનમાં મોક્ષવિરોધી દ્રેષ કરતો હતો. જ્ઞાનીઓને પણ દુર્લભ એવી મુક્તિ ભગવાને જેમ દ્રેષવાળા શિશુપાલને આપી તેમ ગોપીજનોને-જો કે તેઓ જ્ઞરબુદ્ધિથી ભગવાનને શરણે ગયાં હતાં તો પણ-તે

પ્રકારનું ફલ આપ્યું. આ ઉપરથી એટલું સૂચિત થાય છે કે જેમ દ્રેષ અને મુક્તિ એ બેમાં તારતમ્ય-અંતર, વૈષમ્ય-છે, તેમ જ્ઞરબુદ્ધિએ કરેલા ભજન અને ભગવદ્રસ એ બેમાં પણ તારતમ્ય છે.

શંકા-ભગવાનની ક્રીડામાં ગોકુલ ઉપયોગી હોવાથી તેનો સર્વ રીતે અંગીકાર કરવામાં આવ્યો હતો એટલે સર્વ ગોકુલ જ નિર્ગુણ હતું તો પછી આ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોને સગુણ કેમ કહેવામાં આવે છે? વળી આગળ ઉપર ફલદશામાં જ જ્યારે કેવલ સર્વભાવપ્રપત્તિ વડે મળનારું ફલ આપવાની ભગવાનની ઈચ્છા છે તો પછી ભગવાને પહેલેથી જ ગોપીજનોમાં સર્વાત્મભાવ કેમ ઉત્પન્ન ન કર્યો?

સમાધાન- આનો ઉત્તર અમે આ પ્રમાણે આપીએ છીએ. સર્વ ગોકુલ નિર્ગુણ છે છતાં પણ ભગવાને અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોને સગુણ બનાવ્યાં તેમાં નીચે જણાવેલાં પ્રયોજનો રહેલાં છે :

(૧) જે ગોપીજનોનો સંબંધ ભગવાનની સાથે સાક્ષાત્-દેહત્યાગ વિના- જ થયો હતો તે બધાંય રાસમંડલનાં ભૂષણરૂપ ગોપીજનોનાં શરીર પણ ગુણાતીત જ હતાં તે જણાવવાને ભગવાને જ કેટલાંક ગોપીજનોને સગુણ દેહ આપ્યો.

(૨) મુખ્ય ગોપીજનોનો ભાવ પણ નિર્ગુણ હતો એ જણાવવાને માટે અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોમાં ભગવાને જ સગુણભાવ ઉત્પન્ન કર્યો.

(૩) અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોના આ સગુણ ભાવનો નાશ કરનાર પણ ભગવાન પોતે જ છે, બીજો કોઈ જીવ અથવા બ્રહ્માદિ દેવ નથી એ જણાવવાને માટે ભગવાને પોતે જ એ સગુણ ભાવનો નાશ કર્યો.

(૪) ભગવાનથી થએલા વિરહને લીધે ગોપીજનોને થતું દુઃખ, ભગવાનની સાથે સમાગમ થવાથી ગોપીજનોને થતું સુખ-આ બંનેય દુઃખ અને સુખ કર્મથી ઉત્પન્ન થયું નથી તે જણાવવાને માટે ગોપીજનોનાં બધાં શુભ અને અશુભ કર્મોનો નાશ કરીને ભગવાને તેમને પોતાની પ્રાપ્તિ કરાવી.

આ પ્રમાણે બધું મારા સ્વામીએ-પ્રભુએ-જ કર્યું છે એમ તાત્પર્ય છે. અહિં પુષ્ટિમાર્ગને અનુસરીને જે સમાધાન આપવામાં આવેલું છે તેમાં મર્યાદામાર્ગને અનુસરીને કાઢવામાં આવતાં દોષોને અવકાશ નથી એટલે એ બધા દોષો દૂર થઈ જ ગયા છે એટલે આ બધો પ્રસંગ નિર્દોષ અને શુદ્ધ છે. તેથી શુકદેવજીએ પણ ‘જહુર્ગુણમયં દેહમ્’-ગુણમય દેહનો તેમણે ત્યાગ કર્યો-એ પ્રમાણે સગુણ દેહના ત્યાગની જ વાત કહી. અને તે રીતે તેમણે પોતાનો અભિપ્રાય દર્શાવ્યો કે આગળ ઉપર આ ગોપીજનોને ગુણાતીત દેહની પ્રાપ્તિ થવાની છે. ગુણાતીત દેહની પ્રાપ્તિ

કરીને ગોપીજનોએ ભગવાનની સાથે રમણ કર્યું તે વાત ગુપ્ત રાખવા જેવી હોવાથી શુકદેવજીએ તે સ્પષ્ટ કહી નથી. આ પ્રમાણે જે માનવામાં ન આવે તો પછી ‘ગુણમય’ પદ વ્યર્થ થઈ જાય. ૧૩.

શંકા- ઉપર જણાવેલાં ચાર પ્રયોજનોને માટે ભગવાને આ પ્રમાણે કર્યું એમ શી રીતે જાણવું? કારણ કે એમાં કોઈ પણ જાતની યુક્તિ નથી.

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું નિરાકરણ કરવાને માટે શુકદેવજી ‘નૃણામ્’ ઈત્યાદિ ચૌદમા શ્લોકમાં યુક્તિ આપે છે. અહિં આ આશય છે. લીલા અને તેનું પાન કરનારા ભક્તો વિષે, અને તેમાં પણ ખાસ કરીને રાસનો આનંદ લેનારાં શ્રીગોપીજનો વિષે, જે સાધારણ બુદ્ધિ-આ તો સાધારણ માણસો છે, સગુણ ભક્તો છે એ પ્રકારની બુદ્ધિ-રાખવામાં આવે છે તે તો તેમના ઉપર દોષ મૂકવા જેવું છે; કારણ કે રાસમાં ભાગ લેનારાં શ્રીગોપીજનો ગુણાતીત છે, અને જે ભક્ત સગુણ હોય છે તે દોષવાળો ગણાય છે, અને લીલા અને તેમાં ભાગ લેનારા ભક્તોને માટે સાધારણ બુદ્ધિ રાખવાથી ભગવાનનું સ્વરૂપ અને લીલા એ બંનેય સગુણ થઈ જાય છે. અને આ પ્રમાણે ભગવાનનું સ્વરૂપ અને લીલા એ બે સગુણ થાય તો પછી તે મુક્તિનો પ્રતિબંધ જ કરે છે; અર્થાત્ તે મુક્તિ આપી શકશે નહિ. અને જે ભગવાનનું સ્વરૂપ અને લીલા મોક્ષ ન આપી શકે તો પછી ભગવાનના અવતારનું જે પ્રયોજન છે તેની સાથે વિરોધ આવે છે. માટે અન્યથાનુપપત્તિથી જ-ભગવાનના અવતારનું પ્રયોજન બીજે કોઈ પણ પ્રકારે બરોબર સમજાવી શકાતું નથી એ કારણથી જ-એમ માનવું પડે છે કે ઉપર જણાવેલાં ચાર પ્રયોજનોને માટે જ ભગવાને તે પ્રમાણે કર્યું છે. ભગવાનની લીલા મોક્ષ આપનારી છે. જેમ ભગવલ્લીલા અને તેના ભક્તોને સગુણ માનવાથી મોક્ષ મળતો નથી તેમ તેમને નિર્ગુણ માનવાથી મોક્ષ મળે છે એ સિદ્ધાંત સમજાવવાને માટે ઉપર જણાવેલાં ચાર પ્રયોજનો આપવામાં આવેલાં છે. આ ચૌદમા શ્લોકનો અર્થ પહેલાંની માફક જ કરવાનો છે. ૧૪.

શંકા- અત્યાર સુધી સગુણ ભક્તોની સાથે જે લીલા ભગવાને કરી તે લીલા સગુણ છે અને તેથી તેમાં દોષ આવતાં તે લીલા મુક્તિનો પ્રતિબંધ અવશ્ય કરશે જ.

સમાધાન- ઉપરની શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી ‘કામમ્’ ઈત્યાદિ પંદરમા શ્લોકમાં ભગવાને પહેલાં જે લીલા કરી તેનું તાત્પર્ય સમજાવે છે. જે કોઈ ભગવાનમાં કામ, ક્રોધ, ભય, સ્નેહ, ઐક્ય અને સૌહૃદ હંમેશાં જ કર્યા કરે છે તે તન્મય-ભગવન્મય, નિર્ગુણ-થાય છે એ વાત તો સાધારણ નિયમ તરીકે કહેવામાં આવે છે, નહિ કે એકલાં શ્રીગોપીજનોને માટે જ આ વાત કહેવામાં આવી છે. તેથી



આ શ્લોકમાં ક્રોધ, ભય વિગેરેનું પણ કથન છે. આ શ્લોકમાં જણાવેલો સિદ્ધાંત સર્વસાધારણ છે એમ જો આપણે ન માનીએ તો અહિં શ્રીગોપીજનોના પ્રસંગમાં ક્રોધ વિગેરે ભાવોને અવકાશ મળતો નથી એટલે તે બધા ભાવોનું આ શ્લોકમાં કરેલું વર્ણન નકામું થઈ જશે. અર્થાત્ જે કોઈ સગુણ ભાવથી પણ ભગવાનનું ભજન કરે છે તેને ભગવાન પોતાને શોભે એવું જ મુક્તિરૂપ ફલ આપે છે એ દર્શાવવાને માટે ભગવાને પહેલાંની લીલા કરેલી છે. આ પ્રમાણે જો આપણે ના માનીએ તો પછી એકલા મુખ્ય અધિકારીઓને જ ભગવાનની પ્રાપ્તિ થાય, અને જો આ વાત બીજા લોકો જાણે તો પછી ભગવાનની પ્રાપ્તિ કરવાને માટે તે લોકો કોઈ પણ જાતનો પ્રયત્ન કરશે નહિ, અને જો તે પ્રમાણે થયું તો પછી મુક્તિનો નાશ જ થઈ જશે. અને જ્યારે મુક્તિનો નાશ થયો ત્યારે તો શાસ્ત્રનું પ્રયોજન પણ રહેશે નહિ, કારણ કે જે મુખ્ય અધિકારીઓ છે તે તો શાસ્ત્રની અપેક્ષા રાખ્યા વિના જ પોતાની મેળે જ ભગવત્પ્રાપ્તિને માટે પ્રવૃત્તિ કરશે જ. અર્થાત્ શાસ્ત્ર સામાન્ય માણસોને માટે છે, મુખ્ય અધિકારીઓને માટે નથી; અને જો સામાન્ય માણસોને મોક્ષ મળવાનો જ ન હોય તો શાસ્ત્ર વ્યર્થ થઈ જાય છે.

ભગવાનનું સ્વરૂપ અને લીલા એ બંને કોઈ દિવસ સગુણ હોતાં જ નથી, કારણ કે જ્યારે સગુણ ભક્તો પણ લીલામાં પ્રવેશ કરે છે ત્યારે તેઓ પણ નિર્ગુણ થઈ જાય છે. દોષ દૂર કરનારું ઔષધ જ્યારે રોગી માણસને આપવામાં આવે છે ત્યારે તે રોગી માણસના સંબંધથી તે ઔષધ રોગ-દોષ-વાળું થતું નથી જ; અને જો તે ઔષધ રોગીના સંબંધથી દોષવાળું થાય તો પછી તે ઔષધ દોષ દૂર કરી શકે નહિ. ભગવાનની લીલા જો વિષયના જેવી જ હોય તો ભગવાનની એક જ વેણુનાદ-લીલાથી સગુણ અને નિર્ગુણ એ બંનેય પ્રકારના ભક્તોનો નિરોધ થઈ શકે નહિ. જેમ ક્રોધભાવથી ભગવાનનું કરેલું ભજન હલકી કોટિનું છે તેમ કામભાવથી ભગવાનનું કરેલું ભજન પણ હલકા પ્રકારનું છે એ દર્શાવવાને માટે પણ શુક્રદેવજીએ આ શ્લોકમાં ક્રોધ, ભય વિગેરે ભાવોનું નિરૂપણ કરેલું છે એમ જાણવું. મૂલ શ્લોકમાં આવેલા 'તન્મયતા' શબ્દનો અર્થ નિર્ગુણતા છે. ૧૫.

ભગવાનની લીલા વિષે પરીક્ષિત્ રાજાને નીચે જણાવેલી અનેક શંકાઓ થાય છે. (૧) જેમ અગ્નિનો સંબંધ ઝનું અસ્તિત્વ સહન કરતો નથી અને તેને બાળી જ નાખે છે તેમ જ્યારે ભક્તોનો ભગવાનના શ્રીઅંગ સાથે સાક્ષાત્ સંબંધ થયો ત્યારે ભગવાનનું સ્વરૂપ ભક્તોની સગુણ અવસ્થા સહન નહિ કરે અને તેનો નાશ કરશે. પણ અહિં તો ભગવાનની સાથે સગુણ ભક્તોનો સંબંધ થએલો હોવા છતાં પણ

ભક્તોની સગુણ અવસ્થા રહેલી છે એ આશ્ચર્યની એક વાત. (૨) અલૌકિક ભગવાને લૌકિક રીતે ભગવાનમાં કામબુદ્ધિ રાખનારાં શ્રીગોપીજનોની સાથે જે રમણ કર્યું એ આશ્ચર્યની બીજી વાત. (૩) શિશુપાલ વિગેરેએ ભગવાનમાં ક્રોધાદિ ભાવ રાખ્યો હતો, છતાં પણ તેમને ક્રોધાદિભાવનું ફલ ભોગવ્યા વિના જ ભગવત્પ્રાપ્તિ થઈ એ આશ્ચર્યની ત્રીજી વાત. (૪) ભગવાનમાં સ્નેહ રાખનારા વૃષ્ણિકુલના માણસોને જે ફલ મળ્યું તેવું જ ફલ ક્રોધાદિ ભાવ રાખનારા શિશુપાલ વિગેરે મનુષ્યોને પણ મળ્યું એ આશ્ચર્યની ચોથી વાત. (૫) શ્રીગોપીજનોનો ભાવ યશોદાજીના પુત્રમાં જ હતો. યશોદાજીના પુત્ર વનમાં રહેતા હતા, છતાં પણ તે શ્રીગોપીજનોના ધ્યાનમાં પ્રાપ્ત થયા એ આશ્ચર્યની પાંચમી વાત. (૬) આ શ્રીગોપીજનોને કોઈ પણ પ્રકારનું સાધન કર્યા વિના જ તે જ સમયે-ધ્યાનમાં ભગવત્પ્રાપ્તિ થઈ તે જ સમયે-નિર્ગુણ દેહની પ્રાપ્તિ થઈ એ આશ્ચર્યની છઠ્ઠી વાત. (૭) ભગવાન આગળ ઉપર જે રાસલીલા કરવાના છે તેનો અનુભવ ફક્ત સર્વાત્મભાવવાળાં શ્રીગોપીજનોને જ થાય છે, જ્યારે બીજી લીલાનો અનુભવ સર્વાત્મભાવ વિનાનાં ગોપીજનોને પણ થાય છે એ આશ્ચર્યની સાતમી વાત.

આ પ્રમાણે પરીક્ષિત્ રાજાને અનેક વિસ્મયોથી ચકિત થયેલા જોઈને શુકદેવજી તે બધી શંકાઓનું અનુક્રમે સમાધાન કરે છે અને સાથે સાથે અગીઆરમા શ્લોકમાં જે જાનબુદ્ધિવાળાં શ્રીગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તેમને ભગવત્પ્રાપ્તિ શા કારણથી થઈ તે પણ ‘ન ચૈવમ્’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં સમજાવે છે. પરીક્ષિતનું પહેલું આશ્ચર્ય દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી આ શ્લોકમાં ‘ભવતા’ પદ મૂકે છે. અહિં આ ભાવ છે. હે રાજા! પહેલાં જ્યારે તું તારી માતા ઉત્તરાના ઉદરમાં હતો ત્યારે અશ્વત્થામાએ તારા ઉપર બ્રહ્માસ્ત્ર ફેંક્યું, આ બ્રહ્માસ્ત્રને કોઈ પણ પાછું વાળી શકે એવું ન હતું. તે સમયે ભગવાને જોયું કે પાંડવોની વંશવૃદ્ધિને માટે પરીક્ષિતની જરૂર છે અને આ પરીક્ષિત્ તો બ્રહ્માસ્ત્રથી મરાયો; એટલે તરત જ ભગવાને પોતે જ તારું ગર્ભાવસ્થામાં રક્ષણ કર્યું. પણ હવે હે રાજા! ભગવાનને તારું પ્રયોજન નથી એટલે એક મુનિકુમારના શાપમાંથી પણ તે અત્યારે તારું રક્ષણ કરતા નથી તે તું પોતે જ અનુભવી રહ્યો છું. આ પ્રમાણે કરવાથી કાંઈ ભગવદ્રૂપ પદાર્થની શક્તિમાં કોઈ જાતની ન્યૂનતા થતી નથી, કારણ કે ભગવાનની બધી શક્તિઓ તેમની ઈચ્છાશક્તિને અધીન છે, અને ભગવાનની ઈચ્છાશક્તિ બીજી બધી શક્તિઓ કરતાં અધિક છે. જ્યારે અગ્નિની દાહકશક્તિ મંત્રબળ વડે અટકાવવામાં આવે ત્યારે આપણે એમ ન કહી શકીએ કે અગ્નિની દાહકશક્તિનો નાશ જ થઈ ગયો. પ્રકૃત

વિષયમાં પણ ‘યાસાં સાક્ષાત્’ ઈત્યાદિ પંક્તિઓમાં જે પ્રયોજન દર્શાવવામાં આવ્યાં છે તે જ પ્રયોજનો માટે ભગવાને કેટલાંક ગોપીજનોને સગુણ બનાવ્યાં છે એમ સમજીને તમારે વિસ્મય કરવો જોઈએ નહિ. ભગવાનના સામર્થ્યનો અનુભવ ન હોવાથી બીજો માણસ કદાચ શંકા કરે પણ ખરો, (પરંતુ તમે ભગવાનના માહાત્મ્યનો અનુભવ કરેલો છે એટલે તમને આ વિષયમાં આશ્ચર્ય થવું જોઈએ નહિ.) શુકદેવજી ‘ભગવતિ’ એ પદ વડે બીજા અને ત્રીજા વિસ્મયનો પરિહાર કરે છે. ખરેખર! ઈશ્વર સર્વ રસના ભોક્તા છે, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ભગવાન્ સર્વરસ છે. કામરસનો વિશિષ્ટ અનુભવ કામભાવવાળી સ્ત્રીઓમાં થાય છે, કારણ કે કામશાસ્ત્રમાં તે પ્રમાણે જ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. માટે ઐશ્વર્યવાળા ભગવાનને વિષે તમારે આવો વિસ્મય કરવો નહિ. (ત્રીજા વિસ્મયનો પરિહાર કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે) ભગવાનમાં જે વીર્ય ગુણ રહેલો છે તે બીજાં સાધનોથી સિદ્ધ ન થઈ શકે એવા પદાર્થોને સિદ્ધ કરી શકે છે અને તેથી તે ઘણું ઉગ્ર છે, અને તેથી જ બીજાં સાધનોથી નાશ ન પામે એવા ક્રોધાદિ દોષોનો પણ ભગવાન્ પોતાના વીર્ય વડે નાશ કરવાને સમર્થ છે; એટલે એવા વીર્યવાળા ભગવાનને વિષે તમારે વિસ્મય કરવો જોઈએ નહિ. (ચોથો વિસ્મય દૂર કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે) યશ ખરેખર અસાધારણ છે અને અસાધારણ કર્મ કરવાથી તે પ્રાપ્ત થાય છે. જો ભગવાન્ એકલા સ્નેહવાળા ભક્તોને જ મુક્તિ આપે અને દ્વેષ કરનારાઓને ન આપે તો તે બીજા સાધારણ માણસોની માફક જ વર્તે છે અને તેથી ભગવાનને અસાધારણ યશ મળે નહિ. સ્નેહ વિગેરે ધર્મોવાળા મનુષ્યોને ભગવાન્ જે ફલ આપે છે તે ફલ જો ભગવાન્ ભય, દ્વેષ વિગેરે ધર્મોવાળા મનુષ્યોને આપે તો તે ખરેખર અસાધારણ કહેવાય, અને તેથી તેમને અસાધારણ યશ મળે. આ પ્રમાણે ભગવાનનો અસાધારણ યશ સહજ છે, અને તેથી તે યશ દર્શાવનારા ધર્મો પણ ભગવાનમાં સહજ જ છે; માટે તમારે આ વિસ્મય કરવો જોઈએ નહિ. શ્રી એટલે લક્ષ્મીજી. ભગવાનમાં તેમનો સ્નેહ એવા પ્રકારનો છે કે ભગવાનના વક્ત્રુસ્થલ ઉપર સ્થાન મેળવીને પણ લક્ષ્મીજી તેમના ચરણરજની ઈચ્છા કરે છે અને દરેક અવતારમાં ભગવાનની સાથે તે પોતે અવતરે છે. આ પ્રમાણે ભગવાન્ હંમેશાં શ્રીવાળા છે એટલે તે સ્નેહરસને પૂરેપૂરી રીતે જાણનારા છે, અને તેથી જ સ્નેહવાળા મનુષ્યોને તે સ્વરૂપદાન કરે છે એ બરોબર છે. (ભગવાનની સાથેનું) ઐક્ય જ્ઞાનમાર્ગમાં હોય છે. ભગવાન્ જ્ઞાનવાળા છે એટલે જ્ઞાની માણસો ભગવાનની સાથે ઐક્ય પ્રાપ્ત કરે તે યોગ્ય છે. સૌહાર્દ, સખ્ય હોય તો, સંભવે છે. આ મિત્રતા સરખા આચાર વિચારવાળા માણસોમાં જ હોય છે. ‘હે

બ્રહ્મનુ, જેમની પરા ગતિ હું છું એવા મારા સાધુ ભક્તો વિના હું મારા આત્માની તથા નિત્ય શ્રીની આશા રાખતો નથી. સાધુઓ મારું હૃદય છે અને સાધુઓનું હૃદય હું છું. તેઓ મારા વિના બીજું કાંઈ પણ જાણતા નથી, અને હું પણ તેઓના વિના જરા પણ બીજું જાણતો નથી' ઈત્યાદિ ભગવાનનાં વાક્યો વડે જેમ ભક્ત વિના બીજા કોઈ પદાર્થમાં ભગવાનની આસક્તિ હોતી નથી, અને ભક્તોને વિષે જ આસક્તિ હોય છે અને તે રીતે ભગવાનમાં વૈરાગ્ય સિદ્ધ થાય છે તેમ ભક્તોની પણ આસક્તિ ભગવાનમાં જ હોય છે, અને ભગવાન વિના બીજા કોઈ પણ પદાર્થમાં હોતી નથી, અને તે રીતે ભક્તોમાં વૈરાગ્ય સિદ્ધ થાય છે, એટલે મિત્રતા કરવા યોગ્ય ભક્તોને ભગવાન સૌહાર્દ આપે છે. માટે ભક્તોમાં પહેલાં જણાવેલો વૈરાગ્ય નામનો ધર્મ હોવાથી તેમના પ્રતિ ભગવાન (વૈરાગ્યમૂલક) સૌહાર્દ દર્શાવે એ યોગ્ય છે. ગોપીજનોનો ભાવ યશોદાનંદનમાં છે ઈત્યાદિ વાક્યોમાં રાજાને જે (પાંચમો) વિસ્મય થયો હતો તે દૂર કરવાને શુકદેવજી 'અજે' એ પ્રમાણે કહે છે. જો ભગવાન જીવની માફક કોઈ પણ સ્થલે જન્મ્યા હોત તો એક સ્થલે બહાર પ્રકટ થઈને, ત્યાં ને ત્યાં રહીને જ, અહિં અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોના હૃદયમાં શી રીતે આવ્યા એમ શંકા થાય. પણ ભગવાનને જીવની માફક જન્મ હોતો નથી (એટલે તે શંકાને સ્થાન નથી). જેમ ભગવાન પોતાની ઈચ્છાથી માયાનો પડદો દૂર કરીને યશોદાજીના ઘરમાં પ્રકટ થયા, તેમ વનમાં પ્રકટ થયા, તેમ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોના હૃદયમાં પણ પ્રકટ થયા. તેથી જેમનો જન્મ નથી એવા ભગવાનને વિષે આ વિસ્મય તમારે કરવો જોઈએ નહિ. આગળની પંક્તિઓમાં વર્ણવેલા છઠ્ઠા વિસ્મયને દૂર કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'યોગેશ્વર'. યોગી લોકો, ખરેખર, પોતાના યોગબળથી ભોગને માટે અનેક શરીરો ક્ષણમાત્રમાં એક સામટાં ઉત્પન્ન કરે છે. યોગીઓનો આ યોગ આગંતુક ધર્મ છે, સહજ નહિ. ભગવાન તો આવા પ્રકારના યોગને ઉત્પન્ન કરનાર છે અને તે યોગનું ફલ આપનાર છે, તેથી તે યોગેશ્વરોના પણ ઈશ્વર છે; એટલે ભગવાન સહજ-સ્વાભાવિક-અનંત શક્તિવાળા છે. તેથી તેમણે અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોને અલૌકિક દેહ આપ્યો તેમાં વિસ્મયનું કારણ હોવું જોઈએ નહિ. આગળની પંક્તિઓમાં વર્ણવેલો સાતમો વિસ્મય દૂર કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'કૃષ્ણે'. 'કૃષ્ ધાતુ સત્તાવાચક છે' એ વાક્યથી જણાય છે કે ભગવાન સદાનંદસ્વરૂપ છે, અર્થાત્ નિર્દોષ પૂર્ણગુણ છે. તેથી કૃષ્ણ વિના બીજા બધાય પદાર્થો દોષવાળા છે, અને તે દોષવાળા પદાર્થોમાં પણ પોતાને શાંતિ મળે છે એમ જે જાણે છે તે દોષવાળો જ છે એમ નિશ્ચય થાય છે. આ રાસલીલા સ્વરૂપાનંદરૂપ છે અને તેથી જેમનામાં સર્વાત્મભાવ છે તેમનાથી

જ તે અનુભવાય છે; એટલે જેઓ સર્વાત્મભાવ રહિત છે તેઓ આ રાસલીલાનો અનુભવ કરવાને માટે અધિકારી નથી. તેથી આ વિસ્મય તમારે કરવો જોઈએ નહિ એવો અર્થ છે. વળી તે ગોપીજનોનો સ્નેહ જે પહેલાં વર્ણવવામાં આવ્યો છે તે સાધનરૂપે હતો, પરંતુ ‘દિવસે કામમાં રોકાએલું અને રાત્રિએ સૂઈ જનારું’ એ વાક્ય એમ બતાવે છે કે ગોકુલ તો સર્વસાધનરહિત હોવા છતાં પણ દરેક ક્ષણે ભગવાનના સ્વરૂપમાં લય પામે છે, પણ બીજી આગળની લીલાના રસના અનુભવને માટે ભગવાન વારંવાર તેમને પોતાના સ્વરૂપથી છૂટા પાડીને તે તે લીલાનો અનુભવ કરાવે છે. આ પ્રમાણે અચિંત્ય અનંત શક્તિવાળા ભગવાનને વિષે કાંઈ પણ આશ્ચર્ય નથી એમ કહેવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘યતઃ એતદ્’, જેનાથી આ ગોકુલ મુક્ત થાય છે. શુકદેવજીને તો હમણાં લીલા વિના બીજા પદાર્થનું અનુસંધાન ન હોવાથી તે પોતે ભાવના વડે ગોકુલમાં લીલામાં જ સ્થિતિ કરી રહ્યા છે એટલે તેમણે ‘એતદ્’ એ પ્રમાણે કહ્યું અને ‘મુચ્યતે’ એ પ્રમાણે વર્તમાન કાળનો પ્રયોગ કર્યો. આ પ્રમાણે શુકદેવજી રાસલીલાનો અનુભવ કરી રહ્યા છે એટલે સર્વ વર્ણન યોગ્ય છે.

શંકા- અત્યાર સુધી તમે જે કહ્યું કે રાસમંડલનાં ગોપીજનો નિર્ગુણ છે અને અંતર્ગુણગતા ગોપીજનો સગુણ છે તેનાથી વિરુદ્ધ પણ સારી રીતે કહી શકાય એમ છે. જેમ કે-આ અંતર્ગુણગતા ગોપીજનો પણ પહેલાં જણાવેલાં ગોપીજનોના જેવાં જ છે. તેથી જ આઠમા શ્લોકમાં તેઓ ન ગયાં એમ કહેવામાં આવ્યું. સ્ત્રીઓ આ પ્રકારે પોતાને ઘેર ન જાય એ તો લોકમાં બહુ અસંભવિત છે માટે તે સ્ત્રીઓ ઘેર ન ગયાં તે શી રીતે ઘટી શકે છે એ શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજીએ ‘અંતર્ગુણ’ ઇત્યાદિ ત્રણ શ્લોકો (નવ, દસ અને અગીઆર) કહ્યા. અહિં આ પ્રમાણે તાત્પર્ય છે. પહેલાં આઠમા શ્લોકમાં પતિ વિગેરે શબ્દો વડે ગોપીજનોને અટકાવવા માંડ્યાં. આ પ્રમાણે થતાં, ગોપીજનોની નિવૃત્તિ વિપરીત ક્રિયાથી-પાછા ફરવાથી-થાય. પણ તે વિપરીત સ્વક્રિયાની વાત તો ઘણી દૂર રહી, કારણ કે તેમના જેવાં જ બીજાં કેટલાંક અંતર્ગુણગતા ગોપીજનોનો જ્યારે તેમના પતિ વિગેરેએ ક્રિયા વડે પ્રતિબંધ કર્યો ત્યારે પતિ વિગેરે જેનો પ્રતિબંધ કરતા હતા એવા દેહનો પણ તે ગોપીજનોએ ત્યાગ કર્યો અને પછીથી તે ભગવાનની સાથે સમાગમ પામ્યાં. અર્થાત્ પૂર્વોક્ત સર્વ ગોપીજનો આ પ્રકારનાં-અંતર્ગુણગતા ગોપીજનો જેવાં-જ છે તેથી આઠમા શ્લોકમાં ગોપીજનો ઘેર ન ગયાં એ વાત જે કહેવામાં આવી છે તે બરોબર છે. વળી નવમા શ્લોકમાં આવેલા ‘તદ્ભાવનાયુક્તાઃ’ એ પદમાં ‘તત્’ શબ્દ પહેલાં જણાવેલા પદાર્થનો સંબંધ દર્શાવે છે, અને પહેલાં આઠમા શ્લોકમાં પૂર્વોક્ત શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો ના

ભાવનું જ વર્ણન કરવામાં આવેલું છે; એટલે નવમા, દસમા અને અગીઆરમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોનો ભાવ પહેલાં આઠમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજનોમાં પણ છે એમ જણાય છે. તેથી નવ, દસ અને અગીઆર એ ત્રણ શ્લોકમાં વર્ણવેલાં અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોના બધાય ધર્મો આઠમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજનોમાં પણ છે એમ સિદ્ધ થાય છે. અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોને વિદેહ મુક્તિ આપી એટલે દેહની નિવૃત્તિ વિના મુક્તિ હોતી નથી એ પ્રમાણે શુકદેવજીએ અગીઆરમા શ્લોકમાં કહ્યું. આઠમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજનોને દેહનિવૃત્તિપૂર્વક મોક્ષ મળ્યો નથી એટલે ત્યાં તે પ્રમાણે કહ્યું નથી. આ પ્રમાણે આઠમા શ્લોકમાં જણાવેલાં શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો અને નવ, દસ અને અગીઆર એ ત્રણ શ્લોકમાં જણાવેલાં અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનો એક જ પ્રકારનાં છે; શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો ઉચ્ચકોટિનાં અને અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનો નીચકોટિનાં એમ નહિ.

સમાધાન- અરે! તારા જેવા શંકા કરનારની આ મૂર્ખતાની પરાકાષ્ટા! કારણ કે તારી પાસે વિચારરૂપી ચક્ષુઓ નથી એટલે બહિર્મુખતા અને અસત્સંગરૂપી પર્વતોની ખીણોમાં અકળાઈને પડવાથી તારું અંતઃકરણ એટલું બધું દુષ્ટ થઈ ગયું છે કે શુકદેવજી જેવા મુનિઓ જે કહે છે તેનો પણ તું વિચાર કરતો નથી. જો. ગોપીજનો ઘેર ન ગયાં એ વસ્તુ લોકમાં અસંભવિત છે અને તેથી તે કેમ સંભવે-આ શંકાને દૂર કરવાને માટે નવ, દસ અને અગીઆર એ ત્રણ શ્લોકમાં જણાવેલી કથાનું તે વર્ણન કર્યું અને તેનો ભાવ પણ તે વર્ણવ્યો. તો હવે એ કથાનો અર્થ હું તને પૂછું છું:-આ કથા કલ્પિત છે કે તે સિદ્ધ જ હતી અને તેનો અર્થિક અનુવાદ કરવામાં જ આવ્યો છે? જો સિદ્ધાનુવાદરૂપી બીજો પક્ષ તને સંમત હોય તો પછી એ વિષે હું તને પ્રશ્ન પૂછું છું કે બધાં ગોપીજનોનો પ્રતિબંધ કરવામાં શો હેતુ છે?

આઠમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં સ્વપ્રિયા ગોપીજનો પણ સગુણ છે એ દર્શાવવા આ અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોનો પ્રતિબંધ ભગવાને પોતે જ પતિ વિગેરેની દ્વારા કર્યો-એમ જો તું કહેતો હોય તો ખરેખર! તે ખેદની વાત છે, અને આ પ્રમાણે વિચાર કરતાં તારા હૃદયના સો કકડા કેમ ન થઈ ગયા તે હું સમજી શકતો નથી. કારણ કે જ્યાં મર્યાદાભક્તિમાર્ગની સેવા વિષેની શ્રદ્ધા પણ નિર્ગુણ છે ત્યાં સાક્ષાત્ ભગવાનનો સમાગમ કરનારી ગોપીજનો જેમનું આઠમા શ્લોકમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે સગુણ છે એમ તું કહે છે (તેથી મને ઘણો ખેદ થાય છે.) વળી 'તે ગોપીજનોનું મન મારામાં છે, તેમની ઈન્દ્રિયો મારામાં છે અને મારે માટે તેમણે દેહની ઉપયાગી વસ્તુઓનો ત્યાગ કર્યો છે' ઈત્યાદિ શબ્દોમાં ભગવાને પોતે જ ગોપીજનોની સ્તુતિ

કરી છે; ‘ઉદ્ધવ મારાથી જરા પણ ન્યૂન નથી’ એ પ્રમાણે ભગવાને જેમની સ્તુતિ કરી છે એવા ઉદ્ધવજી પણ ‘આ ગોપીજનો ઉત્તમ પ્રકારે દેહ ધારણ કરનારાં છે’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં ગોપીજનોના ચરણરજની પ્રાર્થના કરીને તેમની સ્તુતિ કરે છે. તો પછી એવાં ગોપીજનોમાં સગુણત્વના ગંધની શંકા પણ ક્યાંથી હોઈ શકે?

શંકા- આઠમા શ્લોકમાં જણાવેલાં ગોપીજનોનો ભગવાનમાં જે સ્નેહ હતો તે કામની ઉપાધિવાળો હતો અને તેથી તે ગોપીજનોનો દેહનિવૃત્તિપૂર્વક મોક્ષ ન થયો એમ કહેવામાં આવ્યું છે.

સમાધાન- આ પ્રમાણે શંકા કરવામાં આવે છે તે યોગ્ય નથી. જો ભગવાનમાં ગોપીજનોનો સ્નેહ કામમૂલક હોય તો ભગવાન પણ જગતના બીજા બધા પદાર્થોના જેવા થઈ જાય, અને તેથી ‘બધા વિષયોનો સંપૂર્ણ ત્યાગ કરીને’ એ ગોપીજનોનું વચન ઘટી શકે નહિ, કારણ કે (ગોપીજનોનો ભગવાનમાં કામમૂલક સ્નેહ હોય તો) તેઓ ભગવદ્રૂપ વિષયને માટે જ આવેલાં હોવાં જોઈએ. ભગવાન ગોપીજનોના કામનો વિષય થાય તો પણ ભગવાન વિનાના બીજા બધા વિષયોનો ત્યાગ કરવાની વાત ‘સંત્યજ્ય સર્વવિષયાન્’ એ શ્લોકમાં કહેવામાં આવેલી છે-એમ કોઈએ શંકા કરવી નહિ; કારણ કે (તેમ શંકા કરવાથી) ‘તમારા ચરણમાં અમે પ્રાપ્ત થયાં છીએ’ એ વચનની સાથે વિરોધ આવે છે. ભગવાનના ચરણકમલને પ્રાપ્ત થવાની વાત કામિની સ્ત્રીઓ કરતી નથી, પરંતુ ભક્તો જ તે પ્રમાણે કહે છે. વળી જ્યારે નાના બાલકરૂપે ભગવાને પૂતનાના પ્રાણ અને સ્તનનું પાન કર્યું ત્યારે ગોપીજનોએ તેમનું રક્ષણ કર્યું હતું. અને પછી શુકદેવજીએ ‘આ પ્રમાણે ભક્તિજન્ય સ્નેહ વડે બંધાએલી ગોપીજનોએ જેમનું રક્ષણ કર્યું એવા ભગવાન....’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કહ્યું કે ગોપીજનોએ ભગવાનનું જે રક્ષણ કર્યું તેનું કારણ એ કે તેમનો ભગવાનમાં ભક્તિજન્ય સ્નેહ હતો. આવા નાના બાલકને વિષે કામોપાધિક સ્નેહ બીલકુલ સંભવતો નથી. વળી કામિની સ્ત્રીઓ અંજન વિગેરેનો ત્યાગ કરે તે પણ સંભવતું નથી, પણ કુબ્જની માફક અંજન વિગેરેથી દેહની શોભા કરીને પોતાના કાન્તની પાસે આવે છે. ગોપીજનો ભગવાનની પાસે આવ્યાં ત્યાર પછી ભગવાને તેમની સાથે જે રમણ કર્યું તે તો તેમણે ગોપીજનોને રસશાસ્ત્રની રીતે સ્વરૂપાનંદનું જ દાન કર્યું છે, કારણ કે ‘ખરેખર પરમાત્મા રસરૂપ છે’ એ શ્રુતિને આધારે ભગવાનનું સ્વરૂપ રસાત્મક છે (અને એ જ રસાત્મક સ્વરૂપનું દાન ભગવાને રમણ દ્વારા કર્યું છે, જારબુદ્ધિથી ભગવાને રમણ કર્યું નથી.) ‘આત્માથી જે સુખ મળે છે તે સાત્ત્વિક છે, વિષયથી જે સુખ મળે છે તે રાજસૂ છે, મોહ અને દૈન્યથી જે સુખ મળે

છે તે તામસ છે અને મારાથી જે સુખ મળે છે તે નિર્ગુણ છે.’ એ પ્રમાણે અગીઆરમા સ્કંધમાં ભગવાનની આજ્ઞા છે અને તે ઉપરથી જણાય છે કે ભગવત્સંબંધી સુખ પણ નિર્ગુણ જ છે.) ૧૬.

આ પ્રમાણે પરીક્ષિતની પ્રાસંગિક શંકા દૂર કરીને શુકદેવજી નીચેના ‘તા દૃષ્ટ્વા’ એ શ્લોકમાં ચાલતા વિષયનું નિરૂપણ કરે છે:

તા દૃષ્ટ્વાન્તિકમ્ આયાતા ભગવાન્ પ્રજયોષિતઃ ।

અવદદ્ વદતાં શ્રેષ્ઠો વાયઃ પેશૈર્વિમોહયન્ ॥૧૭॥

તે વ્રજસ્ત્રીઓને પોતાની પાસે આવેલાં જોઈને વક્તાઓમાં શ્રેષ્ઠ એવા ભગવાન્ સુંદર શબ્દવાણાં વાક્યોથી મોહ પમાડતા બોલ્યા. ૧૭.

જે ગોપીજનોને-કુમારિકાઓ અને અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનો (જે ગુણમય દેહનો ત્યાગ કરીને નિર્ગુણ દેહથી ભગવાનની પાસે આવ્યાં હતાં તે)-ભગવાને બોલાવ્યાં હતાં તે ભગવાનની પાસે આવેલાં છે. તેમને ભગવાન્ પોતાની પાસે આવતાં અટકાવતા નથી. પણ જે ‘દુહન્ત્યઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકોમાં જણાવેલાં સગુણ ગોપીજનો હતાં અને જે વિવાહિત હોવાથી બીજાની-પોતાના લૌકિક પતિની-સાથે સંબંધવાળાં હતાં તે ભગવાનના વેણુનાદના શબ્દનું શ્રવણ કરીને ભગવાનની પાસે આવ્યાં હતાં તેથી ભગવાને તે ગોપીજનોનું કેવલ શબ્દથી-હૃદયથી નહિ-નિવારણ કરવું યોગ્ય છે; કારણ કે ભક્તિમાર્ગનો સિદ્ધાંત એવો છે કે કોઈ પણ ઉપાધિ અથવા પ્રયોજનથી ભગવાનનું ભજન કરવું યોગ્ય નથી. (જો આ ગોપીજનો કેવલ વેણુનાદના શબ્દથી જ પ્રેરાઈને આવ્યાં હશે-અને ભગવાનને માટે જ નહિ આવ્યાં હોય તો-શબ્દથી જ ભગવાન્ તેમનું પોતપોતાને ઘેર જવાનું કહેતાં જ તે ગોપીજનો પોતાને ઘેર ચાલ્યાં જશે. પણ આગળ ઉપર આપણે જોઈએ છીએ કે ગોપીજનો ભગવાનના શાબ્દિક નિવારણથી ઘેર ચાલ્યાં જતાં નથી. તે ઉપરથી સિદ્ધ થાય છે કે આ ગોપીજનોનું આગમન ઉપાધિરહિત હતું.) ભગવાન્ આગળ ઉપર જે રાસલીલા કરવાના છે તે કેવલ સર્વભાવપ્રપત્તિથી સિદ્ધ થાય એમ છે. અર્થાત્ જે સર્વાત્મ-ભાવપૂર્વક ભગવાનને શરણે જાય છે તે જ રાસલીલાનો અધિકારી બને છે તેથી ભગવાને સગુણ ગોપીજનોને ઘેર પાછા મોકલવા માટે વાચનિક પ્રયત્ન કર્યો એમ શુકદેવજી આ શ્લોકમાં કહે છે.

‘તાઃ-દુહન્ત્યઃ’ (૧૦।૨૬।૫) દોહતાં ઈત્યાદિ વર્ણનવાળાં ગોપીજનો. તેમને પોતાની પાસે આવતાં જોઈને ભગવાને જાણ્યું કે તે પોતપોતાના સ્વાર્થને માટે જ આવ્યાં છે. ‘ભગવાન્’ સર્વજ્ઞ છે અને સર્વસમર્થ પણ છે અને તેથી તેમને



ગોપીજનોના પતિ પુત્ર વિગેરેનો ભય નથી જ. વળી આ ગોપીજનો વ્રજમાં રહેનારી સ્ત્રીઓ છે એટલે તેમનામાં હૃદયમાં એક ભાવ અને બહારથી બીજો ભાવ એવું કાપટ્ય નથી, અને વ્રજના સંબંધને લીધે તેઓ ભગવદીય છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનો માં કોઈ પણ જાતની અયોચ્યતા નથી. એવાં ગોપીજનોને પોતાની પાસે આવતાં જોઈને ભગવાન્ બોલ્યા. કોઈ પણ જાતની ઉપાધિથી પ્રેરાઈને ભગવાનનું ભજન કરવું અયોચ્ય છે એ ભક્તિમાર્ગનો સિદ્ધાંત સમજાવવાને માટે ભગવાને ગોપીજનોને ઘેર જવાનો ઉપદેશ કર્યો.

શંકા- આ ગોપીજનોના પતિઓ, પુત્રો, બંધુઓ વિગેરેએ પહેલાં તેમને ઘરની બહાર જતાં અટકાવવા પ્રયાસ કર્યો હતો, છતાં પણ તે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ચાલી આવ્યાં. તો પછી ભગવાનના ઉપદેશથી આ ગોપીજનો ઘેર પાછાં શી રીતે જવાનાં છે? માટે ગોપીજનોને ઘેર પાછાં મોકલવાનો ભગવાનનો આ શાબ્દિક પ્રયાસ વ્યર્થ છે.

સમાધાન- આ પ્રમાણે શંકા થાય તો શુક્ટેવજી કહે છે કે ભગવાન્ ‘વદત શ્રેષ્ઠઃ’-વક્તાઓમાં શ્રેષ્ઠ છે. જે કોઈ બોલનારાઓ આ જગતમાં છે તેમાં ભગવાન્ શ્રેષ્ઠ વક્તા છે. તેથી ભગવાનનાં વચન સાંભળનારના હૃદયમાં પેસી જાય છે. તેથી જ્યાં સુધી ગોપીજનો કેવલ ભગવાનના શબ્દથી ઘેર પાછાં ચાલ્યાં જતાં હોય ત્યાં સુધી ભગવાનને ક્રિયાથી ગોપીજનોને ઘેર પાછાં મોકલવાની જરૂર નથી.

વળી ભગવાનની પાસે ગોપીજનોને ઘેર પાછાં મોકલવાનું અલૌકિક સામર્થ્ય પણ છે એમ શુક્ટેવજી ‘વાચઃપેશૈર્વિમોહયન્’ એ શબ્દોમાં કહે છે. ‘વાચઃ પેશાઃ’ એટલે સુંદરવાણી વાળા શબ્દો; આવા શબ્દો વડે ભગવાન્ ગોપીજનોને વધારે મોહ પમાડતા હતા. અથવા તો તે ગોપીજનોને વધારે દૃઢ બનાવવાને માટે જ અને રસના પોષણને માટે જ સારી રીતે મોહ ઉત્પન્ન કરવા સારુ ભગવાન્ ‘તમે અહિં ઉભાં ન રહો; પણ ઘેર ચાલ્યાં જાવ’ એ પ્રમાણે નિષેધ કરનારાં વાક્યો બોલ્યા. જો ભગવાન્ આ પ્રમાણે રસના પોષણને માટે નિષેધ વાક્યો બોલ્યા ન હોય તો તે ગોપીજનો ઘેર પાછાં જ ચાલ્યાં જાય. તેથી ભગવાન્ પોતાનાં વાક્યોના વાચ્ય અર્થથી-ઉપરથી એકદમ સમજાતા અર્થથી-ગોપીજનોને વનમાં રહેવાની ના પાડે છે છતાં પણ તાત્પર્યાર્થથી તેમને ના પાડતા નથી. ૧૭.

ગોપીજનો સગુણ નિર્ગુણ ભેદે કરીને દસ પ્રકારનાં છે એટલે તેમનું નિવારણ કરવાને માટે હવે શુક્ટેવજી ‘સ્વાગતમ્’ ઈત્યાદિ દસ શ્લોકમાં ભગવાનનાં વાક્યો કહે છે:

॥श्रीભગવાન્ ઉવાચ॥

સ્વાગતં વો મહાભાગાઃ! પ્રિયં કિં કરવાણિ વઃ ।

વ્રજસ્યાનામયં કચ્ચિત્ બ્રૂતાગમનકારણમ્ ॥૧૮॥

શ્રીભગવાન્ બોલ્યાઃ હે મહાભાગ્યશાળીઓ! તમે ભલે પધાર્યાં. હું તમારું શું પ્રિય કરું? વ્રજમાં તો કુશલ છે ને? બોલો, અહિં આવવાનું શું કારણ છે? ૧૮.

તમસ્, રજસ્ અને સત્વ એ ત્રણ ગુણોનું ફલ અનુક્રમે નાશ, ઉત્પત્તિ અને પાલન છે. પ્રભુનો સમાગમ કરવામાં જે પદાર્થ વિલંબ કરાવતો હોય તે પદાર્થનો નાશ કરવાનું કામ તમસૂનું છે, પ્રભુની સાથે સમાગમ થવામાં જે વિલંબ થતો હોય તે સહન ન કરવાને માટે અમુક ભાવ ઉત્પન્ન કરવો એ કામ રજસૂનું છે અને તે ભાવનું પોષણ કરવાનું કામ સત્વગુણનું છે. બધા ગુણોનું તાત્પર્ય આ ત્રણ પ્રકારના ફલમાં છે તેથી ગોપીજનોમાં તમસ્, રજસ્ અને સત્વ એ ત્રણ ગુણોના ભેદો રહેલા છે. અને એવા ભેદવાળી સ્ત્રીઓનું અહિં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ દસ પ્રકારનાં ગોપીજનોની અંદર ભગવાનનાં દસ વાક્યો યથાયોગ્ય ઘટી શકે છે.

ભગવાન્ પહેલાં તામસસાત્ત્વિક ગોપીજનોનું નિવારણ કરે છે, પછીથી તામસરાજસીઓનું અને ત્યાર પછી તામસતામસીઓનું નિવારણ કરે છે. આગળના શ્લોકોમાં પણ ગોપીજનોનો આ પ્રકારે જ વિભાગ પાડવાનો છે. ભગવાન્ જે ગોપીજનો પોતાની પાસે આવ્યાં હતાં તેમને પહેલાં લૌકિક ન્યાયે ‘સ્વાગતમ્’-ભલે પધાર્યાં-એ પ્રમાણે કુશલ પ્રશ્ન પૂછે છે. તમે બધાં આવ્યાં તે બહું સારું થયું. કેમ આવ્યાં છો તે પ્રયોજન કહેશે? ‘મહાભાગાઃ’-મહાભાગ્યશાળી એ પ્રમાણે ભગવાન્ ગોપીજનોની સ્તુતિ કરે છે. તમારું ભાગ્ય મોટું છે, તેથી તમારું આગમન સારું જ છે; છતાં પણ ગોપીજનોને ભગવાન્ પૂછે છે તે લોકને અનુસરીને. વાસ્તવિક રીતે તો ગોપીજનો કોઈ પણ પ્રકારના પ્રતિબંધ વિના ભગવાનની પાસે આવ્યાં છે. આવેલાં ગોપીજનોનો સત્કાર કરતાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘પ્રિયં કિં કરવાણિ વઃ’-હું તમારું શું પ્રિય કરું? તમે કાંઈક માગવા આવ્યાં છો એમ જણાય છે. જે એમ હોય તો તમારે જે માગવાનું હોય તે કહી દો. અર્થાત્ હું-ભગવાન્ આ ગોપીજનોને સ્વભાવથી જ પ્રિય નથી પણ કોઈ પ્રયોજનને લીધે પ્રિય છું એમ ભગવાને ગોપીજનોનો સત્કાર કરતાં જણાવ્યું. આ પ્રયોજન ત્રણ પ્રકારનું હોય છે: ઈષ્ટપ્રાપ્તિ, અનિષ્ટની નિવૃત્તિ, અને દેશ અને કાલથી દૂર એવા પદાર્થની કામના. અથવા તો તેમાં પણ ત્રણ પ્રકારના ભેદો રહેલા છે અને તેથી ત્રણ વાક્યો આ શ્લોકમાં ત્રણ ચરણોમાં આપવામાં આવ્યાં છે. (આ ગોપીજનો તામસસાત્ત્વિક છે, અને તેના ત્રણ પ્રકારના ભેદો આ પ્રમાણે

સંભવિત છે: (૧) તમસ્ ઓછું અને સત્ત્વ વધારે, (૨) સત્ત્વ ઓછું અને તમસ્ વધારે અને (૩) તમસ્ અને સત્ત્વ એ બંને સરખા પ્રમાણમાં. અર્થાત્ ત્રણ પ્રયોજનોને લીધે અથવા તો ગોપીજનોના આ ત્રણ ભેદોને લીધે આ શ્લોકના ત્રણ ચરણોમાં ત્રણ વાક્યો આપવામાં આવેલાં છે.) તમે જ્યારે મારી પાસે દોડતાં દોડતાં આવ્યાં છો તો વ્રજમાં કોઈ ઉપદ્રવ થયો છે કે જે કહેવાને માટે તમે અહિં મારી પાસે આવ્યાં છો? પહેલાંના વાક્યમાં જણાવેલો વિકલ્પ ન સ્વીકારમાં આવે તો પછીના વાક્યમાં જણાવેલો વિકલ્પ સ્વીકારવો એમ ઉત્તરોત્તર વાક્યો આપવામાં આવ્યાં છે. જો મારે તમારું કોઈ પણ જાતનું પ્રિય કરવાનું ન હોય અને જો વ્રજમાં કોઈ પણ જાતનો ઉપદ્રવ ન હોય તો પછી અહિં આવવાનું કારણ શું તે તમે મને કહો. (આ શ્લોક તામસસાત્ત્વિક ગોપીજનોને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવેલો છે.) ૧૮.

આ પ્રમાણે જ્યારે ભગવાને ગોપીજનોને પોતાની પાસે આવવાનું કારણ પૂછ્યું છતાં પણ જ્યારે ગોપીજનોએ ઉત્તર ન આપ્યો ત્યારે ભગવાન પોતે જ બીજા પક્ષની કલ્પના કરવા લાગ્યા. ગોપીજનો કદાચિત્ ભગવાનને એવો ઉત્તર આપે કે ‘જેમ આપ વનમાં આવ્યા છો તેમ અમે પણ વનમાં આવ્યાં છીએ.’ આવા ઉત્તરની શંકા કરીને ભગવાન ‘રજની’ ઈત્યાદિ શ્લોક બોલે છે :

રજન્યેષા ધોરરૂપા ધોરસત્ત્વનિષેવિતા ।

પ્રતિયાત વ્રજં નેહ સ્થેયં સ્ત્રીભિઃ સુમધ્યમાઃ ! ! ૧૯ ।

હે સુમધ્યમા ગોપીજનો! આ રાત્રી ભયાનક છે અને ધોર પ્રાણીઓ તેનો આશ્રય કરી રહ્યાં છે. તમે વ્રજમાં પાછાં ચાલ્યાં જાવ. અહિં સ્ત્રીઓએ રહેવું જોઈએ નહિ. ૧૯.

આ રાત્રી છે, નહિ કે દિવસ. દિવસે જ અરણ્યમાં કાર્યને માટે જવાય છે. (તમને તાપ થતો હશે એટલે તમે સૂર્ય માન્યો હશે પણ) આ ચંદ્ર છે, સૂર્ય નહિ, એમ ભાવ છે.

શંકા- આ રાત્રી છો રહી, છતાં પણ અત્યારે પ્રકાશ છે એટલે અહિં આવવું જ જોઈએ.

સમાધાન- આ શંકાનું નિવારણ કરતાં ભગવાન કહે છે કે ‘ધોરરૂપા’. આ રાત્રી પ્રકાશવાળી છે છતાં પણ વસ્તુતઃ તે ધોરરૂપ-ભય ઉત્પન્ન કરનારી-છે. કારણ કે રાત્રીએ અજવાળું હોય છતાં પણ તે સમયે જનારો પુરુષ બીએ છે. વળી આ રાત્રીમાં ધોર સત્ત્વોએ વાસ કરેલો છે. ભયંકર પ્રાણીઓ જ રાત્રીનો આશ્રય કરે છે, નહિ કે સાત્ત્વિક પ્રાણીઓ. માટે રાત્રીએ સાત્ત્વિક મનુષ્ય બહાર આવે તો ધોર

પ્રાણીઓ તેનો નાશ કરે છે. માટે સ્વભાવતઃ આ રાત્રી છે, તે ઘોર છે (આ રાત્રીનો ધર્મ છે), અને ઘોર પ્રાણીઓએ તેનું સેવન કરેલું છે એ ત્રણનું સ્વરૂપ સમજીને તમે વ્રજમાં પાછાં ચાલ્યાં જાવ.

શંકા- ગોપીજનો કહે છે કે જ્યારે આ રાત્રી છે, તે ભયાનક છે અને તેનો આશ્રય ભયાનક પ્રાણીઓએ કરેલો છે ત્યારે તો આપના જ સ્થાનમાં અમે રહીશું, અને આપ અમારા પરિચિત છો.

સમાધાન- ભગવાન્ કહે છે કે ‘નેહ સ્થેયં સ્ત્રીભિઃ’-અહિં સ્ત્રીઓએ રહેવું જોઈએ નહિ. અમે લોક પુરુષ છીએ અને આ સમય રાત્રીનો છે; તેથી સ્ત્રીઓએ અહિં રહેવું જોઈએ નહિ. અને જો તમે અહિં રહેશો તો આપણા બંનેયમાં વિકાર ઉત્પન્ન થશે. વળી જો તમે વૃદ્ધ અથવા બાલક હોત તો તો તમે અહિં રહી શકત, પરંતુ તમે તો સુમધ્યમા-રસાત્મિકા-છો. માટે જ્યાં સુધી દેહાધ્યાસ છે ત્યાં સુધી તમારે સર્વથા જ વ્રજમાં પાછા જવું જોઈએ.

ભગવાન્ ગોપીજનોને વનમાં જ રહેવાનો ઉપદેશ કરે છે એ પક્ષ સ્વીકારીએ તો ‘ઘોર’ પદમાં ‘ન’નો પ્રશ્લેષ માનવો (અર્થાત્ ‘અઘોરરૂપા’ અને ‘અઘોરસત્ત્વનિષેવિતા’ એમ વાંચવું) અને ‘ન પ્રતિયાત’-તમે વ્રજમાં પાછાં જશો નહિ-એ પ્રમાણે અન્વય કરવો. (આ શ્લોક તામસરાજસી ગોપીજનોને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યો છે.) ૧૯.

અમે તો અભિસારિકાઓ જ છીએ અને તમારે માટે જ અમે અહિં આવેલાં છીએ, માટે અમને વ્રજમાં પાછાં કેમ મોકલો છો? આ પ્રમાણે ગોપીજનોના ઉત્તરની શંકા કરીને ભગવાન્ ‘માતરઃ’ એ શ્લોકમાં જવાબ આપે છે :

માતરઃ પિતરઃ પુત્રા ભ્રાતરઃ પતયશ્ચ વઃ ।

વિચિન્વન્તિ હ્યપશ્યન્તો મા કૃદ્ધ્વં બન્ધુસાધ્વસમ્ ॥૨૦॥

તમારાં માતાઓ, પિતાઓ, પુત્રો, ભાઈઓ અને પતિઓ તમને નહિ દેખે અને તમારી શોધ કરશે; માટે તમે સગાંઓને ત્રાસ આપો નહિ. ૨૦.

તમારી માતાઓ તમારું નિયમન કરે છે, પરંતુ તેઓ અહિં આવ્યાં નથી. તેથી તેઓ તમારી શોધ પણ કરશે. માટે તમે તેમને ભય-ત્રાસ-આપો નહિ. ગોપીજનો કદાચિત્ એમ કહે છે કે ‘તેઓ (અમારી માતાઓ) અમારી માફક આપની મુરલીના નાદથી મોહિત થએલાં છે અને તેથી કદાચ અહિં આવશે તો પણ કોઈ જાતનો તે બાધ કરશે નહિ; અથવા તો અમારી માતાઓ સ્ત્રીઓ હોવાથી રાત્રીએ વનમાં આવશે નહિ, તેથી તે અમને પ્રતિબંધ કરશે નહિ.’ આના ઉત્તરમાં ભગવાન્

કહે છે કે ‘પિતર:’. (તમે અહિં આવ્યાં છો તેથી) પોતાના કુલ ઉપર કલંક આવે એ ભયથી તમારા પિતાઓ અહિં (તમારી શોધને માટે) જરૂરથી આવશે જ. ગોપીજનો કદાચિત્ એમ કહે છે કે ‘ત્યારે તો અમે અમારા પિતાઓની સાથે જ જઈશું’; તો તેના ઉત્તરમાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘વિચિન્વન્તિ દ્યપશ્ચન્ત:’-તમને દેખશે નહિ અને તમારી તેઓ શોધ કરશે. ગોકુલથી નીકળીને કૃષ્ણ ભગવાનના સ્થાનમાં-વૃંદાવનમાં-જતાં વયમાં અનેક માર્ગો ચોખ્ખા દેખાય છે. ત્યાં ભગવાનની યોગમાયા ઉભી રહે છે, જેથી કોઈ પણ ભગવાનની પાસે જાય નહિ. તેથી તમારા પિતાઓ બીજે જ માર્ગે ચઢી જશે અને તેથી તમને દેખશે નહિ અને તમારી શોધ કર્યા જ કરશે. આ પ્રમાણે ભગવાને ગોપીજનોને કહ્યું કે તમે તમારા પિતાઓની રાહ જોઈને અહિં રહેવાનો જે વિચાર કરો છો તે અસંભવિત જ છે. વળી તમે બંધુઓને ભય ઉત્પન્ન કરો નહિ. તેથી બધાં ગોપીજનો અહિં આવ્યાં નથી માટે તમારે અહિં ન આવવું, અને તમારા કુલમાં કલંક આવે તેથી પણ તમારે અહિં આવવું જોઈએ નહિ. ગોપીજનો કદાચ એમ કહે કે ‘અમારા પિતાઓ સ્ત્રીઓનો સ્વભાવ જાણે છે તેથી તેઓ અહિં આવશે નહિ, અથવા તો અમે બધાં ભગવાનને માટે આવ્યાં છીએ (એમ ધારીને અમારા પિતાઓ અહિં નહિ આવે)’, તો તેના ઉત્તરમાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘પુત્રા:’ પુત્રો સર્વથા માતાઓનું રક્ષણ કરે છે અને તેમને માતાઓના નિમિત્તે ઘણી લાજ આવે છે તેથી તે પુત્રોના ઉપર દયા કરીને તેમને ભય ન થાય એટલા સારુ તમે પાછાં ઘેર જાવ. ગોપીજનો કદાચ એમ કહે કે ‘અમારા તે પુત્રો બાલક છે’, તો તેના ઉત્તરમાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘ભ્રાતર:’-તમારા ભાઈઓ તમારી શોધ કરી શકે એવા છે અને લાજવાળા પણ છે, તેથી જ્યારે તેઓ તમને નહિ જુવે ત્યારે લાજથી કદાચ શરીરનો પણ ત્યાગ કરે; તેથી ભાઈઓના સ્નેહને લીધે (પણ) તમારે ઘેર પાછાં જવું જોઈએ. કદાચ ગોપીજનો એમ કહે કે ‘અમારા ભાઈઓ અપકીર્તિના ભયને લીધે અમારી શોધ કરવા માટે બહાર જશે નહિ; વળી તેઓ જુવાન છે, અમે પણ જુવાન છીએ.’ આના ઉત્તરમાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘વ: પતય:’-તમારા પતિઓને તમારી સાથે ભોગ કરવાની અપેક્ષા પણ હોય છે, આ સંયોગરસનો અધિકાર તમારા પતિઓનો જ છે, માટે બીજાઓનું ધન અન્યને આપવું જોઈએ નહિ. (અર્થાત્ તમે તમારા પતિઓનું ધન છો, તેથી તે ધન મારા જેવા ઈતર માણસને તમારે આપવું જોઈએ નહિ.) તમારે ભોગની અપેક્ષા હશે તો તમારા પતિઓ દ્વારા પણ તે મળશે. તમારાં માતાઓ, પિતાઓ, પુત્રો વિગેરે બધાંય સગાંઓ તમને ઘરમાં નહિ જુવે એટલે જરૂર તેઓ તમારી શોધ કરશે. પછી ઘણા સમય સુધી તમને જ્યારે તેઓ નહિ જુએ ત્યારે તેઓ

એમ ધારશે કે ગોપીઓનો નાશ થયો છે અથવા તો તેમને કોઈ ઉપાડીને લઈ ગયું છે, અને તેને પરિણામે તેઓ ભયભીત થશે. ગોપીજનો કદાચ એમ કહે કે ‘અમારાં સગાંઓ ભયભીત થાય તેમાં અમારે શું?’ તો ભગવાન્ કહે છે કે, ‘તમારે એમ કહેવું યોગ્ય નથી.’ ભગવાન્ કહે છે કે ‘બન્ધુસાધ્વસમ્’. તમારાં માતા પિતા વિગેરે તમારાં બાંધવો છે, અને તેથી તમારે તેમની સાથે જ રહેવું જોઈએ. માટે આ પ્રમાણે તમે અહિં રહો તેમાં બલવાન્ બાધક તત્ત્વો છે એટલે તમારે પાછાં વળીને ઘેર જવું જોઈએ. (આ શ્લોક તામસતામસી ગોપીજનોને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યો છે.) ૨૦.

આ પ્રમાણે જ્યારે ભગવાને ગોપીજનોને કહ્યું ત્યારે ગોપીજનો વનમાં ચારે બાજુ જોવા લાગ્યાં. ભગવાને તેમને કહ્યું કે ‘દષ્ટં વનમ્’:

દષ્ટં વનં કુસુમિતં રાકેશકર-રઙ્ગિતમ્ ।

યમુનાનિલલીલૈજત્ તરુપલ્લવમણ્ડિતમ્ ॥૨૧॥

શ્રીયમુનાજના પવનની ધીમી લહેરોથી હાલતાં ઝાડોનાં પાંદડાંથી શોભતું અને ચંદ્રના કિરણોથી રંગાએલું પુષ્પોવાળું આ વન તો તમે જોયું. ૨૧.

(આ શ્લોક જેને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યો છે) તે ગોપીજન રાજસરાજસી છે. આગળનો શ્લોક જેને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યો છે તે રાજસતામસી છે (અને પછીના શ્લોકમાં રાજસસાત્ત્વિક ગોપીજનની વાત છે). જો વન જોવાને માટે તમે અહિં આવ્યાં હો તો તો તમે વન જોઈ નાખ્યું જ છે, માટે તમે હવે ઘેર પાછાં જાવ. અર્થાત્ આ વન સર્વદા દષ્ટ જ છે, અહિં ભય નથી એમ ભગવાને ગોપીજનોને જણાવ્યું. તાત્પર્ય કે તમારે ઘેર પાછા જવું નહિ. જો તમારે ઘેર પાછા જવાની અપેક્ષા હોય તો જ તમારે જવું એમ શાસ્ત્રનું વચન છે. (શાસ્ત્રમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે સંસારના બધા પદાર્થો ત્યાગ કરીને જો કોઈ વનમાં પ્રવેશ કરે અને ફરીથી જો તેને સંસારની અપેક્ષા રહે તો જ તેણે પ્રાયશ્ચિત્ત કરીને ઘરમાં પ્રવેશ કરવો. ગોપીજનોને તો ઘેર જવાની અપેક્ષા જ નથી એટલે તેમને ઘેર પાછાં જવાનું રહેતું નથી.) આ વન પુષ્પોવાળું છે એમ ભગવાન્ વનનું વર્ણન કરે છે જેથી તે ગોપીજનોની ભગવાનમાં આસક્તિ વધે. અથવા બીજો અર્થ એવો પણ થાય કે હમણાં તો પુષ્પો જ થયાં છે, ફલ થયાં નથી. (આ બીજા અર્થ પ્રમાણે ભગવાન્ એમ કહેવા માગે છે કે હમણાં તો પુષ્પોરૂપી ઉદ્દીપન સામગ્રી તૈયાર થઈ, મારું દર્શન પણ થયું-એ રીતે રમણની પહેલાં જે સામગ્રી જોઈએ તે સર્વ સિદ્ધ થઈ. ફલ તો રમણ થાય ત્યારે મળશે માટે રમણરૂપી ફલને માટે, હે ગોપીજનો, તમારે અહિં જ સ્થિતિ કરવી.) પુષ્પવાળા વનમાં રમણ કરવું એવો ભાવ છે. સર્વત્ર મોહ અને પ્રેષણ અનુસ્યૂત છે. અર્થાત્ પોતાના અને

વનના સૌંદર્યમાં મોહ કરીને ગોપીજનોને વનમાં સ્થિતિ કરવાનું કહેવું, અને ઉપર ઉપરથી ઘેર પાછા મોકલવાનું કહેવું એવા બંને અર્થો નીકળે છે એમ સર્વત્ર સમજવું. વળી રોકેશ એટલે ચંદ્રમાના કિરણોથી રંજીત-રંગાએલું-તે વન છે. ચંદ્રનાં આ કિરણો ઉદીપક છે. વન તામસ છે, પુષ્પો રાજસ છે અને ચંદ્રનાં કિરણો સાત્ત્વિક છે. આ રોકેશ છે એટલે પૂર્ણ ચંદ્ર છે. માટે આ પ્રકારે સર્વ ભાવ પૂર્ણ હોવાથી તમારે અહિં જ રહેવું; પણ જો તમને એમ લાગતું હોય કે આ પૂર્ણિમાનો ચંદ્ર છે એટલે પર્વનો દિવસ છે અને તેથી રમણ આજે નિષિદ્ધ છે, તો તો પછી તમારે ઘેર પાછા જ ચાલ્યા જવું. ભગવાન વનના વાયુનું પણ ‘યમુના’ ઈત્યાદિએ વર્ણન કરે છે. યમુનાજીના સંબંધવાળા પવનથી ધીમે ધીમે હાલતાં જે વૃક્ષનાં પાંદડાં તેમનાથી શોભતું વન યમુનાજીના જલના સંબંધથી, ધીમે ધીમે હાલવાથી અને વૃક્ષોની સુગંધના સંબંધથી ત્રણ પ્રકારના-શીત, મંદ અને સુગંધિ-વાયુનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. વર્ણનમાં અને રસોદ્બોધક ગંધને લાવવામાં આ ત્રણ પ્રકારના પવનનો ઉપયોગ થાય છે. તાત્પર્ય એ કે આવો સુંદર વાયુ જેમાં છે તેવું વન તમે જોયું, હવે તમે ઘેર જાવ એ પ્રમાણે વર્ણન કરવામાં પવનનો ઉપયોગ છે. વળી અહિં આવી રસોદ્બોધક સામગ્રી છે તેથી અહિં રહેશો તો રસ મળશે એવો અર્થ દર્શાવવાને માટે પણ પવનનો ઉપયોગ છે. ૨૧.

આ પ્રમાણે વનનું વર્ણન કરીને, ભગવાનમાં અધિક આસક્તિ ઉત્પન્ન કરીને ભગવાન ‘તદ્યાત’ એ શ્લોકમાં શ્રીગોપીજનોને કહે છે કે તમે અહિંથી ચાલ્યાં જાવ:

તદ્યાત મા ચિરં ગોષ્ઠં શુશ્રૂષધ્વં પતીન્ સતીઃ ।

કન્દન્તિ વત્સા બાલાશ્ચ તાન્ પાયયત દુહ્યત ॥૨૨॥

માટે હવે, હે સતી સ્ત્રીઓ! તમે વિલંબ કર્યા વિના વ્રજમાં પાછાં ચાલ્યાં જાવ, અને તમારા પતિઓની સેવા કરો; રુદન કરતાં વાછરડાં અને બાલકોને તમે ધવરાવો અને ગાયોને દુહો. ૨૨.

‘તત્’-તેથી, વન જોયું એટલે તમારું કાર્ય સિદ્ધ થયું તેથી-તમે, હે ગોપીજનો, પાછાં ચાલ્યાં જાવ. ‘તત્’-આ પ્રકારનું-વન છે એટલે તમે ઘેર પાછાં જશો નહિ એવો પણ ધ્વનિ છે. ‘ચિરં મા’-તમારે વિલંબ કરવો જોઈએ નહિ. ‘ચિરં મા યાત’-લાંબા કાલ સુધી તમારે જવું નહિ, અર્થાત્ લાંબા કાલ સુધી તમે અહિં જ રહો-એવો પણ ધ્વનિ છે. ખરેખર, ભગવાનને છોડીને કોઈ વ્રજમાં જતું નથી. વળી, તમે વ્રજમાં જાવ, વ્રજમાં ગાયોની સેવા પણ થાય છે, વ્રજમાં જનારાઓનો બીજો ધર્મ પણ સિદ્ધ થાય છે એમ ભગવાન ‘શુશ્રૂષધ્વમ્’ એ પદ વડે કહે છે. પતિની

સેવા કરવી એ સ્ત્રીઓનો ધર્મ છે. તેમાં પણ તમે બધાં તો સતી સ્ત્રીઓ છો. અથવા તો ‘સતી:’ એ પદ પતિના વિશેષણ તરીકે લેવું, અર્થાત્ ‘સતી: પતીન્’ એ પ્રમાણે અન્વય કરવો. ગોપીજનોના પતિઓ પૂર્વજન્મમાં સતી-પતિવ્રતા-સ્ત્રીઓ હતી, અને પુરુષની ભાવનાને લીધે આ જન્મમાં પુરુષ તરીકે જન્મ્યા છે. હે ગોપીજનો! તમે પણ પૂર્વજન્મમાં પુરુષો હતા અને આ જન્મમાં તમે સ્ત્રીઓ તરીકે જન્મ્યાં છો; આગળ ઉપર પણ તમે જ્યારે ઘેર પાછાં જશો ત્યારે સ્ત્રીભાવનાને લીધે તે ગોપલોકો પણ સ્ત્રીઓ થઈ જશે અને તે પ્રકારે વિપરીતતા થશે. આ બધાનો વિચાર કરીને તમારે જવું એ પ્રકારનું તાત્પર્ય છે. વ્રજમાં જવાથી તમને ધર્મ સિદ્ધ થશે, પરંતુ રસની સિદ્ધિ તો અહિં જ થશે. ‘પતીન્’ એ પ્રમાણે બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે અને તેમાંથી એવો અર્થ નીકળે છે કે વાસ્તવિક રીતે વ્રજમાં જઈને પતિઓની સેવા કરવામાં ધર્મ રહેલો નથી. તમારામાં જે પતિવ્રતા-ધર્મશીલ-સ્ત્રીઓ છે તે જ ઘેર પાછાં છો જાય. પણ બધાંય ગોપીજનો જો તે પ્રકારનાં-ધર્મશીલ-ન હોય તો તેમણે ઘેર પાછાં જવું જ નહિ. લૌકિકધર્મ-પતિસેવા-ની અંદર પરાયણ રહેતી પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ પતિનો ત્યાગ કરીને વનમાં આવતી નથી. તેથી ભગવાનનાં આ વાક્યો રસાલ હોવાથી એમ સૂચવે છે કે આ ગોપીજનોની આસક્તિ પોતાના લૌકિક પતિઓમાં નથી. વળી વત્સો-વાછરડાં-દોહતી વખતે બાંધેલાં જ છે; બાળકો પણ ભૂખ્યાં છે, તેથી તેઓ રડે છે. માટે તે બધાંને રડતાં બંધ કરવાને માટે તેમને સ્તનપાન કરાવો, અને ગાયોને દુલો. તમારું જીવન બીજાઓને માટે છે, પોતાને માટે નથી. તેથી સુખની ઈચ્છા રાખનારાઓએ દુઃખી લોકોના સ્થાનમાં જવું નહિ. (આ શ્લોક રાજસતામરીને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવેલો છે.) ૨૨.

આ પ્રમાણે જ્યારે ભગવાન્ બોલ્યા ત્યારે જે રાજસસાત્ત્વિક ગોપીજનો સ્નેહાળ દષ્ટિવાળાં થયાં તેમને ઉદ્દેશીને ભગવાન્ ‘અથ વા’ ઈત્યાદિ બોલ્યા:

**અથ વા મદભિસ્નેહાદ્ ભવત્યો યન્ત્રિતાશયા: ।**

**આગતા હ્યુપપન્નં તત્ પ્રીયન્તે મમ જન્તવ: ॥૨૩॥**

અથવા તો મારામાં તમારો ઘણો સ્નેહ હોવાને લીધે તમારું અંતઃકરણ મારામાં ચોંટેલું છે, અને તેથી તમે અહિં આવ્યાં છો તે યોગ્ય છે, કારણ કે બધાં પ્રાણીઓ મારા ઉપર પ્રેમ રાખે છે. ૨૩.

પહેલાંના શ્લોકોમાં જણાવેલા વિકલ્પો મેં નકામા કલ્પ્યા, કારણ કે વાસ્તવિક રીતે તો તમે સ્નેહને લીધે મારા દર્શન કરવાને માટે જ અહિં આવેલાં છો. સ્નેહને લીધે ભગવાનનાં દર્શન કરવા જવું એ ખરી રીતે તો સિદ્ધાંત જ છે, છતાં



તેનો પૂર્વપક્ષ કરવાને માટે અહિં અનુવાદ કરવામાં આવ્યો છે. ગુણરૂપ અથવા દોષરૂપ ભાવનું વર્ણન કરવામાં આવે તો તેનું ફલ મળતું નથી, કારણ કે વર્ણન કરવાથી તે ભાવ લૌકિક થઈ જાય છે, માટે તમારા સ્નેહમૂલક આગમનનો પૂર્વપક્ષ કરવાને માટે અનુવાદ કરવામાં આવ્યો છે. (સ્નેહથી સર્વ પદાર્થનો ત્યાગ કરીને ભગવાનની પાસે આવવાનો ભાવ ગુણરૂપ અને દોષરૂપ હોઈ શકે છે: જ્યારે ભગવાન ભગવાન તરીકે ઈચ્છા પૂર્ણ કરે છે એવો ભક્તનો ભાવ હોય ત્યારે તે ભાવ ગુણરૂપ થાય છે, અને જ્યારે ભગવાન જાર તરીકે ઈચ્છા પૂર્ણ કરે છે એવો ભક્તનો ભાવ હોય ત્યારે તે ભાવ દોષરૂપ થાય છે. આ બંનેય ભાવો ભગવદાત્મક ફલ આપતાં નથી. આ બંનેય પ્રકારના ભાવો લક્ષમાં રાખીને સ્નેહમૂલક સર્વત્યાગપૂર્વક ભગવાનની પાસેના આગમનનો પૂર્વપક્ષ કરવાને માટે અનુવાદ કરવામાં આવ્યો છે.)

મારામાં જે આ પૂર્ણ સર્વભાવથી સ્નેહ છે તેથી અંતઃકરણ બંધાઈ ગયું છે જેમનું, એવાં જો તમે હો અને અહિં આવ્યાં હો તો તો તે યોગ્ય જ છે.

પછી તમે વિલંબ શા માટે કરો છો એમ જો ગોપીજન કહે તો તેના ઉત્તરમાં કહે છે કે ‘પ્રીયન્તે મમ જન્તવઃ’ મારા સંબંધવાળા બધાય પ્રાણીઓ પોતાની મેળે જ-મારામાં પ્રીતિ રાખવાથી જ-પ્રસન્ન થાય છે, મારે કાંઈ પણ કરવાનું રહેતું નથી. (હું ભાવસ્વરૂપ છું તેથી) મારામાં સ્નેહ જ હોઈ શકે-હું સ્નેહવાળા ભક્તો તરફ સ્નેહ જ રાખી શકું-કૃતિ નહિ, (કારણ કે નમન વિગેરે ક્રિયા એ જીવનો ધર્મ છે, ભગવાન નો નહિ). તેથી આ બધાય ભક્તોના સામાન્ય નિયમને જાણી તમે ઘેર પાછાં ચાલ્યાં જાવ. તમે અહિં જ રહો એમ અર્થ લઈએ તો શ્લોકનો અર્થ સ્પષ્ટ જ છે, અને તેથી તેમાં ‘યાત મા’-તમે જાવ નહિ-એ પ્રમાણે અન્વય થશે. જે સ્નેહથી આવેલો છે તેને પ્રેરવામાં-કહેવામાં આવે તો પણ તે પાછો ઘેર જતો નથી, કારણ કે તે ‘યન્ત્રિત’ એટલે વશ થએલો છે. જ્યારે અંતઃકરણ ભગવાનને અધીન થઈ જાય છે ત્યારે કાંઈ પણ બાકી રહેતું નથી. નિષ્કપટ પ્રીતિ કરવી એમ બંનેય પક્ષમાં-રહેવાના અને ઘેર પાછા જવાના પક્ષમાં-ભાવ છે. (આ શ્લોક રાજસસાત્ત્વિકને ઉદ્દેશીને કહેલો છે) ૨૩

ભર્તુઃશુશ્રૂષણં સ્ત્રીણાં પરો ધર્મો હ્યમાયયા ।

તદ્બન્ધુનાં ચ કલ્યાણ્યઃ ! પ્રજ્ઞનાં ચાનુપોષણમ્ ॥૨૪॥

હે કલ્યાણી સ્ત્રીઓ, નિષ્કપટતાથી પતિની અને તેમના સંબંધીઓની સેવા કરવી અને પ્રજ્ઞનું પોષણ કરવું એ સ્ત્રીઓનો મુખ્ય ધર્મ છે. ૨૪.

આ પ્રમાણે રાજસી ગોપીજનોને ઉદ્દેશીને ભગવાને કહ્યું; હવે સાત્ત્વિક ગોપીજનોને ઉદ્દેશીને ભગવાન કહે છે. આ શ્લોકમાં સત્ત્વગુણવાળી સાત્ત્વિક

ગોપીજનોને-અર્થાત્ સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક ગોપીજનોને-ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યું છે. પછીથી સાત્ત્વિકરાજસને ઉદ્દેશીને (અને ત્યાર પછી સાત્ત્વિકતામસને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યું છે.) સ્ત્રીઓનો મુખ્ય ધર્મ પતિની સેવા છે એમ ભગવાન 'ભર્તુઃ' ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કહે છે. સ્વાભાવિક રીતે બધાય જીવોના ભગવાન જ પતિ છે; તેમાં પણ જે સ્ત્રીઓ છે-જેમને સ્ત્રી શરીર પ્રાપ્ત થએલું છે-તેમણે તો વ્યભિચાર ન થાય તેટલા સારુ ભગવાનની જ સેવા કરવી જોઈએ. લોકમાં તો જેની સાથે વિવાહ થયો છે તેની પતિ તરીકે સેવા કરવી જોઈએ. તે જ સ્ત્રીઓનો મુખ્ય ધર્મ છે. વળી આ પતિસેવા પણ નિષ્કપટતાથી કરવી જોઈએ. કપટ રાખીને પતિસેવા કરવામાં આવે તો તેનું ફલ મળતું નથી. પતિસેવાથી બીજા બધા ધર્મો હલકા છે. 'તદ્બન્ધનામ્' એટલે પતિનાં સગાંઓની-સસરા વિગેરેની-સેવા કરવી જોઈએ. 'હે કલ્યાણીઓ' એ પ્રમાણે ગોપીજનોને સંબોધન કરવાથી ભગવાને જણાવ્યું કે તમારે બધાં સગાં પણ છે. પ્રજાનું-પુત્ર વિગેરેનું-અનુપોષણ અત્ર વિગેરે આપીને સ્તનપાન કરાવીને તમારે કરવું જોઈએ. અથવા તો પિતા વિગેરે જે પ્રજાનું પોષણ કરે છે તે પ્રજાનું પોષણ માતાઓએ પણ કરવું જોઈએ એમ પણ અર્થ થઈ શકે. ૨૪.

પતિસેવા એ સ્ત્રીઓનો શ્રેષ્ઠ ધર્મ છે એમ આપ (ભગવાન) કહો છો તો પણ અમારો પતિ સારો નથી એમ જો ગોપીજન કહે તો ભગવાન 'દુઃશીલઃ' ઈત્યાદિ શબ્દોમાં ઉત્તર આપે છે:

દુઃશીલો દુર્ભગો વૃદ્ધો જડો રોગ્યધનોઽપિ વા ।

પતિઃ સ્ત્રીભિર્ન હાતવ્યો લોકેષુભિરપાતકી ॥૨૫॥

પતિ દુષ્ટ, ભાગ્યહીન, વૃદ્ધ, જડ, રોગી, નિર્ધન, ગમે તેવો હોય તો પણ, જો તે પાતકી ન હોય તો, આ લોક અને પરલોકની ઈચ્છા રાખનારી સ્ત્રીઓએ તેનો ત્યાગ કરવો જોઈએ નહિ. ૨૫.

'દુઃશીલ' એટલે દુષ્ટ છે શીલ જેનું-અર્થાત્ ધૂત વિગેરે દુર્વ્યસનવાળો, દુર્ભગ એટલે દરિદ્ર, વૃદ્ધ એટલે ઈન્દ્રિયવિકલ, જડ એટલે મૂર્ખ, રોગી એટલે મહારોગવાળો, અથવા અધન એટલે ગરીબ. પતિ ગરીબ હોય તો પણ જો તે ભાગ્યવાળો હોય તો ભવિષ્યમાં તેના તરફની આશા રાખીને સ્ત્રીઓ તેનો ત્યાગ કરતી નથી. આ પ્રમાણે પોતાનો પતિ છ દોષવાળો હોય તો પણ સ્ત્રીઓએ, બીજો રસ્તો ન હોવાથી, તેનો ત્યાગ કરવો જોઈએ નહિ. લૌકિક પતિ અને અલૌકિક પતિ-ભગવાન-વચ્ચે સ્પષ્ટ વિરોધ છે, કારણ કે ભગવાનમાં ઐશ્વર્ય, વીર્ય, શ્રી, યશ, જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય એ છ ગુણો રહેલા છે, જ્યારે લૌકિક પતિમાં દુઃશીલ વિગેરે છ

દોષો રહેલા છે. પણ જો પતિ પાતકી હોય તો સ્ત્રીએ તેનો ત્યાગ કરવો જ જોઈએ, કારણ કે ‘અપતિત પતિનું સ્ત્રીએ ભજન કરવું’ (ભાગ. ૭૧૧૧૨૮) એ પ્રમાણે વચન છે. વળી તેમાં પણ લોકની ઈચ્છા રાખનારી સ્ત્રીઓએ તો દોષવાળા પતિનો ત્યાગ કરવો જોઈએ નહિ. જેમને આ લોકમાં અને પરલોકમાં કીર્તિ વિગેરેની ઈચ્છા છે તેમણે તો પતિનો ત્યાગ કરવો જોઈએ નહિ જ, નહિ તો તેમની અપકીર્તિ થાય. (આ શ્લોક સાત્વિકરાજસને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યો છે.) ૨૫.

કામરસમાં જેમનું મન રહેલું છે તેમને ધર્મ બાધ કરતો નથી, કારણ કે અન્યમાં જ રસની ઉત્પત્તિ થાય છે—આ પ્રમાણે જો ગોપીજન કહે તો ભગવાન ‘અસ્વર્ગ્યમ્’ વિગેરે શબ્દોમાં ઉત્તર આપે છે:

અસ્વર્ગ્યમ્ અયશસ્યં ચ ક્લ્વુ કૃચ્છ્રં ભયાવહમ્ ।

જુગુપ્સિતં ચ સર્વત્ર દ્વૌપપત્યં કુલસ્ત્રિયઃ ॥૨૬॥

કુલીન સ્ત્રીઓને જારની સેવા સ્વર્ગનો નાશ કરનારી, અપકીર્તિ આપનારી, તુચ્છ, કષ્ટસાધ્ય, ભય ઉત્પન્ન કરનારી અને સર્વત્ર નિંદા છે. ૨૬.

હે કુલીન સ્ત્રીઓ! ઔપપત્ય એટલે જારની સાથેનો સંબંધ જો કે રસમય છે છતાં પણ અહુ દોષથી ભરેલો છે. જાર સાથેના સંબંધમાં જે દોષ રહેલા છે તે ભગવાન કહે છે. અસ્વર્ગ્ય એટલે પરલોકનો નાશ કરનારો. પહેલાં ધર્મ કરવાથી સિદ્ધ થએલું સ્વર્ગ પણ જારકર્મ કરવાથી નાશ પામે છે. વળી, આ લોકમાં પણ તે જારકર્મ યશનો નાશ કરે છે. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનો અર્થ એવો થાય છે કે નરક પણ પ્રાપ્ત થાય છે. જારકર્મની અંદર મહાન રસનો ભોગ છે એમ પણ નથી એમ ભગવાન ‘ક્લ્વુ’ પદ વડે કહે છે. તે જારકર્મનું સુખ અલ્પ જ છે, એક ક્ષણ જ ભોગવી શકાય છે. કામરસ સ્વરૂપથી તો ઘણો મોટો છે છતાં પણ કાલથી મર્યાદિત પણ થાય છે. કૃચ્છ્ર એટલે કષ્ટથી સાધ્ય; જારકર્મ અલ્પ પ્રયાસ વડે સિદ્ધ થતું નથી, એટલે પરિણામે તે ઘણું અનિષ્ટ કરનારું છે. વળી, જારકર્મનો જ્યારે અનુભવ કરવામાં આવે છે ત્યારે પણ તે કામરસને ઉત્પન્ન કરતું નથી, કારણ કે તે ભય ઉત્પન્ન કરે છે. ભયાનકરસ શૃંગારરસનો વિરોધી છે, અને તેથી જ જારકર્મને વ્યભિચાર કહેવામાં આવે છે. જારકર્મ મુખ્યત્વે ભયાનક રસ ઉત્પન્ન કરે છે, ખાસ કરીને પહેલેથી જ. વળી, આ જારકર્મ બધેય નિંદા છે. જો કોઈ માણસ જારકર્મ કરીને સર્વ દેશમાં અને સર્વ કાલમાં સત્કર્મ પણ કરે, તો પણ બીજા માણસો તેનાથી કંટાળશે અને ધિક્કારશે. (એક બ્રહ્મચારીને કોઈ સતી સ્ત્રીની સાથે કામભોગ કરવાની ઈચ્છા થઈ; તેમાં જો ભોગ કરવામાં તે સતી સ્ત્રીને સુખ થાય તો તેનું પાતિવ્રત્ય નષ્ટ થઈ જાય, અને જો

સુખ ન થાય તો તે સ્ત્રીનો પાતિવ્રત્યનો ધર્મ રહે; આ પ્રમાણે) જ્ઞરકર્મની અંદર ધર્મ રહે છે એમ કેટલાકનો જે અભિપ્રાય છે તે સંદેહવાળો જ છે. (અર્થાત્ તે અભિપ્રાય ખરો નથી.) માટે જ્યારે જ્ઞરકર્મમાં ઘણા દોષો રહેલા છે ત્યારે તો ઉત્તમ સ્ત્રીને માટે તે જ્ઞરકર્મ યોગ્ય નથી. (આ શ્લોક સાત્ત્વિકતામસીને ઉદ્દેશીને કહેવામાં આવ્યો છે.)  
૨૬.

આ પ્રમાણે નવ પ્રકારનાં સગુણ ગોપીજનોને ભગવાને ઉપદેશ કર્યો; હવે તે નિર્ગુણ ગોપીજનોને 'શ્રવણાત્' ઈત્યાદિ શબ્દો વડે ઉપદેશ કરે છે :

શ્રવણાદ્ દર્શનાદ્ ધ્યાનાદ્ મયિ ભાવોડનુકીર્તનાત્ ।

ન તથા સન્નિકર્ષેણ પ્રતિયાત તતો ગૃહાન્ ॥૨૭॥

મારાં શ્રવણ દર્શન ધ્યાન અને કીર્તનથી મારા વિષે જેવો ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તેવો ભાવ મારી પાસે રહેવાથી થતો નથી. તેથી તમે ઘેર પાછાં ચાલ્યાં જાવ. ૨૭.

ઉપર જણાવેલા દોષો લૌકિક દષ્ટિએ કરેલા જ્ઞરકર્મમાં હોઈ શકે, પરંતુ ભક્તિમાર્ગમાં, (એમ બધા જીવો પુરુષો છીએ અને) આપ પુરુષોત્તમ છો એ પ્રકારના ભક્તિમાર્ગમાં, અથવા તો પારમાર્થિક દષ્ટિમાં તે દોષો સંભવતા નથી-આ પ્રમાણે જો ગોપીજનો શંકા કરે તો તેનું સમાધાન કરતાં ભગવાન કહે છે કે 'શ્રવણાત્' ભક્તિમાર્ગમાં (ભગવાનની સાથે) સંબંધ જ કરવો જોઈએ એમ શાસ્ત્ર કહેતું નથી. ભક્તિ તો શ્રવણ, કીર્તન, સ્મરણ, પાદસેવન, અર્ચન, વંદન, દાસ્ય, સખ્ય અને આત્મનિવેદન એમ નવ પ્રકારની છે, અને દશમી પ્રેમરૂપ છે. સ્વતંત્ર ભક્તિમાર્ગમાં તો સંબંધની જરા પણ અપેક્ષા નથી (કારણ કે સ્નેહરૂપ ભક્તિ એ જ ફલરૂપ છે.) સ્વતંત્ર ભક્તિમાર્ગમાં તો ભગવાનમાં જ સ્નેહ હોય છે. અને તેથી તે સ્નેહ અલૌકિક છે. આ જ ભગવદ્વિષયક અલૌકિક સ્નેહ સર્વથી અધિક છે; પરંતુ લૌકિક સ્નેહ કામને અધીન થાય છે (અને તેથી તેમાં સંબંધની અપેક્ષા રહે છે) એટલે તે હલકા પ્રકારનો જ સ્નેહ છે. ભગવદ્વિષયક અલૌકિક સ્નેહનાં શ્રવણ, દર્શન અને ધ્યાન એમ ત્રણ કારણો છે. પ્રથમ કારણ શ્રવણ છે. શ્રવણ એટલે ભગવદ્વાચક પદો અને વાક્યોની શક્તિ અને તાત્પર્ય ભગવાનમાં રહેલાં છે એમ નિર્ણય કરવો તે. આ પ્રમાણે બધાં પદો અને વાક્યોનું તાત્પર્ય ભગવાનમાં જ છે એમ જ્યારે નિશ્ચય થાય ત્યારે ઘટપટાદિ સંસારના વિષયો દૂર થઈ જાય; પણ જ્યારે એવો નિશ્ચય ન થયો હોય અને ઘટપટાદિ પદાર્થો નિવૃત્ત ન થયા હોય ત્યારે તો ભગવાનથી અન્ય એવા ઘટપટાદિ પદાર્થોમાં પણ સ્નેહ થાય. ત્યાર પછી બીજું કારણ દર્શન. દર્શન એટલે શ્રવણ કરેલા અર્થનો અનુભવ અર્થાત્ માનસ પરોક્ષાનુભવ અથવા નિદિધ્યાસન.

અથવા તો જેમ ભગવાને કૃપા કરીને નારદજીને પોતાના સ્વરૂપનાં દર્શન કરાવ્યાં અને પોતાના વિષે સ્નેહ ઉત્પન્ન કર્યો તેમ ભગવદ્વિષયક કામ ઉત્પન્ન કરવાને માટે ભગવાન કૃપા કરીને પોતાના સ્વરૂપનો જે સાક્ષાત્કાર કરાવે તે દર્શન કહેવાય છે. ત્યાર પછી ત્રીજું કારણ ધ્યાન છે. ધ્યાન એટલે યોગ વડે ભગવાનનું ચિંતન. આ ત્રણ સાધનો વડે જ ભક્તોનો મારા વિષે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે (નહિ કે મારી સાથેના સંબંધથી). આ પ્રમાણે ઉત્પન્ન થએલો ભાવ અનુકીર્તનથી સ્થિર થાય છે. ભક્તિમાર્ગના શાસ્ત્રમાં દર્શાવેલો આ ઉપાય જેમ સારો છે તેમ હંમેશા ભગવાનની પાસે રહેવાથી ઉત્પન્ન થતો લૌકિક સ્નેહ સારો નથી. ભગવાનની પાસે રહેવાથી જે લૌકિક સ્નેહ ઉત્પન્ન થાય છે. તે કામમૂલક છે એમ અમે પહેલાં કહેલું છે. તેથી હે ગોપીજનો! તમે તમારે ઘેર પાછાં ચાલ્યાં જાવ. તેથી પારમાર્થિક વિચાર કરતાં પણ તમારે અહિં રહેવું જોઈએ નહિ. (હવે શ્રીઆચાર્યજી સ્થિતિપક્ષ દર્શાવે છે.) મૂલ શ્લોકમાં જે પ્રકારવાચક 'તથા' પદ છે તે પ્રકારનો-લૌકિક સ્નેહનો-જ નિષેધ કરે છે, કાંઈ સ્નેહના સ્વાભાવિક મહત્વનો નિષેધ કરતું નથી. જે ભક્તો ઘેર રહેનારા છે તેઓ શ્રવણાદિવિહિત ભક્તિ કરી શકે છે. તેથી ભગવાને ગોપીજનોને ઘેર જવાની આજ્ઞા કરી. (અર્થાત્ ઘરમાં સ્થિતિ કરનારા ભક્તો શ્રવણાદિવિહિત ભક્તિ જ કરી શકે છે પણ સ્વતંત્ર ભક્તિ કરી શકતા નથી; જ્યારે ભગવાનની પાસે રહેનારા ભક્તો સ્વતંત્ર ભક્તિ કરી શકે છે એટલે આ ભક્તોનો જ પ્રકાર ઉત્તમ છે.) ૨૭.

ભગવાને જ્યારે ગોપીજનોને આ પ્રમાણે ઘેર જવાનો ઉપદેશ કર્યો ત્યારે ગોપીજનો વિચાર કરવા લાગ્યાં કે ઘરનો ત્યાગ કર્યા પછી ફરીથી ઘેર જવું એ ઉલટી કરેલા પદાર્થના ભક્ષણ કરવા જેવું છે, અને પાછું ભગવાનના વાક્યનું ઉલ્લંઘન થઈ શકે નહિ. આ પ્રમાણે બે અતિ વિરુદ્ધ વિચારો આવવાથી બંનેને અનુસરનારા શરીરનો ત્યાગ કરવો એમ તેમણે નિશ્ચય કર્યો; પણ શરીરનો ત્યાગ કરવાના નિર્ણયમાં પણ ભગવાની સાથેના સંબંધથી જે આનંદ મળે છે તે મળી શકતો નથી એમ વિચારીને ગોપીજનોને હવે શું કરવું એની સૂઝ પડી નહિ એમ 'ઈતિ વિષયમ્' શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

||શ્રીશુક ઉવાચા||

ઈતિ વિપ્રિયમ્ આકર્ષ્ય ગોપ્યો ગોવિન્દભાષિતમ્ ।

વિષણ્ણા ભઙ્નસઙ્કલ્પાઃ ચિન્તામ્ આપુર્દુરત્યયામ્ ॥૨૮॥

શુકદેવજી કહે છે કે આ પ્રમાણે ગોવિંદ ભગવાનનાં અપ્રિય વચનો સાંભળીને ગોપીજનો ખેદ પામ્યાં; તેમના સંકલ્પો ભાંગી ગયા અને તેઓ અપાર

ચિંતામાં પડી ગયાં. ૨૮.

જેમાંથી પ્રિય જતું રહ્યું છે તે વિપ્રિય કહેવાય. (ભગવાનનું ભાષણ એવા પ્રકારનું હતું કે) તે શબ્દ અને અર્થ એ બે દષ્ટિએ પણ ગોપીજનોને અપ્રિય થઈ પડ્યું. ભગવાન આપણી પરીક્ષા કરવા ઘેર જવાનું કહે છે કે ખરા દૃઢયથી તે પ્રમાણે કહે છે એમ ગોપીજનોને સંદેહ થવા લાગ્યો. ભગવાનનાં વચનો ‘આ’-બરોબર-શ્રવણ કરીને, વાક્યોનું તાત્પર્ય નક્કી કરીને, ખરેખર, ભગવાન ઘેર જવાનું જ કહે છે એમ ગોપીજનોએ નિશ્ચય કર્યો. ગોપીજનો ઘેર પાછાં જાય એમ ભગવાનનો અભિપ્રાય ન હોય તો પણ ભગવાનની આ ઈચ્છા જાણવાનું સાધન ગોપીજનોને મળ્યું નહિ. ગોપીઓમાં નિપુણતા-હોંશીઆરી-ન હતી. દેવનું ભાષણ હોવાથી અસત્યની શંકારહિત અને ઈશ્વરનું વાક્ય હોવાથી નિર્ધાર-નિશ્ચય-રહિત એવાં સ્વામી ગોવિંદનાં વાક્યો સાંભળીને ગોપીજનો ખિન્ન થયાં-અર્થાત્ મનમાં પરમ ખેદ પામ્યાં. ખેદ પામવાનું કારણ એ હતું કે તેમના સંકલ્પો ભાંગી ગયા. જ્યારે બધાય સંકલ્પો ભાંગી ગયા ત્યારે તેમની ચિંતાનો પાર રહ્યો નહિ. અમારા મનમાં જે વિચાર છે તે અને ભગવાનનાં વાક્યો એ બેની એકવાક્યતા-એક જ તાત્પર્ય-કેવી રીતે થાય એની ગોપીજનો ચિંતા કરવા લાગ્યાં. આ ચિંતા ત્રણ લોકમાં આ જન્મ અને બીજા જન્મોમાં વ્યાપી પણ કોઈ જાતનો નિશ્ચય કરી શકી નહિ તેથી તે દુરત્યયા-અંતરહિત-થઈ. ૨૮.

પછી ચિંતાથી જે બન્યું તેનું ‘કૃત્વા’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી વર્ણન કરે છે:  
કૃત્વા મુખ્યાન્યવશુચઃ શ્વસનેન શુભ્યદ્ બિમ્બાધરાણિ ચરણેન સુખં લિખન્ત્યઃ ।  
અસૈરુપાત્તમષિભિઃ કુચકુંકુમાનિ તસ્થુર્મૃજન્ત્ય ઉરુદુઃખભરાઃ સ્મ તૂષ્ણીમ્ ॥૨૯॥

શોકસંબંધી શ્વાસવાયુથી બિંબ જેવાં લાલ અઘર જેમાં સુકાયાં છે એવાં શોકયુક્ત મુખોને ગોપીજનોએ નીચે નમાવ્યાં તેઓ પોતાના ચરણથી ભૂમિ ખોતરવા લાગ્યાં, અને મેંસવાળાં આંસુઓથી સ્તન ઉપરના કુંકુમનું માર્જન કરતાં, બહુ દુઃખના ભારથી, મૌન ધારણ કરીને ઉભાં રહ્યાં. ૨૯.

ગોપીજનો ચિંતાથી મૂર્છિત થઈ ગયાં. પછીથી પોતાનાં મુખને નીચે નમાવ્યાં. કોઈને પણ અમે અમારું મુખ બતાવીશું નહિ એમ વિચાર કરીને ગોપીજનોએ નીચાં મુખ કર્યો. ગોપીજનો જેમણે શોક પ્રાપ્ત કર્યો છે એવાં અથવા તો શોકસંબંધવાળાં થયાં. ‘શુચઃશ્વસનેન’-શોકવાળા શ્વાસવાયુથી સૂકાયાં છે બિંબના જેવાં (લાલ) અઘરો જેમનાં એવાં મુખો. ગોપીજનો આ પ્રકારનાં મુખો નીચે નમાવીને ચરણ વડે પૃથ્વીને ખોતરતાં હતાં, કારણ કે (આ સંયોગોમાં) આ જ

પ્રકારની અવસ્થા થાય છે. ગોપીજનો પૃથ્વીમાં જાણે માર્ગ માગતાં હોય તેમ ભૂમિને ખોતરવા લાગ્યાં. ગોપીજનો મેશવાળાં અશ્રુઓથી સ્તન ઉપરના કુંકુમનું માર્જન કરતાં શાંત ઉભાં રહ્યાં. આ પ્રમાણે નીચા મુખથી ભક્તિનો તિરોભાવ, શ્વાસથી પ્રાણપીડા, શોકથી અંતઃકરણની પીડા, બિંબ જેવા લાલ અઘર સૂકાઈ જવાથી કામરસનો તિરોભાવ, ચરણથી ભૂમિને ખોતરવાથી શરીરને પીડા, અશ્રુઓથી ઈન્દ્રિયોને પીડા, કુંકુમના અભાવથી કાંતિનો-સૌંદર્યનો તિરોભાવ, દુઃખના ભારથી આનંદનો તિરોભાવ, અને મૌન ધારણ કરીને ઉભા રહેવાથી ચૈતન્યનો તિરોભાવ વર્ણવવામાં આવ્યો છે. કેવલ સ્થાણુ-થાંભલાની માફક ગોપીજનો ઉભાં રહ્યાં. ૨૯.

પોતે આ પ્રમાણે શાંત ઉભાં રહ્યાં તો પણ ભગવાન્ શાંત ઉભા રહ્યા એ જોઈને ગોપીજનો ભગવાનની કાંઈક વિજ્ઞાપિત કરવા લાગ્યાં એમ ‘પ્રેષ્ઠમ્’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

પ્રેષ્ઠં પ્રિયેતરમિવ પ્રતિભાષમાણં કૃષ્ણં તદર્થ-વિનિવર્તિત-સર્વકામાઃ ।  
નેત્રે વિમૃશ્ય રુદિતોપહતે સ્મ કિञ્ચિત્ સંરમ્ભગદ્દદગિરોડ્બ્રુવતાનુરક્તાઃ ॥૩૦॥

શુકદેવજી કહે છે કે : શ્રીકૃષ્ણ ઉપર સ્નેહ રાખનારાં અને તેમનો સમાગમ કરવાને માટે સર્વ કામનાઓનો ત્યાગ કરનારાં ગોપીજનો રહન કરવાથી સૂજી ગએલી આંખોને લૂછી નાખી પોતાના પ્રિયતમ શ્રીકૃષ્ણ, જે પ્રિયથી અન્ય હોય એમ બોલતા હતા, તેમના પ્રત્યે ક્રોધથી ગદ્ગદ વાણીથી બોલવા લાગ્યાં. ૩૦.

પહેલાં શ્રીકૃષ્ણ જે વાક્યો બોલ્યા હતા તેની જ વાત આ શ્લોકમાં છે. અથવા તો આ શ્લોકનો સંબંધ બીજી રીતે પણ સમજાવી શકાય એમ છે. ગોપીજનોની આવી અવસ્થામાં પણ જ્યારે ભગવાને હસતે મુખે કહ્યું કે ‘તમે શા માટે રડો છો? તમે સ્વસ્થ થાવ અને ઘેર જાવ’, ત્યારે તેમના હૃદયમાં ભગવાનનાં વચનામૃતે પ્રવેશ કર્યો અને પોતાના જેવાં જ બીજાં વાક્યો ઉત્પન્ન કર્યાં. તે વખતે ભગવાનની પ્રેરણાથી જ તે ગોપીજનોએ ભગવાનનાં વાક્યોને પૂર્વપક્ષ તરીકે માનવાનો આરંભ કર્યો એમ ‘પ્રેષ્ઠમ્’ એ શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે.

ભગવાન્ પ્રિયતમ તો છે જ, કારણ કે શ્રુતિમાં ભગવાનની જે સ્તુતિ કરવામાં આવેલી છે તેમાં ભગવાન્ પ્રિયતમ છે એમ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. (અથવા તો સ્વસામગ્રી-નવો ચંદ્ર, નવાં ફૂલ અને ફલ, નવું મન વિગેરે સામગ્રી-થી, ભગવાનનું પ્રેષ્ઠપણું સંપાદન કરવામાં આવ્યું છે) પરંતુ અત્યારે ભગવાન્ બીજે પ્રકારે-પ્રિયથી અન્ય હોય તેમ-બોલે છે, છતાં પણ શુકદેવજીએ મૂલ શ્લોકમાં ‘અપ્રિય હોય-પ્રિયવિરુદ્ધ હોય-એ પ્રમાણે બોલતાં શ્રીકૃષ્ણ’ એમ કહ્યું નથી. કોઈ

પણ દિવસ ભગવાન્ અપ્રિય જેવા થતા નથી, પરંતુ તે પ્રિય થાય છે, ઈતર-પ્રિયથી અન્ય-પણ થાય છે, કારણ કે તે સર્વભવનસમર્થ છે. પ્રિયથી અન્ય થવામાં પ્રિયત્વનો બાધ થતો નથી. જેમ ભગવાન્ જગદ્રૂપ થાય છે અને જગતથી અન્ય પણ થાય છે તેમ ભગવાન્ પ્રિય થાય છે અને પ્રિયથી અન્ય પણ થાય છે. આજ વાત ‘પ્રિયેતરમિવ પ્રતિભાષમાણમ્’ એ શબ્દોમાં શુકદેવજી કહે છે. જે પ્રિય ભાગ છે તેનું તિરોધાન ભગવાન્ કરતા નથી, પરંતુ પોતે તે રૂપે-ફલાત્મક ભગવત્સ્વરૂપે-વાક્ય બોલતા નથી, પરંતુ બીજે રૂપે-અનિરુદ્ધરૂપે-બોલે છે; ત્યારે જ તેમની સાથે વાદ કરી શકાય. (પ્રિયતમ એવા ફલાત્મક ભગવાનની સાથે વાદ કરી શકાય નહિ એવો સામાન્ય નિયમ છે, પરંતુ અનિરુદ્ધ સ્વરૂપની સાથે તો વાદ થઈ શકે.) ફલાત્મક પ્રભુ કોઈ દિવસ સાધનરૂપ થતા નથી અથવા તો ‘મને તમે વરો’ એમ પણ કહેતા નથી; પરંતુ ભગવાનને મળવામાં જે પ્રતિબંધો આવતા હોય તેને બળથી પણ દૂર કરીને ફલાત્મક ભગવાનનું ભક્તોએ ગ્રહણ કરવું જ જોઈએ. આ જ વાત ‘કૃષ્ણમ્’ એ શબ્દમાં શુકદેવજી કહે છે. કૃષ્ણ એટલે સદાનંદ.

શંકા- ભગવાનની જ કામના કરવી એવો આગ્રહ ગોપીજનોએ શા માટે કરવો? જો મહાન્ એવા કૃષ્ણ ગોપીજનોની માગણી ન સ્વીકારે તો ઘણા નાના એવા ગોપોની પણ કામના રાખવી જોઈએ.

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદર્થ-વિનિવર્તિતસર્વકામાઃ’ તદર્થ એટલે ભગવાનને માટે વિશેષે કરીને દૂર કરી છે મુક્તિપર્યંતની સર્વે ઈચ્છાઓ જેમણે એવાં ગોપીજનો ‘તદર્થવિનિવર્તિતસર્વકામ’ કહેવાય છે. આ કૃષ્ણ ભગવાનની જ કામના કરવા જેવી છે એમ નિશ્ચય કરીને ગોપીજનોએ પહેલેથી જ બીજી બધી કામનાઓનો ત્યાગ કર્યો. શ્રુતિ પણ કહે છે કે ‘આ પુરુષ કામમય છે.’ જો ત્યજી દીધેલા પદાર્થનું-ઘર વિગેરેનું પણ ફરીથી ગ્રહણ કરવામાં આવે તો ભગવાનની આજ્ઞા થવાથી ઘરનું જ ગ્રહણ કેમ ન કરવું? ભગવાનને માટે બધા કામોનો ત્યાગ કરેલો છે તેથી ભગવદ્વિષયક કામ જ બાકી રહે છે. જો આ ભગવદ્વિષયક કામ સિદ્ધ ન થાય તો પોતાના સ્વરૂપની હાની જ થાય એમ નિશ્ચય કરીને, ફલરૂપ ભગવાનની આગળ અમારે તમારી શી પરવા છે એમ માન કર્યા વિના દટ થઈને, રોવાથી સૂઝી ગએલાં નેત્રોને લૂછી નાખીને, બધુ વ્યવસ્થિત રીતે ગોઠવીને ગોપીજનો કાંઈક ક્રોધથી (બોલવા લાગ્યાં). વાદ કરવાને માટે જે પ્રયત્ન કરવામાં આવે છે તે સંરમ્ભ કહેવાય છે. ભગવાન્ ખરેખર વચનથી નિરાકરણ કરે છે, સ્વરૂપથી નહિ. ભગવાનના વાક્યનું નિરાકરણ કરવું જોઈએ, તેથી



ગોપીજનોએ ભગવાનની સાથે વાદ કરવાને માટે પ્રયત્ન કર્યો. બધાય માણસો ઉપાય કરીને પાછા ફરે છે; પરંતુ ગોપીજનોની વાણી ક્રોધથી ગદ્ગદ થઈ ગઈ હતી; વર્ણો સ્પષ્ટ રીતે બહાર આવતા ન હતા, કારણ કે ભગવાનનાં વાક્યોનું નિરાકરણ કરવામાં વાણીને ભય લાગે છે. ગોપીજનોને તો ભય ન હતો, કારણ કે તેમનો ભગવાન ઉપર સ્નેહ હતો. સ્નેહ એ ભયનો નાશ કરનાર છે. જ્યાં થોડો પણ સ્નેહ હોય છે ત્યાં ભય હોતો નથી. તેથી તે ગોપીજનો બોલ્યાં. ૩૦.

ભગવાનનાં દસ વાક્યોનું ખંડન કરનારાં ગોપીજનોનાં વાક્યો પણ દસ છે, અને અધિકમાં તેમણે એક શ્લોકમાં ભગવાનની પ્રાર્થના કરી છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનોનાં અગીઆર વાક્યો છે. (ભગવાન રસાત્મક છે, અને તેથી તેમની સાથેના વાદમાં) આ ગોપીજનોનાં વાક્યોનો ખરેખર જય છે.

પ્રથમ ભગવાને ગોપીજનોને કહ્યું કે ‘હે મહાભાગ્યશાળી સ્ત્રીઓ, તમને સ્વાગત હો.’ જો કે આ પ્રમાણે ભગવાને અમારી (ગોપીજનોની) સ્તુતિ કરી છે, પણ તે અમને ઘેર પાછાં મોકલવાના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવી છે, નહિ કે ‘તમે મારી પાસે આવ્યાં’ તેથી. આ પ્રમાણે હોવાથી ભગવાનનું તે વાક્ય અમારી સ્તુતિ કરતું નથી, પરંતુ અતિ ક્રૂર છે, કારણ કે તેનું પરિણામ અનિષ્ટ છે.

ભગવાન કદાચિત્ એમ જવાબ આપે કે જે વાત અશક્ય છે તેમાં શું થઈ શકે? તો ગોપીજન ઉત્તર આપે છે કે ‘મૈવં વિભો’.

॥શ્રીગોપ્ય ઊચુ॥

મૈવં વિભો!ડર્હતિ ભવાન્ ગદિતું નૃશંસં સન્ત્યજ્ય સર્વવિષયાન્ તવ પાદમૂલમ્ ।  
પ્રાપ્તા ભજસ્વ દુરવગ્રહ મા ત્યજાસ્માન્ દેવો યથાદિપુરુષો ભજતે મુમુક્ષૂન્ ॥૩૧॥

શ્રીગોપીજન બોલ્યાં: હે પ્રભુ! આવા ક્રૂર વચનો કહેવાનું આપને શોભતું નથી. અમે સર્વ વિષયોનો સંપૂર્ણ ત્યાગ કરીને આપના ચરણાના મૂલને-વૃંદાવનમાં-પ્રાપ્ત થયાં છીએ. હે દુરાગ્રહી પ્રભુ! આપ અમારો ત્યાગ ન કરો, પરંતુ જેમ આદિ પુરુષ મુમુક્ષુ પુરુષોને ભજે છે તેમ આપ અમને ભજો. ૩૧.

આપ બધુંય કરવાને સમર્થ છો. કોઈ સમર્થ હોઈને જો અન્યથા બોલે તો તો તે ક્રૂર જ હોવો જોઈએ, કારણ કે જો દયા હોય તો તે પ્રમાણે તે ન બોલે. ભગવાને જે અમને પૂછ્યું કે ‘વ્રજમાં તો બધા કુશલ છે ને?’ તે પ્રશ્નમાં અમને કોઈ જાતનો રસ નથી-તેમાં અમારું પ્રયોજન નથી. કારણ કે બધા વિષયોનો જ સંપૂર્ણ ત્યાગ કરીને આપના ચરણાના મૂલમાં-વૃંદાવનમાં-અમે આવ્યાં છીએ. આ વચનોમાં ગોપીજનોએ કહ્યું કે જે પદાર્થનો ત્યાગ કરવામાં આવ્યો છે તેનો સ્વીકાર કરવો

અયોગ્ય છે, અને વળી અમે જાર બુદ્ધિથી આપની પાસે આવ્યાં નથી. અગીઆર ઈન્દ્રિયોના વિષયોનો પણ વાસના સાથે ત્યાગ કરવામાં આવ્યો છે. અમે આપના ચરણના મૂલમાં આવ્યાં છીએ એ જ વાત અમારો સર્વત્યાગ દર્શાવી આપે છે. એમ જો ન માનીએ તો અમને આપના ચરણના મૂલની પ્રાપ્તિ જ ન થાય. ભગવાને ગોપીજનોને જે પૂછ્યું કે ‘અહિં આવવાનું શું કારણ છે?’ તેના સંબંધમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘ભજસ્વ’-આપ અમારું ભજન-સેવન કરો. ભગવાન્ કદાચિત્ એમ કહે કે ભજન વિના બીજું કરવું યોગ્ય છે તો ગોપીજનો કહે છે કે હે ‘દુરવગ્રહ’-હે દુરાગ્રહી! આપે અમારું ભજન ન કરવું પણ બીજું કંઈ કરવું એ જીવોની માફક આપનો ખોટો અવગ્રહ-આગ્રહ છે. જીવો બધુંય કરવાની ઈચ્છા રાખે છે, પણ ભગવાનનું ભજન કરવાની ઈચ્છા રાખતા નથી. જેમ જીવોનો આવો આગ્રહ દુષ્ટ છે તેમ આપનો પણ આગ્રહ દુષ્ટ થવાને યોગ્ય છે. ગીતાજીમાં આપે ‘જે મારું જે પ્રકારે ભજન કરશે તેનું હું તે જ પ્રકારે ભજન કરીશ’ એ પ્રમાણે જે પ્રતિજ્ઞા કરેલી છે તેનું આપ પાલન કરતા નથી. ‘જેમ તમે બધાં ગોપીજનો મારી પાસે આવ્યાં છો તેમ મારે પણ તમારી પાસે આવવું જોઈએ’ એમ માનીને જો અત્યારે આપ અમારું ભજન ન કરતા હો તો અમારે કહેવાનું એ છે કે આપ અમારો ત્યાગ ન કરો; કારણ કે અમે આપનો ત્યાગ કરતાં નથી. આપ અમારું જે ભજન કરશો અને અમે આપનું જે ભજન કરીએ છીએ તે વિષયબુદ્ધિથી ભોગરૂપ નથી પરંતુ સર્વાત્મભાવવાળું છે. આ સર્વાત્મભાવથી કરવામાં આવતા ભજનનું વધારે સ્પષ્ટતાથી ગોપીજનો વર્ણન કરી શકે એમ નથી તેથી તે દૃષ્ટાંત આપીને કહે છે કે ‘દેવો યથા,’ દેવ ખરેખર સર્વનું જ ભજન કરે છે સર્વને ફલ આપે છે. જો એમ ન માનીએ તો દેવનું ભજન કરવું એમ કહેનારું શાસ્ત્ર વ્યર્થ થઈ જાય. (કર્મમાં દેવોને આહુતિ આપવામાં આવે છે અને દેવની દ્વારા જ ફલ મળે છે.) આ બધા દેવોમાં આદિપુરુષ દેવ-ભગવાન્-જ રહેલા છે (એટલે તેમની દ્વારા જ ફલ મળવું જોઈએ.) પૂર્વકાંડની અંદર પણ કર્મનું ફલ આપીને ભગવાન્ જે ભજન કરે છે તે સાર્થક છે (કારણ કે કર્મ કરતી વખતે મનુષ્ય ભગવાનનું પૂજન કરે છે અને ભગવાન્ તેને કર્મનું ફલ આપે છે.) ઉત્તરકાંડમાં તો ભગવાન્ જ્ઞાન અને ભક્તિનું પણ ફલ આપે છે એટલે વધારે યોગ્ય છે. આદિપુરુષની તે નિષ્કામ સેવા કરવી જ જોઈએ. વળી તે દેવ છે (‘સોડશ્નુતે સર્વાન્ કામાન્’ એ તૈત્તિરીય શ્રુતિમાં ભગવાન્ રમણ કરે છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે અને તેથી ભગવાન્ દેવ કહેવાય છે. દેવ શબ્દની અંદર જે ધાતુ છે તેનો અર્થ રમણ કરવું એવો થાય છે.) રમણ કરનાર દેવનું-ભગવાનનું-ભજન કરવાથી વ્યભિચાર થતો નથી (કારણ કે ભગવાન જ સર્વના પતિ

છે અને તેમનું ભજન કરવામાં વિષયનો સંબંધ હોતો નથી.) બીજા-લૌકિક-પુરુષનું ભજન કરવામાં આવે તો પણ પ્રથમ પતિ જે ભગવાન, જેમની સાથે જીવોનો સ્વભાવિક રીતે વિવાહ થએલો છે, તેમનું ભજન ન કરવું જોઈએ એમ નહિ. (અર્થાત્ તેમનું ભજન કરવું જોઈએ.) લૌકિક પતિનો સ્વીકાર કરવામાં નથી આવતો તે બરોબર છે, પરંતુ સર્વના સ્વાભાવિક પતિ જે ભગવાન તેમનું ભજન કરવામાં ન આવે તે યોગ્ય નથી. જેમ પ્રથમ પતિ-વિવાહિત પતિ-પોતાનાથી અન્ય પુરુષનું ભજન સહન કરતો નથી, અને અન્ય પુરુષના ભજનને દૂર કરીને જ પોતાનું-પ્રથમ પતિનું-ભજન કરાવીને પોતે ભજે છે તેમ આપે-ભગવાને-પણ કરવું જોઈએ; તેથી ગોકુલમાં પાછા જવાની જે આજ્ઞા આપ કરો છો તે આપને પણ યોગ્ય નથી એમ ‘યથા આદિપુરુષો દેવઃ’ એ દષ્ટાંત ઉપરથી જણાય છે. વળી, ભગવાન મુમુક્ષુ લોકોનું ભજન કરે છે પોતાના માણસ તરીકે સ્વીકારે છે, આત્મા તરીકે તેમના આગળ સ્ફુરે છે અને તેમને પોતાનો આનંદ આપે છે, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ‘આ જ ખરેખર આનંદ આપે છે.’ ‘સુષુપ્તિ અને બ્રહ્મસંપત્તિ-મોક્ષ-એ બે અવસ્થામાંથી કોઈ પણ અવસ્થામાં ભગવાનનું પ્રાકટ્ય થાય છે’ એ સૂત્ર પ્રમાણે ભગવાન મુમુક્ષુ જનો માટે પોતાના સ્વરૂપને પ્રકટ કરે છે તેથી જ ભગવાન મુમુક્ષુ જનોને ભજે છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો ફક્ત મુમુક્ષુ જનો ભગવાનનું ભજન કરે છે, પણ ભગવાન તેમનું ભજન કરતાં નથી એમ પ્રાપ્ત થાય. તેથી ભગવાન ફલ આપીને ભજન કરે છે. વળી ભગવાન મુમુક્ષુ જનોને ફરીથી સંસારમાં નાખતા નથી, પણ હંમેશા પોતાનામાં જ તેમને સ્થાપે છે. આ પ્રમાણે જેમ ભગવાન મુમુક્ષુ જનો પ્રતિ વર્તે છે તેમ અમારે માટે આપ શુદ્ધ ધર્મસ્વરૂપે પ્રકટ થઈને આપના સ્વરૂપાનંદનું દાન કરો અને તે રીતે આપ અમારું ભજન કરો એવું તાત્પર્ય છે. મૂલ શ્લોકમાં મુમુક્ષુ પદ મૂકવાથી એમ સમજાય છે કે અમારી પ્રાર્થનાથી અમારો એક વાર અંગીકાર કરીને આપે શાંત બેસી રહેવું એ પક્ષનું ખંડન થયું. રાસલીલા પછી ઘેર જવાની કરવામાં આવેલી આજ્ઞા, ઘરમાં સ્થિતિ કરાવવી ઈત્યાદિ તો વિરહરસના પોષણને માટે જ છે, નહિ કે ઘરમાં સ્થિતિ કરવાને માટે એમ પણ સમજવું. ૩૧.

યત્ પત્યપત્ય-સુહૃદામ્ અનુવૃત્તિરઙ્ગા! સ્ત્રીણાં સ્વધર્મ ઈતિ ધર્મવિદા ત્યથોક્તમ્ |  
અસ્ત્વેવમ્ એતદ્દુપદેશપદે ત્વયીશે પ્રેષ્ઠો ભવાન્ તનુભૃતાં કિલ બન્ધુરાત્મા ||૩૨||

હે અંગ! ધર્મને જાણનાર એવા આપે જે કહ્યું કે પતિ, પ્રજા, અને મિત્રોની સેવા કરવી એ સ્ત્રીઓનો ધર્મ છે, તે સિદ્ધાંત ઉપદેશના આશ્રયરૂપ અને ઈશ્વર એવા આપને વિષે જ હો! આપ તો ખરેખર દેહધારીઓના પ્રિયતમ પદાર્થ છો, બંધુ છો,

આત્મા છો. ૩૨.

ગોપીજનોને ભગવાને જે કહ્યું કે ‘સ્ત્રીઓએ પોતાના ધર્મનો પરિત્યાગ કરવો ઉચિત નથી,’ અને તેથી ‘આ ઘોર રાત્રી છે એટલે સ્ત્રીઓએ અહિં રહેવું ન જોઈએ’, તે વિષે પણ ગોપીજનો કહે છે કે ‘યત્પત્યપત્ય’ ઈત્યાદિ, પતિ, બાલકો અને મિત્રો-એમની અનુવૃત્તિ-અનુસરવું-એ સ્ત્રીઓનો સ્વધર્મ છે એમ ધર્મને જાણનાર એવા આપે કહ્યું. ધર્મશાસ્ત્રનું જ્ઞાન ધરાવનારાઓ ખરેખર બહિર્મુખ છે, કારણ કે તેઓ શારીર ધર્મને જ સ્વધર્મ કહે છે, અને આત્મધર્મને અથવા ભગવદ્ધર્મ ને સ્વધર્મ કહેતા નથી; તેનું કારણ એ કે તેઓ આત્માને જાણતા નથી. અમે સ્વરૂપની સાથે સંબંધ રાખનારાં છીએ, અને આપ ભજન-સેવા-કરાવવાને માટે પ્રકટ થયા છો. તેથી અમારો અથવા આપના સ્વરૂપનો વિચાર કર્યા વિના જ આપે ધર્મના જ્ઞાતા તરીકે જ અમને આ પ્રમાણે કહ્યું છે. આપે જે અમને કહ્યું છે તેના વિષયનો અમે નિર્ણય કરીએ છીએ, નહિ કે તેમાં અમે દોષ કાઢીએ છીએ. તે જ વાત ‘અસ્ત્વેવમેતદ્’ એ શબ્દોમાં ગોપીજનો કહે છે. આપે જે કહ્યું કે સ્ત્રીઓએ પોતાનો ધર્મ પાળવો જોઈએ, તો તેની વ્યવસ્થા આ પ્રમાણે જ થાવ. પતિ, બાલકો વિગેરે ધર્મસ્વરૂપ નથી, તેમ તેઓ ધર્મનો આધાર-આશ્રય પણ નથી, પરંતુ તેઓ કેવલ નિમિત્ત છે. આ ધર્મ બે પ્રકારનો હોય છે: એક અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય અને બીજો જાણવા યોગ્ય. જે ધર્મ કરવાનો છે તેમાં પુત્ર વિગેરે નિમિત્ત હોય છે, પરંતુ જે ધર્મ જાણવા યોગ્ય છે તેમાં તો ગુરુ-આચાર્ય નિમિત્ત છે. તેથી જે અનુવૃત્તિ-સેવા કરવાની છે તે પ્રથમ ગુરુની થાવ. આ પ્રમાણે જો કરવામાં ન આવે તો પોતાનો ધર્મ કોઈ પણ જાણી શકે જ નહિ. ભગવાનનું જે વાક્ય છે તે અનુવાદ કરનારું-ગૌણ નથી, કારણ કે ભગવાને ધર્મનો ઉપદેશ કર્યો તે પહેલાં અમને-ગોપીજનોને ધર્મનું જ્ઞાન ન હતું. ગોપીજનો પહેલાં જે પતિ વિગેરેની સેવા કરતાં હતાં તે તો બીજા લોકોને અનુસરીને કરતાં હતાં, કાંઈ શાસ્ત્રને અનુસરીને નહિ, કારણ કે તેમને તે વિધિનું જ્ઞાન ન હતું. જો ઉપદેશ પહેલાં તેમને તે પ્રમાણે જ્ઞાન હોત તો ભગવાનના વાક્ય પ્રમાણે તેઓ પતિ, બાલક વિગેરેની સેવા જ કરત. વળી, ગુરુની સેવા વિના શાસ્ત્રમાં જણાવેલો ધર્મ સમજાતો નથી. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો ગુરુની સેવા કર્યા વિના જ ફક્ત તેમના વચનથી જ અમે બધાં ઘેર ગયાં હોત, તેથી આપે જે ઉપદેશ કર્યો છે તે સિદ્ધ કરવાને માટે પહેલાં આપ અમારી પાસે આપની સેવા કરાવો. આપ ઉપદેશનું પદ-આશ્રય છો, અર્થાત્ આપ ઉપદેશના કરનારા જ છો. મૂલ શ્લોકમાં ‘અંગ’ એ પ્રમાણે ભગવાનને માટે જે કોમલ સંબોધન વાપરવામાં આવ્યું છે

તે સૂચવે છે કે અમે-ગોપીજનો ભગવાનને પ્રતિકૂલ થાય એવું કાંઈ પણ કહીશું નહિ. વળી, સ્વધર્મો પણ અનેક પ્રકારના છે: કેટલાક ધર્મો પોતાનાથી ઉત્તમ પદાર્થો વિષેના હોય છે, કેટલાક પોતાના જેવા જ પદાર્થો વિષેના હોય છે, અને કેટલાક પોતાનાથી હલકા પદાર્થો વિષેના હોય છે. આ ત્રણ પ્રકારના ધર્મોમાં પહેલાંનો ધર્મ પછીના ધર્મ કરતાં ઉત્તમ છે. (અર્થાત્ ત્રીજા પ્રકારના ધર્મ કરતાં બીજા પ્રકારનો ધર્મ ઉત્તમ, અને બીજા પ્રકારના ધર્મ કરતાં પહેલા પ્રકારનો ધર્મ ઉત્તમ છે.) દા.ત. પતિ, બાલકો વિગેરે પોતાના જેવા જ પદાર્થોની સેવા કરવી એ સ્ત્રીઓનો ધર્મ છે. આ પ્રમાણે પોતાના નિયામક-અંતર્યામી ઈશ્વરની પણ સેવા કરવી એ સર્વ પ્રાણીઓનો મુખ્ય ધર્મ છે. (કારણ કે ઈશ્વર આપણા કરતાં ઉત્તમ છે, અને તેથી તેમની સેવા એ સર્વથી શ્રેષ્ઠ ધર્મ ગણાય છે.) પ્રભુની સેવા એ મુખ્ય ધર્મ છે એમ જો આપણે ન માનીએ તો પ્રભુની પ્રેરણા આપણને ન થાય અને તેથી કોઈ પણ જીવ પતિસેવા વિગેરેમાં પ્રવૃત્ત થાય નહિ. તેથી અહિં બહાર પ્રકટ થયા છો તો પણ આપ ઈશ્વર છો, અંતર્યામી છો (અને તેથી અમને પ્રેરનારા છો.) આપ ઈશ છો છતાં પણ પતિ, પુત્ર વિગેરેને માટે આપ અમને પ્રેરતા નથી, પરંતુ આપની સેવાને માટે જ પ્રેરો છો. (જ્યારે આપ પતિ, પુત્ર વિગેરેને માટે અમને પ્રેરતા નથી ત્યારે તો એમ જણાય છે કે આપ અમારી સેવાથી પ્રસન્ન થઈને અમને પતિ, પુત્ર વિગેરેને માટે પ્રેરણા કરશો.) તેથી આપનાં વાક્યોમાં જે સ્ત્રીઓના ધર્મનું-પતિ વિગેરેની સેવા કરવાનું-વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે સિદ્ધ કરવાને માટે પણ અમારે પ્રથમ આપની જ સેવા કરવી જોઈએ. વળી ધર્મ ધર્મો-ધર્મકર્તાને આધારે રહેલો હોય છે એટલે ધર્મોની-ધર્મકર્તાના સ્વરૂપની સાથે વિરોધ ન આવે એવી રીતે ધર્મ કરવો જોઈએ, અને ફલને માટે પણ ધર્મ કરવો જોઈએ (અને આ રીતે ધર્મકર્તાએ પોતે ફલ ભોગવવું જોઈએ.) જો આ પ્રમાણે ન માનીએ અને ધર્મોની સાથે વિરોધ રાખીને અને ફલ મેળવ્યા વિના ધર્મ કરવામાં આવે તો અનિષ્ટ-નિષ્ફલ ધર્મ-માં પણ ધર્મનો બોધ કરનાર વેદ પુરુષને પ્રવર્તે અને તેથી તેમાં કોઈને વિશ્વાસ રહે નહિ. આથી જ ધર્મશાસ્ત્રમાં, શરીર પ્રિય હોવાથી, શરીરને અનુસરવાનું કહેવામાં આવ્યું છે. વળી, ‘દ્રવ્ય (ધર્મો) અને તેનો સંસ્કાર (ધર્મ) એ બે વચ્ચે જ્યારે વિરોધ ઉભો થાય ત્યારે દ્રવ્ય વધારે બલવાનું છે’ એ પૂર્વમીમાંસાનો ન્યાય પણ છે. આ પ્રમાણે કોઈને દેહ પ્રિય હોય છે, કોઈને આત્મા પ્રિય હોય છે, કોઈને પરમાત્મા પ્રિય હોય છે અને કોઈને નિર્વાહ કરનાર પ્રિય હોય છે. આપ તો સર્વરૂપ છો, કારણ કે અત્યંત પ્રેષ્-પ્રિયતમ છો. આપ પ્રેષ્ છો એટલે પરમ પ્રેમનું સ્થાન છો, આનંદ છો, બંધુ છો, અને દેહના

નિર્વાલક છો. આ પ્રમાણે ‘પ્રેષ્ઠ’ શબ્દ વડે ભગવાન્ ધર્મી છે એમ સિદ્ધ કરવામાં આવ્યું; અને તેથી ગોપીજનોએ તે ધર્મીની સેવા કરવી પ્રાપ્ત થાય છે. (‘પરમપ્રેમ’ એ શબ્દ વડે ભગવાનનું દેહરૂપ સિદ્ધ થાય છે. ‘આનન્દ’ શબ્દ વડે તેમનું આત્માનું રૂપ સિદ્ધ થાય છે, ‘બન્ધુ’ શબ્દ વડે પરમાત્માનું રૂપ સિદ્ધ થાય છે.) વળી એકલા અમને જ આપ આ રૂપે જણાઓ છો એમ નહિ પણ બધાય દેહ ધારણ કરનારા મનુષ્યોને આપ આવા જણાઓ છો. (‘ભવાય નાશાય’ એ શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે આપે વિચાર કરેલા પ્રયોજનને માટે જીવ આપે આપેલું જ શરીર ગ્રહણ કરે છે. તેથી આ દેહ ભગવદીય છે અને તે ભગવાને જ આપેલો છે. તેથી તે દેહનું ભગવાનને નિવેદન કરવું, અને જ્યારે ભગવાનને તે દેહનો ઉપયોગ ન હોય ત્યારે પછીથી બીજાને તે દેહ આપવો. જે ચેતન પદાર્થ છે તેને પ્રેરણા કરી શકાય છે. જેમ પ્રિયવ્રતને રાજ્યાદિ બાબતોમાં પોતાના દેહનો ઉપયોગ કરવાનું જ્ઞાન ન હતું અને તેથી બ્રહ્માએ તેને તે પ્રમાણે જ્ઞાન આપ્યું, તેમ આપ પણ અમને બીજાઓને દેહ અર્પણ કરતાં અટકાવીને આપની સેવાને માટે પ્રેરણા કરો. માટે જ્યાં સુધી ભગવાનને પોતાના દેહનો ઉપયોગ છે એમ જીવ જાણશે ત્યાં સુધી તેને કહેવામાં આવશે તો પણ તે બીજાને પોતાનો દેહ નહિ આપે.) આપ બધાય દેહધારીઓના દેહ, આત્મા, પરમાત્મા અને દેહનિર્વાલક છો, કારણ કે બધાયના આપ જ પ્રિયતમ પદાર્થ છો. અને પ્રિયતમ પદાર્થને પ્રિય વસ્તુ આપવી ઘટે છે. આ બાબત પ્રસિદ્ધ જ છે અને પ્રસિદ્ધિ જ પ્રમાણ છે એ જણાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘કિલ’ શબ્દ મૂકવામાં આવ્યો છે. વળી આપ, ફક્ત દેહ આપનારા છો એમ નહિ, પરંતુ બંધુ પણ છો, કારણ કે જેને માટે જીવ પ્રયત્નથી શરીરનું પોષણ કરે છે તે ખરો બંધુ છે, અને તે રીતે આપ અમારા બંધુ છો. આપ આત્મા-શરીરને ટકાવનાર પણ છો. તેથી અંતરંગબહિરંગન્યાયથી અથવા તો નિત્યાનિત્યન્યાયથી આપની સેવા જ મુખ્ય છે. (શરીરનું ભરણ કરનાર અને ટકાવનાર ભગવાન્ અંતરંગ અને નિત્ય છે; જ્યારે શરીરની સાથે સંબંધ રાખનારા પદાર્થો બહિરંગ અને અનિત્ય છે. બહિરંગ કરતાં અંતરંગ ચઢે છે, અને અનિત્ય કરતાં નિત્ય ચઢે છે એ સામાન્ય ન્યાય છે. અને તે ન્યાયથી જ ભગવાનની સેવા મુખ્ય છે.) પરંતુ જ્યારે અમારા દેહનો આપને ઉપયોગ નહિ હોય, અને તે સમયે પણ જો આપની તે પ્રમાણે-તમારો દેહ બીજાને આપો એવી-પ્રેરણા થશે તો જ અમે બીજાઓને-પતિ વિગેરેને-અમારું શરીર આપીશું, અન્યથા નહિ. ધર્મી-વસ્તુનો વિચાર ધર્મ-વસ્તુના ગુણ કરતાં અધિક છે. આ બધું ધર્મ વિગેરે જો આપ ન સ્વીકારો તો બધું જ વિસ્ફુટ થઈ જાય; માટે આપની અમે

‘અસ્તુ’ એ શબ્દમાં પ્રાર્થના કરીએ છીએ. અથવા તો આપની સેવા સર્વરૂપ છે-પતિ વિગેરે સર્વની સેવા કરીએ તેવી છે-તેથી આપની જ સેવા કરવી જોઈએ. આપના વિના બીજાને વિષે એક જ સમયે બધી સેવા જો પ્રાપ્ત થાય તો કેટલાક અંશમાં તે સેવાનો બાધ થાય, કારણ કે તેમાં કોઈ પણ નિયામક પ્રમાણ-અમુકની સેવા કરવી અને અમુકની ન કરવી એનો નિર્ણય કરી શકે એવું પ્રમાણ-નથી. તેથી જેનો કાલ વિગેરેથી બાધ થાય છે અને જે અશક્ય છે તે ધર્મ પણ થઈ શકતો નથી. જે પ્રમાણ છે તે વિસ્તૃત બાબતનું વિધાન કરતું નથી. તેથી પતિ વિગેરેની સેવા કરવી એમ વિધાન કરનારું શાસ્ત્ર અને ભગવત્સેવા કરવી એમ વિધાન કરનારું શાસ્ત્ર પણ આપની સેવાનું જ વિધાન કરે છે. આ પ્રમાણે સર્વ શાસ્ત્ર આપની સેવાનું જ વિધાન કરે છે, અને અન્યની સેવા જે કોઈ પોતાની ઈચ્છાથી કરે છે તેનો અનુવાદ કરે છે. તેથી અનુવાદપક્ષમાં અથવા સ્વતંત્રપક્ષમાં આપની સેવા જ ઉચિત છે એમ તાત્પર્ય છે. (અનુવાદપક્ષ અને સ્વતંત્રપક્ષનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે. શાસ્ત્ર ભગવત્સેવા અને પતિ વિગેરેની સેવા એમ બંને સેવાઓનું વિધાન કરે છે, છતાં પણ પતિ વિગેરેની સેવા કેટલાક અંશમાં બાધિત થાય છે, અને તે પોતાની ઈચ્છાથી પ્રાપ્ત થએલી હોવાથી શાસ્ત્રમાં તેનો અનુવાદ કરવામાં આવ્યો છે. તેથી શાસ્ત્રમાં ભગવત્સેવાનું જ વિધાન કરવામાં આવ્યું છે. આથી ભગવાનની જ સેવા કરવી પ્રાપ્ત થાય છે. પતિ વિગેરેની સેવાનો આ અનુવાદપક્ષ થયો, અને આ પક્ષમાં ભગવત્સેવા જ પ્રાપ્ત થઈ. હવે પત્યાદિ સેવાના સ્વતંત્રપક્ષનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે. જો એમ માનીએ કે શાસ્ત્રમાં પતિસેવાનું પણ સ્વતંત્ર રીતે વિધાન કરવામાં આવેલું છે, તો તે ધર્મના જ્ઞાન વિગેરેને માટે આપની ગુરુ તરીકે સેવા કરવી પ્રાપ્ત થાય છે. આ પ્રમાણે પતિસેવાના સ્વતંત્રવિધાનપક્ષમાં પણ ભગવત્સેવા જ પ્રાપ્ત થાય છે.) ૩૨.

આ પ્રમાણે રાજસી ગોપીજનોનાં વાક્યોનું નિરૂપણ કરીને હવે શુકદેવજી સાત્ત્વિક ગોપીજનોનાં વાક્યોનું ‘કુર્વન્તિ હિ’ એ શ્લોકમાં નિરૂપણ કરે છે:  
કુર્વન્તિ હિ ત્વયિ રતિં કુશલાઃ સ્વ આત્મન્ નિત્યપ્રિયે પતિસુતાદિભિરાતિદેઃ કિમ્ ।  
તન્નઃ પ્રસીદ વરદેશ્વર! મા સ્મ છિન્ધ્યા આશાં ધૃતાં ત્વયિ ચિરાદ્ અરવિન્દનેત્ર! ॥૩૩॥

તેથી કરીને ચતુર પુરુષો હંમેશાં પ્રિય અને પોતાના આત્મરૂપ આપને વિષે પ્રીતિ કરે છે. દુઃખ આપનારા પતિ, પુત્ર વિગેરેનું તેમને શું પ્રયોજન છે? માટે હે વરદાન આપનારાઓના ઈશ્વર, આપ અમારા ઉપર પ્રસન્ન થાવ, અને હે કમલના જેવાં નેત્રવાળા પ્રભો! આપને વિષે ઘણા સમયથી રાખેલી અમારી આશાને આપ છેલ્લો નહિ. ૩૩.

‘માતાઓ, પિતાઓ વિગેરે તમને શોધશે.... માટે બંધુઓને તમે ત્રાસ આપો નહિ’ એમ આપે જે પહેલાં કહ્યું તે વિષે અમારે નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન કરવો છે :

(ઘરનો ત્યાગ કરીને અમે આપની પાસે આવ્યાં અને તેમ કરવાથી સગાં સંબંધીઓને અમે ત્રાસ આપ્યો છે. આ રીતે ત્રાસ આપવો નહિ એવો નિષેધ છે. તો) આ પ્રમાણે કરનારાં (જગતમાં) પહેલ વહેલાં અમે જ છીએ, કે બીજાઓ પણ આ પ્રમાણે કરે છે? સગાંઓને ત્રાસ ન આપનારાઓમાં પણ શું અઘમ કોટિના માણસો માતા વિગેરેની સેવા કરે છે કે ઉત્તમ કોટિના માણસો? ઉત્તમ કોટિના માણસો પણ આપની સેવા કરવાને માટે અશક્ત હોવાથી માતા વિગેરેની સેવા કરે છે કે આપની સેવા કરવાને સમર્થ હોય છતાં પણ માતા વિગેરેની તેઓ (ઉત્તમ મનુષ્યો) સેવા કરે છે? આ બધા પ્રશ્નોનો વિચાર કરવો જોઈએ.

આ વિષયમાં મહાપુરુષોનું ચરિત્ર નિર્ણય કરી શકે એમ છે એમ ગોપીજનો કહે છે. જે લોકો આત્માને વિષે કુશલ હોય છે, જે આત્માનું હિત ઈચ્છનારા છે, પણ દેહ અને ઈન્દ્રિયોનું હિત ઈચ્છનારા નથી તેઓ આપને જ વિષે પ્રીતિ કરે છે. ખરેખર! સ્નેહથી ભગવત્સેવા વિગેરે ક્રિયા થાય છે. સમષ્ટિરૂપ ભગવાનને વિષે જે કર્મ કરવામાં આવે છે તે જ કર્મ વ્યષ્ટિરૂપ જીવને વિષે આવે છે (કારણ કે ભગવાન સર્વના આત્મા છે.) આ જ વાતનું પ્રતિપાદન ‘જેમ મુખની શોભા પ્રતિબિંબની શોભા થાય છે તેમ ભગવાનની જે સેવા કરવામાં આવી હોય તેમાં પોતાની જ સેવા-પૂજા-થાય છે’ એ સાતમા સ્કંધના નવમા અધ્યાયના અગીઆરમા શ્લોકમાં કરવામાં આવેલું છે. પ્રેમથી સેવા થાય છે. જો પુત્ર વિગેરેની સેવા પણ ધર્મ હોય તો તે સેવા, પુરુષાર્થ હોવાથી, આત્માને વિષે જવી જોઈએ (પરંતુ તે પ્રમાણે થતું નથી એટલે પુત્ર વિગેરેની સેવા ધર્મ કહેવાય નહિ.) શ્લોકમાં ‘કુશલ’ એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનો ભાવ એવો છે કે (દેહ વિગેરેની) સેવા કરતાં (ભગવત્સેવારૂપી) નિવૃત્તિ ઉત્તમ છે એમ માનવામાં અને તે પ્રમાણે આચરવામાં તે મનુષ્યોની કુશલતા રહેલી છે. જ્યારે ઈન્દ્રિયોનું દમન કરવાની શક્તિ ન હોય ત્યારે જ ઈન્દ્રિયોનો પતિ વિગેરે અન્ય પદાર્થની સેવા કરવામાં ઉપયોગ કરવો; અને આ પ્રમાણે ‘મનુષ્ય જ્યાંથી નિવૃત્ત થતો જાય છે ત્યાંથી બંધનોથી મુક્ત થતો જાય છે’ એ અગીઆરમા સ્કંધના એકવીસમા અધ્યાયના અઠારમા શ્લોકનું તાત્પર્ય છે. (આ શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું કે જ્યાંથી મનુષ્ય નિવૃત્ત થાય છે ત્યાંથી બંધનમાંથી મુક્ત થાય છે. આ ઉપરથી એવું સૂચન થાય છે કે નિવૃત્ત થવાની શક્તિ માણસનામાં ન હોય ત્યારે તે પોતાની ઈન્દ્રિયો બીજા કાર્યમાં વાપરે છે.) જ્યારે ઈન્દ્રિયોનો નિરોધ કરવામાં આવે



છે ત્યારે તે આત્મા તરફ વળે છે. તેમાં પણ જ્યારે આપને માટે જ તે ઈન્દ્રિયોનો ઉપયોગ કરવામાં આવે ત્યારે જ તે આત્મા તરફ વળે છે. તેથી જે લોકો ફક્ત ઈન્દ્રિયોનો નિગ્રહ જ કરે છે તેમના કરતાં જે લોકો આપનામાં પ્રેમ કરે છે તેઓ કુશલ-ચતુર-છે એમ મૂલ શ્લોકમાં આવેલા ‘હિ’ શબ્દનો અર્થ છે. મૂલ શ્લોકમાં ભગવાનને માટે ‘ત્વયિ’-આપનામાં-એ પ્રમાણે જે એક વચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે એમ દર્શાવે છે કે પહેલાંના શ્લોકમાં જણાવ્યું તે પ્રમાણે આપના એકલામાં જ બધું સંભવી શકે છે. (આ પ્રમાણે ઔપાધિક પ્રીતિનો પક્ષ સ્વીકારીને કુશલતાનું નિરૂપણ કર્યું. હવે સિદ્ધાંતની રીતિએ કુશલતાનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવે છે.) વળી, આપ અમારા આત્મા-સ્વરૂપભૂત-છો, નહિ કે અધ્યાસથી આપ અમારા આત્મા થયા છો. (હવે સેવ્ય પદાર્થનો વિચાર કરીને કુશલતા સમજાવવામાં આવે છે.) વળી, જે પ્રિય છે તેની સેવા કરવી જોઈએ. જો આ પ્રિયને કાલની મર્યાદા ન હોય-અર્થાત્ તે અનિત્ય ન હોય-તો જ તે પ્રિયની સેવા કરવી પ્રાપ્ત થાય છે, બીજાની નહિ. આવા કાલથી અતીત પ્રિય આપ જ છો. જો કાલથી મર્યાદિત થએલા પ્રિયની સેવા કરવામાં આવે તો જારની સેવા પણ ધર્મ થાય, કારણ કે જેમ અમારા પતિઓને જન્મની મર્યાદા છે તેમ જારને પણ દિવસની મર્યાદા છે. (અર્થાત્ પતિ અને જાર એ બંનેય કાલપરિચ્છિન્ન છે, અને જો કાલપરિચ્છિન્ન પ્રિય પદાર્થની સેવા કરવાની પ્રાપ્ત થાય તો તે પતિસેવાની માફક જારસેવા પણ ધર્મરૂપ ગણાય. પરંતુ તેમ નથી. તેથી સ્પષ્ટ માલમ પડે છે કે કાલપરિચ્છિન્ન પ્રિય પદાર્થની સેવા કરવી નહિ.) વળી, પતિ, પુત્ર વિગેરે ધર્મનું કારણ થઈ શકે નહિ, કારણ કે તેઓ દુઃખ આપનારા છે. ખરેખર! જે ધર્મનાં કારણો છે તે કોઈ પણ દિવસ દુઃખ આપતાં નથી. જો પતિ, પુત્ર વિગેરેને ધર્મનાં કારણ તરીકે માનવામાં આવે તો પછી સંસાર જ ન રહે. તેથી તેવા પતિ, પુત્ર વિગેરેનું (અમારે) શું પ્રયોજન છે?

અમારા પતિ, પુત્ર વિગેરેને ભલે અમારે લીધે ભય થાવ, અથવા બીજું કાંઈ થાવ, પણ અમારે તો ધર્મની સિદ્ધિને માટે તેમનું જરા પણ પ્રયોજન નથી એમ ભાવ છે. અમારે તો એક જ વસ્તુની પ્રાર્થના કરવાની છે. આ વસ્તુ એવી છે કે જો તે ન હોય તો પછી સર્વ શાસ્ત્ર અને તર્ક વ્યર્થ થઈ જાય. ગોપીજનો તે વસ્તુની પ્રાર્થના કરતાં કહે છે કે તેથી આપ પ્રસન્ન થાવ. આપની કૃપા વિના જ લોકો ભ્રાંતિમાં પડે છે અને દુઃખ આપનારા વિષયોમાં પણ પ્રવર્તે છે.

કદાચિત્ ભગવાન્ ગોપીજનોને પ્રશ્ન કરે કે ‘મારી કૃપા મેળવવાને માટે તમે શું સાધન કર્યું છે?’-તો ગોપીજનો કહે છે કે ‘વરદેશ્વર:’. જે લોકો વરદાન આપે છે તે

મનુષ્યોનું દુઃખ જાણીને વરદાન આપે છે, કારણ કે તે દયાળુ હોય છે. જો વરદાન આપનારાઓ દયાળુ ન હોય તો બીજા લોકો તપ કરે તો પણ તેઓ વરદાન આપે નહિ. આવા વરદાન આપનારાઓના પણ આપ ઈશ્વર છો; આપ અતિ દયાળુ છો. બીજા વરદાન આપનારાઓની દ્વારા પણ આપ બધાનાં દુઃખો દૂર કરો છો. આપ વરદેશ્વર છો તેથી અમે આપને કહીએ છીએ કે અમને ઘણો ક્લેશ થાય છે. જેમ તપશ્ચર્યા ભગવાનની કૃપા મેળવવાનું સાધન છે તેમ (તાપાત્મક) ક્લેશ જ ભગવત્કૃપા પ્રાપ્ત કરવાનું સાધન છે. વરદાન આપવાની અંદર જો આપને કોઈ નિષિદ્ધ પ્રકાર જણાતો હોય તો તે આપે કરવાની જરૂર નથી. (તાત્પર્ય એ કે અમારું દુઃખ દૂર કરવામાં આપને કોઈ નિષિદ્ધ પ્રકાર-ગોપીજનો વિષયભોગને માટે આવ્યાં છે, સર્વાત્મભાવથી નથી આવ્યાં એવો નિષિદ્ધ પ્રકાર-જણાય તો તે સ્વીકારવાની આપને જરૂર નથી.)

જો ભગવાન અમે કહે છે કે ‘જેમ આટલો વખત તમે પતિની સેવા કરી તેમ હવે પછી પણ પતિ સેવા કર્યા કરો, કારણ કે પતિસેવા તમને અત્યાર સુધી પ્રાપ્ત થએલી છે, અને વળી એવો ન્યાય છે કે ગૌણકર્મનો આરંભ કરવામાં આવ્યો હોય તો તેને પણ પૂર્ણ જ કરવું; તેથી તમે આ બધી ચર્યા કર્યા વિના જ પતિસેવા કરો’, તો ગોપીજન કહે છે કે ‘મા સ્મ છિન્દ્યા આશાં ધૃતામ્’. અમે પતિસેવા કરી નથી, તેમ જ પતિને માટે અમે ઘરમાં સ્થિતિ કરી નથી, પરંતુ આપની આશાએ જ અમે રહ્યાં છીએ, અને વચમાં મર્યાદાને અનુસરવાને માટે જ અમે ગોપોનો સ્વીકાર કર્યો છે. હમણાં જ્યારે અમે આપની પાસે આવ્યાં છીએ અને જો અમારી આશા પૂર્ણ થાય નહિ તો પછી આશા ભાંગી જશે, અને જ્યારે આશા જતી રહેશે ત્યારે અમારા પ્રાણ પણ (નિરાધાર થઈને) જતા રહેશે. આ કારણથી સ્ત્રીઓનાં હૃદયને જાણનાર કોઈ એક કવિએ-કાલિદાસે-(મેઘદૂતમાં) કહ્યું છે કે ‘આશાઙ્ગી બંધ હૃદયને ટકાવે છે.’ કવિના આ વચનનું મૂલ પણ સ્ત્રીશાસ્ત્રમાં-રસશાસ્ત્રમાં-હશે. ઘણા વખતથી આપનામાં જ અમે આશા રાખી રહ્યાં છીએ. આ આશા જ્યારે તૂટી જશે ત્યારે આધાર વિના અમે નીચે પડી જઈશું. મૂલ શ્લોકમાં ‘સ્મ’ શબ્દ છે તે દર્શાવે છે કે આ વાત પ્રસિદ્ધ છે. ગોપીજનો ભગવાનને ‘અરવિન્દનેત્ર’ એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ભગવાન પોતે પોતાની દષ્ટિથી જ ભક્તોને શાંતિ આપે છે. (‘અરવિન્દનેત્ર’ એ સંબોધન અમારી આશાનું કારણ પણ કહે છે, કારણ કે તાપને હરણ કરનારી દષ્ટિથી આપ અમને જુઓ છો અને આપની ભાવ દર્શાવનારી દષ્ટિ જ તાપ હરણ કરે છે. અત્યાર સુધી અમે જે જીવીએ છીએ તે આ-આપ અરવિન્દનેત્ર

છો તે-કારણથી જ. આ પ્રમાણે ‘અરવિન્દનેત્ર’ સંબોધનનું તાત્પર્ય છે.) ૩૩.

ભગવાને ગોપીજનોને કહ્યું કે ‘તમે શું વન જોવા આવ્યાં છો?’ અને પછીથી તેમણે વનનું વર્ણન પણ કર્યું. આના ઉત્તરમાં ગોપીજનો ‘ચિત્તં સુખેન’ એ પ્રમાણે કહે છે:

ચિત્તં સુખેન ભવતાપહતં ગૃહેષિ યન્નિર્વિશત્યુત કરાવપિ ગૃહ્યકૃત્યે ।  
પાદૌ પદં ન ચલતસ્તવ પાદમૂલાદ્ યામઃ કથં વ્રજમ્ અથો કરવામ કિં વા ॥૩૪॥

આનંદ રૂપ આપે જ અમારું ચિત્ત સહેજમાં હરણ કરી લીધું છે જેથી અમારું ચિત્ત તથા હાથ પણ ઘરના કાર્યમાં લાગતા નથી; અને આપના ચરણના મૂલથી એક ડગલું પણ અમારા પગ ચાલતા નથી; તો પછી અમે વ્રજમાં કેવી રીતે જઈ શકીએ? અને ત્યાં જઈને પણ અમે શું કરીએ? ૩૪.

જ્યારે ચિત્ત સ્વસ્થ હોય તો જ વન જોવાની ઈચ્છા થાય. પણ તે ચિત્ત તો આપે જ હરી લીધું. આ ચિત્ત હરણ કરવામાં આપને કોઈ જાતનો પ્રયાસ કરવો પડ્યો નથી. જો અમારું ચિત્ત હરવામાં આપને પ્રયાસ કરવો પડ્યો હોત તો અમારું સર્વ ચિત્ત આપ હરી શક્યા ન હોત. આ બધો ભાવ શુક્રદેવજી ‘સુખેન’ એ શબ્દ વડે દર્શાવે છે. અથવા તો ‘સુખેન’નો સંબંધ ‘ભવતા’ સાથે લઈને એવો અર્થ કરવો કે આનંદરૂપ એવા આપે અમારા ચિત્તનું હરણ કર્યું. જ્યાં સાક્ષાત્ પરમાનંદસ્વરૂપ ભગવાન્ હોય છે ત્યાં કોઈ પણ માણસ પરંપરાથી પ્રાપ્ત થાય એવું પાક્ષિક સાધન સ્વીકારતો નથી. વનને જોવાની વાત તો દૂર રહી, પરંતુ ઘરમાં પણ અમારું ચિત્ત પરોવાતું નથી. આ પ્રમાણે ગોપીજનોની જ્ઞાનશક્તિનું હરણ કરવામાં આવ્યું છે એમ કહેવામાં આવ્યું.

‘અમે-ગોપીજનો-વનમાં કોઈ કામને માટે આવ્યાં છીએ’ એમ પણ માનવાની જરૂર નથી. આ દર્શાવવાને માટે ગોપીજનોની ક્રિયાશક્તિનું પણ હરણ કરવામાં આવ્યું છે એમ શુક્રદેવજી ‘ઉત કરાવપિ’ એ શબ્દોમાં કહે છે. ગોપીજનોના બે હસ્ત ઘરના કામમાં લાગતા નથી, તો પછી વનના કાર્યની વાત તો દૂર જ રહી, કારણ કે ભગવાન્ વિષેની અમારી ઈચ્છાએ બળનું-ક્રિયાશક્તિનું-હરણ કરેલું છે. આપના સ્પર્શથી જ અમારા હાથ સજીવ-ચેતનવાળા-થશે; અને જો આપનો સ્પર્શ નહિ થાય તો અમારા હાથ મરી જશે. આપનો સ્પર્શ અમારા હાથને થએલો નથી તેથી અમારા હાથ નિર્જીવ થઈ ગયા છે એટલે પતિ વિગેરેની સેવા કરવાની શાસ્ત્રની આજ્ઞા પણ કુંઠિત-ભગ્ન-થઈ જાય છે. ખરેખર, કોઈ પણ માણસ હાથ વગરના માણસને કોઈ પણ કામમાં યોજતો નથી.

વળી ‘પાછા વળીને તમે બધાં ઘેર જાવ’ એ હેતુથી આપે જે કહ્યું કે ‘વન

જોવાઈ ગયું’ તો તેના સંબંધમાં અમારે કહેવાનું કે તે-પાછા વળીને ઘેર જવાનું-પણ અસંભવિત છે; કારણ કે અમારા બંનેય પગ આપના પાદમૂલથી-આ સ્થાનથી-એક પણ ડગલું ચાલતા નથી, બીજે જઈ શકતા નથી, ગતિવાળા પગોનું મૂલ આપનાં ચરણો છે; આ ચરણોના પણ મૂલમાં અમારા પગો જ્યારે આવ્યા છે તો પછી બીજે ઠેકાણે તે શી રીતે જઈ શકે? જો આમ ન માનીએ તો મૂલ સુધી પહોંચેલાં વૃક્ષો પણ ચાલવા માંડે. મૂલ શ્લોકમાં ‘અસ્માત્ સ્થાનાત્’-આ સ્થાનમાંથી-એમ કહેવાને બદલે જે ‘તવ પાદમૂલાત્’-આપના ચરણોના મૂલમાંથી-એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે ‘આપ જશો તો અમારા-ગોપીજનોના-પગો બધે જઈ શકશે, પરંતુ આપના વિના તે જઈ શકશે નહિ’ એ પ્રમાણે ગોપીજનો ભગવાનને કહેવા માગે છે. માટે અમે અહિંથી કેવી રીતે જઈએ? ‘ગાડાં વિગેરે સાધનોથી તમને ઘેર પાછાં મોકલવામાં આવશે’ એમ જો ભગવાન ગોપીજનોને કહે તો તેના ઉત્તરમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘અથો’. ‘અથો’ એટલે ‘અથ’-પછીથી-ગાડામાં બેસીને ઘેર જઈને અમે શું કરીએ? જેમ ગાડું વિગેરે ઘેર જવાને માટે સાધન છે તેમ હાથને કામ કરવામાં કોઈ પણ જાતનું સાધન લોકમાં જાણીતું નથી. અમારે કેવલ ઘેર જવામાં જ પ્રયોજન નથી, પરંતુ પિતા વિગેરે સગાંઓની સેવાને માટે અમારે ઘેર જવાનું છે, પણ અમે પિતા વિગેરેની સેવા કરી શકીએ એમ નથી, તેથી અમે ઘેર પાછાં જઈએ તે તદ્દન નકામું જ છે. આ બધો ભાવ ગોપીજનો ‘અથો કિં વા કરવામ’ એ શબ્દો દ્વારા જણાવે છે. ભગવદાવેશને લીધે અહિં ભિન્ન પ્રકારે અમે-ગોપીજનો-હસ્ત વિના પણ ક્રિયા કરી શકીશું, પણ ઘેર જઈને અમે હસ્ત વિના કોઈ પણ ક્રિયા કરી શકીશું નહિ; તેથી ગોપીજનોએ ‘અથો કિં વા’ એ પ્રમાણે કહ્યું.

આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોની ક્રિયાશક્તિ જતી રહી છે ત્યારે તો તેઓ (ઘેર જઈને પણ) બાલકોને સ્તનપાન પણ કરાવી શકશે નહિ. (બાલકો પોતાની મેળે સ્તનપાન કરવા મંડી જશે એમ જો કહેવામાં આવે તો તે પણ શક્ય નથી) કારણ કે ભગવાનને છોડીને ઘેર જવામાં ગોપીજનોની આશા ભાંગી જવાથી તેમના આખા શરીરમાં જ શોષ પડશે અને તેથી બાલકોને દૂધ મળી શકશે નહિ. ૩૪.

ભગવાને ગોપીજનોને જે કહ્યું કે ‘તમે જલદી પાછાં ઘેર જાવ’ તો તેના ઉત્તરમાં ગોપીજનો ‘સિચ્ચાઙ્ગ’ એ પ્રમાણે કહે છે:

સિચ્ચાઙ્ગ નસ્ત્વદધરામૃત-પૂરકેણ હાસાવલોક-કલ-ગીત-જહચ્છયાગ્નિમ્ ।  
નો ચેદ્ વયં વિરહજ્ઞાન્યુપભુક્તદેહા ધ્યાનેન યામ પદ્યોઃ પદ્વીં સખે તે ॥૩૫॥

હે સખા! આપના હાસ્યપૂર્વક અવલોકનથી અને અવ્યક્ત મધુર ગીતથી

ઉત્પન્ન થએલા અમારા કામરૂપી અગ્નિનું આપના અધરામૃતના પૂરથી સિંચન કરો. જો આપ આ પ્રમાણે નહિ કરો તો વિરલથી ઉત્પન્ન થએલા અગ્નિથી અમારો દેહ બળી જશે અને અમે ધ્યાન વડે આપના ચરણની પદવીને પામીશું. ૩૫.

ઘેર પાછા જવામાં આપ જો પ્રતિબંધ કરશો નહિ તો અમે જલ્દીથી જ ઘેર જઈશું. આ ઉપરથી એમ સમજાય છે કે જો ભગવાન હમણાં ગોપીજનોને સાક્ષાત્ સુધાનું દાન ન કરે અથવા તો તેમની સાથે ભાષણ પણ ન કરે તો ગોપીજનોનું મરણ થાય, તો પછી ગોપીજનો ઘેર પાછાં જાય તેમાં તો કાંઈ કહેવાનું રહેતું જ નથી. હે અંગ! આપના અધરામૃતના પૂરથી, અધરામૃતના પ્રવાહના જલથી, અમારા કામરૂપી અગ્નિનું સિંચન કરો; કારણ કે આ કામાગ્નિને આપે જ ઉત્પન્ન કર્યો છે. કામાગ્નિને ઉત્પન્ન કરનારું કારણ સમજાવતાં ગોપીજનો ‘હાસાવલોકકલગીતજ’ એ પ્રમાણે કહે છે. આપનું જે આ હાસ્યપૂર્વક અવલોકન-કટાક્ષ-અને અવ્યક્ત મધુર ગીત તે બેથી ઉત્પન્ન થએલો જે હૃદય-હૃદયમાં વસનારો કામ-તે જ અગ્નિ છે. હાસ્ય કામને ઉત્પન્ન કરનાર છે, અને અવલોકન-કટાક્ષ-કામને કુંકનાર, ઉત્તેજિત કરનાર, છે. ગીત વાયુની માફક કામને વધારનાર છે. તેમાં પણ પાછું કલ-અવ્યક્ત અને મધુર-ગીત. એટલે આ કલગીત ચારેય બાજુથી આવતા પવન જેવું છે અને તેથી કામને વધારે ફેલાવનાર છે. આ પ્રકારનો અગ્નિ પાછો અમારા-ગોપીજનોના-હૃદયમાં ઉત્પન્ન થયો છે, અને હૃદયમાં પહોંચી શકે એવું તો આપનું અધરામૃત જ છે, દેવભોગ્ય અમૃત નહિ. પૂર વસ્તુને ખેંચી જાય છે. ‘પૂર વડે અમારા અગ્નિનું સિંચન કરો’ એમ જ્યારે ગોપીજનો ભગવાનને કહે છે ત્યારે તેમાંથી એવો ધ્વનિ નીકળે છે કે ગોપીજનોનો કામાગ્નિ ઘણો મોટો-તીવ્ર-હોવો જોઈએ. તેથી પૂર વડે સિંચન કરવાની જે વાત કહી છે તે બરોબર છે. ગોપીજનોના અલૌકિક કામાગ્નિ ભગવાનના અલૌકિક અધરામૃતના પૂરથી જ શાંત થાય. ખરેખર! કામ જ્યારે મરી જાય છે ત્યારે સળગે છે, પણ જ્યારે તે જીવતો હોય છે ત્યારે તે અગ્નિસ્વરૂપનો ત્યાગ કરે છે, અન્યથા નહિ. વળી કામ અમૃત વડે જ જીવે છે; તેમાં પણ દેવભોગ્ય અમૃત વડે નહિ. જો દેવભોગ્ય અમૃત વડે કામ જીવતો હોય તો દેવોએ જ તેને જીવતો રાખ્યો હોય. કામ સૃષ્ટિનું કારણ છે એટલે તેને મોક્ષ હોતો નથી. તેથી અતિ ગુપ્ત અધરામૃત વડે જ કામ જીવી શકે છે. તેથી-કામ જીવી શકે તેટલા માટે-સિંચનની જ વાત કહેવામાં આવી. જો આ પ્રમાણે ન હોય તો ગોપીજનોએ ભગવાનને કામાગ્નિને શાંત જ કરવાની પ્રાર્થના કરી હોત. જો કામ જીવશે તો જ અમે-ગોપીજનો-જીવીશું; પણ જો કામ મરી ગયો તો તે પોતે અગ્નિરૂપે સળગીને બીજાઓને-અમને-પણ

બાળશે. આ વાત ગોપીજનો ‘નો ચેત્’ એ શબ્દોમાં કહે છે. જો મંત્રવાદી જાદુગરની માફક આપ સિંચન કરીને અમારા કામાગ્નિને નહિ જીવાડો તો પછી વિરહથી ઉત્પન્ન થએલા અગ્નિથી અમારા દેહો બળી જશે અને ધ્યાન વડે અમે આપના ચરણને માર્ગે જઈશું. અમને પોતાને સ્વતંત્ર માર્ગનું જ્ઞાન નથી એટલે આપ, અમારા સખા, જે માર્ગે જશો તે જ માર્ગે અમે પણ જઈશું. (શ્રીવિદ્ધલનાથજી આ પંકિતનું રહસ્ય સમજાવતાં કહે છે કે જ્યારે ગોપીજનો ભગવાનને એમ કહે છે કે ‘અમે તમારા ચરણને માર્ગે જઈશું’ ત્યારે ગોપીજનોના કહેવાનો ગૂઢ ભાવ એવો છે કે ‘જેમ આપ-ભગવાન-હમણાં અમને દુઃખ આપો છો તેમ અમે પણ આપને દુઃખ આપીશું અને આપને પશ્ચાત્તાપ કરાવીશું.’)

અમારો દેહ જ્યારે નાશ પામશે ત્યારે અંતર્યામીને બીજે સ્થલે જવું પડશે. (જ્યાં અંતર્યામીને જવાનું છે તે જ ભગવાનનો માર્ગ.) વળી અમારે બીજો દેહ ઉત્પન્ન થવાનો નથી, કારણ કે વિરહાગ્નિએ અમારા વાસનાદેહને બાળી નાખ્યો છે. (આ પ્રમાણે અમને બીજો દેહ ઉત્પન્ન થવાનો નથી તેથી આ દેહ નાશ પામશે એટલે અંતર્યામી જે પંખીની માફક ઉડીને આપના ચરણકમલમાં જ આવશે તેની સાથે અમે પણ આપના ચરણકમલમાં આવીશું, કારણ કે અમે અંતર્યામીની છાયારૂપ છીએ. તેથી જ્યાં અંતર્યામી જશે ત્યાં જ અમે પણ જઈશું.)

(ભગવાન કદાચિત્ ગોપીજનોને એમ કહે કે ‘તમારો દેહ બળી જશે તો પણ તમને પરીક્ષિતની માફક ફરીથી જીવતાં કરીશ’, તો તેના ઉત્તરમાં ગોપીજનો નીચે પ્રમાણે કહે છે.) હરે-મહાદેવે-પણ જે કામને બાળ્યો છે તે ફરીથી ઉત્પન્ન થતો નથી. (મહાદેવે બાળેલો કામ અગ્નિરૂપે પણ રહે છે, તે ભસ્તીભૂત થતો નથી; અને દેવોના અમૃતથી તે કામ જીવે પણ ખરો.) ‘હર’ શબ્દમાં જે ‘હ’ અને ‘ર’ એ બે અક્ષરો છે તેને ઉલટા કરવામાં આવે તો ‘રહ’ શબ્દ સિદ્ધ થાય છે. તેમાં પણ વિશિષ્ટ પ્રકારનો ‘રહ’ તે ‘વિરહ’ કહેવાય છે. (વિરહાગ્નિથી બળેલો પદાર્થ તો એક જ ક્ષણમાં ભસ્મ થઈ જાય છે, અને તેને ફરીથી જીવવાની આશા પણ પણ હોતી નથી. આ પ્રમાણે કામને બાળનાર જે ‘હર’ તેના અક્ષરોને ઉલટાવવાથી ‘રહ’ શબ્દ બને છે અને આ ‘રહ’નો ધર્મ ‘હર’ના ધર્મ કરતાં વિપરીત જ છે. ગોપીજનોના કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે મહાદેવે બાળી નાખેલો કામ હજુ પણ જીવતો નથી, તો પછી ‘વિરહ’થી બળેલાં અમે-ગોપીજનો-કેવી રીતે ફરી જીવી શકીશું? ‘રહ’ શબ્દનો અર્થ ‘પ્રભુનું સ્વરૂપ’ એ પ્રમાણે કરવો. પ્રભુનું સ્વરૂપ જાતે જ સમર્થ છે, તેમાં પણ કરોડો કામદેવોના સૌંદર્યથી અધિક સૌંદર્ય છે, અને વિભાવ, અનુભાવ વિગેરે સામગ્રી છે,

એટલે આ બધા ગુણોથી વિશિષ્ટ થએલું પ્રભુનું સ્વરૂપ-‘વિરલ’-શું શું ન કરે?)

અથવા તો ‘વિરલ’ શબ્દનો અર્થ ‘એકાંતનો અભાવ’ એ પ્રમાણે કરવો. (રલ=એકાંત; વિરલ=એકાંતનો અભાવ એ પ્રમાણે લોકપ્રસિદ્ધ અર્થ છે.) આ પ્રમાણે આપની સાથે અમને એકાંત મળતું નથી એટલે ‘વિરલ’ છે. (પ્રભુ રસરૂપ છે; શૃંગારરસમાં સંયોગ અને વિપ્રયોગ એ બે ભેદ છે. એટલે પ્રભુનું સ્વરૂપ જ વિરલરૂપ છે એ બરોબર છે.)

મૂલ શ્લોકના બીજા પાદમાં જણાવેલા કામાગ્નિથી પણ અમારો દેહ બળી જાય એ સંભવિત છે. પણ જેમ અગ્નિના સંબંધથી સૂકું લાકડું બળી જાય છે તેમ તે અગ્નિ અમારા સર્વ અંગોમાંના સૂક્ષ્મ અવયવોમાં પણ પ્રવેશ કરીને પાછો સળગતો નથી એટલે તે અમને ભસ્મીભૂત કરવાને સમર્થ નથી. જેમ સૂકા લાકડામાંથી ભીનાશરૂપી ઉપાધિ તદ્દન જતી રહી છે અને તેથી તે લાકડું સારી રીતે સળગે છે, તેમ ભગવાનના સ્વરૂપથી અન્ય પદાર્થમાં સ્નેહ રાખવા રૂપી ઉપાધિ અમારામાંથી તદ્દન જતી રહી છે તેથી આપના ચરણમાં અમે જરૂરથી આવીશું જ. માટે અમારે ઘેર પાછા જવાની વાત તો દૂર રહી, પરંતુ હમણાં જ વિરલાગ્નિને લીધે અમારું મરણ આવી પહોંચ્યું છે, માટે આપ જલદીથી આપના અધરામૃતના પૂરનું સિંચન કરીને ઉપાય કરો. ૩૫.

વળી ‘તમે મારા સ્નેહને લીધે અહિં આવ્યાં છો’ એ પ્રમાણે આપે-ભગવાને-જે અમારા સ્નેહની સ્તુતિ કરી તેના સંબંધમાં આપ યથાર્થ હકીકત સાંભળો એમ ‘યહિં’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં ગોપીજનો ભગવાનને કહે છે:

યર્હ્યમ્બુજાક્ષ તવ પાદતલં રમાયા દત્તક્ષણં ક્વચિદ્ અરણ્ય-જન-પ્રિયસ્ય ।  
અસ્પ્રાક્ષમ તત્પ્રભૃતિ નાન્યસમક્ષમઞ્ઞઃ સ્થાતું ત્વયાભિરમિતા બત પારયામઃ ॥૩૬।

હે કમલનેત્ર પ્રભો! આપ વનમાં રહેનારા મનુષ્યો ઉપર સ્નેહ રાખો છો; આપના ચરણતલની સેવા લક્ષ્મીજીને કોઈક વખત જ મળે છે. એવા પ્રકારના આપના ચરણતલનો અમે જ્યારથી સ્પર્શ કર્યો છે અને આપનાથી અમને આનંદ મળ્યો છે ત્યારથી અમે બીજાની સમક્ષ ઉભા રહી શકતાં નથી. ૩૬.

હે કમલના જેવાં નેત્રવાળા ભગવાન્!-ભગવાનનાં નેત્રો કમલના જેવાં છે તેથી કેવલ દષ્ટિથી જ તે ભક્તોનો તાપ નાશ કરી શકે છે. જે ક્ષણથી અમે તમારા ચરણતલનો સ્પર્શ કર્યો છે તે ક્ષણથી અમે બીજાની સમક્ષ બરોબર ઉભા રહી શકતાં નથી. ભગવાનનાં ચરણનો સાક્ષાત્ સ્પર્શ ઘણો દુર્લભ છે. જ્યાં ચરણની આકૃતિ પડી હોય તેને પાદતલ કહેવામાં આવે છે. લક્ષ્મીજી પણ આ પાદતલ વડે જ જીવે છે,

અને ‘જેની ઈચ્છા રાખીને લક્ષ્મીજી તપશ્ચર્યા કરે છે એવો આપના ચરણની રેણુને સ્પર્શ કરવાનો અધિકાર આ કાલીય નાગને મળ્યો...’ એ શ્લોકમાં નાગપત્નીઓએ પણ તે જ પ્રમાણે કહ્યું છે. તેથી આપનું ચરણતલ ફલરૂપ છે. ભગવાનના આ ચરણતલે જ લક્ષ્મીજીને ક્ષણ-સુખ-આપ્યું છે. સુખ હૃદયમાં જ મળે છે તેથી કોઈક વખત હૃદય ઉપર આ ચરણતલ આવે છે. જ્યારે ભગવાન ભૂમિ ઉપર ઉભા રહે છે ત્યારે અમને તો ફક્ત તેમના ચરણતલનો સ્પર્શ જ મળે છે, પરંતુ જે પ્રમાણે લક્ષ્મીજીના હૃદય ઉપર ભગવાનનું ચરણતલ આવે છે તે પ્રમાણે અમારા હૃદય ઉપર ચરણતલ આવતું નથી. અમે વિચાર કર્યો કે જ્યારે લક્ષ્મીજીએ તપશ્ચર્યા કરીને ચંચલતા દૂર કરી અને આ ચરણતલ પ્રાપ્ત કર્યું ત્યારે અમારે પણ (ગોપોને વિષે આસક્તિ રાખવાથી ઉત્પન્ન થતી) ચંચલતા દૂર કરીને ભગવાનના ચરણતલમાં નિષ્ઠા રાખીને રહેવું જોઈએ. વળી, અરણ્યમાં રહેનારાં માણસો પ્રિય છે જેમને એવા ભગવાન. ભગવાનને અરણ્યવાસી માણસો પ્રિય છે તેથી પણ અમારે બીજા બધા પદાર્થોનો સંગ છોડી દઈને ભગવાનના પાદતલ આગળ જ રહેવું જોઈએ; કારણ કે બીજા બધા પદાર્થોમાં આસક્તિ ન રાખવાથી ભગવાન પ્રસન્ન થાય છે. અરણ્ય સાત્ત્વિક અને વૈષ્ણવ છે (તેથી ભગવાનને અરણ્યવાસી મનુષ્યો પ્રિય છે.) (અથવા તો મૂલ શ્લોકમાં જે ‘અરણ્યજનપદ’ છે તેનાથી પુલિંદીઓનું સ્મરણ કરાવવામાં આવે છે, કારણ કે ભગવાનના ચરણતલના સંબંધવાળું જે કુંકુમ તેના સંબંધથી જ તે પુલિંદીઓ પણ ભગવાનને પ્રિય થઈ પડ્યાં. તેથી પાદતલ સ્વભાવિક રીતે પ્રિયત્વરૂપી ફલ આપનારું છે અને પ્રભુની પ્રીતિ સાધનારું છે, એટલે અમે પણ પુલિંદીઓની માફક અમારા આત્મા વિષે ભગવાનની પ્રિયાનો ભાવ સમજીએ છીએ એમ તાત્પર્ય છે. અર્થાત્ ભગવાનના ચરણતલનો સ્પર્શ થવાથી અમે અમારી જાતને કૃતાર્થ માનીએ છીએ. આ વાત બહુ સ્પષ્ટ શબ્દોમાં કહી શકાય એવી નથી તેથી પરોક્ષ પ્રકારે ‘અરણ્યજનપ્રિય’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.)

અમે પણ વનમાં આવ્યાં છીએ તેથી તમારી પ્રાપ્તિ કરવાને માટે બીજાની સમક્ષ અમે ઉભાં રહી શકીશું નહિ. જે માણસ આપને સર્વથા શરણે આવ્યો નથી તેની સમક્ષ અમે ઉભાં રહી શકીશું નહિ, કારણ કે અમારામાં ભગવદ્ભાવનો પ્રવેશ થએલો છે. જે એક પદાર્થ બીજા પદાર્થનો નાશ કરનારો છે તે પદાર્થની આગળ પેલો બીજો પદાર્થ, તે ભાવની પ્રાપ્તિ થતાં-આત્માને દેહત્વની પ્રાપ્તિ અને ભગવદીયને ભગવત્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં-, ઉભો રહી શકતો નથી; જેમ વાઘના આગળ દેહાભિમાની પુરુષ ઉભો રહી શકતો નથી તેમ ભગવાનને શરણે નહિ ગએલા પુરુષની સમક્ષ



ભગવદીય મનુષ્ય ઉભો રહી શકતો નથી, કારણ કે જે ભગવાનથી જૂદો છે-જે ભગવાનને શરણે ગએલો નથી-તે ભગવદ્ભાવનો નાશ કરે છે. ભક્તિમાર્ગમાં જ્યાં આ પ્રકારે સૂક્ષ્મ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે ત્યાં બીજાના-ગોપલોકના-સ્થાને જવું અને તેની દેવતા તરીકે ભાવના કરવી એ વાત તો દૂર જ રહે છે. માટે આપે ત્રેવીસમા શ્લોકમાં સ્નેહનિમિત્ત આગમનની જ જે સ્તુતિ કરી છે તે નકામી છે. અમે તો લક્ષ્મીજીની માફક અનન્યભાવવાળાં જ છીએ. વળી, જેમ સર્વ પદાર્થનો ત્યાગ કરીને લક્ષ્મીજી આપને શરણે જ્યારે આવ્યાં છે ત્યારે આપે તેમની સાથે સર્વ પ્રકારે રમણ કર્યું છે. તેવી જ રીતે અમે પણ બધાંનો ત્યાગ કરેલો છે અને તેથી આપે અમારી સાથે સર્વ પ્રકારે રમણ કર્યું છે. મૂલ શ્લોકમાં જે 'ત્વયાભિરમિતા' પદ છે તે એમ દર્શાવે છે કે અમને હંમેશાં જ સ્વપ્નમાં આપનો સંબંધ થાય છે, નહિ તો અમે અત્યાર સુધી જીવી શક્યાં જ ન હોત. આ પ્રમાણે આપે અમારો પહેલાં ભોગ કરેલો છે માટે હવે અમને બીજે સ્થલે આપ મોકલો તે યોગ્ય નથી. ૩૬.

લક્ષ્મીજીનો ભગવાનની સાથે દૈવગતિથી સંબંધ થએલો છે અને તે પહેલી જ વારનો છે, જ્યારે તમારો (ગોપીજનોનો) સંબંધ પ્રથમ બીજે જ ઠેકાણે હતો, તેથી લક્ષ્મીજી અને તમારી વચ્ચે સરખાપણું નથી. આ પ્રમાણે જો ભગવાન શ્રીગોપીજનોને કહે તો તેનો ઉત્તર ગોપીજનો નીચેના શ્લોકમાં આપે છે :

શ્રીર્યત્પદામ્બુજ-રજશ્ચક્રમે તુલસ્યા લબ્ધ્વાપિ વક્ષસિ પદં કિલ ભૃત્ય-જુષ્ટમ્ ।  
યસ્યાઃ સ્વવીક્ષણ-કૃતેઽન્ય-સુર-પ્રયાસઃ તદ્વદ્ વયં ચ તવ પાદરજઃ પ્રપન્નાઃ ॥૩૭॥

જે લક્ષ્મીજીના પોતાના ઉપર કટાક્ષને માટે બીજા દેવો પ્રયાસ કરી રહ્યા છે તે લક્ષ્મીજીએ આપના વક્ષઃસ્થલમાં પદ પ્રાપ્ત કરીને પણ જે ભક્તોથી સેવાએલી આપના ચરણકમલના રજની તુલસીની સાથે સ્પૃહા કરી છે, તેમ અમે પણ તે જ ચરણની રજને પ્રાપ્ત થયાં છીએ. ૩૭.

લક્ષ્મીજી પણ દૈવગતિથી આપનો સંબંધ મેળવી શક્યાં નથી, પરંતુ આપના ચરણારવિંદને માટે તેમણે મોટું તપ કરેલું છે. લક્ષ્મીજીએ આપની સાથે સ્ત્રી તરીકે સંબંધ બાંધ્યો નથી પણ ભક્ત તરીકે. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો આપના વક્ષઃસ્થલ ઉપર સ્વતંત્ર સ્થાન મેળવ્યા પછી તુલસીની સાથે સપત્નીપણાનો-શોક્યનો-પણ સંબંધ સ્વીકારીને આપના ચરણરજની લક્ષ્મીજી કામના ન કરે. તુલસીનો ભગવાનના ચરણારવિંદની સાથેનો સંબંધ પ્રસિદ્ધ છે અને તેથી ભગવાન ની ચરણરજ તુલસીની પાસે હોવાથી તુલસીની છે એમ સિદ્ધ થાય છે, અને લક્ષ્મીજી ચરણરૂપી ભક્તિનાં ભક્ત છે. આ વાતનું પ્રતિપાદન ૧ | ૧૯ | ૬૬ શ્લોકમાં

કરવામાં આવેલું છે. (અથવા તો બીજે પ્રકારે પણ અન્વય થઈ શકે: ચરણરજ તુલસીની છે, કારણ કે તે ભક્તિરૂપ ચરણની ભક્તા છે.)

ગોપીજનો ભગવાનના ચરણની રજનું માહાત્મ્ય દર્શાવતાં કહે છે કે ‘ભૃત્યજુષ્ટમ્’-સેવકોથી સેવાએલી. કારણ કે ભૃત્યોનું-સેવકોનું-શરીર ભગવાનના ચરણકમલની રજથી જ ઉત્પન્ન થએલું છે. ‘કિલ’ એટલે પ્રસિદ્ધિ; અર્થાત્ આ વાત પ્રસિદ્ધ છે. બધાય ભક્તોના દેહ આપના ચરણની રજથી જ ઉત્પન્ન થએલા છે. તેથી તુલસી આપની ચરણરજમાં ભક્તિરૂપે રહેલી છે. જેમને આપના ચરણની રજ પ્રાપ્ત થએલી છે તે આપની સેવા જ કરે છે. તેથી લક્ષ્મીજીએ ભગવાનના વક્ત્ર:સ્થલમાં સ્થાન મેળવ્યું હતું છતાં પણ ‘મને કોઈ અભક્ત સ્પર્શ કરશે’ એ વિચારથી ભગવાનની ચરણરજની કામના કરી. જ્યારે ભગવાનના ચરણની રજ પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે કોઈ અભક્તના સ્પર્શની શંકા પર હોતી નથી.

લક્ષ્મીજીને વળી આટલો બધો ભય શો એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેના સમાધાનમાં ગોપીજનો કહે છે કે લક્ષ્મીજી પોતાના ઉપર કટાક્ષ કરે તેટલા સારુ અન્ય દેવો પ્રયાસ કરે છે. બીજા બધાય બ્રહ્માદિ દેવો ‘લક્ષ્મીજી અમારા ઉપર નજર નાખે’ એ હેતુથી તપ કરે છે, કારણ કે લક્ષ્મીજીના કટાક્ષ વિના તેમનો કોઈ પણ પુરુષાર્થ સિદ્ધ થતો નથી. ઘણા લોકોએ લક્ષ્મીજીની પ્રાર્થના કરવા માંડી એટલે લક્ષ્મીજીને બીજાના સ્પર્શની બીક લાગી. લક્ષ્મીજીએ વિચાર્યું કે કોઈ ઘણું જ તપ કરે અને પછીથી તે, કોણ જાણે, શું કરે. આ વિચારથી તેમને ભય લાગ્યો. પરંતુ ભગવાનની ચરણરજની ઈચ્છા રાખવામાં આવે તો પછી અન્યના સ્પર્શની શંકા રહેતી નથી. વળી જ્યારે ચરણરજની પ્રાપ્તિ થાય ત્યારે તો અન્યના સ્પર્શનો સંદેહ પણ સંભવતો નથી. આ પ્રમાણે ભગવાનની ચરણરજ પ્રાપ્ત થતાં લક્ષ્મીજી બીજાની પાસે જતાં નથી એમ વર્ણન કરીને અમે પોતે પણ તેવાં જ છીએ એમ ગોપીજનો ‘તદ્વચ્ચં ચ’ શબ્દોમાં કહે છે. અમારી (ગોપીજનોની) પણ ઘણા ગોપલોકો પ્રાર્થના કરે છે-ગોપીજનો શ્રુતિરૂપા છે એમ માનીએ તો તે શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો ઉપર જુદા જુદા મંત્રોના અભિમાની દેવો પોતપોતાનું સ્વામિત્વ માને છે-તેમના ભયને લીધે જ પહેલાં અમે આપની ચરણરજનો સ્પર્શ કર્યો તેથી અમારો દેહ પણ આપની ચરણરજમાંથી ઉત્પન્ન થયો એટલે સર્વ રીતે અમે આપના ચરણની રજને પ્રાપ્ત થયાં છીએ. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનો અર્થ એવો છે કે જે ગોપીજનો હમણાં અહિં આવ્યાં નથી, અને જે મહિષીઓ છે તેમનાં શરીર પણ આવાં-આપની ચરણરજથી ઉત્પન્ન થએલાં-જ છે. તેથી અમારે માટે જ આપ પધાર્યા છો. માટે આપના સ્વરૂપને

હવે આપ છુપાવો નહિ, તેમ આપ ગુપ્ત પણ રહી શકશો નહિ. તેથી અમને ઘેર જવાનો આગ્રહ કરશો નહિ એવું તાત્પર્ય છે. ૩૭.

આ પ્રમાણે ‘અમારા દેહનો ભોગ એકલા ભગવાન જ કરી શકે એમ છે’ એમ પ્રતિપાદન કરીને શ્રીગોપીજન ‘તત્ત્વ:’ એ શ્લોકમાં ભગવાનની પ્રાર્થના કરે છે : તત્ત્વ: પ્રસીદ વૃજિનાદન તેંદ્રિમૂલં પ્રાપ્તા વિસૃજ્ય વસતીસ્ત્વદ્દુપાસનાથા: | ત્વત્સુન્દરસ્મિતનિરીક્ષણતીવ્રતકામ-તપ્તાત્મનાં પુરુષભૂષણ દેહિ દાસ્યમ્ ||૩૮||

હે પાપનો નાશ કરનાર પ્રભો! આપ અમારા ઉપર પ્રસન્ન થાવ. ગૃહસ્થાશ્રમ નો ત્યાગ કરીને આપની સેવા કરવાની આશાથી અમે આપના ચરણના મૂલને પ્રાપ્ત થયાં છીએ. હે પુરુષોના ભૂષણ! આપના સુંદર મંદહાસ્યવાળા નેત્રના કટાક્ષથી ઉત્પન્ન થએલા તીવ્ર કામથી અમારાં અંત:કરણ તપી ગયાં છે, માટે આપ અમને દાસ્યનું દાન કરો. ૩૮.

પોતાના પતિની સેવા કરવાની વિધિનું ખંડન પૂર્વ શ્લોકમાં જ કરવામાં આવ્યું છે. એ પતિઓનો ત્યાગ ન કરવો એ પક્ષનું સમર્થ ખંડન પણ તે જ શ્લોકમાં કરવામાં આવ્યું છે. આ શ્લોકમાં પણ શ્રીગોપીજન પોતાના પતિનો ત્યાગ ન કરવો એ પક્ષનું ખંડન કરવાની પ્રાર્થના કરે છે. ભગવાનની કૃપા ન હોય તો તેવા લૌકિક પતિની સાથે જ સંબંધ થાય, તેથી ભગવત્કૃપા જ સર્વ પ્રમાણો કરતાં અધિક છે. ‘તત્’-ભગવત્કૃપા સર્વથી અધિક છે તેથી-આપ અમારા ઉપર પ્રસન્ન થાવ, કારણ કે આપ પ્રસન્ન થશો તો બધું સિદ્ધ થઈ જશે.

ભગવત્કૃપાને પ્રતિકૂલ થઈ પડે એવું તમારું અદષ્ટ તમને દુ:ખ આપનારું છે, તેથી હું તમારા ઉપર કૃપા કેવી રીતે કરી શકું? એમ જો ભગવાન ગોપીજનને કહે તો ગોપીજન ઉત્તર આપતાં કહે છે કે ‘વૃજિનાદન’-પાપનો નાશ કરનાર. ‘વૃજિન’ એટલે દુ:ખજનક પાપ. આપ સ્વભાવથી જ કોઈ પણ પ્રકારના સંબંધથી-કામાદિભાવના સંબંધથી પણ-સર્વના પાપનો નાશ કરો છો.

ભગવાન ગોપીજનો ઉપર કૃપા કરે તેનું કારણ દર્શાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘તેંદ્રિમૂલં પ્રાપ્તા:’-અમે આપના ચરણના મૂલમાં પ્રાપ્ત થયાં છીએ. જે માણસ ભગવાનના ચરણતલને પ્રાપ્ત કરે છે તે ભગવત્કૃપા પણ પ્રાપ્ત કરે છે. પશુ, પુત્ર વિગેરે મેળવવામાં ભગવત્કૃપા અમારે જોઈતી નથી એમ જણાવવાને ગોપીજનો પોતાનો અધિકાર-યોગ્યતા-બીજાઓનાં કરતાં જુદા પ્રકારનો છે એમ ‘વિસૃજ્ય વસતી:’-ગૃહસ્થાશ્રમનો ત્યાગ કરીને-એ શબ્દોમાં કહે છે. અમે ગૃહસ્થાશ્રમનો ત્યાગ કર્યો છે, નહિ કે ફક્ત ધરનો, એ ભાવ દર્શાવવાને માટે ગોપીજનોએ ‘વસતી:’

એમ બહુવચનનો પ્રયોગ કર્યો છે. ગૃહસ્થાશ્રમનો પરિત્યાગ કરવામાં પણ કારણ જણાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘ત્વદ્વપાસનાશાઃ’-આપની સેવા કરવાની આશાવાળાં અમે છીએ. અમે આપની સેવા કરીશું એ આશાથી જ પહેલેથી પ્રાપ્ત થએલા ગૃહ વિગેરે પદાર્થોનો અમે ત્યાગ કરેલો છે. તેમાં પણ આપના ચરણકમલના મૂલમાં પ્રાપ્ત થએલાંઓને ફરીથી ઘરનો સંબંધ કેવી રીતે થઈ શકે? એમાં વળી શું જ કહેવું? તેથી ગોપીજનો દાન કરવા યોગ્ય કૃપાની ભગવાન્ પાસે પ્રાર્થના કરે છે કે ‘ત્વત્સુન્દર’-આપનું સુંદર. આપનું જે સુંદર સ્મિત-મોહક છતાં પણ આનંદજનક-તે આપના સંબંધથી પરમાનંદરૂપ છે. આવા પ્રકારના સ્મિતપૂર્વક આપનું જે નિરીક્ષણ-નેત્રકટાક્ષ-તેનાથી ઉત્પન્ન થએલો જે તીવ્ર કામ, તેનાથી તપ્ત થએલું છે અંતઃકરણ જેમનું એવાં અમે-ગોપીજનો-હે પુરુષોના ભૂષણરૂપ! અનંતકોટિ કામદેવના સૌંદર્યરૂપ! આપ અમને-ગોપીજનોને-દાસ્યનું-જે જાતે જ પુરુષાર્થરૂપ જ છે તેનું-દાન કરો.

(અધિકારી જનો અનેક પ્રકારના હોવાથી દાસ્ય પણ અનેક પ્રકારનું હોય છે; તેથી ‘અમારાં અંતઃકરણ કામથી તપ્ત થએલાં છે’ એમ ગોપીજનોના કહેવાથી જે દાસ્યનું દાન કરવાનું છે તે દાસ્ય કેવા પ્રકારનું હોવું જોઈએ તેનું સૂચન કરવામાં આવે છે. અર્થાત્ આપના સુંદર સ્મિતવાળા કટાક્ષથી ઉત્પન્ન થએલા તીવ્ર કામથી અમારાં શરીર તપ્ત થએલાં છે અને તેથી તે તાપને જે પ્રકારનું દાસ્ય દૂર કરી શકે તે પ્રકારનું દાસ્ય આપ અમને આપો. વળી પ્રભુને જે વસ્તુ જોઈતી હોય તે વસ્તુ સમર્પવાથી દાસ્ય સિદ્ધ થાય છે, બીજે પ્રકારે નહિ. આ પ્રમાણે હોવાથી જેમ ઉપર જણાવેલા તાપને લીધે અમારે આપની જરૂર છે તેમ આપને અમારી જરૂર જણાય તો આપે પોતે જ પ્રયત્ન કરીને અમારો ઉપભોગ કરવો યોગ્ય છે એમ અર્થ નીકળે છે. જો આ પ્રમાણે ન માનીએ તો દાસ્ય જીવની કૃતિથી સિદ્ધ થતાં તેનું દાન આપવાનું જે કથન છે તે અયોગ્ય થઈ જાય. તેથી કરીને ‘પુરુષભૂષણ’ એ સંબોધનનો અર્થ એ કે પુરુષ થઈને અમને આપ ભૂષણરૂપ છો. ભૂષણ, ખરેખર, કંઠ વિગેરે અંગોમાં હોય છે. આપ પણ ભૂષણરૂપ થઈને અમને દાસ્યનું દાન કરો એવો અર્થ વાક્યની એકવાક્યતા કરવાથી પ્રાપ્ત થાય છે. ભગવાનને પોતાના અંગે અંગના ભૂષણરૂપ કહેવાથી જ દાસ્ય સ્વતંત્ર પુરુષાર્થ પણ છે એમ કહેવામાં આવ્યું. મણિથી જડેલી વસ્તુ ભૂષણરૂપ થવાને માટે વચમાં લાખવાળી પણ હોય છે. તેથી મહાન્ પુરુષ પણ ભૂષણ ધારણ કરવાને માટે લાખ પણ, તુચ્છ છે છતાં પણ, ધારણ કરે છે, તેવી રીતે વચમાં તુચ્છ કામનો પણ ઉપયોગ છે (અર્થાત્ કંઠ વિગેરે અંગોમાં આપનું ધારણ

કરવાને માટે કામનું પણ ધારણ કરીએ છીએ) એટલે અમે આપની પાસે જે દાસ્યનું વરણ કરીએ છીએ તે કામની ઉપાધિવાળું નથી, પરંતુ તેનાથી વિપરીત-નિરુપધિ શુદ્ધ-છે એવું તાત્પર્ય છે.)

તેથી અમે આપના દાસ્યની જ અપેક્ષાવાળાં છીએ, વિવાહની ઈચ્છાવાળાં નથી. તેથી અમને દાસ્યનું દાન કરવામાં લોકના વ્યવહારને અનુસરીને આપે ઉપનયન, સમાવર્તન વિગેરે સંસ્કારોની અપેક્ષા પણ કરવા જેવી નથી એમ ભાવ છે. ૩૮.

ભગવાન ગોપીજનોને કહે છે કે 'તમે બધાય મારું દાસ્ય જ કેમ પસંદ કરો છો? સાલોક્ય સામીપ્ય, સાયુજ્ય વિગેરે બીજાં પણ ફલ મળી શકે છે, તો તેમાંનું ગમે તે એક ફલ તો પસંદ કરો.'

આનો ઉત્તર ગોપીજનો 'વીક્ષ્યાલકાવૃતમ્' શ્લોકમાં આપે છે:

વીક્ષ્યાલકાવૃતમુખં તવ કુણ્ડલશ્ચિ ગણ્ડસ્થલાધરસુઘં હસિતાવલોકમ્ ।  
દત્તાભયં ચ ભુજદણ્ડયુગં વિલોક્ય વક્ષઃ શ્ચિૈક્રમણં ચ ભવામ દાસ્યઃ ॥૩૯॥

કેશની લટકોથી ઢંકાએલું, કુંડલોથી શોભતું, જેમાં ગંડસ્થલને વિષે રસ અને અધરમાં સુધા છે, અને હાસ્યસહિત અવલોકનવાળું આપનું જે શ્રીમુખ, અભયનું દાન કરનારા આપના બંને ભુજદંડ તથા લક્ષ્મીજીને મુખ્ય રમણ કરવા યોગ્ય આપના વક્ષઃસ્થલને જોઈને અમે આપનાં દાસી થયાં છીએ. ૩૯.

આ લોકમાં અને પરલોકમાં જેમને કીર્તિ વિગેરેની અપેક્ષા છે એવી સ્ત્રીઓએ પોતાના પતિનો ત્યાગ કરવો જોઈએ નહિ એમ ભગવાને પચીસમા શ્લોકમાં જે કહ્યું હતું તેનો ઉત્તર ગોપીજનો આ શ્લોકમાં આપે છે. લોકમાં ખરેખર ત્રણ પુરુષાર્થો છે: એક તો ચાર પ્રકારનો મોક્ષ, બીજો ઈન્દ્ર વિગેરેનું ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરીને સ્વર્ગમાં રહેવું તે અને ત્રીજો પુરુષાર્થ આ લોકમાં પુષ્કળ લક્ષ્મી. આ ત્રણ પ્રકારના પુરુષાર્થ ભગવાનનું દાસ્ય સ્વીકારવામાં ઉત્તમમાં ઉત્તમ પ્રકારે મળે છે એ સિદ્ધાંતનું પ્રતિપાદન ગોપીજનો આ શ્લોકમાં કરે છે.

પ્રથમ તો સાહ્ય, સાલોક્ય, સામીપ્ય અને સાયુજ્ય એ ચાર મોક્ષના ભેદ છે. તે ભગવાનના દાસ્ય આગળ નકામા છે, કારણ કે ભગવાનના મુખારવિંદનું દર્શન કરવાથી આ ચાર પ્રકારના મોક્ષની ઈચ્છાઓ જતી રહે છે. આ પ્રમાણે ભક્તિરૂપ ભગવાનનું મુખારવિંદ ચતુર્વિધ મોક્ષના કરતાં ઉત્તમ છે એમ નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. ભગવાનના જે અલક-કેશની લટકો-છે તે સાહ્ય મોક્ષ જાણે પ્રાપ્ત કર્યો હોય એવા ભમરાઓ છે. આવી ઘણીય કેશની લટકો અહિં મુખ ઉપર વીંટળાઈને

સ્થિતિ કરે છે. (ભમરાઓના જેવી દેખાતી કેશની લટકોથી સારૂપ્ય મુક્તિ જેમણે મેળવી હોય એવા ભક્તોનું સૂચન થાય છે.) આ પ્રમાણે જ્યારે સારૂપ્ય પ્રાપ્ત કર્યા પછી પણ જો કેશ-ભમરાઓ-મુખરૂપ ભક્તિનું અંગ બને છે, તો પછી તેવા સારૂપ્યનું શું પ્રયોજન છે? વળી, ભગવાનનું મુખ કુંડલશ્રી છે, એટલે કે કુંડલોને લીધે શોભા છે જેની એવું મુખ, અથવા તો જેને લીધે કુંડલોની શોભા છે એવું મુખ. સામીપ્ય નામના મોક્ષમાં ભગવાનની સમીપ સ્થિતિ હોય છે. સામીપ્યમોક્ષમાં ભગવાનની સમીપ બહુબહુ જવાય તો પણ કુંડલોના કરતાં વધારે પાસે તો જઈ શકાશે જ નહિ. ભગવાનનાં બે કુંડલો સાંખ્ય અને યોગ છે, ભગવાનનાં પ્રમાણરૂપ કર્ણમાંથી લટકેલાં છે (અર્થાત્ ભગવાનના કર્ણ શબ્દરૂપ હોવાથી પ્રમાણ છે. ભગવત્પ્રમાણ જે વેદ છે તેનો વિરોધ ન કરનારાં સાંખ્ય અને યોગ શાસ્ત્રો ભગવાનનાં કુંડલ છે), અને તેમની ગતિ ભગવાનને અધીન છે; આમ હોવા છતાં પણ જ્યારે આ બે કુંડલો ભગવાનના ભક્તિરૂપ મુખને જોઈ રહ્યાં છે તો પછી એવા સામીપ્ય મોક્ષનું શું પ્રયોજન છે? વળી ભગવાનનું મુખ ‘ગણ્ડસ્થલાધરસુધમ્’ છે. બે ગંડ-ગાલ-વિશાળ સ્થલરૂપ છે જેમાં એવું મુખ. ગંડને સ્થલ કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ કે સ્થલમાં ઉભા રહીને જ રસનું પાન કરી શકાય છે. વળી અધરમાં-ઓઠમાં-અમૃત છે જેમાં એવા પ્રકારનું મુખ. આ પ્રમાણે ‘ગણ્ડસ્થલાધરસુધમ્’નો અર્થ એવો થાય છે કે ગાલ ઉપર ઉભા રહીને અધરામૃતનું પાન દાસ્યમાં થઈ શકે છે. સાલોક્ય મુક્તિની અંદર સ્થલ અક્ષર બ્રહ્મ છે તેથી તેમાં ફક્ત આનંદનો અંશ અને અમૃતપાન જ મળે છે, નહિ કે પરમાનંદ અને અધરસુધાપાન. અક્ષરબ્રહ્મની સાથે સરખાવતાં પણ ગંડસ્થલને વિષે યુંબનને માટે સ્થિતિ કરવી તે ઉત્તમ છે. અર્થાત્ ભગવાનના અધરનો રસ અક્ષરબ્રહ્મના રસ કરતાં ઉત્તમ છે એમ ગોપીજનોનું કહેવું છે. કુંડલની શોભાવાળું ગંડસ્થલ એ પ્રમાણે જો અર્થ કરવામાં આવે તો તેમાં પણ કુંડલ ગંડનાં અંગ બનવાથી સામીપ્યમુક્તિ ભક્તિનું અંગ બને છે અને તેથી ગંડસ્થલરૂપી ભક્તિને વિષે પરસ્પર આપનાં ગુણગાન કરવારૂપ શાસ્ત્રીય રસનું અધિક નિરૂપણ થાય છે. અક્ષરબ્રહ્મ કરતાં અધરરસનું આધિક્ય તો સ્પષ્ટ જ છે. વળી ભગવાનનું મુખ ‘હસિતાવલોકમ્’ છે. હાસ્યપૂર્વક અવલોક છે જેમાં એવું મુખ. બ્રહ્માનંદમાં પ્રવેશ પામેલાઓ-સાયુજ્યમુક્તિ જેમણે પ્રાપ્ત કરી છે તેવા જીવો-ભક્તિનો વિલાસ ભોગવી શકતા નથી. હાસ્ય ખરેખર બધાય રસોને ખીલવનાર છે. અવલોકરૂપી જ્ઞાન પણ પ્રકટ થઈ ગયું છે. જેમ જલમાં ડૂબેલો માણસ જલરૂપ થઈ જવાથી જલપાનનો અનુભવ કરી શકતો નથી તેમ બ્રહ્માનંદમાં પ્રવેશ પામેલા જીવોને

આનંદ અને જ્ઞાન એ બંનેય અવ્યક્ત-અનુભવ કરી શકાય નહિ એવાં-હોય છે, કારણ કે તેઓ બ્રહ્મરૂપ થઈ જવાથી આનંદ અને જ્ઞાન આત્મારૂપે જ હોય છે અને તેથી કોઈ પણ જાતનો ભેદ ન રહેવાથી આનંદ અને જ્ઞાન અવ્યક્ત રહે છે. ખરેખર! અનુભવનો રસ તો ભિન્ન-બુદ્ધિ-રહેવામાં જ મળી શકે છે. આ પ્રમાણે અમે ભક્તિરૂપ આપના મુખનું દર્શન કર્યું છે એટલે આપનું દાસ્ય જ ફલ છે, મોક્ષ નહિ. આપના બંને ભુજદંડોને જોયા પછી ઈન્દ્રાદિ દેવોની સ્થિતિ પ્રાપ્ત કરીને પણ સ્વર્ગ અમને કોઈ પણ રીતે ઉપયોગી નથી એમ ગોપીજનો ‘દત્તાભયમ્’-જેમણે અભયનું દાન કર્યું છે એવા બંને ભુજદંડ એ પદ વડે નિરૂપણ કરે છે. સ્વર્ગની અંદર ઈન્દ્ર મોટામાં મોટું સ્થાન ભોગવે છે. આ ઈન્દ્રાદિ દેવો પણ હંમેશા દૈત્યોથી બીતા રહે છે. આવા ઈન્દ્રાદિ દેવોને પણ અભય આપનારા ભગવાનના બંને ભુજદંડો છે. આ જ ભુજદંડયુગલ જો દાસ્યમાં જ મળતાં હોય તો પછી તે દાસ્યનો ત્યાગ કરીને અમારે ઈન્દ્રપદનું શું પ્રયોજન છે? મૂલ શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનો અર્થ એવો છે કે ભગવાન ઈન્દ્રાદિ દેવોને કેવલ અભયનું જ દાન કરે છે એટલું જ નહિ પરંતુ પોતાના હસ્તથી યજ્ઞાદિ દ્વારા તેમને હવિનું પણ દાન કરે છે, જેથી આગળ ઉપર પોતાનો અધિકાર પૂરો થતાં ઈન્દ્ર મુક્ત થાય. ભગવાનના ભુજોને ‘દણ્ડ’ કહેવામાં આવ્યા છે તેનો ભાવ એવો છે કે ઈન્દ્રાદિને ભય આપનારા દૈત્યોથી પણ ભગવાનની આજ્ઞાનું ઉલ્લંઘન થઈ શકે એમ નથી, અને તે પ્રકારે ભગવાન ઐહિક અનિષ્ટનો નાશ કરે છે; વળી જો દ્વિજો યજ્ઞ ન કરે તો ભગવાન તેમને શિક્ષા કરે છે જ, તેથી યજ્ઞ કરવાની ભગવાનની આજ્ઞાનું ઉલ્લંઘન કરવામાં આવતું નથી એટલે યજ્ઞના હવિદ્વરિા ભગવાન પારલૌકિક સુખ-મુક્તિ-આપે છે. બંનેય-વામ અને દક્ષિણ-ભુજઓના દંડને યુગ તરીકે વર્ણવવામાં આવ્યો છે. તેથી-ભગવાનની ક્રિયાશક્તિરૂપ વૈદિક ક્રિયાઓ-યજ્ઞો-ના સંબંધવાળા હવિનું ભક્ષણ કરવાથી-દૈત્યોનો સર્વ રીતે નાશ થાય છે. વળી આપની છાતીનાં પણ દર્શન કરીને અમે આપની દાસી થયાં છીએ. લોકો શ્રીને લીધે રમણ કરે છે અર્થાત્ લક્ષ્મી લોકોના રમણનું સાધન છે. આ લક્ષ્મી પણ ભગવાનના વક્ષઃસ્થલ ઉપર રમણ કરે છે. (તેથી આપના વક્ષઃસ્થલનું દર્શન કરવાથી શ્રી-લક્ષ્મી-ની અમારે અપેક્ષા રહેતી નથી.) મૂલ શ્લોકમાં ‘ચ’ છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે:- ‘ધર્મઃસ્તનઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ધર્મ ભગવાનના વક્ષઃસ્થલ ઉપર રહે છે; આ પ્રમાણે લોકની અંદર લક્ષ્મી મેળવવાના સાધનરૂપ જે ધર્મ તે ધર્મ પણ જ્યારે ભગવાનના વક્ષઃસ્થલ ઉપર વસે છે ત્યારે તો ભગવાનના વક્ષઃસ્થલનાં દર્શન કરનારાં અમો ગોપીજનોને તે ધર્મનું શું પ્રયોજન છે? અર્થાત્ અમે ભગવાનની દાસીઓ

થઈએ તેમાં જ ધર્મનો પણ સમાવેશ થઈ જાય છે. માટે અમે આપની દાસીઓ થયાં છીએ. (આ શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ભગવાનનાં જુદાં જુદાં અંગોનું આ પ્રકારનું દર્શન કરવાથી આવો દાસ્યભાવ પ્રાપ્ત થયો. અર્થાત્ આવા દાસ્યભાવનું કારણ ભગવાનનાં આ પ્રકારનાં દર્શન છે. આ ઉપરથી એમ સમજાય છે કે જેમનામાં આવો દાસ્યભાવ નથી તેઓને ભગવાનનાં અંગોનું આવું દર્શન થતું નથી; આ પ્રમાણે ગોપીજનોએ ભગવાનનાં જે આ પ્રકારનાં-રસાત્મક સ્વરૂપનાં-દર્શન કર્યા તે વિધિ-વેદઆજ્ઞા-ને અનુસરીને કરવામાં આવ્યાં નથી, પણ સ્વાભાવિક પ્રેમને લીધે કરવામાં આવ્યાં છે, એટલે ભગવાનના દાસ્યથી વિપરીત-વિરુદ્ધ-એવો ઘેર પાછા જવાનો જે વિધિ છે તેનો ગોપીજનોએ સ્વીકાર કર્યો નહિ અને તે ખરેખર યોગ્ય છે. વળી, ભગવાને ‘અસ્વર્ગ્યમ્’ ઈત્યાદિ છવ્વીસમા શ્લોકમાં જે કહ્યું કે સ્ત્રીઓ પોતાના પતિનો ત્યાગ કરીને મારું ભજન કરે તો વ્યભિચાર થાય અને તેમાં છ દોષો રહેલા છે, તો તે છ દોષોનું ગોપીજનો છ ગુણો વડે નિવારણ કરે છે. મૂલ શ્લોકમાં ‘અલકાવૃત’ વિગેરે વિશેષણો છે અને તેમાં ક્રમ પ્રમાણે ઐશ્વર્ય, યશ, વૈરાગ્ય, જ્ઞાન, વીર્ય અને શ્રી એ ભગવાનના છ ગુણોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. ભગવાનના દર્શનથી આ છ ગુણો પ્રાપ્ત થાય છે અને તેથી વ્યભિચારમાં ઉત્પન્ન થતા છ દોષોનું નિવારણ કરવામાં આવે છે. ખરેખર જે મોક્ષ વિગેરે પરમપુરુષાર્થ સાધી શકે છે તે-દાસ્ય-પાપ હોઈ શકે નહિ, કારણ કે ફલની જ દષ્ટિએ પાપની નિંદા કરવામાં આવે છે. (અર્થાત્ જેના પરિણામમાં દુઃખ આવે છે તે જ પાપ છે, દાસ્ય નહિ.) ૩૯.

ભગવાન ગોપીજનોને જો એમ કહે કે ‘સ્ત્રીઓ પોતાના જ્ઞરની પાસે જાય તે લોકમાં નિંદ્ય ગણાય છે, માટે સન્માર્ગ-મર્યાદામાર્ગના રક્ષણને માટે આ દાસ્ય, જો કે ભક્તિમાર્ગમાં તે સિદ્ધ છે છતાં, તમારે કરવા જેવું નથી; માટે તમારે મારું શ્રવણ દર્શન વિગેરે જ કરવું, તો ગોપીજનો ‘કા સ્ત્રી’ ઈત્યાદિ ઉત્તર આપે છે:

કા સ્ત્ર્યંગ તે કલપદામૃતવેણુગીત-સમ્મોહિતાર્યચરિતાદ્ ન ચલેત્ ત્રિલોક્યામ્ ।  
ત્રૈલોક્યસૌભગમ્ ઈદં ચ નિરીક્ષ્ય રૂપં યદ્ ગોદ્વિજદ્રુમમૃગાઃ પુલકાન્યભિભ્રન્ ॥૪૦॥

હે અંગ! આ ત્રણ લોકમાં આપના અવ્યક્ત અને મધુર પદોના અમૃતથી ભરેલા વેણુગીતથી મુગ્ધ થએલી એવી કઈ સ્ત્રી છે કે જે આર્યચરિતથી ન ચળે? આપનું આ ત્રૈલોક્યના સૌભાગ્યરૂપ સ્વરૂપનું દર્શન કરીને ગાયો વૃષભો વિગેરે, પક્ષીઓ, વૃક્ષો અને મૃગો પણ રોમાંચિત થઈ ગયાં. ૪૦.

આપ ઉપદેશ કરો છો કે ‘તમે બધાં ઘેર પાછાં જાવ અને ત્યાં રહીને મારું શ્રવણાદિ કરજો,’ તો તે વિષે ગોપીજનો કહે છે કે આ સન્માર્ગ રક્ષણરૂપ ધર્મ તો



પુરુષોને ઉપદેશ કરવા જેવો છે, નહિ કે સ્ત્રીઓને, કારણ કે આ પ્રકારનો ધર્મ સ્ત્રીઓમાં સંભવી જ શકતો નથી. ખરેખર, જે સંભવી શકે નહિ તે ધર્મ થઈ શકે નહિ. આ પ્રમાણે આપનું દાસ્ય સ્વીકારવામાં ધર્મનો જે નાશ પ્રાપ્ત થાય છે તેમાં ધર્મનું સ્થાપન કરનારું આપનું સ્વરૂપ જ કારણભૂત છે, અર્થાત્ આપનું ધર્મસ્થાપક સ્વરૂપ જ ધર્મનો નાશ કરે છે, કારણ કે આપનું સ્વરૂપ અદ્ભુતકર્મ કરનારું છે. (વાસ્તવિક રીતે તો જે ભક્તોનો સંબંધ ભગવાનના સ્વરૂપ સાથે થએલો છે તે ભક્તોના ધર્મનું રક્ષણ ભગવાન્ સ્વરૂપબલથી જ કરે છે. અર્થાત્ ભગવાન્ આવા ભક્તોનું બીજા ભાવોમાંથી રક્ષણ કરે છે અને દાસ્યભાવનું પોષણ કરે છે. જે ભક્તોનો ભગવાનના સ્વરૂપના ધર્મો સાથે સંબંધ છે તેમનું રક્ષણ ભગવાન્ સ્વરૂપના ધર્મોથી જ કરે છે એટલે આમાં કાંઈ પણ અનુચિત નથી એવો ભાવ છે. તેથી જ આ પ્રમાણે ભગવાને પોતાનું રક્ષણ કર્યું એટલે પોતે અંતરંગ છે એ જણાવવાને માટે) ‘અંગ’ એ પ્રમાણે ભગવાનને ગોપીજનો સંબોધે છે; અથવા છેતરપંડી ન કરે એટલા માટે ભગવાનને ‘અંગ’ તરીકે ગોપીજનો સંબોધે છે. જગતમાં જે સ્ત્રી શબ્દથી ઓળખાય છે એવી સ્ત્રી આર્યચરિતથી કેમ ચલિત ન થાય? ત્રણ લોકમાં એટલે કે સત્ત્વ, રજસૂ અને તમસૂ એ ત્રણ ગુણોના કાર્યરૂપ લોકમાં. તામસી સ્ત્રીઓ મૂઢતાથી આર્યમાર્ગમાં સ્થિતિ કરે એમ માનવામાં આવે તો તે મંતવ્યનું નિરાકરણ કરવામાં આવે છે; અર્થાત્ તામસી સ્ત્રીઓ પણ આર્યમાર્ગથી ચલિત થાય છે. રાજસી સ્ત્રીઓનો સ્વભાવ જ ચલિત છે એટલે રાજસી સ્ત્રીઓ સ્વભાવિક રીતે જ આર્યમાર્ગથી ચલિત થાય છે. સાત્ત્વિક સ્ત્રીઓ સત્ત્વગુણ હોવાથી ધર્મબુદ્ધિ હોય છે અને તેથી તે આર્યમાર્ગથી ચલિત થશે નહિ એમ શંકા કરવામાં આવે તો તેનું પણ નિરાકરણ કરવામાં આવે છે; અર્થાત્ સાત્ત્વિક સ્ત્રીઓ પણ આર્યમાર્ગમાંથી ચલિત થાય છે. આ પ્રકારે તામસી, રાજસી અને સાત્ત્વિક સ્ત્રીઓ આર્યમાર્ગમાંથી ચલિત થાય છે એ દર્શાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ગોપીજનોએ ‘ત્રિલોક્યામ્’-ત્રણ લોકમાં-એ શબ્દ વાપર્યો છે.

આ બધી સ્ત્રીઓએ આર્યમાર્ગનો પરિત્યાગ કર્યો તેનું કારણ એ કે તે ‘કલપદામૃતવેણુગીતસમ્મોહિતા’-આપના અવ્યક્ત મધુર પદોમાં રહેલું અર્થરૂપ અમૃત અને તે વેણુથી ગવાએલું; આમ ગોપીજનો અર્થરૂપ અમૃત અને વેણુગીતથી ઘણાં મુઘ્ધ પામ્યાં હતાં. જે જે સ્ત્રીને ઘણો મોહ થએલો હોય છે તે આર્યમાર્ગથી ચલિત થાય છે જ. અવિદ્યાનાં પાંચ પર્વો છે: અંતઃકરણાધ્યાસ, પ્રાણાધ્યાસ, ઈન્દ્રિયાધ્યાસ, દેહાધ્યાસ અને સ્વરૂપવિસ્મરણ. તેથી અવિદ્યા પંચપર્વા કહેવાય છે.

સામાન્ય રીતે આ પંચપર્વા અવિદ્યાથી મનુષ્યને મોહ થાય છે; પરંતુ ગોપીજનોને જે સંમોહ થયો છે તે પંચપર્વા અવિદ્યાની જગ્યાએ આવેલી બીજી પાંચ વસ્તુઓથી થયો છે. તે પાંચ વસ્તુઓ આ પ્રમાણે છે: ગીત, વેણુ, અમૃત, પદ અને કલ. ભગવાનનો સંબંધ હોવાથી અવિદ્યા તો બાધ કરતી નથી, પણ બીજી વસ્તુઓ જ બાધ કરે છે. કલ, પદ વિગેરે પાંચ વસ્તુઓમાં બલ-સામર્થ્ય રહેલું છે તે જણાવવાને માટે 'તે'-આપનાં એ પ્રમાણે ગોપીજનો કહે છે. કલ, પદ, અમૃત, વેણુ અને ગીત એ પાંચેય વસ્તુઓ આપની છે એટલે તેમનામાં બાધ કરવાનું સામર્થ્ય રહેલું છે.

'કલ' એટલે અવ્યક્ત અને મધુર; એવાં પદો-શબ્દો-; તેમાં પ્રકટ થએલું જે અમૃત, તે જ વેણુ વડે ગવાયું, અને તેનાથી ગોપીજનોને ઘણો મોહ થયો. ગીત એ દેહને મોહ ઉત્પન્ન કરે છે, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે 'સ્ત્રીઓ ગાયન કરનારને ચાહે છે.' સ્ત્રી તો દેહ જ છે. ઈન્દ્રિયોને મોહ કરનાર વેણુ છે, કારણ કે તે રસાત્મક છે. અમૃત પ્રાણને મોહ કરે છે. પદો અંતઃકરણને મોહ કરે છે, અને અવ્યક્તતા-શબ્દોની અસ્પષ્ટતા-આત્માને મોહ કરે છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનોને સંપૂર્ણ મોહ થયો.

આર્યો પ્રમાણબલનો વિવેક કરનારા હોય છે. વાસ્તવિક રીતે ઈન્દ્ર અને મહેન્દ્ર એ બે એક જ છે, છતાં પણ યાગની અંદર પ્રમાણને અનુસરીને ઈન્દ્ર અને મહેન્દ્રનો પણ ગુણોની ઉપાધિને લીધે ભેદ સ્વીકારવામાં આવે છે, કારણ કે યજ્ઞમાં જુદા જુદા આવેલા બધાય દેવો ભિન્ન ગણાય છે. આ પ્રમાણે ન માનીએ તો (એકલા) ઈન્દ્રને ઉદેશીને યાગ કરનાર (અને ઈન્દ્ર અને મહેન્દ્ર એ બેને ઉદેશીને યાગ ન કરનાર) પુરુષને આગળ ઉપર વર્ષ પછી 'વર્ષ પછી અગ્નિ વ્રતપતિ દેવતાને આઠ કપાલો ઉપર તૈયાર કરેલો પુરોડાશ અર્પણ કરવો' એ પ્રકારનું જે પ્રાયશ્ચિત્ત કહેવામાં આવ્યું છે તે ન કહેત. તેથી દેહ વિના જે પદાર્થ સ્વરૂપતઃ ઉપસ્થિત થએલો હોય છતાં પણ તેમાં પ્રમાણબલથી વિરોધ આવે છે. ઈન્દ્ર અને મહેન્દ્ર સ્વરૂપતઃ એક છે છતાં પણ શાસ્ત્રના પ્રમાણને અનુસરીને એમને જુદા ગણવામાં આવે છે. (ભગવાન સર્વનો આત્મા છે અને સર્વરૂપ છે એટલે વાસ્તવિક રીતે ભગવાન જ પતિ છે. આ પ્રમાણે) વસ્તુનો જે વિચાર કરવામાં આવે છે તે પ્રમેયબલને અનુસરીને કરવામાં આવે છે. આમ ન માનીએ તો દેહને ઉદેશીને કહેવામાં આવેલા વિધિ અને નિષેધવચનો વ્યર્થ થઈ જાય. (વસ્તુનો વિચાર પ્રમેયબલમાં હોય છે, પ્રમાણબલમાં નહિ. જો પ્રમાણબલમાં વસ્તુનો વિચાર કરવામાં આવે તો દેહધર્મના કરતાં આત્મધર્મો મુખ્ય હોવાથી દેહને ઉદેશીને પ્રવર્તેલાં વિધિ અને નિષેધ વાક્યો નિરર્થક થઈ જાય. પ્રમાણબલનો વિચાર કરનારાઓ વસ્તુનો વિચાર કરતા નથી, તેથી દેહને

જ મુખ્ય ગણો છે, એટલે તેમની દષ્ટિએ વિવાહિત પતિનું ભજન જ મુખ્ય ગણાય, ભગવદ્ભજન નહિ.) વસ્તુનો વિચાર કરી આત્મધર્મોને આગળ કરીને ભગવાન એકાદશ સ્કંધના બારમા અધ્યાયમાં ઉદ્ભવજીને પ્રમેયબલ સમજાવશે. માટે પ્રમેય-પુષ્ટિ-માર્ગની અંદર બીજા-મર્યાદા-માર્ગનો વિરોધ કામનો નથી, એટલે આ પ્રસંગમાં મર્યાદાનો ભંગ દૂષણ નથી. મર્યાદાભંગનો ઉત્તર આગળ શુકદેવજી પોતે જ રાસ થઈ ગયા પછી ‘ધર્મનું ઉલ્લંઘન જોવામાં આવ્યું’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં આપશે. તેથી પ્રમેયમાર્ગમાં જ ફલની સિદ્ધિ હોવાથી સાધન-મર્યાદા-માર્ગની દષ્ટિએ અમારી (ગોપીજનોની) જે અપકીર્તિ થશે તે અમને પ્રતિબંધ કરનાર નથી. વળી, કેવલ શબ્દથી જ મર્યાદાભંગ છે એમ નહિ, પરંતુ સ્વરૂપતઃ પણ મર્યાદાભંગ છે એમ દર્શાવવાને માટે ગોપીજનો ‘ત્રૈલોક્યસૌભગમ્’ એ પ્રમાણે કહે છે. ત્રણેય લોકનું સૌભાગ્ય જેના વડે છે તે ‘ત્રૈલોક્યસૌભગમ્’. જેમ સૂર્યથી દિવસ સુંદર લાગે છે, જેમ ચંદ્રથી રાત્રી સુંદર લાગે છે તેમ ત્રણેય લોક ભગવાનના રૂપથી જ સુંદર લાગે છે. ‘ઈદમ્’-આ એટલે પ્રત્યક્ષસિદ્ધ ભગવાનનું રૂપ. ‘ચ’ નો અર્થ અનુભાવ થાય છે. અનુભાવનું શ્રવણ કરીને, આ રૂપનું દર્શન કરીને કઈ સ્ત્રી આર્યમાર્ગથી ચલિત ન થાય?

પ્રમાણના બલની આ પ્રસ્તુત ચર્ચા રહેવા દો, કારણ કે ભગવાનના સ્વરૂપના ધર્મોની સરખામણીમાં તે દુર્બલ છે. બીજા પ્રકારે પણ મર્યાદા ચલિત થાય છે. જે પ્રમેયમર્યાદા કોઈ પણ પ્રકારે ચલિત થતી નથી તે પણ ભગવાનના સ્વરૂપને લીધે ચાલી જાય છે. આ વાત ગોપીજનો ‘યદ્લોદ્વિજદ્દુમમૃગાઃ’ એ શબ્દોમાં કહે છે. ‘ગો’ એટલે વૃષભ. વૃષભોને પ્રમાણવાર્તાનું જ્ઞાન હોતું નથી અને તેથી પોતાની જનની-માતા-સાથે પણ સમાગમ કરે છે. ‘દ્વિજ’ એટલે પક્ષી. પક્ષીઓ બધીય વસ્તુઓનું ભક્ષણ કરે છે. ‘દુમ’ એટલે વૃક્ષ. વૃક્ષો સ્થાવર છે એટલે તેમને કોઈ પણ દિવસ બહારથી લાગણી થતી નથી. કેટલાક ટીકાકારો વૃક્ષોને નિરિન્દ્રિય જ માને છે. ‘મૃગ’ એટલે હરણ. હરણો બધાથી ભય પામે છે. આ બધા પદાર્થો જેમને ભગવાને બીજા જ કાર્યને માટે ઉત્પન્ન કર્યા છે તેમણે પણ જ્યારે ભગવાનના રૂપથી અથવા ગીતથી રસમય બનીને રોમાંચ ધારણ કર્યા અને રસિક મનુષ્યોના ધર્મો પ્રકટ કર્યા ત્યારે સ્ત્રીઓ તો સ્વભાવથી જ ચલિત થાય છે એટલે અમે ગોપીજનોએ આપના-ભગવાનના-અનુભાવનું શ્રવણ કરીને અને આપના સ્વરૂપનાં દર્શન કરીને જે આર્યમાર્ગનો ત્યાગ કર્યો છે તેમાં કાંઈ પણ આશ્ચર્ય નથી. ૪૦.

આ પ્રમાણે મર્યાદામાર્ગનો ઉપદેશ કરનારાં ભગવાનનાં વાક્યોનું ખંડન

કરવાને માટે શ્રીગોપીજનોએ પુષ્ટિમાર્ગના સિદ્ધાંતનું દસ શ્લોકોમાં વર્ણન કર્યું, અને આ પુષ્ટિમાર્ગનો સિદ્ધાંત કેવલ ભગવત્કૃપાથી જ સિદ્ધ થઈ શકે એવો છે એટલે હવે તેઓ ભગવત્કૃપાની પ્રાર્થના ‘વ્યક્તમ્’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

વ્યક્તં ભવાન્ પ્રજ્ઞભ્યાર્તિહરોઽભિજ્ઞતો દેવો યથાદિપુરુષઃ સુરલોકગોપ્તા ।  
તત્ત્રો નિર્ઘેહિ કરપડ્કળમ્ આર્તબન્ધો તપ્તસ્તનેષુ ચ શિરસ્સુ ચ કિડ્કરીણામ્ ॥૪૧॥

જેમ આદિપુરુષ ભગવાન્ દેવલોકનું રક્ષણ કરનારા છે તેમ આપ પ્રજ્ઞજનોનાં ભય અને દુઃખ દૂર કરવાને માટે પ્રકટ થયા છો; માટે હે દુઃખી જનોના બંધો! આપનું હસ્તકમલ આ આપની દાસીઓના તપ્ત સ્તન ઉપર અને મસ્તક ઉપર ધરો. ૪૧.

આપે જે આજ્ઞા કરી તે અથવા તો અમે જે ઉત્તર આપ્યો તે-એ બેમાંથી એક પણ કોઈ રીતે સાધક અથવા બાધક નથી, છતાં પણ આપના અવતારનું પ્રયોજન વિચારીને આપે અમારા ઉપર કૃપા કરવી જોઈએ. કૃપાનું પ્રયોજન દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે આપ પ્રજ્ઞનાં ભય અને દુઃખ હરણ કરવાને માટે જ ભૂલત ઉપર પ્રકટ થયા છો. પ્રજ્ઞની આર્તિ એટલે પીડા, અને ભય-આ બંનેનો આપે નાશ કરવો જોઈએ. જો આ પ્રમાણે આપ નહિ કરો તો ભૂતલ ઉપર આપના સાક્ષાત્ અવતારનું બીજું કોઈ પણ પ્રયોજન અમે જોઈ શકતાં નથી. પૃથ્વીનો ભાર દૂર કરવાનું કાર્ય તો સંકર્ષણ અંશથી થઈ શકે છે, વસુદેવ વિગેરેને આનંદ આપવાનું કાર્ય પ્રદ્યુમ્ન અંશથી થઈ શકે છે, અને ધર્મનું રક્ષણ કરવાનું કાર્ય અનિરુદ્ધ અંશથી થઈ શકે છે. પછીથી જો આપ પ્રજ્ઞજનોનાં ભય અને દુઃખ હરણ ન કરો તો આપના-પૂર્ણપુરુષોત્તમના-અવતારનું બીજું શું કાર્ય હોઈ શકે? માટે આપ પ્રજ્ઞનાં ભય અને દુઃખ હરણ કરવાને માટે જ પ્રકટ થયા છો એમ નિર્ણય થાય છે.

આ સમયે અમને જેવા પ્રકારનું દુઃખ થાય છે તેવા પ્રકારનું દુઃખ અમને પહેલાં કોઈ પણ દિવસે થએલું ન હતું. આપ દુઃખનો નાશ નહિ કરો તો અમારો નાશ થશે અને તેથી આખાય પ્રજ્ઞમાં બહુ દુઃખ થશે. માટે આપે અમારી પીડાનો નાશ કરવો જોઈએ.

ભગવાન્ કદાચિત્ એમ કહે કે ‘હે ગોપીજનો! તમારા દુઃખનું નિવારણ કેવલ મર્યાદામાર્ગની રીતે કરવું યોગ્ય છે, નહિ કે અમર્યાદાથી-મર્યાદામાર્ગથી બીજે પ્રકારે; આ પ્રમાણે કરવાથી તમારા કામની શાંતિ થશે અથવા તો તમને જ્ઞાન પ્રાપ્ત થશે.’ આના ઉત્તરમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘દેવો યથાદિપુરુષઃ’-જેમ આદિપુરુષ દેવ છે. ભગવાન્ બ્રહ્મરૂપ છે, એટલે કે તે સર્વને સરખા ગણે છે (-બ્રહ્મનું લક્ષણ ‘નિર્દોષ

અને સમ' છે-), છતાં પણ ઈન્દ્ર વિગેરે દેવોના ઉપર કૃપા કરવાની ઈચ્છાથી દૈત્યોને મારવાને માટે ભગવાન્ વિષમતા (દેવો પ્રિય અને દૈત્યો અપ્રિય એ પ્રકારની વિષમતા-અર્થાત્ દેવો માટેનો પક્ષપાત) સ્વીકારે છે, પરંતુ ભગવાન્ કાંઈ દેવોને જ્ઞાન આપતા નથી. ભગવાન્ જ્યારે પોતાના 'સમ' સ્વરૂપનો જ ફેરફાર કરી નાખે છે અને તેને 'વિષમ' બનાવે છે, ત્યારે તો પોતાની વાણીનો-વેદનો અને વેદે જણાવેલા મર્યાદામાર્ગનો-ફેરફાર કરે તેમાં તો શું જ કહેવું? માટે જેમ આદિપુરુષ ભગવાને પણ ક્રીડાને માટે દેવલોકોનું રક્ષણ કર્યું તેમ આપ પણ ધર્મમર્યાદાનું રક્ષણ કરનારા છો છતાં પણ અમારી સાથે સંબંધ કરો-આપ ક્રીડાને માટે જ પ્રકટ થયા છો-એ પ્રકારનો ભાવ છે.

રસનું પોષણ કરવાને માટે પરોક્ષ રીતે આ જ વાત ગોપીજનો 'તત્રો નિઘેહિ'-માટે અમારા ઉપર ધરો-એ શબ્દોમાં કહે છે. પ્રથમ આપ અમારા મસ્તક ઉપર આપનો હસ્ત પધરાવો, જેથી અમે ભયમાંથી મુક્ત થઈએ. પછીથી અમારા હૃદયના તાપને દૂર કરવાને માટે અમૃત જેમાંથી ઝરે છે અને તેથી જે તાપનો નાશ કરનાર છે એવા આપના હસ્તકમલને અમારી છાતી ઉપર પધરાવો.

આમ કરવામાં કોઈ પણ જાતનું ખોટું થતું નથી, કારણ કે અમે તો આપની દાસીઓ છીએ. અથવા તો અમે જે અમારી પરિસ્થિતિ વર્ણવી તે ખરી છે કે ખોટી એમ પરીક્ષા કરવાને માટે આપ અમારાં મસ્તક અને છાતીનો સ્પર્શ કરો એમ શ્રીગોપીજનો રસપોષણને માટે ભગવાનને પ્રાર્થના કરે છે. ૪૧.

આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોએ ભગવાનની પ્રાર્થના કરી ત્યારે ભગવાને જે કાર્ય કર્યું તે શુકદેવજી 'ઈતિ' વિગેરે શ્લોકોમાં વર્ણન કરે છે :

॥શ્રીશુક ઉવાચ ॥

ઈતિ વિક્લવિતં તાસાં શ્રુત્વા યોગેશ્વરેશ્ચરઃ ।

પ્રહસ્ય સદયં ગોપીરાત્મારામોપ્યરીરમત્ ॥૪૨॥

શુકદેવજી કહે છે કે આ પ્રમાણે ગોપીજનોનાં દીન વચનો સાંભળીને યોગેશ્વરોના ઈશ્વર આત્મારામે પણ હસીને દયા લાવીને ગોપીઓને રમણ કરાવ્યું. ૪૨.

(ભગવાન્ ઐશ્વર્ય, વીર્ય, શ્રી, યશ, જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય એ છ ગુણોના સ્વામી છે અને તેથી રમણમાં જ્યારે જ્યારે જે જે ગુણની જરૂર પડે ત્યારે ત્યારે તે તે ગુણને ભગવાને પ્રકટ કર્યો.) આ પ્રમાણે ભગવાને પોતે છ ગુણોના સ્વામી હોવાથી છ પ્રકારનું રમણ સંયોગાત્મક શૃંગારરૂપે કર્યું અને સ્વરૂપથી પણ

વિપ્રલંભાત્મક શૃંગારરૂપે રમણ કર્યું. આ રીતે સંયોગ અને વિપ્રલંભ એ બે પ્રકારના શૃંગારનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. (સંયોગાત્મક શૃંગારનું વર્ણન ૪૨ થી ૪૭ એ છ શ્લોકોમાં કરવામાં આવ્યું છે અને ૪૮મા શ્લોકમાં વિપ્રલંભાત્મક શૃંગારનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.) ૧.

પ્રથમ ૪૨મા શ્લોકમાં ભગવાનના સામાન્ય રમણનું વર્ણન કરેલું છે. વિશેષરમણ બે પ્રકારનું છે, બાહ્ય અને આંતર. બાહ્ય રમણમાં સાક્ષાત્ અંગનો સ્પર્શ નથી હોતો પણ બાહ્ય વિલાસપૂર્વક ગતિ વિગેરે હોય છે. આંતર રમણમાં સાક્ષાત્ અંગનો સ્પર્શ વિગેરે થાય છે. વિશેષરમણને માટે પહેલાં ૪૩મા શ્લોકમાં ભગવાનના ગોપીજનોની સાથેના થએલા સંગમનું વર્ણન છે. પછીથી ૪૪મા શ્લોકમાં ભગવત્સ્વરૂપથી બાહ્ય એવાં ગતિ, કટાક્ષ વિગેરેથી ગોપીજનોના કામને ઉત્પન્ન કરીને જે બાહ્ય રમણ ભગવાને કર્યું તેનું વર્ણન છે. પછીથી ૪૫મા શ્લોકમાં આંતર રમણનું વર્ણન છે. ૨.

પછીથી અજાતસ્મરકેલિ (જેમાં કામક્રીડા થઈ નથી) અને જાતસ્મરકેલિ (જેમાં કામક્રીડા થઈ છે) એ બે પ્રકારે કરેલા અનેક વિલાસોવાળા રમણનું વર્ણન અનુક્રમે ૪૫મા અને ૪૬મા શ્લોકમાં કરવામાં આવ્યું છે. પછીથી વિપ્રલંભશૃંગારને સિદ્ધ કરવાને માટે ૪૭મા શ્લોકમાં ગોપીજનોના માન-અભિમાન-નું વર્ણન છે. ૩.

પછીથી ૪૮મા શ્લોકમાં ભગવાનના તિરોભાવનું વર્ણન છે. આ પ્રમાણે ભગવાન્ જગતમાં જોવામાં આવતા કામી પુરુષ જેવા નથી. (જેમ સ્ત્રીને જોવાથી પ્રાકૃત પુરુષને કામ થાય છે અને તેથી શરીરમાં વિકાર ઉત્પન્ન થાય છે તેમ ભગવાનને ગોપીજનોના દર્શનથી જો કામ અને શરીરમાં વિકાર ઉત્પન્ન થાય તો પ્રાકૃત પુરુષની માફક ભગવાનનો વિનાશ પણ થાય. પણ આ પ્રમાણે નથી. પરંતુ ‘પરમાત્મા રસરૂપ જ છે’ એ અને એવી બીજી શ્રુતિઓને આધારે એવું સિદ્ધ થાય છે કે ભગવાનનું સ્વરૂપ જ રસાત્મક છે તેથી રસશાસ્ત્રની અંદર રસના જેટલા ભેદો વર્ણવવામાં આવ્યા છે તે બધાં રૂપો ભગવાનનું સ્વરૂપ જ છે. એટલે પૂર્ણ પુરુષોત્તમનું સ્વરૂપ જ આવા પ્રકારનું છે, તેથી તેમને જગતના કામી પુરુષ જેવા ગણવાના નથી. ભગવાન્ જેમ દૈત્યોની આગળ વીરરૂપે જ પ્રકટ થાય છે, કારણ કે દૈત્યોનો અધિકાર તેવા પ્રકારનો છે, તેમ ગોપીજનોની આગળ ભગવાન્ રસાત્મક સ્વરૂપે પ્રકટ થાય છે, કારણ કે ગોપીજનોનો અધિકાર જ તેવા પ્રકારનો છે.) ૩ાા.

ગોપીજનોનો તાપ દૂર કરવાને માટે ભગવાને જે સામાન્ય લીલા કરી તેનું શુકદેવજી પ્રથમ વર્ણન કરે છે. ‘ઈતિ’-આ પ્રમાણે ગોપીજનોનું વિકલવિત-ઘણાં

દીન વચનો-સાંભળી અને હાસ્ય કરીને ભગવાને રમણ કર્યું.

શંકા- ભગવાનને ઈન્દ્રિયો નથી, તો પછી તેમણે કેવી રીતે રમણ કર્યું?

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ભગવાન બ્રહ્મા વિગેરે યોગેશ્વરોના પણ ઈશ્વર છે. યોગ અને જ્ઞાનની અંદર બધા પદાર્થો પોતાની મેળે જ સ્ફુરે છે અને ઈન્દ્રિયો વગર જ જ્ઞાનક્રિયાને ઉપયોગી થાય છે, અણિમા જેવી સિદ્ધિઓ પણ પ્રાપ્ત થાય છે. તેવી જ રીતે તે જ સમયે-રમણનો આરંભ કરતી વખતે જ-ભગવાને પોતાના સ્વરૂપને જ ઈન્દ્રિય વિગેરે રૂપે પ્રકટ કર્યું. અર્થાત્ ભગવાને પોતાના સ્વરૂપ વડે જ બધાં કાર્યો કર્યાં. ભગવાને પોતાના કામને લીધે રમણ કર્યું નથી. જો ભગવાને પ્રાકૃત મનુષ્યની માફક કામથી પ્રેરાઈને રમણ કર્યું હોત તો બીજની નિવૃત્તિ થતાં-વીર્યનું સિંચન થતાં-કામ જતો રહેત, (પરંતુ ભગવાનનો કામ શાંત થતો નથી. એટલે ભગવાને કામથી પ્રેરાઈને આ બધી લીલા કરી નથી એમ સિદ્ધ થાય છે.) ગોપીજનોનો ભગવાનને વિષે જે ભાવ રહેલો છે તે કોઈ પણ દિવસ નાશ ન પામે એટલા માટે ભગવાન ખુબ હસ્યા. ગોપીજનોનો ઉલ્કટ તાપ જોઈને તેમને તે તાપમાંથી મુક્ત કરવાની ભગવાનને દયા આવી અને ભગવાને પોતાના હાસ્ય વડે જ ગોપીજનોનો તાપ દૂર કરી નાખ્યો. જો ભગવાન ગોપીજનોને પોતાનાથી જુદાં ગણીને મર્યાદામાર્ગમાં સ્વીકારે તો પુષ્ટિમાર્ગનો નાશ થઈ જાય. એટલે ગોપીજનોનો મર્યાદામાર્ગમાં અંગીકાર ન કરતાં દયા લાવીને તેમને તેમના ઉલ્કટ તાપમાંથી મુક્ત કરવાને માટે ભગવાને હાસ્ય કર્યું. આ જ વાત શુકદેવજી ‘સદયમ્’-દયા લાવીને-એ પદમાં કહે છે. ભગવાને ગોપીજનોને જ રમણ કરાવ્યું; ભગવાન પોતે તો આત્મારામ જ છે; પોતાના સ્વરૂપને વિષે જ રમણ કરનારા છે. અથવા તો ‘સદયમ્’ એ પદનો અર્થ એવો પણ થાય કે ગોપીજનો રસનો આધાર બને તેટલા માટે-ગોપીજનોનો નાયિકાભાવ સિદ્ધ કરવાને માટે-ભગવાને દયા લાવીને રમણ કર્યું.

૪૬મા શ્લોકમાં વર્ણન કરેલી બધીય-બાહુઓને લંબાવવા, ભેટવું, હાથ વિગેરે અંગોનો સ્પર્શ, હાસ્ય વિગેરે રમણમાં ઉપયોગી-ક્રિયા રસશાસ્ત્રસિદ્ધ જ છે અને તે બધી રાસલીલામાં છે, પરંતુ તેમાં-રાસલીલામાં-લૌકિક કામ નથી. (રાસલીલામાં લૌકિક ક્રિયાના જેવી ક્રિયા છે પણ તેમાં લૌકિક કામ નથી એ તાત્પર્ય છે.) ગોપીજનોનો કામ ભગવાનના અલૌકિક કામથી પૂર્ણ થાય છે એટલે ગોપીજનો ભગવાનના જેવાં નિષ્કામ-લૌકિકકામરહિત-જ છે. (જો આ પ્રમાણે ન માનીએ અને એમ માનીએ કે ગોપીજનોનો કામ લૌકિક છે તો ભગવાનના અલૌકિક કામથી

ગોપીજનોનો લૌકિક કામ પૂર્ણ થાય નહિ; પરંતુ ગોપીજનોનો કામ ભગવાનના અલૌકિક કામથી પૂર્ણ તો થયો જ છે, એટલે એમ સિદ્ધ થાય છે કે ગોપીજનોનો કામ પણ અલૌકિક હતો અને તે પોતે નિષ્કામ-લૌકિકકામરહિત-હતાં.) ૧.

જો ગોપીજનોનો કામ પ્રાકૃત-લૌકિક-હોત અને તે ભગવાનના લૌકિક કામથી પૂર્ણ થયો હોત તો તેના પરિણામરૂપે સંસાર-પુત્રાદિ-સ્પષ્ટ ઉત્પન્ન થાત. (પરંતુ રાસલીલામાં આવા પ્રકારનો સંસાર ઉત્પન્ન થયો નથી. તેથી સિદ્ધ થાય છે કે ભગવાન અને ગોપીજનો લૌકિકકામરહિત છે.) ભગવાનના સ્વરૂપમાં કામનો અભાવ છે: ભગવાનના આવા નિષ્કામ સ્વરૂપથી નિષ્કામ અભિલાષા-અલૌકિક કામ અથવા લૌકિકકામરહિત ઈચ્છા-જ પૂર્ણ થાય છે એમાં જરા પણ સંશય નથી. (તેથી ગોપીજનો નિષ્કામ છે એમ સિદ્ધ થાય છે.) ૨.

આ પ્રમાણે રાસલીલામાં અલૌકિક જ ભાવ હોવાથી મર્યાદામાર્ગ અને ભક્તિમાર્ગની કોઈ પણ મર્યાદાનો ભંગ થતો નથી અને મોક્ષરૂપી ફલ પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી સાધારણ માણસ પણ આ અલૌકિક લીલાનું શ્રવણ કરીને સર્વ પ્રકારે નિષ્કામ-લૌકિકકામરહિત-થઈ જાય છે. ૩.

(ભગવાનની આ રાસલીલાનું શ્રવણ કરવાથી દરેક જણ નિષ્કામ થાય છે કારણ કે) ભગવાનની બધીય લીલાઓ નિષ્કામ છે. આ લીલા લૌકિકકામરહિત છે એટલે તેનું શ્રવણ કરવાથી શ્રોતાની અંદર લૌકિક કામ ઉત્પન્ન થતો નથી; અને તેથી (ત્રીસમા અધ્યાયને અંતે આવેલું) શુકદેવજીનું વચન-જે કોઈ ભગવાનની રાસલીલાનું શ્રવણ અને કથન કરે છે તેના કામરૂપી હૃદયના રોગનો સત્વર નાશ થાય છે એ વચન-ઘણું સ્પષ્ટ છે. તાત્પર્ય એ કે શુકદેવજીએ ‘હૃદયના દોષો દૂર થાય છે’ એમ સામાન્ય રીતે ન કહેતાં ‘કામરૂપી હૃદયનો રોગ દૂર થાય છે’ એમ કામના નાશનું સ્પષ્ટ વિધાન કર્યું છે. ભગવાન નિષ્કામ છે, અને દરેક વસ્તુનો સ્વભાવ એવો હોય છે કે તે પોતાનામાં રહેલી બીજી વસ્તુને પોતાના જેવી જ બનાવી દે છે. આ પ્રમાણે જ્યારે ભગવાન લૌકિકકામરહિત છે અને અલૌકિક કામવાળા છે ત્યારે ભગવાનની આ પ્રકારની લીલાનું શ્રવણ કરનાર પણ ભગવલ્લીલામાં તલ્લીન થઈ જવાથી ભગવાનની માફક લૌકિકકામરહિત અને અલૌકિક કામવાળો થઈ જાય છે એમ તાત્પર્ય છે.) ૪.

ભગવાન આત્મારામ છે. તેમણે કૃત આત્મા-સ્વરૂપ વડેજ રમણ કર્યું નથી પરંતુ મન, વાણી, પ્રાણ, ઈન્દ્રિય અને શરીર વડે પણ રમણ કર્યું છે એમ દર્શાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘અપિ’ શબ્દ મૂકવામાં આવ્યો છે. ‘અરીરમત્’ એટલે ભગવાને



અનેક પ્રકારે રમણ કર્યું અને ઉત્તરોત્તર અધિક અધિક રસ પ્રકટ કર્યો. ૪૨.

આ પ્રમાણે ભગવાનની સામાન્ય લીલાનું વર્ણન કરીને 'તાભિઃ' ઇત્યાદિ ત્રણ શ્લોકોમાં ભગવાનની વિશેષ લીલાનું શુકદેવજી વર્ણન કરે છે :

તાભિઃ સમેતાભિરુદાર-ચેષ્ટિતઃ પ્રિયેશ્ણણોત્કુલ્લ-મુખીભિરચ્યુતઃ ।

ઉદાર-હાસ-દ્વિજ-કુન્દ-દીધિતિર્ચરોચતૈણાઙ્ક ઇવોડુભિર્વૃતઃ ॥૪૩॥

પ્રિયનાં-ભગવાનનાં દર્શન કરીને પ્રકૃલ્લિત થયાં છે મુખ જેમનાં અને જે ભગવાનની પાસે આવેલાં છે એવાં ગોપીજનોથી વીંટળાએલા, ઉદાર ચરિત્રવાળા અને જેમના ઉદાર હાસ્યવાળા દાંતરૂપી કુંદપુષ્પોમાં શોભા રહેલી છે એવા અચ્યુત ભગવાન નક્ત્રોથી વીંટળાએલા ચંદ્રની માફક શોભવા લાગ્યા. ૪૩.

હજુ સુધી જેમને સ્મરકેલિ-કામક્રીડા થઈ નથી એવાં ગોપીજનો પ્રથમ તો ભગવાનને મળ્યાં. પહેલાં ગોપીજનો ભયને લીધે ભગવાનથી છૂટાં હતાં અને હવે તે ભગવાનની પાસે આવ્યાં. પછીથી ભગવાન ઉદારચેષ્ટિત થયા. ઉદારચેષ્ટિત એટલે ઉદાર છે ચેષ્ટા જેમની એવા. અહિં જે ઉદારતાની વાત કરવામાં આવી છે તે રસ વિષેની છે. જેમ ગોપીજનોનો મહાન્ જ રસ પ્રકટ થાય તેમ ભગવાને કામશાસ્ત્રમાં દર્શાવેલી બધીય લીલાઓ કરી. ત્યાર પછી ગોપીજનોની અંદર પૂર્ણ રસ પ્રકટ થયો. પ્રિયનાં-ભગવાનનાં- દર્શન કરવાને માટે ગોપીજનોનાં મુખ વિકસિત થયાં. અથવા તો જેમ સૂર્યના કિરણોથી મુખ પ્રકુલ્લ થાય છે તે પ્રમાણે પ્રિયનાં દર્શન કરવાથી ગોપીજનોનાં મુખ પ્રકુલ્લ થયાં. વાસ્તવિક રીતે તો ભગવાનના અધરમાં રહેલો રસ લેવાને માટે જ ગોપીજનોએ પોતાનાં મુખ વિકસિત કર્યાં. જ્યારે ગોપીજનો ભગવાનના અધરમાં રહેલો રસ ગ્રહણ કરવા માટે ત્યારે તો ભગવાનમાં રહેલો રસ જતો રહે-એટલે કે ભગવાનનો પ્રયત્ન શિથિલ થાય અને તેમને ખેદ થાય-એ શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે 'અચ્યુતઃ'-ભગવાન અચ્યુત છે જેમાંથી કાંઈ પણ જતું રહેતું નથી એવા ભગવાન છે. ગોપીજનોએ ભગવાનના અધરરસનું ગ્રહણ કરવાને માટે મુખને જે પ્રકુલ્લિત કર્યું તેનું પ્રયોજન એ જ કે તેમને પોતાના હૃદયમાં રહેલા અગ્નિને શાંત કરવો હતો, નહિ કે ભગવાનમાં ખેદ હતો તેથી. ગોપીજનો પણ અજ્ઞાતસ્મરકેલિ હોવાથી પ્રૌઢ ન હતાં એટલે તેમનો રસ સમાપ્ત થઈ જાય એ શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી 'ઉદારહાસ' એ પ્રમાણે કહે છે. ઉદાર જે હાસ છે; અર્થાત્ હાસ્ય પૂર્ણ કામ આપનારું છે, કામને માટે જ જે હાસ્યરૂપી મોહ છે તેનાથી જ ગોપીજનોનો ભગવાનમાં રહેલો સ્નેહ વધ્યો. (ગોપીજનોનો ભગવાનની સાથે જ્યારે ઘણો નિકટ સંબંધ થાય ત્યારે ભગવાનના સ્વરૂપના ધર્મોનું જ્ઞાન અવશ્ય થાય

જ અને તેથી ભગવાનને માટે તેમને માહાત્મ્ય બુદ્ધિ થાય, એટલે ભય ઉત્પન્ન થાય અને તેથી રસનો ભંગ થઈ જાય. આ પ્રમાણે ન થાય એટલા માટે ગોપીજનોમાં મોલ ઉત્પન્ન કરવાની જરૂર હતી; તેથી ભગવાને ઉદાર હાસ્ય વડે ગોપીજનોમાં મોલ ઉત્પન્ન કરીને તેમનો ભગવાનને માટેનો સ્નેહ વધાર્યો.) આ જ વાત શુકદેવજી ‘હાસદ્વિજ’ ઇત્યાદિ શબ્દોમાં કહે છે. હાસ્યવાળા જે દ્વિજો-દાંત તે જ કુંદનાં પુષ્પો છે. ભગવાનના દાંત જો કે રાતા છે છતાં પણ હાસ્યને લીધે શુભ્ર-ઘોળા જણાય છે. ભગવાનના આવા પ્રકારના દાંતમાં કાંતિ-શોભા રહેલી છે. દાંતને જે કુંદનાં પુષ્પો તરીકે વર્ણવવામાં આવ્યા છે તેનું પ્રયોજન સ્નેહનું પરિણામ ફક્ત કામમાં જ થાય છે એ બતાવવાનું છે.

(પહેલાં ગોપીજનોનો ભગવાનમાં રહેલો સ્નેહ કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ વિનાનો હતો; પણ ભગવાનને ગોપીજનોને સ્વરૂપાનંદનું દાન રસશાસ્ત્રમાં જણાવેલી રીતે આપવું છે એટલે તેમણે રસશાસ્ત્રમાં વર્ણવેલા રસના જેવો જ કામની ઉપાધિવાળો સ્નેહ ઉત્પન્ન કર્યો એ દર્શાવવાને માટે સ્નેહરૂપી દાંતને ‘દ્વિજ’ કહેવામાં આવ્યા છે.)

દાંતને જ્યારે કુંદપુષ્પ તરીકે વર્ણવવામાં આવે ત્યારે તો ફલનો ભોગ કર્યા પછી તેમાંની શોભા જતી રહેશે-આ શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજીએ કહ્યું કે દાંતરૂપી કુંદપુષ્પોમાં દીધિતિ-કિરણ, શોભા, કાંતિ-રહેલી છે. જો કે ભગવાને ગોપીજનોના આગ્રહથી જ અને જગતમાં રહેલા કામદોષનો નાશ કરવાને માટે જ રમણ કર્યું, નહિ કે પોતાની ઈચ્છાથી જ, છતાં પણ ભગવાન રમણમાં, બધા મનોરથો પૂર્ણ થઈ ગયા છે એવા પુરુષની માફક, ઉદાસીન રહ્યા નથી પણ લૌકિક નાયકની માફક તેમણે રસપૂર્વક રમણ કર્યું. આ બાબત શુકદેવજી ચંદ્રનો દષ્ટાંત આપીને સમજાવે છે. જેવી રીતે એણાડ્ડક-ચંદ્ર-તારાઓની સાથે શોભે છે તેવી રીતે ભગવાન પણ ગોપીજનોની સાથે શોભવા લાગ્યા. (ચંદ્રમાં કલંક છે એ વાત એણાડ્ડક: શબ્દથી કહેવામાં આવી છે, અને તેનો ભાવ એવો છે કે જેમ ચંદ્ર પૂર્ણ હોય છે છતાં પણ અપૂર્ણ થાય છે, અને ફરીથી પૂર્ણ થાય છે, પણ હંમેશા પૂર્ણ રહેતો નથી તેવી રીતે ભગવાન પૂર્ણ છે છતાં પણ રમણ પ્રસંગે લૌકિક નાયકની માફક વિકારવાળા થાય છે અને ફરીથી પૂર્ણ થાય છે.)

આ પ્રમાણે આ શ્લોકમાં બંધ વિનાની બીજી બધી બાહ્ય-સ્પર્શાદિ-લીલાનું જ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ વિશેષ રમણની પ્રથમ લીલા ગોપીજનોના દેહને બાધક થઈ પડેલા વિરહાગ્નિરૂપ કામનો નાશ કરનારી છે, અર્થાત્ ભગવાનના

અઘરામૃતથી ગોપીજનોનો હૃદયમાં રહેલો અગ્નિ નાશ પામે છે. ૪૩.

વિશેષ લીલાની દ્વિતીય લીલા પ્રકટ કરવાને માટે પહેલાં શુકદેવજી ‘ઉપગીયમાનઃ’ એ શ્લોકમાં સામગ્રીનું વર્ણન કરે છે :

ઉપગીયમાન ઉદ્ગાયન્વનિતાશતયૂથપઃ ।

માલાં બિભ્રદ્વૈજયન્તીં વ્યચરન્મણ્ડયન્વનમ્ ॥૪૪॥

અનેક પ્રકારની સ્ત્રીઓનાં અનેક પ્રકારના યૂથોના અધિપતિ, જેમનું ગોપીજનો સમીપમાં ગાન કરે છે, એવા ભગવાન્ ઊંચેથી ગાન કરતા, વૈજયંતી માલા ધારણ કરતા અને વનને શોભાવતા લીલાથી ગતિ કરવા લાગ્યા. ૪૪.

તે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે રહીને તેમનું ગાન કરતાં હતાં. તે જ સમયે ભગવાન્ પોતે પણ ઊંચેથી ગાન કરવા લાગ્યા. પછીથી અસંખ્ય વનિતાઓના-અનેક પ્રકારની સ્ત્રીઓના-અનેક પ્રકારના યૂથોનું ભગવાન્ રક્ષણ કરવા લાગ્યા; એટલે ભગવાન્ ‘વનિતાશતયૂથપ’ થયા. જેટલાં ગોપીજનોની સાથે મળવાથી રસ પ્રકટ થાય તેટલાં ગોપીજનોનું એક યૂથ થતું. આ પ્રમાણે અનેક પ્રકારના યૂથો કરવામાં આવ્યાં. અહિં આ બધાં ગોપીજનોના યૂથોનું રક્ષણ લલિત ગતિ, સુંદર વાક્ય, મંદ સ્મિત, કટાક્ષપ્રક્ષેપ વિગેરેથી દૂરથી જ આશ્વાસન આપીને કરવામાં આવ્યું. તે સમયે ભગવાન્ ગાતા ગાતા જતા હતા. ભગવાનના તે સ્વરૂપનું વર્ણન શુકદેવજી ‘માલામ્’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કરે છે. ભગવાને નવરત્નથી જડેલી, સ્વાભાવિક, ઐશ્વર્ય પ્રકટ કરનારી અને કીર્તિમયી વૈજયંતી માલા ધારણ કરીને, આખાય વનને મંડિત-શોભિત-કરીને લીલાથી-ધીમે-ધીમે-ગતિ કરી. ભગવાનની આ ગતિ ગોપીજનોના કામને જાગૃત કરનારી છે, કારણ કે ભગવાન જ ગોપીજનોના કામને પૂર્ણ કરનાર છે. (આ આખા પ્રકરણમાં સર્વ વસ્તુ રસનું પોષણ કરનારી છે.) અથવા તો ‘વ્યચરત્’નો અર્થ એમ પણ થાય કે ભગવાન્ એક વનમાંથી બીજા વનમાં ગયા. ૪૪.

આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોનો કામ જાગૃત થયો ત્યારે તેમની સાથે ભગવાને રસશાસ્ત્રના બંધ વિગેરેથી રમણ કર્યું એમ શુકદેવજી ‘નદ્યાઃ’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

નદ્યાઃ પુલિનમ્ આવિશ્ય ગોપીભિર્હિમવાલુકમ્ ।

રેમે તત્તરલાનન્દિકુમુદામોદવાયુના ॥૪૫॥

શ્રીયમુનાજીના શીતલ રેતીવાળા, મોજાંઓને લીધે આનંદવાળા, અને કુમુદપુષ્પના સુગંધિ વાયુવાળા તટ ઉપર પધારીને ભગવાને ગોપીજનો સાથે રમણ

કર્ચુ. ૪૫.

શ્રીયમુનાજીના સ્વચ્છ અને કોમલ તટ ઉપર ભગવાને પધારીને-બરોબર પ્રવેશ કરીને-અને રમણને માટે રેતીના બંધ વિગેરેથી તે તટને અતિ કોમલ કરીને અનેક પ્રકારનાં ગોપીજનો સાથે રમણ કર્યું. હિમ-શીતલ-રેતી જેમાં છે એવા પ્રકારનો તે તટ હતો, અને તેથી તેની અંદર કોઈ પણ પ્રકારની ઉષ્ણતા ન હતી. બહારથી પણ ઠંડક હતી એમ શુકદેવજી 'તત્તરલાનન્દિ' શબ્દ વડે કહે છે. તે નદીના-શ્રીયમુનાજીના-તરલો, મોજાંઓ; તેથી તટ આનંદવાળો બન્યો હતો. અથવા તો જ્યારે 'તત્તરલાનન્દિકુમુદામોદવાયુના' એમ એક સમસ્ત પદ લેવામાં આવે ત્યારે તો 'તત્તરલાનન્દિ' એ વાયુનું વિશેષણ થશે અને તેનો અર્થ એવો થશે કે શ્રીયમુનાજી નાં મોજાંને લીધે આનંદવાળો વાયુ, કુમુદોનો-કમલોનો-આનંદવાળો સુગંધ. કમલોને આનંદ આપવાથી જ વાયુની ગતિ મંદ-ધીમી-હતી એમ શુકદેવજીએ વર્ણન કર્યું. વળી, વાયુ ઠંડો પણ હતો કારણ કે કમલોનો જલની સાથે સંબંધ હતો. આવા ત્રણ પ્રકારના-શીત, મંદ અને સુગંધિ-વાયુવાળો તટ હતો. મહાબંધોની અંદર વાયુની પણ જરૂર છે. આ પ્રમાણે ભગવાને ગોપીજનો સાથે અનેક પ્રકારના બંધોવાળું રમણ કર્યું અને ગોપીજનોને જાતસ્મરકેલિ બનાવ્યાં. ૪૫.

આના પછી જેમાં આઠ પ્રકારનાં આલિંગન વિગેરે છે, જેની અંદર ચેષ્ટાવાળો કામ વિગેરે છે એવા પ્રકારનું ભગવાનનું રસવિલાસચરિત્ર શુકદેવજી 'બાહુપ્રસાર' એ શ્લોકમાં વર્ણન કરે છે:

બાહુ-પ્રસાર-પરિરમ્ભ-કરાલ-કોરુ-નીવીસ્તનાલભન-નર્મ-નખાગ્ર-પાતૈઃ ।  
શ્વેલ્યાવલોક-હસિતૈર્બ્રહ્મસુન્દરીણામ્ ઉત્તમ્ભયન્ રતિપતિં રમયાંચકાર ॥૪૬॥

હાથ લાંબા કરવા; ભેટી પડવું; હાથ, વાળની લટો, જાંઘ, નીવી અને સ્તનનો સ્પર્શ કરવો; પરિહાસ વચનો બોલવાં; નખ અને દાંત વડે મારવું; પ્રસ્તોભનપૂર્વક જોવું અને હસવું-આ બધાથી વ્રજની સ્ત્રીઓના કામને વધારતા એવા ભગવાન ગોપીજનોને રમણ કરાવવા લાગ્યા. ૪૬.

દૂર ઉભી રહેલી ગોપીને સ્પર્શ કરવાને માટે અથવા તો અવયવનો સ્પર્શ કરવાને માટે ભગવાને પોતાના હાથ લાંબા કર્યાં. પછીથી ભગવાન (લજ્જા પામેલી) ગોપીને બલાત્કારથી પણ ભેટી પડ્યા. પછીથી ગોપીના હાથ, કેશની લટો, જાંઘ, નીવી અને સ્તનોનો ભગવાને સ્પર્શ કર્યો. કરનું આલભન એટલે ગોપીનો હાથ પકડવો; આ લીલાને પુરુષાપિતલીલા અથવા સમબંધ કહેવામાં આવે છે. આ પ્રમાણે ગોપીના કેશ ઉંચા કરવાને ભગવાને તેની વાળની લટોનો સ્પર્શ કર્યો.

બાહુબંધને માટે ભગવાને ગોપીની જાંઘનો સ્પર્શ કર્યો. રસ બરોબર પુષ્ટ થાય-જામે-એટલે વસ્ત્ર છોડવાને માટે ભગવાને ગોપીની નીવીનો સ્પર્શ કર્યો. પછી રસને પ્રકટ કરવાને માટે ભગવાને ગોપીના સ્તનોનો સ્પર્શ કર્યો અને પછી મર્દન કર્યું. આ પ્રમાણે કામશાસ્ત્રમાં પાંચ સ્પર્શોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. નર્મ એટલે કામનું સ્તંભન કરવાને માટે પરિહાસ કરનારાં વચનો. પછીથી નખાગ્રપાત-નખની આણીઓ મારવી-એટલે કામયુદ્ધનું નિરૂપણ કરનારાં નખ અને દાંતથી મારવું તે. જેમ સેનાનો વધ થતાં રાજા પોતે યુદ્ધમાં આગળ આવે છે તેમ નખ અને દાંત વડે મારવાથી શરીરના જુદા જુદા સ્થાનમાં રહેલો કામ પ્રકટ થાય છે. ક્વેલિ એટલે પ્રસ્તોભનાદિ ક્વેલિકા-ક્રીડા. ભગવાન્ ગોપીનું જે અવલોકન કરતા હતા અને જે હાસ્ય કરતા હતા તે પ્રસ્તોભનવાળું જ હતું. ભગવાનનાં અવલોકન અને હાસ્ય રસનું સ્થાપન કરનારાં હતાં.

આ પ્રમાણે ગોપીજનના શરીરના બાર અંગોમાં રહેલો બાર પ્રકારનો કામ પણ જાગૃત થયો એમ શુકદેવજી ‘વ્રજસુન્દરીશામુત્તમ્ભયન’-વ્રજની સુંદરીઓના કામને વધારતા-એ શબ્દોમાં કહે છે. સંયોગદશામાં જે કામ હોય છે તે રતિપતિ કહેવાય છે, જ્યારે વિરહદશામાં જે કામ હોય છે તે અગ્નિ કહેવાય છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનોમાં આદિદૈવિક કામને જાગૃત કરીને ભગવાને તેમને રમણ કરાવ્યું. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘રમયાંચકાર’ એમ પરસ્મૈપદી પ્રયોગ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે રમણનું ફલ ગોપીજનો ભોગવનારાં છે. ઝપમા શ્લોકમાં ‘રેમે’ એમ આત્મનેપદી પ્રયોગ છે અને તેનો ભાવ એ છે કે તે ફલ ભગવાને ભોગવ્યું છે. ભગવાને ગોપીજનોને કામરૂપ સુખ જ પ્રકટ કરી આપ્યું, નહિ કે તેમણે કામનો નાશ કરીને ગોપીજનોમાં વૈરાગ્યની ભાવના ઉત્પન્ન કરી. (ભગવાને પોતાના ઉદાર હાસને લીધે કાંતિવાળા કુંદ પુષ્પ જેવા દાંતોથી ગોપીજનોનો કામ ઉત્પન્ન કર્યો હતો. ગોપીજનોનો આ ઉપાધિભૂત કામ વિકારવાળો હતો છતાં વિકારો પણ ભગવાનનું સ્વરૂપ હોવાથી તે કામ વાસ્તવિક રીતે આદિદૈવિક જ હતો.) ૪૬.

આ પ્રમાણે સંયોગ શૃંગારનું ઉપપાદન કરીને વિપ્રયોગ શૃંગારનું ઉપપાદન કરવાને માટે શુકદેવજી ‘એવમ્’ એ શ્લોકમાં ગોપીજનોના માનનું-અભિમાનનું-વર્ણન કરે છે:

એવં ભગવતઃ કૃષ્ણાદ્ લબ્ધકામા મહાત્મનઃ ।

આત્માનં મેનિરે સ્ત્રીણાં માનિન્યોલ્પધિકં ભુવિ ॥૪૭॥

આ પ્રકારે મહાત્મા ભગવાન્ કૃષ્ણની પાસેથી ગોપીજનોએ પોતાનો

મનોરથ પ્રાપ્ત કર્યો, અને તેથી તેઓને અભિમાન થયું કે પૃથ્વી ઉપર તથા સ્ત્રીઓમાં અમે અધિક-શ્રેષ્ઠ-છીએ. ૪૭.

પહેલાં જણાવેલા પ્રકારે ગોપીજનોએ ભગવાન્ કૃષ્ણની પાસેથી પોતાનો મનોરથ પ્રાપ્ત કર્યો. ભગવાન્ એ સર્વ રસનું દાન આપવાને સમર્થ છે, અને કૃષ્ણ એ સદાનંદ ફલરૂપ છે. આ પ્રમાણે પોતાનો મનોરથ પૂર્ણ થતાં ગોપીજનો પોતાની જાતને જ પૂર્ણ માનવા લાગ્યાં, પણ ભગવાન્ પૂર્ણ છે અથવા તો ભગવાનને લીધે જ પોતે પૂર્ણ થયાં છે એમ માનવા લાગ્યાં નહિ.

શંકા- ભગવાને આ પ્રમાણે ગોપીજનોનો મનોરથ પૂર્ણ કરીને તેમને પૂર્ણ કેમ બનાવ્યાં? ગોપીજનોને ન્યૂન-હલકી કોટિનાં-જ રાખીને ભગવાને તેમનું સંરક્ષણ કેમ ન કર્યું?

સમાધાન- ઉપરની શંકાના સમાધાનમાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘મહાત્મન:’. ભગવાન્ મહાત્મા-મોટા જ આત્મા છે. અગાધ-ઊંડા જલની અંદર પ્રવેશ કરેલો માણસ ડુબતો નથી એમ નથી, તેમ ઊંડા જલની અંદર પડેલો ઘડો અપૂર્ણ રહે છે એમ નથી. વળી, ગોપીજનો પોતાની જાતને સ્ત્રીઓમાં તેમજ પૃથ્વીમાં બહુ શ્રેષ્ઠ માનવાં લાગ્યાં. અથવા તો પૃથ્વીમાં સ્ત્રીઓની અંદર પોતાની જાતને ગોપીજનો બહુ શ્રેષ્ઠ માનવા લાગ્યાં. આથી જ તેમને અભિમાન પણ થયું કે અમારા જેવી જગતમાં બીજી સ્ત્રીઓ નથી. તેથી ગોપીજનોને એવું અભિમાન થયું કે જો ભગવાન્ અમારી પ્રાર્થના કરશે તો જ અમે તેમને રસનું દાન કરીશું. આ પ્રમાણે માન ઈત્યાદિ જે ભગવાનના ધર્મો છે તે ગોપીજનોમાં આવ્યા. તેથી ગોપીજનો માનવા લાગ્યાં કે જેમ ભગવાન્ અમારી પ્રાર્થનાથી વશ થયા તેમ અમે પણ ભગવાનની પ્રાર્થનાથી ભગવાનને વશ થઈશું. ગોપીજનોનો આ પ્રકારનો ભાવ કેવલ રસના પોષણને માટે જ છે, દોષરૂપ નથી, કારણ કે તેમનામાં આ ભાવ-અભિમાન ભગવદ્ભાવથી થયો છે. ૪૭.

ભગવાન્ તો ગોપીજનોની સાથે એક થઈને જ રસનું દાન કરવાના હોવાથી બહારથી તિરોહિત થઈ ગયા એમ શુકદેવજી ‘તાસામ્’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

તાસાં તત્ સૌભગમદં વીક્ષ્ય માનં ચ કેશવઃ ।

પ્રશમાય પ્રસાદાય તત્રૈવાન્તરધીયત ॥૪૮॥

ગોપીજનોનાં તે સૌભાગ્યમદ અને અભિમાન જોઈને, તેનું નિવારણ કરવાને તથા કૃપાનું દાન કરવાને ભગવાન્ કેશવ ત્યાં જ અંતર્ધાન થઈ ગયા. ૪૮.

ગોપીજનોને પોતાનામાં જે પૂર્ણતા જણાવા લાગી અને તેથી તેમનામાં જે

અભિમાન ઉત્પન્ન થયું તે દોષરૂપ નથી; પણ સ્ત્રીઓમાં અને પૃથ્વી ઉપર અમે શ્રેષ્ઠ છીએ એ જે જ્ઞાન ગોપીજનોને થયું તે દોષરૂપ છે. શુકદેવજીએ શ્લોકમાં તેનો અનુવાદ કર્યો અને તે દોષ દૂર કરવાને માટે ભગવાન્ તિરોહિત થઈ ગયા એમ વર્ણન કર્યું.

ગોપીજનોના તે-પ્રસિદ્ધ, પહેલાંના શ્લોકમાં વર્ણવવામાં આવેલા-અમે સર્વથી શ્રેષ્ઠ છીએ એ પ્રકારના સૌભાગ્યમદને ભગવાને જોયો અને તે મદને દૂર કરવાને માટે ભગવાન્ અંતર્ધાન થઈ ગયા.

શંકા-ગોપીજનોએ ભગવાનની સાથે રમણ કર્યું તેથી જ તેમને સૌભાગ્યમદ થયો; એટલે ગોપીજનોનો આ મદ પણ ભગવાને જ કરેલો છે. તો પછી પોતે જ ઉત્પન્ન કરેલા મદને લીધે ભગવાન્ કેમ તિરોહિત થઈ ગયા?

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ગોપીજનોનું માન જોઈને તેમના ઉપર કૃપા કરવાને માટે ભગવાન્ ત્યાં જ અંતર્હિત થઈ ગયા. ગોપીજનોને કેવલ મદ થયેલો હતો એટલું જ નહિ પણ તેમને અભિમાન પણ થયું હતું, અને આ અભિમાન રમણમાં પ્રતિબંધ કરનારું હોવાથી તેને દૂર કરવાને માટે ભગવાનનું તિરોધાન આવશ્યક હતું. માન એ આંતર-શરીરની અંદર રહેલો-ધર્મ છે એટલે ભગવાને બહારથી અંતર્હિત થઈને ગોપીજનોની અંદર પ્રવેશ કર્યો. જે, ખરેખર, અશક્ત છે તે બહારથી દૂર કરવાને માટે યત્ન કરે છે. (અને તેથી જ લૌકિક કામી પુરુષ અશક્ત હોવાથી બહારથી દૂર કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે.) મૂલ શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનો અર્થ પૂર્ણતારૂપી સ્વધર્મ-ભગવાનનો ધર્મ-કરવાનો છે. (એટલે કે ગોપીજનોનાં માન અને પૂર્ણતા જોઈને ભગવાન્ તિરોહિત થઈ ગયા.) તેથી પહેલાં ગોપીજનોની અંદર પ્રવેશ કરીને ભગવાન્ તેમની પ્રાર્થના કરીને તેમને વશ કરશે, અને પછીથી ગોપીજનોની ૨૮મા અધ્યાયમાં આવેલી પ્રાર્થનાને લીધે ભગવાન્ પોતે ગોપીજનોને વશ થશે. આ પ્રકારના પ્રસાદનું દાન કરવાને માટે ભગવાન્ તિરોહિત થઈ ગયા.

‘તત્રૈવ’-ત્યાં જ-ગોપીજનોની અંદર-ગોપીજનોના હૃદયમાં-અથવા તો ગોપીજનોના યૂથોની વચમાં. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘એવ’ પદ છે તેનો અર્થ એવો છે કે જ્યાં મદ અને અભિમાન નથી ત્યાં ભગવાને બહાર પણ સ્થિતિ કરી. (યોજનાકાર લાલૂભટ્ટના અભિપ્રાયે ભગવાનના તિરોધાનમાં ત્રીજો પણ પક્ષ છે; અને તે એ કે ભગવાન્ વ્યાપિવૈકુંઠમાં ગયા અને લક્ષ્મીજીની સાથે તેટલો સમય તેમણે રમણ કર્યું.)

શંકા-ભગવાને ગોપીજનોના આ મદ અને માનનો પણ નાશ કરવો જોઈતો ન હતો. ભગવાને ગોપીજનોની ઉપેક્ષા કેમ ન કરી?

સમાધાન- ઉપરની શંકાના સમાધાનમાં શુક્રદેવજી કહે છે કે ભગવાન્ ‘કેશવ’ છે. ‘કેશવ’ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રકારે થાય છે: ‘ક’ (બ્રહ્મા) અને ‘ઈશ’ (મહાદેવ) તે ‘કેશ:’ તેમને ‘વ’ (મોક્ષરૂપી સુખ) જેમની પાસેથી મળે તે ‘કેશવ’. અર્થાત્ ભગવાન્ બ્રહ્મા અને મહાદેવને મોક્ષ આપે છે. જેમ ભગવાને બ્રહ્માના રજોગુણને દૂર કરીને તેમને મોક્ષ આપ્યો, જેમ ભગવાને શિવના તમોગુણનો નાશ કરીને તેમને મુક્તિ આપી, તેમ આ ગોપીજનોના પણ મદ અને માનનો નાશ કરીને તેમને વિપ્રયોગાનુભવરૂપી મુક્તિ આપવાને માટે ભગવાન્ તિરોહિત થઈ ગયા.

ભગવાનનો આ તિરોભાવ વાચિક અથવા માનસિક ન હતો પણ કાયિક-સ્વરૂપનો-હતો, કારણ કે ગોપીજનોનો પ્રથમ અધિકાર છે. ગોપીજનો તામસ છે એટલે તેમનો અધિકાર પ્રથમ છે. તામસ ભક્તો હંમેશા ભગવાનના સ્વરૂપમાં જ નિષ્ઠા રાખે છે; એટલે આવા તામસ ભક્તોને ભગવાનના વાચિક કે માનસિક તિરોધાનથી દુઃખ થતું નથી અને તેથી વિરહનો અનુભવ થતો નથી, પરંતુ ભગવાનના સ્વરૂપના તિરોધાનથી તેમને દુઃખ થાય છે અને વિરહનો અનુભવ પણ મળે છે. આ રીતે ગોપીજનોને વિરહનો અનુભવ કરાવવાને માટે જ ભગવાન્ સ્વરૂપતઃ તિરોહિત થઈ ગયા. (પ્રકાશકાર શ્રીપુરુષોત્તમજી પ્રથમાધિકારનો અર્થ બીજી રીતે સમજાવે છે. પ્રથમ અધિકાર એટલે સર્વાત્મભાવના આરંભકાળની દશા. ગોપીજનોની દશા સર્વાત્મભાવના આરંભકાળની હતી, કારણ કે ગોપીજનોને જે આ ભાવ-મદ અને માન-થયો તે સર્વાત્મભાવની આરંભદશામાં જ સંભવી શકે છે, પૂર્ણ દશામાં નહિ. આ પ્રમાણે ભગવાને બહારથી તિરોહિત થઈને રસાત્મક સ્વરૂપે ગોપીજનોના હૃદયમાં સ્થિતિ કરી એમ ફલિત થાય છે.) ૪૮.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં  
શ્રીમદ્વલ્લભદીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં  
બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલ પ્રકરણના ઐશ્વર્ય નિરૂપક  
૨૬મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.





## ॥ अध्याय सत्यावीसमो ॥

ભગવાનના તિરોધાનથી ગોપીજનોની

ભગવલ્લીલામાં તત્પરતા, ભગવાનની શોધ અને આન્તરલીલા.

સ્વાનન્દસ્થાપનાર્થાય લીલા ભગવતા કૃતા ।

સ બાહ્યો જનિતઃ પુષ્ટો યથાન્તર્નિવિશેત્ પુનઃ ॥કા.૧॥

તદર્થ ભગવાંસ્તાસુ લીલયા સહિતોઽવિશેત્ ।

(શ્રીમહાપ્રભુજી પ્રથમ પાછલા અધ્યાયનો સાર આપે છે.) ગોપીજનોમાં સ્વરૂપાત્મક આનંદનું સ્થાપન કરવાને માટે ભગવાને છઠ્ઠીસમા અધ્યાયમાં રમણ કર્યું. તે આનંદાત્મક રસ બહાર પ્રકટ થયો; તે આનંદ અંદર પુષ્ટ થઈને દેહ, ઈન્દ્રિયો વિગેરેમાં ફરીથી પ્રવેશ કરે તેટલા માટે ભગવાને ગોપીજનોમાં લીલાસહિત પ્રવેશ કર્યો. (જગતમાં કામથી ઉત્પન્ન થતો આનંદ અમુક સમયે જ ઉત્પન્ન થાય છે, અલ્પ સમય જ રહે છે અને પછી નાશ પામે છે, કારણ કે તે વિકૃત છે. પરંતુ ભગવાનની લીલામાં કામલીલાથી જે આનંદ પ્રકટ થાય છે તે પણ ભગવાનનું સ્વરૂપ જ છે. ભગવાનનું સ્વરૂપ અવિકૃત છે તેથી સ્વરૂપાત્મક આનંદ પણ અવિકૃત છે. તેથી આ આનંદ હંમેશાં જ રહે છે, કોઈ દિવસ નાશ પામતો નથી, સંયોગાવસ્થામાં તે આનંદ બહાર પ્રકટ થાય છે, વિરહાવસ્થામાં તે અંદર પ્રકટ થાય છે.) ૧૧।

ચત્વારોઽત્ર નિરૂપ્યાર્થાઃ રસાસક્તિર્હરઃ ક્રિયાઃ ॥કા.૨॥

ગર્વાભાવશ્ચ તત્રાદૌ નિરૂપ્યન્તે ક્રમાત્ ત્રયઃ ।

ઉદ્દેશતો લક્ષણાતઃ ફલતશ્ચ યથાયથમ્ ॥કા.૩॥

(હવે શ્રીમહાપ્રભુજી આ અધ્યાયનો સાર આપે છે.) આ અધ્યાયમાં, અથવા તો આ વિપ્રયોગાવસ્થામાં, અથવા તો આંતર લીલામાં ચાર વિષયોનું નિરૂપણ કરવાનું છે: ૧. રસાસક્તિ, ૨. ભગવાનની ક્રિયા, ૩. ગર્વનો અભાવ અને ૪. ભગવાનના ગુણોનું ગાન. તેમાં પ્રથમ રસાસક્તિ, ભગવત્ક્રિયા અને ગર્વનો અભાવ એ ત્રણ વિષયનાં ઉદ્દેશ, લક્ષણ અને ફલ આપીને ક્રમસર વર્ણન કરવામાં આવે છે. (પહેલા ત્રણ શ્લોકોમાં રસાસક્તિ, ભગવત્ક્રિયા અને ગર્વાભાવ એ ત્રણનો ઉદ્દેશ-સંક્ષિપ્ત વર્ણન-છે. આ અધ્યાયમાં ચતુર્થ વિષય-ગુણગાન-નો ઉદ્દેશ છે, પરંતુ તેનાં લક્ષણ અને ફલ આપવામાં આવ્યાં નથી. રસાસક્તિનું લક્ષણ ભગવાનની શોધખોળ કરવી તે છે; ભગવાનની ક્રિયાનું લક્ષણ 'કૃષ્ણાનું અનુકરણ કરનાર એક ગોપીજને પૂતનાનું અનુકરણ કરનાર અન્ય ગોપીજનનું સ્તનપાન કર્યું'

(૧૦૧૨૭૧૫) આ અને આવા બીજા શ્લોકોમાં આપવામાં આવેલું છે; ગર્વના અભાવનું લક્ષણ ‘આ સ્ત્રીએ તો, ખરેખર, ભગવાન્ હરિની આરાધના કરી છે’ (૧૦૧૨૭૧૮) ઈત્યાદિ શ્લોકોમાં આપવામાં આવેલું છે, કારણ કે ત્યાં ગોપીજનો પોતાની સપત્નીઓને-શોક્યને-તેમના ભાગ્યને માટે અભિનંદન આપે છે. ભગવાનની શોધખોળ કરવાનું ફલ તેમનાં ચરણોનું દર્શન છે; ભગવાનની લીલાનો ગોપીજનોમાં જે આવેશ થયો છે તેનું ફલ એ કે ગોપીજનો ભગવાનમાં દોષનો આરોપ કર્યા વિના ભગવાને લક્ષ્મીજી અને અન્ય સ્ત્રી સાથે જે રમણ કરેલું હતું તેનું વર્ણન કરે છે; ગર્વના અભાવનું ફલ એ કે ભગવાન્ વિના બીજા બધા પદાર્થોને ભૂલીને ભગવાનને મેળવવાને માટે જ કરવામાં આવેલો ગોપીજનોનો પ્રયત્ન. ભગવાનના ગુણોના ગાનનું વિશેષ વર્ણન આવતા-અઠાવીસમા-અધ્યાયમાં કરવામાં આવશે. ગુણગાનનું સામાન્ય વર્ણન આ અધ્યાયના છેલ્લા શ્લોકમાં કરવામાં આવેલું છે.) ૩.

સપ્તવિંશે તિરોધાનાદ્ લીલાન્વેષણતત્પરાઃ ।

રસમ્ અન્તર્ગતં ચક્રુઃ ગોપિકા ઈતિ ઙ્ખ્યતે ॥કા.૪॥

ભગવાન્ તિરોહિત થઈ જવાથી ગોપીજનો ભગવાનની લીલામાં તત્પર થયાં અને તેમની શોધખોળ કરવાને માટે પ્રવૃત્ત થયાં, અને પછીથી તેમણે-ગોપીજનોએ-રસનો અનુભવ અંદર કર્યો એટલે કે તેમણે આંતર લીલા કરી. આ બાબત સત્તાવીસમા અધ્યાયની અંદર વર્ણન કરવામાં આવે છે. (ભગવાને જે આંતર લીલા કરી તેનું વર્ણન ગયા અધ્યાયમાં કરવામાં આવ્યું છે; ગોપીજનોએ જે આંતર લીલા કરી તેનું વર્ણન આ અધ્યાયમાં કરવામાં આવે છે.) ૪.

પાછલા અધ્યાયને અંતે એમ કહેવામાં આવ્યું કે ભગવાન્ તિરોહિત થઈ ગયા. ભગવાનના તિરોભાવને લીધે પછીથી ગોપીજનો કે જેમનું ચિત્ત રસમાં આસક્ત થઈ ગયેલું હતું તેમને પ્રથમ એકદમ ઘણો તાપ થયો એમ શુકદેવજી ‘અન્તર્હિતે ભગવતિ’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

॥શ્રીશુક ઉવાચ ॥

અન્તર્હિતે ભગવતિ સહસૈવ વ્રજાઙ્ગનાઃ ।

અતપ્યંસ્તમ્ અચક્ષ્ણાણાઃ કરિણ્ય ઈવ યૂથપમ્ ॥૧॥

શુકદેવજી કહે છે :- જેમ હાથણીઓ હાથીને ન જોતાં તાપ પામે છે તેમ ગોપીજનો પણ, ભગવાન્ અંતર્ધાન થયા કે તરત જ, કલેશ પામવા લાગ્યાં. ૧.

છ ગુણો ઉપર ઐશ્વર્ય ભોગવતા એવા ભગવાને ગોપીજનોના હૃદયમાં

પ્રવેશ કર્યો, અને જ્યાં સુધી ગોપીજનોએ ભગવાનનું પોતાના હૃદયમાં અનુસંધાન ન કર્યું ત્યાં સુધી સહસા જ-એકદમ-તાપ પામવા લાગ્યાં. ગોપીજનોએ પોતાના હૃદયમાં ભગવાનનો વિચાર એકદમ ન કર્યો તેનું કારણ શુકદેવજી ‘વ્રજંગનાઃ’ એ પ્રમાણે આપે છે. (ગોપીજનો વ્રજની સ્ત્રીઓ હતી, અને વ્રજની સ્ત્રીઓને મન તો ભગવાનનું બહાર પ્રકટ થયેલું સ્વરૂપ જ મુખ્ય હતું એટલે તેમને પોતાના હૃદયમાં વિરાજતા પ્રભુનો વિચાર એકદમ આવી શકે નહિ.)

ગોપીજનોને તાપ થયો તેનું કારણ ‘તમચક્ષાણાઃ’-તેમને એટલે ભગવાન ને ન જોતાં. ગોપીજનોમાં કામરૂપી તાપ સહજ જ સ્થિતિ કરીને રહેલો છે, અને તે ભગવાનનાં દર્શન, સ્પર્શ ઈત્યાદિથી શાંત થાય છે. પરંતુ પહેલાં ભગવાનનાં જે બહાર દર્શન થતાં હતાં તે જ્યારે ગોપીજનોને ન થયાં ત્યારે તેમને જે તાપ થાય તે તો યોગ્ય જ છે.

ગોપીજનોને ભગવાનનો સ્પર્શ જ મુખ્ય છે એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી ‘કરિણ્ય ઈવ’-હાથણીઓની માફક-એમ હાથણીઓનું દષ્ટાંત આપે છે. ‘યૂથપ’ એટલે મોટો મત્ત હાથી. વાત્સ્યાયન મુનિ કહે છે કે ‘રમણ તો હાથી જ જાણે છે’; અને ‘રતિમાં વિમર્દમાં હાથી સમર્થ છે’ એ પ્રમાણે વિવરણ પણ કરવામાં આવ્યું છે. વનમાં સિંહો ઘણા હોય છે, એટલે જ્યારે હાથણીઓ યૂથપતિ હાથીને જોતી નથી ત્યારે તે એકલી પડી જવાથી વનમાં સિંહોથી બીએ છે. તે જ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનો ભગવાનને જોતાં નથી ત્યારે તેઓ એકલાં પડી જવાથી ભગવાનના અવતારનો સમય સમાપ્ત થયો છે એ જાણીને ભયભીત બની જાય છે અને કલેશ કરવા મંડી પડે છે. અર્થાત્ સિંહને લીધે જેમ હાથણીઓ એકલી પડી જવાથી બીએ છે તેમ ગોપીજનો એકલી પડી જવાથી ભગવાનના અવતારની સમાપ્તિના કાલથી બીએ છે. ૧.

જ્યારે ગોપીજનોના તાપે તેમની અંદર પ્રવેશ કરવાની ઈચ્છા કરી એટલામાં તો ભગવલ્લીલા ગોપીજનોની અંદર પ્રવેશ કરીને અને તાપને દૂર કરીને પોતે જોતે જ પ્રકટ થઈ એમ શુકદેવજી ‘ગત્યાનુરાગ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં કહે છે:

ગત્યાનુરાગ-સ્મિત-વિભ્રમેક્ષિતૈઃ મનોરમાલાપ-વિહાર-વિભ્રમૈઃ ।

આક્ષિપ્તચિત્તાઃ પ્રમદા રમાપતેઃ તાસ્તા વિચેષ્ટા જગૃહુસ્તદાત્મિકાઃ ॥૨॥

પ્રભુની કાયિક ગતિ, સ્નેહપૂર્વક સ્મિત અને વિલાસવાળાં કટાક્ષ, મનોહર આલાપ, અને વિહાર વિલાસ-આ બધાંથી આકર્ષાયેલું છે ચિત્ત જેમનું એવાં અને જેમની અંદર ભગવાનની સ્ફૂર્તિ થઈ છે એવાં ગોપીજનો લક્ષ્મીજીના પતિની જુદી

જુદી લીલાનું અનુકરણ કરવા લાગ્યાં. ૨.

તે ગોપીજનો ભગવાનના કાવિક, વાચિક અને માનસિક વ્યાપારોથી વશ થઈ ગએલાં હતાં અને તેથી તેઓ ભગવદ્ભાવને પ્રાપ્ત કરીને ભગવાનની જુદી જુદી-કાવિક, વાચિક અને માનસિક-ક્રિયાઓ કરવા લાગ્યાં. પ્રથમ શુકદેવજી ‘ગત્યા’ એ પદ વડે ભગવાનની કાવિક ચેષ્ટાનું નિરૂપણ કરે છે. ભગવાનની ગતિથી-શરીરની ચેષ્ટાથી-ગોપીજનો વશ થઈ ગએલાં હતાં. ત્યાર પછી ભગવાનની ઈન્દ્રિયો અને મનની ક્રિયાથી ગોપીજનો વશ થએલાં હતાં એમ ‘અનુરાગ’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં શુકદેવજી કહે છે. અનુરાગ એટલે માનસ સ્નેહ; માનસ સ્નેહવાળું સ્મિત; સ્મિતનો વિલાસ ભગવાનના ભજનમાં રહેલી નિષ્ઠાનો ત્યાગ કરાવનાર છે. (સ્મિત એ માયારૂપ છે તેથી તે ભક્તોનો ભગવાનનાં ભજનમાં જે ભાવ રહેલો હોય છે તેનો ત્યાગ કરાવે છે અને ગોપીજન જેવા ભક્તોને પ્રમદાભાવ ઉત્પન્ન કરાવીને માન વિગેરે ભાવ ઉત્પન્ન કરે છે.) જે આ પ્રમાણે ન માનીએ તો રસાનુભવરૂપી જ્ઞાન જ પ્રકટ થાય. (અથવા તો-જો ભગવાન સ્મિત કર્યા વિના ઈક્ષણ કરે તો ભગવાનનું ઈક્ષણ જ્ઞાનરૂપ હોવાથી ગોપીજનોમાં જ્ઞાન જ ઉત્પન્ન થાય.) તેથી ભગવાનના સ્મિતથી-મંદ હાસ્યથી-ગોપીજનો જરાક વિમોહિત થયાં. (પહેલાં-છવ્વીસમા અધ્યાયમાં ૪૩મા શ્લોકમાં-ભગવાનના ઉદાર હાસ્યની વાત આવી ગઈ છે, તે છતાં અહિં ફરીથી સ્મિતની વાત કહેવામાં આવી એટલે અહિં સ્મિતનો અર્થ મંદ હાસ્ય એ પ્રમાણે કરવો ઘટે છે.) ગોપીજનોને ન હતું કેવલ બહારનું અનુસંધાન, કે ન હતું કેવલ અંદરનું અનુસંધાન; અર્થાત્ ગોપીજનોની કેવલ ભગવદ્દર્મમાં નિષ્ઠા ન હતી, તેમજ કેવલ ભગવત્સ્વરૂપમાં પણ નિષ્ઠા ન હતી, પરંતુ હૃદયમાં સ્ફુરેલા ભગવાનમાં અને તેમના ધર્મોમાં ગોપીજનોની નિષ્ઠા હતી. (જો ગોપીજનોને કેવલ બહારનું અનુસંધાન થાય તો ભગવાનથી અમારો વિરહ થયો છે એ જ્ઞાનથી તેમને ક્લેશ જ થાય; જો તેમને અંદરનું અનુસંધાન થાય તો ભગવાને લીલાસહિત અમારા હૃદયમાં પ્રવેશ કર્યો છે એ જ્ઞાનથી તેમને સુખ જ થાય. પરંતુ આ ગોપીજનોને તો ક્ષણે ક્ષણે જુદા જુદા ભાવો થતા હતા, બહાર ભગવાનના વિરહથી દુઃખ અને હૃદયમાં ભગવાનના સમાગમથી સુખ એ પ્રમાણે અંનેય ભાવો ગોપીજનો અનુભવતાં હતાં. આ ઉપરથી એટલું સિદ્ધ થાય છે કે ગોપીજનોને તદ્દન બહારની સ્ફૂર્તિ હતી એમ પણ નહિ, તેમજ તદ્દન અંદરની સ્ફૂર્તિ હતી એમ પણ નહિ.)

અનુરાગપૂર્વક જે સ્મિત તે અનુરાગસ્મિત; વિભ્રમ એટલે આળસ નાખીને વળવું વિગેરે વિલાસ; અનુરાગસ્મિતવાળો વિભ્રમ; અનુરાગસ્મિતવિભ્રમવાળાં

ઈક્ષણો. આ બધાંય કટાક્ષો છે.

ભગવાને પોતાની વાણીની ક્રિયાથી પણ ગોપીજનોને વિમોહ કર્યો એમ ‘મનોરમાલાપ’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં શુકદેવજી કહે છે. મનને જે રમાડે અથવા મનની અંદર જે રમે તે મનોરમ કહેવાય; આવો આલાપ-ભગવાનનાં ગુહ્ય ભાષણો. કેવલ વાક્ય ચિત્તને આકર્ષતું નથી એટલે અને ‘તું મારી પ્રાણપ્રિયા છું’ ઈત્યાદિ વાક્યોના પ્રામાણ્યનો નિર્ણય સ્ત્રીઓ આગળ બીજે પ્રકારે થતો નથી એટલે શરૂઆતમાં જ ‘મનોરમ’ પદ વડે ફલનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. ભગવાનનાં વાક્યો ખરેખર સુખ આપવાને માટે જ છે એટલે તે જ વખતે ભગવાનનાં વાક્યો સુખ આપે છે. ભગવાનના તે આલાપો કોઈક વખત બંધ વિગેરેનું જ્ઞાન આપનારા હતા અને તેથી લીલામાં ઉપયોગી થઈ પડે એવા હતા એમ ‘વિહાર’ એ શબ્દમાં શુકદેવજી કહે છે. તેમાં-વિહારમાં-પણ વિલાસો-બીજા અવાંતર ભેદો-છે; જેમ ઉત્તાનક બંધમાં ગ્રામ્ય વિગેરે વિલાસો છે તેમ અહિં વિહારમાં પણ અનેક પ્રકારના વિલાસો હતા. ભગવાનની તામસી, રાજસી અને સાત્ત્વિક એમ ત્રણ પ્રકારની પહેલાં કરેલી ક્રિયાઓથી ગોપીજનોનું ત્રણ પ્રકારનું ચિત્ત પણ આકર્ષાયું એટલે ગોપીજનો આક્ષિપ્તચિત્તા થયાં; તેથી તેમને તાપ ન લાગ્યો એમ ભાવ છે.

(ગોપીજનોને બહારનું અને અંદરનું જે અનુસંધાન થતું ન હતું તેનું કારણ તેમનો ઉત્કટ રસભાવ હતો, અને અહિં આ ઉત્કટ રસભાવને મદ કહેવામાં આવ્યો છે. તેથી ગોપીજનો જે પ્રભુની લીલાનું અનુકરણ કરે છે તે યોગ્ય છે એમ ભાવ છે. વળી,) ‘પ્રમદા:’-જેમને સ્વભાવથી જ ઘણો મદ છે તે સ્ત્રીઓ પ્રમદા કહેવાય છે, નહિ તો દાસ્યભાવથી તે ભ્રષ્ટ થાય નહિ. (આ પ્રમાણે ગોપીજનોનું ચિત્ત આકર્ષાએલું હોવાથી તેઓ પ્રમદા બન્યાં હતાં અને વળી સ્વભાવથી પણ પ્રમદા હતાં.) કેવલ ભગવાનની ગોચારણાદિ લીલા ગોપીજનોને ઉપયોગની ન હતી અને હમણાં તેનો અનુભવ પણ થએલો ન હતો-કારણ કે થોડી જ જ્ઞાણ પહેલાં ભગવાનની શૃંગારમય લીલાનો જ ગોપીજનોને અનુભવ થએલો હતો-એટલે ‘રમાપતિ’-લક્ષ્મીજીના પતિ-ની લક્ષ્મીજીની સાથેની જે શૃંગારપ્રધાન વિલાસરૂપ ચેષ્ટાઓ હતી તેનું તેમણે તે સમયે અનુકરણ કર્યું. એક એક ગોપીજનની પણ બહુ ચેષ્ટાઓ હતી એટલે મૂલ શ્લોકમાં ‘તાસ્તા:’ એ પ્રમાણે ચેષ્ટાઓનું વિશેષણ મૂકવામાં આવ્યું છે. ‘તાસ્તા:’ એટલે અનેક પ્રકારની.

શંકા- ગોપીજનો ભગવાનની દાસીઓ હતી, એટલે તેઓ ઈશ્વરના ધર્મોનું અનુકરણ કરી શકે નહિ.

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદાત્મિકાઃ’ ભગવાન જ જેમના આત્માને વિષે લીલા કરનાર તરીકે સ્ફૂરે છે તે ‘તદાત્મિકાઃ’ કહેવાય છે. તેથી ભગવલ્લીલાનું અનુકરણ ગોપીજનોના તાપનો નાશ કરનાર છે એમ સંક્ષેપમાં કહેવામાં આવ્યું છે. અહિં ભગવાનની શૃંગારલીલાનું જ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. આ લીલાનું સવિસ્તર વર્ણન આગળ ઉપર શુકદેવજી કરશે, અને અમે પણ તે તે લીલાના ક્રમનો હેતુ કહીશું. ૨.

પહેલાં ગોપીજનોએ ભગવાનના ધર્મોનું ગ્રહણ કર્યું; અને પછીથી ભગવાનના સ્વરૂપનું ગ્રહણ કર્યું એમ શુકદેવજી ‘ગતિસ્મિત’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

ગતિ-સ્મિત-પ્રેક્ષણ-ભાષણાદિષુ પ્રિયાઃ પ્રિયસ્ય પ્રતિરૂઢમૂર્તયઃ ।

અસાવહં ત્વિત્યબલાસ્તદાત્મિકાઃ ન્યવેદિષુઃ કૃષ્ણ-વિહાર-વિભ્રમાઃ ॥૩૧॥

પ્રિયનાં-ભગવાનનાં-ગતિ, સ્મિત, પ્રેક્ષણ, ભાષણ વિગેરેમાં પોતાના સ્વરૂપનું આરોપણ કરીને, તદાત્મક થએલાં તે અબલા પ્રિયાઓ કૃષ્ણની માફક વિહાર અને વિલાસ કરતાં ‘હું કૃષ્ણ છું’ એમ નિવેદન કરવા લાગ્યાં. ૩.

જ્યારે ભગવાનના ધર્મો ગોપીજનોમાં આવ્યા ત્યારે ગોપીજનોમાં તેમના પોતાના ધર્મો અને ભગવાનના ધર્મો એમ બે વિરુદ્ધ પ્રકારના ધર્મો પ્રાપ્ત થાય. આ વિરોધ દૂર કરવાને માટે ગોપીજનોએ પોતાના ધર્મોનો ભગવાનમાં આરોપ કર્યો. શરીર, વાણી, મન અને દષ્ટિ એ ચારના ચાર મુખ્ય ધર્મો છે. તે બધાય ધર્મોમાં આરોપિત થઈ છે મૂર્તિ જેમની એવાં ગોપીજનોઃ અર્થાત્ ગોપીજનોએ પોતાના સ્વરૂપનો આરોપ ભગવાનના બધાય ધર્મોમાં કર્યો (અને ભગવાનના સ્વરૂપમાં પોતાના ધર્મોનો આરોપ કર્યો, અને આનું નામ જ ભગવાનના સ્વરૂપનો પરિગ્રહ.) જો આ પ્રમાણે ન થાય તો એક બીજાના ધર્મોનો અભિનિવેશ થાય નહિ, અને તેથી વિલાસ સારી રીતે થઈ શકે નહિ. આ જ વાત શુકદેવજી ‘ગતિસ્મિત’ વિગેરે શબ્દોમાં કહે છે. ગતિ એ શરીરની ક્રિયા છે, સ્મિત એ મનની ક્રિયા છે, પ્રેક્ષણ-જોવું-એ ચક્ષુરિન્દ્રિયની ક્રિયા છે, અને ભાષણ-બોલવું-એ વાણીની ક્રિયા છે. આ બધા જેટલા બંધ વિગેરે વિભ્રમો છે તે રતિરૂપ જ છે. પ્રિય-ભગવાન-ના સંબંધવાળાં તે બધાય વિભ્રમોમાં ગોપીજનો પોતે પ્રિયરૂપ થઈને-ભોગાવસ્થાને જ પ્રાપ્ત થઈને-વિપરીત થયાં. વાત્સ્યાયન મુનિ કહે છે કે ‘રસ વધે ત્યારે સ્ત્રીઓ પુરુષ થાય છે.’ આથી જ ગોપીજનો પોતે ભગવાનની પ્રિયા થવાને યોગ્ય હતાં છતાં પણ તેમની મૂર્તિ-સ્વરૂપ-પ્રતિરૂઢ થઈ, વિપરીત પ્રકારે આરોપિત થઈ; અર્થાત્ ભગવાનના ધર્મોમાં જ્યારે ગોપીજનોના સ્વરૂપનો આરોપ થયો ત્યારે તેઓ ભગવાનની માફક

ક્રિયા કરવા લાગ્યાં; તે વખતે તેમને પોતાનું ભાન ન હતું અને એમ માનતાં હતાં કે આ બધું અમારા પ્રિય પ્રભુ જ કરે છે. તેમાં પણ જે ગોપીજનોથી ભગવાન પહેલાં થોડે જ અંતરે હતા તે ગોપીજનોએ જ્યારે ભગવાન વિષે પ્રશ્ન કર્યો ત્યારે ભગવાન તિરોહિત થઈ ગયા છે એ બાબતનું તેમને જ્ઞાન ન હોવાથી તે ગોપીજનો જ પોતાના પ્રશ્નનો ઉત્તર ‘પેલા કૃષ્ણ’, ‘હું કૃષ્ણ’ એ પ્રમાણે આપવા મંડી પડ્યાં. અથવા તો તે ગોપીજનો કહેવા લાગ્યાં કે જે પ્રભુની શોધ કરવામાં આવે છે તે આ રહ્યા, હું.

બીજી સ્ત્રીઓને સમજાવવા માટે રમતમાં જેમ નટ બીજો બનાવટી વેષ ધારણ કરીને પણ બોલે છે તેમ આ ગોપીજનો બોલતાં નથી, પરંતુ પોતે જ સ્વાભાવિક રીતે જ બોલે છે એમ શુકદેવજી ‘અબલાઃ’ એ પદમાં કહે છે. સ્ત્રીઓ અબલા છે; તેમનામાં ભગવાનના સ્વરૂપને પ્રકટ કરવાને માટે જે બલ-શક્તિ-જોઈએ તે નથી. સ્ત્રી અને પુરુષ એ બે વચ્ચેનો ભેદ તો સ્પષ્ટ જ છે. ‘પેલા કૃષ્ણ’, ‘હું કૃષ્ણ’ એ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનો કહે ત્યારે તો તે બીજાં બધાંને છેતરે છે એમ લાગે, તો તેના સમાધાનમાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદાત્મિકાઃ’. અર્થાત્ ગોપીજનો પોતે જ ભગવદ્રૂપ થયાં છે એટલું જ નહિ, પરંતુ તેમના ધર્મો પણ ભગવદ્ધર્મ થયા છે. કૃષ્ણના જેવો વિહાર-શરીર, વાણી અને મનનો વ્યાપાર-વિભ્રમ એટલે શરીર, વાણી અને મનના વ્યાપારમાં આવેલા અવાંતર વિલાસ. કૃષ્ણના જેવા વિહાર અને વિભ્રમ છે જે ગોપીજનોનાં તે ‘કૃષ્ણવિહારવિભ્રમાઃ’. ૩.

આ પ્રમાણે ગોપીજનોને થએલો તાપ, તેમનામાં પ્રવેશ થએલી ભગવાનની લીલા અને ભગવાનના સ્વરૂપનો તેમણે કરેલો પરિગ્રહ-આ ત્રણનું સંક્ષેપમાં વર્ણન કરવાથી ગોપીજનોમાં રસાસક્તિ, ભગવાનની ક્રિયા અને ગર્વનો અભાવ વિગેરેનો સંબંધ થયો એમ કહીને, પ્રથમ પોતાનો તાપ દૂર કરવાને માટે ગોપીજનો ભગવાનની શોધ કરવા લાગ્યાં એમ શુકદેવજી આ શ્લોકમાં કહે છે. સત્વ, રજસૂ અને તમસૂ એ ત્રણ ગુણોની માફક તાપ, લીલા અને ભગવત્સ્વરૂપ એ ત્રણ એક બીજાને દબાવીને ભગવાનની ઈચ્છાથી પ્રકટ થાય છે એટલે દેખીતી રીતે એક બીજાના કાર્યમાં કોઈ પણ જાતનો પ્રતિબંધ થતો નથી. તેથી જ્યારે ગોપીજનોને જગતનું ભાન રહેતું ત્યારે તેઓ ભગવાનને વિષે પ્રશ્ન કરવા લાગ્યાં એમ ‘ગાયન્ત્યઃ’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે. ગોપીજનોને ઘડીકમાં બહારના જગતનું ભાન રહેતું અને ઘડીકમાં ન રહેતું. એટલે તેમને ક્ષણે ક્ષણે સંગમ અને વિરહનો અનુભવ થતો હતો. આ પ્રમાણે ગોપીજનોમાં મિશ્રભાવ હોવાથી તેઓ ગાવા લાગ્યાં.

ગાયન્ત્ય ઉચ્ચૈરમુમેવ સંહતા વિચિક્ષ્યરુન્મત્તકવદ્ વનાદ્ વનમ્ |

पप्रश्चुराकाशवद् अन्तरं बहिः भूतेषु सन्तं पुरुषं वनस्पतीन् ॥४॥

गोपीजनो એકઠાં મળીને ઊંચેથી પ્રભુનાં ગીત ગાતાં ગાતાં ગાંડા માણસની માફક એક વનમાંથી બીજા વનમાં પ્રભુને શોધવા લાગ્યાં, અને આકાશની માફક અંદર અને બહાર સર્વત્ર બધાં પ્રાણીઓમાં રહેલા પુરુષ વિષે વનસ્પતિઓને ગાંડા માણસની માફક પૂછવા લાગ્યાં. ૪.

જેમ જગતમાં બાહ્ય અગ્નિ ભીના લાકડામાં રહેલા અગ્નિના સંબંધથી પોતાની જાતને પ્રકટ કરી શકતો નથી પણ ભીનાશને લીધે ધૂમાડો જ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ ગોપીજનોને વિરલાગ્નિ પણ. ગોપીજનોને જ્યારે જગતનું અનુસંધાન થતાં ભગવાન સર્વથા તિરોહિત થઈ ગયા છે એ બુદ્ધિ થાય છે ત્યારે, ધૂમાડારૂપી ગાનનો શબ્દ જ ઉત્પન્ન કરે છે. ગોપીજનોને ઘડીકમાં બહારનું ભાન થાય છે, તો ઘડીકમાં અંદરનું ભાન થાય છે, એટલે ધૂમાડાની માફક જ્યારે શબ્દ બહાર આવે છે ત્યારે તે ઉત્તરોત્તર વિચિત્ર ભાવો ઉત્પન્ન કરે છે અને ગાનનું સ્વરૂપ ધારણ કરે છે. ભગવાન (ધર્મી) રસાત્મક છે અને તેમના ભાવો (ધર્મો) પણ રસાત્મક છે એટલે ભગવાન અને ભગવદ્ધર્મો જીવ અને જીવધર્મો કરતાં ઉત્તમ છે, અને તેથી ગોપીજનોને જે પેલા કૃષ્ણ, હું કૃષ્ણ એ પ્રકારનું જે જ્ઞાન થાય છે તે જીવને થતા અખંડાદૈતના અનુભવ કરતાં ઉત્તમ છે. (અખંડાદૈતનો અનુભવ કરવો એ જીવનો ધર્મ છે, અને જીવ ચિત્પ્રધાન છે. ગોપીજનોને ભગવાનનું જે જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયું છે તે કેવલ ભગવત્કૃપાથી જ મળી શકે છે, અને ગોપીજનો ભગવાનમાં આસક્ત છે. એટલે ગોપીજનોનું જ્ઞાન સાત્ત્વિક જીવોને થતા અખંડાદૈતના અનુભવ કરતાં ઉત્તમ છે.) ૧.

જેમ ભગવાનના ગાનથી ગોપીજનો પોતે આવીને ભગવાનને મળ્યાં તેમ ગોપીજનોએ પણ, ભગવાન પોતે પાસે આવે એટલા માટે ઊંચેથી ગાન કરવા માંડ્યું. ૨.

ગોપીજનોમાં જે ભગવદ્ભાવ હતો તે વિરલને લીધે થએલો હોવાથી કૃત્રિમ હતો અને તેથી તે ભાવના તિરોધાનનું તેમને બરોબર સ્ફુરણ થયું; કારણ કે એ વિચિત્ર ભાવવાળાં ગોપીજનો એક બીજાને મળ્યાં કે તરત જ પોતાની મેળે અને બીજાના દ્વારા તેમને વિશેષ વિજ્ઞાન થયું, પોતાની સ્થિતિનું ખરું ભાન થયું. અને તેથી ભગવાનનો જે તિરોભાવ હતો તે તેમને બરોબર સ્ફૂર્યો.

(આ કારિકાનો બીજો અર્થ પણ સંભવી શકે છે.) ગોપીજનોને પોતાના પ્રિય પ્રભુનાં દર્શન ન થયાં એટલે ઉત્કટ ભાવને લીધે એકલા પ્રિય પ્રભુની જ સ્ફૂર્તિ થઈ, અને ગોપીજનોને પોતાનામાં ફક્ત પ્રિયની જ સ્ફૂર્તિ થઈ એટલે ગોપીજનોમાં



જે ભગવદ્ભાવ હતો તે કૃત્રિમ થયો. ગોપીજનોનું મિલન બે પ્રકારનું હતું, એક સ્વતોમિલન અને બીજું અન્યતઃમિલન. જે ગોપીજનમાં ભગવાનનો ભાવ ઉત્પન્ન થયો છે તે બીજી ગોપીજનને સખી માનીને ભેટવાની અને બીજી એવી ક્રિયા કરે છે. આનું નામ સ્વતોમિલન. જ્યારે ભગવદ્ભાવવાળી ગોપીજન બીજી ગોપીને ભેટે છે ત્યારે બીજી ગોપીજન ભગવદ્ભાવવાળી ગોપીને ભગવાન તરીકે માનતી નથી અને ભગવદ્ભાવને પ્રતિકૂલ આચરણ કરે છે, પહેલી ગોપીને ભેટવા દેતી નથી. આમ થવાથી ભગવદ્ભાવવાળી ગોપીને વિશેષ વિજ્ઞાન થાય છે, પોતાની સ્થિતિનું ખરું ભાન થાય છે. જ્યારે બીજી ગોપી પહેલી ગોપી જે પોતાને ભગવાન માનતી હતી તેને સખી માનીને મળે ત્યારે અન્યતોમિલન થાય છે. આમાં પણ બીજી ગોપીજન આ ગોપીને ભગવાન તરીકે માનતી નથી એટલે તે ગોપીને વિશેષ વિજ્ઞાન થાય છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનને વિશેષ વિજ્ઞાન થવાથી ભગવાનના તિરોધાનની સ્પષ્ટ સ્ફૂર્તિ થાય છે.) ૩.

તે વખતે ગોપીજનોએ શોધ કરી-ભગવાન ક્યાં છે એમ તેમણે શોધ કરવા માંડી. તેમાં પણ ગોપીજનોને ભગવાનના તિરોધાનની સ્ફૂર્તિ સંપૂર્ણપણે થઈ ન હતી એટલે ભગવાનની શોધ કરવામાં પણ તેઓ એક જ પ્રકારની વૃત્તિ ધારણ કરી શક્યાં નહિ એમ શુકદેવજી ‘ઉન્મત્તકવત્’ એ પદમાં કહે છે. જેનો ઉન્માદ જાણવામાં નથી આવ્યો તે ‘ઉન્મત્તક’ કહેવાય છે; અથવા તો જેનો ઉન્માદ ખરાબ છે તે ‘ઉન્મત્તક’ કહેવાય છે. જેમ ઉન્મત્ત માણસ પોતાનું અને પારકું એમ વિવેક જાણતો નથી અને વસ્ત્ર વિગેરે ધારણ કરતો નથી તેમ આ ગોપીજનો પણ વિવેક રહિત થઈ ગયાં અને એક વનમાંથી બીજા વનમાં ગયાં. વળી, ગોપીજનોએ ભગવાનની ફક્ત શોધ જ કરવા માંડી એમ નહિ, પરંતુ ઉન્મત્ત માણસની માફક પૂછવા લાગ્યાં એમ શુકદેવજી ‘પપ્રચ્છુઃ’ એ પદમાં કહે છે. શુકદેવજી ભગવાનના સ્વરૂપને બરોબર જાણે છે અને જેમના હાથ, પગ, મુખ, પેટ વિગેરે આનંદમય છે એવા કૃષ્ણ ભગવાનને બધેય સ્થિતિ કરતા જુએ છે. જો ભક્તિસહિત જ્ઞાન પ્રકટ થાય ત્યારે તો બીજાં પણ જુએ છે, કારણ કે બધેય ભગવાનના તિરોધાનનો નાશ થયો છે. બધેય સ્થિતિ કરેલા, અર્થાત વ્યાપક, કૃષ્ણ ભગવાનને આ ગોપીજનોએ મર્યાદિત-અવ્યાપક-માનીને તેમને વિષે પ્રશ્નો પૂછવા લાગ્યાં, તેથી તેમનું અજ્ઞાન બતાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘આકાશવદન્તરં બહિર્ભૂતેષુ સન્તમ્’-આકાશની માફક પ્રાણીઓમાં બહાર અને અંદર રહેલા પુરુષને. આકાશ એ બહાર અને અંદર એ બેનો વિવેક કરે છે એમ પહેલાં-તૃતીય સ્કંધમાં-કહેવામાં આવ્યું છે. તે જ પ્રમાણે આ કૃષ્ણ પણ બહાર અને

અંદર એ બેનો વિવેક કરનાર છે. આ કારણથી જ આકાશને બ્રહ્મનું લિંગ કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકારના અર્થ સ્થિતિ કરનારા કૃષ્ણ ભગવાનને ગોપીજનોએ જોયા નહિ, આત્માને વિષે વિચાર કર્યો નહિ, ચેતન પદાર્થોને પૂછ્યું નહિ અને સ્થાવર પદાર્થોને પૂછ્યું એમ શુકદેવજી ‘વનસ્પતિન્ પપ્રચ્છુઃ’ એ શબ્દોમાં કહે છે. ગોપીજનોએ વનસ્પતિને ભગવાનને વિષે પૂછ્યું, કારણ કે વનસ્પતિ એ વૈષ્ણવ છે. ખરેખર, વૈષ્ણવો જ, મૂર્ખ હોય તો પણ, વિષ્ણુ ભગવાનની ગતિ જાણે છે, પણ જેઓ વૈષ્ણવ નથી તેઓ, ભલે ને તેઓ પોતે ઘણા હોંશિઆર હોય તો પણ, વિષ્ણુની ગતિ જાણતા નથી. ૪.

અહાં વનસ્પતિઓને પ્રશ્ન પૂછવાની અંદર પણ પ્રથમ ગોપીજનો પીપળો, પીપર અને વડ, જે લોકમાં વિષ્ણુ, બ્રહ્મા અને શિવના સ્વરૂપને પ્રાપ્ત થયાં છે, તેમને ‘દષ્ટઃ’ એ શ્લોકમાં પ્રશ્ન પૂછે છે :

દષ્ટો વઃ કચ્ચિદ્ અશ્ચત્થ પ્લક્ષ ન્યગ્રોધ નો મનઃ ।

નન્દસૂનુર્ગતો હત્વા પ્રેમહાસાવલોકનૈઃ ॥૫॥

હે પીપળા!, હે પીપર!, હે વડ!, તમે તમારા સંબંધીને-કૃષ્ણ ભગવાનને-જોયા છે? કારણ કે નંદરાયના પુત્ર પ્રેમપૂર્વક હાસ્ય કરીને અને દષ્ટિ નાખીને અમારું મન ચોરીને લઈ ગયા છે. ૫.

પીપળો એ વૈષ્ણવ વૃક્ષ છે-પીપળાનો દેવતા વિષ્ણુ છે-અને તેને લોકમાં વિષ્ણુની માફક સારું માન-પૂજા-ઘટે છે, એટલે તે ભગવાન ક્યાં છે એ ઘણું ખરું જાણતો હશે; છતાં પણ આ ઝાડ સ્તબ્ધ છે, પોતાની જાતને ઉત્તમ માને છે, એટલે ભગવાન ક્યાં છે તે જાણતો નહિ હોય એમ માનીને ગોપીજનો તે ઝાડને પોતાને ઉત્તમતાનું ભાન છે તે સૂચવવા માટે તેનું હેતુભૂત નામ-અશ્ચત્થ-કહે છે. જેમાં અશ્ચ સ્થિતિ કરે છે તે અશ્ચત્થ કહેવાય છે. લોકો તો અશ્ચમાં સ્થિતિ કરે છે, જ્યારે આમાં-પીપળામાં-તો અશ્ચ સ્થિતિ કરે છે, કારણ કે ‘અશ્ચ રૂપ ધારણ કરીને અશ્ચત્થમાં રહ્યો તેથી પીપળો અશ્ચત્થ કહેવાય છે’ એ પ્રમાણેની શ્રુતિ છે.

તો પછી ‘અશ્ચત્થનો દેવતા પ્રજાપતિ છે’ એ શ્રુતિને અનુસરીને પીપળાના કરતાં પ્રજાપતિ દેવતાવાળા વૃક્ષને પ્રશ્ન કરવો ઘટે છે, આમ વિચાર કરીને ગોપીજનો ‘પ્લક્ષ’ એમ કહીને પ્લક્ષ-પીપર-ને ભગવાન વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે. તેમાં પણ ગોપીજનો પીપર કાંઈ જાણતો નથી એમ તેના નામનો પ્રયોગ કરીને કહે છે. મનુષ્યો અજ્ઞાનમાં રહે તેટલા માટે પવિત્રતા દૂર કર્યા પછી આ ઝાડ ઉત્પન્ન થએલું છે. અને તેથી તે અપવિત્ર હોઈ લોકોના અજ્ઞાનનું કારણ જ છે; તેથી આ ઝાડ-પીપર-શી

રીતે ઉત્તર આપી શકશે? પીપર અપવિત્ર અને અજ્ઞાનનું કારણ છે, કારણ કે “પશુ વડે દેવો, ખરેખર, સ્વર્ગમાં ગયા. તેમણે વિચાર્યું કે ‘મનુષ્યો આપણી પાછળ આવશે;’ તેમણે તે પશુનું માથું કાપી નાખી લોહીની ધારા ચલાવી. આ લોહી જ પ્લક્ષ વૃક્ષ થયું.” એ પ્રમાણેની શ્રુતિ છે.

તો પછી કર્મ સાથે જેમનો સંબંધ નથી અને જે વૈષ્ણવ ધર્મનો ઉપદેશ કરનાર છે એવા મહાદેવને પ્રશ્ન કરવો ઘટે છે એમ માનીને મહાદેવરૂપ વડને ‘ન્યગ્રોધ’ એમ કહીને ગોપીજનો ભગવાન્ વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે. આ વડના ઝાડમાં પણ દોષ છે. આ ઝાડ ન્યગ્રોધ કહેવાય છે. જેમનો આગળનો ભાગ બહુ નીચે જાય તે ન્યગ્રોધ કહેવાય છે. તેથી અંતે આ ઝાડ નીચે જ જાય છે; આથી ભગવાનને આગળ જવાનું કારણ મળે છે.

‘વ:’ એટલે તમારા સંબંધી-ભગવાન્-તમે જોયા? (આ વૃક્ષોએ ભગવાન ને જોયા હોય તો ભગવાન્ વૃક્ષોના દર્શનના વિષય બને, અને તે રીતે તેમના સંબંધી ગણી શકાય.) ‘કચ્ચિત્’નો અર્થ પ્રશ્નની સંભાવના છે.

અમે ભગવાનને પહેલાં જોયા હતા, અથવા તો હંમેશા જ તેમનાં દર્શન કરીએ છીએ; પણ તેમાં તમારે-ગોપીજનોને-શું?-આ પ્રમાણે જો વૃક્ષો ગોપીજનોને કહે તો તેના ઉત્તરમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘નો મનો હત્વા ગત:’, આમારું મન હરણ કરીને તે ભગવાન્ નાસી ગયા છે.

અરે! એ તો વિષ્ણુ છે; તે શી રીતે ચોરી કરશે?-એમ જો પ્રશ્ન કરવામાં આવે તો ગોપીજનો કહે છે કે ‘નન્દસૂનુ:’, તે નંદનો પુત્ર છે. જ્યારે ભગવાન્ નંદના પુત્ર તરીકે જન્મ્યા છે ત્યારે તો તેણે નંદનું કાર્ય કરવું જોઈએ. નંદાદિ લોકો તો દહીં, દૂધ વિગેરેની ચોરી કરે છે. તેથી ભગવાને જે અમારા મનની ચોરી કરી તેમાં બહુ વિરોધ નથી. અથવા તો ભગવાન્ ગોપીજનોના પતિ છે અને પતિનું નામ ન લેવાય એટલા માટે ગોપીજનોએ ‘નન્દસૂનુ:’-નંદના પુત્ર-એ પ્રમાણે કહ્યું. આ કારણથી જ એમ જણાય છે કે ભગવાને ગોપીજનોના મનનું હરણ કર્યું ત્યાં સુધી ગોપીજનોએ ભગવાનને પોતાના શેઠના પુત્ર છે એમ માનેલા, તેમને ચોર તરીકે જાણેલા નહિ; (કારણ કે પોતાના સ્વામીનો પુત્ર ચોરી કરે નહિ એમ તેઓ માનતાં હતાં, પણ અંતે તો ભગવાન્ ચોર જ નીકળ્યા.) જો આમ ન માનીએ તો-જો ભગવાન્ ચોર નથી એમ માનીએ તો-ભોગનો ત્યાગ કરીને તે કેમ ચાલ્યા જાય? (ચોર હોય તે જ ભોગનો ત્યાગ કરીને ચાલ્યો જાય; ભગવાન્ તે પ્રમાણે ચાલ્યા ગયા છે તો તે ચોર જ છે એમ સિદ્ધ થાય છે.)

અરે! ગોપીજનોના શરીરની અંદર રહેલા મનનું ભગવાને શી રીતે હરણ કર્યું એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેના સમાધાનમાં શુકદેવજી ‘પ્રેમહાસાવલોકનૈઃ’ એ શબ્દોમાં કહે છે કે ભગવાને ત્રણ પ્રકારના મનનું ત્રણેય પ્રકારના ધર્મો વડે હરણ કર્યું. પ્રેમપૂર્વક હાસ્યવાળાં અવલોકનો મનનું હરણ કરનારાં છે. આ પ્રમાણે તમસ, રજસ અને સત્ત્વ એ ત્રણ ભાવોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું; પ્રેમ એ તમસનો ભાવ છે, હાસ્ય એ રજસનો ભાવ છે અને અવલોકન એ સત્ત્વનો ભાવ છે. (જેનું મન જે પ્રકારનું હોય છે તેનું મન તે પ્રકારે ભગવાન્ હરણ કરે છે. જો મન તમઃપ્રધાન હોય તો ભગવાન્ પ્રેમના પ્રાધાન્યથી તે મનનું હરણ કરે છે.) પ્રેમ વડે ભગવાન્ અંદર પ્રવેશ કરે છે, હાસ્ય વડે મનનું ગ્રહણ કરે છે અને અવલોકન વડે હરણ કરે છે. ૫.

પીપળો, પીપર અને વડ એ ત્રણ વૃક્ષોએ ઉત્તર ન આપ્યો એમ જ્યારે ગોપીજનોએ માન્યું ત્યારે ગોપીજનોએ વિચાર કર્યો કે આ વૃક્ષોનાં ફલ મુખ્ય-ઉપયોગી-નથી, અને આ બધાં વૃક્ષો મોટાં છે છતાં પણ તેમનો ઉપયોગ કાગડાઓને જ કરવા યોગ્ય છે; તેથી જે મોટાં વૃક્ષો છે, જેમને પુષ્પ થાય છે અને જે સારી વાસવાળાં છે એવાં કુરબક વિગેરે વૃક્ષોને ભગવાન્ વિષે ચાલો આપણે પ્રશ્ન પૂછીએ. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને ગોપીજનો ‘કચ્ચિત્’ એ શ્લોકમાં પ્રશ્ન પૂછે છે :

કચ્ચિત્ કુરબકાશોકનાગપુત્રાગચમ્પકાઃ।

રામાનુજો માનિનીનાં ગતો દર્પહરસ્મિતઃ ॥૬॥

હે કુરબક!, હે અશોક!, હે નાગ!, હે પુત્રાગ!, હે ચંપક!, સ્મિતમાત્રથી માનિની સ્ત્રીઓના ગર્વ હરનાર બલદેવજીના નાનાભાઈને તમે જેતાં જોયા? ૬.

કુરબક અને અશોક એ બે વૃક્ષો કામને વધારનારાં છે. આ કુરબક વિગેરે વૃક્ષોનાં પુષ્પો કામદેવનાં બાણ છે. નાગ એટલે નાગકેસર. નાગ, પુત્રાગ અને ચંપક એ ત્રણ વૃક્ષોનાં પુષ્પો બહુ સુગંધિ છે. તે કામી પુરુષને બીજા કાર્યમાંથી અટકાવે છે. આથી આ પાંચેય વૃક્ષો ભગવાન્ ક્યાં ગયા છે તે જાણતાં હશે. બલદેવજીના નાના ભાઈને તમે જોયા છે એમ ગોપીજનો વૃક્ષોને પ્રશ્ન પૂછે છે. પહેલાં જેમ ગોપીજનોએ, ભગવાન્ પોતાનું મન હરણ કરીને નાસી ગયા છે તેટલા માટે, વૃક્ષોને ભગવાન્ વિષે પ્રશ્ન પૂછ્યો, તેમ આ શ્લોકમાં પણ તેમણે તે જ કારણથી વૃક્ષોને ભગવાન્ વિષે પ્રશ્ન પૂછ્યો છે. ભગવાનને દર્પહરસ્મિત કહેવામાં આવ્યા છે; અર્થાત્ જેમનું સ્મિત માનિની સ્ત્રીઓના ગર્વનું હરણ કરનાર છે એવા ભગવાન્. ભગવાન્ નકામા જ જતા રહ્યા; એમના ફક્ત સ્મિતથી જ દર્પ ચાલ્યો જાય છે, તો પછી ભગવાનને નાસી જવાની શી જરૂર હતી? ભગવાનને કોઈનો ભય તો છે જ નહિ,

કારણ કે તે રામાનુજ-બલદેવજીના નાનાભાઈ-છે. પોતાના પતિનું નામ ન લેવાય એટલા માટે ગોપીજનોએ ભગવાનને માટે ‘રામાનુજ’ એ શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો. અમે બધાંય માનિનીઓ છીએ; તેથી અમારા ગર્વનો નાશ કરવાને માટે ભગવાન જતા રહ્યા. ઘણુંખરું આ વૃક્ષોએ ભગવાનને જતાં જોયા નથી; કારણ કે આ કુરબક (‘કુ+રબ+ક’)ને ખરાબ શબ્દથી ક-સુખ-મળે છે; તેને રડવું ગમે છે. આ અશોક (‘અ+શોક’) શોકનો જ નાશ કરે છે, પણ કોઈને સુખ આપતો નથી. આ નાગ પોતાના નામથી જ ભય ઉત્પન્ન કરે છે. નાગનો અર્થ હાથી કરવામાં આવે તો પણ તે-પુત્રાગ-પુરુષોમાં પણ હાથી છે. અર્થાત્ તે બહુ અભિમાની હોવાથી અમને ઉત્તર નહિ આપે. ચંપક પણ પાકે એટલે રસ વગરનો થઈ જાય છે. આ બધાં વૃક્ષોમાં ઉપર જણાવેલા દોષો છે તે ઉપરાંત બીજો પણ દોષ છે અને તે એ કે તેમને ફલ નથી. ૬.

પાંચમા શ્લોકમાં જણાવેલાં વૃક્ષોને પુષ્પ નથી, અને છઠ્ઠા શ્લોકમાં જણાવેલાં વૃક્ષોને ફલ નથી. પુષ્પો શોભા આપનારાં છે, એટલે જે વૃક્ષોને પુષ્પ નથી તેમનામાં શોભા નથી; અને જે વૃક્ષોને ફલ નથી તે વૃક્ષોને પૂછવામાં આવતો પ્રશ્ન પણ નિષ્ફલ જાય છે; ફલ અને પુષ્પ એ બેનો અનેક પ્રકારનો વિનિયોગ સંભવે છે એટલે આ બધાં વૃક્ષો ભગવાન વિષે કાંઈ જાણતાં નથી એમ ગોપીજનોએ માન્યું, અને વિચાર કર્યો કે તુલસીનો ફલ અને પુષ્પ એ બંનેય રીતે ઉપયોગ સંભવતો નથી એટલે તે ભગવદીય તરીકે પ્રસિદ્ધ છે, માટે તેને પ્રશ્ન પૂછવા દો. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને ગોપીજનો તુલસીને ‘કચ્ચિત્’ એ શ્લોકમાં ભગવાનને વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે :

કચ્ચિત્ તુલસિ કલ્યાણિ ગોવિન્દચરણપ્રિયે ।

સહ ત્વાડલિકુલૈર્બિભ્રત્ દૃષ્ટસ્તેડતિપ્રિયોડચ્યુતઃ ॥૭॥

હે તુલસી! હે કલ્યાણી! હે ભગવાનના ચરણ ઉપર પ્રીતિ રાખનારી! ભ્રમરોની સાથે તને ધારણ કરનારા, અને તને અત્યંત પ્રિય એવા અચ્યુતને તેં જોયા છે? ૭.

‘હે તુલસી!’ એ પ્રમાણે ગોપીજનોએ જે સંબોધન કર્યું તે તુલસીને પોતાની સખી માનીને કર્યું છે. પહેલાંનો સંબંધ-ભગવાનના ચરણારવિંદની સેવા કરવાનો સંબંધ-સંભારીને જે તુલસી ભક્તની માફક ભગવાનનું ભજન કરે તો રસ પુષ્ટ થાય નહિ; તેટલા માટે તુલસીને ભગવાનની પત્ની માનીને ગોપીજનો કહે છે કે ‘કલ્યાણિ’. આમ હોવા છતાં પણ, તુલસીમાં ભક્તિ પ્રધાન છે તેથી તે અમારા કરતાં ઉત્તમ છે એમ ગોપીજનો ‘ગોવિન્દચરણપ્રિયે’ એ શબ્દમાં કહે છે. વળી, તારી પાસે ભગવાનનું દર્શન કરવાનો ઉપાય પણ છે, કારણ કે તારા જેવી બીજી વસ્તુ, તુલસી,

ત્યાં-ભગવચ્ચરણમાં-છે. એક પદાર્થ પોતાના જેવા બીજા પદાર્થને રસ્તામાં ઉભેલો જોઈને ત્યાં જાય છે. (તું પણ તુલસી છું, અને તારી સજાતીય તુલસી ભગવાનના ચરણમાં જોઈને તું ત્યાં જાય અને તને ભગવાનનાં દર્શન થાય એ સ્વાભાવિક છે.) આ વાત શુકદેવજી ‘અલિકુલૈઃ સહ ત્વા ત્વાં ભિભ્રત્ દૃષ્ટઃ’-ભ્રમરોની સાથે તને ધારણ કરનારા તે જોયા?—એ શબ્દોમાં કહે છે. વળી, તને ભગવાન્ ઘણા પ્રિય છે; જો ભગવાન્ આ માર્ગે ગયા હોય તો તે જરૂરથી તેમને જોયા હોય. ૭.

ગોપીજનોએ તુલસીને પ્રશ્ન પૂછ્યો, તે પણ તેમને ગમ્યો નહિ, કારણ કે ‘આ તુલસી પોતાની શ્રેષ્ઠતા દેખાડે છે એટલે બીજી સ્ત્રીઓને ભગવાન્ વિષે તે શી રીતે કહી શકશે’ એમ ગોપીજનોને વિચાર આવ્યો. તેમણે ફરીથી વિચાર્યું કે સાધારણ સ્ત્રીઓ જ અમારા ઉપર ઉપકાર કરશે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને ગોપીજનો ‘માલતિ’ એ શ્લોકમાં તે બધાંને પ્રશ્ન પૂછે છે:

માલત્યદર્શિ વઃ કચ્ચિત્ મદ્ધિકે જાતિ યૃથિકે ।

પ્રીતિં વો જનયન્ યાતઃ કરસ્પર્શેન માધવઃ ॥૮॥

હે માલતી! હે મલ્લિકા! હે જાઈ! હે જુઈ! હાથના સ્પર્શથી તમને પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરતા માધવ ગયા તે તમે જોયા? ૮.

હે માલતિ! તમે બધાંએ-જુદા જુદા રૂપવાળાં દરેકે-ભગવાનને જોયા? તે જ પ્રમાણે હે મલ્લિકા!, હે જાઈ!, હે જુઈ ! તમે બધાંએ ભગવાનને જોયા? આ ચાર લતાઓ બહુ સુગંધિ પુષ્પોવાળી છે અને ભગવાનને પ્રિય છે. તેથી ‘વઃ’-તમને-માધવ-લક્ષ્મીજી સહિત ભગવાન્-હસ્તના સ્પર્શથી પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરે છે-તમારાં પુષ્પો ભગવાન્ પોતાના હસ્ત વતી ચૂંટે છે અને તે રીતે હસ્તસ્પર્શથી તમને આનંદ આપે છે. ભગવાન્ લક્ષ્મીજીની સાથે સ્થિતિ કરે છે, તેથી તેમનો-લક્ષ્મીજીનો-ચોટલો બાંધવા માટે પુષ્પોને ચૂંટવાની જરૂર હોય છે. ૮.

જો કે આ માલતી વિગેરે લતાઓ સ્ત્રીઓ છે, છતાં પણ તેમને ફલ નથી; તે અલ્પ છે, સ્વાર્થપરાયણ છે, પણ છાયા, ફલ વિગેરે આપીને લોકોના ઉપર ઉપકાર કરનારી નથી, અને લક્ષ્મીજીનો જ પક્ષપાત કરનારી છે, અર્થાત્ ધનવાન્ માણસ જ આ લતાઓનો ઉપયોગ કરી શકે છે; આથી તે આપણને ઉત્તર નહિ આપે એમ ગોપીજનોએ જાણ્યું. તેથી તે ‘ચૂત’ એ શ્લોકમાં આમ વિગેરે ઉત્તમ વૃક્ષોને ભગવાન્ વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે:

ચૂતપ્રિયાલપનસાશનકોવિદાર-જમ્બવર્કબિલ્વબકુલામ્નકદમ્બનીપાઃ ।

યેડન્યે પરાર્થભવકા યમુનોપકૂલાઃ શંસન્તુ કૃષ્ણપટવીં રહિતાત્મનાં નઃ ॥૯॥

હે આંબા! હે રાયાણ! હે પનસ! હે આશન! હે કોવિદાર! હે જાંબુડા! હે આકડા! હે બીલી! હે બકુલ! હે આંબલાંઓ! હે કદંબ! હે નીપ! તથા બીજાના ઉપર ઉપકાર કરવાને માટે ઉત્પન્ન થએલાં અને શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર આવેલાં હે અન્ય વૃક્ષો!, આત્મરહિત એવાં અમને ભગવાનનો પત્તો દેખાડો. ૯.

ચૂત એ મીઠો આંબો છે, અને આમ્ર એ ખાટો આંબો છે; અથવા તો તે બંનેને જુદે જુદે સમયે ફલ આવે છે. પ્રિયાલ-રાયાણ-તો બીજામાં પણ અધિક રસવાળી હોય છે. પનસને મોટાં ફલ હોય છે. આશન વિગેરે બીજાં વૃક્ષોમાં પુષ્પ અને ફલ પ્રધાન છે. વધારે શું કહેવું? બીજાં પણ મધૂક વિગેરે વૃક્ષો છે. બીજાને માટે જ જેમનો જન્મ છે તે ‘પરાર્થભવક’ કહેવાય છે. વળી, જો કે બધાંય વૃક્ષો ઉપકાર કરવાને માટે ઉત્પન્ન થએલાં છે, તેમાંય પણ જે ‘યમુનોપફૂલ’ છે, જે શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર તપસ્વીઓની માફક સ્થિતિ કરે છે, તે તો અવશ્ય જ ભગવાનને જુએ છે અને બીજાને તે પ્રમાણે જ્ઞાન આપે છે. તેથી હે વૃક્ષો! તમે સદાનંદ એવા ભગવાનનો પત્તો બતાવો, જેથી ભગવાન ક્યે માર્ગે ગયા એ અમે બરોબર જાણીએ. બધાં વૃક્ષો ગોપીજનોના ઉપર દયા કરે તેટલા માટે ગોપીજનો કહે છે કે ‘રહિતાત્મનામ્’-અમે આત્મા વિનાનાં છીએ. કેટલાક ઘર વગરના હોય છે, કેટલાક ઘન વગરના હોય છે, કેટલાક દેહ વગરના હોય છે; પરંતુ અમે તો આત્મા વગરનાં જ છીએ. તેથી બીજા બધા કરતાં અમે વધારે દીન-ગરીબ, દયાને પાત્ર-છીએ. આ કારણથી અમારે માટે હે વૃક્ષો! તમે કૃષ્ણનો પત્તો બતાવો. ૯.

આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોએ ઘણો વિલાપ કર્યો અને દીનતા પ્રકટ થઈ ત્યારે ભૂમિ ઉપર ભગવાનનાં ચરણારવિંદો તેમણે જોયાં. તે સમયે ગોપીજનો ‘કિં તે કૃતમ્’ એ શ્લોકમાં ભૂમિની સ્તુતિ કરે છે:

કિં તે કૃતં ક્ષિતિ તપો બત કેશવાંઘ્રિસ્પર્શોત્સવોત્પુલકિતાડ્ગરુહૈર્વિભાસિ ॥

અપ્યંઘ્રિસંભવ ઉરુકમવિક્રમાદ્વા આહો વરાહવપુષઃ પરિરમ્ભણેન ॥૧૦॥

હે પૃથ્વી! તેં શું તપ કર્યું છે? તારા રોમે રોમે પુલકિત થવાથી કેશવના ચરણના સ્પર્શના ઉત્સવવાળી તું શોભે છે. એ ઉત્સવ શું ચરણસ્પર્શથી થયો છે? કે વામનજીએ પૃથ્વી ઉપર ચરણ મૂક્યું તેથી થયો છે? કે વરાહ પ્રભુના આલિંગનથી થયો છે? ૧૦.

હે પૃથ્વી! તેં શું તપ કર્યું છે? અમે પણ તપ કર્યું જ છે, પણ આ પ્રકારના ફલનો અમને અનુભવ થયો નથી. પુણ્ય વિના ઈષ્ટસિદ્ધિ કોઈ પણ પ્રકારે થતી નથી, તેમાંય પણ ખાસ કરીને ભગવાન વિષે જ્ઞાન આપે એવી ભગવાનની પગલીઓરૂપી

ઈષ્ટસિદ્ધિ તો પુણ્ય વિના થતી જ નથી. પોતાની ઈષ્ટસિદ્ધિ થઈ નથી એમ માનીને ગોપીજનોને ‘બત’-અરે-એ પ્રમાણે ખેદ થાય છે. હે પૃથ્વી! તને કેવલ ભગવાનના ચરણનો સંબંધ થયો છે એટલું જ નહિ પરંતુ બીજા પણ ભાવો તારામાં જોવામાં આવે છે એમ ગોપીજનો કહે છે. કેશવ એટલે બ્રહ્મા અને મહાદેવને પણ મુક્તિ આપનાર પ્રભુ, જેમના ચરણારવિંદની પ્રાર્થના બ્રહ્મા અને મહાદેવ કરે છે તે કેશવ. આવા કેશવના ચરણના સ્પર્શથી ઉત્સવ-આનંદ અને પરસેવો-જેમને થયો છે એવી પૃથ્વી. ઉપર પરસેવો દેખાય છે જ, નહિ તો ભગવાનનાં પગલાં સ્પષ્ટ હોઈ શકે નહિ. બીજો પણ ઉત્સવ-આનંદ-પૃથ્વીમાં જોવામાં આવે છે. પૃથ્વી પુલકિત થઈ છે. બદ્ધેય દૂર્વાના અંકુરો પ્રકટ થયા છે એટલે અંગરહોથી-રોમાંચોથી-પૃથ્વી વિશેષ શોભે છે. અથવા તો બીજી રીતે પણ અન્વય કરી શકાય છે-હે પૃથ્વી!, ઉત્પુલકિત-ઊભા થએલા-રોમને લીધે ભગવાનના ચરણના સ્પર્શના ઉત્સવવાળી તું શોભે છે.

અરે, બદ્ધેય પુલક જોવામાં આવે છે; જો કેશવના ચરણના સ્પર્શથી પુલક હોય તો પરસેવાની માફક એક જ ભાગમાં તે પુલક હોવો જોઈએ એમ શંકા કરીને ગોપીજનો બીજું કારણ ‘અપ્યંદ્રિસંભવ ઉરકમ્પવિક્રમાદ્રા’ એ શબ્દોમાં કલ્પે છે. ‘અપિ’નો અર્થ સંભાવના છે. પૃથ્વીને થએલા આ ભગવાનના ચરણના સ્પર્શથી પહેલાંના ચરણસ્પર્શનું સ્મરણ થાય છે. તે ચરણસ્પર્શ તો ભૂમિ ઉપર બદ્ધે વ્યાપેલો હતો. તેથી તે ચરણથી ઉત્પત્તિ છે જેની એવો અંદ્રિસંભવ ઉત્સવ. ઉરકમ્પ એટલે ત્રિવિક્રમ-ત્રણ પગલાં ભરનાર વામનજી. તેમના વિક્રમથી-પગ મૂકવાથી-આ આનંદ થયો છે? ‘વા’ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે એટલે આ બાબતમાં પણ ગોપીજનોને નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. ભગવાનના કેવલ ચરણના સ્પર્શથી જ, સંભોગ કર્યા વિના, પૃથ્વીને સાત્ત્વિકભાવરૂપ ઉત્સવ, રોમાંચ, સંભવી શકતો નથી. તેથી ગોપીજનો બીજું કારણ કલ્પીને કહે છે કે ‘આહો વરાહવપુષઃ પરિરમ્ભણોન’-અથવા તો વરાહ અવતાર ધારણ કરનાર પ્રભુના આલિંગનથી તમને આનંદ થયો છે?-આમ કહેવાથી પૃથ્વી ગોપીજનોની સમાન છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ૧૦.

આ પ્રમાણે સ્થાવર પદાર્થોને પ્રશ્ન પૂછીને જંગમ-હાલતા ચાલતા-પદાર્થોને ગોપીજનો ‘અપિ’ એ શ્લોકમાં પ્રશ્ન પૂછે છે :

અપ્યેણપત્ન્યુપગતઃ પ્રિયયેહ ગાત્રૈઃ તન્વન્ દૃશાં સખિ સુનિર્વૃતિમ્ અચ્યુતો વઃ ।  
કાન્તાઙ્ગ-સઙ્ગ-કુચકુડ્કુમ-રઙ્ગિતાયાઃ કુન્દસ્રજઃ કુલપતેરિહ વાતિ ગન્ધઃ ॥૧૧॥

હે મૃગલી! હે સખી! પ્રિયાની સાથે અહિંથી જતા અને પોતાનાં અવયવોથી



તમારા નેત્રોને આનંદ આપતા ભગવાનને તમે જોયા છે? કારણ કે પ્રિયતમાના અંગસંગના સમયે તેના સ્તન ઉપરના કુંકુમથી રંગાએલી ગોકુલપતિની કુંદપુષ્પની માલાની સુગંધ અહિં આવે છે. ૧૧.

હે ઓણપત્ની-કૃષ્ણસાર નામના હરણની પત્ની!-પ્રિયાની સાથે-કોઈક લક્ષ્મીની સાથે અથવા તો બીજી કોઈ સ્ત્રી સાથે-આ રસ્તે જતા, અને પોતાના ગાત્રોથી-અવયવોથી-તમારાં નેત્રોને ઘણો આનંદ આપતા ભગવાન તમે જોયા છે? ભગવાન જ માર્ગે ગયા છે એમ એમનાં ચરણારવિંદના દર્શનથી નિશ્ચય થાય છે. જો તમે ભગવાનને જોયા હોય તો અમે પણ એમને જોઈ શકીએ. તું તો બીજાની પત્ની છે અને અમારી સખી છે; તેથી ગોપીજનો કહે છે કે હે 'સખિ'. ગોપીજનો મૃગલીને સખી તરીકે માને છે એનું કારણ એ કે બંનેને કૃષ્ણ ઉપર પ્રેમ હતો, અને બંનેને ભય હતો અને ભગવાનનાં ગાત્રોથી નેત્રને આનંદ થતો હતો એટલે બંનેનાં નેત્રો પણ સરખાં હતાં. જો મૃગલીઓને ભગવાનનાં દર્શન થયાં ન હોત તો તેમનાં નેત્રો વિકસિત થાત નહિ. (પણ તેમનાં નેત્રો આનંદથી વિકાસ પામ્યાં છે, એટલે સ્પષ્ટ સમજાય છે કે તેમણે ભગવાનને જોયા છે.)

ભગવાને તો લીલા કરેલી છે તો પછી તેમની તમે પ્રાર્થના શા માટે કરો છો? -આ પ્રમાણે જો ગોપીજનોને કહેવામાં આવે તો તેના ઉત્તરમાં તેઓ કહે છે કે 'અચ્યુત:'-ભગવાન અચ્યુત છે. ભગવાન પ્રિયાની સાથે ગયા એમ તમે શી રીતે જાણ્યું? -એમ જો ગોપીજનોને પૂછવામાં આવે તો તેના ઉત્તરમાં તેઓ કહે છે કે 'કાન્તા'. કાન્તા-પ્રિયતમા-ના અંગના સંગ વખતે સ્તનો ઉપર જે કુંકુમ હતું તેનાથી રંગાએલી ગોકુલપતિ ભગવાનની કુંદપુષ્પની માલાની સુગંધ અહિં આવે છે. ગંધમાં ભીનાશ છે એટલે કુંકુમ પણ ભીનું છે એમ જણાય છે. કુંકુમમાં જે આદ્રતા-ભીનાશ-છે તે સાત્ત્વિક ભાવને લીધે જ છે. તેથી જણાય છે કે પ્રિયાની સાથે ભગવાન છે. ૧૧.

આ પ્રમાણે હરિણપત્નીને પ્રશ્ન પૂછીને ગોપીજનોએ વિચાર્યું કે આ મૃગલી પોતાના પતિની પાસે રહીને અમારા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપી શકશે નહિ. તેથી પહેલાં-બારમા અધ્યાયમાં-ભગવાને જે વૃક્ષોની સ્તુતિ કરેલી છે તેમને 'બાહુમ્' એ શ્લોકમાં ગોપીજનો પ્રશ્ન પૂછે છે:

બાહું પ્રિયાંસ ઉપધાય ગૃહીતપદ્મો રામાનુજસ્તુલસિકાલિકુલૈર્મદાન્ધૈઃ ।

અન્વીયમાન ઈલ વસ્તરવઃ પ્રણામં કિં વાભિનન્દતિ ચરન્ પ્રણાયવલોકૈઃ ॥૧૨॥

હે વૃક્ષો! પ્રિયાના ખભા ઉપર એક હાથ મુકીને, બીજા હાથમાં કમલ લઈને

જતા, જેમની પાછળ તુલસીના મદાંધ ભમરાઓનાં ટોળાં ભમ્યા કરે છે એવા, બલદેવજીના નાના ભાઈ પ્રેમથી તમારા ઉપર દૃષ્ટિ નાખીને તમારા પ્રણામ સ્વીકારે છે કે? ૧૨.

ભગવાને પ્રિયાના ખભા ઉપર એક હાથ મૂક્યો છે અને બીજા હાથમાં કમલ લીધું છે. ભગવાન રામાનુજ-બલદેવજીના નાનાભાઈ-છે તેથી તે નિર્ભય છે. તુલસીના સંબંધવાળા જે ભમરાઓ છે તેમનાં ટોળાં ભગવાનની પાછળ ભમે છે. હે તરુઓ! પહેલાં-દશમસ્કંધના બારમા અધ્યાયના પાંચમા શ્લોકમાં-ભગવાને તમારી ભક્ત તરીકે સ્તુતિ કરેલી છે, તેથી તમે ભગવાનને જે પ્રણામ કર્યા તે ભગવાને અહિં જ સ્વીકાર્યા કે નહિ?-એમ ગોપીજનો વૃક્ષોને પ્રશ્ન કરે છે. ભગવાન અને સ્વામિનીજી એ બંનેના પગો લીટી આકારે જતા હતા એટલે એક સરખી ગતિએ તેઓ જતા હતા એમ જણાય છે અને તે ઉપરથી એમ અનુમાન થાય છે કે ભગવાન પ્રિયાના ખભા ઉપર એક હાથ મૂકીને જતા હતા. કોઈક વખત ભગવાનના પગોની ચંચલતા જોવામાં આવતી હતી. તે ઉપરથી એમ જણાય છે કે ભમરાઓ ભગવાનની ગતિને રોકતા હતા અને તેથી તેમને-ભમરાઓને-દૂર કરવાને માટે ભગવાન પ્રયત્ન કરતા હતા. તરુઓ નીચાં હતાં; ભગવાનને નમસ્કાર કરવા માટે તેમણે ફલ ધરાવીને ભૂમિ ઉપર પોતાનું માથું મૂક્યું હતું. આ ઉપરથી જણાય છે કે તરુઓએ ભગવાનને પ્રણામ કર્યા છે. હજુ સુધી વૃક્ષો ઊભાં થયાં નથી-નીચાં વળી રહેલાં છે-તેથી ગોપીજનોને સંદેહ થાય છે કે ભગવાને તેમના-વૃક્ષોના-પ્રણામ સ્વીકાર્યા કે નહિ. ભગવાને વૃક્ષોના પ્રણામ કદાચિત્ ન સ્વીકાર્યા હોય તો તેનું કારણ ‘ચરન’-ભગવાન જતા હતા-એ છે. જે માણસ ચાલે છે તે ધ્યાન વગરનો પણ હોય છે.

અરે! ભગવાન તો પાસેથી જ જાય છે; જો તેમણે વૃક્ષોના પ્રણામ સ્વીકાર્યા હોય તો તે જ સમયે તે-અભિનંદન-સાંભળવામાં આવે; તો પછી તે વિષે સંદેહ કેવી રીતે થાય છે?-એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેના સમાધાનમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘પ્રણયાવલોકે:’. ભગવાને વૃક્ષોના પ્રણામનો જે સ્વીકાર કર્યો હશે તે પ્રેમપૂર્વક દૃષ્ટિથી કર્યો હશે, વાણીથી નહિ. માટે જે લોકો વૃક્ષોની પાસે છે તે જ ભગવાને વૃક્ષોને આપેલું અભિનંદન જાણે છે, બીજા નહિ. ૧૨.

આ વૃક્ષો જ્ઞાની છે એટલે સ્ત્રીઓની સાથે તે બોલશે નહિ, માટે તેમની સ્ત્રીઓને જ ભગવાન વિષે પ્રશ્ન કરવો જોઈએ. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને ગોપીજનો ‘પૃચ્છતેમા લતા:’ એ શ્લોકમાં લતાઓને પ્રશ્ન પૂછે છે:

પૃચ્છતેમા લતા બાહૂન્ અપ્યાશ્લિષ્ટા વનસ્પતે: ।

નૂનં તત્કરજસ્પૃષ્ટા બિભ્રત્યુત્પલકાન્યહો ॥૧૩॥

આ લતાઓ વનસ્પતિના બાહુથી આલિંગાએલી છે છતાં પણ તેમને પૂછો. ખરેખર, ભગવાનના નખના સ્પર્શથી તેમને રોમાંચ થાય છે. ૧૩.

વનસ્પતિના બાહુથી ભેટાએલી છે છતાં પણ આ લતાઓને ભગવાન વિષે પ્રશ્ન પૂછો. જો કે આ લતાઓને આ સમયે અવકાશ નથી, તેઓ પોતાના પતિ-વનસ્પતિ-ના બાહુથી આલિંગાએલી છે છતાં પણ ભગવાનના કરજોનો-નખોનો-જ તેમને સ્પર્શ થયો છે એટલે તેમને રોમાંચ થયાં છે. ખરેખર, એક રસમાં તલ્લીન થઈ જનારાઓને બીજા રસને માટે સ્પૃહા હોતી નથી. તેથી જ જણાય છે કે ભગવત્સંબંધી રસ બીજા બધા રસોનો નાશ કરનાર છે.

આ પ્રમાણે જ્યારે બધાય પદાર્થોએ ગોપીજનોને ઉત્તર ન આપ્યો ત્યારે તેઓ મૂર્છિત જેવાં થઈ ગયાં. અહિં સુધી ગોપીજનોએ ભગવાન વિષે જુદા જુદા પદાર્થોને જે પ્રશ્નો કર્યા તેની વાત થઈ. નવ પ્રકારની આ ગોપીઓનું નવ શ્લોકમાં (૫|૧૩) વર્ણન કરવામાં આવ્યું. દસમી ગોપીજન જે ભગવાનની પાસે ઉભી છે તેને તો ભગવાન લઈ જાય છે. આ પ્રમાણે ભગવાનની ગોપીજનોએ શોધ કરી એટલે રસની સ્થિરતાનું-રસાસક્તિનું-નિરૂપણ થયું. ૧૩.

આ પ્રમાણે ભગવાનના તિરોધાનથી ગોપીજનોને જે તાપ થયો તેના નિવારણને માટે ગોપીજનોએ જે યત્ન કર્યો તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ગોપીજનો ના તાપનો નાશ કરનારી ભગવલ્લીલા પ્રકટ થઈ. આ ભગવલ્લીલાના વિલાસનું વર્ણન કરવાને માટે શુકદેવજી પૂર્વનો ઉપસંહાર કરીને 'ઈતિ' એ પ્રમાણે આરંભ કરે છે :

॥શ્રીશુક ઉવાચ॥

ઈત્યુન્મત્તવચો ગોપ્યઃ કૃષ્ણાન્વેષણકાતરાઃ ।

લીલા ભગવતસ્તાસ્તા દ્યનુચકુસ્તદાત્મિકાઃ ॥૧૪॥

શુકદેવજી કહે છે :- આ પ્રકારનાં ઉન્મત્ત વચનો બોલતાં ગોપીજનો કૃષ્ણની શોધમાં દીન થઈ ગયાં; અને ભગવદાત્મક થઈ જઈને પહેલાં વર્ણવેલી ભગવલ્લીલાનું અનુકરણ કરવા લાગ્યાં. ૧૪.

'ઈતિ' શબ્દનો અર્થ પ્રકાર, રીત, થાય છે. આ પ્રમાણે જેમને પ્રશ્ન કરવા જેવો નથી એવા અચેતન પદાર્થોને પણ ગોપીજનોએ પ્રશ્ન કર્યો એટલે ગોપીજનો ઉન્મત્તવાણી-ઉન્મત્ત મનુષ્યના જેવી વાણીવાળાં-થયાં. ગોપીજનો કૃષ્ણની શોધ કરવામાં કાતર-દીન-પણ થયાં; તેમનાં શરીર અને વાણી થાકી ગયાં; તેમના મનમાં

તો તાપ, લીલા અને ભગવાન્ એ ત્રણેય છે; એટલે જેમ જ્ઞાણા બંધ થઈ જવાથી અગ્નિ તિરોહિત થઈ જાય છે તેમ ગોપીજનોએ ભગવાનને વિષે પ્રશ્નો કરીને શોધ કરવા જે યત્ન કર્યો તે જ્યારે બંધ થયો ત્યારે રસાસક્તિનું શરીર અને વાણીમાંથી તિરોધાન થયું; તેથી બીજા પદાર્થનો-ભગવલ્લીલાનો-પ્રાદુર્ભાવ થયો એમ 'લીલા:' એ શબ્દમાં શુકદેવજી કહે છે. ગોપીજનોએ ભગવદાત્મક થઈને ભગવાનની જુદી જુદી-પહેલાં જે વર્ણવવામાં આવી છે અને ભગવાને જે કરેલી છે તે બધી-લીલાઓનું અનુકરણ કર્યું. 'ઉન્મત્તવચ:' એ પદમાં 'વાચ:'ને બદલે 'વચ:' થઈને જે હ્રસ્વ સ્વર થયો છે તે વૈદિક પ્રયોગ છે.

અથવા તો શ્લોકનો બીજા પ્રકારે પણ અન્વય થઈ શકે છે. 'ઈતિ' એટલે પહેલાં કહેવામાં આવેલું તે બધું અત્યાર સુધીનું 'ઉન્મત્તવચ:'-ઉન્મત્તની વાણી-છે. પછીથી ગોપીજનો કૃષ્ણની શોધ કરવાને માટે કાતર-દીન-થઈ ગયાં. ભગવાનની લીલા સ્વાભાવિક રીતે છ પ્રકારની છે; તેમાં પણ અનેક પ્રકારના ભેદ છે એટલે મૂલ શ્લોકમાં 'તાસ્તા:'-જુદી જુદી લીલાઓ-એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. (મૂલ શ્લોકમાં જે 'હિ' પદ છે તેનો ભાવ એવો છે કે) આ બધો અર્થ યોગ્ય છે. જ્યારે ભગવાન્ લીલાસહિત હૃદયમાં પ્રવેશ કરે છે, જ્યારે જ્યારે ભગવાન્ અવતાર લે છે, ત્યારે તે પૂતનાસુપય:પાન વિગેરે કરે છે. તે જ પ્રમાણે પુરુષોત્તમ માસ અને બીજા ઉત્સવોમાં વર્ષના ઉત્સવો થાય છે એ વાત પ્રસિદ્ધ છે. આ ગોપીજનોના મનમાં પ્રકટ થઈને ભગવાનને જે કરવાનું છે તેનો સાક્ષાત્કાર કરવો અશક્ય હોવાથી ભાવનાથી જ ભગવાન્ પ્રકટ થયા; તેથી ગોપીજનોએ ભગવાનનું અનુકરણ જ કર્યું. ૧૪.

(બધાં ગોપીજનોનો પોતાના પ્રિય કૃષ્ણમાં સરખો જ સ્નેહ હતો છતાં પણ કોઈક વખત કોઈ ગોપીજનને ભગવદ્ભાવ થતો તો કોઈક વખત બીજી ગોપીજનને પૂતનાદિભાવ થતો હતો. શ્રીમદાપ્રભુજી આનું કારણ નીચે પ્રમાણે સમજાવે છે.) જે ગોપીજનોને કેવલ ભગવાનનું જ જ્ઞાન હતું તે અતિમત્ત કહેવાય છે, અને જેમને ભગવાનના ઉપરાંત ભગવાનની સાથે સંબંધમાં આવેલા પદાર્થોનું પણ જ્ઞાન હતું તે ઈષન્મત્ત-થોડાં મત્ત-કહેવાય છે. આ પ્રમાણે નાયિકાના ભેદને લીધે ભાવમાં ભેદ આવે છે. એક જ નાયિકામાં પણ જુદે જુદે સમયે જુદો જુદો ભાવ હોય છે. અર્થાત્ ભગવાન્, ભગવલ્લીલા અને ભગવન્સંબંધી પદાર્થ-આ ત્રણમાંથી જેને જ્યારે જે સ્વરૂપની સ્મૃતિ થાય છે તે ત્યારે તદાત્મક જ થઈ જાય છે, કારણ કે તેનો ભાવ વિશુદ્ધ છે. જે ગોપીજનો ભક્તિને લીધે અતિમત્ત થએલાં હતાં તેમને ભગવદ્ભાવ પ્રાપ્ત થયો, અને જે ઈષન્મત્ત થએલાં તેમને પૂતનાદિભાવ પ્રાપ્ત થયો અને ક્રોધથી

દ્રેષ રાખીને મત્સરતાથી તે ક્રીડા કરવા લાગ્યાં. સત્ત્વ, રજસ્ અને તમસ્ એ ત્રણ ગુણોવાળા ભાવને લીધે ગોપીજનોએ નવ લીલા કરી. (૧૫૨૩ શ્લોકોમાં દરેક શ્લોકમાં જુદી જુદી લીલાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે છતાં પણ તે એક જ પ્રકારની છે એમ માનવું.) ૧૧.

(કેટલાંક ગોપીજનોને ભગવાનનું જ્ઞાન ન થતાં પૂતનાદિનું જ્ઞાન થયું, તેમાં ભાવની ન્યૂનતા આવી જાય, અને આ ન્યૂનતાનું સમાધાન કરવાને માટે બીજું કોઈ કારણ આપી શકાય એમ નથી. આથી શ્રીમહાપ્રભુજી નીચે પ્રમાણે બીજો પક્ષ આપે છે.) કેટલાંક ગોપીજનોમાં શકટાદિનો આવેશ થએલો હોવાથી બધાં તુલ્ય કોટિનાં જ છે, એટલે આમાં કોઈ જાતનો ન્યૂનભાવ નથી. અર્થાત્ ભગવદ્ભાવવાળી ગોપીઓ અને પૂતનાદિભાવવાળી ગોપીઓ તુલ્ય જ છે. ભગવાનની લીલા વિશિષ્ટ પ્રકારની છે. તેમાં ભગવાનની કૃતિ અને ભગવાનની સાથે સંબંધમાં આવેલા પદાર્થ એ બંનેનો સમાવેશ થાય છે, આ બેમાંથી એકનો નહિ. તેથી જ્યાં જે અંશ પ્રકટ થયો હોય ત્યાં તે જ અંશ વર્ણવવામાં આવે છે, એટલે આ બધા ભાવોમાં કોઈ પણ સ્થલે કોઈ પણ ભાવની ન્યૂનતા નથી. આ પક્ષ પ્રમાણે જ્યાં એક લીલા પ્રકટ થાય છે ત્યાં બીજી લીલા પ્રકટ થતી નથી એમ સિદ્ધ થાય છે. ૨.

(હવે શ્રીમહાપ્રભુજી ત્રીજો પક્ષ દર્શાવતાં આજ્ઞા કરે છે કે ભગવદ્ભાવવાળી ગોપી કરતાં પૂતનાદિભાવવાળી ગોપી ઉત્તમ છે.) ગોપીજનોને ઘણી આર્તિ થએલી હોવાથી સર્વત્ર જ ભગવદ્બુદ્ધિ થઈ છે, અને ફરીથી ભગવાનના ચરણના સ્પર્શની ઈચ્છા થવાથી તેમનો ઉલ્ખલ-ખાણીયો-વિગેરે ભાવ પણ ભગવાનના ચરણારવિંદનો સંબંધ સારી રીતે સિદ્ધ કરે છે. ગોપીજનોનો વિરહભાવ અતિ ઉત્કટ થયો હતો અને તેથી તેઓ અતિ દીનતાથી કોઈ પણ પ્રકારે ભગવાનના ચરણારવિંદનો અમને સંબંધ થાય એમ ઈચ્છા રાખવા લાગ્યાં; પહેલાં જ્યાં ભગવાનના ચરણનો સંબંધ થયો હતો તે પ્રમાણે તેઓ આચરણ કરવા લાગ્યાં, અને પ્રાર્થના કરવા લાગ્યાં કે જો આપ મારા ઉપર ચરણ નહિ ધરો તો પૂતના, ઉલ્ખલ ઈત્યાદિ બુદ્ધિથી પણ ચરણ ધરો. આ પ્રમાણે ગોપીજનોને ઘણી આર્તિને લીધે સર્વત્ર ભગવદ્બુદ્ધિ થઈ. અર્થાત્ પૂતનાદિભાવવાળાં ગોપીજનો ભગવદ્ભાવવાળાં ગોપીજનો કરતાં ઉત્તમ છે. ૩.

કસ્યાશ્ચિત્ પૂતનાયન્ત્યાઃ કૃષ્ણાયન્ત્યપિબત્ સ્તનમ્ ।

તોકાયિત્વા રુદ્ધત્યન્ત્યા પદાહન્ શકટાયતીમ્ ॥૧૫૧॥

કૃષ્ણના જેવું આચરણ કરતી એક ગોપીએ પૂતના જેવું આચરણ કરતી બીજી ગોપીનું સ્તનપાન કર્યું; બાલકના જેવું આચરણ કરતી અને રુદ્ધ કરતી એક

ગોપીએ ગાડાના જેવું આચરણ કરતી બીજી ગોપીને ચરણથી પ્રહાર કર્યો. ૧૫.

પૂતનાસુપય:પાન એ ભગવાનનું પ્રથમ ચરિત્ર છે એટલે કોઈ એક ગોપી પૂતના થઈ, અને બીજી ગોપી ‘હું કૃષ્ણ છું’ એમ બોલવા લાગી. તે વખતે પહેલી ગોપીએ બીજી ગોપીને ‘આ ભગવાન છે’ એમ માનીને ખોળામાં લીધી. પછીથી કૃષ્ણવત્ આચરણ કરનારી ગોપીએ પૂતનાવત્ આચરણ કરનારી ગોપીનું સ્તનપાન કર્યું. પૂતનાવત્ આચરણ કરનારી ગોપીજનને ‘હું મરી જવાની છું’ એવી ભાવના ન હતી એટલે તે ન મરી ગઈ, તેમ તે પૂતનાનું અનુકરણ કરી શકી નહિ. કૃષ્ણવત્ આચરણ કરનારી ગોપી તો ફક્ત સ્તનપાન જ કરે છે, કારણ કે ભગવાનના જેવું અલૌકિક સામર્થ્ય તેનામાં નથી. આ કારણથી જ અને પૂતનાના મરણરૂપી અમંગલ દૂર કરવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ફક્ત સ્તનપાનની વાત કહેવામાં આવી છે. ‘તોકાયિત્વા’ એ પદમાં શુકદેવજી શકટભંગલીલા કહે છે. ‘તોકાયિત્વા’ એટલે (૧) બાલકની માફક આચરણ કરવું, અથવા તો (૨) પોતાની જાતને બાલક માનવું, અથવા તો (૩) પોતાની જાતને બાલક જેવું બનાવવું. ‘શકટાયતીમ્’ એટલે ગાડાની માફક ઉભેલી ગોપીને, ‘અહન્’ એટલે મારી. ૧૫.

હવે શુકદેવજી ‘દૈત્યાયિત્વા’ એ શ્લોકમાં તૃણાવર્તલીલાનું વર્ણન કરે છે:

દૈત્યાયિત્વા જહારાન્યામ્ એકા કૃષ્ણાર્ભભાવનામ્ ।

રિડ્ગયામાસ કાપ્યંઘ્ની કર્ષન્તી ઘોષનિ:સ્વનૈ: ॥૧૬॥

પોતાની જાતને દૈત્યવત્ બનાવીને એક ગોપી કૃષ્ણના બાલભાવની ભાવના કરતી બીજી ગોપીને લઈ ગઈ. કોઈ એક ગોપી ઘૂંટણ તાણીને ઘુઘરીના સ્વરસહિત ચાલવા લાગી. ૧૬.

‘દૈત્યાયિત્વા’ એટલે પોતાની જાતને દૈત્યવત્ કરીને, ‘કૃષ્ણાર્ભભાવના’ એટલે કૃષ્ણના અર્ભ-બાલભાવ-ની ભાવના કરનારી ગોપી. પોતાની જાતને દૈત્યવત્ બનાવીને એક ગોપીએ કૃષ્ણના બાલ્યની ભાવના કરનારી બીજી ગોપીનું હરણ કર્યું. બીજી કોઈ ગોપી ઘૂંટણ તાણીને ઘુઘરીના સ્વર સાથે ચાલવા લાગી. જેમ બાલ્યાવસ્થામાં ભગવાન મૂઢ અને ભયભીત થએલા માણસની માફક અનેક પ્રકારના ધ્વનિ કરતા કરતા ચાલે છે તેમ આ ગોપી પણ ચાલવા લાગી.

પહેલાંના શ્લોકમાં-પંદરમા શ્લોકમાં-બે લીલાઓના વર્ણનમાં ચાર ગોપીઓનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. આ ચાર ગોપીઓ તામસતામસી છે. આ શ્લોકમાં-સોળમા શ્લોકમાં-ત્રણ જ ગોપીઓ છે, અને તે રાજસતામસી છે. ભગવાનની ચરિત્રલીલામાં જે જે વિશેષો-ભેદો-કહેવામાં આવ્યા છે તે તે વિશેષોનું

અહિં પણ અનુસંધાન કરવાનું છે. અથવા તો ત્રણ યુગલોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું; પૂતના અને કૃષ્ણવત્ આચરણ કરનારી ગોપીઓનું એક યુગલ, બાલક અને શકટવત્ આચરણ કરનારી ગોપીઓનું બીજું યુગલ, અને દૈત્યવત્ આચરનારી અને કૃષ્ણના બાલ્યની ભાવનાવાળી ગોપીઓનું ત્રીજું યુગલ; અને એક ચાલતી ગોપી ગુણાતીત છે તેનું પણ વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ફરીથી બીજે પ્રકારે એક ભાવવાળી ઘણી ગોપીઓ ભગવદ્દિચ્છાને લીધે પ્રધાનભાવ-કૃષ્ણભાવ-અને ગૌણભાવ-બલદેવભાવ-પ્રાપ્ત કરીને, શૃંગારરસના સંબંધવાળા રજોગુણ રૂપી ભાવને લીધે અનેક પ્રકારે તેમનામાં વિક્ષેપ થવાથી બહુરૂપ-અનેક ભાવવાળાં-થયાં. ૧૬.

વૃંદાવનકીડામાં ગોપીજનો વત્સપાલકરૂપ થયાં. તેનો પ્રકાર શુકદેવજી ‘કૃષ્ણ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં કહે છે:

કૃષ્ણરામાયિતે દ્વેતુ ગોપાયન્ત્યશ્ચ કાશ્ચન ।

વત્સાયતીં હન્તિ ચાન્યા તત્રૈકા તુ બકાયતીમ્ ॥૧૭॥

બે ગોપીજન કૃષ્ણ અને બલરામ થયાં અને અન્ય ગોપીજનો ગોપ થયાં. એક ગોપીજને વાછરડાનું આચરણ કરતી ગોપીને મારી, અને એકે તો બગલાનું આચરણ કરતી ગોપીને મારી. ૧૭.

બે ગોપીજનો કૃષ્ણ અને બલદેવ થયાં, કૃષ્ણ અને બલદેવની માફક આચરણ કરવા લાગ્યાં. કેટલાંક ગોપીજનો ગોપ થયાં. ગોપનો અર્થ અહિં બાલક થાય છે. આ ગોપશબ્દ જાતિવાચક છે. કેટલાંક ગોપીજનો વાછરડાં થયાં. ‘ચ’નો અર્થ સમુચ્ચય છે. વળી, બીજી કોઈ ગોપી વત્સાસુરની માફક આચરણ કરતી હતી. તેને બીજી ગોપીએ મારી, અર્થાત્ જે ગોપી કૃષ્ણ થઈ હતી તેણે વત્સાસુર થએલી ગોપીને મારી. ‘ચ’નો અર્થ એ છે કે કૃષ્ણ થએલી ગોપી ફલો પાડતી હતી. વળી, બીજી ગોપીએ બકાસુર થએલી ગોપીને મારી. લોકમાં વત્સાસુરનો વધ બલભદ્રે કર્યો છે એમ પણ પ્રસિદ્ધ છે, કારણ કે શ્રીમદ્ભાગવતમાં કહ્યું છે કે ‘બલભદ્રે પ્રલંબ, વત્સક અને ધેનુકાદિને માર્યા છે.’ તેથી બે ગોપીજનોમાંથી એકે બકાસુર થએલી ગોપીને મારી અને બીજીએ વત્સાસુર થએલી ગોપીને મારી. ૧૭.

પછીથી ગોપીજનોએ ગોપરૂપે જે વૃંદાવનલીલા કરી તે શુકદેવજી ‘આહૂય’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

આહૂય દૂરગા યદ્વત્ કૃષ્ણસ્તમ્ અનુકુર્વતીમ્ ।

વેણું ક્વાણન્તીં કીડન્તીમ્ અન્યાઃ શંસન્તિ સાધ્વિતિ ॥૧૮॥

જેમ દૂર ગએલી ગાયોને બોલાવીને કૃષ્ણ વેણુ વગાડતા હતા તેમ કૃષ્ણનું

અનુકરણ કરનારી ગોપી દૂર ગએલી ગાયોને બોલાવીને વેણુ વગાડતી તથા ક્રીડા કરતી હતી. તેને બીજાં ગોપીજનો ‘બહુ સુંદર, બહુ સુંદર’ કહી વખાણવા લાગ્યાં. ૧૮.

કેટલાક ગોપીજનો ગાય થયાં, અને કેટલાક ગોપીજનો ગોપાલ થયાં. તેમાં જેમ કૃષ્ણ દૂર ગએલી ગાયોને બોલાવીને વેણુનાદ કરે છે તેમ કૃષ્ણ થએલી ગોપી દૂર ગએલી ગોપીઓને બોલાવી, વેણુ વગાડી અનેક પ્રકારની ક્રીડા કરે છે. ગોપ થએલી બીજી ગોપીજનો ‘બહુ સરસ, બહુ સરસ’ કહી તેનાં વખાણ કરે છે. ૧૮.

એક ગોપીજને તો ભગવાને જે લીલા ક્રીડામાં કરેલી છતાં પણ ભાગવતમાં વર્ણવવામાં નહિ આવેલી એવી લીલાની ભાવના કરી એવી લીલા કરી એમ શુકદેવજી ‘કસ્યાચ્ચિત્’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

કસ્યાચ્ચિત્ સ્વભુજં ન્યસ્ય ચલન્ત્યાહાપરાનનુ ।

કૃષ્ણોડહં પશ્યત ગતિં લલિતામ્ઠતિ તન્મનાઃ ॥૧૯॥

કોઈ એક ગોપી બીજી ગોપીના ખભા ઉપર પોતાનો હાથ મૂકીને, ભગવાનમાં જ જેનું મન લાગ્યું હતું એવી તે ગોપીજન, ચાલતી ચાલતી કહે છે કે ‘હું કૃષ્ણ છું, મારી મનોહર ચાલ જુઓ’. ૧૯.

(૧૭૧૯ એ ત્રણ શ્લોકમાં વૃંદાવનલીલાનું વર્ણન છે.) અહિં પણ પહેલાંની માફક ત્રણ યુગલો છે, અને આ ચતુર્થ છે. કૃષ્ણરૂપ અને બકરૂપ થએલી ગોપીઓનું એક યુગલ; બલરામરૂપ અને વત્સરૂપ થએલી ગોપીઓનું બીજું યુગલ; આ પ્રમાણે બે યુગલ થયાં. અઢારમા શ્લોકમાં એક કૃષ્ણ થએલી દૂર ગએલી ગાયોને બોલાવે છે, વેણુ વગાડે છે અને ક્રીડા કરે છે, અને બીજાં ગોપીજન તેનાં વખાણ કરે છે, આ પ્રમાણે આ બે ગોપીજનોનું એક યુગલ થાય છે અને તે ત્રીજું યુગલ છે. આ પ્રમાણે વેણુનાદ કરનારી કૃષ્ણ થએલી ગોપી જેનાં ગોપરૂપ થએલી બીજી ગોપીઓ વખાણ કરે છે તે ત્રીજી છે, ત્રીજું યુગલ સિદ્ધ કરે છે. આ શ્લોકમાં જે કૃષ્ણ થએલી ગોપીનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે ગુણાતીત છે. કોઈ ગોપ થએલી ગોપીના ઉપર પોતાનો હાથ મૂકીને બીજી ગોપ થએલી ગોપી ચાલતી હતી. તે બોલી, ‘હે ગોપીઓ! હું કૃષ્ણ છું; મારી સુંદર ગતિ જુઓ’. આ ગોપીમાં કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ ન હતો એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘તન્મનાઃ’-કૃષ્ણમાં જેનું મન ચોટેલું છે તેવી ગોપી. પહેલાં આ ગોપીએ ફક્ત શરીરની ક્રિયા કરી હતી; હવે તે વાણી સાથે શરીરની ક્રિયા કરે છે. ૧૯.

હવે શુકદેવજી ફરીથી ગોપીજનોના નિર્ગુણ, સાત્ત્વિક, રાજસ અને તામસ



એ ચાર પ્રકારનું ‘મા ભૈષ્ટ’ ઈત્યાદિ શ્લોકોમાં વર્ણન કરે છે :

મા ભૈષ્ટ વાતવર્ષાભ્યાં તત્રાણં વિહિતં મયા ।

ઈત્યુક્ત્વૈકેન હસ્તેન યતન્ત્યુન્નિદધેઽમ્બરમ્ ॥૨૦॥

‘પવન અને વરસાદથી બીશો નહિ, મેં તે બેથી તમારું રક્ષણ કરેલું છે’ આ પ્રમાણે કહીને પ્રયત્નપૂર્વક એક હસ્તથી એક ગોપી પોતાનાં વસ્ત્રને (ગોવર્ધન પર્વતની માફક) ઊંચું કરવા લાગી. ૨૦.

આ શ્લોકમાં જે ગોપીનું વર્ણન કરાવામાં આવ્યું છે તે નિર્ગુણ છે. કેટલાંક ગોપીજનો ગાય, ગોપ અને ગોપીરૂપ થએલાં હતાં અને તે વરસાદથી બીતાં હોય તેવાં જણાતાં હતાં. તે સમયે એક નિર્ણય ગોપીએ કહ્યું: ‘પવન અને વરસાદથી તમે બધા બીશો નહિ, મેં તમારું તે બેથી રક્ષણ કર્યું છે.’ આ પ્રમાણે કહીને તે ગોપીએ પોતાના એક હાથ વતી વસ્ત્રને લઈને, પર્વતની માફક સ્થાપન કરીને, ઊંચું કર્યું, ગોવર્ધન પર્વતની માફક ધારણ કર્યું. ‘યતન્તી’નો અર્થ ‘પ્રયત્ન કરતી’ એવો પણ થઈ શકે. ૨૦.

શુકદેવજી ‘આરુઢ્ય’ એ શ્લોકમાં સાત્ત્વિક ગોપીની ક્રિયાનું વર્ણન કરે છે:

આરુઢ્યૈકાં પદાકમ્ય શિરસ્યાહાપરાં નૃપ ।

દુષ્ટાહે ગચ્છ જાતોઽહં ખલાનાં નનુ દણ્ડધૂક્ ॥૨૧॥

હે રાજા! એક ગોપીજન બીજાં ગોપીજન ઉપર ચઢીને અને તેના માથા ઉપર પગ વડે પ્રહાર કરીને બોલ્યાં, ‘હે દુષ્ટ સર્પ! જતો રહે, દુષ્ટને શિક્ષા કરનાર હું પ્રકટ થયો છું.’. ૨૧.

એક ગોપી બીજી ગોપીના ઉપર ચઢી અને તેના માથા ઉપર પગ વડે આક્રમણ કર્યું, પગ વડે પ્રહાર કર્યો. શુકદેવજી પરીક્ષિતને ‘નૃપ’ એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પરીક્ષિતને શુકદેવજીની વાતમાં વિશ્વાસ આવે. આ લીલા કઠિન છે. અથવા તો આ લીલા બીજી રીતે સમજાવી શકાય અને તે એ એક ગોપીએ ઝાડના ડાળથી લટકીને બીજી ગોપીના ઉપર પગથી પ્રહાર કર્યો. (વાસ્તવિક રીતે તો પ્રભુએ જે લીલા જે પ્રકારે કરી છે તે લીલા તે જ પ્રકારે અહિં પણ પ્રકટ થાય છે એટલે અહિં ગોપીજનની આ લીલામાં ઝાડનો આધાર ન હોય તો પણ કોઈ જાતની મુશ્કેલી નથી.) હે દુષ્ટ અહિં-સર્પ-કાલિય નાગ-! અહિંથી તું જતો રહે; કારણ કે હું દુષ્ટ પ્રાણીઓને શિક્ષા કરવાને માટે પ્રકટ થયો છું. ‘નનુ’ એ પ્રમાણે જે સંબોધન છે તેનો ભાવ એવો છે કે સર્પને મારી નાખવાનો નથી. ૨૧.

શુકદેવજી ‘તત્રૈકોવાચ’ એ શ્લોકમાં કહે છે કે :

તત્રૈકોવાચ હે ગોપા દાવાશ્ચિં પશ્યતોલ્બણમ્ ।

ચક્ષૂંધ્યાશ્ચપિદદધ્વં વો વિધાસ્યે ક્ષેમમ્ અઞ્જસા ॥૨૨॥

ત્યાં તો એક ગોપીજન બોલ્યાં, ‘હે ગોપો! આ ભયંકર દાવાગ્નિ જુઓ. તમે જલદી તમારી આંખ્યો મીંચી દો. હું તમારું કલ્યાણ તરત જ કરીશ.’ ૨૨.

ત્યાં તો એક રાજસી ગોપીજન નીચે પ્રમાણે બોલ્યાં. કેટલાંક ગોપીજનો ગાયરૂપ થયાં, અને બીજાં કેટલાંક ગોપીજનો ગોપરૂપ થયાં. એક ગોપીજન તો કૃષ્ણરૂપ થઈને બોલ્યાં: ‘હે ગોપો! આ ભયંકર દાવાગ્નિ જુઓ.’ આ ગોપીજને પ્રભુથી થએલા વિરહને લીધે દાવાગ્નિ જોયો. જે ગોપીમાં અતિ વિગાઢ ભાવ હોય છે તેનામાં જ ભગવદ્ભાવ હોય છે, તેના જ હૃદયમાં વિરહાગ્નિ પ્રકટ થાય છે એટલે તે જ ગોપીને દાવાગ્નિનું દર્શન થાય છે, બીજીને નહિ. અથવા તો ભાવનાથી તે પ્રમાણે તે ગોપીને ભાન થયું. ગોપીજનોની બધી જુદી જુદી ક્રિયાઓમાં બધીય ભગવદ્રૂપ ક્રીડાનો આવેશ છે એટલે દાવાગ્નિનું પણ આ ગોપીજનને દર્શન થાય છે. બીજાં ગોપીજનોને ખાસ કરીને દાવાગ્નિનું દર્શન કરનારી આ ગોપીજનમાં ભગવદ્ભાવ-આ ભગવાન છે એવો ભાવ-ન હતો એટલે તેમણે પોતાના રક્ષણને માટે તેની પ્રાર્થના કરી નહિ. આ પ્રમાણે વીસમા શ્લોકમાં જણાવેલા પવન અને વરસાદના પ્રસંગમાં પણ સમજવું. (અર્થાત્ બીજાં ગોપીજનોને પેલી ગોપીજનની માફક પવન અને વરસાદનો અનુભવ થયો નથી, તેઓ તે ગોપીજનને ભગવાન તરીકે માનતાં નથી, એટલે તેમણે તે ગોપીજનની રક્ષણને માટે પ્રાર્થના કરી નથી.) જે ભક્તો ઘણા મત્ત હોય છે તેમનામાં જ ભગવદ્ભાવને લીધે તે તે લીલાનો આવેશ થાય છે, એટલે તે જ ભક્તોને તે તે લીલાનું દર્શન થાય છે એમ તાત્પર્ય છે. ૨૨.

હવે ‘બદ્ધા’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી તામસી ગોપીજનનું વર્ણન કરે છે :

બદ્ધાન્યયા સ્ત્રજા કાચિત્ તન્વી તત્ર હ્યુલૂખલે ।

ભીતા સુદક્ પિધાયાસ્યં ભેજે ભીતિવિડમ્બનમ્ ॥૨૩॥

એક સુંદર અંગવાળી ગોપીને બીજી ગોપીએ માલા વડે ખાંડણીએ બાંધી; તે (ખાંડણીએ બંધાએલી) સુંદર નેત્રોવાળી ગોપીએ બીને, મ્હોં ઢાંકીને, ભયનું અનુકરણ કરવા માંડ્યું. ૨૩.

કોઈ એક ગોપીને બીજી ગોપીએ ખાંડણીએ માલા વડે બાંધી. કોઈ ગોપી ખાંડણીઆરૂપ પણ થઈ, બીજી ગોપી પણ યશોદારૂપ થઈ. તે વખતે ખાંડણીએ બંધાએલી સુંદર નેત્રોવાળી પેલી ગોપી બી ગઈ અને પોતાનું મુખ ઢાંકી દીધું, પોતાના હાથથી પોતાનું આખું મુખ ઢાંકી દીધું, અને ભયનું અનુકરણ કરવા લાગી.

ગોપીજનો ભગવાનની લીલાનું જે અનુકરણ કરતાં હતાં તેમાં ગોપીજનો ના સત્ત્વ વિગેરે ગુણોને લીધે જ જુદી જુદી લીલાનો ક્રમ નિશ્ચિત થતો હતો. ગોપીજનોના જુદા જુદા અધિકારને અનુસરીને ભગવાનની જુદી જુદી લીલા પ્રકટ થાય છે. આ બધી લીલાનો અંત ભગવાનને વશ કરવામાં છે. આ પ્રમાણે ન માનીએ તો છેવટે ભગવાનની ઉલ્ખલલીલા કરવામાં ન આવી હોત. પરંતુ ઉલ્ખલલીલામાં ભગવાન વશ થઈ ગયા એટલે ત્યાર પછી કાંઈ પણ કરવાનું રહેતું નથી. તેથી ત્યાંથી જ લીલા અંધ થઈ ગઈ. આ પ્રમાણે ગોપીજનોમાં લીલાનો ભાવ ઉત્પન્ન કર્યો, હવે તેમનામાં ભગવદ્ભાવ ઉત્પન્ન થયો એમ કહેવાને માટે ભગવાનની ભીતિનું તેઓ અનુકરણ કરવા લાગ્યાં, અને ભીતિના અનુકરણની લીલા કરવા જતાં બધી લીલા તિરોહિત થઈ ગઈ. ત્યાર પછી પહેલાંની માફક વૃક્ષ વિગેરેને ગોપીજનોએ પ્રશ્ન જ કરવાનો રહ્યો, કારણ કે બાહ્ય જગતનું અનુસંધાન થાય એટલે સ્વાભાવિક રીતે પ્રશ્ન કરાય છે. પણ આ-ભીતિનું અનુકરણ-તો ભગવદાવેશથી થએલું હતું એટલે ગોપીજનોને હમણાં બાહ્ય જગતનું ભાન નથી. તેથી જ અહિં ગોપીજનોના પ્રશ્નનો ઉપસંહાર કરવામાં આવ્યો નથી. ૨૩.

પહેલાં ચૌદમા શ્લોકમાં ‘આ પ્રકારનાં ઉન્મત્ત વચનો બોલતાં ગોપીજનો’ એ વાક્યનો ઉપસંહાર કરવામાં આવ્યો છે, પણ પ્રશ્નનો ઉપસંહાર કરવામાં આવ્યો નથી. તેથી હમણાં મધ્યમાં લીલાનું વર્ણન કરીને, તે લીલાનું તિરોધાન થતાં, ફરીથી પણ ગોપીજનો વૃંદાવનની લતાઓ અને વૃક્ષોને કૃષ્ણ વિષે પ્રશ્ન પૂછવા લાગ્યાં એમ શુકદેવજી ‘એવમ્’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

એવં કૃષ્ણં પૃચ્છમાના વૃંદાવનલતાસ્તરૂં ।

વ્યચક્ષત વનોદેશે પદાનિ પરમાત્મનઃ ॥૨૪॥

આ પ્રમાણે વૃંદાવનની લતાઓ અને વૃક્ષોને કૃષ્ણ વિષે પૂછતાં પૂછતાં ગોપીજનોએ વનમાં પરમાત્માના પદનાં દર્શન કર્યાં. ૨૪.

(ગોપીજનોએ વૃંદાવનની લતાઓ અને વૃક્ષોને કૃષ્ણ ભગવાન વિષે પ્રશ્ન કર્યો.) પણ જ્યારે ગોપીજનોને તે બાબતમાં ઉત્તર ન મળ્યો ત્યારે ભગવાને તેમનામાં-ગોપીજનોમાં-આવેશ કરીને તેમનો મોહ દૂર કર્યો અને તેમને બધાનું જ્ઞાન કરાવ્યું એમ કહેવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘વ્યચક્ષત’. ભગવાનની શોધ, ભગવદ્લીલાનો આવેશ અને ભગવદાવેશ એ ત્રણ ગોપીજનોના તાપને દૂર કરવાને માટે જ છે. તેમાં પ્રશ્ન અંતરંગ છે એટલે તેનો સર્વત્ર અનુવાદ કરવામાં આવે છે. ગોપીજનો વૃંદાવનની લતાઓને અને વૃક્ષોને કૃષ્ણ વિષે પૂછવા લાગ્યાં. પછીથી

વનભૂમિ પર ગોપીજનોએ ભગવાનનાં પગલાં જોયાં. શ્લોકમાં ‘પરમાત્મનઃ’ એ પ્રમાણે પદ છે, તે ઉપરથી એમ સૂચન થાય છે કે ભગવાનનાં આ પગલાંઓ પરમ પુરુષાર્થરૂપ છે. જ્યારે જીવમાં ભગવાનનો આવેશ થાય છે ત્યારે તેનામાં ખરેખર સર્વજ્ઞતા આવે છે. જેમનામાં સર્વજ્ઞતા આવે છે, અર્થાત્ જે સર્વજ્ઞ છે, તેમને ભગવાનનાં ચરણનાં દર્શન થાય છે, કારણ કે ‘જ્ઞાનીઓ અથવા ભક્તો હંમેશાં વિષ્ણુના તે પરમ પદનું દર્શન કરે છે’ એ પ્રમાણે શ્રુતિ છે. ૨૪.

આ ગોપીજનો પણ પહેલાંની માફક દસ પ્રકારનાં છે: નવ ગોપીઓ સગુણ અને દસમી ગોપી નિર્ગુણ. આ ગોપીજનોનાં વચનો પણ તે જ પ્રકારનાં છે, સગુણનિર્ગુણભેદથી દસ પ્રકારનાં છે. પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાય એવાં ભગવાનનાં પગલાં બધાંય જુવે છે તેથી તેમને યાથાત્મ્યજ્ઞાન સિદ્ધ થાય છે: અર્થાત્ ભગવાનનાં પગલાંનું દર્શન સાધન છે અને યાથાત્મ્યજ્ઞાન સાધ્ય છે. તેથી ગોપીજનો પ્રથમ કહેવા લાગ્યાં કે ‘પદાનિ વ્યક્તમેતાનિ’ :

પદાનિ વ્યક્તમ્ એતાનિ નન્દસૂનોર્મહાત્મનઃ ।

લક્ષ્યન્તે હિ ધ્વજાંભોજ- ચક્રાંકુશયવાદિભિઃ ॥૨૫॥

ધ્વજા, કમલ, ચક્ર, અંકુશ અને યવ વિગેરેની રેખાઓનાં ચિહ્ન ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે આ પગલાં ખરેખર મહાત્મા કૃષ્ણનાં છે. ૨૫.

આ પગલાં નંદરાયજીના પુત્ર કૃષ્ણનાં જ છે. ‘વ્યક્તમ્’ એટલે સત્ય, એમાં કોઈ જાતનો સંદેહ નથી. ચિહ્નો વડે પગલાંઓનું વિશેષ જ્ઞાન-કૃષ્ણનાં જ છે એ પ્રકારનું જ્ઞાન-થાય છે. ચિહ્નો જ શી રીતે થાય છે એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન કરતાં ગોપીજનો યુક્તિ આપે છે કે ‘મહાત્મનઃ’. મોટાઓના પણ આત્મા, અથવા મહાન્ આત્મા તે મહાત્મા કહેવાય, અર્થાત્ મહાત્મા એટલે બ્રહ્મ. જુદાં જુદાં કાર્યોને માટે તે બ્રહ્મરૂપ મહાત્માના પગલાંમાં ચિહ્નો હોય છે. ચાલુ પ્રસંગમાં પણ ચિહ્નોનો ઉપયોગ છે એટલે તેમને-ચિહ્નોને-પ્રકટ કરવામાં આવે છે. તે ચિહ્નોનું વર્ણન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘લક્ષ્યન્તે’. અસાધારણ ધર્મોને લીધે ભગવાનનાં પગલાંનું અનુમાન થાય છે. લોકમાં પણ આ પ્રકારનો અર્થ પ્રસિદ્ધ છે એમ ‘હિ’ શબ્દ વડે સંમતિ આપવામાં આવે છે. ભક્તો નિર્ભય રીતે વાસ કરી શકે એટલા માટે ધ્વજાનું સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે; ભક્તો પ્રભુની સુખેથી સેવા કરી શકે એટલા માટે કમલનું સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે; ભક્તોના રક્ષણને માટે ચક્રનું સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે; ભક્તોના મનનો નિગ્રહ કરવાને માટે અંકુશનું સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે; ભક્તોની કીર્તિ સિદ્ધ કરવાને માટે યવનું સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે.

‘આદિ’ શબ્દ વડે વજ્ર વિગેરેનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે. આ વજ્ર વિગેરે ચિહ્નો પાપપર્વત વિગેરેનો નાશ કરવાને માટે છે. ૨૫.

આ પ્રમાણે અસાધારણ ધર્મો વડે આ પગલાં ભગવાનનાં છે એમ નિશ્ચય કરીને ગોપીજનો તે માર્ગે ગયાં એમ શુકદેવજી ‘તૈસ્તૈઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકોમાં કહે છે:

તૈસ્તૈઃ પદૈસ્તત્પદવીમ્ અન્વિચ્છન્ત્યોઽગ્રતોઽબલાઃ ।

બધ્વાઃ પદૈઃ સુપૃક્તાનિ વિલોક્યાર્તાઃ સમબ્રુવન્ ॥૨૬॥

ભગવાનનાં તે તે પગલાંઓ ઉપરથી ભગવાનના માર્ગને શોધતી અબલાઓ આગળ ચાલી, અને કોઈક સ્ત્રીના પગલાં સાથે સેળભેળ થએલાં ભગવાનનાં પગલાં જોઈને તેઓ ખેદ પામતાં માંહો માંહે બોલ્યાં. ૨૬.

જ્ઞાનનું પર્યવસાન-પરિણામ, અંત-ક્રિયામાં છે એટલે ગોપીજનોની ક્રિયાનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. (ગોપીજનોને ભગવાનનાં પગલાંના દર્શનથી યાથાત્મ્યજ્ઞાન થયું હતું, અને આ જ્ઞાનના પરિણામે તેમનામાં હવે ક્રિયા પ્રકટ થાય છે.) અબલાઓ-ગોપીજનો-ભગવાનના માર્ગને શોધતી શોધતી આગળ ચાલી, અર્થાત્ ભગવાનનાં પગલાં ખોળીને ભગવાનના માર્ગમાં ગોપીજનો ગયાં. વચમાં ગોપીજનોને પ્રતિબંધ થયો એમ શુકદેવજી ‘બધ્વાઃ’ એ પદ વડે કહે છે. જો ગોપીજનોમાં મત્સરદોષ ન હોત તો તેઓ ભગવાનની પાસે ગયાં જ હોત; પરંતુ દોષને લીધે તેઓ કુંઠિત થઈ ગયાં. આ જ વાત શુકદેવજી નીચેના શબ્દોમાં કહે છે. સ્ત્રીના-કોઈક ગોપીજનના-પગલાંની સાથે મળેલાં-પંક્તિના આકારમાં આવેલાં-ભગવાનનાં પગલાંને જોઈને અને તે ગોપીજનનાં પગલાંને જોઈને બધાં ગોપીજનો દુઃખી થયાં અને એક બીજાની સાથે બોલવા લાગ્યાં. જ્ઞાન અને ક્રિયાને ગૌણ કરી નાખીને ગોપીજનો વાણીમાં જ-એક બીજાની સાથે વાતો કરવામાં જ-પ્રવૃત્ત થયાં. આ પ્રમાણે જો ન થયું હોત તો જલદી જવાથી ગોપીજનોને ભગવાન પ્રાપ્ત થઈ જાત. ૨૬.

હવે શુકદેવજી ‘કસ્યાઃ પદાનિ’ એ શ્લોકમાં તે ગોપીજનોનાં ઈર્ષ્યાનાં વાક્યોનું વર્ણન કરે છે:

કસ્યાઃ પદાનિ ચૈતાનિ યાતાયા નન્દસૂતુના ।

અંસન્યસ્તપ્રકોઞ્ઞાયાઃ કરેણોઃ કરિણા યથા ॥૨૭॥

જેમ હાથી હાથણીના ખભા ઉપર પોતાનો હાથ મૂકે છે તેમ નંદરાયજીના પુત્રે જેના ખભા ઉપર પોતાનો હાથ મૂક્યો છે એવી નંદરાયજીના પુત્રની સાથે જનાર આ કઈ સ્ત્રીનાં પગલાં છે? ૨૭.

અહિં પુરુષનો સંભવ નથી, તેમ બીજા ગામની સ્ત્રીઓનો પણ સંભવ નથી; તેથી આપણામાંથી કોઈક ગોપીનાં આ પગલાં હશે. આ શ્લોકમાં ગોપીજનોએ જે પ્રશ્ન કર્યો છે તેનું પ્રયોજન બીજી સ્ત્રીનો નિર્ણય કરીને વિશેષ જ્ઞાન મેળવવાનું છે; અર્થાત્ અમુક સ્ત્રીનાં જ આ પગલાં છે એવું વિશેષ જ્ઞાન મેળવવાને માટે પ્રશ્ન કરવામાં આવ્યો છે. અરે! આ પગલાંમાં ચિહ્નો છે. ‘ચ’ નો અર્થ એ છે કે ભગવાન્ અને તે ગોપીની ચેષ્ટા જણાવનારાં ચિહ્નો પણ અહિં છે. તે ગોપી ખરેખર નંદરાયજીના પુત્રની સાથે જ ગઈ છે, અન્યથા ભગવાન્ જાય નહિ. તે ગોપી જ ઘણુંખરું ભગવાનને લઈ ગઈ છે, અર્થાત્ તે ગોપી આગળ પ્રભુ ગૌણ બની ગયા છે. ગોપીજનો હવે કહે છે કે તે ગોપી અમારા કરતાં વધારે ભાવ્યશાળી છે. જેના ખભા ઉપર ભગવાને હાથ મૂક્યો છે તેવી તે ગોપી છે. ગોપીના ખભા ઉપર મૂકવામાં આવેલો પ્રકોષ્ઠભાગ ભગવાનનો છે અને તે હાથના તળીઆની નીચેનો ભાગ છે. જેટલો ભાગ હાથનો છે તેનો સ્તનાદિની સાથે સંબંધ થએલો છે એમ સૂચન થાય છે, કારણ કે ત્યારે જ બે પગલાંઓ એક બીજાની પાસે સંભવી શકે છે. વળી, વચમાં તે બંનેનો રસ પણ પ્રકટ થાય છે એમ ‘કરેણોઃ કરિણા યથા’ એ શબ્દોમાં ગોપીજનો દષ્ટાંત આપીને કહે છે. જેમ હાથણીના ખભા ઉપર હાથી પોતાનો હાથ પ્રસારે છે તેમ ગોપીના ખભા ઉપર ભગવાને પોતાનો હાથ પ્રસાર્યો છે. ‘કરેણુ’ એટલે હાથીની સ્ત્રી, હાથણી; તેના ખભા ઉપર જેમ હાથી પોતાનો હાથ-સૂંઢ-પ્રસારે છે, જેમ તે વખતે તેઓનાં પગલાં એક બીજાને મળે છે, જેમ તે વખતે હાથી હાથણીની સામો ઉભો રહે છે અથવા તો જેમ હાથીનું ગળું હાથણીથી ઘસાય છે તેમ ગોપી અને ભગવાનની સ્થિતિ હતી. શૃંગારરસમાં સ્પર્શસુખ જ મુખ્ય છે તેથી હાથીનું દષ્ટાંત આપવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારની સત્ત્વપ્રધાન ગોપિકાઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ૨૭.

હવે શુકદેવજી નિર્ગુણ ગોપિકાના બે શ્લોકો કહે છે. એક શ્લોક દોષના અભાવનું પ્રતિપાદન કરે છે અને બીજો શ્લોક ગુણનું પ્રતિપાદન કરે છે. તામસતામસી ગોપીમાં ભગવાનનો આવેશ થતો નથી એટલે તેનું વાક્ય સંભવતું નથી; તેથી તેને બદલે નિર્ગુણ ગોપીનું એક વાક્ય વધારે આપવામાં આવ્યું છે, અને તેથી દસની સંખ્યા પૂરી કરવામાં કોઈ જાતનો વાંધો આવતો નથી. (ત્રણ સત્ત્વપ્રધાન, બે ગુણાતીત, ત્રણ રજઃપ્રધાન અને બે તમઃપ્રધાન એમ મળી દસની સંખ્યા થાય છે.) શુકદેવજી ‘અનયારાધિતઃ’ ઈત્યાદિ બે શ્લોકોમાં ગુણાતીત ગોપીનાં વચનોનું વર્ણન કરે છે :

અનયારાધિતો નૂનં ભગવાન્ હરિરીશ્વરઃ ।

યન્તો વિહાય ગોવિન્દઃ પ્રીતો યામનયદ્રહઃ ॥૨૮॥

આ ગોપીએ તો ભગવાન્ શ્રીહરિની ખરેખર આરાધના કરેલી હોવી જોઈએ, કારણ કે તેના ઉપર પ્રસન્ન થએલા ગોવિંદ ભગવાન્ આપણો ત્યાગ કરીને તે ગોપીને એકાંતમાં લઈ ગયા છે. ૨૮.

તે ગોપીની સાથે ભગવાને જે વિશેષરમણ કર્યું તેમાં તે ગોપીનું ભાગ્ય, પુણ્ય, કારણ હતું એમ હવે પ્રથમ ગોપીજનો કહે છે. ખરેખર! આ ગોપીએ હરિની આરાધના કરેલી છે. જો કે અમેય પણ ભગવાનની આરાધના કરેલી છે છતાં પણ તેમની કોઈની દ્વારા-કાત્યાયનીની દ્વારા-આરાધના કરેલી છે, સાક્ષાત્ આરાધના કરેલી નથી. જે સાધનોમાં ભગવાનનું સાક્ષાત્ આરાધન કરવામાં નથી આવતું તે સાધનો વડે પણ ભગવાન્ રૂપી ફલ મળે છે એટલે ભગવાનની કોઈની દ્વારા કરેલી આરાધનામાં પણ ભગવાનનો સંબંધ સંભવે છે. જેણે ભગવાનનું સાક્ષાત્ આરાધન કરેલું છે તે તો ભગવદ્રૂપ ફલને પોતાને વશ કરી દે છે. (અર્થાત્ કોઈની દ્વારા કરેલી ભગવાનની આરાધનામાં ભગવાનનો સંબંધ થાય છે, જ્યારે ભગવાનની સાક્ષાત્ આરાધનામાં ભગવાન્ ભક્તને વશ થઈ જાય છે.) વળી, ભગવાનની સાક્ષાત્ આરાધનામાં પણ તારતમ્ય રહેલું છે. (ભગવાન્ ગોપીજનોને વશ છે એમ પહેલાં વર્ણન કરવામાં આવી ગએલું છે તેથી એમ જણાય છે કે ગોપીજનોએ પણ ભગવાનની સાક્ષાત્ આરાધના કરેલી છે. તો પછી ગોપીજનોનો ત્યાગ કરીને ભગવાન્ બીજી ગોપીને લઈને કેમ ચાલ્યા ગયા? આ શંકાનું સમાધાન એ કે ભગવાનના સાક્ષાત્ આરાધનમાં પણ તારતમ્ય છે. જે પ્રકારનું પેલી ગોપીએ ભગવાનનું સાક્ષાત્ આરાધન કરેલું છે તે પ્રકારનું આ બધાં ગોપીજનોએ ભગવાનનું સાક્ષાત્ આરાધન કરેલું નથી. આમ જો ન માનીએ તો ભગવાન્ આ બધાં ગોપીજનોનો ત્યાગ કરીને કેમ ચાલ્યા જાય?)

અરે! જ્યારે બધાંનાં કર્મો સરખાં છે તો પછી તેમનામાં અવાંતર ભેદ શી રીતે હોઈ શકે?—આ પ્રકારની જો શંકા થાય તો ગોપીજન કહે છે કે ‘ભગવાન્’. સામગ્રી જુદી જુદી હોવાથી કર્મો બધેય એક બીજાથી ભિન્ન થાય છે. આ બધી સામગ્રીનો અને તેથી કર્મનો અવાંતર ભેદ જ્ઞાનસ્વરૂપ ભગવાન જ જાણે છે. તેથી ભગવાન્ તે પ્રમાણે—કર્મ પ્રમાણે—ફલ આપે છે. અરે! પણ ભગવાને અમને તે પ્રમાણે જ્ઞાન કરાવવું ન હતું, કારણ કે તેમ કરવાથી અમને દુઃખ થાય છે—આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો ગોપીજનો કહે છે કે ‘હરિઃ’ ભગવાન્ હરિ છે, સર્વનું દુઃખ

હરણ કરનાર છે. જે ગોપીજન ભગવાનને લઈ ગયાં છે તે ગોપીજન અને આ બધાં ગોપીજનોની વચ્ચે ભેદ છે એ જણાવવાને માટે ભગવાને આ બધાં ગોપીજનોને જ્ઞાન કરાવ્યું કે કર્મની અંદર ભેદ હોવાથી ભિન્ન ભિન્ન ફલ આપવામાં આવ્યું છે. (જે ફલ પેલી ગોપીજનને આપવામાં આવ્યું છે તે ફલ આ બધાં ગોપીજનોને આપવામાં આવ્યું નથી, કારણ કે તે બંનેના કર્મમાં ભેદ છે. આ પ્રમાણે જ્યારે ભગવાને આ બધાં ગોપીજનોને જ્ઞાન કરાવ્યું ત્યારે આ ગોપીજનોને લાગ્યું કે આ પ્રકારનું કર્મ તો આપણે જાતે જ કર્યું છે અને ભગવાન જે તિરોહિત થઈ ગયા છે તે આપણા પોતાના દોષથી જ તિરોહિત થઈ ગયા છે. આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનો વિચાર કરે ત્યારે તેમની મત્સરતાને લીધે તેમને જે દુઃખ થતું હતું તે ન થાય, અર્થાત્ તે દુઃખ નાશ પામે. આ રીતે ભગવાન આ ગોપીજનોના દુઃખનું હરણ કરે છે, કારણ કે તે પોતે હરિ છે, સર્વનું દુઃખ હરણ કરનાર છે). તે ગોપીની અને અમારી ભક્તિ તો સરખી છે, (સામગ્રીભેદથી ભલે કર્મ વિલક્ષણ હો,) તો ભક્તિને અનુસાર ભગવાને અમને બધાંને તુલ્ય ફલ કેમ ન આપ્યું? અને તુલ્ય ફલ આપવામાં કર્મનો સ્વીકાર કેમ કર્યો? આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો તેનું સમાધાન કરતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘ઈશ્વર:’. ભગવાન કોઈક વખત ફલ આપવામાં ભક્તિ સ્વીકારે છે, કોઈક વખત કર્મ સ્વીકારે છે, અને કોઈક વખત પોતાની ઈચ્છા સ્વીકારે છે. ખરેખર! ઈશ્વરનું નિયમન થઈ શકે એમ નથી. ભગવાન સ્વતંત્ર છે તેથી તે અમને ભક્તિમાર્ગમાં યોજે છે અને કર્મમાર્ગમાં યોજતા નથી. તેથી જ અમારો ત્યાગ કરીને ગોવિંદ-સાધારણ ઈન્દ્ર, સર્વ ગોકુલના ઈન્દ્ર-હોવા છતાં પણ એકાંતમાં પ્રસન્ન થઈને તે ગોપીને લઈ ગયા. ઘણી સ્ત્રીઓના સમૂહના કરતાં એક જ સ્ત્રીમાં કામરસ મુખ્ય રીતે ઉત્પન્ન થાય છે. ભગવાન તે ગોપીને એકાંતમાં લઈ ગયા તેનું કારણ ભગવાનની પ્રીતિ-પ્રસન્નતા-છે, અને ભગવાનની પ્રસન્નતાનું કારણ તે ગોપીની ભક્તિ અથવા કર્મ છે. ૨૮.

આ પ્રમાણે ભગવાન જે ગોપીને એકાંતમાં લઈ ગયા છે તે ગોપીનું ભાગ્ય મોટું છે એમ તેને બીજાં બધાં ગોપીજનોએ અભિનંદન આપ્યું. પણ આ પ્રકારનાં વચ્ચનો તો ગૂઢ માત્સર્યથી પણ કહી શકાય (ભગવાનનું આરાધન તો આણે એકલીએ જ કર્યું જણાય છે, આપણે કાંઈ કર્યું છે એ પ્રમાણે કટાક્ષથી પણ કહી શકાય) તેથી તે શંકા દૂર કરવાને માટે ‘ઘન્યા:’ એ શ્લોકમાં ગોપીજનો પોતે પણ ભાગ્યશાળી છે એ પ્રમાણે પોતાની જાતને અભિનંદન આપે છે. (રેણુ ભગવાનના ચરણની સાથે સંબંધમાં આવવાથી ભાગ્યશાળી છે એ પ્રમાણે આ શ્લોકમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. તે ઉપરથી સૂચિત થાય છે કે ગોપીજનો પણ ભગવાનના ચરણનો સંબંધ થવાથી



રેણુની માફક ભાગ્યશાળી થાય.) :

ધન્યા અહો અમી આલ્યો ગોવિન્દાઙ્ઘ્યજ્જરેણુવઃ ।

યાન્ બ્રહ્મશોરમા દેવી દધુર્મૂર્ધન્યધનુત્તયે ॥૨૯॥

હે સખીઓ! અહોહોહો! શ્રીકૃષ્ણ ભગવાનનાં ચરણકમલની રજ કેટલી બધી ધન્ય છે, કે જે રજને બ્રહ્મા, શિવ અને લક્ષ્મીદેવી પોતાનાં પાપ દૂર કરવાને માટે પોતાના મસ્તક ઉપર ધારણ કરે છે. ૨૯.

‘અહો’ એ આશ્ચર્યવાચક છે. હે અલીઓ, સખીઓ, આ ચરણની રજ ધન્ય છે. પોતાનામાં હવે માત્સર્ય નથી એ બતાવવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે જેમ આ ચરણની રજ ધન્ય છે તેમ તે ગોપી, જેને ભગવાન્ એકાંતમાં લઈ ગયા તે પણ ધન્ય છે. ‘આલ્યઃ’ એ પ્રમાણે ગોપીજનો જે સંબોધન વાપરે છે તેનો ભાવ એવો છે કે પોતાનાં વચનોમાં બીજાંઓને વિશ્વાસ ઉપજે અને બીજાંને પોતે છેતરતાં નથી એમ ખાત્રી થાય. આ પ્રમાણે ભગવાનના ચરણની રેણુની જે શ્રેષ્ઠતા દર્શાવવામાં આવી તે ઉપરથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે પોતાના દોષને દૂર કરવાને માટે રેણુ જ ધારણ કરવી જોઈએ. આ રજ પહેલાં આ સ્થલે જ હતી પણ તે વખતે તેમની શ્રેષ્ઠતા ન હતી; પરંતુ જ્યારે તેને ભગવાનના ચરણનો સંબંધ થયો ત્યારે તેને ધન ઘટે છે, તે ધન્ય થાય છે. જેમ દેવોનું ધન ઈન્દ્ર છે તેમ આપણું ધન કૃષ્ણ છે. જેમ ધન વડે સર્વ પદાર્થો મળી શકે છે તેમ પ્રભુ વડે પણ બધા પદાર્થો પ્રાપ્ત થઈ શકે છે. આ રજ ધન્ય છે એ સમજાવવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે ‘યાન્’. બ્રહ્મા, મહાદેવ અને લક્ષ્મીજી જે દેવતારૂપ પાલન કરનારી શક્તિ છે. આ બધા દેવો જ્યારે પોતપોતાના અધિકાર પ્રમાણે કાર્ય કરે છે ત્યારે તેમના કાર્યમાં દોષ સંભવે છે, એટલે તે દોષ દૂર કરવાને માટે તેમણે ભગવાનના ચરણકમલની રજ પોતાના મસ્તક ઉપર ધરી. અહિં જે લક્ષ્મીજીનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે બ્રહ્માનંદરૂપ નથી એ જણાવવાને માટે લક્ષ્મીજીના સંબંધમાં દેવતા પદ વાપરવામાં આવ્યું છે. આ કારણથી આ ભગવાનના ચરણકમલની રજને અમારા મસ્તક ઉપર ધારણ કરીને અમે પણ દોષરહિત થઈને અને જે ગોપીને ભગવાન્ લઈ ગયા છે તે ગોપીના જેવાં બનીએ. ૨૯.

હવે રજોગુણવાળી ગોપીઓ ‘તસ્યાઃ’ એ શ્લોક કહે છે:

તસ્યા અમૂનિ નઃ ક્ષોભં કુર્વન્ત્યુચ્ચૈઃ પદાનિ યત્ ।

યૈકાપહૃત્ય ગોપીનાં રહો ભુક્તેઽચ્યુતાધરમ્ ॥૩૦॥

જે ગોપી એકલી ભગવાનને લઈ જઈને સર્વ ગોપીઓના સરખા ભાગરૂપ

ભગવાનના અઘરામૃતનું એકાંતમાં પાન કરે છે તે ગોપીનાં આ પગલાં અમને અતિશય ક્ષોભ ઉપજાવે છે. ૩૦.

ભગવાનના ચરણારવિંદની રજ તો ખરેખર તેવી-ધન્ય-જ છે, પરંતુ ભગવાનની સાથે જતી આ ગોપીનાં આ પગલાં અમને ક્ષોભ ઉપજાવે છે. તેમાં પણ ‘ઉચ્ચૈઃ’ એટલે અતિશય (ક્ષોભ ઉપજાવે છે). ભગવાન એકલા જા્ય તેના કરતાં કોઈની સાથે જા્ય એ ભક્તિમાર્ગમાં યોગ્ય છે એમ જો કહેવામાં આવે તો ગોપીજનો તેનો ઉત્તર શ્લોકના બીજા અડધા ભાગમાં આપે છે. ‘યત્’ એટલે કારણ કે, બધીય ગોપીઓના ભાગરૂપ ભગવાનનું જે અઘરામૃત છે તેનું, બધી ગોપીઓને છોડીને, આ ગોપી એકલી જ પાન કરે છે. તેમાં પણ બીજી બધી ગોપીઓની રજા વિના તે ગોપી ભગવાનના અઘરામૃતનું એકાંતમાં પાન કરે છે. ઘણી સ્ત્રીઓના સંબંધને લીધે હવે ભગવાન કોઈનો ભોગ નહિ કરે, એટલે તે ગોપીનો ભગવાન કેવી રીતે ભોગ કરશે?—એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો ગોપીજનો કહે છે કે ‘અચ્યુત’. ભગવાન ખરેખર પૂર્ણકામ જ છે, તેમની કોઈ દિવસ પણ ચ્યુતિ થતી નથી. ૩૦.

બીજાં ગોપીજનોએ તો તેથી પણ વિશેષ ખેદ કર્યો એમ ‘ન લક્ષ્યન્તે’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે :

ન લક્ષ્યન્તે પદાન્યત્ર તસ્યા નૂનં તૃણાડ્કુરૈઃ ।

ખિદ્યત્ સુજાતાઙ્ઘ્રિતલામુન્નિન્યે પ્રેયસીં પ્રિયઃ ॥૩૧॥

અહિં તો તે ગોપીનાં પગલાં જણાતાં પણ નથી. ખરેખર, જ્યારે તૃણના અંકુરોથી તે ગોપીના કોમલ પગનાં તળિયાં પીડાતાં હશે ત્યારે તે પ્રિયાને પ્રિયે-કૃષ્ણે-પોતાના ખભા ઉપર તેડી લીધી હશે. ૩૧.

(આ ગોપીજનો બીજાં ગોપીજનોને કહેવા લાગ્યાં કે) અરે! તે ગોપી ભગવાનના અઘરામૃતનું પાન કરે છે એમ શું વિચાર્યા કરો છો? આટલે દૂર સુધી આવેલાં તે ગોપીનાં પગલાં હવે આગળ જણાતાં નથી. હવે પગલાં જણાતાં નથી તે ઠીક થયું એમ કહેવું નહિ. ગોપીજનો તેનું કારણ સમજાવતાં કહે છે કે તે ગોપીના પગનું તળિયું તણખલાના અંકુરોથી પીડાતું હતું. તે વખતે તે ગોપીને ભગવાને કેઢ ઉપર અથવા તો ખભા ઉપર તેડી લીધી. વસ્તુતઃ તો ભગવાને તે ગોપીને બે હાથ વતી ઉચકી લીધી તેથી આ ગોપીજનોને વધારે ખેદ થાય છે. અરે! ભગવાન આ પ્રમાણે શી રીતે કરે? એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેના સમાધાનમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘પ્રેયસીમ્’. તે ગોપી ભગવાનને બહુ પ્રિય છે, અને ભગવાન પોતે પણ તે ગોપીને (બહુ) પ્રિય છે. તેથી એમ જણાય છે કે ભગવાને તેને ખભા ઉપર બેસાડી

નથી પણ ફક્ત પોતાના બે હાથ વતી ઉંચકી લીધી છે. ૩૧.

વળી, આ પ્રમાણે તે ગોપીને બે હાથ વતી ઉંચકીને ભગવાન્ બહુ દૂર જઈ શકે એમ નથી. તેથી કોઈક સ્થાનમાં આરામ લઈને તે ગોપીને માટે ભગવાન્ ફૂલ પણ ચૂંટે છે એમ ‘અત્ર’ એ શ્લોકમાં ગોપીજનો કહે છે:

**અત્ર પ્રસૂનાવચયઃ પ્રિયાર્થે પ્રેયસા કૃતઃ ।**

**પ્રપદાક્રમણે તે પશ્યતાસકલે પદે ॥૩૨॥**

અહિં પ્રિયાને માટે પ્રિયે ઝાડ ઉપરથી ફૂલ ચૂંટેલાં જણાય છે જુઓ, પગના આગલા ભાગ ઉપર રહેવાથી આ અધૂરાં પગલાં પડ્યાં છે. ૩૨.

પુષ્પોનો અવચય એટલે ઝાડ ઉપરથી ફૂલ ચૂંટેલાં તે. ભગવાન્ પોતાને માટે જ ફૂલ ચૂંટે છે એમ માનવું નહિ; કારણ કે તે ગોપી થાકી ગઈ છે, તેથી તેને-પોતાની પ્રિયાને-માટે જ ભગવાન્ ઝાડ ઉપરથી ફૂલ ચૂંટે છે. તે ગોપી તો થાકી ગઈ છે એટલે તે ફૂલો ચૂંટેવાને માટે અશક્ત જ છે. આ વાત ‘પ્રેયસા કૃતઃ’ એ શબ્દોમાં ગોપીજનો કહે છે. તે ગોપી ભગવાનના કરતાં નીચી છે, ઠીંગણી છે, અને તે એટલી બધી નાજુક છે કે તે પોતાના પગના આગલા ભાગ ઉપર ઉભા રહેવાને માટે પણ અશક્ત છે. તેથી તેના પ્રિયે-કૃષ્ણે-જ ફૂલો ચૂંટેલાં, કારણ કે ભગવાનનાં પગલાં પ્રપદાક્રમણ છે. પગના આગલા ભાગથી જ આક્રમણ છે જેમનું એવાં પગલાં પ્રપદાક્રમણ કહેવાય છે. તેથી જ તે પગલાં અધૂરાં જણાય છે, અર્થાત્ તે પગલાંનો પાછલો ભાગ સ્પષ્ટ જણાતો નથી. ‘પશ્યત’-જુઓ-એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બાબતમાં કોઈ જાતનો સંદેહ નથી. ૩૨.

આ સિવાયનાં પણ બીજાં તામસી ગોપીજનો ‘કેશપ્રસાધનમ્’ શ્લોકમાં અધિક અર્થનું સૂચન કરે છે :

**કેશપ્રસાધનં ત્વત્ર કામિન્યાઃ કામિના કૃતમ્ ।**

**તાનિ ચૂડયતા કાન્તામ્ ઉપવિષ્ટમ્ ઈલ ધ્રુવમ્ ॥૩૩॥**

અહિં તો કામી ભગવાને કામિનીના કેશ ગુંથેલા જણાય છે. અહિં તો અવશ્ય તેના કેશ ગુંથતાં તે કાન્તાની પાસે કાન્ત બેઠેલા હોવા જોઈએ. ૩૩.

વેણીના આકારમાં અથવા તો અંબોડાના આકારમાં કેશોને નખ વડે જ ગુંથવામાં આવે છે. ‘તુ’ શબ્દ આ સિવાયના બીજા પક્ષની વ્યાવૃત્તિ કરે છે. અહિં, ખરેખર, જ્ઞાનનો ઉપદેશ સંભવતો નથી. આ વાત ‘કામિન્યાઃ કામિના કૃતમ્’ એ શબ્દોમાં ગોપીજનો કહે છે. કેશોને ગુંથવાનું કામ તો ઉભા થઈને પણ કરી શકાય છે, પરંતુ કેશની અંદર પુષ્પ મૂકવાનું કામ ઉભા રહીને થઈ શકતું નથી. પુષ્પો ખોળામાં

મૂકીને ધીમે ધીમે ક્રમસર તેમને કેશમાં મૂકવાં જોઈએ. તેથી કેશમાં પુષ્પો ગુંથતી વખતે ભગવાન્ અહિં બેઠેલા હોવા જોઈએ. આ વાત ધ્રુવ-સત્ય-છે. ‘કાન્તામ્ ઉપ’ એટલે કાન્તાની પાસે અથવા તો કાન્તાને ઉદ્દેશીને-તેની સામે-(ભગવાન્ બેઠેલા હોવા જોઈએ), કારણ કે તે જ પ્રકારની આકૃતિ જોવામાં આવે છે. ૩૩.

આ પ્રમાણે રસને માટે ભગવાનને એકાંતમાં આણવામાં આવ્યા, બધી સામગ્રી તૈયાર કરીને અને અલંકાર કરવામાં આવ્યો એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું, જેને માટે આટલું બધું કરવામાં આવ્યું તે ગોપીજનો ‘રેમે’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

રેમે તયા ચાત્મરત આત્મારામોડપ્યખણ્ણિતઃ ।

કામિનાં દર્શયન્ દૈન્યં સ્ત્રીણાં ચૈવ દુરાત્મતામ્ ॥૩૪॥

આત્મારામ ભગવાને, આત્મામાં રમણ કરતાં છતાં, અખંડિત રહીને, કામી પુરુષોનું દૈન્ય અને સ્ત્રીઓની દુષ્ટતા જણાવવાને માટે, તે ગોપીની સાથે તથા લક્ષ્મીજીની સાથે રમણ કર્યું. ૩૪.

કામ પુષ્ટ થયો એટલે આત્મામાં રતિ કરનાર ભગવાને તે ગોપીની સાથે રમણ કર્યું. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનો અર્થ લક્ષ્મીજી છે અથવા તો ભગવાનની સાથે સાયુજ્ય જેમણે મેળવેલું છે એવાં અંતર્ગૃહગતા ગોપીઓ છે. (અર્થાત્ લક્ષ્મીજીની સાથે અથવા તો સાયુજ્ય પામેલી અંતર્ગૃહગતા ગોપીઓ સાથે પણ ભગવાને રમણ કર્યું.) અથવા તો ‘ચ’નો અર્થ એવો પણ થાય કે તે ગોપીએ પણ રમણ કર્યું, આત્માને વિષે જ જેની રતિ છે તે આત્મરતિ કહેવાય છે. તેથી ભગવાને પોતે નિષ્કામ રહીને જ તે ગોપીનો કામ તેની ઈચ્છા પ્રમાણે પૂર્ણ કર્યો. આ દશામાં પણ ભગવાન્ આત્મરત જ હતા. તે ગોપી શૃંગારરસનો આધાર થઈ શકે તેટલા માટે ભગવાને તેનામાં શૃંગારરસના સ્થાયિભાવરૂપ પોતાના રસાત્મક સ્વરૂપનું સ્થાપન કર્યું. આત્માને વિષે જ-સ્થાયિભાવરૂપ રસાત્મક સ્વરૂપને વિષે જ-જેમની મુખ્ય રતિ, આસક્તિ, છે તે આત્મરતિ કહેવાય છે; અને આત્માને વિષે જ-સ્થાયિભાવ રૂપ રસાત્મક સ્વરૂપને વિષે જ-જેમનું રમણ, ક્રીડા, છે તે આત્મારામ કહેવાય છે. જેમ ભગવાન્ આત્મરત થયા છતાં પણ આત્મારામ જ હતા તેમ નખ અને દંતના ક્ષતથી ખંડિત થએલા હતા છતાં પણ તે અખંડિત રહ્યા હતા, કારણ કે ઈન્દ્રિય, અંતઃકરણ અને શબ્દ, સ્પર્શ, રૂપ ઇત્યાદિ વિષયોથી તે ખંડિત થયા ન હતા. (ભગવાનના સ્વરૂપાનંદનો સંબંધ ઈન્દ્રિય, અંતઃકરણ અથવા રૂપાદિ વિષય સાથે ન હતો.) જો ભગવાનનો આનંદ બીજે ઠેકાણે જાય તો ભગવાન્ બીજે ઠેકાણે આસક્ત થાય. (અર્થાત્ ભગવાને પોતાના સ્વરૂપાનંદનું સ્થાપન તે ગોપીમાં કર્યું હતું તેથી તે

ગોપીમાં આસક્ત થયા અને તેની સાથે રમણ કર્યું.) અરે! આવા અયોગ્ય સ્થલમાં-જ્યાં તૃણના અંકુરોથી પગમાં પીડા થાય છે અને જ્યાં શય્યા વિગેરે સામગ્રી નથી એવા અનુચિત સ્થલમાં-આટલો બધો પ્રયાસ કરીને ભગવાને તે ગોપીની સાથે આ પ્રમાણે રમણ કેમ કર્યું? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં ગોપીજનો 'કામિનાં દર્શયન્ દૈન્યમ્' એ શબ્દોમાં ભગવાને જે અયોગ્ય સ્થલમાં રમણ કર્યું તેનું પ્રયોજન કહે છે. કામી લોકો તો આ પ્રમાણે જ દીન બને છે. 'કામથી પીડાએલા મનુષ્યો, ખરેખર, સ્વાભાવિક રીતે કૃપણ, દીન હોય છે' તેથી ભગવાન્ તે કામી લોકોનું અનુકરણ કરે છે. ભગવાન્ જો આ પ્રમાણે ન કરે તો તે કામી લોકોનો નિરોધ થાય નહિ. (પણ જ્યારે કામી લોકો જાણે કે કામી લોકો અંતે દીન જ બને છે ત્યારે તેઓ કામનો ત્યાગ કરીને ભગવાનને ભજે છે, અને તે પ્રકારે તેમનો નિરોધ સિદ્ધ થાય છે.) આ સિવાય બીજું પણ પ્રયોજન છે એમ ગોપીજનો 'સ્ત્રીણામ્' ઇત્યાદિ શબ્દોમાં કહે છે. ભગવાને આ પ્રમાણે તે ગોપીની સાથે રમણ કરીને સ્ત્રીઓની દૃષ્ટતા પણ દેખાડી. સ્ત્રીઓમાં કોઈ પણ જાતની અશક્તિ નથી, તેમ તેમનામાં સુકુમારતા પણ નથી, પરંતુ તેમણે પુરુષને વશ કર્યો એટલે તરત જ તેઓ દૃષ્ટતા જ કરે છે, કારણ કે 'આ સ્ત્રીઓ વરૂનાં હૃદયો છે' એ પ્રમાણે શ્રુતિ છે. તેથી કામી પુરુષોની દીનતા અને સ્ત્રીઓની દૃષ્ટતા એ બંનેય દેખાડવાને માટે ભગવાને આ પ્રમાણે રમણ કર્યું. ૩૪.

આ પ્રમાણે ગોપીજનોમાં ભગવાનનો આવેશ થવાથી બધી વસ્તુના યથાર્થ સ્વરૂપની તેમને જે સ્ફૂર્તિ થઈ તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. હવે શુકદેવજી 'ઇત્યેવમ્' એ શ્લોકમાં ઉપસંહાર કરે છે:

||શ્રીશુક ઉવાચ||

ઇત્યેવં દર્શયન્ત્યસ્તાઃ ચેરુર્ગોપ્યો વિચેતસઃ ||૩૪||

આ પ્રમાણે ભગવાનની લીલાઓ દેખાડતાં તે ગોપીજનો વિક્ષિપ્ત ચિત્તથી વનમાં ફરવા લાગ્યાં. ૩૪||

ગોપીજનો આ પ્રમાણે ભગવાનની લીલાઓ દેખાડતાં દેખાડતાં ચાલવા લાગ્યાં. આ બધાં ગોપીજનો અનેક પ્રકારનાં હતાં તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'ગોપ્યઃ'. ગોપીઓ, ખરેખર, શાસ્ત્ર ભણીને ભગવદીય થયાં નથી, પરંતુ સ્વભાવથી જ ભગવદીય થયાં છે. અને સ્વભાવ તો અનેક પ્રકારનો છે એટલે ગોપીજનો પણ અનેક પ્રકારનાં હોય એ વાત બરોબર ઘટી શકે છે. વળી, તે ગોપીજનો કાંઈ પણ જાણીને-કોઈ પણ પ્રકારનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને-બોલતાં નથી, પરંતુ તે તો બેભાન થઈ ગએલાં છે. અથવા તો મૂલ શ્લોકનો આ પ્રમાણે પણ

અન્વય થઈ શકે, આ પ્રમાણે ભગવાનની લીલાઓ દેખાડતાં ગોપીજનો બેભાન થઈ ગયાં કારણ કે ત્રણેય પ્રકારો-રસાસક્તિ, ભગવત્ક્રિયા અને ગર્વાભાવ એ ત્રણ પ્રકારો-સમાપ્ત થઈ ગયા. તેથી તે ગોપીજનો આગળ જઈ શક્યાં નહિ, તેમજ બોલી પણ શક્યાં નહિ. ૩૪૥.

શુકદેવજીએ આ પ્રમાણે આ બધાં ગોપીજનોના સ્વરૂપનું વર્ણન કર્યું, અને હવે ‘ગોપીમ્’ ઈત્યાદિ સાડા ત્રણ શ્લોકોમાં પેલી ગોપી જેને ભગવાન લઈ ગયા હતા તેના સ્વરૂપનું વર્ણન કરે છે :

યાં ગોપીમનયત્ કૃષ્ણો વિહયાન્યાઃ સ્ત્રિયો વને ॥૩૫॥

સા ચ મેને તદાત્માનં વરિષ્ઠં સર્વયોષિતામ્ ।

હિત્વા ગોપીઃ કામયાના મામસૌ ભજતે પ્રિયઃ ॥૩૬॥

તતો ગત્વા વનોદેશં દપ્તા કેશવમબ્રવીત્ ।

ન પારયેડહં ચલિતું નય માં યત્ર તે મનઃ ॥૩૭॥

એવમુક્તઃ પ્રિયામાહ સ્કન્ધમારુહ્યતામિતિ ।

તતશ્ચાન્તર્દેધે કૃષ્ણઃ સા વધૂરન્વતપ્યત ॥૩૮॥

બીજી સ્ત્રીઓનો ત્યાગ કરીને ભગવાન જે ગોપીને વનમાં લઈ ગયા હતા તે ગોપી ‘કામથી આવેલી સર્વ ગોપીઓનો ત્યાગ કરીને આ પ્રિય મને ભજે છે’ એમ સમજી પોતાને સર્વ સ્ત્રીઓમાં શ્રેષ્ઠ માનવા લાગી. ત્યાંથી આગળ અતિ રમણીય વનપ્રદેશમાં જઈને ગર્વાવાળી તે ગોપીએ કેશવને કહ્યું કે ‘મારાથી ચલાતું નથી, જ્યાં આપનું મન હોય ત્યાં મને તેડીને જાવ’ જ્યારે તે ગોપીએ ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યારે શ્રીકૃષ્ણે પોતાની પ્રિયાને કહ્યું કે ‘મારા ખભા ઉપર ચઢી જાવ’. પછી (પેલી ગોપી ભગવાનના ખભા ઉપર બેસવા જતી હતી એટલામાં જ) શ્રીકૃષ્ણ અંતર્ધાન થઈ ગયા અને તે અનન્યપૂર્વા સ્ત્રી પશ્ચાત્તાપ કરવા લાગી. ૩૫૦.-૩૮.

(શ્રીમહાપ્રભુજી આ સાડા ત્રણ શ્લોકોનો સાર આપી તેનું પ્રયોજન સમજાવે છે.) પ્રથમ આ ગોપીને અભિમાનરૂપી દોષ પ્રાપ્ત થયો, પછી તેણે અભિમાનનાં વચન કહ્યાં, ભગવાને તે વચનનો ઉત્તર આપ્યો અને પહેલાંની માફક ભગવાન તિરોહિત થઈ ગયા. આ ગોપીને પોતાનો દોષ દેખાય એટલા માટે ભગવાન તેનો ત્યાગ કરીને અંતર્હિત થઈ ગયા, (આ ગોપી પોતાની દયાજનક સ્થિતિ જોઈને વિચાર કરે કે ભગવાને જે મારો ત્યાગ કર્યો છે તે મારા દોષને લીધે જ કર્યો છે, એટલે આ બાબતમાં અભિમાનરૂપી દોષ મારો જ છે એમ તે ગોપીને ભાન થાય છે.) ૧.

પહેલાં જે ગોપીમાં અભિમાનરૂપી દોષ ન હતો એવી ગોપીને ભગવાન લઈ

ગયા, કારણ કે ભગવાન્ કૃષ્ણ છે, સદાનંદ છે, એટલે તે ગોપીમાં સ્વરૂપાનંદનું સ્થાપન કરવાને માટે ભગવાન્ તેને એકાંતમાં લઈ ગયા. બીજી બધી ગોપીઓ તો સ્ત્રીઓ હતી, દુરાત્મા હતી, તેમને માન, મદ વિગેરે થયો હતો. આ ગોપી તો મુઝ્યા જ હતી, ભલી હતી; તેથી બીજી દુરાત્મા ગોપીઓનો વનમાં ત્યાગ કરીને ભગવાન્ પેલી ભલી ગોપીને લઈ ગયા, જેથી વનમાં રહેલી ગોપીઓને સમજણ પડે કે અમારામાં જ દોષ હતો તેથી જ અમારો ત્યાગ કરીને ભગવાન્ પેલી નિર્દોષ ગોપીને લઈ ગયા. ૩૫.

(આ બધાં ગોપીજનોનો અને પેલી ગોપીનો રસ સરખો છે છતાં પણ આ બધાં ગોપીજનોને તે વખતે અભિમાન થયું અને પેલી ગોપીને તે વખતે અભિમાન ન થયું; પરંતુ હમણાં તો તે ગોપીને પણ અભિમાન થયું તેનું શું કારણ? આનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે)

ભગવાન્ જે ગોપીને એકાંતમાં લઈ ગયા તે ગોપી પોતે નાયિકા હતી, અને નાયિકાઓનો સ્વભાવ અભિમાની હોય છે, છતાં પણ અત્યાર સુધી પોતાના નાયક-પ્રભુ-ને અધીન રહી અને આ પ્રમાણે નાયિકાના સ્વભાવથી વિરુદ્ધ વર્તી. હવે નાયિકાના જે અભિમાન વિગેરે સ્વાભાવિક ગુણો તથા પ્રૌઢ ભાવ તે બંનેએ તે ગોપીના કોમલ ભાવનો-નાયકને અધીન રહેવામાં જે કોમલ ભાવ છે તેનો-નાશ કર્યો અને તે પોતે પણ બીજી ગોપીઓની માફક અભિમાની થઈ. ૧.

ભગવાનની સાથે ગએલી ગોપીને પણ અભિમાન થયું એ વાત શુકદેવજી આ શ્લોકમાં કહે છે. બીજી બધી ગોપીઓનો ત્યાગ કરીને ભગવાન્ જ્યારે આ ગોપીને લઈ ગયા ત્યારે આ ગોપી પોતાની જાતને બધી સ્ત્રીઓમાં શ્રેષ્ઠ માનવા લાગી. શ્લોકમાં પૂર્વનો સમુચ્ચય કરવાવાળો જે ‘ચ’ છે તે ‘અપિ’-પણ-ના અર્થમાં વપરાયો છે. પહેલાં આ ગોપીને આવું અભિમાન થયું ન હતું એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદા’. આ ઉપરથી એમ સમજાય છે કે ભગવાન્ આખા વર્ગના દોષને લીધે ભક્તોનો ત્યાગ કરતા નથી પરંતુ દરેક વ્યક્તિના દોષને લીધે તે તે વ્યક્તિનો ત્યાગ કરે છે. આ ગોપીને જે અભિમાન થયું તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે ‘હિત્વા’. બધી ગોપીઓ કામનાવાળી હોવા છતાં તેમનો ત્યાગ કરીને આ ભગવાન્ મને ભજે છે એમ આ ગોપી માનવા લાગી. તેમાં પણ ભગવાન્ પ્રિય છે, જેમ મને પ્રીતિ થાય તેમ જ તે કરે છે; પરંતુ કોઈ વખત તે મને અપ્રિય લાગે એવું કરતા નથી; તેથી હું સર્વ સ્ત્રીઓમાં શ્રેષ્ઠ છું એમ પણ આ ગોપી માનવા લાગી. ભગવાન્ બીજી બધી ગોપીઓનો ત્યાગ કરીને મને એકલીને જ પોતાની સાથે લઈ

ગયા એ વાત બીજી કોઈ રીતે સમજાવી શકાય એમ નથી તેથી આ ગોપી અનુમાન કરે છે કે હું સર્વ સ્ત્રીઓમાં શ્રેષ્ઠ છું. ૩૬.

આ ગોપીની ઉત્તમતા દોષના અભાવને લીધે જ છે, નહિ કે બીજા ધર્મને લીધે. (આ ગોપીમાં જે દર્પ જોવામાં આવે છે તે ભગવાને જ વિપ્રયોગરસનું દાન કરવાને માટે ઉત્પન્ન કર્યો છે એટલે તે દોષરૂપ નથી. જેમ ભગવાનના રમણમાં દોષ હોતો નથી તેમ ભગવદ્ભાવાત્મક પદાર્થમાં દોષ હોતો નથી.) તેથી જ તે ગોપીને ભ્રમ થાય છે. (ભગવાન પ્રાકૃત કામી પુરુષની માફક કામને અધીન થઈને પોતાને-નાયિકાને-વશ થશે એમ જાણીને પોતાનામાં ચાલવાની શક્તિ હતી છતાં પણ હું ચાલવાને અશક્ત છું એમ કહેવાથી ભગવાન મને પોતાના સ્કંધ ઉપર પણ બેસાડીને લઈ જશે એમ આ ગોપીએ માન્યું; અને આ પ્રકારનું જે જ્ઞાન તે જ ભ્રમ.) ભ્રાંત થએલી ગોપીના વાક્યનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તતો ગત્વા’. ભોગસ્થાન થી આગળ અતિરમણીય વનપ્રદેશમાં જઈને. આ તો પોતાના સ્વાર્થને માટે જાય છે, નહિ કે મારે માટે. તો પછી બીજાને માટે મારે શું કરવા ખેદ પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ? આ પ્રમાણે વિચાર કરીને આ ગોપીને દર્પ થયો. આ પ્રકારની ભગવન્કૃપાનો તેને અધિકાર ન હતો, અને ભગવાનની જે કૃપા તેણે મેળવી હતી તે કૃપાને લીધે તેને અજીર્ણ-અભિમાન-થયું અને બ્રહ્મા વિગેરેને પણ મોક્ષ આપનાર, દેહ, ઈન્દ્રિય વિગેરેથી રહિત, પરમાનંદરૂપ એવા કેશવ ભગવાનને તેણે કહ્યું. આ ગોપીએ કેશવ ભગવાનને જે વાક્ય કહ્યું તેનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ન પારયે’. હું ચાલી શકું એમ નથી. તો પણ ઈષ્ટ દેશમાં તો જવું જોઈએ એમ જો આ ગોપીને કહેવામાં આવે તો આ ગોપી કહે છે કે ‘યત્ર તે મનઃ’. જ્યાં તમારું મન હોય ત્યાં મને તમે જ લઈ જાવ. ૩૭.

ગોપીએ જ્યારે આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યારે ભગવાન જે અતિ ચતુર છે તેમણે તે વાક્યનો જે ઉત્તર આપ્યો તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘એવમુક્તઃ’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કરે છે. આ ગોપી ભગવાનની પ્રિયા છે એટલે ભગવાને તેના વાક્યનો ઉત્તર આપ્યો. ભગવાન ઉત્તર આપે છે કે ‘સ્કન્ધમારુહ્યતામ્’. આ ગોપીને નૃત્ય કરવાની ઈચ્છા છે, અને પોતાની અંદર જે રસ રહેલો છે તેનો અભિનય કરીને બહાર પ્રકટ કરવાની પણ ઈચ્છા છે. રસનો અભિનય ભૂમિ ઉપર પગ મૂકીને કરવામાં આવે-પોતાના હૃદયમાંથી રસને બહાર કાઢવામાં આવે-તો ઊર્ધ્વભાવ (પોતાના હૃદયમાં ગુપ્ત રહેલો રસ અનેક જાતના ભાવોનો જે અનુભવ કરાવે છે તેનું નામ ઊર્ધ્વભાવ) ન થવાથી રસ ચ્યુત થઈ જાય છે, સ્વરૂપતઃ જ નષ્ટ પામે છે. તેથી ભગવાને કહ્યું કે



સ્વસ્કંધ-પોતાના ખભા-ઉપર જ બેસી જાવ. (ભગવાનના કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે રસનો અનુભવ તમારા પોતાનામાં જ કરો, રસને બહાર પ્રકટ કરવા જેવો નથી, નહિ તો અન્યથા થઈ જશે.) જે પોતાના ખભા ઉપર બેસીને નૃત્ય કરે છે તે જ નટોમાં વટુ-પોતાના અંગનું તે વેષ્ટન કરવામાં ચતુર-છે. સંગીતશાસ્ત્રમાં એક પ્રકારના નૃત્યમાં પોતાના ખભા ઉપર ચઢવાનું હોય છે. તે અતિ કઠિન છે, અને જે નટ તે પ્રમાણે કરે છે તે સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાય છે. (પોતાના ખભા ઉપર બેસીને નૃત્ય કરવાનું જે કામ છે તે અશક્ય છે,) અને ભગવાન ખરેખર આવી અશક્ય બાબતનો ઉપદેશ કરે છે, કારણ કે ગોપીએ તે પ્રમાણે ભગવાનને પ્રાર્થના કરી છે. ભગવાનનું મન, ખરેખર, અલૌકિક રસના અભિનયમાં છે. ભૂમિ ઉપર પગ મૂકવાથી-પોતાના હૃદયમાંથી રસને કાઢીને બહાર પ્રકટ કરવાથી-અલૌકિક રસનું અભિનયન થતું નથી. જો આ ગોપી અશક્ત હોત તો આ પ્રમાણે-‘યત્ર તે મન’ એમ દર્પથી-શી રીતે કહેત? તેથી મારું મન તેમાં જ-રસના અભિનયનમાં જ-છે. તેથી જો આ ગોપી તે પ્રમાણે કરશે-વિરહથી આર્તિ પ્રકટ કરશે-તો જ તેને હું લઈ જઈશ. જે અધિકારી નથી તેને લઈ જઈ શકાય નહિ. ભગવાન તો અન્યથા-અસત્ય-કહેતા નથી એટલે ભગવાનના સ્કંધની સંભાવના નથી; પરંતુ તે ગોપીએ મોહને વશ થઈને તે જ પ્રમાણે-ભગવાનના ખભા ઉપર ચઢી જવાનું-જાણ્યું. મોહને વશ થઈને તે ગોપી ભગવાનના સ્કંધ ઉપર ચઢી જવાની ઈચ્છા કરે છે એમ જ્યારે ભગવાને જોયું ત્યારે ત્યાંથી પણ તે તિરોહિત થઈ ગયા; કારણ કે આ તો કૃષ્ણ-સદાનંદ-છે. ભગવાનના તિરોધાનથી પહેલાંની માફક જ-બીજાં ગોપીજનોની માફક-તે ગોપી પણ શોક કરવા લાગી એમ શુકદેવજી ‘સા વધૂરન્વતપ્યત’ એ શબ્દોમાં કહે છે. ‘વધૂ:’ એટલે તે અનન્યપૂર્વા વ્રતમધ્યસ્થ ગોપી, તેમાં પણ ગુણાતીત. તેથી ‘અન્વતપ્યત’-તે અનુતાપ-પશ્ચાત્તાપ-કરવા લાગી. (આ ગોપીએ પશ્ચાત્તાપ કર્યો તેથી તે ગુણાતીત છે એમ અનુમાન થાય છે. જો આ ગોપી ગુણાતીત ન હોત તો તેણે પશ્ચાત્તાપને બદલે ક્રોધ કર્યો હોત.) ૩૮.

આ ગોપીને ફક્ત હૃદયમાં જ પશ્ચાત્તાપ થયો એમ નહિ પરંતુ તે પશ્ચા-  
ત્તાપને લીધે બહાર પણ વિલાપ થયો એમ શુકદેવજી ‘હા નાથ’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

હા નાથ! રમણ! પ્રેષ! ક્વાસિ ક્વાસિ મહાભુજ! |

દાસ્યાસ્તે કૃપણાયા મે સખે દર્શય સન્નિધિમ્ ||૩૯||

હા નાથ! હા રમણ! પ્રિયતમ! હા મહાભુજ! આપ ક્યાં છો, ક્યાં છો? હે  
સખા! આપની કૃપણ દાસીને-મને-પાસે આવીને દર્શન આપો. ૩૯.

‘હા’ એ પદનો પ્રયોગ પશ્ચાત્તાપના અર્થમાં થએલો છે. પશ્ચાત્તાપ થવાનું કારણ એ કે મેં-ગોપીએ-અયુક્ત કામ કર્યું. તો પણ હું ‘નાથ,’ તમે જ મારા સ્વામી છો, તેથી મારો દોષ જ તમારે દૂર કરવાનો છે, પરંતુ મારો ત્યાગ કરવાનો નથી. અરે! હું તો દૂર ઉભો રહીને તારું રક્ષણ કરીશ એમ જો ભગવાન આ ગોપીને કહે તો આ ગોપી કહે છે કે ‘રમણ’. તમે જ રતિને વધારનારા ભોક્તા છો, અને અમે તમારી ભોજ્યરૂપા છીએ. તેથી તમારે અમારી પાસે જ સ્થિતિ કરવી જોઈએ એમ તાત્પર્ય છે. અરે! હું તમને અનુકૂલ રહીને ફક્ત તમારું રક્ષણ કરીશ, કારણ કે ભોક્તાને-મને-ભોગ કરવાની ઈચ્છા નથી. ભોજ્ય પદાર્થની ઈચ્છાને લીધે કાંઈ ભોક્તા ભોગ કરતો નથી. આ પ્રમાણે જો ભગવાન ગોપીને ઉત્તર આપે તો ગોપી કહે છે કે ‘પ્રેષ્ઠ’. તમારા વિના બીજો કોઈ પદાર્થ મારી પ્રીતિનો-સ્નેહનો-વિષય નથી કે જેથી તેનું આલંબન રાખીને હું જીવી શકું. અત્યંત વ્યાકુલ થએલી આ ગોપીના વચનનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ક્વાસિ ક્વાસિ’. મોહને લીધે આ ગોપી અંધ થઈ ગઈ અને પડી ગઈ, તેથી પોતાને ઉઠાડવાને માટે તે ‘મહાભુજ’ એ પ્રમાણે ભગવાનને સંબોધે છે. મહાન્ છે ભુજ જેમના એ મહાભુજ ભગવાન્. ભગવાનની ક્રિયાશક્તિ મોટી છે. તેથી મારો દોષ જ તમારે દૂર કરવા જેવો છે, નહિ કે મારો તમારે ત્યાગ કરવો જોઈએ. કારણ કે હું દાસી છું, તેમાં પણ ‘તે’-તમારી જ-હું દાસી છું, સ્વભાવથી જ હું કૃપણ છું, વગર વિચારે માગનારી છું, તેથી મારા વચનને લીધે તમારે અન્યથાભાવ-બીજો ભાવ-કરવાનો નથી. આ પ્રમાણે આ ગોપીજને ભગવાનની પ્રાર્થના કરી કે તરત જ પરમકૃપાલુ ભગવાને અદૃશ્યરૂપે જ તેને ઉભી કરીને સ્વસ્થ બનાવી. તે સમયે આ ગોપી બોલી કે હું ‘સખે!’ (સખામાં સમાન શીલવ્યસન હોય છે તેથી સખાના ધર્મ પ્રકટ કરી) તમારા ધર્મનો આરોપ કરીને સ્પર્શથી તમારા સાન્નિધ્યનું દર્શન કરાવો. તમે મારી પાસે ઉભા છો, છતાં પણ તમારું સાન્નિધ્ય જોઈ શકાય એવી રીતે તમે કરો. આ ગોપી આ પ્રમાણે બોલતી ઉભી રહી. ભગવાન પણ ત્યાં જ ઉભા રહ્યા. ૩૯.

પછીથી જે બન્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘અન્વિચ્છન્ત્યઃ’ માં કરે છે :

અન્વિચ્છન્ત્યો ભગવતો માર્ગ ગોપ્યો વિચેતસઃ<sup>૧</sup> ।

દદશુઃ પ્રિયવિશ્લેષમોહિતાં દુઃખિતાં સખીમ્ ॥૪૦॥

ભગવન્માર્ગની શોધ કરતાં વિહ્વલ ચિત્તવાળાં તે ગોપીજનોએ પ્રિયના વિયોગથી મૂર્છા પામેલી દુઃખી સખીને જોઈ. ૪૦.

પહેલાં જેમનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે ગોપીજનોએ ભગવાનના

માર્ગની શોધ કરતાં કરતાં બહુ દૂરથી નહિ એવી જ રીતે તે ગોપીને જોઈ. આ બધાં ગોપીજનોને તે ગોપી ઉપર ક્રોધ ન થાય એટલા માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘દુઃખિતામ્’. જે સ્ત્રી દુઃખી હોય છે તેના ઉપર, ખરેખર, ક્રોધ થતો નથી. તે ગોપીના દુઃખનું કારણ બીજું નથી એમ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘પ્રિયવિશ્લેષમોહિતામ્’. પ્રિય એવા જે ભગવાન તેમના જ વિરહથી તે ગોપીને ઘણો મોહ થયો, તે મૂર્છા પામી. તે ગોપી પણ આ બધાં ગોપીજનોની સખી હતી, તેથી સખીભાવે બહુ ગોપીજનોએ તે ગોપીને જગાડી, કારણ કે ‘પાંચ માણસોના સમાગમમાં દુઃખ રહેતું નથી’ એ પ્રમાણે જગતનો ન્યાય છે. ૪૦.

૧. “વિચેતસઃ’ ઈત્યત્ર ‘અવિદૂરતઃ’ ઈતિ પાઠઃ શ્રીમદાચાર્યચરણસમ્મત ઈતિ પ્રતિભાતિ”.

પહેલાં આ બધાં ગોપીજનોએ એમ જાણ્યું કે ભગવાન કૌતુકને-ગમ્મતને-માટે જ આ પ્રમાણે આપણી પાસેથી ચાલ્યા ગયા છે, નહિ કે આપણા દોષને લીધે. જો ગોપીજનોએ પહેલાં આ પ્રમાણે ન જાણ્યું હોત તો તેમણે પોતાનો દોષ દૂર કરવાને માટે જ યત્ન કર્યો હોત. પોતાના દોષનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન ફક્ત ભગવાનની કૃપાથી જ થાય છે, પોતાની મેળે થતું નથી, એમ જણાવવાને માટે તે ગોપીને ભગવાન લઈ ગયા, પછીથી દોષ જણાવવાને માટે જ તેનો ભગવાને ત્યાગ કર્યો. તેથી ભગવદ્વિચ્છાને લીધે તે ગોપીએ આ બધી વાત બીજા બધાં ગોપીજનોને કહી. તે કહેવામાં જે પ્રયોજક-તે ગોપીને માન અને અવમાન કેવી રીતે પ્રાપ્ત થયું એ જણાવનારું પ્રયોજક વાક્ય-હતું તે શુકદેવજી ‘તયા કથિતમ્’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

તયા કથિતમ્ આકર્ણ્ય માનપ્રાપ્તિં ચ માધવાત્ ।

અવમાનં ચ દૌરાત્મ્યાદ્ વિસ્મયં પરમં યયુઃ ॥૪૧॥

તે સખીનું કહેલું શ્રવણ કરીને બીજાં બધાં ગોપીજનોએ નિશ્ચય કર્યો કે માનની પ્રાપ્તિ લક્ષ્મીપતિ ભગવાનના ગુણથી થાય છે, અને અવમાન પોતાના ધર્મ દૃષ્ટતારૂપી અવગુણથી થાય છે, અને તેથી તેઓ પરમ આશ્ચર્ય પામ્યાં. ૪૧.

માધવ-લક્ષ્મીજીના પતિ-ના જ ગુણોને લીધે તે ગોપીને માન પ્રાપ્ત થયું અને પોતાની દૃષ્ટતાને લીધે જ અવમાન પ્રાપ્ત થયું. તે ગોપીએ કહેલું બીજાં ગોપીજનોએ જો કે બહુ સાંભળ્યું પરંતુ તે વિષયમાં તેમણે આ નિર્ણય કર્યો કે તે ગોપીએ જે સન્માન મેળવ્યું તે પોતાના ગુણોને લીધે મેળવ્યું નથી પરંતુ લક્ષ્મીજીના પતિ ભગવાનના જ ગુણોને લીધે મેળવ્યું છે, અને આ બધાં ગોપીજનો લક્ષ્મીજીના અંશો છે; (આ ગોપીઓ લક્ષ્મીના અંશ છે એમ સમજી ભગવાને તેમનું સન્માન કર્યું હતું.) વળી દૃષ્ટતા જે તેનો પોતાનો ધર્મ છે તેને લીધે જ તેણે અવમાન પ્રાપ્ત કર્યું.

‘ચ’ નો અર્થ ખેદ, ભ્રમ વિગેરે છે; અર્થાત્ તે ગોપીને ખેદ, ભ્રમ વિગેરેની પ્રાપ્તિ પણ પોતાની દૃષ્ટતાને લીધે જ થઈ છે. આ પ્રમાણે ભગવાનનું અલૌકિક સામર્થ્ય જોઈને તે બધાં ગોપીજનો ઘણાં વિસ્મય પામ્યાં. આ પ્રમાણે તે ગોપીનાં વાક્યોથી ભગવદ્રૂપી પદાર્થ વિષે ગોપીજનોએ નિર્ણય કર્યો કે શોધખોળ વિગેરે કરવાથી ભગવાન મળી શકતા નથી. ૪૧.

હવે પછી ભગવાનની કૃપા મેળવવામાં ક્યું સાધન છે એ વિચાર કરીને, સર્વ વસ્તુનો પરિત્યાગ કરી દેહનો પરિત્યાગ કરવા સુધીનું સાધન ભગવત્કૃપા મેળવી શકે છે એમ નિશ્ચય કરીને તે ગોપીજનોએ તે પ્રમાણે કર્યું એમ શુકદેવજી ‘તત:’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

તતોઽવિશનૂવનં ચન્દ્રજ્યોત્સ્ના યાવદ્ વિભાવ્યતે ।

તમઃ પ્રવિષ્ટમ્ આલશ્ય તતો નિવવૃત્તુર્હરેઃ ॥૪૨॥

પછી જ્યાં સુધી ચંદ્રનો પ્રકાશ દેખાયો ત્યાં સુધી ગોપીજનોએ વનમાં પ્રવેશ કર્યો, અને જ્યાં અંધકાર જોયો કે ત્યાંથી એ હરિપ્રિયાઓ પાછાં ફર્યા. ૪૨.

પછીથી તે ગોપીજનોએ વનમાં પ્રવેશ કર્યો. (ભગવદ્ભાવથી જે બીજો ભાવ હોય છે તે દોષરૂપ છે અને તે મોહ કહેવાય છે.) આ મોહને દૂર કરવાને માટે ગોપીજનોએ વનમાં પ્રવેશ કર્યો કારણ કે વનમાં જનારાઓને પણ જો મોહ થાય તો પછી વનમાં જવાનું પ્રયોજન શું? ચંદ્રનો પ્રકાશ જ્યાં સુધી દેખાયો ત્યાં સુધી, તેટલે દૂર, તે ગોપીજનો ગયાં; પણ જે ગાઢ વન હતું તેમાં તેમણે પ્રવેશ કર્યો નહિ. જ્યારે ગાઢ વનની અંદર ચંદ્રનાં કિરણો પ્રવેશ કરી શક્યાં નહિ ત્યારે ગોપીજનોએ ત્યાં અંધકાર જોયો અને ત્યાંથી જ તેઓ પાછાં ફર્યા.

અરે! પહેલાં જે ઉદ્યોગ કરીને ગોપીજનો વનમાં ગયાં હતાં તે ઉદ્યોગ કર્યા વિના કેમ તેઓ પાછાં ફર્યા?—એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘હરે:’. હરિની પાસેથી પાછાં આવ્યાં; અથવા તો હરિના સંબંધવાળાં તે ગોપીજનો અંધકારમાંથી પાછાં આવ્યાં. ખરેખર, ભગવદીય જનો અંધકારમાં પ્રવેશ કરતા નથી. આ બધાં ગોપીજનો ભગવદીય હતાં એટલે ભગવાને જ તેમને અંધકારમાંથી પાછાં વાળ્યાં છે. ૪૨.

ગોપીજનો અંધકારમાંથી પાછાં ફર્યા એટલે તેઓ પોતાને ઘેર જશે એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તન્મનસ્કા:’ :

તન્મનસ્કાસ્તદાલાપાઃ તદ્વિચેષ્ટાસ્તદાત્મિકાઃ ।

તદ્ગુણાનેવ ગાયન્ત્યો નાત્માગારાણિ સસ્મરુઃ ॥૪૩॥

આ બધાં ગોપીજનોનું મન ભગવાનમાં હતું, તેમની વાણી પણ ભગવાનમાં હતી, તેમના શરીરની ક્રિયા ભગવન્મય હતી, તેમના ચિત્તમાં ‘કૃષ્ણ એ જ અમારા આત્મા છે’ એમ સ્ફૂર્તિ હતી, તેથી ભગવદ્ગુણગાન ગાતાં તેમને પોતાના આત્માનું કે ઘરનું સ્મરણ ન થયું. ૪૩.

તે ગોપીજનોને પોતાના આત્માનું તથા ઘરનું સ્મરણ થયું નહિ. આત્મા એટલે દેહ અને અગાર એટલે ઘર. દેહ, ઘર અને તેના સંબંધવાળી વસ્તુઓનું તેમને સ્મરણ પણ ન થયું, પછીથી તો ઘેર જવાની વાત જ શી? ગોપીજનોને દેહ અને ઘરનું સ્મરણ ન થયું તેનાં પાંચ કારણો શુકદેવજી ‘તન્મનસ્કાઃ’ ઈત્યાદિ પાંચ પદોમાં આપે છે. સ્મરણ મનમાં થાય છે, પણ ગોપીજનોનું તે મન તો ફક્ત ભગવાનમાં જ હતું એટલે તેઓ ‘તન્મનસ્કાઃ’-ભગવાનની અંદર મનવાળાં-હતાં અને તેથી દેહ અને ઘરનું તેમને સ્મરણ થયું નહિ. બીજી રીતે પણ દેહ અને ઘરનું તેમને સ્મરણ થતું ન હતું એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદાલાપાઃ’. બીજાં ગોપીજનો પણ જો ભગવાન સિવાયની બીજી વાત કરે તો તે પ્રસંગને લીધે ઘર વિગેરેનું સ્મરણ પણ થાય; પરંતુ આ બધાંય ગોપીજનોની વાત ભગવાન વિષેની જ હતી, તેથી બીજા કોઈ કારણથી પણ ઘર વિગેરેનું સ્મરણ સંભવતું ન હતું. અરે! ભૂખ અને તરસને લીધે દેહની ક્રિયા તો આવશ્યક જ રહી, એટલે આ દૈહિક ક્રિયાને લીધે તે દેહ વિગેરેનું સ્મરણ તો થશે જ-આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદ્વિચેષ્ટાઃ’, પહેલાંની માફક તેમની જ-ભગવાનની જ-ચેષ્ટાનો ગોપીજનોમાં આવેશ થએલો છે, (એટલે બીજી દૈહિક ક્રિયાને હવે અવકાશ નથી.) અરે! ‘હું ઘટ જાણું છું’, ‘હું પટ જાણું છું’ એ રીતે બધાંય જ્ઞાનોની અંદર ‘હું’ એ આત્માના અંશનું સ્ફૂરણ થાય છે જ, તો પછી આત્માની સ્ફૂર્તિ થતી નથી એમ શી રીતે કહેવાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદાત્મિકાઃ’. તે જ-ભગવાન જ-આત્મા છે જેમનો, આવાં ગોપીજનો ‘તદાત્મિકાઃ’ કહેવાય છે. ‘કૃષ્ણ એ જ અમારો આત્મા છે’ એ ભાવના જ હંમેશાં આ ગોપીજનોના ચિત્તમાં સ્વાભાવિક રીતે રહેલી છે. તેથી આત્મા તરીકે ભગવાન જ સ્ફૂરે છે, દેહ વિગેરેની સ્ફૂર્તિ થતી નથી. અરે! ‘તુલ્ય પદાર્થ, અદૃષ્ટ, ચિંતન વિગેરે સ્મૃતિનાં કારણો છે’ આ ન્યાય પ્રમાણે અદૃષ્ટને લીધે દેહ, ઘર વિગેરેની સ્મૃતિ કેમ ન થાય? આના ઉત્તરમાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદ્ગુણાનેવ ગાયન્ત્યઃ’. જો ગોપીજનો મૌન રાખીને શાંત બેસી રહે તો દેહાદિની સ્મૃતિ થાય પણ ખરી; પરંતુ તેઓ તો અન્યમાં-ભગવાનમાં-આસક્ત થએલાં છે અને બીજા કાર્યમાં-ભગવાનના ગુણ ગાવામાં-રોકાએલાં છે,

કારણ કે તેમના-ભગવાનના-ગુણોનું જ તેઓ ગાન કરે છે. ભગવાનના ગુણોને લીધે ગોપીજનોનું ખરાબ અદષ્ટ નાશ પામે છે. તેથી પોતાના અદષ્ટ દ્વારા પણ ગોપીજનોને દેહાદિની સ્મૃતિ થતી નથી. ૪૩.

પછીથી શું થયું એમ જો આકાંક્ષા થાય તો શુકદેવજી કહે છે કે ‘પુનઃ પુલિનમાગત્ય’:

**પુનઃ પુલિનમ્ આગત્ય કાલિન્દ્યાઃ કૃષ્ણભાવનાઃ ।**

**સમવેતા જગુઃ કૃષ્ણં તદાગમનકાંક્ષિતાઃ ॥૪૪॥**

પહેલાં જ્યાં શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર હતાં ત્યાં જ પાછાં ભગવાનની પ્રેરણાથી કૃષ્ણમાં ભાવનાવાળાં તે ગોપીજનો આવ્યાં અને પ્રભુ ત્યાં પધારશે એ આકાંક્ષાથી સાથે મળીને કૃષ્ણનું ગાન કરવા લાગ્યાં. ૪૪.

પહેલાં જ્યાં શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર હતાં ત્યાં જ ફરીથી ગોપીજનો પાછાં આવ્યાં. અરે! ગોપીજનોમાં વિવેકબુદ્ધિ ન હતી, તો પછી શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર પાછાં શી રીતે આવ્યાં? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કૃષ્ણભાવનાઃ’. કૃષ્ણમાં જ જે ગોપીજનોની ભાવના છે તે ગોપીજનો ‘કૃષ્ણભાવનાઃ’ કહેવાય છે. તેથી ભગવદ્દિય્છાને લીધે, ભગવાનની પ્રેરણાથી, તે જ સ્થલે ભગવાન રમણ કરશે એમ નિશ્ચય કરીને, તે જ સ્થાન અમને હિતકર છે એમ જાણીને તે ગોપીજનો ત્યાં જ-શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર જ-ગયાં. પછીથી કઈ ગોપીના ભાગ્યને લીધે, કઈ ગોપીના સ્નેહથી અથવા કઈ ગોપીના ઉપર ભગવાનની કૃપા હોવાથી ભગવાન અહિં આવશે એ બાબતમાં સંદેહ પડવાથી બધાં ગોપીજનો એકઠાં મળ્યાં. તે સમયે ગોપીજનોને બીજું સાધન ન મળવાથી કૃષ્ણનું-સદાનંદનું-તેઓ ગાન કરવા લાગ્યાં, કારણ કે સિદ્ધાંત એવો છે કે દોષનું નિવારણ કરવાને માટે હરિના ગુણનું ગાન જ સાધન છે. દોષ દૂર થઈ ગયો એટલે પછી ભગવાન પોતાની મેળે જ અહિં આવશે એમ ધારીને ભગવાનના આગમનની આકાંક્ષા રાખીને ગોપીજનોએ ગાન કરવા માંડ્યું.

શ્રીયમુનાજીના તટ ઉપર જે શ્રીકૃષ્ણની ગોપિકાઓ એકત્રિત થયાં હતાં તે બે પ્રકારનાં હતાં: ૧. અન્યપૂર્વા અથવા શ્રુતિરૂપા ગોપિકાઓ અને ૨. અનન્યપૂર્વા અથવા કુમારિકા ગોપિકાઓ. સાત્ત્વિક, રાજસ અને તામસ; અને તે દરેકના પાછા ત્રણ વિભાગ, એમ એકંદરે ગુણોને લીધે નવ વિભાગ થાય. અન્યપૂર્વા ગોપિકાઓના નવ વિભાગ અને અનન્યપૂર્વા ગોપિકાઓના નવ વિભાગ. એ પ્રમાણે અઠાર વિભાગ થયા અને ઉપલક્ષણ પ્રકારે ઓગણીસમો વિભાગ. આમ ગોપિકાઓ ના

ઓગણીસ પ્રકાર થયા. આ પક્ષમાં દરેક ગોપિકા સાત્ત્વિક રાજસ અને તામસ છે. અથવા તો ગોપીજનોની વ્યવસ્થા બીજે પ્રકારે પણ થઈ શકે છે. ગોપીજનો સમુદાયથી-યૂથથી-નવ પ્રકારનાં છે. આ પક્ષમાં સાત્ત્વિક, રાજસ અને તામસ એ વિભાગ સમુદાયદષ્ટિએ કરવામાં આવે છે. અર્થાત્ કોઈક યૂથ સાત્ત્વિક ગોપીજનોનું, કોઈક યૂથ રાજસી ગોપીજનોનું, તો કોઈક યૂથ તામસી ગોપીજનોનું હોય છે. તેમાં પણ દરેક ત્રણ પ્રકારના હોય છે. એ ગોપીજનોનાં નવ પ્રકારનાં યૂથ થાય છે. તેમાં પણ શ્રુતિરૂપા અને અગ્નિકુમાર એમ ગોપીજનોના બે ભેદને લીધે અઢાર યૂથ, અને ગુણાતીતનું ઓગણીસમું યૂથ; આ રીતે ગોપીજનોનાં ઓગણીસ યૂથ સિદ્ધ થાય છે.

આ બધાં ગોપીજનોનો ગર્વ હવે જતો રહ્યો છે અને તેઓ નિઃસાધન બની ગયાં છે. ૧.

હરિને ગાન પ્રિય છે એમ માનીને, અને આપણા જીવનને માટે પણ ગાન આવશ્યક છે એમ માનીને ભગવાનની પ્રિયા ગોપિકાઓ, કોના ભાગ્યને લીધે, અથવા કોના સ્નેહને લીધે અથવા કોના ઉપર કૃપા હોવાથી ભગવાન પ્રકટ થાય એ બાબતમાં સંદેહ હોવાથી-સર્વને પોતાની યોગ્યતામાં સંદેહ હોવાથી-સર્વ પ્રથમ એકઠાં મળ્યાં અને સત્ત્વ વિગેરે અનેક પ્રકારના ગુણોથી ગાન કર્યું. ૨. ૪૪.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં  
શ્રીમદ્વલ્લભટીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં  
બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલપ્રકરણના વીર્ય નિરૂપક  
૨૭ મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.



# ॥ अध्याय अट्ठावीसमो ॥

## गोपीगीत

अष्टाविंशे हरिर्गानं स्वभाववाटपराधतः ॥

कृतावज्ञा गोपिका हि स्तोत्रं यद्कुरितीर्यते ॥का. १॥

स्वभावथी अथवा अपराधथी मानङ्गी अवज्ञा जेमणो करी छे अवां श्रीगोपीजने हरिनुं स्तोत्ररूप गान कर्तुं, तेथी आ अष्टावीसमा अध्यायमां गोपीजनोअे करेला हरिना गाननुं वर्णन करवामां आवे छे. (विरहावस्थानो स्वभाव ज अेवो छे के तेमां प्रियतमना गुणनुं गान ज थाय, अने तेथी गोपीजने स्वभावथी ज हरिना गुणनुं गान कर्तुं; अथवा तो 'भक्तोथी पण अमे अधिक छीअे' अेम गोपीजनोअे पोताना स्वरूप विषे आधिक्य मान्युं अने ते रीते तेमणो अपराध कर्षो अने अभिमान कर्तुं के ज्यारे प्रभु अमारी प्रार्थना करशे त्यारे ज अमारामां रलेला रसनं दान अमे प्रभुने करीशुं. आ प्रकारे गोपीजनोअे मानङ्गी अवज्ञा करी अने तेथी प्रभु अप्रसन्न थया. अप्रसन्न प्रभु स्तोत्रथी प्रसन्न थशे अेम मानीने गोपीजनोअे गान कर्तुं. अथवा श्लोकनो अन्वय बीजे प्रकारे पण थई शके. रसना स्वभावथी जे अभिमानङ्गी अवज्ञा थई तेथी प्रभु अप्रसन्न थया; आ अप्रसन्न प्रभुने प्रसन्न करवानो गुणगान अेक ज उपाय योज्य छे अेम गोपीजनोअे निश्चय कर्षो अने स्तोत्ररूप गान कर्तुं. तेथी आ अष्टावीसमा अध्यायमां गोपीजनोअे गाअेलुं भगवाननुं स्तोत्र-गोपीगीत-वर्णवामां आवे छे. आ बीज अर्थमां अभिमानङ्गी अपराधनुं पण कारण श्रीगोपीजननो स्वभाव छे. गोपीजनो शृंगाररसनो आलंबन विभाव छे, अने आलंबन विभावनो अेवो स्वभाव छे के अभिमान र्णी अवज्ञा पण सहज थई ज्ञय छे. आवा मानथी पण ज्यारे प्रभुङ्गी रसिक नायक अप्रसन्न थई ज्ञय छे त्यारे रसमार्गनी रीते नायिका नायकनुं गुणगान करे छे अने ते रीते तेने प्रसन्न पण करे छे. तेथी श्रीगोपीजनोअे पोताना भावने अनुसरीने रसशास्त्रनी रीते स्तोत्ररूप गान कर्तुं, अने तेथी सात्त्विक विगेरे गुणनुं पण जे वर्णन आगण उपर करवामां आवे छे ते अेम दृशवि छे के गोपीजनोनो भाव अनेक प्रकारनो छे.) १.

अेकोनविंशतिविधा गोप्यः स्वस्याधिकारतः ॥

अेकोनविंशतिविधां स्तुतिं यद्कुरिः प्रियाम् ॥का. २॥

पोताना अधिकार प्रमाणे ओगाणीस प्रकारनां श्रीगोपीजनोअे हरिने प्रिय



એવી ઓગણીસ પ્રકારની સ્તુતિ કરી, તેથી આ અધ્યાયમાં ઓગણીસ શ્લોકો છે. (અન્યપૂર્વા-શ્રુતિરૂપા-ગોપીજનો નિર્ગુણ અને સાત્ત્વિક વિગેરે ભેદથી દસ પ્રકારનાં અને અનન્યપૂર્વા-કુમારિકા-ગોપીજનો નિર્ગુણ અને સાત્ત્વિકાદિ ભેદથી નવ પ્રકારનાં એમ ઓગણીસ પ્રકારનાં ગોપીજનો છે. કુમારિકાઓમાં તામસતામસી ગોપી અથવા યૂથ નથી તેથી તેમના નવ પ્રકાર છે.) ૨.

રાજસી તામસી ચૈવ સાત્ત્વિકી નિર્ગુણા તથા ॥

એવં ચતુર્વિધા ગોપ્યઃ પતિમત્યો નિરૂપિતાઃ ॥કા.૩॥

પતિમતી-શ્રુતિરૂપા-અન્યપૂર્વા-ગોપી પ્રથમ સાત્ત્વિક ક્રમે ગીતનો આરંભ કરે છે, તેથી પહેલો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ સાત્ત્વિકરાજસ છે, બીજો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ સાત્ત્વિકતામસ છે, ત્રીજો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક છે અને ચોથો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ ગુણાતીત-નિર્ગુણ-છે. આ પ્રમાણે ચાર પ્રકારનાં શ્રુતિરૂપા ગોપિકાઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ૩.

તથૈવાનન્યપૂર્વાશ્ચ પ્રાર્થનામાહુરુત્તમામ્ ॥

ગુણાતીતાઃ સાત્ત્વિકીશ્ચ તામસી રાજસીસ્તથા ॥કા.૪॥

પહેલા ચાર શ્લોકનાં ગાનાર ચાર પ્રકારનાં શ્રુતિરૂપા ગોપીઓ છે એમ વર્ણન કરીને હવે શ્રીશુકદેવજી તે જ પ્રકારે અનન્યપૂર્વા-ઋષિરૂપા કુમારિકા-ગોપીઓની ઉત્તમ પ્રાર્થનાનું વર્ણન કરે છે. તેથી અનન્યપૂર્વા ગોપીઓના ગાનમાં પણ પ્રથમ સાત્ત્વિક ક્રમે ગીતનો આરંભ થાય છે; એટલે પાંચમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક છે, છઠ્ઠો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ સાત્ત્વિકતામસ છે, સાતમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ સાત્ત્વિકરાજસ છે, અને આઠમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ ગુણાતીત છે. આ પ્રમાણે શ્રુતિરૂપા ગોપીજનોના ચાર પ્રકારની માફક ઋષિરૂપા ગોપીજનોના પણ ચાર પ્રકારનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. ૪.

કૃષ્ણભાવનયા સિદ્ધા વિશેષેણાહતાઃ શુકઃ ॥

અનન્યપૂર્વિકા એવ પુનસ્તિસ્રો મુદા જગુઃ ॥કા.૫॥

સાત્ત્વિકી તામસી ચૈવ રાજસી ચેતિ વિશ્રુતાઃ ॥

સાત્ત્વિક ક્રમ પૂર્ણ થયો. હવે બીજા રાજસ ક્રમનો આરંભ અન્યપૂર્વા ગોપીજન કરે કે અનન્યપૂર્વા ગોપીજન કરે એમ જો શંકા થાય તો શુકદેવજી તેનું સમાધાન કરતાં કહે છે કે અનન્યપૂર્વા ગોપીજન કૃષ્ણભાવનાને લીધે સિદ્ધ છે તેથી

રાજસક્રમમાં પહેલા ત્રણ શ્લોક પણ અનન્યપૂર્વા ગોપીજન જ વિશેષે ગાય છે; અર્થાત્ નવમાથી અગીઆરમા શ્લોક સુધીનાં ગાનાર અનન્યપૂર્વા ગોપીજન છે. નવમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ રાજસસાત્ત્વિક છે, દસમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ રાજસતામસ છે અને અગીઆરમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ રાજસરાજસ છે. આ પ્રમાણે રાજસ ક્રમે ત્રણ અનન્યપૂર્વા ગોપિકાઓએ આનંદથી ગાન કર્યું. પાા.

સપૂર્વાશ્ચ તતસ્તિસ્રઃ તામસી રાજસી પરા ॥કા.૬॥

પાંચમાથી અગીઆરમા શ્લોક સુધી અનન્યપૂર્વા ગોપીજનોએ સાત્ત્વિક અને રાજસ ક્રમે છ શ્લોકોમાં ગાન કર્યું. હવે અન્યપૂર્વા શ્રુતિરૂપા ગોપિકાઓ પણ બાકી રહેલા રાજસ અને તામસ એ બે ક્રમે છ શ્લોકમાં ગાન કરે છે. અર્થાત્ બારમાથી ચૌદમા શ્લોક સુધીમાં રાજસ ક્રમે અન્યપૂર્વા ગોપિકા ગાન કરે છે, અને પંદરમાથી સત્તરમા શ્લોક સુધીમાં તામસ ક્રમે ગાન કરે છે. બારમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ રાજસતામસ છે, તેરમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ રાજસરાજસ છે અને ચૌદમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ રાજસસાત્ત્વિક છે. આ પ્રમાણે રાજસીમાં તામસી, રાજસી અને પરા-સાત્ત્વિકી-અન્યપૂર્વા ગોપિકાઓ ગાન કરે છે. ૬.

પુનસ્તા એવ ત્રિવિધા અટતીત્યાદિભિશ્ચિભિઃ ॥

રાજસી તામસી ચૈવ સાત્ત્વિકીતિ વિભેદતઃ ॥કા.૭॥

પંદરમા શ્લોકથી સત્તરમા શ્લોક સુધી પણ અન્યપૂર્વા ગોપીજનો જ તામસક્રમે ગાન કરે છે. તેમાં પંદરમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ તામસસાત્ત્વિક છે, સોળમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ તામસતામસ છે, અને સત્તરમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ તામસરાજસ છે. (આ વ્યવસ્થા પંદર, સોળ અને સત્તર એ ત્રણ શ્લોકો ઉપરની શ્રીસુબોધિનીજીને આધારે આપવામાં આવેલી છે. કારિકામાં ‘રાજસી તામસી ચૈવ સાત્ત્વિકીતિ વિભેદતઃ’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે, એટલે કારિકા પ્રમાણે પંદરમો શ્લોક ગાનાર તામસરાજસ અને સત્તરમો શ્લોક ગાનાર તામસસાત્ત્વિક ગણાય. આ પ્રમાણે શ્રીસુબોધિનીજી અને કારિકાના અભિપ્રાયમાં ભેદ માલમ પડે છે. આ ભેદ દૂર કરવાને માટે લેખકાર શ્રીવલ્લભજી કહે છે કે “રાજસી તામસી ચૈવ સાત્ત્વિકીતિ વિભેદતઃ” એ કારિકામાં જે ક્રમ આપવામાં આવ્યો છે તે ક્રમ સ્વીકારવાનો નથી. કારિકાર્થના લેખક નિર્ભયરામ ભટ્ટ પણ આ વિષયમાં કહે છે કે કારિકામાં આપેલો ક્રમ

અવિવક્ષિત છે, અથવા તો તેનું તાત્પર્ય બીજું હોવું જોઈએ. અથવા તો કારિકામાં આપેલો ક્રમ સામાન્ય ગણવો અને શ્રીસુબોધિનીજીમાં આપેલો ક્રમ વિશેષ ગણવો એટલે સામાન્યવિશેષન્યાયે ક્રમનો વિરોધ દૂર થઈ શકે છે.) ૭.

**અનન્યપૂર્વા દ્વિવિધા રાજસી સાત્ત્વિકી તથા ॥**

**તમસા તામસી તત્ર નાસ્તીત્યેકોનવિંશતિઃ ॥કા.૮॥**

સત્તરમા શ્લોકમાં અન્યપૂર્વા ગોપીજનો ઉપસંહાર કરે છે, અને હવે તેમનો કોઈ પણ ક્રમ બાકી નહિ રહેવાથી અનન્યપૂર્વા ગોપીજન તામસ ક્રમે અઢારમા શ્લોકનો આરંભ કરે છે. અઢારમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ અનન્યપૂર્વા તામસસાત્ત્વિક છે, અને ઓગણીસમો શ્લોક ગાનાર ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ અનન્યપૂર્વા તામસરાજસ છે. અનન્યપૂર્વામાં તામસતામસી ગોપિકા અથવા તેમનું યૂથ નથી, તેથી અનન્યપૂર્વાના તામસક્રમમાં ગાનાર ગોપિકાઓ અથવા તેમનાં યૂથ ફક્ત બે જ છે, ત્રણ નથી. આ પ્રમાણે ઓગણીસ શ્લોકોના ગાનાર ઓગણીસ પ્રકારનાં ગોપિકાઓ અથવા તેમનાં યૂથો છે. ૮.

**અથવા પ્રાર્થનાદ્યા યાઃ સપ્તાન્તે દ્વિવિધા પુનઃ ॥**

**ચતુર્થસ્તુ સમાસ્તત્ર તત એકોનવિંશતિઃ ॥કા.૯॥**

(આ પ્રમાણે અન્યપૂર્વા ગોપીજનાના એકંદરે દસ શ્લોક છે. તેમાં નવ શ્લોકનાં ગાનાર ગોપીજનો સગુણ છે અને એક શ્લોકનાં-ચોથા શ્લોકનાં-ગાનાર ગોપીજન ગુણાતીત છે. અનન્યપૂર્વા ગોપીજનના એકંદરે નવ શ્લોક છે. તેમાં આઠ શ્લોકનાં ગાનાર ગોપીજન સગુણ છે અને એક શ્લોકનાં-આઠમા શ્લોકનાં-ગાનાર ગોપીજન ગુણાતીત છે. આ વ્યવસ્થા પ્રમાણે અન્યપૂર્વા ગોપીજનોનો એક શ્લોક વધારે છે અને તેથી જો વૈષમ્ય જણાય તો તેનો પરિહાર કરવાને માટે ગૂઢ અભિસંધિરૂપ બીજો પક્ષ પણ છે. તે આ પ્રમાણે છે.) આરંભની પ્રાર્થનાના સાત શ્લોક (૧૧૩, ૫૧૮) અને અંતે આવેલા બે શ્લોક (૧૩૧૪) એમ નવ શ્લોકનાં ગાનાર અનન્યપૂર્વા કુમારિકા ગોપીજનો છે, જ્યારે ચોથા શ્લોક સિવાયના બાકીના નવ (૯૧૨, ૧૫૧૯) શ્લોકોનાં ગાનાર અન્યપૂર્વા ગોપીજનો છે. ચોથા શ્લોકનાં ગાનાર અનન્યપૂર્વા અને અન્યપૂર્વા ગોપીજન છે. આમ એકંદરે ઓગણીસ શ્લોકો છે. આ વ્યવસ્થા પ્રમાણે નવ શ્લોક સગુણ અન્યપૂર્વા ગોપીજનના, નવ શ્લોક સગુણ અનન્યપૂર્વા ગોપીજનના અને એક શ્લોક નિર્ગુણ અન્યપૂર્વા અને અનન્યપૂર્વા ગોપીજનનો છે. આ પ્રકારે અન્યપૂર્વા અને અનન્યપૂર્વા ગોપીજનોના શ્લોકોની સંખ્યા સરખી થાય છે એટલે વૈષમ્યદોષનો પરિહાર સહેલાઈથી થઈ શકે

છે. તેથી આ બીજો પક્ષ બધી રીતે નિર્દોષ અને સમ છે. ૯.

તત્તદ્વાક્યાનુસારેણ તાસાં ભાવો નિરૂપ્યતે ॥

અન્યથાઽનેકતા સ્તોત્રે પ્રકારૈર્નોપયુજ્યતે ॥કા.૧૦॥

આ અધ્યાયના જુદા જુદા શ્લોકોમાં ગોપીજનોએ ભગવાનની જે સ્તુતિ કરી છે તેમાં ગોપીજનોના ભાવનું જ વર્ણન છે. જો આ પ્રમાણે આપણે ન માનીએ તો ભગવાનની સ્તુતિમાં જે ઉપાલંભાદિ પ્રકારે અનેકતા જોવામાં આવે છે તે નિરૂપયોગી થઈ જાય, કારણ કે કેવલ સ્તુતિમાં ઉપાલંભાદિ-‘કુલક’ ‘કિતવ’ ઇત્યાદિ શબ્દોનો પ્રયોગ-હોઈ શકે નહિ, અને જ્યારે ગોપીગીતમાં ઉપાલંભાદિ જોવામાં આવે છે ત્યારે એમ અનુમાન થાય છે કે આ બધા શ્લોકોમાં ગોપીજનોના ભાવનું જ વર્ણન છે. ભક્તનો જેવો ભાવ હોય છે, જેવો અધિકાર હોય છે, તેવી જ તે ભગવાનની સ્તુતિ કરે છે. ૧૦.

આ બધાં ગોપીજનો ભગવાનના ગુણનું જ્યારે ગાન કરવા લાગ્યાં ત્યારે પ્રથમ કેટલીક રાજસી ગોપીઓ કહે છે :

જયતિ તેઽધિકં જન્મના વ્રજઃ શ્રયત ઈન્દિરા શશ્વદ્ અત્ર હિ ।

દયિત દશ્યતાં દિક્ષુ તાવકાઃ ત્વયિ ધૃતાસવઃ ત્વાં વિચિન્વતે ॥૧॥

આપના જન્મથી વ્રજનો વૈકુંઠ કરતાં પણ અધિક ઉત્કર્ષ થયો છે, કારણ કે લક્ષ્મીજી પણ અહિં જ હંમેશાં આશ્રય લે છે. હે પ્રિય! આપનાં જન, આપને માટે જ પ્રાણ ધારણ કરનારાં, આપને દિશાઓમાં શોધે છે તે જુઓ. ૧.

આ શ્લોકમાં જે ‘જય’ શબ્દ છે તેનું પ્રયોજન મંગલ છે; ગોપીજનોનું આ સ્તોત્ર બધાં વિઘ્નો દૂર કરીને ફલ સિદ્ધ કરે એ મંગલ અર્થ દર્શાવનાર ‘જય’ શબ્દ છે. આ પ્રમાણે ‘જય’ શબ્દનું પ્રયોજન ન હોય તો શ્લોકના આરંભમાં જ ‘જયતિ’ એ ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કરવામાં આવત નહિ, પણ ‘વ્રજઃ’ એ કર્તૃવાચક પદનો પ્રયોગ કરીને ‘જયતિ’નો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો હોત. આપના અવતારથી-પ્રાકટ્યથી-આખુંય વ્રજ કૃતાર્થ થઈ ગયું પરંતુ ફક્ત અમે જ અકૃતાર્થ જ રહ્યાં; તેથી અમે પણ જે રીતે કૃતાર્થ થઈએ તે રીતે આપે યત્ન કરવાનો છે. આ પ્રમાણે કહેવાને માટે ગોપીજનો ‘તે જન્મના વ્રજઃ અધિકં જયતિ’ એ શબ્દોમાં કહે છે કે આપના પ્રાકટ્યથી વ્રજનો સર્વોત્કર્ષ સિદ્ધ થઈ ગયો છે. સર્વથી શ્રેષ્ઠ થઈને સ્થિતિ કરવી તેનું નામ ‘જય’. વૈકુંઠના કરતાં પણ વધારે શ્રેષ્ઠતા મેળવવી તેનું નામ અધિક જય. વૈકુંઠમાં તો ભગવાન્ આ પ્રકારની લીલા કરતા નથી. જો કે ભગવાનનો જન્મ-

અવતાર, પ્રાકટ્ય-મથુરામાં થયો છે, છતાં પણ તેમના પ્રાકટ્યથી મથુરા સર્વથી શ્રેષ્ઠ થયું નથી પરંતુ કેવલ વ્રજ જ સર્વશ્રેષ્ઠ થયું છે.

શંકા- અરે! ભગવાનનું પ્રાકટ્ય એ સર્વશ્રેષ્ઠતાનું કારણ છે એમ જગતમાં પ્રસિદ્ધ નથી, કારણ કે ભગવાનનું પ્રાકટ્ય ફક્ત વ્રજમાં જ થવાથી અનન્ય-અસાધારણ-છે અને તેથી એક જ છે. (આ રીતે ભગવતપ્રાકટ્યથી સર્વશ્રેષ્ઠતા સિદ્ધ કરવામાં અસાધારણ અનૈકાંતિક નામનો હેત્વાભાસ રહેલો છે. જેમ 'શબ્દ નિત્ય છે, શબ્દત્વને લીધે' એ અનુમાનમાં અસાધારણ અનૈકાંતિક નામનો હેત્વાભાસ રહેલો છે, કારણ કે શબ્દત્વ એકલા શબ્દમાં જ હોય છે બીજામાં હોતું નથી, તેમ 'વ્રજ સર્વશ્રેષ્ઠ, ભગવતપ્રાકટ્યને લીધે' એ અનુમાનમાં પણ અસાધારણ અનૈકાંતિક નામનો હેત્વાભાસ રહેલો છે. ભગવતપ્રાકટ્ય એકલા વ્રજમાં જ છે, બીજે નહિ, એટલે ભગવતપ્રાકટ્યના આધારે વ્રજની સર્વશ્રેષ્ઠતા સિદ્ધ કરનારું અનુમાન આભાસદ્રુષ્ટ, ખોટું, છે.) તેથી વ્રજની સર્વશ્રેષ્ઠતા સિદ્ધ કરનારું એવું કારણ આપો કે જે લોકમાં પ્રસિદ્ધ હોય.

સમાધાન- ઉપર પ્રમાણે શંકા થાય તો તેના સમાધાનમાં શુકદેવજી કહે છે કે 'શ્રયત ઈન્દિરા શશ્વદ્વર હિ'. અહિં-વ્રજમાં-લક્ષ્મીજી હંમેશા હીનભાવથી આશ્રય કરે છે, 'હું હીન છું' એમ હીનભાવે લક્ષ્મીજી વ્રજનો આશ્રય કરે છે. વૈકુંઠમાં તો લક્ષ્મીજી ભગવાનની નિયત-નક્કી થએલી જ-ભાર્યા છે એટલે તેમને કોઈનો હીનભાવે સર્વદા આશ્રય કરવાનો રહેતો નથી. પણ અહિં વ્રજમાં તો લક્ષ્મીજીના જેવાં અમે-ગોપીજનો-અનેક છીએ એટલે લક્ષ્મીજીને સ્વસ્થતા રહેતી નથી અને તેથી 'મારો અવસર ક્યારે આવશે?' એ વિચારથી તે વ્રજનું હંમેશા સેવન કરે છે. તેથી જે લક્ષ્મીજીની સ્થિતિને લીધે લોકો સર્વશ્રેષ્ઠતા માને છે તે લક્ષ્મી પણ ગોકુલનો આશ્રય કરીને રહી છે. આ અર્થ બરાબર છે એ દર્શાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં 'હિ' પદ મૂકવામાં આવ્યું છે, કારણ કે લક્ષ્મી પતિવ્રતા છે, ભક્તોના ઉપર કૃપા પ્રસિદ્ધ કરવાને લક્ષ્મીના પતિ પોતે ભક્તોને અધીન થઈને જ્યાં સ્થિતિ કરે છે ત્યાં ભગવાનની પત્ની-લક્ષ્મી-સારી રીતે સ્થિતિ કરે જ એમાં શું આશ્ચર્ય? ભગવાન વ્રજમાં ભક્તોને અધીન થઈને સ્થિતિ કરે છે અને ભક્તોના ઉપર કૃપા દર્શાવે છે એ વાત તો પહેલાં ઉલ્લખવપ્રકરણમાં કહેવામાં આવી છે. આપના પ્રાકટ્યને લીધે વ્રજની સર્વશ્રેષ્ઠતા છે એ વાત સર્વ જાણે છે. તેથી આપ અમારી સાથે રમણ કરો તેમાં કોઈ પણ પ્રકારે ન્યૂનતા થવાની નથી, તેમ જ લક્ષ્મીના મનમાં પણ ખેદ થવાનો નથી, કારણ કે આપે આપના પ્રાકટ્યથી સર્વશ્રેષ્ઠ વ્રજનો નિજત્વે-આ વ્રજ મારું છે એ

પ્રમાણે-અંગીકાર કર્યો છે. તેથી અમારે માટે પધારેલા આપે આ શ્રીમદ્ગોકુલનું એક વખત દર્શન કરવું જોઈએ. અથવા તો શ્લોકનો અન્વય બીજે પ્રકારે પણ થઈ શકે છે. 'તાવકાસ્ત્વયિ ધૃતાસવો દિક્ષુ ત્વાં વિચિન્વતે' એ આગળ કહેવામાં આવનાર વાક્યનો અર્થ જ 'દશ્યતાં' ક્રિયાપદનું કર્મ છે, અને આ અન્વય પ્રમાણે એવો અર્થ થાય કે 'આપના વિષે જેમણે પ્રાણ ધારણ કર્યા છે એવા આપના ભક્તો-ગોપીજનો-આપને દિશાઓમાં શોધે છે એ આપ જુઓ'. આ પ્રકારનો અર્થ-વ્રજમાં આપ પ્રકટ થઈને તિરોહિત થઈ ગયા અને ભક્તો બધી દિશામાં આપની શોધ કરે એ બાબત-અનુચિત છે એમ અનુચિતત્વ દર્શાવીને ગોપીજનો જણાવે છે કે આપ વ્રજમાં પ્રકટ થયા છો એમ નિશ્ચય કરીને બ્રહ્માદિ લોકો અહિં વ્રજમાં આવે છે, જ્યારે વ્રજમાં રહેનારા અમારા જેવાં ગોપીઓ બહુ દિશાઓમાં આપને શોધે છે. આ તો બહુ અયોગ્ય વાત છે. અરે! વ્રજમાં રહેનારા લોકોમાં ભક્તિ જ નથી, નહિ તો તેઓ ભગવાનના વિરહથી મરી જાત; (પણ વ્રજના લોકો-ગોપીજનો-મરી ગયા નથી) એટલે તેઓ ભગવાનના ભક્તો નથી અને તેથી તેવા અભક્તો ભગવાનને જુવે એ વાત બરોબર છે. આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો ગોપીજનો તેનો પરિહાર કરતાં કહે છે કે 'ત્વયિ ધૃતાસવઃ'. આપને માટે જ ધારણ કર્યા છે પ્રાણ જેમણે એવાં અમે-ગોપીજનો-છીએ. અમારા પ્રાણનો આપને જરા પણ ઉપયોગ નથી એમ જે ક્ષણે જ અમે જાણીશું તે જ ક્ષણે અમે અમારા નિરુપયોગી પ્રાણનો ત્યાગ કરીશું એમ ગોપીજનોના કહેવાનો ભાવ છે. જરાક વિલંબ થતાં જ પ્રાણ જતા રહેશે તેથી જ પ્રાણને આશ્વાસન આપવાને માટે જ અમે ગોપીઓ આપને શોધીએ છીએ. નહિ તો સવારે આપ પાછા વ્રજમાં નક્કી આવવાના જ છો અને અત્યારે રાત્રીએ અમે જે આપની શોધ કરીએ છીએ તે વ્યર્થ જ છે એમ માનીને અમે વ્રજમાં જ ચાલ્યાં ગયાં હોત. (પરંતુ વ્રજમાં ન જતાં અહિં જ આપની શોધ કર્યા કરીએ છીએ તે બતાવી આપે છે કે અમે આપને માટે જ પ્રાણ ધારણ કરેલા છે.) આપ વ્રજમાં વિરાજમાન છો છતાં પણ આપના ભક્તો આપને દિશાઓમાં શોધે છે એ મહત્ત્વદૈન્ય છે. માટે એકવાર આપના નિજભક્તો જુઓ એમ અમારી પ્રાર્થના છે. આ પ્રમાણે એક ગોપીજને ભગવાનના દર્શનની પ્રાર્થના કરી. ગોપીજન ભગવાનને 'દયિત'-પ્રિય-એ પ્રમાણે સંબોધે છે તેથી પતિનું દર્શન ન થાય તો સ્ત્રીઓએ જીવવું યોગ્ય નથી એમ નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. જો કે ભગવાન ગોપીજનનાં દર્શન કરે તેથી ગોપીજનનો કોઈ પણ પુરુષાર્થ સિદ્ધ થાય નહિ, તો પણ ગોપીજનનું દૈન્ય દેખીને તેમને ભગવાન પોતાના સ્વરૂપનું પણ બરોબર દર્શન કરાવે એમ ભગવદર્શનને માટે

જ ગોપીજનોએ ‘અમને જુઓ’ એ પ્રમાણે ભગવાનને પ્રાર્થના કરી. ૧.

આ પ્રમાણે પહેલા શ્લોકમાં ગોપીજનનું દૈન્ય અને અયોગ્યતાનું જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે તે ગોપીજન સાત્ત્વિકરાજસ છે. સાત્ત્વિકતામસી ગોપીજન તો ‘મારો વધ ન કરો’ એમ પ્રાર્થના કરવાને માટે ‘શરદ્દુદાશયે’ એ શ્લોકમાં કહે છે કે ભગવાનનાં દર્શન ન થવાથી વધ થાય છે:

શરદ્દુદાશયે સાધુજાતસત્સરસિજોદરશ્રીમુષાદશા ।

સુરતનાથ! તે શુલ્કદાસિકા વરદ નિઘ્નતો નેહ કિં વધઃ ॥૨॥

હે સુરતનાથ! શરદ્ ઋતુના સરોવરમાં સુંદર રીતે ઉત્પન્ન થએલા કમલની અંદર રહેલી લક્ષ્મીને હરણ કરનારી દષ્ટિથી આપ અમને શુલ્કરૂપી દાસીઓને અથવા ધર્મદાસીઓને મારો છો તે, હે વરદાન આપનાર! શું ઘાત ન કહેવાય? ૨.

શરત્કાલનું જે ઉદાશય-સરોવર, તેમાં સુંદર રીતે ઉત્પન્ન થએલું જે કમલ, તેની અંદર રહેલી જે શ્રી-શોભા, તેનું પણ હરણ કરનારી, અર્થાત્ તેના જેવી સુંદર દષ્ટિથી, હે વરદાન દેનાર!, આપ જે મારો છો તે આપને વધનું ફલ નહિ મળે? અર્થાત્ આપને અમને મારી નાખવાનું ફલ મળશે જ. જે જ સાધનથી બીજાના પ્રાણ ચાલ્યા જાય તે સાધનનો સાધનાર, ઘાતક, પુરુષ દોષપાત્ર થાય છે. (ભગવાનની દષ્ટિ ગોપીજનોને મારવાનું સાધન છે તેથી આવું સાધન સાધનાર ભગવાન વધના દોષને પાત્ર છે.) આ પ્રમાણે-દષ્ટિથી વધ કરો છો એમ કહેવાથી ભગવાનની દષ્ટિ સર્વનો ઘાત કરનારી છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું, અને આના આધારમાં શ્રીમદ્ભાગવત પણ કહે છે કે ‘ભગવાન માત્ર દષ્ટિથી જ આયુષ્ય, મન અને ઓજસનું હરણ કરનાર છે.’ (જો કે ભગવાનની દષ્ટિ આનંદમય છે અને તે પરમાનંદનું જ દાન કરે છે, કોઈનો ઘાત કરતી નથી, છતાં પણ વિરહાવસ્થામાં સ્મરણ કરવામાં આવતી દષ્ટિ ઘણો કલેશ આપે છે તેથી ભગવાનની આ આનંદમય દષ્ટિમાં ગોપીજનને ઘાતકનું ભાન થાય છે, એટલે ભગવાનના કાલાદિરૂપમાં જે સર્વઘાતક દષ્ટિ છે તેનું નિરૂપણ આ આનંદમય દષ્ટિને વિષે ગોપીજને કર્યું છે.) તે પ્રમાણે આપ અમારા ઉપર પણ સામાન્ય રીતે ક્રૂર દષ્ટિથી જુઓ છો, નહિ તો અમારા પ્રાણને બાધ શી રીતે થાય? આપનું સ્વરૂપ તો આનંદમય છે; (આનંદમયરૂપ આપ અમને તો દેખો જ છો, પણ આપનું આનંદમય સ્વરૂપ અમને દેખાડતા નથી. આનંદમયસ્વરૂપની દષ્ટિ પણ આનંદમય હોય,) તેથી તે આનંદમય સ્વરૂપ આનંદમય દષ્ટિથી જ જીવાડે, પરંતુ તેમ થતું નથી એટલે આનંદમય આપ આપની આનંદમય દષ્ટિથી અમારો કેવલ વધ જ કરાવો છો. (તેથી વાસ્તવિક રીતે

આપનું આનંદમય સ્વરૂપ આપની આનંદમય દૃષ્ટિ દ્વારા અમારો વધ કરવાના દોષનું કારણ છે.)

વળી અમારો વધ કરવા જેવો નથી, કારણ કે અમે દાસિકાઓ-અધમ દાસીઓ-છીએ. ખરેખર! સ્ત્રીઓનો, અને તેમાં પણ પ્રયોજન વિના, વધ કોઈ કરતું નથી. વળી, અમે શુલ્ક-વેચાતી લીધેલી-દાસિકાઓ છીએ અને આપ સુરતનાથ છો. (સુરતનાથ શુલ્કદાસિકાનો વધ કરે એ તો સર્વથા અનુચિત છે.) હે ભગવન્! આપ સર્વ પુરુષાર્થો સિદ્ધ કરનારા છો તેથી મનુષ્યોના અધિકાર પ્રમાણે આપનાં સંબોધનો નક્કી થએલાં છે. જેમ ધર્મમાર્ગમાં ‘હે ધર્મપાલક’, ‘હે બ્રહ્માણ્ય’, ‘હે યજ્ઞેશ્વર’ ઈત્યાદિ સંબોધનોથી ધર્મર્થો પુરુષ ભગવાનને સંબોધે છે; જેમ અર્થમાર્ગમાં ‘હે લક્ષ્મીપતે’, ‘હે સર્વસિદ્ધિદ’ ઈત્યાદિ સંબોધનોથી અર્થાર્થો પુરુષ ભગવાનને સંબોધે છે, તેમ મોક્ષમાર્ગમાં ‘હે મુકુંદ’, ‘હે યોગેશ્વર’, ‘હે જ્ઞાનનિધે’ ઈત્યાદિ સંબોધનોથી મોક્ષાર્થો પુરુષ ભગવાનને સંબોધે છે. આજ પ્રમાણે તૃતીય પુરુષાર્થ-કામ-ની અભિલાષાવાળાં અમે ગોપીઓ પણ આપને ‘સુરતનાથ’ એ પ્રમાણે સંબોધીએ છીએ. સુરત એટલે સંભોગ. જગતમાં જેટલો સંભોગ-ભક્તોમાં જેટલો સમ્યક્ ભોગ-છે તે બધાના આપ જ નાથ છો. જગતમાં આપની આજ્ઞા વિના સુ-રત પ્રવર્તી શકતું જ નથી. (તેથી આપ જ સુ-રતના નાથ છો.)

(‘રત’ એટલે લૌકિક ભોગ. તે તો સૃષ્ટિના આરંભ કાલથી પ્રવર્તે છે એટલે તેને માટે ભગવાનની આજ્ઞાની અપેક્ષા રહેતી નથી, કારણ કે સૃષ્ટિની માફક લૌકિક ભોગ પણ ચાલ્યા જ કરે છે. આ પ્રમાણે વસ્તુસ્થિતિ હોવાથી ‘સુ’-સારા પ્રકારનું, અલૌકિક શોભનરૂપ-જે ‘રત’-રમણ-તે ‘સુરત’ કહેવાય છે અને તેને સમ્યક્ ભોગ-‘સંભોગ’-પણ કહેવામાં આવે છે. આ સુરત આપની આજ્ઞાથી જ-ઈચ્છાથી જ-અમારામાં જ પ્રવર્તે છે. લૌકિક જગત્ વહ્યા જ કરે છે, નાશ જ પામે છે, પણ તે કાંઈ સ્થિર રહેતું નથી, તેથી અતિ અલૌકિક સ્વરૂપાનંદરૂપ સુરત આ લૌકિક જગતમાં પ્રકટ થવાને માટે યોગ્ય નથી. આવા પ્રકારના-અલૌકિક રમણના-તો આપ જ નાથ-પ્રવર્તક, રક્ષક-છો. આ પ્રમાણે હોવાથી, જો તે સુરત-અલૌકિક રમણ-આપના જ વિષે રહે તો તો અલૌકિક ભક્તો પણ શૂન્યહૃદય થઈ જાય એમ આપની ઈચ્છા જાણીને બ્રહ્માએ આપની પ્રાર્થના કરી અને તે પ્રકારનાં અમને પ્રકટ કર્યાં કે જેથી રસની પ્રવૃત્તિમાં જે પ્રતિબંધ હોય તે દૂર થઈ જાય. તેથી જ ગોપીગીતના ચોથા શ્લોકમાં કહેવામાં આવશે કે ‘વિખનસાર્થિતઃ’-બ્રહ્માએ જેમની પ્રાર્થના કરેલી છે એવા ભગવાન્. કામ પણ ભગવદીય છે. મન પૂર્વરૂપ છે અને વાણી ઉત્તરરૂપ છે,



તેથી ભગવાને પ્રથમ મન ઉત્પન્ન કર્યું અને પછીથી પોતાની પ્રિયાઓમાં-ભક્તોમાં-અલૌકિક ભાવ પ્રવર્તવે એવી વાણી ઉત્પન્ન કરી. આ હેતુથી જ શ્રીસુબોધિનીજીમાં ‘આજ્ઞા’ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે. ‘મૈવં વિભોર્હતિ ભવાન્’ ઇત્યાદિ શ્રીગોપીજનોનાં વચનો પણ ભગવદ્ભાવાત્મક હોવાથી આજ્ઞારૂપ જ છે એમ માનવું. તે બધાં વચનોથી જ રસપ્રવૃત્તિમાં જે જે પ્રતિબંધો છે તે બધાની નિવૃત્તિ પણ થઈ ગઈ. તેથી સુરતના નાથ આપ જ છો એમ બ્રહ્માએ અથવા કામે નિશ્ચય કર્યો.) બ્રહ્માએ અથવા કામે-ભગવાનમાં રહેલા રમણ કરવાની ઈચ્છારૂપી ભાવે, જગતમાં-ભગવદીઓ માં-સુરતની પ્રવૃત્તિને માટે અમને શુલ્કરૂપ દાસિકાઓ તરીકે (બ્રહ્માએ) પ્રકટ કરી છે, અથવા (કામે) આપને સમર્પણ કરેલી છે. શુલ્ક એટલે માર્ગનો નિર્વાહ કરનાર દ્રવ્ય જે પ્રતિબંધને દૂર કરે છે. સુરત જો ભગવાનમાં જ નિસ્તદ્ધ રહે તો પછી લોકમાં રસ રહેશે નહિ, તેથી તે રસ આપનામાંથી અમારા દ્વારા લોકમાં પ્રચાર પામો એ હેતુથી અમે અહિં આવેલાં છીએ.

(અહિં આ તાત્પર્ય છે. બ્રહ્માદિ દેવો કામને-ભગવદ્ભાવને સાક્ષાત્ પ્રાપ્ત કરી શક્યા નહિ એટલે ભગવદ્ભાવ દર્શાવનારાં લક્ષ્મીજીનાં કટાક્ષો જે હંમેશાં પ્રિય ભગવાનની સાથે સંબંધમાં આવવાથી ભગવદ્ભાવાત્મક જ થઈ ગયાં છે તેમની સાથે સંબંધ થવાથી તેમના અનુભાવને લીધે કદાચિત્ તે ભગવદ્ભાવ પણ ઉત્પન્ન થાય એ હેતુથી ભગવદ્ભાવની કામનાવાળા બ્રહ્માદિ દેવો તપશ્ચર્યા કરે છે. અહિં ચાલતા પ્રકરણમાં તો પ્રભુ પોતે જ પ્રકટ થયા છે એટલે રસમાર્ગ પ્રકટ કરવાને માટે અમને દ્વાર તરીકે બ્રહ્માએ પ્રકટ કર્યાં છે. આ શ્લોકમાં જે ‘સુરત’ શબ્દ છે તેનો વિગ્રહ એવો થાય છે કે ‘સુષ્ટુ’ સારી રીતે, ભગવાનની સાથે, ‘રતં યેન’ રમણ છે જેનાથી, અને તેનો અર્થ ભગવદ્ભાવ જ છે, નહિ કે લૌકિક સંભોગ. જો ‘સુરત’નો અર્થ પ્રાકૃત સંભોગ કરવામાં આવે તો આવો પ્રાકૃત સંભોગ જગતમાં પામરમાં પામર માણસ સુધી વ્યાપેલો છે એટલે શ્રીસુબોધિનીજીમાં ‘ત્વદાજ્ઞા’-આપની આજ્ઞા વિના જગતમાં સુરત પ્રવર્તતું નથી ઇત્યાદિ શબ્દોમાં જે ‘નાથ’ શબ્દનું વિવરણ કરવામાં આવ્યું છે તે ઘટી શકે નહિ. આ માર્ગ પ્રકટ થવાથી બ્રહ્માને કોઈ પણ ભાવ સિદ્ધ થતો નથી, તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી આ પક્ષ ન સ્વીકારતાં બીજો પક્ષ આપે છે કે કામે-ભગવદીય ભાવે ગોપીઓને ભગવાનને સર્મપણ કરી. સ્વામિનીજીનાં દર્શન થવાથી ભગવાનનો ભાવ ઉછળે છે અને કામનું કાર્ય કરે છે તેથી તે કામે જ સ્વાર્થ માટે અમને પ્રકટ કર્યાં છે.)

તે કાર્ય તો દૂર જ રહ્યું અને ઉલટું આપ અમને દષ્ટિથી મારો છો. પરંતુ આ

પ્રમાણે થતાં બધુંય કામશાસ્ત્ર વ્યર્થ થઈ જાય. (ભગવાનની લીલાનું પ્રતિપાદન કરવાથી જ કામશાસ્ત્ર સફળ ગણાય છે. જે કામશાસ્ત્ર ભગવાનની લીલાનું વર્ણન ન કરે અને લૌકિક કામનું વર્ણન કરે તો તે શાસ્ત્ર વ્યર્થ થઈ જાય. કામશાસ્ત્ર જે લૌકિક કામનું વર્ણન કરે તો તે લૌકિક કામ મનુષ્યોનું અધઃપતન જ કરે, પણ કોઈ પુરુષાર્થ સાધી શકે નહિ. એટલે ત્રણ જ-ધર્મ અર્થ અને મોક્ષ-પુરુષાર્થ રહેશે.) તેથી કામરૂપી-અલૌકિક ભગવલ્લીલારૂપી-ત્રીજો પુરુષાર્થ પણ નહિ રહે. માટે સર્વથા જે અલૌકિક કામને માટે અમને મોકલવામાં આવ્યાં છે તે સુરત આપે સર્વથા સિદ્ધ કરવું જોઈએ.

અથવા તો તે સુરત ગમે ત્યારે આપને સિદ્ધ કરવાનું હોય તો પણ હમણાં જ આપના સ્વરૂપને પ્રકટ કરીને આપે અમને જીવાડવાં જોઈએ. આપની દૃષ્ટિ અમને મારે છે એમ ગોપીજનો ‘શ્રીમુષા’ એ શબ્દોમાં કહે છે. જે ચોર હોય છે તે ઘાતક પણ હોય છે. જેમ જેમ ચોરી કરવાના ધંધામાં હોંશીઆરી આવે તેમ તેમ તે ચોરનું ઘાતકીપણું પણ વધે. ગોપીજનો આ અર્થ ‘ઉદરશ્રીમુષા’ એ શબ્દોમાં કહે છે. તેમાં પણ દુર્ગમાં-કીલ્લામાં-જેમનો જન્મ થએલો હોય છે તેઓ ઘણા હોંશીઆર હોય છે. તેમાં પણ જેઓ જલદુર્ગમાં-પાણીના કીલ્લામાં-જન્મ્યા હોય છે તેઓ ઘણા હોંશીઆર હોય છે, અને આ પ્રકારનો પદાર્થ સરસિજ-કમલ-છે. તેમાં પણ તેઓ કીલ્લાની અંદર જ રહે છે, અર્થાત્ જલદુર્ગમાં જ સ્થિતિ કરે છે. (શ્રી-શોભા-એવા સ્થલમાં રહેલી છે કે તેનું હરણ કરવું અશક્ય છે. આ રીતે ચૌર્ય-હરણ-સ્થલની દૃષ્ટિએ અશક્ય છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું.) તેમાં પણ જે સાધુજાત-ઉત્તમ કુલમાં જન્મેલા પ્રભુ, સમર્થ, -હોય છે તેઓ તો ઘણા નિપુણ હોય છે. તેમાં પણ ઠંડી ઈત્યાદિ ઉપદ્રવો વિનાનો પ્રકાશવાળો સમય-શરદ્ ઋતુ-છે. આ પ્રમાણે સ્થલ, સમય અને સ્વરૂપ વિગેરેની દૃષ્ટિએ જેની ચોરી કરવી અશક્ય છે એવા પુરુષ-કમલ-પાસેથી પણ તેના ઉદરમાં રહેલું સર્વસ્વ હરણ કરનાર ચોર-ભગવાનની દૃષ્ટિ-સાધારણ ગોપિકા વિગેરેના અંદર રહેલા પ્રાણ હરીને લઈ જાય તો તેમાં શું આશ્ચર્ય? (જેમ કીલ્લામાં રહેલી વસ્તુની ચોરી થઈ શકે નહિ તેમ જલદુર્ગમાં સ્થિતિ કરનાર કમલની ચોરી થઈ શકે નહિ. આ પ્રમાણે સ્થલની દૃષ્ટિથી કમલની ચોરી થઈ શકે એમ નથી. વળી, કમલ સાધુજાત છે, પ્રભુ છે, એટલે તેનું સ્વરૂપ જ એવા પ્રકારનું છે કે તેની-પ્રભુની, સ્વામીની, શક્તિમાન્ પુરુષની-કોઈ ચોરી કરી શકે નહિ. આ પ્રમાણે સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ પણ કમલની ચોરી થઈ શકે નહિ. વળી સમય પણ શરદ્ ઋતુનો છે, એટલે પ્રકાશ ઘણો સારો, અને અજવાળાની અંદર ચોરી કરી શકાય નહિ. તેથી સમયની દૃષ્ટિએ પણ કમલની ચોરી થઈ શકે એમ નથી. આ પ્રમાણે દેશ,

સ્વરૂપ અને કાલ એ ત્રણ પ્રકારે પણ જેની ચોરી થઈ શકે એમ નથી એવા પદાર્થ-કમલ-પાસેથી જ્યારે ચોર-ભગવાનની દષ્ટિ-ઉદરમાં રહેલી સર્વ વસ્તુનું હરણ કરી શકે છે ત્યારે ગોપીજનોની અંદર રહેલા પ્રાણનું હરણ કરે તેમાં શી નવાઈ?) જે લોકો સહુથી વધારે બલવાનુ હોય છે તેઓ અપકીર્તિ ન મેળવવાની ખાતર ચોરી કરે છે. (જે બલવાનુ રાજાઓ હોય છે તેમને જોઈતી વસ્તુ જો પૈસા લઈને પણ આપવામાં ન આવે તો તે રાજાઓ બલાત્કાર કરીને તે વસ્તુ લૂંટી લેતા નથી, કારણ કે તેમ કરવામાં તેમને અપયશ મળે છે, પણ તે વસ્તુની ચોરી કરે છે.) પણ અહિં તો તે નહિ થાય, અહિં અપકીર્તિનો અભાવ નહિ થાય, અર્થાત્ અપકીર્તિ થશે જ. (અથવા તો બીજો અર્થ પણ સંભવે છે. અહિં આપની કેવલ અપકીર્તિ જ થશે એમ નહિ, પરંતુ વધ કરવાનો દોષ પણ થશે જ.) આ વાત ગોપીજનો ‘કિં વધો ન’ શબ્દોમાં કહે છે.

અથવા, શ્લોકમાં ‘અદશા’ એ પ્રમાણે પદ છૂટું પાડીને અર્થ કરવો. ‘અદશા’ એટલે અદર્શનથી, દર્શન આખ્યા વિના, આપ અમને મારો છો તે શું વધ નથી? (અર્થાત્ આપનું દર્શન જ અમને જીવાડે છે અને તેથી આપનું અદર્શન તો અમારો વધ કરનારું છે.) અમે જે આપની પાસે આવ્યાં તે સુરત-રમણ-ને માટે, અને તે સુરત તો દુર જ રહ્યું, ઉલટું વચમાં મરણ આવી પહોંચ્યું! આ પ્રમાણે થવાથી સુરત અપ્રકટિત જ રહ્યું અને તેથી આપનું ‘સુરતના નાથ’ એ નામ પણ પ્રકટ થયું નહિ. ઘોડાને ઉત્પન્ન કરવાની યોગીમાં શક્તિ હોય છે, છતાં પણ તે, ખરેખર, અશ્વપતિ કહેવાતો નથી. પણ જ્યારે તે યોગી અશ્વને ઉત્પન્ન કરે ત્યારે જ તે અશ્વપતિ કહેવાય છે. (કોઈનામાં શક્તિ હોય પણ જ્યાં સુધી તે માણસ શક્તિનો ઉપયોગ કરીને કાર્ય ન કરે ત્યાં સુધી તે માણસની શક્તિ બીજા લોકો સ્વીકારતા નથી. આ ન્યાયે, જ્યાં સુધી ભગવાનુ સુરત પ્રકટ કરે નહિ ત્યાં સુધી તે સુરતનાથ કહેવાય નહિ.) વળી, આપનાં દર્શન નહિ થવાથી અમારો વધ થશે એમાં શું આશ્ચર્ય? પણ આપનાં દર્શન નહિ થાય તો લક્ષ્મી પણ રહેશે નહિ. આ વાત ગોપીજનો ‘શ્રીમુખા’ એ શબ્દોમાં કહે છે. કમલના ઉદરમાં રહેલી શ્રીને જો બહાર કાઢવામાં આવે તો તે જ ક્ષણે તે શ્રી, બરોબર પુષ્ટ-વિકસિત-ન હોવાથી, કાચા ગર્ભની માફક મરી જાય છે. જો કે લક્ષ્મીને જીવાડનારી કાલ, દ્રવ્ય, દેશ વિગેરે બહુ વસ્તુઓ છે, છતાં પણ જ્યારે તેને આપનાં દર્શન ન થાય ત્યારે તે જીવતી નથી. તેવી સ્થિતિ અમારી પણ છે. (અર્થાત્ જ્યારે સાધનસામગ્રીવાળાં લક્ષ્મીજી આપનાં દર્શન ન થવાથી મરી જાય છે, ત્યારે અમારા જેવી નિ:સાધન ગોપીઓ આપનું દર્શન ન થવાથી મરી જાય તેમાં શું આશ્ચર્ય?) વળી, આપ સર્વને વરદાન આપો છો, જ્યારે અમને તો આપ મારો છો,

એ એક મોટું આશ્ચર્ય છે. વરદાન આપનાર તો, ખરેખર, પ્રત્યક્ષ હોય છે, કાંઈ છૂપા રહેતા નથી.

અથવા તો શ્લોકમાં ‘અશુલ્કદાસિકાઃ’ એ પ્રમાણે પદચ્છેદ કરવો. અમે અશુલ્કદાસિકાઓ-અમૂલ્ય દાસિકાઓ, ધર્મદાસિકાઓ-છીએ, તેથી આપે અમને મારી નાખવાં જોઈએ નહિ.

આ પ્રમાણે અનેક પ્રકારની કૂરતાની ભાવના વડે કેટલાંક ગોપીજનો ભગવાનને ઠપકો આપે છે.

અંદર રહેલો રસ પુષ્ટ થયો હોય અને જો તે બહાર આવે નહિ તો તે રસ પૂર્ણ નહિ જ થાય. તેથી તે પ્રકારે-ઉપર જણાવેલા પ્રકારે-આ શ્લોકમાં અન્યપૂર્વા સાત્ત્વિકતામસી ગોપીની વાણી બહાર નીકળી છે, બહાર પ્રકટ થઈ છે. (અર્થાત્ ગાનરૂપે વાણી જો બહાર પ્રકટ ન થાય તો અંદર રહેલો રસ પૂર્ણ થાય નહિ, તેથી ગાનરૂપે આ ગોપીજનની વાણી બહાર પ્રકટ થઈ છે.) ૨.

આપે અનેક પ્રકારે અમારું રક્ષણ કરેલું છે; તો હમણાં પણ અમારું રક્ષણ કરો એમ ‘વિષજલાપ્યયાત્’ એ શ્લોકમાં કેટલાંક કોમલ-અન્યપૂર્વા સાત્ત્વિક સાત્ત્વિક-ગોપીજનો કહે છે:

વિષજલાપ્યયાદ્ વ્યાલરાક્ષસાત્ વર્ષમારુતાદ્ વૈદ્યુતાનલાત્ ।

વૃષમયાત્મજાદ્ વિશ્વતો ભયાદ્ ઋષભા તે વયં રક્ષિતા મુહુઃ ॥૩॥

હે ઋષભ! કાલીયનાગના ઝેરવાળું જળ પીવાથી થએલા મૃત્યુથી, કાલીય વિગેરે સર્પોથી, તૃણાવર્ત વિગેરે રાક્ષસોથી, ઈન્દ્રે કરેલી વૃષ્ટિ તથા વાયુથી, વીજળી અને અગ્નિથી, વ્યોમાસુરથી અને સર્વ પ્રકારના ભયથી આપે અમારું અનેકવાર રક્ષણ કરેલું છે. (તેથી હમણાં પણ આપ અમારું રક્ષણ કરો.) ૩.

વિષજલ એટલે કાલીયનાગના ઝેરવાળું શ્રીયમુનાજનું જલ. તેનું પાન કરીને બધાંય બાલકો અને ગાયો મરી ગયાં. તેમને પણ આપે જ જીવાડ્યાં. વ્યાલ એટલે કાલિય, સુદર્શન વિગેરે સાપ; તૃણાવર્ત વિગેરે રાક્ષસો. વ્યાલનો અને રાક્ષસનો એકવદ્ભાવ હોવાથી એકવચનનો પ્રયોગ છે. તેમનાથી પણ આપે રક્ષણ કર્યું છે. ઈન્દ્રે કરેલી વૃષ્ટિ અને પવનથી (પણ આપે રક્ષણ કર્યું છે.) તેમાં પણ વીજળી અને અનલ-દાવાગ્નિ-થી (પણ આપે રક્ષણ કર્યું છે.) અહિં પણ વૈદ્યુતનો અને અનલનો એકવદ્ભાવ થતાં એકવચનનો પ્રયોગ છે. વૃષ જે મયનો પુત્ર થાય તે, અર્થાત્ વ્યોમાસુર. તેનાથી પણ આપે રક્ષણ કર્યું છે. ગોપીજનોને ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળના પદાર્થના જ્ઞાનનો આગ્રહ નથી, કારણ કે તેઓ સર્વજ્ઞ છે. વધારે શું

કહેવું? બધાય ભયમાંથી (આપ અમારું રક્ષણ કરો.) ગોપીજનો રક્ષણ કરવાનું કારણ દર્શાવતાં કહે છે કે ‘ઋષભ’. ભર્તા, ખરેખર, રક્ષણ કરે જ છે. તેથી આપ હંમેશાં રક્ષણ કરનાર છો, એટલે હમણાં પણ આપ અમારું રક્ષણ કરો એમ અર્થ છે. કાલીય નાગનું ઝેર, સર્પો, રાક્ષસો વિગેરે અમને મારનારા પદાર્થો બહારના હતા; પણ અત્યારે તો અમને મારનાર પદાર્થ અંદરનો છે, તેથી આપે અમારું સર્વથા પાલન કરવું જોઈએ. (ઋષભ એ અંદર અને બહારથી રક્ષણ કરનાર છે. માટે ઋષભમાં-આપમાં-રક્ષણ કરવાનું સામર્થ્ય હોવાથી અને અમને મારનારો અંદરનો પદાર્થ સૌથી બલવાન હોવાથી આપે અમારું સર્વથા રક્ષણ કરવું જોઈએ.) ૩.

બીજાં કેટલાંક શ્રુતિરૂપા નિર્ગુણ ગોપીજનો ભગવાનનો મહાન્ અનુભાવ-પ્રભાવ-જાણીને તેમના સ્વરૂપનું વર્ણન કરે છે, અને તેથી ભગવાન જ્ઞાનીને જેમ મોક્ષ આપે છે તેમ અમને પણ યોગ્ય મોક્ષ આપશે એ હેતુથી ‘ન ખલુ’ એ શ્લોકમાં ભગવાનની સ્તુતિ કરે છે:

ન ખલુ ગોપિકાનન્દનો ભવાન્ અખિલદેહિનામ્ અન્તરાત્મદક્ ।

વિખનસાર્થિતો વિશ્વગુપ્તયે સખ ઉદેયિવાન્ સાત્વતાં કુલે ॥૪॥

હે સખે! આપ કાંઈ વાસ્તવિક રીતે યશોદાના પુત્ર નથી, પણ સર્વ દેહીઓના અંતઃકરણના દ્રષ્ટા છો. બ્રહ્માની પ્રાર્થનાથી વિશ્વની રક્ષાને માટે આપ યાદવકુલમાં પ્રકટ થયા છો. ૪.

ભગવાન જો નંદના પુત્ર હોઈને યશોદાના પુત્ર હોય તો પહેલાં ગોપીજનોએ આપેલા બધા ઠપકાઓ યોગ્ય ગણાય. પણ ભગવાન નંદના પુત્ર થઈને યશોદાના પુત્ર જ નથી, તેથી તમને ગોપીજનોએ જે બધો ઠપકો આપ્યો છે તે અયોગ્ય છે. (જેમ મથુરામાં વસુદેવમાંથી દેવકીમાં આગમન કરીને ભગવાનનો પ્રાદુર્ભાવ થયો છે તેમ અહિં નંદમાંથી યશોદામાં પ્રવેશ કરીને પ્રાદુર્ભાવ થયો નથી, પરંતુ યશોદાના ગર્ભમાં તો માયા જ રહી હતી અને ભગવાન તો ત્યાં સુધી ભક્તોના હૃદયમાં બિરાજેલા હતા. તેથી પ્રાકટ્યના સમયે માયાના આવરણ સહિત ભગવાન પ્રકટ થયા. તેથી લીલાને માટે ભગવાને નંદ અને યશોદા એ બંનેયમાં પુત્ર તરીકેની બુદ્ધિ સ્થાપી. તેથી છૂટી છૂટી રીતે ભગવાન નંદના પુત્ર છે અને યશોદાના પણ પુત્ર છે, પરંતુ ભગવાન નંદમાંથી યશોદામાં આવેલા ન હોવાથી એક જ વખતે તે નંદના અને યશોદાના પુત્ર થઈ શકતા નથી. લોકમાં પણ પિતા અને માતા એ બંનેનો સંબંધ પુત્રમાં હોય છે; એ લોકદષ્ટિએ વિચારતાં ભગવાનમાં ‘નન્દસૂનુત્વવિશિષ્ટ-યશોદાસૂનુત્વ’-નંદના પુત્ર હોઈને યશોદાના પુત્ર થવું તે-નથી. આ જ અર્થમાં જ ગોપીજનો ભગવાનને કહે છે કે

આપ ગોપિકાનંદન-યશોદાનંદન-નથી. અથવા તો ગોપીજનો શૃંગારરસભાવવાળાં હોવાથી કટાક્ષમાં કહે છે કે આપ યશોદાનંદન-નથી.) ‘ખલુ’ એ પદ નિશ્ચયના અર્થમાં વપરાયું છે. અહિં કાંઈ પણ તિરોહિત-ગુપ્ત-જેવું નથી. ગોપિકાના-યશોદાના-આપ નંદન-પુત્ર-છો એમ નથી. જો લોક રીતે તેમ હોત-યશોદાના પુત્ર હોત-તો જેમ યશોદાએ આપને સ્વાધીન કરી દીધા અથવા તો યશોદાએ આપને જાણ્યા, તેમ ગોપિકાઓ પણ આપને સ્વાધીન કરી દેત અથવા આપને જાણત, કારણ કે આપ ગોકુલના સ્વામીના પુત્ર છો. બંને પક્ષો વચ્ચે તુલ્યતા હોય ત્યારે જ ભગવાનને વશ કરવાના સાધનરૂપ વિદ્યા અને યોનિનો સંબંધ હોઈ શકે. (હું ભક્તોને વશ છું એ જણાવવાને માટે જ ભગવાન યશોદાને વશ થયા છે.) વળી, આપ એકલા વૈકુંઠાધિપતિ પુરુષોત્તમ છો એમ નહિ, પરંતુ અમારા જેવા સર્વ દેહીઓના અંતરાત્માને-અંતઃકરણને જુઓ છો. જો ભગવાન અમારા હૃદયમાં તે પ્રકારનો તાપ જુએ તો તે પ્રસન્ન જ થાય. તેથી આ બાબતમાં કાંઈ કહેવા જેવું નથી. વળી, ભગવાન જે આવ્યા છે તે અમારા જેવાના રક્ષણને માટે જ આવ્યા છે. જો ભગવાન જાણે કે ગોપીજનો મરી જાય છે તો જરૂર તેમનું રક્ષણ કરે. અમારા રક્ષણને માટે જ અમે ભગવાનની પ્રાર્થના કરી છે, ભગવાન પોતાની ઈચ્છાથી અહિં આવ્યા નથી એમ ‘વિખનસાર્થિતઃ’ એ શબ્દોમાં ગોપીજન કહે છે. વિખના એટલે બ્રહ્મા. જે વિશેષ ખનન કરે-ખોદે-તે વિખના કહેવાય; અર્થાત્ જે સર્વ રીતે વેદના અર્થનો વિચાર કરનાર છે તે વિખના, બ્રહ્મા. આ કારણથી જ બ્રહ્માએ સ્થાપેલો ભગવદ્ભજનનું પ્રતિપાદન કરનારો વૈખાનસ મત પ્રચલિત છે. આ જ માર્ગ પ્રમાણે ભગવાન પૂજા સ્વીકારે છે, અને તેથી જ વેંકટ વિગેરે પુણ્યસ્થલોમાં તે પ્રકારે જ ભગવાનની પૂજા કરવામાં આવે છે. તેથી સર્વની પૂજા પણ ગ્રહણ કરવાને માટે બ્રહ્માએ ભગવાનની પ્રાર્થના કરી. ‘વિશ્વગુપ્તયે’-સર્વના રક્ષણને માટે બ્રહ્માએ ભગવાનની પ્રાર્થના કરી અને સર્વનું રક્ષણ એ જ બ્રહ્માની પ્રાર્થનામાં મુખ્ય પ્રયોજન છે. આ પ્રમાણે આપ અંતરાત્મા છો, એટલે બધાય જીવોના આપ સખા છો, આવા પ્રકારના-સર્વના સખા-આપ જગતમાં સખ્ય પ્રકટ કરવાને માટે સાત્ત્વતોના-યાદવોના અથવા વૈષ્ણવોના-કુલમાં ઉદય પામ્યા-પ્રાદુર્ભાવ પામ્યા છો. તેથી આ કારણને માટે જ-જગતમાં સખ્ય પ્રકટ કરવાને માટે જ-ભગવાનનો અહિં પ્રાદુર્ભાવ થયો છે.

ભગવાનનો હાલ જે આવિર્ભાવ થયો છે તેની પહેલાં પણ ભગવાન જીવોના સખા હતા, (કારણ કે ‘સુપણાવિતૌ સયુજ્ઞૈ સખાયૌ’ એ પ્રમાણે શ્રુતિ છે) તેથી આપ ઈચ્છા પ્રમાણે જ-આપની રમણ કરવાની ઈચ્છાને અનુકૂલ જ-અમને

પ્રેરો છો. (તેથી અમારો નાયિકાભાવ નિત્ય છે.) સર્વના સખા, ભગવાન્, જ્યારે પ્રકટ થાય ત્યારે તો તે પ્રાકટ્યમાં કાંઈક વિશેષ હોવો જોઈએ એમ આપને અમારે કહેવાનું છે. આ વિશેષ તે ભગવાનનું ભક્તોને આત્મનિવેદન. (ભગવાન્ પહેલેથી જ બધાંના સખા છે, અને જ્યારે તે પ્રકટ થાય ત્યારે તો ભક્તોને-નાયિકાઓને-પોતાના આત્માનું સમર્પણ કરવાને માટે જ-ભક્તોને સ્વરૂપાનંદનો અનુભવ કરાવવાને માટે જ-તે પ્રકટ થાય છે.) તેથી અમે શી વિજ્ઞાપ્તિ કરીએ? આપને જેમ યોગ્ય લાગે તે જ પ્રમાણે આપે કરવું જોઈએ એમ તાત્પર્ય છે. ૪.

બીજાં ગોપીજનો તો સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક છે અને રાજસપ્રધાન ગોપીજનોથી વિશિષ્ટ-ઉત્તમ-છે. જેને માટે ભગવાનને પ્રાર્થના કરવામાં નથી આવી તે વસ્તુ તો ભગવાન્ નહિ આપે એમ વિચારીને આ અનન્યપૂર્વા સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક ગોપીજનો ભગવાનના હસ્તનો પોતાના માથા સાથે સંબંધ થાય એ પ્રમાણે ‘વિરચિતાભયમ્’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

વિરચિતાભયં વૃષ્ણિધુર્યં તે શરણમ્ ઈયુષાં સંસૃતેર્ભયાત્ ।  
કરસરોરુહં કાન્ત કામદં શિરસિ ઘેહિ નઃ શ્રીકરગ્રહમ્ ॥૫૧॥

હે વૃષ્ણિકુળમાં શ્રેષ્ઠ! હે કાન્ત! આપનું હસ્તકમલ, જે સંસારના ભયથી આપને શરણ આવનારને અભયદાન આપનાર છે, જે અભિલાષાઓ પૂર્ણ કરે છે અને જેણે લક્ષ્મીજીનું પાણિગ્રહણ કર્યું છે, તે અમારા શિર ઉપર ધરો. ૫.

હે સ્વામિન્! અમારું હૃદય ફાટી જાય છે, તેથી આપ આપનું હસ્તકમલ અમારા મસ્તક ઉપર મૂકો કે જેથી અમારા આખે શરીરે અમને શાંતિ થાય. કમલ, ખરેખર, શીતલ હોય છે. તેમાં પણ (ગમે તેમ પાણીના સેચનથી ઉછરેલું નહિ પરંતુ) સરોવરમાં ઉત્પન્ન થએલું કમલ. તેમાં પણ ભગવાનનો હસ્ત જ સરોવર અને કમલને સ્થાને. તેથી જેમ સામાન્ય કમલનું ઉદ્ધરણ કરવાથી તેમાંથી રસાલતા જતી રહે છે તેમ આપના હસ્તકમલનું ઉદ્ધરણ કરવાથી તેમાંથી રસાલતા જતી રહેતી નથી, કારણ કે ભગવાનનું હસ્તકમલ સરોવરરૂપ છે. ‘કાન્ત’ એ ભગવાનનું સંબોધન છે. પ્રથમ અમારા મસ્તક ઉપર ભગવાન્ પોતાના હસ્તનું સ્થાપન કરીને અમને સ્વાધીન કરે, શરણે લે, એમ દર્શાવવામાં આવ્યું. વળી, ભગવાનનો હસ્ત ફક્ત તાપ જ દૂર કરે છે એમ નથી, પરંતુ કામદ પણ છે, જેની અભિલાષા રાખવામાં આવે છે તે પદાર્થ પણ આપે છે.

અરે! ભગવાન્ પુરુષોત્તમ તો યોગી લોકોને ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે, તો પછી તે સ્ત્રીઓનો સ્પર્શ કેવી રીતે કરશે? આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો ગોપીજન

કહે છે કે 'શ્રીકરગ્રહમ્'. લક્ષ્મીજીના હસ્તનું ગ્રહણ જોણો કર્યું છે તેવો ભગવાનનો હસ્ત છે. તેથી ભગવાન ગૃહસ્થ છે. જ્યાં લક્ષ્મીના હસ્તનું ભગવાન ગ્રહણ કરે છે, ત્યાં પછી અમારા મસ્તકનું ગ્રહણ કરવામાં શો વાંધો આવશે એ પ્રમાણે તાત્પર્ય છે.

અરે! લક્ષ્મીજી તો ભગવાનની સાથે પરણેલાં છે તેથી શાસ્ત્રના નિયમને અનુસરીને ભગવાન લક્ષ્મીજીના હસ્તનું ગ્રહણ કરે છે, પણ તમારા મસ્તકનું ગ્રહણ કરવાનું શું કારણ છે? આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો ગોપીજનો કહે છે કે 'સંસૃતેર્ભયાત્ શરણમીયુષાં વિરચિતાભયમ્'. જે પ્રમાણે વિવાહમાં શાસ્ત્રનો વિધિ છે તે જ પ્રમાણે શરણે આવેલા માણસનું રક્ષણ કરવામાં પણ શાસ્ત્રનો વિધિ છે. શરણે આવેલા માણસનું રક્ષણ કરવું તે વિવાહના કરતાં વધારે મહત્વનું છે. વિવાહ એ જગતમાં સાધારણ ધર્મ છે, જ્યારે શરણે આવેલાનું રક્ષણ કરવું એ ઈશ્વરનો ધર્મ છે.

અરે! શરણે આવેલાનું રક્ષણ કરવાનો આ પ્રકાર નિષિદ્ધ છે; તો પછી રક્ષણ શી રીતે થઈ શકે? આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો ગોપીજનો કહે છે કે 'હે વૃષ્ણિધુર્ય'. વૃષ્ણિ, ખરેખર, યદુવંશમાં ઉત્પન્ન થએલા હતા, તેમને ઘણી સ્ત્રીઓ હતી અને તેમણે મોટો વંશ પણ કર્યો. આવા પ્રકારના વૃષ્ણિના કુલમાં પણ આપ-ભગવાન-ધુર્ય-શ્રેષ્ઠ-છો. (તેથી આપે સ્ત્રીઓનું જ પાલન કરવું જોઈએ,) તેમાં પણ સંસારના ભયથી સ્ત્રીઓ આપની પાસે આવેલી છે (એટલે તેમનું રક્ષણ કરવું એ આપની ફરજ જ છે).

(અરે ગોપીજનો! તમને જ્યારે સંસાર જ નથી ત્યારે સંસારનો ભય તમને ક્યાંથી હોઈ શકે? આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં ગોપીજનો કહે છે કે) સંસાર, ખરેખર, સ્વભાવથી જ દુષ્ટ નથી પણ તે અસહ્ય દુઃખનું કારણ છે તેથી દુષ્ટ છે. (આપના વિરહથી) અમને પણ અસહ્ય દુઃખ પ્રાપ્ત થયું છે, અને તેથી અસહ્ય દુઃખના કારણરૂપ સંસારથી ભય અર્થાત્ મોટું દુઃખ અમને પણ પ્રાપ્ત થયું છે, તેથી દુષ્ટ દ્વારા અથવા અદુષ્ટ દ્વારા આપ જ તેનું નિરાકરણ કરનાર છો. (અર્થાત્ દુઃખના કારણનો નાશ કરવો એ આપનો સ્વભાવ છે તેથી અમારા દુઃખના કારણનો પણ આપે જ નાશ કરવો જોઈએ.) આ પ્રમાણે કહેવાથી-ભગવાન અમારા દુઃખના કારણનો નાશ કરે અને અમને અભયદાન આપે એ પ્રમાણે કહેવાથી-અમે ગોપીજનો પણ નિર્ભય છીએ એમ સૂચન થયું. આ પ્રમાણે ભગવાન બીજાઓને અભયદાન આપે છે તેથી ગોપીજનો પણ નિર્ભય છે એટલે ગોપીજનોએ ભગવાનને 'કાન્ત' એ પ્રમાણે સંબોધ્યા અને તેથી સૂચન કર્યું કે આપ જ અમારા પતિ છો, આપ જ અમારા



શાસ્ત્રસિદ્ધ ભર્તા છો. તેથી ‘સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરવાનું જ છે’ એ પ્રકારના સ્ત્રીઓ વિષેના આપના વ્રતને-નિયમને-અનુસરીને આપ અમારો મનોરથ પૂર્ણ કરો એ પ્રમાણે અર્થ છે. ૫.

પછીથી અનન્યપૂર્વા સાત્ત્વિકતામસી ગોપીજન કેટલીક વિલક્ષણતાથી ધૃષ્ટતા-હિંમત-રાખીને તે જ અર્થની-અમારા દુઃખની નિવૃત્તિ અને મનોરથની પૂર્તિની-‘વ્રજજનાર્તિહન’ એ શ્લોકમાં પ્રાર્થના કરે છે :

વ્રજજનાર્તિહન! વીર! યોષિતાં નિજજનસ્મયધ્વંસનસ્મિત! ।

ભજ સખે! ભવત્ કિંકરી: સ્મ નો જલરુહાનનં ચારુ દર્શય ॥૬॥

હે વ્રજજનની આર્તિનો નાશ કરનાર! હે સ્ત્રીઓના વીર! હે નિજજનના ગર્વને મંદલાસ્યથી દૂર કરનાર! હે સખે! આપ આપની દાસીઓને-અમને ભજો અને આપના મનોહર મુખકમલનાં દર્શન કરાવો. ૬.

હે ભગવાન! આ બધાં ગોપીજનોને આપને શું કહેવું તે આવડતું નથી; હું તો આપને નિશ્ચયપૂર્વક કહું છું. હે ‘સખે’ એ પ્રમાણે જે સંબોધન છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે આપ અમારા સખા છો અને તેથી હું આપને છેતર્યા વિના જ નિશ્ચિત અર્થ જ કહીશ. અમને આપ ભજો એટલો જ હિત-લાભ કારક ઉપદેશ મારે આપને કરવાનો છે.

અરે! આ ગોપીજન આટલી બધી હિંમત કેમ રાખે છે અને ‘અમને ગોપીજનોને ભજો’ એ પ્રકારની નિષિદ્ધ વાત કેમ કરે છે? આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘ભવત્કિંકરી:’. ‘જે પ્રકારે ભક્ત મને ભજે છે તે પ્રકારે જ હું તેને ભજું છું’ એ તો આપની પ્રતિજ્ઞા જ છે. તેથી અમે, આપની દાસીઓ, જે પ્રમાણે આપનું ભજન કરીએ છીએ તે પ્રમાણે આપ પણ અમારું ભજન કરો. અમે આપની દાસીઓ છીએ તે વાત, અને ગીતાજમાં જણાવેલી આપની પ્રતિજ્ઞા એ બંનેય પ્રસિદ્ધ છે, એમ દર્શાવવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે ‘સ્મ’.

આપ અમારું ભજન કરો તેમાં આપની ફક્ત પેલી એક પ્રતિજ્ઞા જ હેતુ છે એમ નથી, પરંતુ તેમાં બીજાં પણ કારણો છે. પહેલું કારણ તો ભગવાનના અવતારનું પ્રયોજન છે એમ ‘વ્રજજનાર્તિહન’ એ શબ્દોમાં ગોપીજન કહે છે. વ્રજજનોની આર્તિ-પીડા-નો નાશ કરનાર તે ‘વ્રજજનાર્તિહન’ કહેવાય છે. અમારી આર્તિ-પીડા-આ વિનાની બીજી કોઈ નથી, આનાથી અધિક આર્તિ અમને બીજી નથી. વ્રજજનોની પીડાને દૂર કરવી એ તો આપના અવતારનું સામન્ય પ્રયોજન છે. હવે ગોપીજનો ભગવાનના અવતારનું વિશેષ પ્રયોજન જણાવતાં કહે છે કે ‘યોષિતાં

વીર’-આપ યોષિત્ના વીર છો, સ્ત્રીજનોને આપના આનંદનું દાન કરનાર છો. આપ સદાનંદ કૃષ્ણ છો, આપ ઐશ્વર્ય વિગેરે છ ગુણવાળા ભગવાન્ છો. વીર પુરુષોએ-દાનવીર પુરુષોએ-શૂરાનો, બીજામાં રહેલા કામાદિનો, નાશ કરવા જેવો છે. (દાન કરનારા પુરુષો બહુ દાન આપીને અન્યની અભિલાષા પૂર્ણ કરે છે. આ કામાદિ શૂરોમાં પણ કામ મુખ્ય છે, અન્ન વિગેરેના કામ કરતાં કામશાસ્ત્રસિદ્ધ કામ મુખ્ય છે અને તે અનેક પ્રકારનો હોય છે. દાનવીર પુરુષે સ્વરૂપાનંદરૂપ પૂર્ણ પદાર્થ વડે બીજા મનુષ્યોને અંદર અને બહાર પૂરીને કામને આશ્રય-રહેવાના સ્થલ-વિનાનો બનાવીને તે કામને દૂર કરવાનો હોય છે. આ કારણથી જ જગતમાં દાનવીર પુરુષો બીજા વીર પુરુષો કરતાં વધારે કીર્તિ મેળવે છે. વીર પુરુષો જે મારી નાખવા યોગ્ય છે તેને સ્વરૂપતઃ મારે છે, જ્યારે દાનવીર પુરુષો ગરીબ લોકોના ઘરને સમૃદ્ધિથી પૂરીને તેમના દારિદ્રનો નાશ કરે છે, અર્થાત્ તે ઘરમાં દારિદ્રને રહેવાને માટે સ્થલ ન મળવાથી દારિદ્ર પોતે જ જતું રહે છે.) આપ દાનવીર છો તેથી આપ મહાન્ વીર છો, બ્રહ્મા પણ જેમની ઈચ્છાઓને પૂરી શકે નહિ એવા ઘણા દરિદ્ર માણસોની પણ ઈચ્છા આપ આપની અંદર રહેલા આનંદ વડે પૂર્ણ કરો છો. આપની આ વાત તો સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ જ છે. આ જ કારણથી ‘યોષિતાં વીર’ એ પ્રકારે આપનું સંબોધન છે. ખરેખર, જગતમાં કૃષ્ણના વિના બીજા કોઈ પણ પદાર્થને ‘યોષિતાં વીર’ એ પ્રકારનું સંબોધન ઘટતું નથી, કારણ કે કૃષ્ણ વિના બીજા પદાર્થોની કામનાઓ પૂર્ણ થએલી નથી. (જ્યાં પોતાના જ કામ પૂર્ણ થયા નથી ત્યાં વળી બીજાઓની કામના તેઓ કેવી રીતે પૂર્ણ કરી શકે? આથી જ તેઓ-કૃષ્ણ વિનાના બીજા પદાર્થો-‘યોષિતાં વીર’ એ સંબોધનને યોગ્ય નથી.) તેથી આપના અવતારનાં સામાન્ય અને વિશેષ પ્રયોજનોને લીધે પણ આપ અમને ભજો. (અવતારનું સામાન્ય પ્રયોજન વ્રજજનોની આર્તિ દૂર કરવી તે; અને અવતારનું વિશેષ પ્રયોજન યોષિતોના વીર, સ્ત્રીજનોને સ્વરૂપાનંદનું દાન કરવું તે.)

અરે! આ બધું કહ્યું તે તો સાચું, પણ તમારામાં ‘અમે સર્વથી અધિક છીએ’ એ પ્રકારનો જે અભિમાન દોષ છે તેને દૂર કરવાને માટે જ તમારું ભજન કરવામાં આવતું નથી. આ પ્રમાણે જો ભગવાન્ ગોપીજનોને કહે તો તેના જવાબમાં ગોપીજન કહે છે કે ‘નિજજનસ્મયધ્વંસનસ્મિત’. નિજજનો એટલે સેવકો; તેમનો સ્મય એટલે ગર્વ, તેનો ધ્વસન-નાશ-કરવાને માટે સ્મિત છે જેમનું એવા ભગવાન્ ‘નિજજનસ્મયધ્વંસનસ્મિત’ કહેવાય છે. પોતાના સેવકોનું અભિમાન દૂર કરવાનો ઉપાય પરિત્યાગ-સેવકોને છોડી દેવા તે-નથી, પણ તે અભિમાન દૂર કરવાને માટે

સ્મિત જ કરવું જોઈએ. સ્મિત એટલે મંદ હાસ. ‘ભગવાનનું હાસ્ય એ મનુષ્યોને ઉન્માદ કરનારી માયા છે’ એ પ્રમાણે શ્રીમદ્ભાગવતના દ્વિતીય સ્કંધના પ્રથમ અધ્યાયની અંદર કહેવામાં આવેલું છે. આ હાસરૂપી માયા જ્યારે ભક્તોને વિષે પ્રવર્તે નહિ ત્યારે તે મંદ કહેવાય છે. ખરેખર, હાસ્ય-માયાના મોહ-વિના કોઈને પણ અહંકાર થતો નથી, અને તેથી જ અમારા અહંકારને દૂર કરવાને માટે પણ સાધન તરીકે તો આપે આપના માયાત્મક હાસ્યનો સંકોચ જ કરવાનો છે. (અર્થાત્ આપ આપના હાસ્યનો સંકોચ કરીને મંદહાસ્ય-સ્મિત-જ કરો કે જેથી અમારો અહંકાર નાશ પામે. આ શાસ્ત્રીય પ્રકારે અર્થ કર્યો; હવે લૌકિક પ્રકારે અર્થ કરવામાં આવે છે.) વળી સેવકોનો પણ અભિમાનરૂપી ધર્મ જ દુષ્ટ છે, નહિ કે ધર્મી-સેવક-જ પોતે દુષ્ટ છે. (અહિં રસનો જે પ્રતિબંધ કરે છે તેને દોષ કહેવામાં આવ્યો છે. અમારો-ગોપીજનોનો-અહંકાર રસનો પ્રતિબંધ કરે છે. તેથી અમારું અભિમાન દુષ્ટ છે, અમે પોતે દુષ્ટ નથી.) જો આ પ્રમાણે ન માનીએ તો અમે ભગવાનનાં સેવકો જ થઈ શકીએ નહિ. આ પ્રમાણે શ્રીગોપીજનોએ પોતાના લૌકિક અહંકારનો પણ નાશ કરવાને માટે ભગવાનના સ્મિતરૂપી અલૌકિક ઉપાય દર્શાવ્યો. આપના હાસ્યને લીધે ગોપીજનો પણ પોતાની જાતને તુલ્ય માને છે; પણ જ્યારે આપના હાસ્યનો સંકોચ થશે ત્યારે જ તેમનો ગર્વ જતો રહેશે. (હવે રસમાર્ગની રીતે અર્થ કરે છે.) વળી અભિમાન એ ખરેખર દોષ છે (કારણ કે તે રસની પ્રાપ્તિ કરવામાં પ્રતિબંધક છે.) જ્યાં સુધી આપના સ્મિતવાળા મુખનું ગોપીજન દર્શન કરતાં નથી ત્યાં સુધી જ તેમનું અભિમાન રહે છે. એવી એક પણ સ્ત્રી નથી કે જે આપનું સ્મિતવાળું મુખ જોઈને પોતાનું અભિમાન રાખી શકે. (આ પ્રમાણે ‘નિજજન’ ઇત્યાદિ પદનો શાસ્ત્રીય, લૌકિક અને રસમાર્ગીય એ ત્રણ પ્રકારે અર્થ કરવામાં આવ્યો છે.)

અરે! સ્મિત એ અભિમાનનો નાશ કરવાના સાધન તરીકે જગતમાં પ્રસિદ્ધ નથી; તો પછી ભગવાનનું સ્મિત સેવકોનું અભિમાન દૂર કરશે એ કેવી રીતે જાણી શકાય? આ શંકાના સમાધાનમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘જલરહાનનં ચારુ દર્શય’. જલરહ એટલે કમલ. કમલના જેવા મુખમાંથી અમૃત ઝરે છે. જે કોઈ અમૃત પીએ છે તેનામાં કોઈ પણ જાતનો દોષ, ખરેખર, રહેતો નથી એ આ વિષયમાં યુક્તિ છે. આપનું સ્મિત સેવકોના અભિમાનનો નાશ કરનારું સાધન છે કે કેમ એ વિષે જો આપને શંકા થતી હોય તો એક વાર સ્મિત દેખાડીને આપ પોતે જ અનુભવ કરો કે અમારો અહંકાર તેનાથી દૂર થાય છે કે નહિ. વળી, અભિમાન એ મનનો ધર્મ છે; આપનું મુખ તો ચારુ, મનોહર-મનને હરણ કરનારું-છે. ખરેખર! મનરૂપી ધર્મીનું

હરણ કરવામાં આવે તો પછી મનનો અભિમાનરૂપી ધર્મ રહેતો નથી. સખાઓ સખીનું ભજન કરવા યોગ્ય જ છે. ૬.

સાત્ત્વિકરાજસી ગોપીજન તો સાત્ત્વિકતામસી ગોપીજન કરતાં ઉત્તમ છે, એટલે તે જ બાબતની બીજા પ્રકારે ‘પ્રણતદેહિનામ્’ એ શ્લોકમાં પ્રાર્થના કરે છે :

પ્રણતદેહિનાં પાપકર્ષણં તૃણચરાનુગં શ્રીનિકેતનમ્ ।

ફણિક્ષણાર્પિતં તે પદામ્બુજં કૃણુ કુચેષુ નઃ કૃન્ધિ હૃદયમ્ ॥૭॥

આપને પ્રણામ કરનારા પ્રાણીઓના પાપનો નાશ કરનારં, પશુઓની પાછળ જનારં, લક્ષ્મીજીના નિવાસરૂપ, અને કાલીય નાગની ફણા ઉપર મૂકાએલું આપનું ચરણકમલ આપ અમારા સ્તનો ઉપર પધરાવો અને અમારા હૃદયમાં ચોરની માફક રહેલા કામનો નાશ કરો. ૭.

‘તે પદામ્બુજં નઃ કુચેષુ કૃણુ’-આપ આપનું ચરણારવિંદ અમારા સ્તનો ઉપર મૂકો-એ પ્રમાણે આ શ્લોકમાં અન્વય છે. પહેલા ગણના ‘કૃવ્’ ઘાતુ ઉપરથી જે ‘કૃણુષ્વ’ રૂપ સિદ્ધ થાય છે તેમાંના ‘ષ્વ’નો આ શ્લોકમાં છાંદસ લોપ કરીને ‘કૃણુ’ એ પ્રમાણે રૂપ આપવામાં આવ્યું છે, અને તેનો અર્થ ‘સ્થાપન કરો’ એ પ્રમાણે થાય છે. સ્તનો ઉપર ભગવાનનું ચરણારવિંદ સ્થાપન કરવાનું પ્રયોજન દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘કૃન્ધિ હૃદયમ્’. અમારા હૃદયમાં ચોરની માફક રહેલા કામનો આપ નાશ કરો. શ્લોકમાં ‘કુચેષુ’-સ્તનો ઉપર-એ પ્રમાણે જે બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે ગોપીજનોના સમૂહની દૃષ્ટિએ કરવામાં આવ્યો છે, અથવા તો વિરહને લીધે ગોપિકાઓ પોતાના સ્તનોને પોતાનાથી ભિન્ન માને છે તેથી. (સંયોગમાં સ્તનો ભગવાનના ઉપયોગમાં આવે એટલે સ્તનોને ગોપીજનો પોતાનાં માને, પણ વિરહમાં સ્તનો ભગવદુપયોગી ન હોવાથી તેમને પોતાનાં માનતાં નથી, પરંતુ પોતાનાથી જુદાં માને છે. એટલે ગોપીજનોની પ્રાર્થનાનો ભાવ એવો છે કે જો અમારા ઉપર ચરણારવિંદનું આપ સ્થાપન કરતા ન હો તો પછી અમારાથી ભિન્ન અને આપનો પક્ષપાત કરનારા એવા સ્તનો ઉપર તો આપ આપનું ચરણારવિંદ પધરાવો.) અથવા તો પોતાના સ્તનોના ઘણા ટુકડાઓ થઈ ગયા એટલે ગોપીજનો એ ‘કુચેષુ’ એમ બહુવચનનો પ્રયોગ કર્યો છે એમ પણ અર્થ થાય. પાંચમા શ્લોકમાં ગોપીજનોએ પોતાના મસ્તક ઉપર હસ્ત મૂકવાની ભગવાનને જે પ્રાર્થના કરી તેમાં તેમણે ભગવાનની પાસે આવવાની પ્રાર્થના કરી. પછીથી છઠ્ઠા શ્લોકમાં અમને દાસીઓને આપ ભજો એ પ્રમાણે ગોપીજનોએ ભગવાનની જે પ્રાર્થના કરી તેમાં તેમણે ભગવાનની સાથેના સંબંધની પ્રાર્થના કરી. હવે આ સાતમા શ્લોકમાં વિપરીત

રસની પ્રાર્થના કરવામાં આવે છે, અથવા તો તિર્યગ્બેદરૂપી એક વિશિષ્ટ બંધની પ્રાર્થના કરવામાં આવે છે, કારણ કે ‘પદામ્બુજમ્’ એમ એકવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે. સ્તનો ઉપર ભગવાનનું ચરણારવિંદ પધરાવવાથી હૃદયમાં રહેલો કામ, ખરેખર, નાશ પામે છે. (બધાં ગોપીજનોનો એક સરખો મનોરથ ન હોવાથી ‘કુચેષુ’ એ બહુવચન ન ઘટી શકે તેથી બીજો પક્ષ દર્શાવે છે.) અથવા તો સ્ત્રીઓના સમૂહમાં ભગવાન્ જ્યારે લીલાશયન કરે ત્યારે ગોપીજનો આજુબાજુ રહે અને ભગવાનનું ચરણારવિંદ મધ્યમાં રહે એટલે ભગવાનના એક ચરણારવિંદને ગોપીજનોના અનેક સ્તનોનો સંબંધ થઈ શકે, એટલે ‘કુચેષુ’ એ બહુવચન ઘટી શકે એમ છે.

અરે! તમારાં કઠણ સ્તનો ઉપર મારું કોમલ ચરણ શી રીતે સ્થાપી શકાય? આ પ્રમાણે જો ભગવાન્ શંકા કરે તો તેમનું સમાધાન કરતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘ફણિફણાર્પિતમ્’. કાલિયનાગની ફણા કરતાં અમારા સ્તનો વધારે કૂર-કઠણ-નથી. જેમ આપે કાલિયનાગની ફણા ઉપર ચરણ સ્થાપીને તે નાગની અંદર રહેલો દોષ દૂર કર્યો તેમ અમારા સ્તનો ઉપર પણ આપે ચરણ સ્થાપીને અમારામાં રહેલો દોષ દૂર કરવો જોઈએ. ભગવાનના ચરણને જે ‘અમ્બુજ’-કમલ-કહેવામાં આવેલું છે તેનો ભાવ એવો છે કે ભગવાનનું ચરણ પ્રત્યક્ષ રીતે તાપનો નાશ કરનારું છે.

અરે! તમે બધાં કાલિય નાગની વાત કરો છો, છતાં પણ સ્ત્રીઓની છાતી ઉપર મારે ચરણ મૂકવું એ અયોગ્ય છે. આ પ્રમાણે જો ભગવાન્ શંકા કરે તો ગોપીજનો તે શંકાનો પરિહાર કરતાં કહે છે કે ‘શ્રીનિકેતનમ્’. આપનું ચરણ લક્ષ્મીજનું સ્થાન છે. જ્યારે લક્ષ્મીજી આપના ચરણનો સ્પર્શ કરવાને યોગ્ય છે, તો પછી લક્ષ્મીજીના જ અંશરૂપ એવી બીજી સ્ત્રીઓ-ગોપીજનો-આપના ચરણનો સ્પર્શ કરે તેમાં શો સંદેહ હોઈ શકે?

અરે! લક્ષ્મીજી ચતુર છે અને તમે બધાં તો મૂઢ છો, એટલે તમારું હિત મારે કેવી રીતે કરવું? આ પ્રમાણે જો ભગવાન્ શંકા કરે તો ગોપીજનો ઉત્તરમાં કહે છે કે ‘તૃણચરાનુગમ્’. તૃણચરો એટલે ગાય વિગેરે પશુઓ. આવા પશુઓની પણ પાછળ આપનું ચરણારવિંદ તેમના હિતને માટે જાય છે. ભગવાનથી પોતે પ્રેરાએલાં છે એમ માનીને શું તે પશુઓ ઘાસનો ત્યાગ કરીને અમૃતનું ભક્ષણ કરે છે? જેમ તેમને મન ઘાસ જ અમૃત છે તેમ અમને પણ કામ જ અમૃત છે. આથી કરીને પરમકૃપાળુ એવા જે આપ તેમના કોઈ પણ અર્થનો નાશ થતો નથી.

અરે! તમે બધાંઓએ ઈન્દ્રિયો જીતેલી નથી અને તમારામાં બીજા પણ ગુણો નથી, તેથી હમણાં તમારામાં પાપ છે; તે પાપ જ્યારે નાશ પામશે ત્યારે

પછીથી હું તમારા સ્તનો ઉપર મારું ચરણ મૂકીશ. આ પ્રમાણે જો ભગવાન્ કહે તો તેના ઉત્તરમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘પ્રણતદેહિનાં પાપકર્ષણમ્’. અમે પુષ્કળ નમેલાં છીએ-અમે આપને પુષ્કળ નમન કરીએ છીએ-;આપને પુષ્કળ નમન કર્યા વિના બીજા કોઈ પણ પ્રકારે અમે અમારું પાપ નાશ કરી શકીશું નહિ, પરંતુ આપના ચરણના પ્રસાદથી-કૃપાથી-જ નમ્ર લોકોનાં પાપ નાશ પામે છે. તેમાં પણ દેલવાળાં છીએ. પુષ્કળ નમન કરવાનું જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનો અર્થ એવો છે કે ધર્મમાર્ગ વિગેરેનો તેમણે-પુષ્કળ નમન કરનારાઓએ-સંપૂર્ણ ત્યાગ કરેલો છે. દેહાભિમાન હોવાથી દેહીઓને જ્ઞાન પણ સંભવતું નથી. જે લોકો ધર્મીને-ભગવાનને-ખૂબ નમન કરે છે તેમની તો ખરેખર અધોગતિ જ થતી નથી. તેથી જ આપના ચરણકમલનું જો ચિંતન કરવામાં આવે, અથવા દર્શન કરવામાં આવે, અથવા સ્પર્શ કરવામાં આવે, અથવા તો આલિંગન કરવામાં આવે તો તે આપને ખૂબ નમન કરનારા લોકોના પાપનો નાશ કરે છે. ૭.

સાત્ત્વિકરાજસી કુમારિકા ગોપીજન કરતાં પણ ઉત્તમ એવાં નિર્ગુણ કુમારિકા ગોપીજન આ જ બાબતની-પોતાની ઈચ્છિત વસ્તુની-પ્રાર્થના બીજે પ્રકારે ‘મધુરયા ગિરા’ એ શ્લોકમાં કરે છે :

મધુરયા ગિરા વલ્ગુવાક્યયા બુધમનોજ્ઞયા પુષ્કરેક્ષણા ।

વિધિકરીરિમા વીર મુહ્યતીરધરસીધુનાખ્યાયયસ્વ નઃ ॥૮॥

હે કમલનેત્ર! હે વીર! મનોહર વાક્યોવાળી અને વિદ્વાનોને આનંદ આપનારી એવી આપની મધુર વાણીથી આ આજ્ઞાંકિત અને મોહ પામતી અમ દાસીઓને અધરામૃતનું પાન કરાવીને જીવાડો. ૮.

ગોપીજનોએ પાંચમા શ્લોકમાં ‘શિરસિ ઘેહિ નઃ શ્રીકરગ્રહમ્’ એ શબ્દોમાં ભગવાનના હસ્તકમલની પ્રાર્થના કરી, છઠ્ઠા શ્લોકમાં ‘ભજ સખે ભવત્કંકરીઃ’ એ શબ્દોમાં ભગવાનના સ્વરૂપની પ્રાર્થના કરી અને સાતમા શ્લોકમાં ‘પદામ્બુજં કૃણુ કુચેષુ’ એ શબ્દોમાં ભગવાનનાં ચરણકમલની પ્રાર્થના કરી. (આ પ્રમાણે ૫ા૭ એ ત્રણ શ્લોકોનો સાર આપીને હવે આઠમા શ્લોકનો સાર આપવામાં આવે છે.) હવે અધરામૃતરસ ભગવાનના મુખારવિંદમાં હોવાથી તેમના મુખારવિંદની પ્રાર્થના કરવાની રહે છે, તેથી ગોપીજનો ‘મધુરયા ગિરા’ એ પ્રમાણે આ શ્લોકમાં કહે છે. ૧.

ભગવાનના ઈક્ત અધરરસની પ્રાર્થના કરવા કરતાં તેમની વાણીની જે પ્રાર્થના કરવામાં આવી છે તેનું પ્રયોજન એ છે કે જ્યાં સુધી ભગવાન્ પોતે પોતાની મધુર વાણીથી સ્પષ્ટ કહે નહિ ત્યાં સુધી પહેલાં વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તો પણ તે

બધી વસ્તુઓમાં કોઈ પણ વખત રસ આવશે નહિ એ પ્રમાણેની રસમાર્ગની મર્યાદા છે. જો ભગવાન બોલ્યા વિના રમણ કરે તો રસ ઉત્પન્ન થતો નથી એ રસમાર્ગની મર્યાદાનું સૂચન કરવાને માટે ‘સ્થિતિ:’ એ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ૨.

હે સ્વામિન્! આ મોહ પામતી ગોપીઓને આપ મધુર વાણીથી જીવાડો. મોહ એ ખરેખર મરણની પૂર્વાવસ્થા છે. આ ગોપીજનોને જીવાડવાનું પ્રયોજન દર્શાવતાં કહે છે કે ‘વિધિકરી:’. વિધિકરી એટલે ભગવાનની આજ્ઞા પાળનારી અથવા તો સેવા કરનારી. આવી મોહ પામતી ગોપીઓને જીવાડવાનું તમારામાં-ભગવાનમાં અસામર્થ્ય, અશક્તિ, નથી એ દર્શાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘હે વીર’. વીર પુરુષોમાં જે શૌર્ય રહેલું છે તે દુ:ખી લોકોનું દુ:ખ દૂર કરવાને માટે છે. ‘ઈમા:’-આ ગોપીઓ-એમ આંગળી વતી ગોપીજનો પોતાની જાતને જે દેખાડે છે તે ઉપરથી એવું સૂચન થાય છે કે ફક્ત એક ક્ષણનો વિલંબ થતાં જ આ ગોપીઓ મરી જશે.

અરે! મારી ફક્ત વાણીથી તમારા મોહનો નાશ કેવી રીતે થશે? આ પ્રમાણે જો ભગવાન શંકા કરે તો તેના ઉત્તરમાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘મધુરયા’. મોહ એ ખરેખર માયારૂપ છે. તે ફક્ત આપના સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપથી જ નાશ પામે છે. તેમાં આપની વાણી આનંદરૂપ છે એ દર્શાવવાને ગોપીજન કહે છે કે ‘મધુરયા’. મધુ એ પ્રીતિરૂપી અસાધારણ રસ છે. મધુવાળી-અસાધારણ રસવાળી-વાણી તે મધુર કહેવાય છે. વલ્ગુ-મનોહર-છે વાક્ય જેમાં એવી વાણી ‘વલ્ગુવાક્યા’ કહેવાય છે. ભગવાનનાં વાક્યો સત્ય અને પ્રિયનું પ્રતિપાદન કરે છે તેથી તે મનોહર હોય છે. આ પ્રકારે ભગવાનના સદ્રૂપનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ભગવાનની વાણી વિદ્વાનોને મનોજ્ઞ-આનંદ આપનારી-છે. આ પ્રકારે ભગવાનના જ્ઞાનરૂપનું-ચિદ્રૂપતાનું-વર્ણન કરવામાં આવ્યું. વિદ્વાનો ખરેખર જ્ઞાનમાં જ આસક્ત રહે છે. મુખમાં નેત્રો હોય છે તેથી તે નેત્રોનો પણ ઉપયોગ કરીને જ આપે-ભગવાને-બોલવું જોઈએ એમ સૂચન કરતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘પુષ્કરેક્ષણ’. પુષ્કરની-કમલની-માફક બીજાઓના તાપને દૂર કરનારાં ઈક્ષણ-નેત્રો-છે જેમનાં તે ‘પુષ્કરેક્ષણ’ કહેવાય છે. વળી, અધરસીધુ-અધરામૃત-વડે અમને આપ જીવાડો. ‘મધુરયા ગિરા, પુષ્કરેક્ષણ’ અને ‘અધરસીધુના’ એ ત્રણ પદો વડે ગોપીજનો ભગવાનને અનુક્રમે કહે છે કે આપે અમારી સાથે બોલવું જોઈએ, અમારા સામું જોવું જોઈએ અને અમને જીવાડવાં જોઈએ. જે પુરુષો મૂર્છા પામેલા હોય છે તેમની મૂર્છા દૂર કરવાને માટે મહામંત્રોનો પાઠ કરવામાં આવે છે અને કમલ વિગેરે શીતલ દ્રવ્યો તેમના શરીર ઉપર મૂકવામાં આવે છે. જો મૂર્છા કોઈ પણ રીતે દૂર થઈ શકે એમ ન હોય તો અમૃત પણ પીવાને

માટે આપવામાં આવે છે, અથવા તો ઉત્તમ કોટિના વૈદ્યો અતિગુપ્ત રસો પીવડાવે છે. અમારી આ મૂર્છા અલ્પ માણસ દૂર કરી શકે એમ નથી તેથી ગોપીજનો ભગવાનને 'વીર' એ પ્રમાણે સંબોધે છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનોએ અમૃતની પ્રાર્થના કરવાથી તેમની અંતિમ અવસ્થાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. પહેલાં જે હસ્ત, સ્વરૂપ વિગેરે વસ્તુઓની પ્રાર્થના કરવામાં આવી હતી તે બધી વસ્તુઓ લીલાનું સ્મરણ કરાવતી અને તેથી તે અધિક મૂર્છાનું કારણ થઈ પડી. ૮.

આ પ્રમાણે ભગવાનનાં હસ્ત, સ્વરૂપ, ચરણ અને મુખ એ ચાર પદાર્થોની ગોપીજનોએ પ્રાર્થના કરી, અને ભગવાન્ આ ચાર પદાર્થો અમને નહિ આપે તેનું કારણ પોતે જ કલ્પીને તે કારણનો પરિહાર 'તવ કથા' એ શ્લોકમાં કરે છે. (આ શ્લોક અનન્યપૂર્વા-કુમારિકા-રાજસસાત્ત્વિક ગોપીજનનો છે.):

તવ કથામૃતં તપ્તજીવનં કવિભિરીડિતં કલ્મષાપહમ્ ।

શ્રવણમડ્ગલં શ્રીમદાતતં ભુવિ ગૃણન્તિ તે ભૂરિદા જનાઃ ॥૯॥

આપનું કથારૂપી અમૃત સંસારથી તપેલાઓનું જીવન છે, જ્ઞાનીઓએ વખાણેલું છે, પાપનો નાશ કરનાર છે, શ્રવણ થતાં જ આનંદ આપનાર છે, લક્ષ્મીવાળું છે, અને જગતમાં વ્યાપીને રહેલું છે. ઉદાર અને ભગવદ્રૂપ વ્યાસ વિગેરે મહાપુરુષો આ કથાનાં ગુણગાન કરે છે. ૯.

શંકા-ગોપીજનોએ જે બધા પદાર્થોની પ્રાર્થના કરી તે બધા પદાર્થો ભક્તોને આપવામાં આવે છે, નહિ કે અભક્તોને. વિરહાવસ્થાની અંદર પણ ગોપીજનો જીવે છે તે ઉપરથી નક્કી થાય છે કે તેઓ ભગવાનના ભક્ત નથી. ભગવાનને તો કોઈ પણ પદાર્થની અપેક્ષા નથી. જે ભગવાનને લક્ષ્મીજી જેવી કરોડો દાસીઓ છે તેમને તમારા-ગોપીજનોના-જીવવાથી કાંઈ પણ પ્રયોજન નથી. તેથી 'ત્વયિ ધૃતાસવઃ'-આપને માટે જ પ્રાણ ધારણ કરનારાં-, 'વિધિકરીરિમાઃ'-આપની આજ્ઞા પાળનારી આ ગોપીઓ-ઈત્યાદિ ગોપીજનોનાં વાક્યો પણ અયોગ્ય છે. તેથી ગોપીજનોએ કરેલી આ બધા પદાર્થોની પ્રાર્થના વ્યર્થ જ છે.

સમાધાન- ઉપર પ્રમાણે ગોપીજનો પોતે જ શંકા ઉઠાવીને તેનો પરિહાર કરે છે. અમે વિરહાવસ્થામાં જે આ જીવીએ છીએ તે અમારા પોતાના પ્રયત્નથી જીવતાં નથી, પરંતુ આપની-ભગવાનની-કથા વિરહાવસ્થામાં પ્રાણને જતાં અટકાવે છે. જે પ્રમાણે આપનું-ભગવાનના સ્વરૂપનું-સામર્થ્ય છે તે પ્રમાણે આપની કથાનું પણ સામર્થ્ય છે. જેમ ભગવાન્ છ ગુણોવાળા, મોક્ષ આપનારા અને પરમાનંદરૂપ છે તેમ આપની કથા પણ ઐશ્વર્ય, વીર્ય, શ્રી, યશ, જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય



એ છ ગુણોવાળી, મોક્ષ આપનારી અને પરમાનંદરૂપ છે. આ વાત દર્શાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે આપની કથા અમૃતના જેવી છે. અમૃત ભગવદ્રસરૂપ છે. જે રૂપ બધાંનાં મરણ વિગેરેનો નાશ કરે છે તે અમૃત કહેવાય છે. તેથી કથા મોક્ષ આપનારી અને પરમાનંદરૂપ છે એમ સિદ્ધ થયું.

હવે ગોપીજનો 'તપ્તજીવનમ્' ઈત્યાદિ છ પદો વડે ભગવાનની કથાના છ ગુણોનું વર્ણન કરે છે. જે લોકો સંસારમાં તપેલા-બળેલા-છે તેમનું જીવન જેનાથી છે તે કથા 'તપ્તજીવન' કહેવાય છે. અમૃત ખરેખર તાપનો નાશ કરનાર છે એ વાત તો પ્રસિદ્ધ જ છે. ભગવાનનો વૈરાગ્યગુણ અથવા જ્ઞાનગુણ બધાના તાપનો નાશ કરે છે. ભગવાનની કૃપાથી જ્ઞાનરૂપી ભગવાનનો ધર્મ જીવોમાં આવે છે અને તે જીવોના તાપનો નાશ કરે છે. ભગવાનની કથા પણ કર્ણ દ્વારા શરીરની અંદર પ્રવેશ કરીને તાપ દૂર કરે છે. જે સંસ્કારને યોગ્ય છે તેનો જ્ઞાન વડે નાશ થાય છે; જે સંસ્કારને યોગ્ય નથી તેનો પરિત્યાગથી-વૈરાગ્યથી-નાશ થાય છે. (આ પદાર્થ મિથ્યા નથી પણ બ્રહ્મ છે એ પ્રકારે જે પદાર્થનું જ્ઞાન થઈ શકે એવું હોય તે પદાર્થ સંસ્કાર યોગ્ય કહેવાય છે. આવા પદાર્થનો નાશ જ્ઞાનથી થાય છે, અર્થાત્ જ્ઞાનીઓ તે પદાર્થનો સ્વતંત્ર વસ્તુ તરીકે અનુભવ કરતા નથી. પરંતુ સ્ત્રી વિગેરે પદાર્થો જે પોતાના સંબંધથી જ્ઞાનનો પણ નાશ કરે છે તેવા પદાર્થોનો નાશ પરિત્યાગથી થાય છે.) આ જ કારણથી સંસ્કાર ન કરી શકે એવા સ્માર્ત પુરુષો પરિત્યાગનો જ ઉપદેશ કરે છે. તેથી જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય તાપનો નાશ કરનારાં છે. ('તપ્તજીવનમ્' એ વિશેષણથી જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય એ બે ધર્મોમાંથી એક ધર્મનું ગ્રહણ થાય છે. જો આ વિશેષણથી જ્ઞાનધર્મનું ગ્રહણ કરવામાં આવે તો 'કવિભિરીડિતમ્' એ બીજા વિશેષણથી વૈરાગ્યધર્મનું ગ્રહણ કરવું; અને જો પહેલા વિશેષણથી વૈરાગ્યનું ગ્રહણ કરવામાં આવે તો બીજા વિશેષણથી જ્ઞાનનું ગ્રહણ કરવું.)

પાણી વિગેરે પણ દેખીતી રીતે તાપનો નાશ કરે છે એટલે કથાનું માહાત્મ્ય રહેતું નથી એ શંકા દૂર કરવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે 'કવિભિરીડિતમ્'. કવિઓએ-બધાય શબ્દાર્થસિક્ક જ્ઞાનીઓએ-કથારૂપી અમૃતનાં વખાણ કરેલાં છે; અર્થાત્ કથાના જ્ઞાનધર્મનાં અથવા વૈરાગ્યધર્મનાં વખાણ કરેલાં છે.

કવિઓ પણ દેખીતી રીતે સ્ત્રીઓનાં પણ વખાણ કરે છે તો પછી કથાનું વિશિષ્ટ માહાત્મ્ય શું? આ શંકા દૂર કરવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે 'કલ્મષાપહમ્'. કલ્મષને-પાપને-દૂર કરે તે 'કલ્મષાપહ' કહેવાય છે. આ ત્રીજું વિશેષણ કથાના ધર્મરૂપી ગુણનું વર્ણન કરે છે. છ ગુણોમાં ધર્મ પણ એક ગુણ છે, કારણ કે -

औश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः ।

ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णाम् भगवत्तीरणा ॥

એ પ્રકારનો પણ કોઈ કોઈ સ્થલે પાઠ જોવામાં આવે છે. ઉપરના શ્લોકમાં ‘ધર્મસ્ય’ને બદલે ‘વીર્યસ્ય’ એ પ્રમાણે જો પાઠ સ્વીકારવામાં આવે તો આ ત્રીજા વિશેષણથી વીર્યરૂપી ગુણનું ગ્રહણ કરવું. આ બાબતમાં ગોપીજનો યુક્તિ આપે છે કે અલૌકિક વસ્તુઓ સિદ્ધ કરનાર વીર્ય મહત્ છે અને તે ધર્મરૂપ જ છે; અર્થાત્ ધર્મ અને વીર્ય એ બંને એક જ છે, કારણ કે જે ધર્મવાળું છે તે તો પાપનો નાશ કરનારું હોય છે અને અલૌકિક વસ્તુઓ સિદ્ધ કરનારું પણ હોય છે. ભગવાનની કથા પણ પાપ નાશ કરનારી અને અલૌકિક કાર્ય કરનારી છે એ વાત સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ છે.

પ્રાયશ્ચિત્ત વિગેરે પણ દેખીતી રીતે પાપનો નાશ કરે છે તો પછી ભગવાનની કથાની વિશિષ્ટતા શી? આ શંકા દૂર કરવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે ‘શ્રવણમઙ્ગલમ્’. પ્રાયશ્ચિત્તમાં ગાયનું છાણ વિગેરે શરીર ઉપર ચોપડવામાં આવે છે અને ઉપવાસ કરવામાં આવે છે; એટલે પ્રાયશ્ચિત્ત સ્વરૂપથી જ અમંગલ-અશુભ-છે. વળી તે ઘોર હોવાથી સાંભળવામાં પણ અમંગલ છે. આ કથા તો ઉદારચરિત્ છે, તેમાં ભગવાનનાં ઉદાર ચરિતોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. ભગવાનની કથા સાંભળવામાં આવે છે કે તરત જ આનંદ ઉત્પન્ન કરે છે એ વાત અનુભવથી સિદ્ધ થએલી છે, તેથી કથા શ્રવણમંગલ છે. આ ચોથા વિશેષણથી કથાના યશરૂપી ગુણનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું; અર્થાત્ ભગવાનની અને ભગવત્કથાની કીર્તિ સરખી છે એમ કહેવામાં આવ્યું.

પુત્ર પિતૃઓના ઋણમાંથી મુક્ત કરે છે અને તે રીતે પાપનો નાશ કરે છે; એટલે પુત્રજન્મ વિગેરે પ્રસંગોનું શ્રવણ પણ કથાની માફક કેટલેક અંશે પાપનો નાશ કરનારું છે. તેથી તે પણ શ્રવણમંગલ કહી શકાય. તો પછી ભગવત્કથાની વિશિષ્ટતા શી? આ શંકા દૂર કરવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે ‘શ્રીમત્’. પુત્રજન્મ વિગેરે પ્રસંગો ધનનો ખર્ચ કરાવનારા છે, પણ ધન આપનારા નથી; જ્યારે કથામૃતની તો લક્ષ્મીજી પણ અપેક્ષા રાખે છે, એટલે કથામૃત લક્ષ્મીયુક્ત છે. તેથી ભગવત્કથા શ્રવણ કરનાર અને કહેનાર એ બંનેને લક્ષ્મીની સિદ્ધિ થાય છે.

મને રાજ્ય મળ્યું એ પ્રમાણે જ્યારે માણસ શ્રવણ કરે છે ત્યારે પણ તેને લક્ષ્મીની સિદ્ધિ થાય છે; તો પછી કથાની વિશિષ્ટતા શી? આ શંકા દૂર કરવાને માટે ગોપીજનો કહે છે કે ‘આતતમ્’. ‘આ’ એટલે સર્વતઃ, બધે; ‘તતમ્’ એટલે વ્યાપી રહેલું, જે સર્વત્ર વ્યાપી રહેલું છે તે ‘આતત’ કહેવાય છે. રાજ્ય વિગેરે તો પરિચ્છિન્ન

છે, અમુક દેશમાં જ વ્યાપેલું છે, પણ ભગવાનનું ઐશ્વર્ય તે પ્રમાણે પરિચ્છિન્ન નથી, કારણ કે બધામાં અંદર અને બહાર સર્વ પ્રકારે તે વ્યાપી રહેલું છે. કથામૃત પણ બધા લોકોમાં વ્યાપી રહેલું છે. અને પોતાનું સામર્થ્ય બધેય ઠેકાણે દર્શાવે છે.

તેથી આપની-ભગવાનની-કથા સ્વરૂપથી અને ધર્મથી આપના જેવી છે, એટલે આપની કથાને લીધે જ અમે જીવીએ છીએ, નહિ કે અમારા સ્વતંત્ર પ્રયત્નથી. આ પ્રમાણે કહેવામાં ગોપીજનો ભગવત્કથાની શ્રેષ્ઠતાનું પણ વર્ણન કરે છે. આપ-ભગવાન-કદાચિત્ અમને મારો પણ છો, જ્યારે તે જ સમયે આપની કથારૂપી અમૃત અમને જીવાડે છે. આ પ્રકારે ભગવત્કથા ભગવાન કરતાં ઉત્તમ છે એમ કહેવામાં આવ્યું. પણ આ બાબતમાં એક જ ફેર છે, અને તે એ કે ભગવાન રસનો અનુભવ કરાવવામાં સ્વતંત્ર છે, જ્યારે કથામૃત પરતંત્ર છે, કારણ કે કથામાં વક્તાની મદદની જરૂર રહે છે.

જ્યારે બ્રહ્મા વિગેરે આપની પ્રાર્થના કરે છે ત્યારે આપ અવતાર ધારણ કરીને જગતમાં પધારો છો, પણ અહિં પધારીને પાછા આપ અંતર્લિત થઈ જાવ છો; પણ કથા તો આવીને કોઈ દિવસ તિરોહિત થતી જ નથી. આ કારણથી જ આવા કથામૃતનું જે લોકો જગતમાં ગાન કરે છે તે જ ભૂરિદ-બહુ અર્થ આપનારા-છે. 'તે' એટલે વ્યાસ વિગેરે પ્રસિદ્ધ મુનિઓ. આ મુનિઓ ભૂરિદ-બહુ અર્થ આપનારા-છે, અને અજન-કેવલ ભગવદ્દ્રૂપ અથવા તો જન્મ વિગેરે દોષોથી રહિત-છે. (આ અર્થ કરતી વખતે મૂલ શ્લોકમાં 'ભૂરિદાજનાઃ' એમ સમસ્ત પદ વાંચવું.)

(હવે ભગવાનનું સ્વરૂપ અને કથા એ બેમાં એક પ્રકારનો જે ભેદ રહેલો છે તે દર્શાવવામાં આવે છે.) ભગવત્સ્વરૂપ અને ભગવત્કથા એ બે સરખાં છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે, પણ કથામૃત જલની માફક વિરલ-પ્રવાહી-છે, પિંડની-ઘન પદાર્થની-માફક ઘન નથી; અને ફક્ત જ્યારે મરણ આવે છે ત્યારે જ તે-કથામૃત-મરણને દૂર કરે છે, પણ પિંડની માફક એકત્ર મળીને-ઘનરૂપ થઈને-રસ ઉત્પન્ન કરતું નથી. આપનું-ભગવાનનું-સ્વરૂપ ઘન પિંડ છે અને આપની કથા વિરલ રસ છે, એટલે વિરલ રસમાં અને ઘન પિંડમાં જેટલો તફાવત છે તેટલો તફાવત આપના સ્વરૂપમાં અને આપની કથામાં છે. જો આ પ્રમાણે આપના સ્વરૂપમાં અને આપની કથામાં તફાવત ન હોત તો અમે આપની કથાને માટે જ યત્ન કર્યો હોત. આ પ્રકારે ભગવત્કથા કરતાં ભગવત્સ્વરૂપ ઉત્તમ છે, છતાં પણ ભગવત્કથા વિરલાવસ્થામાં મરણ દૂર કરવામાં ઉપયોગી છે તેથી જ ભગવત્કથાની ભગવત્સ્વરૂપ તરીકે સ્તુતિ કરવામાં આવે છે. આ જ કારણથી ભગવાનની કથા કહેનારા મુનિઓએ ભગવત્કથા

સંભળાવીને લોકોને બહુ લાભ આપ્યો છે, એટલે કથાને લીધે જ અમે-ગોપીજન-વિરહાવસ્થામાં જીવી શકીએ છીએ. (આ ઉપરથી એમ જણાય છે કે બીજી ગોપીઓ ભગવત્કથા કરતી હશે અને તે કથાને લીધે જ ગોપીજનો વિરહાવસ્થામાં જીવી શક્યાં હશે.) આ વાક્ય અનન્યપૂર્વા-કુમારિકા-રાજસાત્ત્વિક ગોપીજનનું છે. ૯.

હવે શુકદેવજી અનન્યપૂર્વા રાજસતામસીનું વચન 'પ્રહસિતમ્' એ શ્લોકમાં વર્ણવે છે:

પ્રહસિતં પ્રિય! પ્રેમવીક્ષિતં વિહરણં ચ તે ધ્યાનમઙ્ગલમ્ ।

રહસિ સંવિદો યા હૃદિસ્પૃથઃ કુલક નો મનઃ ક્ષોભયન્તિ હિ ॥૧૦॥

હે પ્રિય! આપનું અત્યંત હાસ્ય, પ્રેમથી જોવું, ધ્યાનમંગલ વિહાર, હૃદયને સ્પર્શ કરવાની એકાંતની વાણી-આ સર્વ, હે કપટી!, અમારા મનને ક્ષોભ પમાડે છે. ૧૦.

જો કે આપની કથાથી અમે જીવી શકીએ ખરાં, છતાં પણ જો આપના ધર્મો અમારામાં ક્ષોભ ઉત્પન્ન ન કરે તો જ તે પ્રમાણે બની શકે. જેમ આપનામાં-ભગવાનમાં-ઐશ્વર્ય વિગેરે છ ગુણો છે તેમ વ્યામોહ કરનારા પણ છ ગુણો રહેલા છે, (એટલે ફક્ત આપની કથાને લીધે જ અમે હવે જીવી શકીએ એમ નથી.) વ્યામોહ કરનારા છ ગુણો ભગવાનમાં રહેલા છે એમ જો માનવામાં ન આવે તો એકલી કથાથી જ અમારું કાર્ય સિદ્ધ થઈ જાય. (ભગવાનના વ્યામોહક ગુણોને લીધે જ કથામાં અમારી નિષ્ઠા રહી શકતી નથી.) ભગવાનમાં મોહ કરનારા ગુણો છે એ વાતનું પ્રમાણ એ છે કે ભગવાન મોહ કરવાને માટે માયા વડે કપટીની લીલા પણ કરે છે. (ભગવાન માયા વડે કપટીની લીલા કરે છે એ પ્રમાણે ભગવાન ઉપર આરોપ મૂકવો એ બરોબર નથી એમ જો કોઈને શંકા થાય તો તેનો પરિહાર કરતાં કહે છે કે) જીવ પોતાના સ્વભાવના દોષને લીધે ભગવાનમાં તે પ્રમાણે જુએ છે. જેમ તાવવાળા માણસને અન્ન રસવિનાનું લાગે છે તેમ ગોપીજનને પોતાના સ્વભાવના દોષને લીધે જ ભગવાન કપટી જણાય છે. (વાસ્તવિક રીતે ભગવાન પોતે કપટી નથી.) આ જ કારણથી ગોપીજન કહે છે કે આપનાં હાસ્ય વિગેરે અમારા મનને ક્ષોભ પમાડે છે. પ્રહસિત એટલે ખૂબ હસવું. આ ગોપીજન પોતાના તામસ ભાવથી જ ખેદ પામેલાં છે, એટલે તેમનો ત્યાગ કરીને ભગવાન બીજી ગોપી સાથે સ્થિતિ કરે છે અને પછીથી આ ગોપીજન આગળ આવીને ખૂબ હસે છે તેથી આ ગોપીજનને ભગવાનના પ્રહસનથી ઘણો ક્ષોભ થાય છે. આ ગોપીજન ભગવાનને પ્રિય એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે હે પ્રિય! આપનો સંબંધ પણ જ્યારે સાંભરી આવે છે ત્યારે

અમને ક્ષોભ પમાડે છે. આથી જ સિદ્ધ થાય છે કે જે ગોપીજનોને ભગવાનની સાથે સંબંધ થએલો નથી તેમને ક્ષોભ થતો નથી.

વળી, આપનું જે પ્રેમવીક્ષિત-પ્રેમથી જોવું-તે પણ અમને ક્ષોભ પમાડે છે. આપનું પ્રેમવીક્ષણ અમને ત્રણ પ્રકારે ક્ષોભ પમાડે છે-(૧) સંયોગદૃશ્યામાં આપે અમારા ઉપર પ્રેમથી જે જોએલું તેનું વિરલદૃશ્યામાં સ્મરણ થતાં અમને ક્ષોભ થાય છે; અથવા તો (૨) બીજી ગોપીજન ઉપર આપે જે પ્રેમથી જોએલું તેનું સ્મરણ થતાં અમને ક્ષોભ થાય છે; અથવા તો (૩) આપનું અમારા ઉપર જે પ્રેમથી જોવું તે ઉપર ઉપરથી વિશ્વાસ ઉત્પન્ન કરે છે પણ અંદરથી કપટરૂપ હોઈને તે અમને ક્ષોભ પમાડે છે. આ પ્રમાણે જો માનવામાં ન આવે તો અમારા કાર્યમાં વિસંવાદ-વિરોધ-થાય નહિ. અથવા તો આપનું પ્રેમવીક્ષણ અમારા મનની પરીક્ષા કરનારું છે (અને જેમનો પ્રેમ પ્રસિદ્ધ છે એવાઓના પ્રેમની પણ જ્યારે પરીક્ષા કરવામાં આવે ત્યારે તો તેમને ક્ષોભ થાય એ વાત સ્પષ્ટ છે. આ જ કારણથી આપનું પ્રેમવીક્ષણ અમને ક્ષોભ પમાડે છે.) વળી, આપનું પ્રેમવીક્ષણ આશા ઉત્પન્ન કરનારું છે, અને આશાને લીધે શ્રમ થાય અને શ્રમને લીધે ક્ષોભ થાય છે.

આપનું વિહરણ પણ અમારામાં ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરે છે. વિહરણ એટલે વેણુ વગાડતાં અને બીજી ક્રિયાઓ કરતાં કરતાં ભગવાનનું ચાલવું. જ્યારે ભગવાન ત્રિભંગલલિતસ્વરૂપે વ્રજમાં પધારે છે ત્યારે તે પોતે વેણુનાદ વડે સ્વામિનીઓની અંદર જે ભગવદીય રસ રહેલો છે તેને બહાર પ્રકટ કરે છે; (વેણુ વગાડતા આપ જ્યારે ચાલો છો ત્યારે આપ આપનો રસ આપના સ્વરૂપથી બહાર સ્થાપો છો, પ્રકટ કરો છો, એમ પણ અર્થ થઈ શકે.) એટલે (ભગવદીય રસનું) વિશેષ હરણ થયું છે જેનાથી તે ત્રિભંગલલિતસ્વરૂપ વિહરણ કહેવાય છે, અને તેથી જ તે અમને ક્ષોભ પમાડે છે. આ વિહરણનું અમે પહેલાં ધ્યાન કરતાં હતાં ત્યારે તે ધ્યાન જ મંગલ-આપ પ્રભુરૂપી શુભ ફલ-આપતું હતું. તે જ વિહરણનું ધ્યાન અત્યારે અમને ક્ષોભ પમાડે છે, કારણ કે આપે અમારી અંદર સ્થિતિ કરી છે કે નહિ તે અમે જાણતાં નથી.

મૂલ શ્લોકમાં જે 'તે' પદ છે તેનો સંબંધ 'પ્રહસિતમ્' ઈત્યાદિ બધા શબ્દો સાથે કરવાનો છે. જ્યારે 'તે' પદનો સંબંધ બધે જ લેવાનો છે ત્યારે તેનો પ્રયોગ 'પ્રહસિતમ્'ની સાથે પ્રથમ જ કરવો જોઈતો હતો, પણ તે પ્રમાણે કેમ કરવામાં આવ્યું નથી? -આ શંકાનું સમાધાન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ભગવાન બીજું માયા વડે પણ કરે છે, પણ ધ્યાનમંગલ વિહરણ વડે ક્ષોભ તો સ્વરૂપથી જ કરે છે, એટલે 'તે' પદનો મુખ્ય પ્રયોગ 'ધ્યાનમંગલ વિહરણમ્'ની સાથે જ કરવામાં આવ્યો છે. આ

પ્રમાણે ભગવાનના રૂપના સંબંધમાં પ્રહસિત, પ્રેમવીક્ષિત, ધ્યાનમંગલ વિહરણ અને સંબંધ એ ચાર પદાર્થો ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરે છે એમ કહેવામાં આવ્યું. ('પ્રિય' એ સંબોધન સંબંધ નામના ચોથા પદાર્થનું સૂચન કરે છે. કેટલાક વિચારકોના અભિપ્રાયે ચાર પદાર્થો આ પ્રમાણે છે-પ્રહસિત, પ્રેમવીક્ષિત, વિહરણ અને ધ્યાનમંગલ.)

(ભગવાનના રૂપસંબંધી ચાર ક્ષોભજનક પદાર્થોનું વર્ણન કરીને હવે) ભગવાનના નામસંબંધી બે ક્ષોભજનક પદાર્થોનું વર્ણન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે 'રહસિ સંવિદઃ યા હૃદિસ્પૃશઃ'. રહસ્યમાં એટલે એકાંતમાં, સંવિદ્ એટલે જ્ઞાનરૂપ ભગવાનની વાણી અથવા બંધ વિગેરેનું જ્ઞાન આપનારું શાસ્ત્રમાં વર્ણવેલું જ્ઞાન જ; અને તેમાં પણ જે વાણી હૃદિસ્પૃશુ, હૃદયમાં જનારી, હૃદયને સ્પર્શ કરનારી અથવા તો ક્ષત નાયકને અનુકૂલ થાય એવું નહિ પરંતુ અમને જ અનુકૂલ થાય એવું જે બંધજ્ઞાન તે સંવિદ્. તેથી આ પ્રમાણે આ બધાં જો કે સુખ આપનારાં છે, છતાં પણ જ્યારે આપ અમને છેતરો છો ત્યારે તો તે બધાં ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરે છે. આ અર્થ બધાના અનુભવથી સિદ્ધ જ છે એમ ગોપીજન 'હિ' પદ વડે કહે છે. ૧૦.

હવે શુકદેવજી અનન્યપૂર્વા રાજસરાજસી ગોપીજનના વાક્યનું વર્ણન કરે છે :

ચલસિ યદ્ પ્રજાત્ ચારયન્ પશૂન્ નલિનસુન્દરં નાથ તે પદમ્ ।

શિલતૃણાહ્લુકૃૈઃ સીદતીતિ નઃ કલિલતાં મનઃ કાન્ત! ગચ્છતિ ॥૧૧॥

હે નાથ! જ્યારે આપ પ્રજમાંથી પશુઓને ચરાવતા ચાલો છો ત્યારે કમલ કરતાં પણ કોમલ એવું જે આપનું ચરણ તે પત્થર, તૃણ અને દર્ભ વિગેરેના અંકુરોથી પીડાય છે; તેથી, હે કાન્ત! અમારા મનને ખેદ થાય છે. ૧૧.

આપને સત્ય ખેદ હોતો નથી-આપનું સ્વાસ્થ્ય હોય છે-છતાં પણ આપના સ્નેહને લીધે આપને માટે અમને તો ખેદબુદ્ધિ થાય છે, પરંતુ જ્યારે અમને સત્ય ખેદ હોય છે ત્યારે પણ આપને અમારે માટે ખેદબુદ્ધિ થતી નથી એ ન્યાયથી વિરુદ્ધ છે. આ ન્યાયવિરોધ જાણે દર્શાવતાં હોય તેમ આ ગોપીજન કહે છે કે 'યત્ પ્રજાત્પશૂન ચારયન્ ચલસિ', જ્યારે આપ પ્રજમાંથી પશુઓને ચરાવતા ચાલો છો. જ્યારે આપ ચાલો છો ત્યારે કમલના કરતાં પણ સુંદર-કોમલ-આપનું ચરણ, હે નાથ!, માર્ગમાં આવેલા પત્થર, ઘાસ અને અંકુરોથી પીડાય છે. શિલા એટલે પત્થર, તૃણ એટલે ઘાસ, અને દર્ભના અંકુરો-આ ત્રણ અનુક્રમે તામસ, સાત્ત્વિક અને રાજસ છે. અથવા 'શિલતૃણાહ્લુકૃૈઃ' નો બીજે પ્રકારે વિગ્રહ કરી શકાય. શિલારૂપ જે તૃણ તે શિલતૃણ, અર્થાત્ કઠિનતૃણ; તેના અંકુરો ઘણા કઠણ અને તીક્ષ્ણ; તેનાથી આપનું ચરણ ક્લેશ પામે છે. ખરી રીતે તો આપનું ચરણ ક્લેશ પામતું જ નથી, છતાં

પણ હે કાન્ત!-હે ભર્તા!-અમારું મન ખિન્ન થાય છે. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘વ્રજાત્’ પદ છે તે એમ સૂચવે છે કે સવારથી જ અમને ખેદ થાય છે. આપના ચાલવાથી જ ખેદ થાય છે, તેથી શ્લોકમાં પ્રથમ ‘ચલસિ’ પદ વડે આપના ચાલવાની વાત કહી.

ખરી રીતે તો આપનાં ચરણો અમારા સ્થાનનો ત્યાગ કરીને બીજે સ્થલે જતાં નથી, છતાં પણ આપ જ આપના ચરણોને ચલાવો છો અને બીજે સ્થલે લઈ જાવ છો. (પશુઓને ચરાવવાને માટે આપ ચાલો છો; એટલે પશુઓને ચરાવવાને આપને જ ચાલવું ગમે છે, નહિ કે આપનાં ચરણોને, એ પ્રમાણે ગોપીજને ભગવાનને કહ્યું.) વળી, વ્રજમાં રહેનારી ગાયોને અરાધ્યમાં લઈ જવામાં આવે છે, અને તેમને ચરાવવાનું કામ ચાલુ માર્ગે જવાથી થઈ શકતું નથી, તેથી જ્યાં રસ્તો નથી હોતો ત્યાંથી પણ જવું પડે છે. પૃથ્વી વિગેરેના ઉપર કૃપા કરવાને માટે આપ પાદુકા પણ પહેરતા નથી; અને વળી જે પશુઓનું પાલન કરવાનું હોય છે તેમના ચામડાની પાદુકા પણ પહેરી શકાય નહિ. તેથી આપનું કમલના જેવું સુંદર ચરણ જ પત્થર, તૃણ અને દર્ભના અંકુરોથી ક્લેશ પામે છે. આપનું ચરણ કમલના જેવું છે અને કમલ હંમેશાં જલમાં રહે છે તેથી આપના ચરણે જલમાં જ સ્થિતિ કરવી જોઈએ, અથવા તો જલપૂર્ણ ઘટ વિગેરેમાં સ્થિતિ કરવી યોગ્ય છે. (આનો ભાવ આ પ્રમાણે છે: કમલ જલમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તે સરોવર વિગેરેના જલમાં જ સ્થિતિ કરવાને યોગ્ય છે. આપનું ચરણરૂપી કમલ ચલાવવાને યોગ્ય નથી, તેથી વ્રજમાં જ તેની સ્થાપના કરવી ઘટે છે. કદાચિત્ આપના ચરણરૂપી કમલને ચલિત પણ કરી શકાય, તો પણ જળલ વગરના સ્થાનમાં તેનું સ્થાપન કરવું યોગ્ય નથી, તેથી જલપૂર્ણ ઘટ વિગેરે પાત્રમાં તેનું સ્થાપન કરવું યોગ્ય છે. જેમ સરોવરરૂપી પોતાના સ્થાનમાંથી ઉપાડી લીધેલું કમલ જલથી ભરેલા ઘટ વિગેરે પાત્રમાં સ્થિતિ કરે છે તેમ વ્રજરૂપી પોતાના સ્થાનમાંથી ઉપાડેલું આપનું ચરણકમલ જલથી-રસથી-ભરેલા અમારા સ્તનરૂપી કલશોમાં સ્થિતિ કરે એ જ યોગ્ય છે.)

(શ્રીમહાપ્રભુજી હવે ‘નલિનસુન્દરમ્’ નો બીજો અર્થ સમજાવે છે.) આપનું ચરણ કમલથી પણ જો સુંદર છે, તો પછી તે ચરણે લક્ષ્મીજીમાં અથવા અમારામાં સ્થિતિ કરવી જોઈએ. (કમલ સરોવરરૂપી પોતાના સ્થાનમાં સ્થિતિ કરે છે, અથવા તો જો તે કમલને સરોવરમાંથી ખસેડવામાં આવે તો તે જલપૂર્ણ પાત્રમાં સ્થિતિ કરે છે. ભગવાનનું ચરણ કમલના જેવું છે. તેથી તે ચરણે લક્ષ્મીજીરૂપી પોતાનાં સ્થાનમાં રહેવું ઘટે છે, અથવા તો જો તે ચરણ ત્યાંથી ચાલીને બીજે જાય તો તેણે જલપૂર્ણ-રસપૂર્ણ-અમો ગોપીજનમાં સ્થિતિ કરવી ઘટે છે. ભગવાનનું ચરણ કમલના જેવું

છે, લક્ષ્મીજી સરોવર જેવાં છે, અને ગોપીઓ જલપૂર્ણ કલશ જેવાં છે.)

ગોપીજનો ભગવાનને 'નાથ' એ પ્રમાણે જે સંબોધન કરે છે તેનો ભાવ આ પ્રમાણે છે-ગાયોને ચરાવવાના કામ માટે આપની પાસે ઘણા નોકરો છે, છતાં પણ આપ પોતે જ તેમને ચરાવવાને માટે જાઓ છો. વનમાં ત્રણ પ્રકારની ભૂમિ હોય છે. એક પર્વતરૂપ, બીજી અરાણ્યરૂપ અને ત્રીજી કચ્છરૂપ-ભીની, કાદવ કીચ્ચડવાળી-આ ત્રણ પ્રકારની ભૂમિમાં ક્રમે કરીને પત્થર, તૃણ અને અંકુરમાંથી એક એક છે-અર્થાત્ પર્વતમાં પત્થર, અરાણ્યમાં તૃણ અને કચ્છમાં દર્ભ વિગેરેના અંકુર છે. અથવા તો પત્થર, તૃણ અને અંકુર એ ત્રણેય બધેય ઠેકાણે છે. અવસાદ એટલે અશક્તિને લીધે એક જ ઠેકાણે સ્થિતિ કરવી તે. (ભગવાનના ચરણને કાંટો લાગે ત્યારે તે ચાલી શકતા નથી અને તેથી એક જ સ્થલે તેમને સ્થિતિ કરવી પડે છે.)

આ પ્રમાણે ભગવાનને જ્યારે એક જ સ્થલે સ્થિતિ કરવી પડે છે ત્યારે અમને-ગોપીજનને-અમારા મનમાં એવો વિચાર આવે છે કે અમે પોતે ત્યાં જઈને અમારા પોતાના હૃદયમાં જ ભગવાનના તે ચરણને સ્થાપી દઈએ. (આ પ્રમાણે ગોપીજનોને પોતાના ભાવના અનુભાવને લીધે ભગવાનની વનલીલાનું જ્ઞાન છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું.)

અથવા તો 'મન:કાન્ત' એ પ્રમાણે સમસ્ત પદ લેવું, અને તેનો અર્થ એવો થાય કે મન:કાન્ત-મનના કાન્ત-અમારા મનનું આપે રક્ષણ કર્યું છતાં પણ તે રહી શકતું નથી. (આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં મૂલ શ્લોકમાં 'મન:કાન્ત' એ પદમાંથી 'મન:' એ પદની આવૃત્તિ જાણવી.) ૧૧.

આ પ્રમાણે પાંચમા શ્લોકથી માંડીને તે અગીઆરમા શ્લોક સુધીમાં સાત પ્રકારનાં અનન્યપૂર્વા ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. (આ સાત પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક, સાત્ત્વિકતામસ, સાત્ત્વિકરાજસ, નિર્ગુણ, રાજસસાત્ત્વિક, રાજસતામસ અને રાજસરાજસ.) તે પહેલાંના ચાર શ્લોકોમાં ચાર પ્રકારનાં અન્યપૂર્વા ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. (આ ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-સાત્ત્વિકરાજસ, સાત્ત્વિકતામસ, સાત્ત્વિકસાત્ત્વિક અને નિર્ગુણ.) હવે પછી ક્રમવાર છ પ્રકારનાં અન્યપૂર્વા ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. તેમાં પ્રથમ બારમા શ્લોકમાં રાજસતામસી અન્યપૂર્વા ગોપીનું વચન છે. અન્યપૂર્વા ગોપીજનો પતિ વિગેરેની આજ્ઞાને અનુસરતાં હોવાથી દિવસે વનમાં જઈને ભગવાનનાં દર્શન કરી શકે એમ નથી. (દિવસે તો તેઓ ભગવાનનાં ગુણગાન કરીને રમણ કરે છે.) તેથી જ્યારે ભગવાન સંધ્યાકાળે શ્રીગોકુલમાં પધારે છે ત્યારે



અન્યપૂર્વા ગોપીજનો તેમનાં દર્શન કરે છે અને તેથી તેમનામાં કામ ઉત્પન્ન થાય છે. પછીથી તેઓ રજોગુણને લીધે બંધની પ્રાર્થના કરે છે અને સત્ત્વગુણને લીધે ભગવાનના અઘરામૃતની પ્રાર્થના કરે છે. પરંતુ જે ગોપીજનો અનન્યપૂર્વા છે તેમનો કામ તો નિત્ય જ છે. અર્થાત્ અનન્યપૂર્વા ગોપીજનો વિવાહિત નથી તેથી તેઓ, પતિનો પ્રતિબંધ ન હોવાથી, દિવસે વનમાં જઈને અને રાત્રીએ ભગવાનની પાસે જઈને-આ પ્રમાણે રાત્રીદિવસ-રમણ કરે છે; તેથી તેમનો કામ પણ રાત્રીદિવસ અસ્તિત્વમાં હોવાથી નિત્ય જ છે. અનન્યપૂર્વા ગોપીજનો જો કે અન્યપૂર્વા ગોપીજનોની માફક પરાધીન છે છતાં પણ તેમનો કામ નિત્ય છે એમ જાણવું. આ પ્રમાણે જે ગોપીજનો અનન્યપૂર્વા છે તેમનો કામ નિત્ય હોવાથી ભગવાન તેમને કામનું દાન કરતા નથી, પણ જે ગોપીજનો અન્યપૂર્વા છે તેમને તો કામનું દાન કરવાની ભગવાનને જરૂર છે, તેથી પ્રથમ આ બારમા શ્લોકમાં સંધ્યાસમયે ભગવાનનાં દર્શન થવાથી અન્યપૂર્વા ગોપીજનોને કામ ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે અન્યપૂર્વા ગોપીજનોનો કામ પણ ભગવાન જ ઉત્પન્ન કરે છે. અર્થાત્ ‘દિનપરિક્ષયે’ શ્લોકમાં ભગવાને અન્યપૂર્વા ગોપીજનોને કામનું જે દાન કર્યું તેનું વર્ણન છે. (તેરમા શ્લોકમાં રજોગુણને લીધે બંધની જે પ્રાર્થના કરવામાં આવી તેનું વર્ણન છે, અને ચૌદમા શ્લોકમાં સત્ત્વગુણને લીધે અઘરામૃતની જે પ્રાર્થના કરી તેનું વર્ણન છે.):

**દિનપરિક્ષયે નીલકુન્તલૈઃ વનરુહાનનં બિભ્રદ્ આવૃતમ્ ।**

**ધનરજસ્વલં દર્શયન્ મુહુઃ મનસિ નઃ સ્મરં વીર! યચ્છસિ ॥૧૨॥**

હે વીર! દિવસ પૂરો થતાં (સંધ્યાકાળે) કાળા કેશથી ઢંકાએલા અને ગોઘનની રજવાળા કમલના જેવા મુખને ધારણ કરતા અને વારંવાર દર્શન કરાવતા આપ અમારા મનમાં કામનું દાન કરો છો. ૧૨.

દિનપરિક્ષય થતાં, અર્થાત્ દિવસનો ક્ષય થતા, સંધ્યાકાળે. દિવસનો ક્ષય એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તે એમ જણાવે છે કે આ ગોપીજનને દિવસ ઉપર દ્રેષ છે. (આ શ્લોક બોલનારાં ગોપીજન રાજસતામસી છે, કારણ કે તે સંધ્યાકાળની ભગવાનની લીલાનું વર્ણન કરે છે.) સંધ્યાકાળ એ રજોગુણનો સમય છે, કારણ કે તે વખતે ગાયોને દોહવાનું અને બીજાં એવાં કાર્યોને લીધે ગોપીજનનું ચિત્ત વ્યગ્ર બને છે; વળી સંધ્યાકાળ તમોઝપી કામને જાગૃત કરે છે તેથી તે તમોગુણનો પણ સમય છે. (આ પ્રમાણે સંધ્યાકાળ એ રાજસતામસ સમય છે, તેથી તે કાલની ભગવાનની લીલાનું વર્ણન કરનાર ગોપીજન પણ રાજસતામસી હોય છે.) ભગવાનના કાળા કેશ ભમરાઓની માફક રસને પ્રકટ કરનારા છે. જે ખરેખર ભગવાનના મુખકમલના

લાવાણ્વરૂપી અમૃતનું પાન કરે છે તે રસને જાગૃત કરનારા હોય છે. તેથી હે વીર! કાળા કેશથી ઢંકાએલા વનસ્હ-કમલના જેવા મુખને ધારણ કરતા આપ અમારા મનમાં કામનું દાન કરો છો.

(સંધ્યાકાળ વખતે જ્યારે ભગવાનનું મુખ કાળા કેશથી ઢંકાએલું હોય છે ત્યારે તે મુખ કાળા કેશના તેજથી વ્યાપ્ત બને છે, તેથી ઓઠ અને નેત્રોમાં પણ રતાશ જણાતી નથી. તેથી મૂલ શ્લોકમાં જે ‘નીલકુન્તલૈઃ’ અને ‘વનસ્હાનનમ્’ એ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવેલું છે તે એમ બતાવે છે કે ભગવાનનું મુખ કુવલય-રાત્રીના કમલ-જેવું છે. આ ઉપરથી એમ જણાય છે કે પ્રિયાઓના-ગોપીજનોના મુખરૂપી ચંદ્રના દર્શનથી ભગવાનના મુખરૂપી કુવલય-રાત્રીકમલ-ઉત્તરોત્તર અધિક વિકાસ પામે છે, અને આની પહેલાં-પ્રિયાઓના મુખરૂપી ચંદ્રના દર્શનની પહેલાં-ભગવાન નું મુખરૂપી કુવલય વિકાસ પામતું ન હતું. આથી એમ સૂચન થાય છે કે પ્રિયની-ભગવાનની આસક્તિ બધાંમાં છે. બધાં ગોપીજનોમાં આસક્તિ હોવાથી મૂલ શ્લોકમાં ‘જલ’ પદ ન વાપરતાં (‘વનસ્હાનનમ્’ એમાં) ‘વન’ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. (આનો ભાવ એવો છે કે વનમાંથી ભગવાન પાછા આવ્યા છે છતાં પણ ગોપીજનોમાં આસક્તિ હોવાને લીધે આ રમણને માટે ફરીથી તે વનમાં પ્રવેશ કરશે. એટલે ભગવાન વનમાં જ રહેશે, તેથી તેમનું વનમાં રહેવાનું સિદ્ધ થશે.) તેથી વનમાં કુવલયની જે અવસ્થા હોય છે તે અવસ્થા જણાવવા માટે કુવલયના તે તે ધર્મોને ધારણ કરનારા મુખનું ભગવાન દર્શન કરાવે છે એવો ધ્વનિ છે.)

ઘન વડે, અર્થાત્ ગોઘન વડે, ગાયોના ચરણની રજ વડે, ભગવાનનું મુખ રજવાળું છે. આવા પ્રકારના મુખનું ભગવાન વારંવાર દર્શન કરાવતા રહે છે. ભગવાન માર્ગની વચમાં ચાલે છે, અને બંને બાજુએ ઉભાં રહેલાં ગોપીઓને વારાફરતી જુએ છે; તેથી ‘ભગવાન પોતાનું મુખ વારંવાર દર્શાવે છે’ એમ કહેવામાં આવ્યું છે. અથવા તો ભગવાન આગળ જતાં જતાં વારંવાર પોતાના મુખને ફેરવીને ગોપીજનોને જુએ છે તેથી ‘ભગવાન પોતાનું મુખ વારંવાર દર્શાવે છે’ એમ કહેવામાં આવ્યું છે.

ભગવાન ગોપીજનોને વારંવાર પોતાના મુખનું દર્શન કરાવે છે અને તે રીતે પોતાની (ભગવાનની) ઈચ્છા જણાવે છે અને તેથી ગોપીજનોમાં કામ ઉત્પન્ન થાય છે. ભગવાન જો ગોપીજનોને એકી ટસે નિરંતર જુએ તો તે જ સમયે અને તે જ સ્થલે રસનો ભોગ થઈ જાય; તેથી કામને ઉત્પન્ન થવાનો અવકાશ રહે નહિ. આ કારણથી, ભગવાન પોતાનું મુખ ગોપીજનોને જે વારંવાર બતાવે છે તે ગોપીજનોના કામરૂપી અગ્નિને જાણે કુંકતું હોય એમ લાગે છે. ગોપીજનોને પોતાના મુખનું

વારંવાર દર્શન કરાવીને ગોપીજનોના કામરૂપી અગ્નિને ઠુંકીને તે કામરૂપી અગ્નિને પૂરવાને માટે અથવા તેનો નાશ કરવાને માટે ભગવાને યુદ્ધ અવશ્ય કરવું જોઈએ એમ ગોપીજનો 'વીર' એ સંબોધન દ્વારા સૂચવે છે. ગાયના ચરણની રજથી ધૂંસરૂં બનેલું આપનું મુખ આપનો શ્રમ સૂચવે છે. આપનો આ શ્રમ અમારાથી જ નાશ પામશે, બીજાથી નહિ. આપનું શ્રીમુખ 'વનસ્લ' છે; અર્થાત્ વનમાં જ આપના શ્રીમુખનો સર્વથા ભોગ કરવા જેવો છે; અને તેથી આપ અહિં વનમાં જ પધાર્યા છો. ગોપીજનો ભગવાનના મુખને વનસ્લ એ પ્રમાણે વર્ણવે છે તેથી 'હું ઘરમાં રતિનું દાન કરીશ' એ પ્રમાણે જો ભગવાન દલીલ કરે તો તેનું ખંડન થઈ ગયું.

મૂલ શ્લોકમાં જે 'બિભ્રત્' પદ છે તે એમ સૂચવે છે કે ભગવાન બલાત્કારથી શ્રીમુખને તે જ અવસ્થામાં-કાળા કેશથી ઢંકાએલું અને ગોરજથી ધૂંસરૂં બનેલું મુખ એવી અવસ્થામાં-રાખે છે. જો ભગવાન પોતાના મુખને ધોઈને આવે તો પછી તેમના પ્રસન્ન મુખનું દર્શન કરવાથી જ્ઞાન જ થાય; અર્થાત્ આપનું શ્રીમુખ ભક્ત્યાત્મક છે, તેથી સ્નેહરસનો જ અનુભવ થાય. પણ અત્યારે આપનું શ્રીમુખ ગાયોની રજવાળું છે તેથી જ્ઞાન અથવા સ્નેહરસનો અનુભવ થતો નથી, તેમ જ ક્રોધ પણ થતો નથી, પરંતુ કામ જ ઉત્પન્ન થાય છે.

જેમ પાત્ર ધરીને તેમાં રહેલું અન્ન ભોગને માટે આપવામાં આવે છે તેમ આપનું મુખરૂપી પાત્ર ભક્તોની સામે ધરીને આપ આપના શ્રીમુખમાં રહેલો કામરસ અમારા મનમાં સ્થાપો છો. તેથી જે આ પ્રકારનું આપ શ્રીમુખ ધારણ કરો છો તે અમને કામનું દાન કરવામાં કારણભૂત છે. સંધ્યાકાળના વખતે આપે ભોગને માટે અમને કામનું જ દાન કર્યું, તેથી આપે ભોગ કરવો જોઈએ. આ કામ આગંતુક છે, આપે અમને દાન કરેલો છે, તેથી તેનું પૂરણ બીજે કોઈ પણ પ્રકારે-ભોગ કર્યા વિના ફક્ત આશ્વાસન વિગેરે આપવાથી-થઈ શકશે નહિ. અર્થાત્ આપે જ આ આગંતુક કામનું પૂરણ ભોગ કરીને કરવાનું છે. ૧૨.

જેમ 'પ્રણાતદેહિનામ્' એ સાતમા શ્લોકમાં અનન્યપૂર્વા ગોપીજને ભગવાનને પ્રાર્થના કરી કે આપ આપનું ચરણકમલ અમારી છાતી ઉપર પધરાવો તેમ આ 'પ્રણાતકામદમ્' શ્લોકમાં પાછલાં-અન્યપૂર્વા રજસતામસ ગોપીજન જે બારમો શ્લોક બોલે છે તે-ગોપીજનના કરતાં ઉત્તમ, અન્યપૂર્વા રાજસરાજસ ગોપીજનો, ભગવાનને પ્રાર્થના કરે છે કે આપ આપનું ચરણકમલ અમારી છાતી ઉપર પધરાવો.

પ્રણાતકામદં પચ્ચજ્ઞાર્થિતં ધરણિમણ્ડનં ધ્યેયમ્ આપદિ ।

ચરણપડકજ્ઞં શન્તમં ચ તે રમાણ! નઃ સ્તનેષ્વર્પયાધિહન્! ॥૧૩॥

હે રમણ! હે આધિને હરણ કરનાર! અનન્યભાવે આપને શરણે આવેલા જીવોની અભિલાષા પૂર્ણ કરનારું, બ્રહ્માએ જેનું પૂજન કરેલું છે એવું, પૃથ્વીના અલંકારરૂપ, દુઃખના સમયમાં જેનું ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે એવું, કલ્યાણરૂપ આપનું ચરણારવિંદ અમારા સ્તનો ઉપર પધરાવો. ૧૩.

‘પ્રણતદેહિનામ્’ એ સાતમો શ્લોક અનન્યપૂર્વા ગોપીજનોનો છે, જ્યારે આ શ્લોક અન્યપૂર્વા ગોપીજનોનો છે; તેથી આ શ્લોકમાં પુનરુક્તિ નથી. એટલું જ નહિ પણ પહેલાંના ‘પ્રણતદેહિનામ્’ એ શ્લોકના કરતાં આ શ્લોકમાં ભગવાનના ચરણનું માહાત્મ્ય અધિક છે. આ શ્લોકમાં ભગવાનના જે ચરણનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે ભક્તોને ગુણો આપનારું છે, જ્યારે ‘પ્રણતદેહિનામ્’ એ શ્લોકમાં જે ચરણનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે તો ફક્ત દોષ દૂર કરનારું છે. (આ પ્રમાણે ભગવાનના ચરણનું જે બે શ્લોકોમાં વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તેમાં પુનરુક્તિ નથી.)

હે રમણ, રતિ કરનાર! અમારા સ્તનો ઉપર આપનું ચરણકમલ પધરાવો. સ્તનો ઉપર ભગવાનનું ચરણકમલ પધરાવવાની ગોપીજનો ભગવાનને જે વિનંતી કરે છે તેનું પ્રયોજન સમજાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘આધિહન’, આધિનો-મનની, હૃદયની, વ્યથાનો નાશ કરનાર. અથવા તો ‘આધિહન’ ને બદલે ‘આર્તિહન’ પણ પાઠ છે, અને તેનો અર્થ આર્તિનો-ચિંતાનો નાશ કરનાર એ પ્રમાણે થાય છે. હૃદયનો તાપ અને ચિંતા એ બેનું નિવારણ કરવાનું છે. (આપનું ચરણ કમલના જેવું છે અને કમલ તાપ દૂર કરે છે એ દેખીતી વાત છે, એટલે) આ પ્રમાણે દષ્ટ ઉપકારથી જ અમારા હૃદયનો તાપ જતો રહેશે. આપનું જે ચરણકમલ અમે અમારા હૃદયમાં સ્થાપેલું છે તે બહાર આવતું નથી, તેથી આપે આપનું ચરણકમલ બહાર-અમારા વક્ત્રુસ્થલ ઉપર સ્થાપવાનું છે. (અને તે રીતે અમારા હૃદયનો તાપ અને ચિંતા દૂર કરવાની છે.)

જેમ ભગવાનમાં ઐશ્વર્ય વિગેરે છ ગુણો રહેલા છે તેમ ભગવાનના ચરણકમલમાં પણ છ ગુણો રહેલા છે. તેમાં પ્રથમ ઐશ્વર્ય છે એમ ‘પ્રણતકામદમ્’-શરણે આવેલાની ઈચ્છા પૂર્ણ કરનારું-એ શબ્દમાં ગોપીજન કહે છે. ભગવાનને જે ખૂબ નમેલા છે તે પ્રણત, અર્થાત્ અનન્ય શરણે આવેલા; તેમના કામને-ઈચ્છેલા પદાર્થને-આપનારું ભગવાનનું ચરણકમલ છે. અનન્યભાવથી શરણે આવેલા જીવોની અભિલાષા પૂર્ણ કરનાર ઈશ્વર જ હોય છે. દાન કરવા યોગ્ય જે કામ-ઈચ્છેલો પદાર્થ-ઈશ્વરના મનમાં રહેલો છે તેનું ગ્રહણ સ્તબ્ધ-જે શરણે જતા નથી

એવા-જીવોથી થઈ શકતું નથી, તેથી મૂલ શ્લોકમાં ‘પ્રણાતત્વ’-ભગવાનને શરણે રહેવાનું-કહેવામાં આવેલું છે. (અર્થાત્ ભગવાન જે ઈચ્છિત પદાર્થનું દાન કરે છે તેનું ગ્રહણ કરવાને પણ સ્તબ્ધતાનો ત્યાગ કરીને અનન્યાશ્રય કરવાની જરૂર છે.)

‘પદ્માભ્યર્ચિતમ્’-બ્રહ્માથી પૂજાએલું ભગવાનનું ચરણકમલ-એ શબ્દથી ભગવાનના ચરણકમલની ધર્મરૂપતાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. બ્રહ્માની પ્રાર્થનાથી જ ભગવાનના ચરણકમલનું અહિં આગમન થયું છે. (બ્રહ્મા ભગવાનના ચરણ-કમલની ધર્મબુદ્ધિથી જ પૂજા કરે છે, ગોપીજનોની માફક સ્નેહથી પૂજા કરતા નથી.)

‘ધરણિમાણ્ડનમ્’-પૃથ્વીના અલંકારરૂપ-એ પદ વડે ભગવાનનું ચરણકમલ કીર્તિરૂપ છે એમ ગોપીજન કહે છે. ભગવાનનું ચરણકમલ ધરણીનું-પૃથ્વીનું-મંડન-અલંકાર-છે અથવા તો શોભા છે.

ભગવાનનું ચરણકમલ દુઃખમાં ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે તેથી ભગવાનનું ચરણ શ્રીરૂપ અથવા કીર્તિરૂપ છે. (જો ‘ધરણિમાણ્ડન’ પદવડે ભગવાનના ચરણ-કમલની કીર્તિનું ગ્રહણ કરવું હોય તો ‘ધ્યેયમ્ આપદિ’ એ પદવડે ભગવાનના ચરણ-કમલની શોભાનું ગ્રહણ કરવું; પણ જો ‘ધરણિમાણ્ડન’ પદવડે ભગવાનના ચરણ-કમલની શોભાનું ગ્રહણ કરવું હોય તો ‘ધ્યેયમ્ આપદિ’ એ પદ વડે ભગવાનના ચરણકમલની કીર્તિનું ગ્રહણ કરવું.)

ભગવાનના ચરણને કમલની ઉપમા આપવામાં આવેલી છે તેથી સ્વરૂપની-ચરણની-શ્રેષ્ઠતા કહેવામાં આવી છે. ભગવાનનું ચરણકમલ ‘શન્તમ્’-સૌથી વધારે કલ્યાણરૂપ-છે, અને તેથી જ્ઞાનરૂપ છે. (કારણ કે જ્ઞાન કલ્યાણરૂપ છે.)

ભગવાનને માટે ‘આર્તિહન’ એ પ્રમાણે સંબોધન વાપરવાથી અને ‘તે ચરણપંકજમ્’-આપનું ચરણકમલ-એ પ્રમાણે ચરણકમલનો ભગવાનની સાથે સંબંધ દર્શાવવાથી વૈરાગ્યનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. અર્થાત્ ભગવાનના સંબંધથી જ ભગવાનનું ચરણકમલ વૈરાગ્યયુક્ત છે.

ભગવાનને માટે ‘રમણ’ સંબોધન વાપરવામાં આવ્યું છે તેનો અર્થ ‘ઈષ્ટ વસ્તુઓ આપનાર’ એમ થાય છે, અને ‘આર્તિહન’ એ સંબોધનનો અર્થ ‘અનિષ્ટ વસ્તુઓને દૂર કરનાર’ એમ થાય છે. (અર્થાત્ ઈષ્ટ વસ્તુ મેળવવાને માટે અને અનિષ્ટ વસ્તુ દૂર કરવાને માટે બીજા કોઈનો આશ્રય કર્યા વિના ફક્ત ભગવાનનો અથવા ભગવાનના ચરણકમલનો આશ્રય કરવો જોઈએ.)

અથવા આપનું જે ચરણારવિંદ લોકમાં પાંચ પ્રકારનો ઉપકાર કરે છે તે ચરણારવિંદ અમારા ઉપર પાંચ નહિ પણ એક જ ઉપકાર કરો એમ ગોપીજન

ભગવાનની પ્રાર્થના કરે છે. ભગવાનનું ચરણારવિંદ જગતમાં પાંચ પ્રકારના ઉપકાર કરે છે - ૧. લૌકિક કામનું ખંડન કરવું, ૨. ઐશ્વર્યનું દાન કરવું, ૩. શરણે આવેલાની ઈચ્છાને પૂર્ણ કરવું, ૪. અલંકરણ, શોભા આપનાર, અને પ.દુઃખ દૂર કરનાર. આ પાંચ ઉપકારને બદલે એક જ ઉપકાર-અમારા હૃદયના તાપને દૂર કરવાનો ઉપકાર-અમારા ઉપર આપનું ચરણકમલ ધરો એવી ગોપીજનની પ્રાર્થના છે. (આ પ્રમાણે બીજો અર્થ કરવામાં ગોપીજનો પોતાના હૃદયના તાપને દૂર કરવાની પ્રાર્થના કરે છે, પોતે ઈચ્છેલા પદાર્થનું દાન કરવાની પ્રાર્થના કરતાં નથી.)

જે પ્રણત છે-અનન્યભાવથી ભગવાનને શરણે જાય છે-તેને ભગવાનનું શ્રીમુખ કામનું દાન કરે છે, અને તે વાત પહેલાં બારમા શ્લોકમાં 'મનસિ નઃ સ્મરં વીર યચ્છસિ' એમાં કહેવામાં આવેલી છે, અને તેથી ત્યાં ભોગની પ્રાર્થના તો સિદ્ધ જ થઈ ગએલી છે. તેથી આ શ્લોકમાં 'પ્રણતકામદમ્' એ પદનો બીજો પ્રકારે અર્થ કરવાની જરૂર છે. પ્રણત એટલે બહુ જ નમ્ર. આવા અતિનમ્ર ભક્તોમાં ભગવાનનું ચરણકમલ કામનું દાન-ખંડન-કરે છે. (શ્લોકનો આ પ્રમાણે જ્યારે અર્થ કરીએ ત્યારે આખા શ્લોકનો અન્વય આ પ્રમાણે કરવો:-શ્લોકના પૂર્વાર્ધમાં જે ચાર વિશેષણો આપેલાં છે તે વિશેષણોવાળું અને પાંચ પ્રકારના ઉપકાર કરનારું આપનું ચરણકમલ અમારા તાપનું નિવારણ કરવાને માટે આપ અમારા સ્તનો ઉપર પધરાવો.) (હવે 'પદ્મજ્ઞર્ચિતમ્' નો બીજો પ્રકારે અર્થ કરવામાં આવે છે.) પદ્મજ્ઞ એટલે બ્રહ્મા; અથવા પદ્મજ્ઞ એટલે લક્ષ્મી. બ્રહ્માએ ઐશ્વર્યને માટે ભગવાનના ચરણકમલની સેવા કરી, અથવા તો લક્ષ્મીએ કામને માટે ભગવાનના ચરણકમલની સેવા કરી. અથવા તો પદ્મજ્ઞ એટલે નખ. પદ્મ એટલે ભગવાનના ચરણરૂપી કમલ અને તેમાં ઉત્પન્ન થનારા પદ્મજો, એટલે નખ. આ નખથી ભગવાનનું ચરણકમલ અર્ચિત-સેવાએલું-છે. (જગતમાં નખ પગની સાથે જોડાએલા છે, એટલે તે સંયોગી દ્રવ્ય કહેવાય છે, અને તેથી પગની સાથે નખનો સંબંધ અનિત્ય હોવાથી નખ પગથી છૂટા થઈ શકે છે. પરંતુ ભગવાનના નખો સચ્ચિદાનંદરૂપ હોવાથી સ્વરૂપાત્મક છે એટલે ભગવાનના નખોને સંયોગી દ્રવ્ય કહી શકાય નહિ; અર્થાત્ ભગવાનના નખ ભગવાનના ચરણકમલથી છૂટા થઈ શકે નહિ. આ પ્રકારની વસ્તુસ્થિતિ હોવા છતાં પણ આ શ્લોક બોલનારાં ગોપીજનોને હમણાં ભગવાનના ચરણકમલના સંબંધને માટે એટલી બધી આર્તિ છે કે નખ વિગેરે જે ભગવાનના ચરણકમલના સંબંધવાળો પદાર્થ છે તે જ ભગવાનના ચરણકમલનો સંબંધ પ્રાપ્ત કરવામાં અમારું પૂર્ણ સાધન છે એમ તે ગોપીજનો માને છે; અર્થાત્ નખ

ભગવાનના ચરણકમલમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી શકે છે તેથી તે નખ જ અમારું પૂર્ણ સાધન છે. આ કારણથી આ ગોપીજનોએ ભગવાનના ચરણકમલને ‘પદ્મજ્ઞર્થિતમ્’ એ પ્રમાણે વર્ણવ્યું છે.) આ પ્રમાણે જો માનવામાં ન આવે તો તે નખ ભગવાનના ચરણકમલમાં જન્મ કેવી રીતે પ્રાપ્ત કરી શકે? અથવા તો ભગવાનનું ચરણકમલ નખતુલ્ય છે; અર્થાત્ ભગવાનના ચરણકમલની અતિશોભા પણ નખથી જ છે, તેથી ભગવાનનું ચરણકમલ જાણે નખથી અર્થિત થએલું છે. ભગવાનના ચરણકમલમાં રહેલા ધ્વજા વિગેરે ચિહ્નો પણ આ પ્રકારનાં જ છે એમ જાણવું. અર્થાત્ ધ્વજા વિગેરે ચિહ્નો પણ ભગવાનના ચરણકમલનો સંબંધ મેળવવામાં પૂર્ણ સાધન છે અને તેથી ભગવાનનું ચરણકમલ તે ચિહ્નોથી અર્થિત થએલું છે.

ધરણી એટલે પૃથ્વી. આ ધરણી પણ સ્ત્રી છે. જે સ્ત્રીએ અલંકાર ધારણ ન કર્યા હોય તેનો ભોગ થઈ શકે નહિ. તેથી તે ધરણી ઉપર ભગવાને પોતાના ચરણકમલનું સ્થાપન કરીને ધરણીને અલંકૃત કરી. આ પ્રમાણે ભગવાનનું ચરણકમલ ધરણીના અલંકારરૂપ છે.

ભગવાનનું ચરણકમલ ભગવાનના કરતાં પણ અધિક છે, કારણ કે ભગવાનના ચરણકમલનું દુઃખમાં ધ્યાન ધરતાં જ તે ચરણકમલ દુઃખ દૂર કરે છે.

(‘પ્રણાતકામદમ્’ એ પદ વડે લૌકિક કામનું ખંડન, ‘પદ્મજ્ઞર્થિતમ્’ એ પદ વડે બ્રહ્માને ઐશ્વર્યનું અને લક્ષ્મીને કામનું દાન, ‘ધરણીમણ્ડનમ્’ એ પદ વડે પૃથ્વીને અલંકૃત કરવી, અને ‘દ્યેયમાપદિ’ એ પદ વડે દુઃખને દૂર કરવું-આ પ્રમાણે ચાર પદ વડે ભગવાનના ચરણકમલના પાંચ પ્રકારના ઉપકારનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું.) જેમ આપનું-ભગવાનનું-ચરણકમલ બધાંના-પ્રણાતા વિગેરે-ઉપર સર્વ ઉપકાર કરે છે તેમ અમારા ઉપર પણ આપનું ચરણકમલ અમારા હૃદયનો તાપ દૂર કરીને ઉપકાર કરો એમ આ ગોપીજન ભગવાનને પ્રાર્થના કરે છે. આ પ્રમાણે બધાય સુરતબંધોનું આક્ષેપથી વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. (‘પ્રણાતકામદમ્’ એ પદ વડે ‘બાહ્ય’ સુરતબંધ; ‘પદ્મજ્ઞર્થિતમ્’ એ પદમાં ‘પદ્મજ’ વડે ‘વિપરીત’ બંધ, અને ‘પદ્મજા’ વડે ‘તિર્યક્’ બંધ; ‘ધરણી’ પદ વડે ‘સમ’ બંધ; અને ‘દ્યેયમ્’ પદ વડે ‘આંતર’ બંધ -આ પ્રમાણે સુરતબંધના પાંચ પ્રકારનું આક્ષેપથી વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.) ૧૩.

૧. “ ‘તિ’ ઈત્યપિ પાઠઃ”.

ત્યાર પછી અન્યપૂર્વા રાજસરાજસી ગોપીજનના કરતાં પણ ઉત્તમ એવાં અન્યપૂર્વા રાજસસાત્ત્વિકી ગોપીજનો ‘સુરતવર્ધનમ્’ એ શ્લોકમાં ભગવાનની પ્રાર્થના કરે છે:

સુરતવર્ધનં શોકનાશનં સ્વરિતવેણુના સુષ્ટુ યુષ્મિતમ્ ।

ઈતરરાગવિસ્મારણં નૃણાં વિતર વીર નસ્તેઽધરામૃતમ્ ॥૧૪॥

હે વીર! સુરતની વૃદ્ધિ કરનાર, શોકનો નાશ કરનાર, સ્વરવાળા વેણુથી ચુંબિત અને બીજા રાગોનું વિસ્મરણ કરાવનાર આપનું અધરામૃત અમને અનધિકારીઓને દાન કરો. ૧૪.

આપનું અધરામૃત અમને આપો એમ આ અન્યપૂર્વા રાજસસાત્વિકી ગોપીજનો ભગવાનને પ્રાર્થના કરે છે. આ શ્લોકમાં પણ પૂર્વ શ્લોકની માફક ભગવાનનું અધરામૃત ગુણ આપનારું છે. (આઠમા શ્લોકમાં વર્ણન કરવામાં આવેલું અધરામૃત દોષ કરનારું છે, જ્યારે આ શ્લોકમાં વર્ણન કરવામાં આવેલું અધરામૃત ગુણ આપનારું છે; એટલે આ શ્લોકમાં આઠમા શ્લોકના અધરામૃતની પુનરુક્તિ નથી.) આ અધરામૃતમાં ચાર ગુણોનું જ વર્ણન કરવાની ઈચ્છા છે, કારણ કે અહિં જ્ઞાન અને વૈરાગ્યનો ઉપયોગ નથી. તેથી આ શ્લોકમાં અધરામૃતના ઐશ્વર્ય વિગેરે ચાર ગુણોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. અધરામૃતના ઐશ્વર્યગુણનું વર્ણન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘સુરતવર્ધનમ્’. જ્યારે ગોપિકાઓમાં રહેલા પરિચ્છિન્ન કામનો ભગવાનના અપરિચ્છિન્ન સ્વરૂપ સાથે સંયોગ થાય છે ત્યારે તે પરિચ્છિન્ન કામ કિલષ્ટ થાય છે. જેમ આયુર્વેદની રસ ઔષધિઓ ભૂખને જાગૃત કરે છે તેમ ભગવાનનો આ અધરરસ કામને જાગૃત કરે છે. વળી, ભગવાનનો આ અધરરસ ફક્ત કામને જ પોષે છે એમ નથી, પરંતુ અંતઃકરણના બધા દોષોનું નિવારણ કરે છે. તેથી ભગવાનનું અધરામૃત શોકનાશક છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે અને તે રીતે અધરામૃત જ્ઞાનરૂપ અને વૈરાગ્યરૂપ છે એમ નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. અથવા તો ‘સુરતવર્ધનમ્’ એ પદ વડે અધરામૃતના ઐશ્વર્યગુણનું અને ‘શોકનાશનમ્’ એ પદ વડે ધર્મગુણનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

અધરામૃતના યશરૂપી ગુણનું વર્ણન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘સ્વરિતવેણુના સુષ્ટુ યુષ્મિતમ્’. સ્વરિત એટલે નાદયુક્ત જે વેણુ, તેનાથી ભગવાનનું અધરામૃત સારી રીતે ચુંબિત થએલું છે, કારણ કે નાદ જાણનારાઓ જ યશનું કીર્તન કરે છે. વેણુ ભગવાનનો પરમભક્ત છે એટલે તેણે પણ ભગવાનના અમૃતરસનું ચુંબન જ કર્યું, પણ પાન કર્યું નહિ. (અર્થાત્ પરમ ભક્ત નાદયુક્ત વેણુ અધરામૃતનું સુંદર ચુંબન કરીને અધરામૃતના યશનું ગાન કરે છે.)

અધરામૃતના શ્રીરૂપી ગુણનું વર્ણન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ઈતરરાગવિસ્મારણમ્’. આ પદ વડે અધરામૃતના શ્રીરૂપી ગુણનું વર્ણન કરવામાં



આવ્યું છે, કારણ કે શ્રી-લક્ષ્મી-સર્વનું વિસ્મરણ કરાવે છે (અને તે જ પ્રમાણે ભગવાનનું અધરામૃત પણ બીજા બધાય રાગોનું વિસ્મરણ કરાવે છે.)

(ભગવાનનું અધરામૃત પોતે જ પુરુષાર્થરૂપ છે, અને તેના વિષે ‘સુરતવર્ધનમ્’ વિગેરે ચાર વિશેષણો વડે પ્રમાણ, પ્રમેય, સાધન અને ફલ એ ચારનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે.) તેમાં ‘ઈતરરાગવિસ્મારણમ્’ એ વિશેષણ વડે સ્વતઃપુરુષાર્થરૂપ અધરામૃતના પ્રમેયબલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, તેની પહેલાંના ‘સ્વરિતવેણુના સુષ્ટુ ચુમ્બિતમ્’ એ વિશેષણ વડે અધરામૃતના પ્રમાણબલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, ‘શોકનાશનમ્’ એ પદ વડે અધરામૃતના ફલબલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, અને ‘સુરતવર્ધનમ્’ એ પદ વડે અધરામૃતના સાધનબલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. (કૃષ્ણોપનિષદ્માં કહેવામાં આવ્યું છે કે ‘વંશસ્તુ ભગવાન્ રુદ્રઃ’, વેણુ રુદ્રરૂપ છે; અને ‘વેદઃ શિવઃ શિવો વેદઃ’ એ શ્રુતિમાં શિવને વેદરૂપ તરીકે વર્ણવવામાં આવ્યા છે. તેથી વેણુનાદ વેદરૂપ છે, અને વેદ સ્વતઃપ્રમાણ હોવાથી વેણુનાદ પણ સ્વતઃપ્રમાણ છે. આ પ્રકારે સ્વરિત વેણુ સ્વતઃપ્રમાણ વેદાત્મક હોવાથી પ્રમાણરૂપ છે અને તેનાથી ‘ઈતરરાગવિસ્મારણ’રૂપ પ્રમેયજ્ઞાન થાય છે, એટલે ‘ઈતરરાગવિસ્મારણમ્’ એ પદ પ્રમેયબલનું વર્ણન કરે છે. સ્વરિતવેણુરૂપી પ્રમાણથી ‘ઈતરરાગવિસ્મારણ’રૂપ જ પ્રમેયજ્ઞાન થાય છે તેનું ફલ ‘શોકનાશનમ્’ છે, તેથી ‘શોકનાશનમ્’ એ પદ ફલબલનું વર્ણન કરે છે. આ ‘શોકનાશન’રૂપી ફલને સિદ્ધ કરવાને માટે સાધનની જરૂર રહે છે અને તે સાધન ‘સુરતવર્ધનમ્’ એ પદ વડે કહેવામાં આવેલું છે.) આ પ્રમાણે અધરામૃત સ્વતઃ-પુરુષાર્થરૂપ છે અને ચાર પ્રકારનો પુરુષાર્થ આપનાર છે. (ભગવાનનું અધરામૃત ચાર પ્રકારનો પુરુષાર્થ આપનારું છે એમ ‘સુરતવર્ધનમ્’ ઈત્યાદિ ચાર વિશેષણો સૂચવે છે. ‘સુરતવર્ધનમ્’ કામનું, ‘શોકનાશનમ્’ મોક્ષનું, ‘સ્વરિતવેણુના સુષ્ટુ ચુમ્બિતમ્’ ધર્મનું અને ‘ઈતરરાગવિસ્મારણમ્’ અર્થનું નિરૂપણ કરે છે, અને આ રીતે ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ એ ચાર પુરુષાર્થોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.)

અમે કેવલ ‘નૃ’ છીએ, અનધિકારી છીએ, અથવા તો બધા પુરુષાર્થ અમને દુર્લભ છે; તેથી જો કે આપનું સ્વતઃપુરુષાર્થરૂપ ચાર ગુણોવાળું અધરામૃત અમને આપવા યોગ્ય નથી છતાં પણ આપના વિતરણ-દાન-ગુણને લીધે તે અધરામૃતનું દાન અમને કરી શકાય એમ છે. આ હેતુથી ગોપીજનોએ ‘વિતર’-દાન કરો-એ પ્રમાણે ભગવાનને પ્રાર્થના કરી. (અનધિકારી, નિઃસાધન, જીવોને પણ ભગવાન પોતાનામાં રહેલા વિતરણ-દાન-ગુણથી પરમ પુરુષાર્થ આપે છે, તેથી વિતરણધર્મ

ભગવાનના અધિક ઉત્કર્ષનું સૂચન કરે છે.)

ભગવાનને 'વીર' એ પ્રમાણે જે સંબોધન કરવામાં આવ્યું છે તેનો ભાવ એવો છે કે ભગવાનનું શૌર્ય બીજે પ્રકારે સંભવતું નથી. અર્થાત્ આપ આપના અધરામૃતનું અમને દાન કરશો તો જ આપનું શૌર્ય સંભવશે, અન્યથા નહિ જ. ૧૪.

આ પ્રમાણે ૧૨|૧૪ એ ત્રણ શ્લોકોમાં અન્યપૂર્વા રાજસ ગોપીજનોના તામસ, રાજસ અને સાત્ત્વિક એ ત્રણ પ્રકારનું વર્ણન કરીને હવે ૧૫|૧૭ એ ત્રણ શ્લોકોની અંદર અન્યપૂર્વા તામસ ગોપીજનોના સાત્ત્વિક, તામસ અને રાજસ એ ત્રણ પ્રકારનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. દેવની નિંદા કરનારાં ગોપીજનો સાત્ત્વિકતામસ છે, ભગવાનની નિંદા કરનારાં ગોપીજનો તામસતામસ છે અને પોતાની નિંદા કરનારા ગોપીજનો રાજસતામસ છે. હવે 'અટતિ' એ શ્લોક અન્યપૂર્વા તામસસાત્ત્વિક ગોપીજનો બોલે છે :

અટતિ યદ્ ભવાન્ અહિન કાનનં ત્રુટિર્યુગાયતે ત્વામ્ અપશ્યતામ્ ।

કુટિલ-કુન્તલં શ્રીમુખં ચ તે જડ ઉદીક્ષતાં પક્ષ્મકૃદ્ દશામ્ ॥૧૫॥

આપ જ્યારે દિવસે વનમાં પધારો છો ત્યારે આપનાં દર્શન નહિ થવાથી અમને એક ક્ષણ પણ યુગ જેવી લાગે છે. અમે જ્યારે વાંકા કેશવાળા શ્રીમુખનું દર્શન કરીએ છીએ ત્યારે નેત્રોની પાંખ કરનાર બ્રહ્મા અમને જડ લાગે છે. ૧૫.

આપ જ્યારે દિવસે વનમાં ફરો છો ત્યારે ત્રુટિ-એક પલ-યુગ જેવી લાગે છે. એક પલ યુગ જેવી લાગે છે તેનું કારણ જણાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે 'ત્વામપશ્યતામ્', આપનાં દર્શન નહિ થવાથી. પણ જ્યારે અમે આપનાં દર્શન કરીએ છીએ ત્યારે આપના વાંકા કેશવાળા શ્રીમુખના દર્શન થતાં અમને લાગે છે કે અમારી આંખોની પાંખ કરનાર બ્રહ્મા જડ છે. (અમે જ્યારે આપના શ્રીમુખનાં દર્શન કરીએ છીએ ત્યારે અમારી આંખોની પાંખણો વચ્ચે નડવાથી આપનો વિરહ થાય છે, અને તેથી આંખોની પાંખણો કરનાર બ્રહ્મા અમને જડ લાગે છે.) જેમ દેવો અલૌકિક દ્રષ્ટા હોવાથી બ્રહ્મા તેમની આંખોને પાંખણો કરતાં નથી, તેમ અમારી પણ આંખોને પાંખણો કરવી યોગ્ય નથી, કારણ કે દેવોના કરતાં અમે વધારે અલૌકિક દ્રષ્ટા છીએ. તેથી બ્રહ્માએ અમારી આંખોને જે પાંખણો કરી છે તે અયોગ્ય છે, અને તેથી તે જડ છે. દેવો ખરેખર લાંબા કાલ સુધી જીવે છે; તેમ અમે પણ લાંબો કાલ જીવીએ છીએ, કારણ કે 'ત્રુટિર્યુગાયતે', એક પલ યુગ જેવી થાય છે. 'ત્રુટિ' શબ્દ નરજાતિ અને નાન્યતરજાતિનો છે. જો આપનું વનમાં પધારવાનું સાર્થક થતું હોય તો તો અમને કોઈ જાતની ચિંતા નથી; પરંતુ દિવસે વનમાં જ આપ ફરો છો, અને વનમાં

કોઈ જાતનો પુરુષાર્થ નથી. અમારું ઘરની બહાર જવું સંભવતું નથી. (દિવસે આપ પ્રયોજન વિના વનમાં ફરો છો, તે વખતે અમને આપનાં દર્શન થતાં નથી અને અમે ઘરની બહાર જઈ શકતાં નથી, તેથી એક પલ પણ યુગ જેવી લાંબી થાય છે; સાયંકાલે અમને આપના શ્રીમુખનાં દર્શન થાય છે. આ પ્રકારે અમે અલૌકિક પદાર્થનાં દર્શન કરનારાં છીએ અને દીર્ઘ કાલ જીવનારાં છીએ-એટલે) આ પ્રમાણે ભગવાને તો અમને દેવ જેવાં બનવેલાં છે (પણ સાંયકાલે આપના શ્રીમુખનાં દર્શન કરતી વખતે અમારી આંખોની પાંપણો દર્શનમાં આડે આવે છે) તેથી અમારી આંખોની પાંપણો કરનાર બ્રહ્મા મૂર્ખ છે. (આ શ્લોકમાં બ્રહ્મદેવની નિંદા કરવાથી આ શ્લોક બોલનાર ગોપીજનો તામસસાત્ત્વિક છે.) ૧૫.

અન્યપૂર્વા તામસસાત્ત્વિક ગોપીજનોથી ઉતરતી કોટિનાં અન્યપૂર્વા તામસતામસ ગોપીજનો ‘પતિ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં ભગવાનની નિંદા કરે છે :

પતિસુતાન્વયભ્રાતૃબાન્ધવાન્ અતિવિલડ્ધ્ય તેડત્યચ્યુતાગતાઃ ।

ગતિવિદસ્તવોદ્ ગીતમોહિતાઃ કિતવ! યોષિતઃ કસ્ત્યજેત્ નિશિ ॥૧૬॥

પતિ, પુત્ર, વંશ, ભાઈ, બાંધવો (જેમનું ઉલ્લંઘન થઈ શકે નહિ એવાં) આ બધાંનું ઉલ્લંઘન કરીને, હે અચ્યુત!, ગતિને જાણનાર એવાં અમે આપ ગતિ જાણનારની પાસે આવ્યાં છીએ, આપ ગતિ જાણનારના ઉચ્ચ ગાનથી મોહિત થએલી સ્ત્રીઓનો, હે કિતવ-કપટી!, રાત્રીએ કોણ ત્યાગ કરે? ૧૬.

હે અચ્યુત! સ્વતઃ કામની નિવૃત્તિના ભયથી રહિત! (જ્યારે ભગવાન વિનાના બીજા કોઈનો કામ નિવૃત્ત થઈ જાય છે ત્યારે તે બીજો પોતે જ તે લીલામાંથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે, પરંતુ ભગવાન પોતે પોતાની લીલામાંથી કોઈ પણ વખત નિવૃત્ત થતા નથી, કારણ કે તેમનો પોતાનો કામ નિવૃત્ત થતો નથી.) પતિ, પુત્રો, અન્વય એટલે વંશ, ભાઈઓ, બાંધવો એટલે સગાંવહાલાંઓ, આ બધાંઓનું ઉલ્લંઘન સર્વથા થઈ શકે નહિ, છતાં તેમનું પણ અતિ ઉલ્લંઘન કરીને આપની સમીપ અમે આવેલાં છીએ. આપ સર્વની ગતિને જાણો છો એટલે આપ ગતિવિત્ છો, કારણ કે બધા જેટલી ગતિ સંપાદન કરે છે તેટલી ગતિ આપ જ આપશો. અથવા તો અમે ગતિવિત્-ગતિને જાણનારાં-છીએ, કારણ કે પતિ વિગેરેનું ભજન અને ભગવાનનું ભજન એ બે પ્રકારના ભજનનું અમે તારતમ્ય જાણીએ છીએ.

વળી, આપના ઉચ્ચ ગાનથી અમને મોહ થયો. (આપ ગતિ જાણનાર છો અને અમે પતિ વિગેરેનું ભજન અને આપનું ભજન એ બેની તારતમ્યરૂપી ગતિ જાણનારાં છીએ. તેથી ગતિજ્ઞાનને લીધે અને આપના ઉચ્ચ ગાનથી થએલા મોહને

લીધે અમે આપની પાસે આવ્યાં છીએ.) તેથી અમારામાં મોહ ઉત્પન્ન કરીને, અમને અહિં આણીને, પતિ વિગેરેથી અને આપનાથી અમે બેય બાજુથી ભ્રંશ કરવાને માટે, અરણ્યમાં રાત્રીએ અમો સ્ત્રીઓનો (આપના વિના બીજો) કોણ ત્યાગ કરે? હંમેશાં જ સ્ત્રીઓ ત્યાગ કરવા યોગ્ય નથી; તેમાંય ખાસ કરીને વનમાં, તેમાં પણ ખાસ કરીને રાત્રીએ. (ભગવાન ગોપીજનોનો અરણ્યમાં રાત્રીએ ત્યાગ કરે છે તેથી તેમને કિતવ-કપટી-કહેવામાં આવે છે, કારણ કે કપટી લોકો અરણ્યમાં છેતરીને ત્યાગ કરે છે. 'કિતવ' એ સંબોધનનું બીજું પણ તાત્પર્ય છે એમ જણાવતાં કહે છે કે) અથવા તો જે વસ્તુને માટે આપે અમને અહિં બોલાવ્યાં તે વસ્તુ જ અમને આપ્યા વિના અમારો ત્યાગ કરો છો-આ અભિપ્રાયથી ગોપીજનો ભગવાનને 'કિતવ' એ પ્રમાણે સંબોધે છે.

અથવા તો મૂલ શ્લોકમાં 'કિતવયોષિતઃ' એમ એક સમસ્ત પદ લેવું. અમે તો કિતવોના-કપટી ગોપોના-માત્ર સંબંધવાળાં છીએ, અમે તેમની સ્ત્રીઓ, પત્ની, નથી; અને તેથી અમારો તેમનામાં પ્રવેશ થઈ શકતો નથી. (ગોપીજનો ભગવાનને 'કિતવ' ન કહેતાં પોતાના પતિને 'કિતવ' કહે છે અને પોતાની જાતને 'કિતવયોષિતઃ' કહે છે. આનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે:-ગોપીજનો કહે છે કે કિતવો-ગોપો-સાથે અમારો માત્ર સંબંધ જ છે, અમે તેમની પત્નીઓ નથી અને તેમણે અમારો ભોગ કર્યો નથી, કારણ કે અમારો ભોગ ફક્ત ભગવાન જ કરી શકે છે. ગોપોને તો ફક્ત અભિમાન જ છે કે અમે ગોપીઓના ઘણી છીએ. જેમ રાસ વખતે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે હતાં છતાં પણ યોગમાયાના મોહથી ગોપો માનવા લાગ્યા કે અમારી સ્ત્રીઓ અમારી પાસે જ છે, તેમ હંમેશાં ગોપોને યોગમાયાના મોહને લીધે ફક્ત અભિમાન જ રહે છે કે ગોપીઓ અમારી પત્ની છે અને અમે તેમના પતિ છીએ, પરંતુ ગોપો ગોપીઓનો ભોગ કરતા નથી. ગોપીજનોને પુત્ર વિગેરે જે પ્રજા થઈ તે તો અલૌકિક પ્રકાર વડે ભગવાનની દ્વારા જ થઈ છે. ગોપો ગોપીઓના પતિ નથી છતાં ગોપીઓ તેમને પોતાના પતિ તરીકે જે સ્વીકારે છે તે તો રસના પોષણને માટે જ, કારણ કે 'રસ બીજાની સ્ત્રીમાં જ સિદ્ધ થાય છે' એવો વાત્સ્યાયન મુનિનો સિદ્ધાંત છે. તેથી વાસ્તવિક રીતે ગોપીજનોનો ભોગ કરવા એકલા ભગવાન જ યોગ્ય છે એવો સિદ્ધાંત છે.) ૧૬.

અન્યપૂર્વા તામસતામસ ગોપીજન કરતાં ઉત્તમ અન્યપૂર્વા તામસરાજસ ગોપીજનો 'રહસિ' એ શ્લોકમાં પોતાની જાતને જ નિંદે છે :

રહસિ સંવિદં દુષ્ટયોદયં પ્રહસિતાનનં પ્રેમવીક્ષણમ્ ।

બૃહદ્દર: શ્રિયો વીક્ષ્ય ધામ તે મુહુરતિસ્પૃહં મુહ્યતે મન: ॥૧૭॥

કામને ઉદ્દીપન કરનારી આપની એકાંતની વાતચીત, પ્રેમપૂર્વક કટાક્ષવાળું હસતું આપનું શ્રીમુખ, અને શ્રીના ધામરૂપ આપનું વક્ષ:સ્થલ-એ ત્રણનાં ખૂબ દર્શન કરીને અતિશય સ્પૃહાવાળું અમારું મન વારંવાર મોહ પામે છે. ૧૭.

અમારું મન ઘણું ઈચ્છાવાળું છે અને તે મોહ પામે છે. ત્રણ ગુણ સહિત ત્રણ કારણને લીધે અમારા મનને મોહ થાય છે-વાક્ય, હાસ્ય અને વક્ષ:સ્થલ એ ત્રણ અનુક્રમે કામ, આનંદ અને અધિકારીનો બોધ કરે છે. (મધુરતા, મનોહર વાક્યો અને વિદ્વાનોને આનંદ આપનાર-આ ત્રણ ગુણો વાક્યના છે. આ ત્રણ ગુણવાળું ભગવાનનું વાક્ય, હાસ્યવાળું મુખ અને વક્ષ:સ્થલ એ ત્રણ મનને મોહ પમાડવાનાં કારણો છે. અથવા તો વાક્ય, હાસ્ય અને વક્ષ:સ્થલ એ ત્રણ મોહનાં કારણો છે અને તે દરેક કારણને એક ગુણ છે: વાક્યનો ગુણ ‘હૃચ્છયોદયમ્’, કામને જગાડનાર; હાસ્યનો ગુણ ‘પ્રેમવીક્ષણમ્’, પ્રેમપૂર્વક કટાક્ષવાળું; અને વક્ષ:સ્થલનો ગુણ ‘શ્રિયો ધામ’, શ્રીનું સ્થાન; આ પ્રમાણે ત્રણ કારણોના એકંદરે ત્રણ ગુણો છે. બંધ વિગેરેનું જ્ઞાન આપવાથી વાક્ય કામને જાગૃત કરે છે, હાસ્ય આનંદ ઉત્પન્ન કરે છે અને લક્ષ્મીનું ધામ હોવાથી વક્ષ:સ્થલ અધિકારીઓનો બોધ કરે છે.)

રહસ્યાં-એકાંતમાં-જે સંવિત્-વાક્ય અથવા પૂર્વવત્ જ્ઞાન.- (એકાંતમાં જ્ઞાન જે વાક્યે થાય તે વાક્ય ‘રહસિસંવિત્’ કહેવાય છે. અર્થાત્ જ્યારે વાક્યનું નિરૂપણ કરવામાં આવે ત્યારે જેમ વાક્યમાં મધુરતા વિગેરે ત્રણ ગુણો જોવામાં આવે છે તેમ તે વાક્યથી ઉત્પન્ન થતા જ્ઞાનમાં પણ એ ત્રણ ગુણો જોવામાં આવે છે. અર્થાત્ જ્ઞાન પણ પૂર્વવત્, વાક્યના જેવું જ, છે.) હૃચ્છયનો-કામનો-ઉદય જેનાથી થાય છે તે વાક્ય ‘હૃચ્છયોદયમ્’ છે. હાસ્યવાળું મુખ, જેમાં પ્રેમપૂર્વક કટાક્ષ છે. ભગવાનનું મોટું વક્ષ:સ્થલ લક્ષ્મીજીનું ધામ છે.

અથવા તો ભગવાનનું સ્વરૂપ છ ગુણોવાળું છે એમ આ શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે. (‘રહસિસંવિદમ્, હૃચ્છયોદયમ્, પ્રહસિતાનનમ્’ અને ‘પ્રેમવીક્ષણમ્’ એ ચારમાં બહુત્રીહિ સમાસ છે અને તે ભગવાનના સ્વરૂપનાં વિશેષણો છે. બાકીના બે ગુણો ‘બૃહદ્દર:’ અને ‘શ્રિયો ધામ છે’.) એકાંતમાં સંવિત્-વાક્ય-છે જેમાંથી એવા આપને (જોઈને,) કામનો ઉદય છે જેમાંથી, હાસ્યવાળું મુખ છે જેમનું, પ્રેમપૂર્વક કટાક્ષ છે જેમનાં, (એવા આપને જોઈને,) મોટું વક્ષ:સ્થલ અને લક્ષ્મીજીનું ધામ એ બે જોઈને (અમારું મન મોહ પામે છે.) (‘રહસિસંવિદમ્’માં ભગવાનના વાક્યનું કથન છે અને ભગવદ્વાક્ય તો સ્પષ્ટ પ્રમાણરૂપ જ છે. ‘હૃચ્છયોદયમ્’માં પ્રમેયબલનું

કથન કર્યું છે, કારણ કે ભગવાનના પ્રમાણરૂપ શૃંગારરસવાળાં વાક્યોથી કામના ઉદયનું જ જ્ઞાન થાય છે. ‘પ્રલસિતાનનમ્’માં સાધનનું વર્ણન છે, કારણ કે આવા હાસ્યવાળું ભગવાનનું શ્રીમુખ બધાં ફલો સાધી શકે છે. ‘પ્રેમવીક્ષણમ્’માં ફલનું વર્ણન છે, કારણ કે ભગવાન પ્રેમપૂર્વક ભક્તો તરફ જુએ એ જ વાત ફલ તરીકે સિદ્ધ કરવાની છે.) આ પ્રમાણે ચાર વિશેષણો વડે ભગવાનના સ્વરૂપમાં પ્રમાણ, પ્રમેય, સાધન અને ફલ એ ચાર પ્રકારના બલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. આ શ્લોક બોલનારાં ગોપીજનોને ભગવાનના વક્ષઃસ્થલ ઉપર સ્થિતિ કરવાને માટે ‘બૃહદ્દુરઃ’ એ પદ વડે યશનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે (ભગવાનનું વક્ષઃસ્થલ મોટું છે; અને મોટું વક્ષઃસ્થલ યશનું સૂચન કરે છે એમ શાસ્ત્ર કહે છે. એટલે ‘બૃહદ્દુરઃ’ એ પદ વડે યશનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે); અને ‘શ્રિયો ધામ’ એ પદ વડે શ્રીનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

ભગવાનના હાસ્યયુક્ત મુખનું દર્શન કરતાંની સાથે જ ગોપીજનોની પૂર્વ સ્થિતિ નષ્ટ થઈ ગઈ. (ગોપીજનોને જે પહેલાં માન હતું તે ભગવાનના હાસ્યવાળા મુખનું દર્શન કરવાથી જતું રહ્યું. હાસ્ય એ માયા છે તેથી ગોપીજનોનું માન નષ્ટ થઈ ગયું અને તેમને ભગવાનને માટે પરમ ઉત્કંઠા થઈ. આ પ્રમાણે ‘પ્રલસિતાનનમ્’ એ પદ વડે ગોપીજનોનું માન જતું રહ્યું એમ કહેવામાં આવ્યું.) પછી ‘હચ્છયોદયમ્’ એ પદ વડે કામનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું અને ‘પ્રેમવીક્ષણમ્’ એ પદ વડે તે કામ સ્થિર કરવામાં આવ્યો એમ કહેવામાં આવ્યું છે. પછી ‘બૃહદ્દુરઃ શ્રિયો ધામ’ એ શબ્દો વડે ‘ભગવાનના મોટા વક્ષઃસ્થલ ઉપર સ્થિતિ કરવાને માટે અમારી-ગોપીજનોની-યોગ્યતા છે’ એમ કહેવામાં આવ્યું. પછીથી ‘રહસિસંવિદમ્’ એ પ્રથમ વિશેષણ વડે ‘એકાંતમાં જે રસસંબંધી વાક્યો તેનાથી અમને-ગોપીજનોને-ભોગ કરવાની હોંશિઆરી પણ સિદ્ધ થાય છે’ એમ કહેવામાં આવ્યું.

આ પ્રમાણે અમને બધું જ સિદ્ધ થઈ જશે એ વિચારથી અતિ સ્પૃહાવાળું અમારું મન મોહ પામે છે, કેવલ મોહ પામે છે, ઈષ્ટ પદાર્થ નહિ મળવાથી વારંવાર મૂર્છા પામે છે. આ પ્રમાણે અમે બરોબર જીવી શકતાં નથી તેમ જ મરી પણ જતાં નથી-જીવન અને મરણ એ બેમાંથી એક પણ થતું નથી-તેથી ‘ધિક્કાર છે આ જીવનને!’ એ પ્રમાણે ગોપીજનોના કહેવાનો અર્થ છે. આ પ્રમાણે આ શ્લોકમાં ગોપીજનોએ પોતાની નિંદા કરી. ૧૭.

હવે અત્યાર સુધી મનોરથ કરતી અનન્યપૂર્વા તામસસાત્ત્વિક ગોપીજન ‘પ્રજવનોકસામ્’ એ શ્લોકમાં કાંઈક પ્રાર્થના કરે છે:

प्रवृत्तौ क्सां व्यक्तिरंग! ते वृत्तिनलन्त्यलं विश्वमङ्गलम् ।

त्वज मनाङ् य नस्त्वत्स्पृहात्मनां स्वजनहृद्गुणं यन्निषूदनम् ॥१८॥

હે અંગ! આપની વ્યક્તિ-આપનું સ્વરૂપ-વ્રજવાસીઓના પાપનો નાશ કરનારી છે અને અખિલ વિશ્વને મંગલરૂપ છે. સ્વજનના-ગોપીજનોના-હૃદયના રોગોનો જેનાથી નાશ થાય તેવા આપના સ્વરૂપનું જરા પણ દાન આપની સ્પૃહાવાળાં અમને કરો. ૧૮.

આપનું આ સ્વરૂપ વ્રજવાસીઓના વૃત્તિનનો-પાપનો-નાશ કરનારું છે; અને વળી અખિલ વિશ્વને ઘણું મંગલરૂપ છે, અર્થાત્ આપનું સ્વરૂપ ખાસ કરીને અમારા જ દોષનું નિવારણ કરનાર છે, બધાંને તો તે ગુણ આપનારું છે. તેથી આ પ્રકારના આપના આનંદમય સ્વરૂપનું જરાક પણ અમારામાં સ્થાપન કરો. ભગવાને પોતાના સ્વરૂપનું સ્થાપન અમારા વિષે કરવું જ જોઈએ તેનું કારણ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ત્વત્સ્પૃહાત્મનામ્’, આપની સ્પૃહાવાળાં. આપનામાં જ સ્પૃહાવાળો આત્મા-અંતઃકરણ-છે જેમનો એવાં અમે-ગોપીજનો-છીએ.

‘મારે શાનું સ્થાપન કરવું’ એમ જો ભગવાનને શંકા થાય તો ગોપીજન કહે છે કે ‘સ્વજન’. સ્વજનોના-ગોપિકાઓના-કામરૂપી હૃદયરોગોનો જે વસ્તુ સંપૂર્ણ નાશ કરે છે તેનું-ભગવાનના સ્વરૂપનું-સ્થાપન અમારે વિષે કરો. નિષૂદન એટલે જે વસ્તુથી સંપૂર્ણ નાશ થાય તે. કેટલાકના પાપોનો નાશ કરનાર અને કેટલાકને ફલનું દાન કરનાર એવા આપ અમારા કામરૂપી રોગનો નાશ કરો એમ આ શ્લોકમાં ગોપીજન ભગવાનને પ્રાર્થના કરે છે. ૧૮.

કોઈક રાજસતામસી અનન્યપૂર્વા ગોપીજન ખેદ સાથે કહે છે કે ‘યત્તે’:

યત્ તે સુજાતચરણામ્બુરુહં સ્તનેષુ ભીતાઃ શનૈઃ પ્રિય! દધીમહિ કર્કશેષુ ।

તેનાટવીમટસિ તદ્ વ્યથતે ન કિંસ્વિત્ કૂર્પાદિભિર્ભ્રમતિ ધીર્ભવદાયુષાં નઃ ॥૧૯॥

હે પ્રિય! અમે અમારા કઠિન સ્તનો ઉપર આપનું જે સુંદર ચરણકમલ બીતાં-બીતાં ધીમેથી પધરાવીએ છીએ તે કોમલ ચરણકમલ વડે આપ વનમાં ફરો છો, તેથી આપ જેમનું જીવન છો એવી અમે જે ગોપીઓ તેમની બુદ્ધિને ભ્રમ થાય છે કે આપના તે કોમલ ચરણકમલને કાંકરાઓ વિગેરેથી દુઃખ નહિ થતું હોય? ૧૯.

સુજાત-સુંદર જે આપનું ચરણાંબુરુહ-ચરણકમલ તેને અમે બીતાં બીતાં ધીમેથી સ્તનો ઉપર પધરાવીએ છીએ. ભગવાનનું ચરણારવિંદ સ્તનો ઉપર ધીમેથી પધરાવવાનું કારણ દર્શાવતાં ગોપીજનો કહે છે કે ‘કર્કશેષુ’, સ્તનો કર્કશ-કઠિન છે તેથી. ગોપીજન ભગવાનને ‘પ્રિય’ એ પ્રમાણે સંબોધન કરે છે તેથી માલમ પડે છે કે

ગોપીજન ભગવાનું સુંદર ચરણકમલ સ્નેહથી પોતાના સ્તનો ઉપર પધરાવે છે. આપનું ચરણકમલ સુજાત છે, એટલે કે મોટું, સારી રીતે ખીલેલું, શીતલ, સુગંધિ અને તાપનાશક છે. તેથી આપનું સુંદર ચરણકમલ અમે અમારા સ્તનો ઉપર પધરાવીએ છીએ. ભગવાન્ ગોપીજનના પ્રિય છે, તેથી ગોપીજન ભગવાનનું ચરણકમલ પોતાના સ્તનો ઉપર ઘૂષ્ટતાથી-હિંમતથી પધરાવે છે. અમારા દોષને લીધે અમારો ત્યાગ કરીને આપ તે કોમલ ચરણકમલ વડે વનમાં ફરો છો.

પોતે દુઃખી થયા વિના જો બીજાને દુઃખ આપી શકાય તો પછી તે બીજાને દુઃખ આપે, પરંતુ પોતે પણ દુઃખી થાય તો બીજાને દુઃખ ન આપે. તેથી અમને સંદેહ થાય છે કે આપને દુઃખ થાય છે કે નહિ. ‘સ્વિત્’ એ પદ ઉત્પ્રેક્ષા-કલ્પનાના અર્થમાં વપરાએલું છે. આપને દુઃખ નથી થતું? અર્થાત્ દુઃખ થાય છે જ. (આ પ્રમાણે અમે ઉત્પ્રેક્ષા કરીએ છીએ.) કૂર્પથી-કાંકરાઓથી આપને દુઃખ થાય છે જ. કૂર્પ શબ્દનો અર્થ ખરબચડા કાંકરાઓ થાય છે.

જો ખરબચડા કાંકરાઓથી ભગવાનના કોમલ ચરણકમલને દુઃખ થાય છે જ, તો પછી દુઃખ થાય છે એવી કલ્પના શા માટે કરવામાં આવે છે? આના ઉત્તરમાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ભ્રમતિ ધીઃ’, અમારી બુદ્ધિ કેવલ પરિભ્રમણ કરે છે. આપને દુઃખ થાય છે એવો નિશ્ચય જો થાય તો પછી અમારી બુદ્ધિ શાંત જ થઈ જાય, અર્થાત્ અમને મૂર્છા જ આવે. (કાંકરાઓથી દુઃખ થાય એ વાત પ્રસિદ્ધ છે એટલે અમને એમ લાગે છે કે આપને-ભગવાનને-દુઃખ થાય છે.) પણ વનમાં આપ ફરીથી પધારો છો. (જો આપને દુઃખ થતું હોય તો આપ વનમાં ફરીથી પધારો નહિ, તેથી અમને લાગે છે કે આપને દુઃખ નહિ થતું હોય.) આ પ્રમાણે (આપને દુઃખ થતું હશે અને નહિ થતું હોય એમ બે પ્રકારનું વિરુદ્ધ જ્ઞાન થવાથી) અમને સંદેહ થાય છે.

અમારી બુદ્ધિ પરિભ્રમણ કરે છે તેનું કારણ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ભવદાયુષામ્’. આપની લીલાને માટે જ આયુષ્ય છે જેમનું એવાં અમે છીએ. પહેલાં ‘શિલતૃણાંકુરૈઃ’ એ અગીઆરમા શ્લોકમાં ભગવાનનું ચરણકમલ પથ્થર, તૃણ, દર્ભ વિગેરેના અંકુરોથી ક્લેશ-ખેદ-પામે છે તે જાણીને ગોપીજનોના મનમાં જે પીડા થતી હતી તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, જ્યારે આ શ્લોકમાં તો ગોપીજનોની મૂર્છાંપી છેલ્લી સ્થિતિનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે તેમની બુદ્ધિ ભ્રમણ કરે છે. (અર્થાત્ અગીઆરમા શ્લોકમાં ગોપીજનોના મનની પીડાનું વર્ણન કર્યું અને આ શ્લોકમાં તેમની મૂર્છાંનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું એટલે કોઈ જાતની પુનરુક્તિ નથી. મૂર્છાં એ નવમી અવસ્થા છે અને તેની પછી આગળ બીજી



અવસ્થા ન હોવાથી તે છેલ્લી જ અવસ્થા ગણાય છે.) (અથવા તો પહેલાં એટલે પૂર્વ-સત્તાવીસમા અધ્યાયને અંતે ખેદ વડે મનની પીડાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું અને અહિં-આ અઠ્ઠાવીસમા અધ્યાયમાં-તો મૂછાંરૂપી છેલ્લી સ્થિતિનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.) આ પ્રમાણે બધાં ગોપીજનોની મૂછાં સુધીની સ્થિતિ જાણવી. (ગોપીજનોની અંદર ભગવાને લીલાસહિત પ્રવેશ કરેલો છે. વિરહાવસ્થામાં ગોપીજનોની સ્થિતિ કોઈક વખત ભગવલ્લીલામાં થાય છે, તો કોઈક વખત ભગવત્સ્વરૂપમાં થાય છે.) ફરીથી ગોપીજનોની જ્યારે લીલામાં સ્થિતિ થાય છે ત્યારે તેઓ પ્રલાપ-પ્રશ્ન કરે છે; (અર્થાત્ પ્રશ્ન અંતરંગ છે, તેથી પ્રલાપરૂપ પ્રશ્નના કથનથી સત્તાવીસમા અધ્યાયમાં જણાવેલાં રસાસક્તિ, હરિક્રિયા અને ગર્વાભાવ એ ત્રણનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે એમ જાણવું;) પરંતુ જ્યારે ગોપીજનોની સ્થિતિ ભગવાનના સ્વરૂપમાં થાય છે ત્યારે આ અધ્યાયમાં જણાવ્યા પ્રમાણે ગાન થાય છે. (આ પ્રકારે વિરહાવસ્થામાં ભગવાનની લીલામાં પ્રવેશ કરવાથી રસાસક્તિ, હરિક્રિયા અને ગર્વાભાવ એ ત્રણ, અને ભગવાનના સ્વરૂપમાં પ્રવેશ કરવાથી ગાન-એમ બધાં મળીને ચારની વારંવાર આવૃત્તિ થયા કરે છે.)

આ પ્રમાણે સાધન અને પરીક્ષાના અંત સુધી ગોપીજનના તાપના સ્વરૂપનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. (અર્થાત્ આ પ્રકારે ભગવાનને મેળવવાને માટે ભક્તો જે સાધનો કરે છે તે સાધનોની જેટલી પરાકાષ્ટા છે તેટલી પરાકાષ્ટાનું વર્ણન થયું, અને ભગવાને ભક્તોના સ્નેહની જે પરીક્ષા કરી તે પરીક્ષાની જેટલી પરાકાષ્ટા છે તેટલી પરાકાષ્ટાનું વર્ણન થયું.) ૧૯.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં  
શ્રીમદ્વલ્લભદીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં  
બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલપ્રકરણના યથ નિરૂપક  
૨૮ મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.



## ॥ अध्याय ओगण्णीसमा ॥

गोपीजनोनी दीनताथी भगवाननी प्रसन्नता अने प्राकट्य.

अकोनत्रिंशकेऽध्याये प्रसादं भगवत्कृतम् ।

रोदनात् प्राप्य तुष्टास्ता निर्णयज्ञा ईतीर्यते ॥का. १॥

गोपीजनोने ज्यारे अभिमान थयुं त्यारे भगवान् अंतर्हित थई गया अने तेथी गोपीजनोअे रुदन कर्तुं. (ज्यारे माणस निःसाधन थाय छे त्यारे ते केवल दीन बने छे अने रे छे, अने ते ज समये भगवान् तेना उपर कृपा करे छे.) तेथी भगवान् इरीथी प्रकट थया अने पोताना हस्तकमलनो स्पर्श विगरेनुं दान गोपीजनोने कर्तुं. आ प्रमाणे भगवाने गोपीजनोना उपर कृपा करीने तेमनो अभिमान दूर कर्तुं. भगवाननी आ कृपा गोपीजनोअे रडीने भेणवी अने पोते संतुष्ट थयां, अने 'मिथो भजन्ति' विगरे भगवाननां वयनो सांभणीने निर्णय ज्ञायुं. आ बधो प्रसंग ओगण्णीसमा अध्यायमां वर्णन करवामां आवे छे. १.

न हि साधनसम्पत्त्या हरिस्तुष्यति कस्यचित् ।

भक्तानां दैन्यमेवैकं हरितोषणसाधनम् ॥का. २॥

(भगवान् गोपीजनोनुं अभिमान बीजे प्रकारे पण दूर करवा समर्थ छे, तो पछी गोपीजनो रडी रद्यां त्यां सुधी भगवाने राह जेई ते अयोग्य छे. आ प्रमाणे जे शंका करवामां आवे तो श्रीमदाचार्यवरण तेनुं समाधान करे छे के भगवान् ज्यारे अंतर्हित थाय छे त्यारे 'आत्मा यावत् प्रपन्नोऽभूत्' अे छवीसमा अध्यायना आरंभमां आवेली नवमी कारिकां जेम शास्त्रनी मर्यादा जणावेली छे तेम भगवान् आविर्भाव पामे त्यारे पण निःसाधनताइपी शास्त्रनी मर्यादा होय छे.) 'हुं अमुक साधन करीने भगवानने प्राप्त करूं' अेम मानीने जे साधनो करवामां आवे छे ते साधनोथी भगवान् कोई दिवस कोईना उपर प्रसन्न थता नथी, कारण के भक्तोनी दीनता अे अेक ज वस्तु भगवानने प्रसन्न करवानुं साधन छे. (भगवान् ज्यारे गोपीजनोना अभिमानने लीधे तिरोहित थई गया त्यारे भगवानने भेणववाने माटे गोपीजनोअे साधनबुद्धिथी-आ करवाथी भगवान् मणशे अे बुद्धिथी-प्रलापइपी प्रश्न अने गान कर्तुं. पण ज्यारे प्रलाप अने गान भगवानने प्रकट करी शक्यां नहि त्यारे गोपीजनोने पोतानी निःसाधनतानो ज्याल आव्यो अने दीन बनी तेओ रड्यां. रुदन अे भगवानने भेणववानुं साधन छे अेम ज्ञाणीने गोपीजनो रड्यां नथी, पण प्रलाप अने गान अे बे पोतानां साधनो निष्फल

નીવડ્યાં એટલે તેમનામાં દૈન્ય આવ્યું અને તેને પરિણામે તેઓ રડી પડ્યાં.) ૨.

સન્તુષ્ટઃસર્વદુઃખાનિનાશયત્યેવ સર્વતઃ ।

અતો નિર્ણયવાક્યાનિ ભજનાર્થં ન્યરૂપયત્ ॥કા.૩॥

ભગવાન્ જ્યારે સંતુષ્ટ થાય છે ત્યારે બધાં દુઃખો સર્વ પ્રકારે નાશ કરે છે જ, તેથી દુઃખનો સંપૂર્ણ નાશ કરવાને પરાક્ષ ભજનનું પ્રતિપાદન કરવા માટે ‘મિથો ભજન્તિ’ વિગેરે નિર્ણય કરનારાં વાક્યો ભગવાને વર્ણવ્યાં. (પુષ્ટિમાર્ગમાં દુઃખ એટલે આનંદનો અભાવ. આનંદથી આનંદાભાવ-દુઃખ-નાશ પામે છે જ. આનંદમય પ્રભુ જ્યારે ભક્તથી સંતુષ્ટ થાય છે ત્યારે પ્રકટ થાય છે, અને આનંદમય સ્વરૂપ પ્રકટ થતાં જ ભક્તનાં બધાં દુઃખો સંપૂર્ણ નાશ પામે છે જ. આ હેતુથી આ કારિકામાં ‘એવ’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. આનંદમય પ્રભુના પ્રાકટ્યથી જ ભક્તનાં બધાં દુઃખો નાશ પામે છે એમ જો ન માનીએ તા ગોપીજનોનું ભગવાનના તિરોધાનથી થએલું દુઃખ ભગવાનના પ્રાકટ્યથી નાશ પામે નહિ; પણ ભગવાનના પ્રાકટ્યથી ગોપીજનોનું દુઃખ જતું જ રહે છે.) ૩.

આ પ્રમાણે શુકદેવજીએ ગયા-અઠાવીસમા - અધ્યાયમાં ગોપીજનોએ કરેલી ભગવાનની સ્તુતિનું વર્ણન કર્યું, અને તેની પહેલાંના-સત્તાવીસમા- અધ્યાયમાં ગોપીઓના પ્રલાપનું વર્ણન કર્યું. આ બંનેનો-સ્તુતિ અને પ્રલાપનો- પણ ઉપસંહાર કરતાં શુકદેવજી ‘ઈતિ ગોપ્યઃ’ એ શ્લોકમાં કહે છે કે ત્યારે પ્રલાપ અને સ્તુતિ એ બે સાધનો ભગવાનની પ્રાપ્તિ કરાવી શક્યાં નહિ ત્યારે ગોપીજનો નિઃસાધન બનીને રોવા લાગ્યાં :

ઈતિ ગોપ્યઃ પ્રગાયન્ત્યઃ પ્રલપન્ત્યશ્ચ ચિત્રધા ।

રુરુદુઃ સુસ્વરં રાજન્ કૃષ્ણદર્શનલાલસાઃ ॥૧॥

હે રાજન્! પહેલાં વર્ણન કર્યું તે પ્રમાણે ગાતી અને અનેક પ્રકારે પ્રલાપ કરતી ગોપીઓ શ્રીકૃષ્ણના દર્શનની ઈચ્છાથી ઊંચે સ્વરથી રડવા લાગી. ૧.

પહેલાં વર્ણન કર્યું તે પ્રકારે બધાં જ ગોપીજનો ગાવા અને પ્રલાપ કરવા લાગ્યાં. (ગોપીજનોના ગાન અને પ્રલાપના અનેક પ્રકાર હતા, પણ) અહિં તો અમે એક જ પ્રકાર વર્ણવ્યો છે. તે ગોપીજનો તો અનેક પ્રકારે વિલાપ કરતાં હતાં. જ્યારે ગાન અને વિલાપ એ બે ભગવાનની પ્રાપ્તિ કરાવી શક્યાં નહિ અને સાધન નિષ્ફળ ગયાં ત્યારે બધાં ગોપીજનો એકઠાં મળીને મોટેથી રડવા લાગ્યાં. ગોપીજનોના રડવાનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કૃષ્ણદર્શનલાલસાઃ’, કૃષ્ણના દર્શનની

ઈચ્છાવાળાં તે હતાં. ભગવાનનાં દર્શન કરવાની ઈચ્છાથી જ, નહિ કે પોતાના દેહના રક્ષણને માટે, ગોપીજનોએ રુદન કર્યું. ૧.

પછીથી ભગવાન્ બ્રહ્મા, વિષ્ણુ અને રુદ્ર થઈને ફરીથી પાછા કૃષ્ણ જ થયા એમ ‘તાસામાવિરભૂત્’ એ શ્લોકમાં ગોપીજન કહે છે.

(ભગવાન્ બ્રહ્મા, વિષ્ણુ અને રુદ્ર કેવી રીતે થયા અને પછીથી કૃષ્ણ કેવી રીતે થયા તે વાત શ્રીવિક્લનાથજી ટિપ્પણીમાં આ પ્રમાણે સમજાવે છે :

પ્રથમ બ્રહ્મકલ્પમાં ભગવાન જ ચતુર્મુખ બ્રહ્મા થયા અને પહેલાં તપ કર્યું. ‘શબ્દ અને અર્થથી તે ભગવાને બ્રહ્માનું રૂપ ધારણ કરીને નામ અને રૂપનું ધારણ કર્યું’, ‘જે પરમાત્માને તત્ત્વચિંતકો શબ્દબ્રહ્મ તરીકે જાણે છે’ એ વાક્યોને આધારે સ્પષ્ટ જણાય છે કે ભગવાને શબ્દસૃષ્ટિ અને અર્થસૃષ્ટિ કરીને, તેમાં પ્રવેશ કરીને, બધું કાર્ય કર્યું અને પોતે રજોગુણરૂપ રહ્યા. ગોપીજનના આ ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ભગવાન્ પહેલાં ગોપીજનોના રજોરૂપ અભિમાનરૂપે, પછીથી તાપરૂપે, પછીથી વિવિધ ગાન અને પ્રલાપરૂપે, અને પછીથી વિવિધ લીલારૂપે પ્રકટ થયા. આ પ્રકારે પ્રથમ ભગવાને બ્રહ્માનું રૂપ ધારણ કરીને રજોગુણનું કાર્ય કર્યું.

વિષ્ણુ પોતે વિક્ષેપરહિત અને શુદ્ધસત્વાત્મક છે, અને જેનું જે પ્રકારે રક્ષણ થાય તેનું તે પ્રમાણે રક્ષણ કરે છે. ગોપીજનના ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ગોપીજનોએ પોતાની સખીનાં વચનો સાંભળીને, ‘ભગવાન્ આપણા પોતાના દોષને લીધે જ જતા રહ્યા છે’ એ પ્રમાણે જાણ્યું અને પોતાના ચિત્તના વિક્ષેપનો ત્યાગ કર્યો. પછીથી તે પોતાને સ્થાને-શ્રીયમનાજીના તટ ઉપર-આવ્યાં અને પોતે જીવી શકે તેટલા માટે પોતપોતાનો ભાવ પ્રકટ કર્યો. આ પ્રમાણે ગોપીજનના ભાવરૂપે ભગવાન્ પ્રકટ થયા અને તે ભાવ દ્વારા ગોપીજનોના જીવનું રક્ષણ કરીને વિષ્ણુના સત્ત્વગુણનું કાર્ય-રક્ષણ કરવાનું કાર્ય-કર્યું.

‘રુદન કર્યું તેથી રુદ્ર રુદ્ર કહેવાયા’ એ શ્રુતિ ઉપરથી ભગવાનનું રુદ્ર સ્વરૂપ સ્પષ્ટ જણાઈ આવે છે. રુદ્રનો ઈતિહાસ શ્રુતિમાં આ પ્રમાણે આપવામાં આવેલો છે. દેવો જ્યારે પોતાનું ધન અગ્નિને સોંપીને યુદ્ધ કરવા ગયા ત્યારે અગ્નિ તે ધન લઈને જતો રહ્યો. પછીથી જ્યારે દેવોએ અગ્નિ પાસેથી બલાત્કારથી પોતાનું ધન લઈ લીધું ત્યારે અગ્નિ દુઃખથી રડવા લાગ્યો, અને તેથી અગ્નિ રુદ્ર કહેવાયો. ગોપીજનોના ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ભગવાને પોતાના ભોગને માટે સ્વામિનીજીઓને, બીજાઓને આપી શકાય નહિ એવો પોતાનો રસ આપ્યો. પરંતુ સ્વામિનીજીઓએ તો ગર્વથી તે રસ પોતાનામાં જ રોકી રાખ્યો. પછીથી ભગવાને જ્યારે સ્વામિનીજીઓનું

અભિમાન દૂર કર્યું ત્યારે ગોપીજનોએ નિઃસાધન બનીને અતિ દૈન્ય પ્રકટ કર્યું અને રડવા માંડ્યું. જેમ સ્ફુલ્લ સર્વનો નાશ કરે છે તેમ રુદનમાં જણાતો ગોપીજનોનો આ દીનભાવ-નિઃસાધન ભાવ-શાસ્ત્રમાં વણવિલાં બધાય સાધનોના બલનો નાશ કરે છે; કારણ કે જ્યાં સુધી જીવને પોતાના સાધનના બલની સ્ફૂર્તિ છે ત્યાં સુધી આ દીન ભાવ આવતો નથી અને ભગવાન્ પ્રકટ થતા નથી. જ્યારે દીન ભાવ પ્રકટ થાય છે ત્યારે સાધનોના બલની સ્ફૂર્તિનો નાશ થાય છે અને પ્રભુ પ્રકટ થાય છે. સર્વનો નાશ કરવો અને રુદન કરવું એ સ્ફૂર્તિનું કાર્ય છે; ગોપીજનોના સર્વ સાધનોની સ્ફૂર્તિનો નાશ થયો અને તેમણે દીનતાથી રુદન કર્યું તે સર્વ ભગવાને સ્ફૂર્તિ ધારણ કરીને તમોગુણનું કાર્ય કર્યું.

“ ‘કૃષ્’ ધાતુ સત્તાવાચક છે અને ‘ણ’ આનંદવાચક છે; તે બેને-‘કૃષ્’ અને ‘ણ’ને-જોડવાથી ‘કૃષ્ણ’ શબ્દ થાય છે અને તેનો અર્થ સદાનંદ પરબ્રહ્મ એ પ્રમાણે થાય છે.” આ વાક્ય ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ભગવાન્ પોતે હંમેશાં જો કે કૃષ્ણ જ છે, છતાં પણ ગોપીજનોનો નિઃસાધન ભાવ પ્રકટ થયા પછી તરત જ બીજી ક્ષણે જ ભગવાન્ જો પ્રકટ ન થાય તો ભક્તોના દેહ વિગેરે ટકી શકે જ નહિ, કારણ કે બધાય પદાર્થોનો નાશ કરે એવો દૈન્યભાવ જ્યારે ગોપીજનોમાં પ્રકટ થયો ત્યારે તેમનું પહેલાં જે સત્ત્વ-અસ્તિત્વ-હતું તે નાશ પામી જાય. તેથી ભગવાન્ પોતે પ્રકટ થઈને પોતાનાં સ્વરૂપાત્મક સત્ત્વ-અસ્તિત્વ-અને આનંદ ગોપીજનોમાં સ્થાપે છે. આ કારણથી જ ગોપીજનોના રુદન પછી જે ભગવાન્ પ્રકટ થયા તે સદાનંદ કૃષ્ણ જ છે એમ સ્પષ્ટ જણાય છે.) :

તાસામ્ આવિરભૂત્ શૌરિઃ સ્મયમાનમુખામ્બુજઃ ।

પીતામ્બરધરઃ સ્ત્રઙ્ખી સાક્ષાદ્ મન્મથમન્મથઃ ॥૨॥

તેમની-રુદન કરતાં ગોપીજનોની-વચ્ચે કાંઈક હસતા મુખે પીતાંબરધારી, વનમાલા ધારણ કરનાર, સાક્ષાત્ કામદેવના પણ કામદેવ એવા શૂર વંશમાં પ્રકટ થએલા ભગવાન્ પ્રકટ થયા. ૨.

રુદન કરતાં તે ગોપીજનોની વચ્ચે જ ભગવાન્ પ્રકટ થયા; માયાનો પડદો દૂર કરીને ભગવાન્ પ્રકટ થયા; કારણ કે ભગવાન્ શૌરિ છે. શૌરિ એટલે શૂરના પુત્રનો પુત્ર. ગોપીજનો જે સમયે રુદન કરે છે તે સમયે શૌર્ય, અશ્વવીસમા અધ્યાયના ‘સુરતવર્ધનમ્’ ઈત્યાદિ ચૌદમા શ્લોકમાં વણવિલું ભગવાનનું દાનવીરત્વ, ન આપી શકાય એવા પદાર્થનું પણ ભગવાન્ દાન આપે છે તેમાં જણાતું દાનવીરત્વ, પ્રકટ કરવાની જરૂર હોય છે, એટલે શુકદેવજી મૂલ શ્લોકમાં ભગવાનને માટે ‘શૌરિઃ’ એ

પદ વાપરે છે. ભગવાને આવા પ્રકારનું શૌર્ય આ સમયે બતાવવું જોઈએ, કારણ કે સર્વનાં દુઃખોનો નાશ કરવાને માટે જ ભગવાને યદુવંશમાં અવતાર લીધો છે.

ગોપીજનોના રુદનને લીધે જ્યારે ભગવાન્ પ્રકટ થયા ત્યારે અઠ્ઠાવીસમા અધ્યાયના ‘નિજજનસ્મય’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં જણાવ્યા પ્રમાણે ગોપીજનોના દોષો દૂર કરવાને માટે કાંઈક હસતે મુખે ભગવાન્ પ્રકટ થયા. ‘સ્મયમાન’-હસતું-‘મુખામ્બુજ’-મુખકમલ-છે જેમનું તે ભગવાન્ ‘સ્મયમાનમુખામ્બુજ’ કહેવાય છે; અર્થાત્ કાંઈક હસતા મુખે ભગવાન્ પ્રકટ થયા. ગોપીજનોની દીનતાથી ભગવાન્ પ્રસન્ન થયા. ‘સ્મયમાન’ એટલે સ્મિતવાળું. અથવા તો ‘સ્મયમાનમુખામ્બુજ’નો બીજે પ્રકારે પણ અર્થ થઈ શકે. સ્મય અને માનવાળું મુખાંબુજ છે જેમનું તે ‘સ્મયમાનમુખામ્બુજ’ કહેવાય છે. (જેના ભક્તો આવા પ્રકારના-ગોપીજનોના-જેવા હોય એવો બીજો કોઈ નથી એ પ્રકારનો સ્મય; અને તેથી જ જ્યારે આ ગોપિકાઓ મને પ્રાર્થના કરશે ત્યારે બીજા પણ મારા ભક્તને આ રસનું હું દાન કરીશ, નહિ તો-ગોપિકાઓ મને વિનંતી નહિ કરે તો-મુક્તિનું જ દાન કરીશ એ પ્રકારનું માન. આ પ્રકારના સ્મય અને માનવાળું મુખાંબુજ છે જેમનું એવા ભગવાન્. આજ કારણથી ભગવાનના મુખને અંબુજ-કમલ-કહેવામાં આવ્યું છે, કારણ કે કમલ સૂર્યના કિરણોનો સંબંધ થતાં વાર જ વિકાસ પામી રસ પ્રકટ કરે છે. આપણા ચાલતા વિષયમાં પણ ગોપીજનોએ ભગવાનની જે પ્રાર્થના કરી તે જ સૂર્યના કિરણને સ્થાને છે. અર્થાત્ જેમ સૂર્યના કિરણોથી કમલ વિકાસ પામીને રસ પ્રકટ કરે છે, તેમ ગોપીજનોની પ્રાર્થનાથી ભગવાનનું મુખકમલ સ્મય અને માનવાળું થઈને રસ પ્રકટ કરે છે.) ભક્તોનો દોષ તેમનામાંથી નીકળીને ભગવાનના મુખારવિંદરૂપી ભક્તિમાં જાય છે એમ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ભગવાનનું મુખકમલ સ્મય અને માનવાળું છે. વિચાર કરતાં એમ નિશ્ચય થાય છે કે ભગવદ્રસનું પાન કર્યા પછી જ તેવો ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી ભગવાનનો જ અથવા ભક્તિમાર્ગનો જ એ સ્મય-માન ધર્મ છે.

ગોપીજનોની વચમાં જે વખતે ભગવાન્ પ્રકટ થયા તે વખતનું તેમના સ્વરૂપનું શુકદેવજી વર્ણન કરે છે કે ‘પીતામ્બરઘર:’, પીતાંબર ધારણ કરનાર. હાસ્યનો સંકોચ કરવાને માટે રસિક પુરુષોની માફક ભગવાન્ પીતાંબર હાથમાં ધારણ કરીને ઉભા છે. (જો ‘પીતામ્બરઘર:’નો આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં ન આવે તો શુકદેવજીએ ફક્ત ‘પીતામ્બર:’ કહ્યું હોત તો ચાલત, ‘ઘર:’ કહેવાની જરૂર રહેત નહિ. પણ શુકદેવજી કહે છે કે ‘પીતામ્બરઘર:’, તેથી ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે અર્થ

પ્રાપ્ત થાય છે.)

(‘પીતામ્બરધર:’નો જો ઉપર પ્રમાણે અર્થ કરવામાં આવે તો આખા શ્લોકનો અર્થ એવો થાય છે માયાના પડદાને દૂર કરીને ભગવાન્ ગોપીજનોની વચમાં પ્રકટ થયા. આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં ભગવાનનું આગમન-બીજે સ્થલેથી ગોપીજનોની પાસે આવવું તે-સંભવતું નથી, તેથી ‘તં વિલોક્યાગતમ્’ એમ ત્રીજા શ્લોકમાં ભગવાનના આગમનનું જે વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તેનો બાધ થાય છે. આ કારણથી શ્રીમહાપ્રભુજી ‘પીતામ્બરધર:’નો બીજો અર્થ આપે છે કે) અથવા તો અત્યાર સુધી વ્યાપિવૈકુંઠમાં પુરુષોત્તમસ્વરૂપે લક્ષ્મીજીની સાથે રમણ કરીને તે જ રૂપે ભગવાન્ હમણાં ગોપીજનોની વચમાં પ્રકટ થયા. (‘મયા પરોક્ષ ભજતા’-હું પરોક્ષ ભજન કરું છું-એ વાક્ય ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાન્ શ્રીકૃષ્ણ તો આ ગોપીજનોની જ પાસે હતા. તેથી ‘તં વિલોક્યાગતમ્’ એમ ત્રીજા શ્લોકમાં ભગવાનના આગમનનું જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તેનું રહસ્ય સમજવાને માટે આપણે અવશ્ય માનવું જોઈએ કે પહેલાં ગોપીજનોની વચમાં ભગવાનની સ્થિતિ જે રૂપે ન હતી તે રૂપે હમણાં ભગવાન્ ગોપીજનોની વચમાં પ્રકટ થયા અને તે દષ્ટિએ ભગવાનનું આગમન સંભવિત છે. ભગવાન્ ગોપીજનોની વચમાં જ ઉભેલા હતા એટલે તેમનું આગમન સંભવી શકતું નથી, છતાં પણ તેમના આગમનની વાત કરવામાં આવે છે તેથી આપણે અવશ્ય એમ માનવું પડે છે કે જે રૂપે ભગવાનની સ્થિતિ ન હતી તે રૂપે હવે એમની સ્થિતિ થઈ, અને તેનું નામ જ આગમન. વ્યાપિવૈકુંઠમાં પુરુષોત્તમ જ બિરાજે છે, અંશ નહિ, અને વ્રજમાં લક્ષ્મીજીને ભગવદ્રસનો કદાચિત્ પણ અવસર મળવાનો નથી. તેથી હમણાં ભગવાનને એક સામટાં કાર્ય કરવાનાં રહે છે. એક તો ગોપીજનોનું માન દૂર કરવું અને બીજું લક્ષ્મીજીને જે દુ:ખ થાય છે તેનો નાશ કરવાનું. આ હેતુથી જે રૂપ વડે ભગવાન્ લક્ષ્મીજીની સાથે રમણ કરે છે તે રૂપ વડે લક્ષ્મીજીની સાથે રમણ કરીને, તે બધા ધર્મો પ્રકટ કરીને પ્રકટ થયા, કારણ કે ભગવાનનું તે સ્વરૂપ અને હાલમાં પ્રકટ થએલું સ્વરૂપ અભિન્ન-એક-છે. અર્થાત્ ભગવાન્ પહેલાં ગોપીજનોની વચમાં હતા તે વખતે તેમણે આ બધા ધર્મો પ્રકટ કરેલા ન હતા, અને તેથી આ ધર્મોવાળું ભગવાનનું સ્વરૂપ પણ ન હતું, તેથી જ્યારે તે બધા ધર્મો પ્રકટ થયા ત્યારે તે ધર્મોવાળું ભગવાનનું સ્વરૂપ પણ પ્રકટ થયું અને તે જ કારણથી ભગવાનનું આગમન સંભવિત થયું.)

ભગવાન્ સ્વપ્ની છે, વનમાલયુક્ત છે. વચમાં બ્રહ્માએ કરેલી પૂજાનો

ભગવાને સ્વીકાર કરેલો છે. (ભગવાનનો જ્યાં જ્યાં અવતાર થાય છે ત્યાં ત્યાં ભગવાનનાં દર્શન કરવા બ્રહ્મા જાય છે અને તેમની પૂજા કરી માલા સમર્પણ કરે છે. આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ભગવાન્ વ્યાપિવેકુંડમાંથી પધાર્યા છે, એટલે ભગવાનનો અવતાર થયો છે એમ કહી શકાય, અને તે જ કારણથી બ્રહ્મા ભગવાનનાં દર્શન કરવા અહિં આવ્યા અને તેમની પૂજા કરી.) અથવા તો લક્ષ્મીજીએ ભગવાનની પૂજા કરીને માલા સમર્પણ કરેલી છે, અને તેથી ભગવાનને ફરીથી ગોપીજનોની વચમાં પ્રકટ થતાં વિલંબ થયો છે એમ પણ સૂચન થયું. આ જ કારણથી અઠાવીસમા અધ્યાયના પહેલા શ્લોકમાં ‘શ્રયત ઈન્દિરા’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. હવે તો ગોપીજનોની ઉપેક્ષા કરવી અયોગ્ય છે તેથી ભગવાન્ તેમની વચમાં પ્રકટ થયા; અને તેથી આગળ-ત્રીજા શ્લોકમાં-ભગવાનના આગમનનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

(‘પીતામ્બરધર:’ અને ‘સ્રજ્વી’ એ બે વિશેષણોનું રહસ્ય બીજે પ્રકારે સમજાવવામાં આવે છે.) અથવા તો શુકદેવજી ભગવાનનો જે આવિર્ભાવ થયો તેનું કારણ આ બે વિશેષણો વડે સમજાવે છે. ભગવાન્ હમણાં જો ગોપીજનોની વચમાં પ્રકટ ન થાય તો ગોપીજનોનો તિરોભાવ થાય અને તેથી રસ સિદ્ધ ન થાય, તેમ જ કીર્તિ પણ સિદ્ધ ન થાય. (ભગવાનને તો રસની અપેક્ષા છે, તેથી રસની અપેક્ષાનું સૂચન કરવાને માટે ભગવાનને પોતાનો પ્રાદુર્ભાવ જ કરવો પડ્યો. પીતાંબર એ ભગવાનના સ્વરૂપનું આચ્છાદન કરનાર છે. રસ ગુપ્ત હોય તો જ તે રસ બની શકે છે એવી રસશાસ્ત્રની મર્યાદા છે. વનમાલા એ કીર્તિની અપેક્ષા સૂચવે છે. તેથી રસ અને કીર્તિ એ બંનેની અપેક્ષા હોવાથી ભગવાન્ પોતે પીતાંબર અને સ્રજ્વી એ રીતે પ્રકટ થયા.) ભગવાન્ પોતે આચ્છાદનથી રસને સિદ્ધ કરનાર એવા પીતાંબરને અને કીર્તિમય વનમાલાને ધારણ કરનાર છે અને તેથી જ તેવા સ્વરૂપે તે પોતે પ્રકટ થાય છે એ પ્રકારનો અર્થ છે. જો આ પ્રમાણે ભગવાન્ ગોપીજનોની વચમાં હમણાં પ્રકટ ન થાય તો ભક્તોના-ગોપીજનોના-સ્વરૂપનું તિરોધાન થાય, અને તેથી રસ અને કીર્તિ એ બંને સંભવી શકે નહિ એ વાત સ્પષ્ટ છે એમ તાત્પર્ય છે.

ગોપીજનોરૂપી મારી સેના ખિન્ન થશે એમ ધારીને કામદેવે ભગવાનને કેમ વશ ન કર્યા? આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો શુકદેવજી તેનું સમાધાન કરતાં કહે છે કે ‘સાક્ષાન્મન્મથમન્મથ:’; ભગવાન્ તો સાક્ષાત્ કામદેવના પણ કામદેવ છે.

(ગોપીજનોને કામદેવની સેના કહેવામાં આવેલી છે તેનું રહસ્ય આ પ્રમાણે છે. સેના વડે જ શત્રુના પક્ષનો નાશ કરવામાં આવે છે, પણ જો આ સેના પોતે દુઃખી



હોય તો શત્રુનો નાશ કરી શકે નહિ. જ્યારે સેના સુખી હોય તો જ તે શત્રુનો નાશ કરી શકે. ગોપીજનોએ પણ સર્વાત્મભાવનો વિરોધ કરનારા બધા ભાવોનો નાશ કર્યો છે. આ પ્રમાણે જ્યારે સર્વાત્મભાવવાળા ભક્તોને-ગોપીજનોને-દુઃખ પડે ત્યારે તો મર્યાદામાર્ગના ભક્તો પણ એમ માનશે કે જેમાં દુઃખનો સંભવ જ નથી એવા મોક્ષ કરતાં પણ આ પુષ્ટિમાર્ગ અધિક નથી, અને તેથી આ પુષ્ટિમાર્ગની પ્રવૃત્તિ થશે નહિ. આ બધું જાણીને ભગવાને અતિરોધાન કેમ ન કર્યું?, એ પ્રમાણે શંકા કરવામાં આવે છે. અહિં 'કન્દર્પ' શબ્દનો અર્થ સર્વાત્મભાવ થાય છે, અને ગોપીજનોનો કામભાવ પણ સર્વાત્મભાવરૂપ જ છે.

અથવા તો વાદી લૌકિક રીતે શંકા કરે છે કે કામદેવે ભગવાનને વશ કેમ ન કર્યા? આના સમાધાનમાં શુકદેવજી કહે છે કે 'સાક્ષાન્મન્મથમન્મથઃ' અને સ્પષ્ટ કરે છે કે ભગવાન ગોપીજનોની દીનતાથી જ પ્રકટ થયા છે, બીજા કોઈ હેતુથી થયા નથી.

આ પ્રમાણે અહિં બે રીતે શંકા કરવામાં આવી છે, અને તેનું સમાધાન પણ બે રીતે આપી શકાય એમ છે. પ્રથમ પ્રકારની શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. મોક્ષ કરતાં પુષ્ટિમાર્ગ અધિક છે એ જ્ઞાન જે હોતું નથી તે શું રસવાર્તા જાણનારને હોતું નથી કે રસવાર્તા ન જાણનારને હોતું નથી? બીજા વિકલ્પમાં-રસવાર્તા ન જાણનારને પુષ્ટિમાર્ગની અધિકતાનું જ્ઞાન નથી એ પક્ષમાં-અમારે બીજું કાંઈ કહેવાનું જ નથી, કારણ કે જે રસની વાત જ જાણતો નથી તે રસમાર્ગની મહત્તા સમજી શકતો જ નથી; એટલે તેમાં તો અમે સંમત છીએ. હવે પહેલા વિકલ્પમાં-રસવાર્તા જાણનારને પુષ્ટિમાર્ગની અધિકતાનું જ્ઞાન નથી એ પક્ષમાં-આ પ્રકારની શંકાને સ્થાન જ નથી, કારણ કે જ્યાં વિપ્રયોગ દશામાં આધ્યાત્મિક મન્મથરસને જ મહારસ કહેવામાં આવે છે, ત્યાં આ આધ્યાત્મિક મન્મથ રસના પણ મન્મથરૂપને વિપ્રયોગ દશામાં મહારસ તરીકે ઓળખવામાં આવે એમાં શી શંકા હોઈ શકે?

બીજા પ્રકારની શંકાનું સ્પષ્ટ સમાધાન શ્રીસુબોધિનીજીની છેલ્લી પંક્તિમાં આપવામાં આવેલું છે.)

મન્મથ, કામદેવ, ત્રણ પ્રકારનો છે: આધિભૌતિક, આધ્યાત્મિક અને આધિદૈવિક. આધિભૌતિક મન્મથ દેવતારૂપ છે. પછીનો આધ્યાત્મિક મન્મથ સર્વના હૃદયમાં રહેલો છે અને તે સાક્ષાન્મન્મથ છે. આ સાક્ષાન્મન્મથનો પણ મન્મથ તે આધિદૈવિક મન્મથ છે, અને તે ભગવાન પોતે છે, કારણ કે ભગવાન સર્વનું પણ સર્વ છે. આથી (આધિભૌતિક) કામદેવને પણ મોહ થયો; (આધ્યાત્મિક) કામદેવ પોતે

પણ ભગવાનને મોહ કરી શક્યો નહિ; એટલું જ નહિ પણ ભગવાન્ પોતે જ (આધિદૈવિક) કામદેવરૂપ જ છે. તેથી જ્યારે ગોપીજનોની દીનતા પ્રકટ થઈ ત્યારે કામનું નિવારણ કરવાને માટે ભગવાને કામરૂપ જ પ્રકટ કર્યું, અને પહેલાંની માફક-છવ્વીસમા અધ્યાયના ત્રેતાળીસમા શ્લોકમાં ‘ઉદારહાસ’ કહ્યું છે તે પ્રમાણે-ગોપીજનોને કામવાળાં બનાવ્યાં. ૨.

ગોપીજનોની વચમાં ભગવાન્ પ્રકટ થયા ત્યાર પછી જે બન્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘તં વિલોક્ય’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

તં વિલોક્યાગતં પ્રેષ્ઠં પ્રીત્યુત્કૃલ્લદશોડબલાઃ ।

ઉત્તસ્થુર્યુગપત્ સર્વાઃ તન્વઃ પ્રાણમિવાગતમ્ ॥૩૧॥

તે પરમ પ્રિય પ્રભુને પધારેલા જોઈને બધી સ્ત્રીઓનાં નેત્રો પ્રીતિથી પ્રકુલ્લ થયાં, અને જેમ હસ્ત વિગેરે શરીરનાં અવયવો પ્રાણના આવવાથી સચેતન થાય તેમ તે બધી સ્ત્રીઓ સામટી ઉભી થઈ ગઈ. ૩.

ભગવાનને આવતાં જોઈને બધાં ગોપીજનો એકદમ ઉભાં થઈ ગયાં. પહેલાં-બીજા શ્લોકમાં-ભગવાન્ ગોપીજનોની વચમાં જ પ્રકટ થયા એમ કહીને હમણાં આ ત્રીજા શ્લોકમાં જે કહેવામાં આવ્યું કે ભગવાન્ પધાર્યા તે ભગવાનનાં દર્શન કરતી વખતે ગોપીજનોને જે ભાવ થયો તેના અનુવાદરૂપ છે. (બીજી રીતે વિચાર કરતાં જણાય છે કે બીજા શ્લોકમાં ભગવાનના ધર્મો આવ્યા એમ કહેવામાં આવ્યું, અને ત્રીજા શ્લોકમાં ધર્મો ભગવાન્ આવ્યા એમ કહેવામાં આવ્યું છે.) અથવા તો, પહેલાં ભગવાન્ ગોપીજનોના હૃદયમાં હતા, અને હમણાં હૃદયની બહાર આવ્યા એ જણાવવાને માટે ‘ભગવાનને આવતા જોઈને’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.

અરે! ભગવાન્ જ્યારે પધાર્યા ત્યારે બધાં ગોપીજનો ઉભાં થયાં એમાં શું આશ્ચર્ય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે આ બધાં ગોપીજનોમાં તે વખતે જીવ ન હતો, પણ જીવ વગરનાં હતાં; આવાં નિર્જીવ ગોપીજનો પણ ભગવાનને આવતા જોઈને એકદમ ઉભાં થઈ ગયાં એ ઘણા આશ્ચર્યની વાત કહેવાય. આ વાત સ્પષ્ટ સમજાવવાને માટે શુકદેવજી ‘તન્વઃ પ્રાણમિવાગતમ્’ એ પ્રમાણે દૃષ્ટાંત આપે છે. ‘તન્વઃ’ એટલે હસ્ત, ચરણ વિગેરે શરીરનાં અવયવો. જાણે પ્રાણ આવ્યો હોય તેમ (તે બધાં અવયવો ઉભાં થઈ ગયાં.) (જેમ હાથ, પગ વિગેરે અવયવો દેહમાં જીવ ન હોય ત્યારે કામ કરી શકતાં નથી, અને દેહમાં જીવ આવે ત્યારે કામ કરી શકે છે, તેમ જ્યારે ભગવાન્ તિરોહિત થઈ ગયા હતા ત્યારે

ગોપીજનોના દેહ નિર્જીવ થઈ ગયા હતા, પણ જ્યારે ભગવાન્ પ્રકટ થયા ત્યારે તે ગોપીજનોના દેહમાં જીવ આવ્યો અને એકદમ ઉભાં થઈ ગયાં.) આપણે પ્રયત્ન કરીને જે અંગ ચલાવીએ તે એક જ અંગ પોતાનું કામ કરે, પણ જ્યારે પ્રાણ આવે ત્યારે તો હાથ, પગ વિગેરે બધાં અવયવો સાથે ચાલે અને પોતપોતાનું કામ કરે. તેથી બધાં અવયવો એકદમ ઉભાં થયાં એમ જણાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘ઉત્તસ્થુઃ’ એ પ્રમાણે બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. દેહ, ઈન્દ્રિય, પ્રાણ, અંતઃકરણ અને જીવ એ પાંચે ઉભાં થવાનું છે. તેમાં જીવનું ઉભાં થવાનું બીજાના-ભગવાનના-ઉપર આધાર રાખે છે, અને જ્યારે જીવ આવે ત્યારે દેહ વિગેરે બીજા બધા પદાર્થો ઉભા થાય છે. અત્યાર સુધી ગોપીજનોનો જીવ પોતાના હૃદયમાં રહેલા લીલાસહિત ભગવાનમાં પ્રવિષ્ટ થએલો હતો, ભગવાનના સંગમાં રહેલો હતો, અને જ્યારે ભગવાન્ પોતે ઉભા થયા-બહાર પ્રકટ થયા-ત્યારે ગોપીજનોનો જીવ પણ ઉભો થયો, પ્રકટ થયો. ગોપીજનોનું અંતઃકરણ પણ ઉભું થયું; તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘પ્રેષ્ઠમ્’. ભગવાન્ ગોપીજનોને અત્યંત પ્રિય છે, તેથી ભગવાનને જોઈને ગોપીજનોનું અંતઃકરણ ઉભું થઈ ગયું, ચેતનવંતુ બન્યું. ભગવાનમાં ગોપીજનોનો જે પ્રેમ હતો તેને લીધે ઉત્કુલ્લ-વિકાસવાળાં-નેત્રો થયાં છે જેમનાં એવાં ગોપીજનો. આ ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાનમાં ગોપીજનોની જે પ્રીતિ હતી તેને લીધે ગોપીજનોની ઈન્દ્રિયો સચેતન થઈ.

ગોપીજનો-ગોપીજનોનાં ચક્ષુઓ-પોતાનાં દર્શન કરે તેટલા માટે ભગવાન્ ત્યાં પધાર્યા; તેથી ભગવાનના ફક્ત આવવાથી જ પ્રથમ ગોપીજનોને ભગવાનનાં દર્શન થયાં. ચક્ષુની ઉત્કુલ્લતા-પ્રકુલ્લતા, વિકાસ-એ તો તેનાથી-વિલોકનથી, દર્શનથી-ભિન્ન છે. વિકાસ પામવું એ ફૂલનો ધર્મ છે; તેથી જ્યારે મૂલ શ્લોકમાં વિકાસરૂપી પુષ્પધર્મનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે ત્યારે ગોપીજનોનાં ચક્ષુઓ કમલ છે એમ સૂચન થાય છે. તેમાં પ્રીતિને ચક્ષુના વિકાસનું કારણ કહેવામાં આવ્યું છે; તે ઉપરથી જણાય છે કે અત્યાર સુધી પ્રીતિનું કાર્ય-ચક્ષુનો વિકાસ-ન હતું અને હમણાં જ સૂર્યની માફક પ્રીતિનું પ્રાકટ્ય થયું છે. (જેમ સૂર્ય ઉદય પામે અને તેથી કમલ વિકસિત થાય તેમ ભગવાનમાં ગોપીજનોની પ્રીતિ પ્રકટ થઈ અને તેથી તેમનાં ચક્ષુઓનો વિકાસ થયો.) ગોપીજનો જ્યારે ભગવાનથી વિરહ પામ્યાં ત્યારે બધું તિરોહિત થઈ ગયું અને તેથી ભગવાનમાં રહેલી ગોપીજનોની પ્રીતિ પણ તિરોહિત થઈ ગઈ હતી. આ જ કારણથી ગોપીજનોને મૂલ શ્લોકમાં અબલા કહેવામાં આવ્યાં છે, અને તેથી જણાય છે કે ગોપીજનોમાં કોઈ પણ કાર્ય કરવાને માટે શક્તિ નથી.

મૂલ શ્લોકમાં 'પ્રાણમિવાગતમ્' એ જે દૃષ્ટાંત આપવામાં આવેલું છે તે ઉપરથી જ પ્રાણના ઉત્થાનની વાત થઈ ગઈ, કારણ કે ભગવાન્ પ્રાણના પણ પ્રાણ છે, આધિદૈવિક પ્રાણ છે. પહેલાં જેની ઈચ્છા કરવામાં આવેલી હતી તે ઈચ્છિત પદાર્થ તરીકે નિરૂપણ કરેલું હોવાથી શરીરનું ઉત્થાન થયું; તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'તમ્'. (અર્થાત્ ભગવાન્ શરીર ધારણ કરીને-સ્વરૂપથી-પ્રકટ થાય એવી ગોપીજનોની ઈચ્છા હતી; ભગવાનના શરીરનું-સ્વરૂપનું-વર્ણન કરવામાં આવ્યું તેથી ગોપીજનોનું શરીર પણ ઉભું થઈ ગયું એમ તાત્પર્ય છે.) ૩.

આ પ્રમાણે ગોપીજનોના જે પાંચ પદાર્થો-જીવ, દેહ, ઈન્દ્રિય, પ્રાણ અને અંતઃકરણ-સચેતન થયા તે ભગવાનની સાથે રહ્યા, અને તેમણે-ગોપીજનોના જીવ, દેહ વિગેરે-એ-જે કાર્ય કર્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી 'કાચિત્' ઈત્યાદિ પાંચ શ્લોકમાં કરે છે :

કાચિત્કરામ્બુજં શૌરેર્જગૃહેઙ્ગલિના મુદા ।

કાચિદ્દધારતદ્બાહુમ્ અંસે ચન્દનરૂપિતમ્ ॥૪॥

કોઈક ગોપીજને ભગવાનનું હસ્તકમલ આનંદથી પોતાની અંજલિમાં ધારણ કર્યું. કોઈક ગોપીજને ભગવાનના ચંદનવાળા હસ્તને પોતાના ખભા ઉપર ધર્યો. ૪.

પહેલાં ગોપીજનો અનેક પ્રકારનાં હતાં, છતાં પણ જ્યારે ભગવાનનો આવિર્ભાવ થયો ત્યારે ગોપીજનો સાત પ્રકારનાં જ થયાં.

(ભગવાન્ જ્યારે તિરોહિત થઈ ગયા હતા ત્યારે ગોપીજનોના ચિત્તનો વિક્ષેપ થયો અને તેથી તેઓ અનેક પ્રકારનાં થયાં એમ ગયા-અઠાવીસમા-અધ્યાયમાં જુદાં જુદાં વચનોના સ્વરૂપ ઉપરથી જણાવવામાં આવ્યું છે. અર્થાત્ સત્ત્વ, રજસ્ અને તમસ્ એ ત્રણ ગુણોના મિશ્રણથી અને નિર્ગુણતાથી થતા ગોપીજનોના અનેક પ્રકારો જુદા જુદા શ્લોકોના સ્વરૂપ ઉપરથી સિદ્ધ કરવામાં આવેલા છે. હવે તો આ ઓગણત્રીસમા અધ્યાયમાં પ્રભુ 'ભગ' શબ્દના અર્થને-એશ્વર્ય, વીર્ય, શ્રી વિગેરે છ ગુણોને-પ્રકટ કરીને પોતે પ્રકટ થયા છે, અને તેથી તે ગોપીજનો પણ પ્રભુના પ્રકટ સ્વરૂપમાં એકનિષ્ઠાવાળાં હોવાથી પ્રભુમય જ થઈ ગયાં છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનો ભગવદાત્મક થવાથી, ભગવાનનું સ્વરૂપ રસાત્મક હોવાથી અને ભગવાનના ધર્મો પણ રસાત્મક હોવાથી ભૂકૃટિબંધન વિગેરે ભાવો પણ ગોપીજનોમાં ઘટે છે.)

એક જ ભગવાન્ સર્વ ગોપીજનોને માટે પ્રકટ થયા છે; તેથી ગોપીજનોના

યૂથમાં જે ગોપીજનો આઘે ઉભાં હતાં તે પણ ભગવાનની પાસે જ આવ્યાં છે એમ પહેલાં કહેવામાં આવે છે.

(આ પ્રમાણે એક જ ભગવાન્ બધેય પ્રકટ થઈને બધાં ગોપીજનોને પોતાની પાસે આશ્વાં અને તેથી ભગવાનના હસ્તકમલ ધારણ કરવું ઈત્યાદિ બધાં કાર્યો બધાં ગોપીજનો એક જ વખતે કરતાં હતાં એમ તાત્પર્ય છે. મૂલ શ્લોકમાં ‘કાચિત્’ એમ એકવચનનો જે પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તે શ્લોકમાં ગોપીજનો એક જ પ્રકારના ભાવવાળાં છે. વાસ્તવિક રીતે તો તેવાં પણ ગોપીજનો અનેક છે એમ જાણવું. ભગવાનના છ ધર્મ, અને ભગવાનનું સ્વરૂપ-ધર્મી-એ રીતે ગોપીજનોના સાત પ્રકાર છે એમ શુકદેવજીને કહેવાની ઈચ્છા છે, છતાં પણ ગયા-અઠાવીસમા-અધ્યાયમાં ગોપીજનોના સત્ત્વ, રજસ, તમસ, નિર્ગુણ એમ જે અંશોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે અંશ ગોપીજનોમાં હમણાં પણ છે; એ હેતુથી સત્ત્વ વિગેરે ગુણોની દૃષ્ટિથી ગોપીજનોના સાત પ્રકારનું વર્ણન કરવામાં આવે છે.)

શુદ્ધસાત્ત્વિક, શુદ્ધરાજસ, રાજસસાત્ત્વિક, (‘રજ:સાત્ત્વિક્યશ્ચ’ એમાં જે ‘ચ’ છે તે ઉપરથી) સાત્ત્વિકરાજસ, નિર્ગુણ, (‘નિર્ગુણાશ્ચ’ એમાં જે ‘ચ’ છે તે ઉપરથી) તામસ, અને બાકીનાં (ચાર પ્રકારનાં-સાત્ત્વિકતામસ, રાજસતામસ, તામસસાત્ત્વિક અને તામસરાજસ-) એમ ગોપીજનોના સાત પ્રકાર ગણવામાં આવે છે.

(ફલપ્રકરણના પાંચમા અધ્યાયમાં-અર્થાત્ દશમસ્કંધના ત્રીસમા અધ્યાય માં-‘કાચિત્ સમમ્’ ઈત્યાદિ દસમા શ્લોકમાં ભગવાનના ગુણના સ્વરૂપનું જ વર્ણન કરવામાં આવશે. સુબોધિનીજીમાં ગોપીજનોના પ્રકારો જે ક્રમમાં આપવામાં આવેલા છે તે ક્રમ વિવક્ષિત નથી, તેથી પહેલાં તામસી ગોપીજનનું અને પછી નિર્ગુણ ગોપીજનનું વર્ણન કરવામાં આવશે.)

કોઈક ગોપીજને અહિં ભગવાનનું હસ્તકમલ આનંદથી પોતાની અંજલિ વડે ગ્રહણ કર્યું. ભગવાને પોતાનો એક જ હાથ લાંબો કર્યો હતો, કારણ કે ભગવાન્ ‘પીતામ્બધર:’ હતા, એટલે કે તેમણે હાસ્ય છૂપાવવાને માટે બીજા હાથમાં પીતાંબર ધારણ કરેલું હતું. બહુ માન દર્શાવીને વસ્તુનું જે ગ્રહણ કરવામાં આવે છે તે અંજલિ વડે થાય છે. મૂલ શ્લોકમાં ભગવાનને માટે જે ‘શૌરે:’ પદ વાપરવામાં આવ્યું છે તે ભગવાનનું વીરત્વ જણાવવા માટે વાપરવામાં આવેલું છે. પહેલાં-અઠાવીસમા અધ્યાયમાં-ગોપીજનોનો જે ક્લેશ વર્ણવવામાં આવ્યો હતો તે ક્લેશ નાશ પામ્યો છે

એ જણાવવાને માટે ‘મુદ્દા’-આનંદથી-એ પ્રમાણે મૂલ શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે.

‘પેલી ગોપી કરતાં પણ હું વધારે અંતરંગ થાઉં, ભગવાનની સમીપ આવું’, એમ ધારીને બીજાં ગોપીજને ભગવાનના બાહુને પોતાના ખભા ઉપર ધારણ કર્યાં, જેથી ભગવાનની સાથે પોતાનું આલિંગન જ-ભેટો જ-થઈ જાય. આગળ ઉપર ચુમાળીસમા અધ્યાયમાં ‘ભુજમગરસુગન્ધં મૂદ્ન્યધાસ્યત્ કદા નુ,’ અગુરુથી સુગંધિત બનેલો પોતાનો હસ્ત પ્રભુ અમારા માથા ઉપર ક્યારે મૂકશે, એ પ્રમાણે ભગવાનના બાહુનો આ ગોપીજને માટે વિનિયોગ કહેવામાં આવવાનો છે.

(અરે! અહિં-આ અધ્યાયમાં-જે પદાર્થનો અનુભવ થાય તે જ પદાર્થની ત્યાં-ભ્રમરગીતવાળા ચુમાળીસમા અધ્યાયમાં-સ્ફૂર્તિ થવી જોઈએ એવો નિયમ છે; તેથી ત્યાં ચુમાળીસમા અધ્યાયમાં ભગવાનના બાહુની વાત કરેલી છે અને તે બાહુને ‘અગરુસુગન્ધમ્’ એ પ્રમાણે વર્ણવેલો છે, તો પછી અહિં ભગવાનના બાહુને ‘ચન્દનરૂષિતમ્’ને બદલે ‘ચન્દનસુગન્ધમ્’ કહેવું જોઈએ. આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો શ્રીમહાપ્રભુજી સમાધાન કરે છે કે ચુમાળીસમા અધ્યાયમાં જે ગોપીજન ‘ભુજમગરસુગન્ધમ્’ ઈત્યાદિ શ્લોક બોલે છે તે ગોપીજન આ જ છે, અને તેથી ભગવાનના બાહુના સંબંધવાળો જે સ્વાભાવિક ધર્મ છે, અને અહિં જે ચંદનની અંદર રહેલો છે, તે આ ગોપીજનનો નિરોધ સિદ્ધ કરશે. આ તાત્પર્ય સમજાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ચંદન તો આગંતુક છે અને તે વાત સ્પષ્ટ કરવાને માટે શુકદેવજી ‘ચન્દનસુગન્ધમ્’ ને બદલે ‘ચન્દનરૂષિતમ્’ કહે છે. આ જ કારણથી જ્યારે પૂતનાનો દેહ બળતો હતો ત્યારે ભગવાનના સંબંધને લીધે જ પૂતનાના દેહમાંથી બધાં પાપો નાશ પામ્યાં અને તેથી ધૂમાડો પણ અગરના જેવો સુગંધિ હતો એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. અર્થાત્ ભગવાનના સંબંધને લીધે જ સુગંધિત્વ છે, બીજા કારણને લીધે નહિ.)

આ જ કારણથી ભગવાનના બાહુનો ધર્મ જે ચંદનની અંદર રહેલો છે તે આ ગોપીજનનો નિરોધ સાધશે એમ જણાવવાને માટે શુકદેવજીએ ભગવાનના બાહુને ‘ચન્દનરૂષિતમ્’ એ પ્રમાણે વર્ણવ્યો છે. ચંદનથી રૂષિત, અર્થાત્ ચંદનથી લેપાએલો.

ભગવાનના બાહુને ચંદનનો લેપ કરવામાં આવેલો છે તેનું કારણ એ કે બીજા શ્લોકમાં જે ‘સ્રજ્વી’ પદ છે તે ઉપરથી સૂચિત થયું હતું કે બ્રહ્માએ અને લક્ષ્મીએ ભગવાનની પૂજા કરી હતી, અને તે પૂજાને અંગે ભગવાનના બાહુને ચંદનનો લેપ કરવામાં આવ્યો હતો. અથવા તો બીજું કારણ પણ હોઈ શકે, અને તે એ કે બીજા શ્લોકમાં ભગવાનને માટે ‘પીતામ્બરધરઃ’ પદ વાપરવામાં આવેલું છે,

અને તે પદ ઉપરથી સૂચિત થતું હતું કે ભગવાન્ લક્ષ્મીજીની સાથે રમણ કરતા હતા અને તે પ્રસંગે તેમના બાહુને ચંદનનો લેપ થયો હતો. પાંચમા શ્લોકમાં જે તાંબૂલનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તેનું કારણ પણ ચંદનની માફક બ્રહ્મા અને લક્ષ્મીજીએ કરેલી ભગવાનની પૂજા અથવા તો લક્ષ્મીજીની સાથે ભગવાને કરેલું રમણ જાણવું. ૪.

કાચિદ્ અબ્જલિનાગૃહ્ણાત્ તન્વી તામ્બૂલચર્વિતમ્ ।

એકા તદદ્ઘ્નિકમલં સન્તપ્તા સ્તનયોરધાત્ ॥૫॥

કોઈક કોમલ ગોપીજને ભગવાનના આરોગેલા પાનની પ્રસાદી અંજલિ વડે ગ્રહણ કરી. કોઈક વિરલથી અત્યંત તપેલાં ગોપીજને ભગવાનનું ચરણકમલ પોતાના સ્તન ઉપર ધર્યું. ૫.

આ પ્રમાણે વનમાલા અને પીતાંબર ધારણ કરીને ભગવાન્ જે પ્રકટ થયા તેનું તાત્પર્ય એ કે દેવોમાં ઉત્તમ એવા બ્રહ્મા વિગેરેએ ભગવાનની પૂજારૂપી જે કૃત્ય કર્યું તે આ ગોપીજનોને ભગવાને દર્શાવ્યું, (કારણ કે ભગવાનની પૂજા કરતી વખતે જે ચંદન વિગેરેનું સ્થાપન કરવામાં આવેલું હતું તે સર્વનો, જ્યારે ગોપીજનોએ ભગવાનનો બાહુ પોતાના ખભા ઉપર ધારણ કર્યો ત્યારે, તે ગોપીજનોને પ્રત્યક્ષ અનુભવ થયો. અર્થાત્ વનમાલા, પીતાંબર વિગેરે સામગ્રી સહિત પ્રકટ થઈને આ ગોપીજનો ઉપર ભગવાને ઘણો અનુગ્રહ દર્શાવ્યો એમ બોધ થાય છે.)

આ પ્રમાણે વનમાલા, પીતાંબર વિગેરે ધારણ કરીને ભગવાન્ પ્રકટ થયા, અને આ રીતે વનમાલા વિગેરે સામગ્રી પ્રકટ કરીને તે ગોપીજનોનું અને દેવોમાં ઉત્તમ એવા બ્રહ્મા વિગેરેનું કાર્ય દર્શાવવામાં આવ્યું. આ કાર્ય તે એ કે આ ગોપીજનો ભગવાનના ઉપર ચડી જવાની ઈચ્છાવાળાં છે, જ્યારે દેવોત્તમ બ્રહ્મા વિગેરે ભગવાનની પૂજા કરનારા છે, અર્થાત્ બંનેનાં કાર્ય જૂદાં છે. તેથી કોઈક ગોપીજન ભગવાનનું આવેલું પ્રસાદી પાન અંજલિ વડે બે હાથમાં લે છે. આ ગોપીજન ભગવાનનું પ્રસાદી પાન લેવાને માટે યોગ્ય છે એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી આ ગોપીજનનું વર્ણન કરતાં કહે છે કે ‘તન્વી’. ‘તન્વી’ એટલે કોમલ અંગવાળી (જેનું અંગ કોમલ છે તેની ચામડી ઘણી કોમલ હોય છે, એટલે આ કોમલાંગી ગોપીજન જ્યારે ભગવાનનું પ્રસાદી પાન ખાશે ત્યારે તે પાન આ ગોપીજનના કોમલ કંઠની કોમલ ચામડીમાંથી સુંદર દેખાશે. આ પ્રકારની શોભા જોવાને માટે ભગવાને આ ગોપીજનને તાંબૂલનું દાન કર્યું છે.)

એક ગોપીજન તો મંડલની બહાર આઘે ઉભાં હતાં, અને તેથી તેમને

ભગવાનનો સાક્ષાત્ સંબંધ મળી શક્યો નહિ, અથવા તો પોતે ઉભાં થઈ શક્યાં નહિ, એટલે બેઠાબેઠા જ તેમણે ભગવાનનું ચરણકમલ પોતાના સ્તનો ઉપર પધરાવ્યું. આ ગોપીજન ઉભાં થઈ શક્યાં નહિ અને તેમણે ભગવાનનું ચરણકમલ પોતાની છાતી ઉપર પધરાવ્યું તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘સન્તપ્તા’. આ ગોપીજન, ખરેખર, વિરલથી અત્યંત આતુર બનેલાં હતાં. ૫.

એકા ભુકુટીમ્ આભધ્ય પ્રેમસંરમ્ભવિહ્વલા ।

ધનન્તીવૈક્ષત્ કટાક્ષેપૈઃ સન્દષ્ટદશનચ્છદા ॥૬॥

પ્રેમના આવેશથી વિહ્વલ થએલાં એક ગોપીજન ભવાં ચઢાવીને, દાંત વડે ઓઠ ડસીને કટાક્ષોથી પ્રહાર કરતાં હોય તેમ જોવા લાગ્યાં. ૬.

બીજાં તામસી ગોપીજન તો (જેટલે દૂર ઉભા રહીને કટાક્ષ ફેંકવાથી પોતાનો માનભાવ રહે એટલે) દૂર ઉભાં રહ્યાં, અને ક્રોધથી ભવાં ચઢાવીને કટાક્ષો ફેંકીને જાણે પ્રહાર કરતાં હોય તેમ ભગવાન તરફ જોવા લાગ્યાં. અહિં ‘કટાક્ષેપૈઃ’ એ પદમાં ‘સવર્ણ હોય તો વર્ણનો લોપ થાય, અર્થાત્ બે સરખા વર્ણ સાથે સાથે આવે ત્યારે પૂર્વ વર્ણનો લોપ થાય’ એ નિયમને અનુસરીને ‘ક્ષ’નો લોપ થયો છે; એટલે કે મૂલ શબ્દ ‘કટાક્ષેપૈઃ’ છે, અને તેમાં ‘ક્ષ’નો લોપ થવાથી ‘કટાક્ષેપૈઃ’ એ પ્રમાણે રૂપ થયું છે.

પ્રેમવાળો જે સંરંભ, ક્રોધ, તેથી વિહ્વલ (આ ગોપીજન બન્યાં છે.) સારી રીતે દાંતથી દાબ્યા છે ઓઠ જેમણે એવાં આ ગોપીજન છે. ભવાં ચઢાવવાથી આ ગોપીજનના ચિત્તની કુટિલતા વર્ણવી; પ્રેમવાળા ક્રોધથી ઈન્દ્રિયોની વિકલવતા વર્ણવી; દાંતથી ઓઠ દાબવાથી દેહનો ક્ષોભ વર્ણવ્યો; જાણે પ્રહાર કરતાં હોય એમ દેખાવાથી આ ગોપીજને પ્રાણથી બલ દેખાડ્યું એમ વર્ણવ્યું; આ ગોપીજનના ઈક્ષણરૂપી જ્ઞાનનું સાધન-નેત્ર-પણ વિકૃત એમ વર્ણન કર્યું. નેત્રના છોડેથી જોવું તેનું નામ કટાક્ષ. તેમાં-કટાક્ષમાં-પણ આક્ષેપભાવ વર્ણવ્યો. જેમ વાણીથી બીજાને ધમકી આપવામાં આવે છે તેમ આ ગોપીજનના આક્ષેપરૂપ કટાક્ષો જ હંમેશાં પ્રવર્તતા હતા.

(ગોપીજનોએ ભવાં ચઢાવ્યાં તેનું બીજું પ્રયોજન દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે) અથવા તો ગોપીજનનું તે પ્રકારનું માન પૂર્ણ બને એટલા સારુ કાલનું નિયમન કરવાને માટે ભુકુટિનો ભંગ કરવામાં આવ્યો છે, ભવાં ચઢાવવામાં આવ્યાં છે. (પહેલાં ગોપીજનોના માનનું જ નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હતું, હવે અહિં તો તેમના ગાઢમાનનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે. માન દૂર કરવાને માટે સો પ્રકારે પણ



યત્ન કરવામાં આવે તો પણ હું-ગોપીજન-માનનો ત્યાગ નહિ કરું એ પ્રકારનો જે ભાવ તેનું નામ ગાઢભાવ. કાલનો વિલંબ થતાં માન શિથિલ થઈ જાય છે, કારણ કે તે વ્યભિચારી ભાવ હોવાથી લાંબો સમય રહી શકતું નથી. ગોપીજનોનું માન ગાઢ છે તેથી તે કોઈ દિવસ શિથિલ થતું નથી અને હંમેશાં ગાઢ જ રહે છે. આ પ્રમાણે ગાઢમાન હંમેશાં રાખવું તે જ કાલનું નિયમન કહેવાય છે. નાયિકાઓનો એવો સ્વભાવ છે કે તેઓ પ્રિયવચન વિગેરે કારણને લીધે માનનો અવશ્ય ત્યાગ કરે છે. આ પ્રકારની સ્થિતિ અમારી-ગોપીજનોની-ન થાય, અને અમારો માનભાવ જ હંમેશાં રહો એ પ્રકારનો ગોપીજનોનો પ્રયત્ન છે. નાયિકાઓનો પ્રિય વચનોને લીધે માન ત્યાગ કરવાનો જે સ્વભાવ છે તેનું નિયમન અલ્પ પ્રયત્નથી થઈ શકે છે. તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે) નાયિકાઓના સ્વભાવનું નિયમન કરવાને માટે ગોપીજનો નો સંરમ્ભ-આવેશ-હતો. (ભગવાનની સાથે પહેલાં સમાગમથી જે સુખ ગોપીજનો એ અનુભવેલું હતું તેનું સ્મરણ થતાં તે સમાગમસુખના લોભથી કદાચિત્ તેમના-ગોપીજનોના-માનનો ત્યાગ થઈ જાય. તે પ્રમાણે ન થાય એટલા માટે ‘દંશ’નું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે) લોભનો નાશ કરવાને માટે ‘દંશ’નું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. (અઘર એ લોભનું સ્વરૂપ છે, અને તેના ઉપર જ્યારે દાંત પીસવામાં આવે ત્યારે અઘર-લોભ-દબાય છે, અર્થાત્ નાશ પામે છે.)

(આ પ્રમાણે ઘણો આગ્રહ હોવા છતાં પણ પોતાના હૃદયમાં પ્રિયની-પ્રભુની-સ્થિતિ આવશ્યક છે અને માન પણ હૃદયમાં હોય છે. કદાચિત્ ગોપીજનોના હૃદયનો ભગવાનમાં જો લય થઈ જાય તો તેમના હૃદયમાં રહેલા માનનો પણ લય-નાશ-થઈ જાય. નિર્દોષ ભાવથી જ ખરેખર મુક્તિ થાય છે એ ન્યાયને અનુસરીને ગોપીજનોનું માન જતું રહે એટલે તેઓ નિર્દોષ બને અને તેમને મુક્તિ મળે. ગોપીજનોને આ પ્રમાણે મુક્તિ ન મળે તેટલા માટે તેમના ઈક્ષણમાં-જ્ઞાનમાં-‘કટાક્ષેપ’ શબ્દ વડે કુટિલતા દર્શાવવામાં આવી છે. આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોનો ભાવ કુટિલતાને લીધે દોષવાળો થવાથી તેમની મુક્તિ થઈ શકે નહિ; અને જ્યારે તેમની મુક્તિ ન થાય ત્યાં પછી તેમના માનની મુક્તિ ક્યાંથી થઈ શકે? આ તાત્પર્ય દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે)-ગોપીજનોને મોક્ષ ન મળે તેટલા માટે ‘કટાક્ષેપ’ શબ્દથી જ્ઞાનની વક્રતાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

(‘ભગવાન્ સર્વના ઈશ છે,’ જે અંદર રહીને આત્માનું નિયમન કરે છે’ ઈત્યાદિ શ્રુતિઓ ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાનમાં ઈશ, નિયામક વિગેરે ધર્મો છે. આવા ધર્મોવાળા ભગવાનની આજ્ઞાનું ઉલ્લંઘન કરવું એ પ્રમાણથી-શાસ્ત્રથી-

વિસ્ફુટ છે. વળી જ્યારે પ્રભુ ગોપીજનોના અંતઃકરણને માનરહિત કરવા પ્રયત્ન કરે છે ત્યારે ગોપીજનોનું અંતઃકરણ માનથી છૂટું પડતું નથી. આ વાત પ્રમાણથી-શાસ્ત્રથી-વિસ્ફુટ છે અને તેથી તે સંભવે નહિ; પણ જો પ્રમાણના બલનો નાશ કરવામાં આવે તો તે સંભવે. તેથી જ ‘ઘનન્તી’ પદ વડે પ્રમાણનો નાશ જ કરવામાં આવ્યો છે. આ તાત્પર્ય દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે) પ્રમાણનું નિરાકરણ કરવાને માટે હનનનું-નાશનું-વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. આમ કરવાથી લૌકિક ભક્તિ-લોકની રીતને અનુસરનારો સ્નેહ-પુષ્ટ થાય. આ કારણથી જ આ ગોપીજનનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ૬.

આ પ્રમાણે અતિપુષ્ટ તામસી ગોપીજનનું નિરૂપણ કરીને હવે શુકદેવજી અત્યુત્તમ નિર્ગુણ ગોપીજનનું ‘અપરા’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં વર્ણન કરે છે :

અપરાડનિમિષદ્દગ્ધ્યાં જુષાણા તન્મુખામ્બુજમ્ ।

આપીતમપિ નાતૃષ્ણત્ સન્તસ્તચ્ચરણં યથા ॥૭૧॥

કોઈક બીજાં ગોપીજન ભગવાનના મુખારવિંદનું અનિમિષ દષ્ટિથી-એકી ટસે-પાન કરતાં હતાં, તો પણ જેમ સંત પુરુષો ભગવાનના ચરણના રસથી તૃપ્તિ પામતા નથી તેમ તે તૃપ્તિ પામ્યાં નહિ. ૭.

આ પ્રમાણે આ ગોપીજન ભગવાનનાં દર્શન કરીને ખરેખર દોષરહિત થયાં છે, અર્થાત્ ભગવદર્શનથી પૂર્વ દુઃખ તે ભૂલી ગયાં છે. તેથી ધ્યાન વડે ભગવાનને પોતાના હૃદયમાં સ્થાપવાની ઈચ્છાથી આ ગોપીજને નેત્રો દ્વારા ભગવાનને પોતાના હૃદયમાં સ્થાપ્યા. અહિં લાવાણ્યરૂપી અમૃતનું પાન કરવાનું છે, કારણ કે મુખને અંબુજ-કમલ-કહેવામાં આવેલું છે. જેમ કમલનું સ્થાપન કરવાથી મકરંદનું પણ સ્થાપન થાય છે તેમ ભગવાનના મુખનું સ્થાપન કરવાથી તેમાં રહેલા લાવાણ્યનું પણ સ્થાપન થઈ જાય છે. મૂલ શ્લોકમાં ‘અનિમિષદગ્ધ્યામ્’-જેમાં પાંપણો મીચાતી નથી એવી દષ્ટિથી-એ પદ દર્શાવે છે કે લાવાણ્યનું પાન કરવામાં આવે છે. પ્રવાહી પદાર્થને અંદર લઈ જવું તેનું નામ પાન. પ્રવાહી પદાર્થને અંદર લઈ જતાં વચ્ચે રસનો પ્રવાહ તુટી જશે એમ માનીને તે પ્રમાણે ન થાય તેટલા માટે અનિમિષ દષ્ટિથી જ પાન કરવાનું કહેવામાં આવેલું છે. લાવાણ્યરૂપી અમૃત વિરલ છે એટલે નેત્રરૂપી અંજલિથી-ખોબાથી-પીવાનું છે. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘જુષાણા’ પદ છે તેમાં ‘જુષ્’ ધાતુ છે અને તે ધાતુનો અર્થ પ્રીતિથી સેવા કરવી એ પ્રમાણે થાય છે અને તે જ અર્થ આ સ્થલે લેવાનો છે. (અર્થાત્ ભગવાનના મુખકમલનું પ્રીતિસેવન એટલે મુખકમલમાં રહેલા લાવાણ્યરૂપી અમૃતનું પાન.) જો કે ધર્મસહિત સર્વ સંપૂર્ણ રીતે

હૃદયમાં ઉતારેલું છે અને તેથી તે સ્વાધીન થયું છે, જ્યારે તે ગોપિકા જે વસ્તુની ઈચ્છા કરે છે ત્યારે તે પોતાના હૃદયમાં તે વસ્તુ જુએ છે, છતાં પણ તેમને સંતોષ થતો નથી, હવે બહુ થયું એ પ્રમાણેની ભાવના થતી નથી. આ ગોપીજનને સંતોષ થતો નથી તેનું કારણ ભગવાનના મુખકમલનું સૌંદર્ય છે. ગોપીજનને હવે કોઈ પણ જાતનું પ્રયોજન નથી એ વાત પ્રતિબંધક નથી, (અર્થાત્ ગોપીજનને હવે કોઈ પણ જાતનું પ્રયોજન રહેલું નહિ હોવાથી તેમને અસંતોષ નહિ થાય એમ નહિ, અર્થાત્ અસંતોષ થશે જ.) આ વાત સ્પષ્ટ કરવાને માટે શુકદેવજી દષ્ટાંત આપે છે કે ‘સન્તસ્તચ્ચરણં યથા’. સંત પુરુષો ખરેખર કૃતાર્થ છે, તેમણે પોતાનાં બધાં કાર્યો પૂર્ણ કરેલાં છે, છતાં પણ ભગવાનના ચરણારવિંદમાં તેમને સહજ, સ્વાભાવિક, રસ રહેલો હોય છે. ભગવાનના ચરણારવિંદમાં રહેલો સંત પુરુષોનો આ રસ તદ્દન સ્વાભાવિક છે, કોઈ પણ જાતના પ્રયોજનને લીધે નથી, કારણ કે તેમને હવે કાંઈ નવું મેળવવાનું રહ્યું નથી તેમ કોઈનો ત્યાગ કરવાનું રહ્યું નથી. ૭.

હવે એક ગોપીજન આઘે ઉભાં છે, અને તે આ (સાતમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં) નિર્ગુણ ગોપીજનના જેવા સ્વભાવવાળાં છે. તે યોગને અનુસરીને ભગવાનનું ગ્રહણ કરે છે; ભગવાનને પોતાના હૃદયમાં સ્થાપે છે. આ વાત શુકદેવજી ‘તં કાચિત્’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

તં કાચિદ્ નેત્રન્દ્રેણ હૃદિ કૃત્ય નિમીલ્ય ચ ।

પુલકાડ્યુપગૂહ્યાસ્તે યોગીવાનન્દસમ્પ્લુતા ॥૮॥

કોઈક ગોપીજન નેત્રદ્વારથી પ્રભુને હૃદયમાં ધારણ કરી, આંખો મીંચી દઈ, રોમાંચિત થઈ, પ્રભુનું આલિંગન કરી, યોગીની માફક આનંદમાં ડૂબીને બેઠાં. ૮.

પહેલાં છઠ્ઠા શ્લોકમાં લૌકિકના જેવા ભાવવાળાં ગોપીજનનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું, પછીથી સાતમા શ્લોકમાં ભક્તિમાર્ગને અનુસરનારાં ગોપીજનનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. હવે આ ગોપીજન યોગમાર્ગને અનુસરનારાં છે. તેથી આ ગોપીજનની દૃષ્ટિ ભગવાનના સર્વ અવયવોમાં રહેલી છે. આ ગોપીજન ભગવાનના બંને અવયવોનું અને તે દ્વારા બધાંય અવયવોનું એકીકરણ કરે છે, નહિ તો ગોપીજનની દૃષ્ટિને લીધે ભગવાનના સ્વરૂપમાં ભેદ થાય. સાતમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજન કેવલ ભક્તિમાર્ગીય છે અને તેથી તેમને ભગવાનના દર્શનનું જ પ્રયોજન છે. (સાતમા શ્લોકમાં વર્ણવેલ ગોપીજન ભક્તિમાર્ગીય છે અને ભક્તિમાર્ગમાં સ્નેહને વશ થઈને બહાર ભગવાનના મુખારવિંદનું દર્શન થતાં જ બીજા બધા પદાર્થોનું તેમને-ગોપીજનને-વિસ્મરણ થાય છે, અને તેથી ભગવાનના

મુખારવિંદ વિના બીજા કોઈ પણ પદાર્થની તેમને અપેક્ષા રહેતી નથી. યોગમાર્ગમાં તો ધ્યાનમાં ભગવાનના પ્રત્યેક અંગનું પૃથક્ ચિંતન કરવામાં આવે છે, અને ધારણમાં તે બધાં અંગોથી બનેલા એક જ સ્વરૂપનું ચિંતન કરવામાં આવે છે, કારણ કે અંગોના પરસ્પર સંબંધનું સ્મરણ કર્યા વિના એક અંગનું સ્મરણ કરવામાં આવે તો તે અનુચિત હોવાથી અપરાધરૂપ છે. તેથી બધાં અંગોને એકત્રિત કરીને ચિંતન કરવામાં આવે છે. કેવલ યોગમાર્ગમાં ફક્ત અપરાધ જ છે, પણ યોગાનુસારી ભક્તિમાર્ગમાં તો ભગવાનના સ્વરૂપમાં પણ ભેદ થાય છે. ભગવાનનું સ્વરૂપ રસાત્મક હોવાથી ભાવાત્મક છે, તેથી જો સ્વામિનીનો ભાવ ભગવાનના એક એક અંગમાં જ રહે તો સ્વામિનીના ભાવને લીધે ભગવાનના સ્વરૂપમાં પરસ્પર ભેદ ઉત્પન્ન થાય. પણ આ આઠમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજન ભગવાનનાં બધાંય અંગોનું એકીકરણ કરે છે, તેથી ભગવત્સ્વરૂપમાં પ્રાપ્ત થતો ભેદ દૂર થઈ જાય છે.)

આ પ્રકારનાં-ભગવાનની સાથે આલિંગન કરવાની ઈચ્છાવાળાં-ગોપીજન દુર્લભ છે તેથી શુકદેવજી કહે છે કે ‘કાચિત્.’ મૂલ શ્લોકમાં જે ‘તમ્’ પદ છે તે પૂર્વોક્ત ભગવાનના સંબંધમાં વાપરવામાં આવેલું છે; તે ભગવાન કે જેમનું વર્ણન આ ગોપીજને પહેલાં ગોપીગીતમાં ‘ન ખલુ ગોપિકાનન્દનો ભવાન્’ પ્રમાણે કરેલું છે. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘નેત્રન્દ્રોણ’ પદમાં એકવચન છે તે ભગવાનના સ્વરૂપના પ્રવેશને માટે છે. (ભગવાનનું સમુદિત સ્વરૂપ એક છે અને તેથી તેને પ્રવેશ કરવાને માટે એક જ નેત્રદ્વારની જરૂર રહે છે.) મૂલ શ્લોકમાં જે ‘હૃદિ કૃત્ય’ પદ છે તેનો અર્થ ‘હૃદિ કૃત્વા’-હૃદયમાં ધારણ કરીને-એ પ્રમાણે થાય છે. ‘હૃદિ કૃત્ય’ એમાં સમાસ નથી છતાં પણ ‘લ્યપ્’ પ્રત્યય લગાડવામાં આવ્યો છે. (સમાસ ન હોય છતાં પણ ‘લ્યપ્’ પ્રત્યય લગાડવો એ સિદ્ધાંત પાણિનિથી ભિન્ન વૈયાકરણોનો છે; તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી બીજો અર્થ આપતાં કહે છે કે) ‘હૃદિકૃત્ય’ એ અલુક્સમાસ છે એમ માનવું. પછીથી આ ગોપીજને પોતાની આંખો મીંચી દીધી જેથી અંદર ગએલા ભગવાન બહાર જતા રહે નહિ. આ ગોપીજનની બુદ્ધિમાં તો એમ જ છે કે હવે ભગવાન બહાર બાકી રહ્યા જ નથી. અથવા તો આ ગોપીજને ભગવાનમાં જે પોતાનો ભાગ હતો તે લઈ લીધો. (પ્રભુ પોતે પ્રકટ થઈને દરેક ગોપીજનને રસનું દાન કરે છે તેથી ભગવાન બધાં ગોપીજનોના ભાગરૂપ થાય છે. અર્થાત્ જેને માટે ભગવાનનું જે સ્વરૂપ પ્રકટ થયું હોય તે તેનો ભાગ ગણાય છે. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જેમ પિતાની મિલકતમાં પુત્રોનો ભાગ રહેલો હોય છે તેમ પ્રભુના સ્વરૂપમાં પણ સ્વામિનીઓનો જ ભાગ રહેલો છે.) મૂલ શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનો ભાવ એવો છે કે ગોપીજનોની

બધી ઈન્દ્રિયો નિવૃત્ત થઈ ગઈ.

પછીથી ગોપીજનનો અંદર રહેલો આનંદ જ્યારે પૂર્ણ થયો ત્યારે તેમના શરીરે રોમાંચ થયો. કેવલ આનંદથી-આત્માનંદથી-જો શરીરે રોમાંચ થાય તો ગોપીપણું ન રહે; તેથી ગોપીત્વની સિદ્ધિને માટે શુકદેવજી ‘ઉપગૂઘ આસ્તે’-આલિંગન કરીને ઉભાં રહ્યાં-એ પ્રમાણે આ ગોપીજન વિષે વિશેષ કહે છે. (યોગીઓના હૃદયમાં જ્યારે ભગવાનનો આવિર્ભાવ થાય છે ત્યારે આનંદને લીધે તેમના શરીરે રોમાંચ થાય છે; પરંતુ આ ગોપીજન યોગીઓના જેવાં નથી, કારણ કે તેમણે-ગોપીજને-ભગવાનને આલિંગન કર્યું છે. તેથી આ ગોપીજનમાં કામભાવ મુખ્ય છે, એટલે ગોપીત્વ જ મુખ્ય છે, યોગનો પ્રકાર નહિ.) રસશાસ્ત્રમાં આ રોમાંચની ગણના સાત્ત્વિકભાવમાં કરવામાં આવેલી છે; અને તેથી જ આ ગોપીજન પોતાના હૃદયમાં ભગવાનની સાથે આલિંગન કરી રહ્યાં છે. બીજી અવસ્થા ન આવે એટલા માટે આ ગોપીજન તે જ સ્થિતિ-ભગવાનની સાથે આલિંગનની સ્થિતિ-ધારણ કરી રહ્યાં છે.

શંકા-અરે! આ ગોપીજનને તો આગળ ઉપર અનેક કાર્ય કરવાનાં છે-ભગવાનની સાથે સંભોગ કરવાનો છે, તેમની સાથે આલાપ કરવાનો છે, પોતાને ઘેર પાછા જવાનું છે-તો પછી આ ગોપીજન ભગવાનની સાથે આલિંગન કરીને જ આલિંગનની સ્થિતિમાં જ કેમ બેસી રહ્યાં?

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યોગી ઈવ’, યોગીની માફક. યોગી, ખરેખર, તે અવસ્થાથી જ આગળ સર્વ કાર્ય સાધે છે; તેમ આ ગોપીજન પણ તે જ-આલિંગનની જ-અવસ્થાથી બધું સઘાશે એમ માનીને તે જ સ્થિતિમાં બેઠાં છે.

વળી આ ગોપીજન ‘આનન્દસમ્પ્લુતા’ છે, અર્થાત્ આનંદમાં નિમગ્ન થઈ ગએલાં છે, અને તેથી જ આ ગોપીજનને બહારના જગતનું ભાન નથી. ભાન હોય તો જ કાર્યનું અનુસંધાન થઈ શકે. જ્યારે આનંદ પૂર્ણ થાય છે ત્યારે કોઈ પણ પ્રકારનો કામ-અભિલાષ, ઈચ્છા-રહેતો નથી. (જેમ યોગી પોતાની અવસ્થાથી બધું કાર્ય સાધે છે તેમ હું પણ સાધીશ એમ આ ગોપીજન માને છે અને તેથી જ તે તે જ અવસ્થામાં રહે છે. બીજી દૃષ્ટિએ વિચાર કરીએ તો માલમ પડે છે કે આ ગોપીજન આનંદમાં ખૂબ ડૂબી ગએલાં છે તેથી બીજા કોઈ પણ કાર્યનું અનુસંધાન થઈ શકે એમ નથી, એટલે તે તે જ અવસ્થામાં રહ્યાં છે. ૮.

આ પ્રકારે બધાં ગોપીજનોનાં વિશેષ પ્રકારનાં કૃત્યોનું વર્ણન કરીને હવે

શુકદેવજી 'સર્વાસ્તાઃ' ઈત્યાદિ શ્લોકમાં ભગવાને સામાન્ય રીતે સર્વ ગોપીજનોને જે ફલ-વિરહના તાપની નિવૃત્તિરૂપ ફલ-આપ્યું તેનું વર્ણન કરે છે:

સર્વાસ્તાઃ કેશવાલોક-પરમોત્સવનિર્વૃતાઃ ।

જહુર્વિરહજં તાપં પ્રાજ્ઞં પ્રાપ્ય યથા જનાઃ ॥૯॥

તે બધાં ગોપીજનો ભગવદ્દર્શનરૂપી પરમ ઉત્સવથી સુખી થયાં, અને જેમ મનુષ્યો પરમાત્માને પામીને તાપથી મુક્ત થાય છે તેમ તે વિરહતાપથી મુક્ત થયાં. ૯.

બ્રહ્મમાં રજોગુણ ઘણો છે, જ્યારે મહાદેવમાં તમોગુણ ઘણો છે. જે ભગવાન રજોગુણવાળા બ્રહ્માને અને તમોગુણવાળા મહાદેવને પણ મોક્ષરૂપી ફલ આપે છે તેવા ભગવાનને ક્ષુદ્રગુણથી ક્ષોભ પામેલાં આ ગોપીજનોનો ઉદ્ધાર કરવામાં શો પ્રયાસ લાગવાનો હતો? 'ક' એટલે બ્રહ્મા, 'ઈશ' એટલે મહાદેવ અને તે બંનેને 'વ' એટલે મોક્ષરૂપી સુખ જેમનામાંથી મળે છે તે ભગવાન 'કેશવ' કહેવાય છે. આ ગોપીજનોના અને ભગવાનના બધા ગુણો મહાન છે; પણ ભગવાનનું પરોક્ષ ભજન કેવી રીતે કરવું તે આ ગોપીજનો જાણતાં નથી. પરોક્ષભજનનું અજ્ઞાન તે જ ગોપીજનોનો ક્ષુદ્ર-હલકો-ગુણ.) આ પ્રમાણે ગોપીજનોનો ઉદ્ધાર કરવામાં ભગવાનને શ્રમ પડવાનો નથી એ વાત શુકદેવજી 'કેશવ' પદ વડે કહે છે. આ કેશવ ભગવાનનો આલોક, દર્શન અથવા અંદર અને બહારનો પ્રકાશ; તેથી જ તે આલોક જ પરમ ઉત્સવ છે. જેવી રીતે જગતમાં લોકોને મહારાજ્યની પ્રાપ્તિથી અથવા પુત્રની પ્રાપ્તિથી પરમ ઉત્સવ થાય છે તેવી રીતે આ ગોપીજનોને ભગવાનના દર્શનથી અથવા પ્રકાશથી પરમ ઉત્સવ થાય છે. આ પરમ ઉત્સવને લીધે બધાય ગોપીજનો સુખી થયાં. આ પ્રમાણે ગોપીજનોના ઈષ્ટ પદાર્થની સિદ્ધિ થઈ એમ કહેવામાં આવ્યું. ગોપીજનોનું અનિષ્ટ પણ જતું રહ્યું એમ શુકદેવજી 'જહુર્વિરહજમ્' એ શબ્દોમાં કહે છે.

શંકા- અરે! જ્યારે ગોપીજનોનું અનિષ્ટ નાશ પામ્યું અને ઈષ્ટ પ્રાપ્ત થયું ત્યારે તો તે મુક્ત જ થઈ ગયાં. તે સમયે ઘણી આર્તિને લીધે ગોપીજનોનાં પ્રાણ, ઈન્દ્રિય, અંતઃકરણ અને જીવ ભગવાનમાં જ પેસી ગયાં, અને ભગવાનના સંબંધથી જ પરમ આનંદ ભોગવવા લાગ્યાં. ગોપીજનોની આ પરિસ્થિતિમાં તેમને બાહ્ય જગતનું અનુસંધાન સંભવિત ન હતું, અને તેથી તે મુક્ત જ થઈ ગયાં. સંસાર જ્યારે નાશ પામે છે, અને ભગવાનના સાક્ષાત્કારથી જ્યારે પરમ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે કોઈ પણ પુરુષાર્થ બાકી રહેતો નથી.

સમાધાન- આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'પ્રાજ્ઞં પ્રાપ્ય'.

‘પ્રાજ્ઞ’ એટલે સુષુપ્તિ કાલમાં સાક્ષી તરીકે રહેનાર ભગવાન્. શ્રુતિ અને સ્મૃતિમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે સુષુપ્તિ-ગાઢ, સ્વપ્ન વિનાની, નિદ્રા-કાલમાં ભગવાનનો આર્વિભાવ થાય છે. તે સમયે વાસનાસહિત જીવોનો ભગવાનમાં પ્રવેશ થાય છે. જેમ સંસારના અધિકારી મનુષ્યો સુષુપ્તિ કાલમાં આ પ્રાજ્ઞને પ્રાપ્ત કરીને પાછા જાગ્રદવસ્થામાં જગતમાં આવે છે તેમ અહિં પણ ગોપીજનો ભગવાનનો સાક્ષાત્કાર કરીને પાછાં આવશે એ પ્રમાણે તાત્પર્ય છે. સુષુપ્તિકાલમાં પ્રાજ્ઞમાં પ્રવેશ કરીને સંસારાધિકારી મનુષ્યો જાગ્રદવસ્થામાં આ જગતમાં પાછા આવે છે તેનું કારણ એ કે તેઓ જન છે, ઉત્પન્ન થનારા છે, ઉત્તમ અધિકારી નથી. ભગવાન્ તો પોતે પોતાનો સંબંધ દર્શાવવાને માટે જ પ્રકટ થયા છે, નહિ કે ગોપીજનોનો પોતાનામાં લય કરવાને માટે. (સુષુપ્તિકાલમાં જો કે જીવનો પ્રાજ્ઞમાં પ્રવેશ થાય છે છતાં પણ તે સમયે તેનામાં-જીવમાં-અજ્ઞાન રહે છે. ગોપીજનોની પ્રાજ્ઞમાં પ્રવેશ કરતા જીવની સાથે સરખામણી કરવામાં આવી છે, તેથી કોઈને શંકા થાય કે જીવની માફક ગોપીજનમાં પણ અજ્ઞાન રહેતું હશે. પણ આ શંકાને સ્થાન નથી, કારણ કે ભગવાનના સમાગમ સમયે ગોપીજનોને જે જ્ઞાન હતું તે જ્ઞાન ભગવાનના પરોક્ષ ભજન વખતે પણ હતું. ‘તમે ગોપીજનો જ્યારે મારું પરોક્ષ ભજન કરો છો ત્યારે પણ હાલની માફક હું તમારી સમીપ ઉભેલો હોઉ છું, પણ તમે મને પ્રકટ તરીકે જાણી શકતાં નથી, તેથી પરોક્ષ ભજન વખતે પણ મારો સંબંધ હોય છે’ એ જણાવવાને માટે ભગવાન્ હમણાં પ્રકટ થયા છે, અને તેથી ગોપીજનોને વિશેષ પ્રકારનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થતાં તેમનામાં અજ્ઞાનનો સંભવ રહેતો નથી. આ પ્રમાણે સુષુપ્તિકાલમાં પ્રાજ્ઞમાં પ્રવેશ કરતા સંસારી જીવોના કરતાં ગોપીજનો વિલક્ષણ-ભિન્ન પ્રકારનાં-છે. આ ગોપીજનો લૌકિક નથી, તેમ પ્રસિદ્ધ મોક્ષમાર્ગને અનુસરનારાં પણ નથી, પરંતુ ભગવાનની સાથે બાહ્ય સમાગમની અભિલાષાવાળાં છે. ભગવાન્ પણ તેમનો મનોરથ પૂરે જ છે, એટલે ગોપીજનનો મનોરથ પૂર્ણ થશે જ. સુષુપ્તિકાલમાં પ્રાજ્ઞમાં પ્રવેશ કરતા સંસારી જીવોની સાથે ગોપીજનોની જે સરખામણી કરવામાં આવેલી છે તે તો ફક્ત એક જ દૃષ્ટિએ, અને તે એ કે જેમ સુષુપ્તિસમયે પ્રાજ્ઞમાં પ્રવેશ કરતા જીવો મોક્ષના અધિકારવાળા જીવો કરતાં ભિન્ન છે તેમ આ ગોપીજનો પણ મોક્ષના અધિકારવાળા જીવો કરતાં ભિન્ન છે. આ બાબતમાં જ બેની સરખામણી છે, બીજી કોઈ રીતે નહિ.) ૯.

આ પ્રમાણે ભગવાન્ પ્રત્યેના ગોપીજનોના કૃત્યનું વર્ણન કરીને હવે શુકદેવજી ‘તાભિઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં ગોપીજનોની સાથેના ભગવાનના કૃત્યનું

વર્ણન કરે છે:

તાભિર્વિધૂતશોકાભિઃ ભગવાન્ અચ્યુતો વૃતઃ ।

વ્યરોચતાધિકં તાત! પુરુષઃ શક્તિભિર્યથા ॥૧૦॥

હે તાત! શોકરહિત થએલાં તે ગોપીજનની સાથે વિંટળાએલા અચ્યુત ભગવાન્, જેમ પ્રાકૃત પુરુષ શક્તિઓથી શોભે તેમ, અધિક શોભ્યા. ૧૦.

આ ગોપીજનો જો પ્રાકૃત હોય તો તેમની સાથે સંબંધ થતાં ભગવાન્ પણ અધિક પ્રાકૃત થઈ જાય-આ પ્રમાણે જો કોઈને શંકા થાય તો તેનું નિવારણ આ શ્લોકમાં કરવામાં આવે છે.

જો ગોપીજનો પ્રાકૃત હોય તો તેમના સંબંધથી ભગવાન્ પણ પ્રાકૃત થઈ જાય અને તેને પરિણામે ભગવાનની અલૌકિક શોભા તિરોહિત થઈ જાય; અને આવા ભયથી ભગવાન્ પોતે જ પોતાના સ્વાર્થને માટે-પોતાને પ્રાકૃતત્વ પ્રાપ્ત ન થાય અને પોતાની અલૌકિક શોભા જતી ન રહે તેટલા માટે-તિરોહિત થઈ ગયા એમ મનાય; અને તો પછી ગોપીજનોના સમાગમમાં ભગવાનની શોભા અધિક છે એ વાત તો ક્યાં જ રહી? ‘ભગવાન્ ખરેખર રમ્યા નહિ; તેથી તે એકલા રમતા નથી’ એ શ્રુતિ ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાનની રમણની ઈચ્છા છે. ભગવાનને રમણની ઈચ્છા હોવા છતાં પણ જ્યારે પોતે ગોપીજનોથી તિરોહિત થઈ ગયા ત્યારે તો કોઈને એમ શંકા થાય કે ગોપીજનો પ્રાકૃત છે અને તેમના સમાગમથી ભગવાન્ પણ પ્રાકૃત બની જાય અને પોતાની અલૌકિક શોભા ગુમાવી બેસે, એટલે એ ભયથી ભગવાન્ ગોપીજનોથી તિરોહિત થઈ ગયા. આવી શંકા ન થાય તેટલા સારુ આ શ્લોકમાં સ્પષ્ટતા કરવામાં આવે છે કે ગોપીજનોના સમાગમથી તો ભગવાનની અલૌકિક શોભા જતી રહેવાને બદલે ઉલટી વધી, અને તે જ સ્પષ્ટ બતાવી આપે છે કે ગોપીજનો પ્રાકૃત નથી.

(ગોપીજનોને પહેલાં ફક્ત ભગવાનના દર્શનથી આનંદ થયો ન હતો, પણ જ્યારે તેમણે ભગવાનને પોતાના સમાગમમાં જોયા ત્યારે તેમને-ગોપીજનોને-ઘણો આનંદ થયો. તે જ પ્રમાણે) લોકો પણ કેવલ ભગવાનનાં દર્શન કરીને આનંદ પામતા નથી, પરંતુ જ્યારે તેઓ સર્વશક્તિથી જોડાએલા ભગવાનનાં દર્શન કરે છે ત્યારે તેમને ઘણો આનંદ થાય છે. ‘પુંસઃ સ્ત્રિયાશ્ચ રતયોઃ સુખદુઃખિનોર્ન’-પુરુષ અને સ્ત્રી એ બે એક બીજા પ્રત્યે સ્નેહવાળાં હોય, સરખાં સુખી હોય, તો જ સમાગમ રસિક થઈ શકે, પરંતુ બેમાંથી એક સુખી અને બીજું દુઃખી હોય તો તેમનો સમાગમ રસમય થઈ શકતો નથી-એ વાક્યથી જો ગોપીજન પહેલાંની માફક દુઃખી



હોય અને એકલા ભગવાન જ સુખી હોય તો ભગવાનની રસોત્તમતા ન રહે; તેથી શુક્રદેવજી ‘વિઘ્નશોકાભિઃ’ એ પદ વડે કહે છે કે ગોપીજનોનો શોક જતો રહ્યો હતો. આ ગોપીજનોનું વર્ણન તો પહેલાં કરવામાં આવેલું છે. ‘અમે સર્વ રીતે તમારે-ભગવાનને-શરણે આવેલાં છીએ’ એ પ્રમાણેના ગોપીજનોના ગુણો પહેલાં જ વર્ણવવામાં આવ્યાં છે. વચમાં ગોપીજનોને શરણભાવ જતો રહેવાથી શોક થયો; આ શોક દૂર થયો એટલે પહેલાંની માફક જ ગોપીજનો શોકરહિત થઈ ગયાં. ભગવાન ઐશ્વર્ય વિગેરે છ ગુણોવાળા છે, છતાં પણ જો પ્રાકૃત પુરુષની માફક તેમનો કામ કાલપરિચ્છિન્ન, અનિત્ય, થાય, તો ગોપીજનોથી વિલક્ષણતા થાય અને તે શોભે નહિ. (મૂલ શ્લોકમાં ગોપીજનોને માટે ‘તાભિઃ’-પેલાં-એ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. તે એમ બતાવે છે કે ગોપીજનો ભગવાનને સર્વ રીતે શરણે ગએલાં છે, અને તેથી ગોપીજનોનો કામ, અપરિચ્છિન્ન, નિત્ય, છે. જો ગોપીજનોનો કામ પરિચ્છિન્ન, અનિત્ય, માનીએ, તો પછી જ્યારે તેમનામાં કામ ન હોય ત્યારે ભગવાનને શરણે તે જાય નહિ, અને તેને લીધે તેમનામાં ભગવાનનું સર્વપ્રકારનું શરણ સંભવે નહિ. પણ ગોપીજનો ભગવાનને સર્વપ્રકારે શરણે ગએલાં છે એટલે તેમનો-ગોપીજનોનો-કામ નિત્ય છે. ગોપીજનોનો કામ નિત્ય હોય અને ભગવાનનો કામ પ્રાકૃત પુરુષની માફક અનિત્ય હોય તો ગોપીજનો અને ભગવાન એ બેની વચ્ચે વિલક્ષણતા આવે અને તેથી ભગવાન શોભે નહિ.)

ભગવાન તો પૂર્ણકામ છે એમ શુક્રદેવજી ‘અચ્યુતઃ’ એ પદ વડે કહે છે. (ભગવાન પૂર્ણકામ છે, પણ ગોપીજનો પૂર્ણકામ નથી. જો ભગવાનની માફક ભક્તો પણ પૂર્ણકામ હોય તો તેમને ભગવાનની અપેક્ષા રહે નહિ એમ ‘આનન્દાદયઃ પ્રધાનસ્ય’ એ બ્રહ્મસૂત્રમાં કહેલું છે. આ ગોપીજનોનો કામ અપરિચ્છિન્ન, નિત્ય, છે, જ્યારે ભગવાન પૂર્ણકામ જ છે, તેથી ભગવાનનો કામ કાલપરિચ્છિન્ન, અનિત્ય, હોઈ શકે જ નહિ.) ભગવાન અને ગોપીજન એ બંનેનો કામ અપરિચ્છિન્ન, નિત્ય, હોવાથી ગોપીજનોથી વિંટળાએલા ભગવાન પોતાના સ્વભાવિક-એકલા-સ્વરૂપના કરતાં વધારે શોભવા લાગ્યા.

(મૂલ શ્લોકમાં જે ‘તાત’ સંબોધન છે તેનું રહસ્ય સમજાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી કહે છે કે) જેમ પિતા સ્વાર્થને માટે પુત્રનું પોષણ કરે છે તેમ શ્રોતા પણ વક્તાએ જે અર્થ કહ્યો હોય તેમાં વિશ્વાસ દર્શાવીને વક્તાનું ખરેખર પોષણ કરે છે. તેથી જ આગળ ભગવલ્લીલારૂપી અતિગુપ્ત અર્થ કહીને વક્તા શ્રોતાને સુખ આપે છે. આમ ન હોય તો શ્રોતાને ભગવલ્લીવારસના અનધિકારી માનીને વક્તા

તેને ભગવલ્લીલારૂપી અલૌકિક અર્થ કહે નહિ. શુકદેવજી આ ચાલતા પ્રસંગમાં પરીક્ષિત રાજાનો પોતાનામાં વિશ્વાસ જોઈને અતિ સંતોષથી અને સ્નેહથી પિતાની માફક રાજાને 'તાત' એ પ્રમાણે સંબોધે છે.

અરે! ગોપીજનોના સમાગમથી ભગવાનની શોભામાં વધારો થાય, તો પછી તારતમ્યને લીધે-શોભામાં અધિકતા થવાને લીધે-ભગવાનની શોભા સ્વભાવિક નહિ રહે, પણ વિકારી થશે. આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'પુરુષઃ શક્તિભિર્યથા'. જેમ માણસનું અધું સામર્થ્ય-અધી શક્તિઓ-તિરોહિત રહે તો પ્રાકૃત માણસ પણ લોકોની દષ્ટિએ શોભતો નથી, પણ જ્યારે તે ક્રિયાશક્તિ, જ્ઞાનશક્તિ વિગેરે પોતાની શક્તિઓ પ્રકટ કરે છે ત્યારે લોકોની દષ્ટિમાં તે વધારે શોભે છે, તેમ આ ભગવાન પણ શોભાયમાન જ છે, પણ જ્યારે ગોપિકાઓરૂપી એમની શક્તિઓ પ્રકટ હોય છે ત્યારે અધાંની દષ્ટિએ અને ભાવુક પુરુષોના અંતઃકરણમાં અધિક શોભે છે, અતિ સુંદર લાગે છે. તેથી જ આ ભગવાન છે, આ જ પરમાનંદવાળા છે, અને શ્રુતિ પણ કહે છે કે 'આ જ ભગવાન ખરેખર આનંદ આપનાર છે.' ૧૦.

ગોપીજનોમાં આનંદ ઉત્પન્ન કરવાને માટે ભગવાને જે કર્યું-પોતાની જે વ્યાપકતા પ્રકટ કરી-તેનું વર્ણન શુકદેવજી 'તાઃ સમાદાય' ઈત્યાદિ શ્લોકમાં કરે છે:

તાઃ સમાદાય કાલિન્દ્યા નિર્વિશ્ય પુલિનં વિભુઃ ।

વિકસત્કુન્દમન્દાર-સુરભ્યનિલષટ્પદમ્ ॥૧૧॥

તેમને-ગોપીજનોને-સાથે લઈને યમુનાજીના ખીલતાં કુંદ અને મંદાર પુષ્પોથી સુવાસિત થએલા વાયુવાળા અને ભ્રમરોવાળા તીર પર પધારીને ભગવાન પોતે વિભુ-વ્યાપક-થયા. ૧૧.

તે ગોપીજનોને સારી રીતે લઈને સુંદર તીરે બેસીને ભગવાન વ્યાપક થયા; અર્થાત્ અધાંય ગોપીજનોની સમીપ થયા. 'કાલિન્દી' એટલે કલિન્દ પર્વતની કન્યા. કલિને-કલહને-જે કાપી નાખે છે, નાશ કરે છે, તે કલિન્દ. તેથી કાલિન્દીના, યમુનાજીના, તટ ઉપર ગોપીજનોની અંદર પરસ્પર મદ અને માનને લીધે કલહ નહિ થાય, તેમ જ ભગવાનની સાથે પણ કલહ નહિ થાય એમ જણાવવામાં આવ્યું. (અહિં યમુનાજીના તટમાં કલિનો નાશ કરવા રૂપી ધર્મ પ્રકટ થયો છે અને તેથી પૂર્વલીલામાં યમુનાજીનો જે તટ હતો તેનાથી આ તટ ભિન્ન પ્રકારનો છે. પૂર્વલીલામાં યમુનાજીનો જે તટ હતો ત્યાં તો ગોપીજનોનાં મદ અને માન સંભવે, એટલે તે તટમાં તે વખતે કલિનું ખંડન કરવા રૂપી ધર્મ પ્રકટ ન હતો. આ ભાવ દર્શાવવાને માટે

‘નઘાઃ પુલિનમાવિશ્ય’ એ છલ્વીસમા અઘ્યાયના પિસ્તાલીસમા શ્લોકમાં ‘કાલિન્દી’ પદ ન વાપરતાં ‘નદી’ પદ વાપરવામાં આવ્યું છે.)

હવે યમુનાજીનો તટ ક્રીડાને માટે યોજ્ય છે એટલા સારુ શુકદેવજી દોઢ શ્લોકમાં તેનું બઘી બાજુથી, ઉપરથી અને નીચેથી એમ ત્રણ પ્રકારે વર્ણન કરે છે.

પ્રથમ શુકદેવજી યમુનાજીના તટનું સર્વ પ્રકારના-ચારેય બાજુના-સૌભાગ્યનું વર્ણન કરે છે.

વિકાસ પામતાં કુંદ અને મંદાર પુષ્પો; તેમનો સુગંધિ વાળો પવન અને ષટ્પદ-ભમરાઓ-જ્યાં છે તેવા પ્રકારનો યમુનાજીનો તટ. અહિં વાયુના ત્રણેય ગુણો-શીત, મંદ અને સુગંધિ-સ્પષ્ટ છે. મકરંદ પણ પુષ્પોમાં અધિક છે, અને તેનાથી મત્ત થએલા ભમરાઓ પણ નાદ ઉત્પન્ન કરનારા હોવાથી તેમનો ગાન વિગેરેમાં ઉપયોગ થઈ શકે. વિકાસ એ વાયુનો જ અર્થ છે; કુંદપુષ્પની ગંધ શાંત છે; મંદાર પુષ્પની ગંધ પુષ્ટ-ઘન-છે. આ પ્રકારે ગુપ્ત અને અગુપ્ત-પ્રકટ-કામનો ઉદ્ભોઘક છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું.

(મૂલ શ્લોકમાં ‘વિકસત્’-વિકાસ પામતાં-એમ જે શત્રંત-વર્તમાન કૃદંત-પદ વાપરવામાં આવ્યું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાન્ જે સમયે યમુનાજીના તટ ઉપર બિરાજ્યા તે જ સમયે વિકાસનો આરંભ થયો, તે પહેલાં નહિ. આ પ્રમાણે જો ન હોય તો શુકદેવજી મૂલ શ્લોકમાં ‘વિકસત્’ને બદલે ‘વિકસિત’ એમ ભૂતકૃદંતનો પ્રયોગ કરત. આ પ્રમાણે હોવાથી જે ક્ષણે જે પદાર્થનો ઉપયોગ હોય છે તે જ ક્ષણે તે કાર્ય થાય છે, બીજી ક્ષણે નહિ; તેથી અહિંની સર્વ વસ્તુઓ પણ ફક્ત લીલાની ઉપયોગી જ છે એમ જણાવવામાં આવે છે. આમ જો ન હોય તો સાડા ત્રણ અઘ્યાયમાં વર્ણવેલી લીલા કરવામાં આવતાં રાત્રિનો ઘણો ભાગ ચાલ્યો ગયો, અને તેથી હમણાં જ વિકાસનું બીજું કારણ ન હોવાથી વિકાસ થાય નહિ, અને તેથી જ શુકદેવજી તેનું-વિકાસનું-વર્ણન પણ કરે નહિ. આ પ્રમાણે હોવાથી આવા-વિકાસ પામતા-કુંદ વિગેરે પુષ્પોની સાથે પવન વિગેરેનો સંબંધ છે એમ વર્ણન કરેલું હોવાથી પવન વિગેરે પણ હમણાં જ પ્રવૃત્ત થયા, પહેલાં નહિ એમ જાણવું.)

સ્વતંત્ર રીતે પણ સુગંધ જણાય તેટલા માટે મૂલ શ્લોકમાં સુગંધિ પવન કહેવામાં આવ્યો છે. આ પ્રમાણે યમુનાજીના તટની ચારે બાજુ જલ, ચારે બાજુ સુગંધ, ચારે બાજુ પુષ્પો, ચારે બાજુ વાયુ અને ચારે બાજુ નાદ છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ૧૧.

હવે યમુનાજીનો તટ ઉપરથી પણ ઉત્તમ છે એમ શુકદેવજી ‘શરત્’ ઈત્યાદિ

શ્લોકમાં કહે છે :

શરચ્ચન્દ્રાંશુસન્દોહ-ધ્વસ્તદોષાતમઃશિવમ્ ।

કૃષ્ણાયા હસ્તતરલાચિતકોમલવાલુકમ્ ॥૧૨॥

શરદ્ ઋતુના ચંદ્રનાં કિરણોના સમૂહથી રાત્રીનો અંધકાર જ્યાં નાશ પામ્યો હતો, અને તેથી જે તીર અત્યંત કલ્યાણરૂપ હતું, અને શ્રીયમુનાજીના તરંગરૂપી-મોઝાંરૂપી-હસ્તોથી જ્યાં કોમલ રેતી પથરાઈ ગઈ હતી (એવા પ્રકારનું શ્રીયમુનાજીનું તીર હતું.) ૧૨.

શરદ્ ઋતુના જે ચંદ્રનાં કિરણો, તેમનો જે સમૂહ, તેનાથી દોષાનો-રાત્રીનો-અંધકાર નાશ પામ્યો છે જ્યાં (એવા પ્રકારનું યમુનાજીનું તીર); તેથી તે તીર અત્યંત કલ્યાણરૂપ છે. રાત્રીનો અંધકાર જતો રહ્યો હોય, છતાં પણ જો તે સમયે ભૂત વિગેરે રહ્યાં હોય, તો તો તે ઠીક નહિ; તેથી જ રાત્રી કલ્યાણરૂપ છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે; આગળ ઉપરનું ઈષ્ટ કાર્ય નિર્વિઘ્ન સિદ્ધ થઈ જશે એ જણાવવાને માટે પણ રાત્રીને કલ્યાણરૂપ કહેવામાં આવી છે. શ્રીયમુનાજીના તીરની આજુબાજુ આવેલા પદાર્થો હલકા પ્રકારના નથી, તેમ જ ઉપર તથા નીચે આવેલા પદાર્થો પણ હલકા નથી. હવે શુક્રદેવજી શ્રીયમુનાજીના તીરની નીચે આવેલા પદાર્થોના ધર્મોનું વર્ણન 'કૃષ્ણા' ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કરે છે. શ્રીયમુનાજીનું નામ કૃષ્ણા છે, અને તેથી ભગવાનનું નામ ધારણ કરનાર શ્રીયમુનાજીએ પણ ભગવાનના રમણને માટે ભૂમિનો સંસ્કાર કર્યો. શ્રીયમુનાજીના હસ્તરૂપ જે તરંગો-મોઝાં-તેનાથી પથરાએલી હતી કોમલ રેતી જ્યાં, એવા પ્રકારનું તીર. જો શ્રીયમુનાજીને મોઝાંરૂપી હાથ ન હોત તો તીર ઉપર રેતી સરખી રીતે પથરાઈ ન હોત. આ પ્રમાણે રેતી શીત, કોમલ અને સરખી પથરાએલી છે એમ કહેવામાં આવ્યું. આવા તટ ઉપર જઈને ભગવાન વ્યાપક બન્યા, દરેક ગોપીજનની સમીપ ઉભા; અથવા તો આવા તટ ઉપર જઈને ભગવાન ઉભા રહ્યા. ભગવાનની તટ ઉપર બેસવાની વાત શુક્રદેવજી આગળ ઉપર ચૌદમા શ્લોકમાં કહેશે, કારણ કે જ્યારે ગોપીજનો ભાવથી આસન રચે છે ત્યારે જ ભગવાન બેસે છે. (હમણાં ગોપીજનોએ ભાવથી આસન રચ્યું નથી, તેથી ભગવાન તટ ઉપર બેઠા નહિ. આસન રચવાની વાત તેરમા શ્લોકમાં કહેવામાં આવશે.) ૧૨.

પછી ગોપીજનોને ભગવદાનંદ પ્રાપ્ત થયો અને ભગવાનને માટે આસન રચ્યું એ વાત શુક્રદેવજી 'તદર્શનાત્કાદ' એ શ્લોકમાં કહે છે :

તદ્દર્શનાહ્લાદવિધૂતહ્રદ્જો મનોરથાન્તં શ્રુતયો યથા યયુઃ ।

स्वैरुत्तरीयैः कुयकुङ्कुमाङ्कितैः अथीकवृपत्रासनमात्मबन्धवे ॥१३॥

આ પ્રકારના ભગવાનના દર્શનના આનંદથી ગોપીજનોનાં હૃદયનાં દુઃખ નાશ પામ્યાં, અને જેમ શ્રુતિઓએ ભગવદ્ગુણગાન કરીને ભગવદાનંદ પ્રાપ્ત કર્યો તેમ ગોપીજનોએ પણ ભગવદાનંદ પ્રાપ્ત કર્યો. તેમણે પોતાના આત્માના બંધુ એવા ભગવાનને માટે સ્તનોના કુંકુમથી અંકિત થએલા પોતાના ઉત્તરીય વસ્ત્રોથી આસન રચ્યું. ૧૩.

‘તાભિર્વિધૂતશોકાભિઃ’ એ દસમા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે ગોપીજનોનો શોક જતો રહ્યો; છતાં પણ હજુ તેમનો તાપાત્મક કામ તો છે જ, કારણ કે હજુ સુધી તેમનો ભગવાનની સાથે સંબંધ થયો નથી. જ્યારે ભગવાન શ્રીયમુનાજીના તીરે ગોપીજનોને માટે ગયા છે, ત્યારે તો તે અવસ્થામાં રહેલા ભગવાનના દર્શનથી ભવિષ્યમાં હવે ભગવાનની સાથે સંબંધ થશે એ નિશ્ચયથી ગોપીજનોને જે આનંદ થયો તેનાથી તેમના હૃદયના રોગો નાશ પામ્યા. આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપીજનોના દોષ નાશ પામ્યા ત્યારે તેમની જે સ્થિતિ થઈ તેનું વર્ણન કરતાં શુક્રદેવજી કહે છે કે ‘મનોરથાન્તં યયુઃ’. ભગવાનની સાથેના કોઈ પણ પ્રકારના સંબંધની ગોપીજનોને ઈચ્છા હતી; પરંતુ તેમનો ભગવાનની સાથે અનંત ગુણની સામગ્રીવાળો સંબંધ થયો, અર્થાત્ ધાર્યો હતો તેના કરતાં પણ ઘણો સારો સંબંધ થયો. તેથી મનોરથનો પણ અંત જ્યાં હોય છે તેવા પ્રકારનો ભગવદાનંદ ગોપીજનોએ પ્રાપ્ત કર્યો.

અરે! ગોપીજનોએ આવા અનંતગુણવાળા ભગવદાનંદની અભિલાષા રાખી ન હતી, તો પછી તેમણે તે આનંદ કેવી રીતે મેળવ્યો? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુક્રદેવજી કહે છે કે ‘શ્રુતયો યથા’. શ્રુતિઓ, ખરેખર, હંમેશાં ભગવાનના ગુણોનું વર્ણન કર્યા જ કરે છે; અને આ પ્રકારે ભગવદ્ગુણનું વર્ણન કરવાથી, વાણીના પૂર્વરૂપ મનથી પણ જે અગમ્ય છે તે ભગવત્સ્વરૂપનું શ્રુતિઓને જ્ઞાન થયું. બધા મનોરથોનો અંત ભગવદાનંદમાં છે, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ‘મન સાથે જેને પ્રાપ્ત કર્યા વિના જ્યાંથી વાણી પાછી વળે છે.’ આવા પ્રકારના ભગવાનના સ્વરૂપનું શ્રુતિઓ પ્રતિપાદન કરે છે. સર્વ વિચારકો પણ માને છે કે શ્રુતિઓ ભગવાનના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરે છે. (બીજી રીતે અર્થ એવો થાય છે કે શ્રુતિ સ્મૃતિ વિગેરે ઉપરથી જણાય છે કે બીજાઓને જે ભગવાનનું જ્ઞાન થાય છે તે શ્રુતિને આધારે જ થાય છે.) ‘ઉપનિષદ્માં વર્ણવેલા તે પુરુષ વિષે હું પ્રશ્ન કરું છું’, ‘તેથી હું લોક અને વેદમાં પુરુષોત્તમ તરીકે પ્રસિદ્ધ છું’, ‘બધા વેદો જે પદનું-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય

બ્રહ્મનું-વર્ણન કરે છે' ઈત્યાદિ વાક્યો ઉપરથી નિર્ણય થાય છે કે બ્રહ્મના વિષયમાં શ્રુતિઓ પ્રમાણ છે. 'બધાં ઉપનિષદોથી જેનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે તે બ્રહ્મ જ છે, કારણ કે વિધિવાક્યમાં ભેદ નથી' એ બ્રહ્મસૂત્ર ઉપરથી પણ એ જ નિર્ણય થાય છે. (આ પ્રમાણે શ્રુતિઓએ મનોરથોનો જ્યાં અંત આવે છે એવા બ્રહ્મનું જ્ઞાન મેળવ્યું; તે પણ ભગવત્કૃપાથી જ, પોતાના સામર્થ્યથી નહિ.) વેદમાં જેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવેલું છે તે અલૌકિક છે, અને વેદના શબ્દો પણ અલૌકિક છે. વેદના શબ્દોનો સંકેત લોકમાં નથી, છતાં પણ વેદના શબ્દો હંમેશાં જ ભગવાનના કાર્યનું વર્ણન કરે છે, એટલે વેદના શબ્દોનું શ્રવણ કરવાથી લોકોનાં અંતઃકરણ શુદ્ધ થાય છે, અને તેઓ પોતે જ ભગવાનના અનુગ્રહને લીધે જ વેદમાં વર્ણવેલા અલૌકિક પરમાત્માનું જ્ઞાન મેળવવાને માટે સમર્થ છે એમ માને છે. શ્રુતિ પણ જે ભગવાનનું પ્રતિપાદન કરે છે તે ભગવાનની તે પ્રકારની ઈચ્છાને લીધે જ, નહિ કે શ્રુતિના પોતાના સામર્થ્યથી. ભગવાનનું પ્રતિપાદન કરવામાં શ્રુતિને કોઈ પણ લૌકિક સાધનની અથવા તો યુક્તિની અપેક્ષા નથી. તે જ પ્રમાણે આ ગોપીજનો પણ જ્યાં બધા મનોરથોનો અંત છે એવો ભગવદાનંદ મેળવે છે.

(શ્રુતિઓમાં બે ભાગ છે: એક ભાગમાં ભગવાનના સ્વરૂપના અનુભવનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, જ્યારે બીજા ભાગમાં ભગવાનના સ્વરૂપનો અનુભવ કરવાને માટે જે સાધનો છે તેનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. શ્રુતિ કહે છે કે 'યતો વાયો નિવર્તતે અપ્રાપ્ય મનસા સહ'—મન સાથે ભગવાનને પ્રાપ્ત કર્યા વિના જ્યાંથી વાણી પાછી વળે છે—આ ઉપરથી જણાય છે કે માણસ ફક્ત પોતાની શક્તિથી જ ભગવાનનો અનુભવ કરી શકતો નથી. પણ જ્યારે શ્રુતિઓ ભગવાનના સ્વરૂપનું વર્ણન કરે છે ત્યારે સ્પષ્ટ માલમ પડે છે કે ભગવાનના સ્વરૂપનો અનુભવ ફક્ત ભગવાનની કૃપાથી જ થઈ શકે છે. શ્રુતિઓને પહેલાં ભગવત્સ્વરૂપનો અનુભવ ન હતો, પણ હંમેશાં ભગવાનના ગુણોનું કીર્તન કરવાથી તેમના ઉપર ભગવાનની કૃપા થઈ, અને તેથી જ—ભગવત્કૃપાના બલથી જ—ભગવદાનંદનો તેમને અનુભવ થયો. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ માલમ પડે છે કે ભગવાનનું સર્વભાવથી ભજન કરવું એ પ્રકારના શ્રુતિમાં જણાવેલા ધર્મનું શ્રવણ કરીને તે પ્રમાણે કરવાથી ભગવાનનો અનુગ્રહ થાય છે અને તેથી ભક્તિ ઉત્પન્ન થતાં ભક્ત પાતે જ ભગવદાનંદનો અનુભવ કરવાને માટે યોગ્ય થાય છે. ગોપીજનોના ચાલતા પ્રસંગમાં પણ આપણે જોઈએ છીએ કે ૨૬ થી ૨૮ાં એમ સાડા ત્રણ અધ્યાયમાં ગોપીજનોનો ભગવાન પ્રતિ જે સ્નેહ છે તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે; તે સ્નેહને લીધે ભગવાન ગોપીજનોને વશ થાય છે, અને

તેથી જ ગોપીજનો ભગવદાનંદ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. બીજા પુણ્યશાળી ભક્તો પણ ગોપીજનોનાં વચનોનું શ્રવણ, કીર્તન વિગેરે કરીને અને ગોપીજનોના ભાવને અનુસરીને ભગવાનનું ભજન કરીને ભગવદાનંદનો અનુભવ કરી શકશે એમ તાત્પર્ય છે.

અહિં કોઈને શંકા થાય કે જ્યારે ભગવાન સર્વ પ્રકારે વાણીનો વિષય થઈ શકે નહિ ત્યારે તો ‘વેદો હંમેશાં ભગવાનના કાર્યનું વર્ણન કરે છે’ એ વાત પણ સંભવે નહિ, કારણ કે જ્યારે વેદો ભગવાનના કાર્યનું વર્ણન કરે ત્યારે તો ભગવાનનું સ્વરૂપ વાણીનો વિષય થઈ જાય. વળી, શ્રુતિઓ ભગવાનના ગુણોનું જે વર્ણન કરે છે તેને પરિણામે ભગવદાનંદનો અનુભવ થાય છે એમ જે પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે તે પણ આ પ્રમાણે-ભગવાન સર્વ રીતે વાણી અને મનનો વિષય નથી તે કારણથી-બાધિત થશે; અને તેથી શ્રુતિઓએ ભગવદાનંદ મેળવ્યો એ વાતને પણ બાધ આવશે. તેથી ભગવાન ઇક્ત નિષેધ દ્વારા જ વાણીનો વિષય થઈ શકે છે, વિધિ દ્વારા નહિ એ પ્રમાણે ‘યતો વાયો નિવર્તતે’ ઇત્યાદિ શ્રુતિનું તાત્પર્ય છે. ભગવાન પહેલાં સર્વ રીતે વાણીનો વિષય ન હતા, પણ પછીથી પોતાની ઇચ્છાથી જ વાણીનો વિષય બન્યા એ પ્રમાણે શ્રુતિનું તાત્પર્ય નથી. તેથી મૂલ શ્લોકમાં ‘મનોરથાન્તં શ્રુતયો યથા યયુઃ’ એ પ્રમાણે જે દષ્ટાંત આપવામાં આવેલું છે તે ઇક્ત પ્રાપ્તિની-મેળવવાની-બાબત પૂરતું જ ગણવાનું છે. મનોરથાંતની-ભગવદાનંદની-પ્રાપ્તિ ગમે તેમ કલ્પીને તેમાં દષ્ટાંત ઘટાવવાની જરૂર જરા પણ નથી.

આ શંકાનું નિરાકરણ નીચે પ્રમાણે છે. વેદનાં વાક્યો ભગવાનનું પ્રતિપાદન કરે છે. શબ્દોની અર્થ દર્શાવનારી શક્તિ (અભિધાશક્તિ) જાણ્યા વિના વેદના વાક્યોના અર્થનું જ્ઞાન સંભવતું નથી. જગતમાં વેદના શબ્દો પ્રસિદ્ધ ન હોવાથી વેદનાં વાક્યોના શબ્દોની શક્તિનું જ્ઞાન પણ સંભવતું નથી. તેથી વેદવાક્યોના અર્થનું જ્ઞાન ઇક્ત ભગવદિચ્છાથી જ થઈ શકે છે. તેથી જ ભગવાન ગીતાજીમાં કહે છે કે ‘અતોઽસ્મિ લોકે વેદે ચ પ્રથિતઃ પુરુષોત્તમઃ’, તેથી જ લોક અને વેદમાં હું પુરુષોત્તમ તરીકે પ્રસિદ્ધ છું. મોક્ષમાર્ગનો નાશ ન થાય એટલા માટે ભગવાનની ઇચ્છાથી જ વેદના શબ્દોનું જ્ઞાન થાય છે. ‘મોક્ષમિચ્છેજ્જનાર્દનાત્’, જનાર્દન ભગવાન પાસેથી મોક્ષની ઇચ્છા કરવી, એ વાક્યથી જણાય છે કે મોક્ષ એકલા ભગવાન પાસેથી જ મળે છે. ‘તમેવં વિદ્વાન્’ ઇત્યાદિ શ્રુતિથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે એકલા જ્ઞાનથી જ મોક્ષ મળે છે. જો ભગવાનની ઇચ્છા વેદના શબ્દોનું જ્ઞાન કરાવવાની ન હોય તો મોક્ષ મેળવવાનાં બીજાં સાધનો ન હોવાથી અને મોક્ષનું સાધન જ્ઞાન પણ ન હોવાથી

મોક્ષનો નાશ જ થઈ જાય. તે પ્રમાણે ન થાય એટલા માટે જ ભગવાનની ઈચ્છાથી જ વેદના શબ્દોનું જ્ઞાન થાય છે અને તેથી મનુષ્યો મોક્ષ મેળવી શકે છે.

મનુષ્યોના સર્વ પુરુષાર્થ સિદ્ધ થાય એટલા માટે તો ભગવાને વેદને પ્રકટ કર્યા છે. તેમાં જે સાધનાત્મક રૂપ વડે જે પુરુષાર્થ જે પ્રકારના અધિકારીનો સિદ્ધ થાય તે રૂપ, તે પુરુષાર્થ અને તે અધિકારીનું શ્રુતિએ મોક્ષપર્યંત નિરૂપણ કર્યું છે. જેમ વીણા વગાડનારની ઈચ્છા પ્રમાણે જુદા જુદા અર્થવાળા શબ્દો વીણામાંથી ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રમાણે ભગવદ્દિચ્છાને અનુસરીને શ્રુતિએ જુદા જુદા રૂપ, પુરુષાર્થ, અધિકારી વિગેરેનું નિરૂપણ કર્યું છે; અને જેમ વીણા વગાડનાર પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે શબ્દ ઉત્પન્ન થવાથી વીણાની ઉપર સંતુષ્ટ થઈને તે વીણાનું અનેક પ્રકારે રક્ષણ કરે છે, તેમ ભગવાને પણ રૂપ પ્રકટ કરીને શ્રુતિઓને આનંદ આપ્યો. ભગવાને જે રૂપ પ્રકટ કરીને શ્રુતિઓને જે આનંદ આપ્યો તે રૂપનું અને તે આનંદનું પહેલાં શ્રુતિઓને જ્ઞાન ન હતું, અને હમણાં પણ ભગવાનનો આનંદ મન અને વાણીનો વિષય નથી. આ પ્રકારની પણ ફલાત્મક વસ્તુ છે એ જણાવવાને માટે શ્રુતિઓ કહે છે કે-‘યતો વાયો નિવર્તતે અપ્રાપ્ય મનસા સહ ॥ આનન્દં બ્રહ્મણો વિદ્વાન્ ન બિભ્રેતિ કુતશ્ચન ॥’ આ શ્રુતિમાં જે પૂર્વાર્ધ છે તે ‘આનન્દ’નું વિશેષણ છે. ફલરૂપ વસ્તુના અનુભવ પહેલાં ‘રસો વૈ સઃ, રસં દ્યેવાયં લબ્ધ્વા આનન્દીભવતિ’ ઈત્યાદિ શ્રુતિઓમાં જે ભગવત્સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવેલું છે તે ભગવત્સ્વરૂપ ફક્ત સર્વાત્મભાવથી જ પ્રાપ્ત થાય એમ છે, બીજે પ્રકારે નહિ, એમ જણાવવાને માટે સર્વાત્મભાવનું વ્યાખ્યાન કરવું અશક્ય હોવાથી સર્વાત્મભાવ દર્શાવનારા ધર્મનું વર્ણન ‘આનન્દં બ્રહ્મણો વિદ્વાન્’ ઈત્યાદિ ઉત્તરાર્ધમાં કરવામાં આવેલું છે. આવા પ્રકારનો આનંદ જેણે જાણ્યો અથવા મેળવ્યો તે કોઈનાથી બીતો નથી, તે લોક અને વેદથી બીતો નથી એટલું જ નહિ પરંતુ પરીક્ષા કરવાને માટે જે સાક્ષાત્ ભગવાનની આજ્ઞા હોય તેના ઉલ્લંઘનથી પણ બીતો નથી. મોક્ષ મેળવવાનાં જે સાધનો છે તે માણસના પોતાના પ્રયત્નથી થઈ શકે એવાં હોવાથી મોક્ષને માટે શ્રવણ વિગેરે સાધનોનું શ્રુતિમાં નિરૂપણ કરવામાં આવેલું છે; પણ અહિં તો ભગવાનના સ્વરૂપનો આનંદ ફક્ત ભગવાનના અનુગ્રહથી જ મળી શકે એમ હોવાથી મનુષ્યના પોતાના પ્રયત્નથી તે સિદ્ધ થઈ શકતું નથી, અને તેથી જ શ્રવણ વિગેરે સાધનોનો અહિં ફક્ત અનુવાદ જ કરવામાં આવ્યો છે.

આ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ભગવાન નિષેધ દ્વારા જ વાણીનો વિષય બને છે એમ જો માનવામાં આવે તો ‘આનન્દં બ્રહ્મણો વિદ્વાન્’ એ શ્રુતિમાં



ભગવાનના સ્વરૂપનો બોધ કરનારા ‘બ્રહ્મણઃ’ એ પદમાં જે ષષ્ઠી વિભક્તિ છે તે સંબંધવાચક છે એ પક્ષ સ્વીકારતાં બ્રહ્મ અને ષષ્ઠીવિભક્તિનો વિરોધરૂપી દોષ જ પ્રાપ્ત થાય. તેથી મૂલ શ્લોકમાં શ્રુતિઓનું જે દષ્ટાંત આપવામાં આવેલું છે તે ભગવદાનંદની પ્રાપ્તિ સુધીનું જાણવું, ફક્ત પ્રાપ્તિ પૂરતું નહિ, એમ સિદ્ધ થાય છે.)

આ પ્રમાણે પરમ પુરુષાર્થનું દાન કરનાર ભગવાન જો બીજે સ્થલે બેસવાની ઈચ્છા રાખે તો આધારધર્મસંબંધથી પોતાની કૃતાર્થતા ન થાય, તેથી પૂજા અને આત્મનિવેદનને માટે ગોપીજનોએ ભગવાનને માટે આસન રચ્યું એમ શુકદેવજી ‘સ્વૈરુતરીયૈઃ’ પદ વડે કહે છે. (જો ગોપીજનો આસનને માટે ભગવાનને પોતાનાં વસ્ત્રો ન આપે તો ભગવાન ગોપીજનોના સંબંધ વગરની બીજી વસ્તુ ઉપર બેસે, એટલે તેટલા અંશમાં ગોપીજનોની કૃતાર્થતા ન થાય. પુષ્ટિમાર્ગનો તો સિદ્ધાંત છે કે જેમણે ભગવાનને આત્મનિવેદન કરેલું છે તેમની કોઈ પણ વસ્તુ અથવા ઈન્દ્રિય જે ક્ષણે ભગવત્સેવાના ઉપયોગમાં ન આવે તે જ ક્ષણે તે વસ્તુ અને ઈન્દ્રિય નકામી થાય છે. તેથી જે ભક્તોનો નિરોધ થએલો છે તેઓ સર્વત્ર સર્વ પદાર્થમાં ભગવાનના સંબંધની અભિલાષા રાખે છે; અને જ્યારે તે પદાર્થનો ભગવાનની સાથે સંબંધ થાય છે ત્યારે તે પદાર્થ કૃતાર્થ થાય છે, જ્યારે સંબંધ નથી હોતો ત્યારે તે પદાર્થ કૃતાર્થ થતો નથી. સ્વામિનીઓ તો, ખરેખર, પ્રિય પ્રભુની સાથે સર્વ અંશે પોતાનો સંબંધ થાય એમ જ ઈચ્છે છે, કારણ કે સ્વામિનીઓનો એ સ્વભાવ જ છે. પ્રભુ પણ સ્વામિનીઓને માટે હમણાં પ્રકટ થએલા છે, એટલે સ્વામિનીઓ વિના બીજા કોઈની ભગવાનની સાથેના સંબંધને માટે યોગ્યતા નથી એ વાત પણ સ્પષ્ટ છે. આ જ કારણથી ગોપીજનોએ ભગવાનને આસનને માટે પોતાનાં ઉત્તરીય વસ્ત્રો આપ્યાં જેથી આધારધર્મના સંબંધથી કૃતાર્થતા થાય.)

વ્રજમાં રહેનારી સ્ત્રીઓને ત્રણ વસ્ત્રો હોય છે; એક વસ્ત્ર પહેરવાનું. બીજું વસ્ત્ર ચોળી અને ત્રીજું વસ્ત્ર ઉપરનું. બધાંય ગોપીજનોએ પોતાનાં ઉપરનાં વસ્ત્રો આસનને માટે ભગવાનને આપ્યાં. ઉપરનાં વસ્ત્રો પણ બે પ્રકારનાં હોય છે; એક વસ્ત્ર હંમેશાં જ વાપરવાનું અને બીજું વસ્ત્ર ભોગ સમયે વાપરવાનું. ભોગ સમયે વાપરવાનું વસ્ત્ર ઝીણું હોય છે. આ જ વસ્ત્ર ગોપીજનોએ આસનને માટે આપ્યું એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘કુચ્કુલ્કુમાલિક્કતૈઃ’. સ્તન ઉપરનું કુંકુમ સૂકાઈ ગએલું હોય તો પણ ક્ષીડામાં તે ભીનું થઈ જાય છે. તેથી જ ઉત્તરીય વસ્ત્રો કુંકુમના ચિહ્નવાળાં થએલાં હતાં. આવા પ્રકારનાં ઉત્તરીય વસ્ત્રોનું ગોપીજનોએ ભગવાનને માટે આસન રચ્યું.

પોતાનાં ઉપર પહેરવાનાં વસ્ત્રો ગોપીજનોએ નીચે કેમ પાથર્યા એમ જો શંકા થાય તો તેનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘આત્મબન્ધવે’. આત્માના ભગવાન જ અંધુ છે. ગોપીજનોએ પોતાના આત્માનું અત્યાર સુધી જે રક્ષણ કર્યું છે તે ભગવાનને માટે જ કર્યું છે. ‘આત્મબન્ધવે’માં જે ‘આત્મા’ શબ્દ છે તેનો અર્થ ગોપીજનોનો દેહ અને આત્મા થાય છે. તેથી ઉપર પહેરવાનું વસ્ત્ર પણ ભગવાનને માટે જ છે; એટલે ગોપીજનોએ ઉપરના વસ્ત્રનું ભગવાનને માટે આસન રચ્યું. ૧૩.

પછીથી ભગવાન્ ગોપીજનોએ આસન તરીકે આપેલાં વસ્ત્રો દ્વારા તે વસ્ત્રો પહેરનારાં બધાંય ગોપીજનોમાં પધાર્યા એ જણાવવાને માટે ગોપીજનોએ આપેલા આસન ઉપર ભગવાન્ બેઠા એમ ‘તત્રોપવિષ્ટઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે :

તત્રોપવિષ્ટો ભગવાન્ સ ઈશ્વરો યોગેશ્વરાન્તર્હૃદિ કલ્પિતાસનઃ ।

ચકાસ ગોપીપરિષદ્ગતોઽર્ચિતઃ ત્રૈલોક્યલક્ષ્મ્યેકપદં વપુર્દધત્ ॥૧૪॥

યોગેશ્વરના હૃદયની અંદર જેમનું આસન કલ્પિત છે એવા ભગવાન્ ઈશ્વર તે વસ્ત્રો ઉપર બેઠા (અને તે દ્વારા બધાં ગોપીજનોમાં બિરાજ્યા); ત્રણ લોકની લક્ષ્મીની શોભાના એક જ સ્થાનરૂપ શરીરને ધારણ કરી, ગોપીજનોની સભામાં બિરાજતા અને ગોપીજનોથી પૂજાએલા એવા ભગવાન્ અતિ શોભા પામ્યા. ૧૪.

મૂલ શ્લોકમાં જે ‘ભગવાન્’ પદ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ગોપીજનોનાં તે બધાં વસ્ત્રો પોતાના દ્વારા ગોપીજનોનો ભગવાનની સાથે સંબંધ કરી આપે છે, કારણ કે તે વસ્ત્રો ઉપર બેસનાર ભગવાન્ છે. (આથી સ્પષ્ટ સમજાય છે કે ભગવાનને સમર્પણ કરવામાં આવેલો પદાર્થ જો ભગવાન્ સ્વીકારે તો તે સમર્પિત પદાર્થ દ્વારા સમર્પણ કરનારનો પણ ભગવાનની સાથે સંબંધ થશે એ ભાવથી જ ભક્તોએ બધા પદાર્થો ભગવાનને સમર્પિત કરવા જોઈએ.)

અરે! ગોપીજનોનાં ઉત્તરીય વસ્ત્રો જતાં રહે ત્યારે તો સભામાં રસનો આભાસ થઈ જાય, તો પછી ભગવાન્ ત્યાં કેવી રીતે બેઠા? આ પ્રમાણે શંકા કરવામાં આવે તો શુકદેવજી કહે છે કે ‘સ ઈશ્વરઃ’. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘સઃ’ પદ છે તેનો અર્થ એ કે પહેલાં જેમની પ્રાર્થના કરવામાં આવેલી હતી તે પ્રભુ. ઈશ્વર બધું કરવાને સમર્થ છે, તેથી ગોપીજનોને દિવ્ય-વ્રતચર્યામાં કામરૂપ-વસ્ત્રો ભગવાને આપ્યાં એમ જણાવવામાં આવ્યું. આ દિવ્ય વસ્ત્રો એવા પ્રકારનાં છે કે જલક્રીડા પછી તેમાં બિનાશ રહેતી નથી. તેથી સર્વ કરવાને સમર્થ એવા ઈશ્વર, જેમની ગોપીજનોએ પ્રાર્થના કરી હતી તે, ત્યાં બિરાજ્યા.

(અથવા તો બીજો અર્થ આ પ્રમાણે થઈ શકે. પહેલાં જ્યારે ભગવાને ગોપીજનોને વરદાન આપ્યું ત્યારે તે સમયે ગોપીજનોનાં બધાં વસ્ત્રો ભગવાને લઈ લીધાં હતાં અને ગોપીજનોના શરીર ઉપર એક પણ વસ્ત્ર ન હતું, છતાં પણ ભગવાનને રસાભાસ ન થયો; તો પછી જ્યારે હમણાં ગોપીજનોનાં ફક્ત ઉત્તરીય વસ્ત્રો જ નથી ત્યારે તે પ્રભુને રસાભાસ શી રીતે થઈ શકે એમ કહેવાને માટે શુકદેવજીએ મૂલ શ્લોકમાં ‘સઃ’ એ પ્રમાણે કહ્યું. અરે! વરદાન આપતી વખતે જ્યારે ગોપીજનોનાં બધાં વસ્ત્રો જ્યારે ભગવાને લઈ લીધાં ત્યારે તે વખતે પણ રસાભાસ કેમ નહિ? આ શંકાનું નિરાકરણ કરવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘ઈશ્વરઃ. કર્તુ સમર્થઃ, અકર્તુ સમર્થઃ’, અને ‘અન્યથાકર્તુ સમર્થઃ’ એ ઈશ્વરનું લક્ષણ છે. ઈશ્વરમાં આ પ્રમાણે કરવાનું સામર્થ્ય હોવાથી, જો રસાભાસ થાય તો તે પ્રમાણે ઈશ્વર થવા જ ન દે; ન કરવાનું સામર્થ્ય હોવાથી, ગોપીજનોએ આપેલું આસન રસાભાસ ઉત્પન્ન કરનારું છે છતાં પણ તે આસનનો ત્યાગ કરી શકે જ નહિ; બીજે પ્રકારે કરવાનું સામર્થ્ય હોવાથી, રસાભાસની રીતે પણ રસ ઉત્પન્ન કરવાને ઈશ્વર સમર્થ છે. તેથી આવા ઈશ્વરની બાબતમાં કાંઈ પણ અઘટિત નથી એવો ભાવ છે.)

અરે! ભોગ વિગેરેના લેપવાળાં અપવિત્ર વસ્ત્રો ઉપર ભગવાનું કેમ બેઠા? આ પ્રકારે જો શંકા કરવામાં આવે તો શુકદેવજી કહે છે કે ‘યોગેશ્વરાન્તર્હૃદિ કલ્પિતાસનઃ’. યોગેશ્વરોનાં હૃદય શુદ્ધ હોય છે; તેમાં પણ તેમનું અંદરનું હૃદય વધારે શુદ્ધ હોય છે. યોગેશ્વરોના આવા શુદ્ધ હૃદયમાં પણ ભગવાનના આસનની કલ્પના જ કરવામાં આવે છે, આસન રચવામાં આવતું નથી. યોગેશ્વરોના હૃદયમાં ભગવાનની માનસી મૂર્તિ ઉભી રહે છે, કોઈ પણ સમયે ભગવાન પોતે ત્યાં બિરાજતા નથી. તેથી ભગવાનનું મુખ્ય આસન તો ગોપીજનોએ આપેલાં વસ્ત્રો જ છે.

(લોક અને વેદમાં જે પ્રકારની વસ્તુ પવિત્ર તરીકે સ્વીકારવામાં આવતી નથી તે વસ્તુ પણ ગોપીજનોના સંબંધમાં આવતાં યોગેશ્વરોના અંદરના હૃદયના કરતાં પણ અધિક થઈ જાય છે અને તેથી ભગવાન તેનો સ્વીકાર કરે છે. જ્યારે આવી સ્થિતિ છે ત્યારે તો લોક અને વેદમાં જે વસ્તુ પ્રસિદ્ધ રીતે સ્વીકારવા યોગ્ય ગણાય છે તે વસ્તુ જ્યારે ગોપીજનોના સંબંધમાં આવે ત્યારે ભગવાન તે સ્વીકારે એમાં શું આશ્ચર્ય? આ બધો ભાવ દર્શાવવાને માટે મૂલમાં યોગેશ્વરોના હૃદયની વાત કહેવામાં આવેલી છે.)

આ કારણથી ભગવાન પરમ શોભા પામ્યા. પહેલાંની માફક ગોપીજનોની

સભામાં ભગવાન્ ગયા; અર્થાત્ ભગવાનની આજુબાજુ ગોપીજનો બેઠાં. ગોપીજનોની આ સભાના પતિ-અધ્યક્ષ-ભગવાન્ થયા. તેથી ગોપીજનોએ ભગવાનની પૂજા કરી. પછીથી ગોપીજનોને માટે ત્રણ લોકમાં જેટલાં લક્ષ્મીરૂપ ઈન્દ્રાદિ પદ છે તે બધાંના એક સ્થાનરૂપ, અનેક લક્ષ્મીનો ભોગ કરનારા જેનો માત્ર અંશ જ છે, એવા શ્રીઅંગને ભગવાને ધારણ કર્યું. આ વિષયમાં દેશ, કાલ વિગેરે ભેદથી જેટલા ઉત્તમ પદાર્થોની જરૂર હોય છે તે બધા પદાર્થો ભગવાને ઉપર વણવેલા શ્રીઅંગને ધારણ કરીને પ્રકટ કર્યા. ૧૪.

આ પ્રમાણે ભગવાનને પ્રસન્ન થએલા જોઈને પોતાના અંતઃકરણનો દોષ દૂર કરવાને માટે-પહેલાં ગોપીજનોએ પોતાની જે કૃતઘનતા ભગવાનમાં કલ્પેલી હતી તે કૃતઘનતારૂપી દોષનું નિરાકરણ કરવાને માટે-, લોકદષ્ટિથી ભગવાનમાં કૃતઘનતારૂપી દોષ છે કે નહિ એનો નિર્ણય કરવાને માટે ગોપીજનો ભગવાનને કાંઈક પૂછવા તૈયાર થયાં એમ શુકદેવજી ‘સમાજયિત્વા’ શ્લોકમાં કહે છે. (ભગવાન્ જ્યારે ગોપીજનોનું પરોક્ષ ભજન કરતા હતા ત્યારે તેમણે તે પ્રકારના રસનું-વિરલ રસનું-ગોપીજનોને દાન કર્યું. આ પ્રકારની ભગવાનની ઈચ્છા ગોપીજનો જાણતાં ન હતાં. ગોપીજનોનું આ પ્રકારનું જે અજ્ઞાન તે જ કૃતઘનતારૂપી તેમનો દોષ. ભગવાનમાં દોષ જ ન હોવાથી તેમનામાં ફક્ત દોષનો આરોપ જ સંભવે. આ આરોપ જે પદાર્થ જોવામાં આવે અથવા તો જેનું સ્મરણ થાય તે પદાર્થનો જ થઈ શકે. સ્વામિનીજીઓને તો પોતાના પ્રિય ભગવાન્ વિના બીજા કોઈ પણ ધર્મની સ્ફૂર્તિ થતી નથી, તેથી પોતાનામાં જ રહેલા કૃતઘનતારૂપી દોષનો ભગવાનમાં આરોપ કરવામાં આવેલો છે. જો કે ભગવાનમાં કરવામાં આવતો આ દોષનો આરોપ પણ રસમધ્યપાતી જ છે અને તેથી તેને દોષ કહેવો ઉચિત નથી, છતાં પણ ભગવાનમાં દોષ નથી એમ શાસ્ત્રમાં સિદ્ધ થએલું હોવાથી, ભગવાનમાં કરવામાં આવતો દોષારોપ ભ્રમ હોવાથી શાસ્ત્રરીતિને અનુસરીને જ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. આગળ પણ જ્યાં ‘દોષ’ પદ વાપરવામાં આવ્યું હોય ત્યાં પણ આ જ તાત્પર્ય છે એમ જાણવું.)

સભાજયિત્વા તમ્ અનડ્ગદીપનં સહાસલીલેક્ષણવિભ્રમદ્ભુવા ।

સંસ્પર્શનેનાડકકૃતાઙ્ઘ્રહસ્તયોઃ સંસ્તુત્ય ઈષત્ કુપિતા બભાષિરે ॥૧૫॥

હાસ્યપૂર્વક જે લીલાયુક્ત દર્શન તેનાથી વિલાસ કરતી ભુકૃટિ વડે અનંગને-કામને-ઉત્પન્ન કરનાર ભગવાનની સ્તુતિ કરીને, પોતાના ખોળામાં પધરાવેલા ભગવાનના ચરણોના સંબંધવાળા હસ્તોને લાડ લડાવતાં અને સ્તુતિ

કરતાં ગોપીજનો જરાક કોપ કરીને બોલ્યાં. ૧૫.

ભગવાનને પ્રશ્ન કરવાને માટે ગોપીજનોએ પહેલેથી જ ભગવાનની સ્તુતિ કરી.

અરે! આ વિચારથી-ભગવાનમાં કૃતઘનતારૂપી દોષ છે કે નહિ એ પ્રશ્નના વિચારથી-શો લાભ? જે ફલ પ્રાપ્ત થયું છે તેનો જ ભોગ કરો ને? આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો શુકદેવજી કહે છે કે 'અનઙ્ગદીપનમ્'. ભગવાન્ હંમેશાં જ અનંગનું-કામનું-દીપન કરે છે; ભગવાન્ અનંગનું-અંગના અભાવનું, દેહાનુસંધાનના અભાવનું-સંપાદન કરે છે એ ધ્વનિ છે. (અર્થાત્ ભક્તોને પોતાના દેહનું અનુસંધાન ન થાય એ પ્રમાણે ભગવાન્ કરે છે, અને આનું નામ જ અનંગનું દીપન કરવું.) તેથી એક વાર ભોગ કરવાથી કાર્ય સિદ્ધ થવાનું નથી. વળી તે જ ભોગથી આગળ ઉપર વધારે જ ખેદ થાય. જો આ ખેદ પોતાના-ગોપીજનોના-દોષથી હોય તો તે દોષને દૂર કરવો જોઈએ. જો ભગવાનના ધર્મથી તે ખેદ થયો હોય તો ભગવાન્ પાસે વાણીનો વ્યવહાર કરાવીને અથવા તો વાણીના વ્યવહારની પ્રાર્થના કરીને ફલનો અનુભવ કરવો જોઈએ એમ તાત્પર્ય છે.

ભગવાન્ અનંગનું જે દીપન કરે છે તેનું સાધન જણાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'સહાસ' ઈત્યાદિ. અથવા તો અનંગનું દીપન કરે એવાં સાધનો ભગવાન્ ન રાખે એટલા માટે ભગવાનની પ્રાર્થના કરવી જોઈએ; તેથી મૂલ શ્લોકમાં અનંગનું દીપન કરનારાં સાધનોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. હાસ્યપૂર્વક જે લીલાયુક્ત ઈક્ષણ, તેનાથી વિલાસ પામતી જે ભ્રુકુટિ, તેનાથી ભગવાન્ અનંગનું દીપન કરે છે. અહિં અનંગનું દીપન કરવામાં પાંચ સાધનો ગણાવવામાં આવેલાં છે: હાસ્ય, લીલા, ઈક્ષણ, વિલાસ અને ભ્રુકુટિ. જો પાંચ પદાર્થોથી કાર્ય સાધવામાં આવેલું હોય તો તે કાર્ય અગડતું નથી. (એમ લોકમાં કહેવત છે.) ભગવાનના હાસ્યરૂપી માયા વ્યામોહ કરનારી છે એટલે તે સ્વરૂપનું વિસ્મરણ કરાવે છે; લીલા પોતાની આસક્તિ સાધે છે; ઈક્ષણ તેમાં જ્ઞાન ઉત્પન્ન કરે છે, જો આ પ્રમાણે ન હોય તો બીજા પદાર્થના જ્ઞાનથી ગોપીજનોની ભગવાનમાં રહેલી આસક્તિ નાશ પામે; વિલાસો પોષક છે; ભ્રુકુટિ યમ છે, નિયમન કરનાર કાલ છે, (અર્થાત્ કાલના વિલંબથી તે ભાવ કદાચિત્ નાશ પામે, તેથી તે ભાવનો નાશ ન થાય તેટલા સારુ ભગવાનની ભ્રુકુટિ તે જ ભાવનું નિયમન કરે છે, તે જ ભાવ હંમેશાં રહે એ પ્રમાણે કરે છે. આ કારણથી જ ભ્રુકુટિને યમ કહેવામાં આવેલી છે.) અથવા તો (અહિં ભ્રુકુટિ ફલનું જ નિયમન કરે છે એવો અભિપ્રાય હોવાથી) આ પ્રમાણે થાય તો જ-અનંગભાવ થાય તો જ, દેહાનુસંધાન

જતું રહે તો જ-ભગવાન્ જેટલી બધી કૃપા છે તેનું દાન કરે છે, અર્થાત્ સંપૂર્ણ સ્વરૂપાનંદનું તે દાન કરે છે.

પછી ભગવાનને પ્રશ્ન પૂછવાને માટે ગોપીજનો ભગવાનને લાડ લડાવે છે એમ ‘સંસ્પર્શનેન’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કહેવામાં આવે છે. ગોપીજનોના ખોળામાં સ્થાપન કરેલું ભગવાનનું જે ચરણ તેના સંબંધવાળા ભગવાનના જે બે હસ્તો તેનો બરોબર સ્પર્શ કરીને ગોપીજનો ભગવાનને લાડ લડાવતાં હતાં. (ગોપીજનોના ખોળામાં સ્થાપિત કરેલા પોતાના ચરણ ઉપર ભગવાન્ બે હાથ મૂકીને બેઠા હતા; આ પ્રમાણે સ્વચ્છંદ સ્થિતિનું અનુકરણ છે એમ સૂચવવામાં આવ્યું.) મૂલ શ્લોકમાં જે ‘સંસ્પર્શનેન’ પદ છે તેમાં જે તૃતીયા વિભક્તિ છે તે ‘સહિત, સાથે’ ના અર્થમાં વપરાયેલી છે; અર્થાત્ ગોપીજનો સંસ્પર્શનવાળા, ભગવાનને લાડ લડાવનારાં હતાં. પછી ભગવાન્ પોતાના-ગોપીજનોના-તરફ ધ્યાન આપે એટલા માટે તેમની ગોપીજનોએ સ્તુતિ કરી.

આ પ્રમાણે સર્વભાવથી શરણે આવેલાંનો પણ ભગવાન્ ત્યાગ કરે છે એમ ભગવાનમાં દોષ જોવાથી ગોપીજનો જરાક ગુસ્સે થયાં. (ભગવાનનો હસ્તકમલ પકડવાની ઈત્યાદિ ક્રિયાઓ ગોપીજનોએ કરી હતી.) ગોપીજનોએ કરેલાં આ પ્રકારનાં સાધનોથી તેમનો દોષ દૂર થઈ ગયો હતો છતાં પણ જ્યાં સુધી ભગવાન્ વાણીથી તે દોષનું નિવારણ ન કરે ત્યાં સુધી તે દોષ સંપૂર્ણ રીતે નાશ પામતો નથી; તેથી ભગવાનની સાથે વિવાદ કરતાં હાથ તેમ ગોપીજનો બોલ્યાં.

(અરે! સ્વરૂપથી દૂર નહિ થએલો દોષ વચનથી કેવી રીતે દૂર થશે? તેથી વચન રૂપ કરતાં દુર્બલ હોવાથી પહેલા અધ્યાયમાં તેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવેલું છે. આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. ‘રસો વૈ સઃ’ ઈત્યાદિ શ્રુતિઓથી સિદ્ધ થાય છે કે ભગવાન્ ખરેખર ભાવાત્મક છે. તે ભગવાન્ હમણાં દોષાત્મક થયા છે, કારણ કે રસનું સ્વરૂપ જ તે પ્રકારનું છે. સ્વામિનીઓનો જે ભાવ પ્રકટ થયો છે તેનું મૂલ કારણ ભગવાનનો વેણુનાદરૂપ શબ્દ જ છે, તેથી નિર્દોષ અને પૂર્ણ ગુણરૂપ ભાવ પણ વાણીરૂપી શબ્દથી પ્રકટ થશે એમાં શું અયોગ્ય છે? વળી, જેવી રીતે દર્શનથી જે રસ મળે છે તે સ્પર્શ વિગેરેથી મળતો નથી, સંભાષણથી જે રસ મળે છે તે દર્શન વિગેરેથી મળતો નથી, આ પ્રમાણે તે તે રસનો સ્વભાવ છે; તેવી રીતે અમારો ત્યાગ કરીને ભગવાન્ કેવી રીતે ગયા એ ભાવ તે પ્રકારનાં વચનોથી જ ઉત્પન્ન થાય છે એમ જાણવું. પહેલા અધ્યાયમાં પણ આ પ્રમાણે જ જાણવું.

અરે! ચાલતા પ્રસંગમાં તો ‘પ્રભુ અમને ભજે છે કે નથી ભજતા’ એનો નિર્ણય કરવાનો છે, તો પછી તે વાત સ્પષ્ટ ન કહેતાં સામાન્ય રીતે પ્રશ્ન કરવામાં શું પ્રયોજન છે? આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું નિરાકરણ આ પ્રમાણે છે. ભગવાન્ વિષેનો પ્રશ્ન જ જો સાક્ષાત્-સ્પષ્ટ શબ્દોમાં-કરવામાં આવે તો ‘અમે ગોપીજનો આવા પ્રકારનાં ભક્તો છીએ; તો પછી હે પ્રભુ! આવા ભક્તોનો તમે કેમ ત્યાગ કરો છો?’ એ પ્રમાણે પ્રશ્ન કરાય. પણ આવા પ્રકારનો પ્રશ્ન નાયિકાઓમાં ઉત્તમ, સ્ત્રીઓમાં રત્નરૂપ, આગળ ભગવાન્ જેમની સ્તુતિ કરવાના છે, એવાં ગોપીજનોના મુખકમલમાંથી નીકળી શકે નહિ, પરંતુ ગામડાની રસાભાસવાળી સ્ત્રીઓના જ મુખમાંથી નીકળી શકે. તેથી બીજે પ્રકારે પરોક્ષ રીતે પ્રશ્ન કરવાથી પોતાના ભાવનું ગોપન થવાથી મહાન્ રસ ઉત્પન્ન થાય છે એટલે મુખ્ય રસના સ્વભાવને લીધે જ પરોક્ષ રીતે પ્રશ્ન કરવામાં આવેલો છે. ભગવાનને તો જીવોથી પોતે વિલક્ષણ-ભિન્ન પ્રકારના-છે એમ જણાવવું છે; અને જીવના સ્વરૂપના જ્ઞાન વિના જીવથી ભગવાનનો ભેદ જાણી શકાય નહિ. તેથી જીવના સ્વરૂપનું વર્ણન કરીને ભગવાને પોતાના સ્વરૂપનું વર્ણન કર્યું. આમ ન હોય તો ગોપીજનોના પ્રશ્નનો વિષય ભગવાન્ પોતે જ હોવાથી જીવોનું વર્ણન તે કરત નહિ.) ૧૫.

હવે ‘ભજતઃ’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી ગોપીજનોના પ્રશ્નનું વર્ણન કરે છે:

॥ગોપ્ય ઉચુઃ ॥

ભજતોઽનુભજન્ત્યેક એક એતદ્ વિપર્યયમ્ ।

નોભયાંશ્ચ ભજન્ત્યન્ય એતન્નો બ્રૂહિ સાધુ ભોઃ ॥૧૬॥

ગોપીઓ બોલ્યાઃ-કેટલાક પોતાનું ભજન કરનારાઓને ભજે છે, કેટલાક પોતાને નહિ ભજનારાઓને પણ ભજે છે, કેટલાક ભજનારાઓ અને નહિ ભજનારાઓ એ બંનેને ભજતા નથી; આ બધાનું સ્પષ્ટ વર્ણન અમને કરો. ૧૬.

ભજન અને અભજનની દૃષ્ટિએ ફલ અને સ્વરૂપ વિષે ત્રણ પક્ષોમાં સંદેહ છે. (ભજન કરનારાઓનું જે ભજન કરે છે તે પહેલો પક્ષ; ભજન ન કરનારનું જે ભજન કરે છે તે બીજો પક્ષ; અને બંનેનું-ભજન કરનારનું અને ભજન ન કરનારનું-જે ભજન કરે છે તે ત્રીજો પક્ષ. બીજા પક્ષમાં જે અભજન કરનારનું ભજન કરવામાં આવે છે તે અભજન કરનાર પહેલો પ્રતિયોગી છે, અને ત્રીજા પક્ષમાં જે ભજન કરનારનું અભજન કરવામાં આવે છે તે બીજો પ્રતિયોગી છે એમ જાણવું.)

તેમાં કેટલાક માણસો જે પ્રકારે બીજા માણસો તેમને ભજે છે તે પ્રમાણે તેઓ તેમનું પણ ભજન કરે છે. (આ પ્રથમ પક્ષ છે.) કેટલાક માણસો તો જે બીજા

માણસો તેમનું ભજન કરતા નથી તેમનું પણ તેઓ ભજન કરે છે. (આ બીજો પક્ષ છે.) વળી કેટલાક બીજા માણસો તો બંનેનું-ભજન કરનારનું અને અભજન કરનારનું-પણ ભજન કરતા નથી. (આ ત્રીજો પક્ષ છે.)

આ ત્રણ પક્ષોની અંદર બંનેય-બીજા અને ત્રીજા-પક્ષોના પ્રતિયોગીઓનું ફલ કહેવું જોઈએ. (બીજા પક્ષમાં જે અભજન કરનારનું ભજન કરવામાં આવે છે તે એક પ્રતિયોગી, અને ત્રીજા પક્ષમાં જે ભજન કરનારનું અભજન કરવામાં આવે છે તે બીજો પ્રતિયોગી. આ બંનેય પ્રતિયોગીઓને શું ફલ મળે છે તે કહેવું જોઈએ. પ્રથમ પક્ષમાં તો જે ભજન કરનારનું ભજન કરવામાં આવે છે તે પ્રતિયોગીનું ફલ બીજો માણસ જે તેનું ભજન કરે છે તે છે; આ વાત સ્પષ્ટ હોવાથી એનો ઉલ્લેખ સુબોધિનીજીમાં કરવામાં આવ્યો નથી. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ત્રણ પક્ષોમાંથી છેલ્લા બે પક્ષોના ફલ વિષેના સંદેહનું અને ત્રણે પક્ષના સ્વરૂપ વિષેના સંદેહનું નિવારણ કરવાનું છે.)

જે માણસો બીજા માણસોનું, તેમણે કરેલા ભજન પ્રમાણે, ભજન કરે છે તે શું કૃતદન છે, કે ધૂર્ત છે, કે સારા છે એનો નિર્ણય કરવાનો છે. (આ રીતે પ્રથમ પક્ષના સ્વરૂપનું વર્ણન કરવાનું છે. પહેલાં પુરુષે જે પ્રમાણે ભજન કર્યું હોય તે પ્રમાણે બીજો માણસ પહેલાં પુરુષનું ભજન કરે ત્યાર પછી તે-બીજો માણસ-એમ માને કે પહેલાં પુરુષે જે ભજન કર્યું છે તે ઉપકારરૂપ નથી અને પોતે કરેલું ભજન પહેલા પુરુષે કરેલા ભજન કરતાં અધિક છે. આ પ્રમાણે પહેલા પુરુષે કરેલા ભજનને બીજો પુરુષ ઉતારી પાડે છે. બીજો પુરુષ પ્રત્યુપકાર કરવાને માટે સમર્થ છે છતાં પણ તે પહેલા પુરુષના ઉપર ઉપકાર કરવાને બદલે ભજન જ કરે છે, અને તેથી તે કૃતદન ગણાય છે. અથવા તો કૃતદનતાનો બીજો અર્થ પણ થઈ શકે. પહેલા પુરુષે જે ભજન કર્યું તેનું ભજન બીજો માણસ કરે છે અને તેનો ઉપકાર વાળી દે છે, જેને પરિણામે પહેલા પુરુષને બીજા પુરુષના ભજનથી જે મુખ્ય ફલ મળે છે તેનો નાશ થાય છે. આ રીતે બીજો પુરુષ કૃતદન થાય છે. હવે બીજો પુરુષ ધૂર્ત કેવી રીતે બને છે તે વિચારીએ. પહેલા પુરુષે જે ભજન કર્યું છે તે તેને બીજો પુરુષ ઉપકારરૂપે માને છે, છતાં પણ પોતે કરેલું ભજન પણ તે જ પ્રકારનું છે એમ તે-બીજો માણસ-માને છે. આ રીતે પહેલા પુરુષે કરેલા ભજનને બીજો પુરુષ ઉત્તમ માનતો નથી. પહેલો પુરુષ ધનને માટે મારું ભજન કરે છે એમ બીજો પુરુષ માને છે, અને બીજા માણસ પાસે ધન છે છતાં પણ તે પહેલા માણસને ધન આપતો નથી પણ તેનું ભજન જ કરે છે. તેથી તે ધૂર્ત કહેવાય છે. હવે બીજા પુરુષના સમીચીનત્વનું-સારાપણાનું-વિવેચન



કરવામાં આવે છે. કોઈ માણસે બીજા માણસના પગ ધોયા; હવે તે બીજો માણસ પહેલા માણસના પગ ધુએ તો શું થાય? જો પહેલા માણસે કોઈ પણ ફલની આશાએ બીજા માણસના પગ ધોયા હોય તો તે બીજા માણસે તે આશા પૂરી કરવી જોઈએ. બીજો માણસ પણ આ પ્રમાણે જ કરે-મારા પગ જ ધુએ-એ ભાવનાથી જો પહેલા માણસે બીજા માણસના પગ ધોયા હોય તો બીજા માણસે પહેલા માણસના પગ જ ધોવા જોઈએ. જો કોઈ પણ પ્રકારની અપેક્ષા વિના પહેલા માણસે બીજા માણસનું ભજન કર્યું હોય તો પહેલા માણસનો કેવી રીતે ઉપકાર વાળવો એ વાતનો નિશ્ચય બીજો માણસ કરી શકતો નથી, અને તેથી આ વિષયમાં સંદેહ જ રહે છે. બીજા માણસને પહેલા માણસ ઉપર ઉપકાર કરવો હોય ત્યારે આ ઉપકાર કરુંકે આ ઉપકાર કરું એમ તેને સંદેહ થાય છે, અને તેને પોતાને લાગે છે કે પહેલા માણસે મારું ભજન કરીને મારા ઉપર ભાર મૂક્યો છે. (આ પ્રમાણે પહેલા પક્ષના સ્વરૂપના સંદેહનો વિચાર કરવામાં આવ્યો.)

જે માણસ બીજાનું ભજન કરતો નથી તેનું બીજો માણસ ભજન કરે તો કદાચિત્ દોષ થાય: દાખલા તરીકે કામિની સ્ત્રી જો નિષ્કામ પુરુષને ભજે તો દોષ કામિનીનો છે. (કશ્યપ સંધ્યાકાળે નિષ્કામ હતા, તેમનું ભજન દિતિએ કર્યું અને તેથી દોષ દિતિને પ્રાપ્ત થયો. આ વાત તૃતીય સ્કંધના ચૌદમા અધ્યાયમાં આપેલી છે.) જો તે વસ્તુ અપેક્ષિત હોય તો કોઈક વખત ઉપકાર થાય છે. (બ્રહ્માએ પૂર્વચિત્તિ નામની અપ્સરાને પ્રિયવ્રતના પુત્ર આઘ્નીઘ પાસે મોકલી. આઘ્નીઘ પરણેલો ન હતો, છતાં પણ તેને પિતૃલોકની ઈચ્છા હતી. પૂર્વચિત્તિ અપ્સરાથી તે મુગ્ધ થયો અને તેનાથી નવ પુત્રોની ઉત્પત્તિ થઈ. આ પ્રસંગ પંચમ સ્કંધના બીજા અધ્યાયમાં વર્ણવેલો છે. અહિં આઘ્નીઘે બ્રહ્માનું ભજન નથી કર્યું છતાં પણ બ્રહ્માનો પૂર્વચિત્તિ નામની અપ્સરા-અપેક્ષિત પદાર્થ-મોકલવાથી આઘ્નીઘ ઉપર ઉપકાર થયો.) કોઈક વખત સ્નેહ થાય છે. (નવમા સ્કંધમાં વર્ણવેલા ઉર્વશી ઉપાખ્યાનમાં આ પ્રમાણે જોવામાં આવે છે.) કોઈક વખત ધર્મ થાય છે. (મલાભારતના સુદર્શનોપાખ્યાનમાં તથા પદ્મપુરાણના વૈશાખમાહાત્મ્યમાં આવેલા ચિત્રોપાખ્યાનમાં આ વાત સ્પષ્ટ થાય છે. આ પ્રમાણે અભજન કરનારનું ભજન કરનારને અનેક પ્રકારનું ફલ જોવામાં આવે છે, તેથી) તેના વિષે એક જ નિશ્ચિત ફલ કહેવાની જરૂર છે. (આ રીતે અભજન કરનારનું જે ભજન કરે છે તેના ફલ વિષેના સંદેહનું અને આનુષંગિક રીતે તેના સ્વરૂપ વિષેના સંદેહનું પણ વિવરણ કરવામાં આવ્યું.) વળી જે પ્રથમ પુરુષ દ્વિતીય પુરુષનું ભજન કરતો નથી તેને શું ફલ મળે છે? (આ પ્રમાણે અનુયોગીના-

ભજન ન કરનાર પ્રથમ પુરુષના-ફલ વિષે પણ સંદેહ થાય છે. અર્જુને ઉર્વશીનું ભજન ન કર્યું; નારદે જરાનું ભજન ન કર્યું અને માર્કંડેયે વરૂથિનીનું ભજન ન કર્યું. તેમાં ઉર્વશીએ અર્જુનની નિંદા કરીને શાપ આપ્યો; નારદ પાસેથી ભજનની જે અપેક્ષા જરાએ રાખેલી હતી તે પૂર્ણ ન થતાં તેણે નારદને શાપ આપ્યો; વરૂથિનીએ જાણ્યું કે માર્કંડેય જિતેન્દ્રિય છે તેથી તેમની પાસેથી તેણે ભજનની આશા રાખી નહિ અને માર્કંડેયને વરૂથિનીનું અભજન કરવાથી ધર્મ પ્રાપ્ત થયો. આ પ્રમાણે ભજન ન કરનાર માણસોને અનેક પ્રકારનાં ફલ મળે છે તેથી તેમના ફલ વિષે સંદેહ થાય છે. વળી ઉર્વશીએ અર્જુનની નિંદા કરી તેથી અર્જુન કૃતઘ્ન છે એમ જાણાય છે. જરાએ નારદ પાસે ભજનની આશા રાખી હતી પરંતુ નારદે જરાનું ભજન ન કર્યું તેથી નારદ ધૂર્ત છે એમ જાણાય છે. માર્કંડેય જિતેન્દ્રિય છે એમ જાણીને વરૂથિનીએ તેમની પાસેથી ભજનની આશા રાખી નહિ, અને માર્કંડેયે વરૂથિનીનું ભજન પણ કર્યું નહિ, તેથી માર્કંડેય સમીચીન-સારા-છે એમ જાણાય છે. આ પ્રમાણે ભજન ન કરનાર મનુષ્યોના સ્વરૂપ વિષેનો પણ કૃતઘ્ન, ધૂર્ત કે સારા એ રીતનો સંદેહ જાણવો.)

(હવે ત્રીજા પ્રશ્નના સંદેહનું વર્ણન કરવામાં આવે છે.) ભજન કરનાર અને ભજન ન કરનાર એ બંનેનું જે લોકો ભજન કરતા નથી તેમને શું ફલ મળે છે, અને જે બે પ્રકારના લોકોનું-ભજન કરનાર અને ભજન ન કરનાર એ બે પ્રકારના લોકોનું-ભજન કરવામાં આવતું નથી તે બે પ્રકારના લોકોને પણ શું ફલ મળે છે? (કેટલાક લોકો સૂર્યનું ભજન કરે છે, કેટલાક કરતા નથી. આ બંને પ્રકારના લોકોનું સૂર્ય ભજન કરતો નથી. હવે બંને પ્રકારના લોકોનું જે લોકો સૂર્યની માફક ભજન કરતા નથી, અર્થાત્ આત્મારામ અને પૂર્ણકામ હોવાથી ઉદાસીન રહે છે, તેમને ઉદાસીન સૂર્યનું ફલ મળે છે કે કૃતઘ્ન વિગેરેનું ફલ મળે છે? વળી જે પ્રથમ પ્રકારના લોકો ભજન કરે છે તેમને ધર્માત્માઓનું ફલ મળે છે કે મૂર્ખોનું ફલ મળે છે? તે જ પ્રમાણે જે દ્વિતીય પ્રકારના લોકો ભજન કરતા નથી તેમને ઉદાસીનનું ફલ મળે છે કે ધૂર્તનું ફલ મળે છે? આ પ્રમાણે ત્રીજા પ્રશ્નમાં ફલ વિષે સંદેહ થાય છે. તે જ પ્રમાણે આ પ્રશ્નમાં સ્વરૂપ વિષે કૃતઘ્ન, ધૂર્ત કે સમીચીન એ પ્રકારનો સંદેહ પણ જાણવો.)

ભજન કરનારે જે સાધનો કર્યા તેનો ક્યાં ઉપયોગ થશે? (આ સાધનથી અપૂર્વ ઉત્પન્ન થશે, કે સ્નેહ ઉત્પન્ન થશે કે લોકની અંદર પ્રશંસા થશે એ રીતે સંદેહ થાય છે.)

આ બધું આપ સારી રીતે કહો. મૂલ શ્લોકમાં 'ભો:' એ પ્રમાણે જે સંબોધન છે તે સાવધાન બનાવવાને માટે છે. (હવે મૂલ શ્લોકમાં જે ત્રણ પક્ષો આપેલા છે તેનું

વિવરણ કરવામાં આવે છે.) કેટલાક ભજન કરનાર પુરુષોનું તે પ્રમાણે ભજન કરે છે. કેટલાક તો ભજન ન કરવામાં આવે તો પણ બીજા પુરુષોનું ભજન કરે છે. આ પ્રમાણે ભજન કરનારાઓ બે પ્રકારના છે. બાકીના તો ભજન કરનારા જ નથી. ૧૬.

‘મિથો ભજન્તિ’ ઈત્યાદિ ત્રણ શ્લોકમાં ભગવાન્ આ ત્રણેય પક્ષોના ભેદ અને ફલનું વર્ણન કરે છે :

॥શ્રીભગવાનુવાચ॥

મિથો ભજન્તિ યે સખ્યઃ સ્વાર્થેકાન્તોદ્યમા હિ તે ।

ન તત્ર સૌહૃદ્ધર્મઃ સ્વાર્થાર્થ તદ્દિ નાન્યથા ॥૧૭॥

શ્રીભગવાન્ બોલ્યાઃ - હે સખીઓ! જેઓ પરસ્પર ભજન કરે છે તેઓ ખરેખર ફક્ત સ્વાર્થની ખાતર જ ઉદ્યમ કરે છે. તેમાં નથી હોતો સ્નેહ કે નથી હોતો ધર્મ. તેમનો ઉદ્યમ ફક્ત સ્વાર્થને માટે જ હોય છે, બીજા કશાને માટે નહિ. ૧૭.

ગોપીજનોએ જે ત્રણ પક્ષો કહ્યા તેમાંના પહેલા પક્ષનો ભગવાન્ નિર્ણય આપે છે. જે લોકો પરસ્પર ભજન કરે છે તેમના ઉદ્યમનું ફલ માત્ર સ્વાર્થ જ છે. સ્વાર્થ જ એકાંત-એક ફલ-છે જેમના ઉદ્યમનું તેઓ ‘સ્વાર્થેકાન્તોદ્યમાઃ’ કહેવાય છે. તેઓ ખરેખર એકબીજાનો ભાવ જાણીને જ પરસ્પર ભજન કરે છે. ઓછાવત્તા પ્રમાણમાં તેઓ હંમેશાં પરસ્પર ભજન કર્યા જ કરે છે; તેથી તેઓની એક બીજા પ્રત્યે છેતરપીંડી પણ સંભવતી નથી; આથી તેઓનો ઉદ્યમ સ્વાર્થને-લૌકિક અર્થને-માટે જ છે.

(આ પ્રમાણે પરસ્પર ભજનમાં ‘મારું ભજન તેના ભજન કરતાં અધિક છે’ એવા પ્રકારની ભાવના ન હોવાથી પરસ્પર ભજન કરનારાઓ કૃતદ્ધન નથી, તેમ જ તેઓ એક બીજાને છેતરતા નથી તેથી તેઓ ધૂર્ત પણ નથી. આ રીતે તેમનામાં દોષ નથી, પણ સમીચીનતા-સારાપણું-છે. ઉપકાર, સ્નેહ કે ધર્મ એ ત્રણમાંથી એક હોય તો સમીચીનતા સંભવે. તેમાં બંનેનું પરસ્પર ભજન તુલ્ય હોવાથી ઉપકાર સંભવતો નથી, પણ સ્નેહ અને ધર્મથી તેમની સમીચીનતા સંભવે છે. તેથી હવે શંકા કરવામાં આવે છે.)

અરે! પરસ્પર ભજન કરનાર બંને જણો બ્રાહ્મણો છે, તેથી તેમના પરસ્પર ભજનથી ધર્મ અથવા સ્નેહ થાય; તેથી પરસ્પર ભજનમાં સ્વાર્થ જ હોય છે એમ કેમ કહો છો?

આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘ન તત્ર સૌહૃદ્ધમ્’. જે લોકો પરસ્પર ભજન કરે છે તેમાં સ્નેહ હોતો નથી, કારણ કે બીજો માણસ પોતાનું ભજન

કરતો નથી એ જાણતાં જ એક ક્ષણની અંદર જ પહેલા માણસને ક્રોધ થાય છે. તેથી તેમાં સ્નેહ નથી. (ઈન્દ્રદ્યુમ્ન રાજાએ અગસ્ત્ય મુનિનો સત્કાર ન કર્યો તેથી અગસ્ત્યમુનિ તરત જ ક્રુદ્ધ થયા અને તેમણે ઈન્દ્રદ્યુમ્નને શાપ આપ્યો જેના પરિણામે ઈન્દ્રદ્યુમ્ન હાથી થયો. ભગવાનનું સ્મરણ કરવાથી ઈન્દ્રદ્યુમ્નનો મોક્ષ થયો. આ બધું અષ્ટમ સ્કંધમાં ગજેન્દ્રમોક્ષના પ્રસંગમાં વર્ણવવામાં આવેલું છે.) વળી અન્યોન્ય ભજનમાં ધર્મ પણ નથી, કારણ કે આપસ્તંબ ધર્મસૂત્રમાં વચન છે કે ‘બ્રાહ્મણો ભેગા થઈને જે જમે છે તે પિશાચભિક્ષા છે; તે પિતૃઓને તેમ જ દેવોને પહોંચતી નથી; પણ બીજાના ઘરમાં બાંધેલી વાછડા વગરની ગાયની માફક તેનું પુણ્ય આ જ લોકમાં ક્ષીણ થતાં તે નષ્ટ થાય છે.’ (આ વાક્યમાં અન્યોન્યભજનનું સૂચન કરવામાં આવેલું છે. આ અન્યોન્યભજન પિશાચભિક્ષાની માફક ધર્મ નથી એમ સિદ્ધ થાય છે.) શિષ્ય ગુરુની જે સેવા કરે છે તેમાં પણ જો ગુરુ અને શિષ્યને વૃત્તિ, પ્રતિષ્ઠા વિગેરે દષ્ટ પ્રયોજન હોય તો તે સેવામાં ધર્મ નથી. ‘ગુરુકુલમાં વાસ કરીને, ઈન્દ્રિયોને વશમાં રાખીને ગુરુની આજ્ઞાથી શિષ્યે વેદનું અધ્યયન કરવું’, ‘શિષ્યને ઉપનયન આપીને જે બ્રાહ્મણ વેદ શીખવાડે છે તેને આચાર્ય કહેવામાં આવે છે’, ઈત્યાદિ શાસ્ત્રવચનોને અનુસરીને જો શિષ્ય ગુરુની સેવા કરે તો તેમાં વૃત્તિ, પ્રતિષ્ઠા વિગેરેની ભાવના ન હોવાથી, અને શાસ્ત્રમાં કહેલું છે તેથી જ ગુરુસેવા થતી હોવાથી પરસ્પરભજન નથી, પણ શાસ્ત્રની આજ્ઞાનું પાલન છે. ગુરુસેવાના પરિણામે શિષ્યને જે વિદ્યા મળે છે તે તો ફલરૂપ છે, અને વિદ્યારૂપી ફલ શાસ્ત્રમાં દર્શાવેલું છે. (આ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજાય છે કે શાસ્ત્રની આજ્ઞાથી જો ગુરુસેવા કરવામાં આવતી હોય તો, પ્રયોજન દષ્ટ હોય છતાં પણ, તેમાં ધર્મ રહેલો છે; પરંતુ જો શાસ્ત્રની આજ્ઞા સિવાયના બીજા કોઈ કારણથી-વૃત્તિ, પ્રતિષ્ઠા વિગેરે પ્રયોજનથી-ગુરુસેવા કરવામાં આવે તો તેમાં ધર્મ રહેલો નથી.)

મૂલ શ્લોકમાં જે ‘સખ્યઃ’ સંબોધન છે તેનો ભાવ એવો છે કે ગોપીજનો સખીઓ હોવાથી ભગવાન તેમને છેતરશે નહિ. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘યે’ પદ છે તેનો અર્થ લોકમાં પ્રસિદ્ધ પુરુષો છે. આ પુરુષો વાણીઆઓ જેવા છે, કારણ કે તેમની પ્રવૃત્તિ સ્વાર્થને માટે જ હોય છે.

(ધર્મ વિગેરે મનુષ્યોના ચાર પુરુષાર્થોમાંનો એક પુરુષાર્થ છે, એટલે) જો કે ધર્મ વિગેરે પણ સ્વાર્થ જ છે, છતાં પણ પરસ્પર ભજનથી મોક્ષ આપનારા ધર્મ વિગેરે સિદ્ધ થતા નથી. (જો ‘અન્યોન્યભજનેન’ એ પ્રમાણે તૃતીયા વિભક્તિવાળું પદ લઈએ તો અર્થ આ પ્રમાણે થાય:-પરસ્પરભજનથી તે લૌકિક સ્વાર્થ જ સિદ્ધ

થાય, અલૌકિક ધર્મ નહિ. લૌકિક સ્વાર્થ જ નિંદા કરવા યોગ્ય છે, નહિ કે અલૌકિક ધર્મ.) જેમ પરસ્પરભજનથી ધર્મ વિગેરે સિદ્ધ થતાં નથી, તેમ જો ફલની આશાથી પરસ્પરભજન કરવામાં આવતું હોય તો તેનાથી સ્નેહ પણ સિદ્ધ થતો નથી.

પરસ્પરભજન કરનારા સાધનનો વિનિયોગ જણાવતાં ભગવાન કહે છે કે ‘સ્વાર્થાર્થમ્’. પરસ્પર ભજન કરનારનું સાધન બીજાને માટે જણાવતું હોય છતાં પણ તે સ્વાર્થને માટે જ હોય છે. બીજાની પાસે સેવા કરાવીને ધન વિગેરે આપવામાં આવે છે તેમાં પણ આ જ પ્રમાણે હોય છે. તેમાં સેવા કરનારને પોતાના દુઃખની નિવૃત્તિ એ જ ફલ છે, પરંતુ કોઈને ધર્મરૂપી ફલ મળતું નથી. આ વિષયમાં બધાય લોકો પ્રમાણરૂપ છે એ જણાવવાને મૂલ શ્લોકમાં ‘હિ’ શબ્દ મૂકવામાં આવેલો છે. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘અન્યથા’ પદ છે તેનો અર્થ ‘પરોપકારને માટે નહિ’ એ પ્રમાણે છે, કારણ કે જ્યારે એક માણસ બીજા માણસનું ભજન કરે છે ત્યારે બીજા માણસના મનમાં સામું ભજન કરવાની ચિંતા ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી પરસ્પરભજનનું ફલ લૌકિક સ્વાર્થની સિદ્ધિ છે. ક્ષત નામથી જ તેમને ધર્મ કહેવામાં આવે છે, વાસ્તવિક રીતે તે ધર્મ જ નથી. ૧૭.

ભજન ન કરનારાઓનું પણ જે લોકો ભજન કરે છે તે બે પ્રકારના છે એમ ‘ભજન્તિ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં ભગવાન કહે છે :

ભજન્ત્યભજતોયેવૈકરુણાઃપિતરૌયથા ।

ધર્મોનિરપવાદોઽત્રસૌહર્દંચસુમધ્યમાઃ ॥૧૮॥

હે સુંદર કટિવાળી ગોપીઓ! જે લોકો ભજન ન કરનારાઓનું ભજન કરે છે તે (બે પ્રકારના છે), જેમ કે દયાવાળા લોકો અને માબાપ; પહેલામાં નિરપવાદ ધર્મ છે, અને બીજામાં સૌહાર્દ છે. ૧૮.

જે લોકો ભજન ન કરનારાઓનું-શાંત બેસી રહેનારાઓનું-પણ ભજન કરે છે તેમાં બે નિમિત્ત છે, એક લૌકિક અને બીજું વૈદિક. લૌકિક નિમિત્ત સ્નેહ છે, જ્યારે વૈદિક નિમિત્ત વિધિ છે. તેમાં લૌકિક સ્નેહનું ફલ સૌહાર્દ છે, અને વૈદિક વિધિનું ફલ ધર્મ છે. આ પ્રમાણે સૌહાર્દ અને ધર્મ ક્રમથી જ-સ્નેહ અને વિધિનાં-ફલ છે. સૌહાર્દથી જે ભજન કરે છે તેના ઉપર અવસર આવે બીજાએ-જે ભજન કરતો નથી અને જેનું ભજન પહેલો માણસ કરે છે તેણે-ઉપકાર કરવો જ જોઈએ. જો તે ઉપકાર ન કરે તો કૃતઘ્ન થાય, (અને પહેલા માણસનું સૌહાર્દ નિરપવાદ થાય.) ધર્મને માટે જો પહેલો માણસ બીજા માણસનું ભજન કરે તો બીજા માણસે પ્રાયશ્ચિત્ત કરવું જોઈએ, કારણ કે તેનો જ ધર્મ ભજન દ્વારા પોતાનું ભજન

કરનારાઓમાં જાય છે. જો તે પ્રાયશ્ચિત્ત ન કરે તો કૃતઘન ગણાય, અને ધર્મ નિરપવાદ-પ્રત્યુપકાર વિનાનો-થાય.

(પહેલો માણસ ધર્મને માટે જો ભજન કરે તો તેની દૃષ્ટિએ ધર્મ મુખ્ય હોવાથી બીજો માણસ, જેનું ભજન કરવામાં આવે છે તે, ધર્મનો શેષ-અંગ-બને છે એટલે તે ધર્મશેષ કહેવાય છે. તેથી ભજન કરનારનાં કદાચિત્ પાપ વિગેરે હોય તો જેનું ભજન કરવામાં આવે છે તે માણસે કૃતઘનતાનો દોષ દૂર કરવાને માટે તે પાપ વિગેરેનું નિવારણ કરવું જ જોઈએ. કોઈ સ્ત્રીને જણાય કે આ શ્રોત્રિય, બ્રહ્મચારી, દીક્ષિત, વ્રતી અથવા લિંગી મને જોઈને મારામાં આસક્ત થયો છે અને તેથી મરવાની તૈયારી ઉપર છે, કોઈ મિત્ર તે પ્રમાણે સલાહ આપતો હોય અને પોતાને દયા આવે અને તેથી તે પુરુષનો સમાગમ કરવામાં આવે તો તેમાં ધર્મ છે કે અધર્મ એ સંશય તે સ્ત્રીને થાય. આ પરિસ્થિતિમાં જે પુરુષનું તે સ્ત્રી ભજન કરે છે તે પુરુષે તે સ્ત્રીના પાપના નિવારણને માટે પોતે જ પ્રાયશ્ચિત્ત વિગેરે કરવું જોઈએ. આનું ઉદાહરણ પદ્મપુરાણના વૈશાખમાહાત્મ્યના પ્રથમાધ્યાયમાં આવેલું ચિત્રોપાખ્યાન છે. આ આખ્યાન આ પ્રમાણે છે. એક વૈશ્ય જાતિની વેશ્યાએ અદૃષ્ટ બુદ્ધિથી અનેક પ્રકારના ભોગ વડે એક સુદેવ નામના બ્રાહ્મણ અતિથિનું સેવન કર્યું. આ અતિથિએ નર્મદામાં વૈશાખસ્નાન કરવાનો ઉપદેશ કરીને તે વેશ્યાની સાથે નર્મદામાં સ્નાન કર્યું અને બીજાઓને સ્નાન કરાવ્યું, દયાથી તે વેશ્યાના આગ્રહને લીધે નર્મદાને તટે જ રહ્યો, અને તે વેશ્યાનો અને પોતાનો ઉદ્ધાર કરીને પોતે બીજા જન્મમાં પાણ્ડ્ય દેશનો વીરસેન નામનો રાજા થયો. તે વેશ્યા પણ બીજા જન્મમાં પરમ વૈષ્ણવ દિવોદાસ નામના કાશીના રાજાની દિવ્યાદેવી નામની પુત્રી થઈ.)

જ્યાં નિત્ય કર્મ કર્તવ્યબુદ્ધિથી જ કરવાનું હોય છે તે ધર્મમાં કર્મ પ્રધાન છે; જ્યાં દેવતાના આરાધનથી જ ધર્મ થાય છે ત્યાં દેવતા પ્રધાન છે. આ બંને પ્રકારના ધર્મોનું અહિં વિવેચન કરવાનું નથી, કારણ કે નિત્ય કર્મ કરનાર અને દેવતાનું આરાધન કરનાર માણસમાં ભજન વિષેની શંકા જ નથી. વળી જ્યાં ભજન કરનાર અને જેનું ભજન કરવામાં આવે છે એ બે પદાર્થો સમાન ન હોય-દાખલા તરીકે, કોઈ માણસ ગાયને કાદવમાંથી બહાર કાઢે તો ભજન કરનાર માણસ અને જેનું ભજન કરવામાં આવે છે તે ગાય એ પદાર્થો સમાન નથી-તેવા પ્રકારના ધર્મનું પણ અહિં વિવેચન કરવાનું નથી. પણ જ્યાં આધાર ઉપર-પ્રથમ ભજન કરનારના ઉપર-પ્રત્યુપકાર સંભવે છે, તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિમાં જો પ્રથમ પુરુષ ભજન ન કરે અને બીજો પુરુષ ભજન કરે તો નિરપવાદ ધર્મ અને સ્નેહ એ ફલ હોય છે.

(નિરપવાદ ધર્મનું ઉદાહરણ મહાભારતના અનુશાસનપર્વના બીજા અધ્યાયમાં આવેલું સુદર્શન ઉપાખ્યાન છે. સુદર્શન પોતાની સ્ત્રી ઓઘવતીને ‘અતિથિને પ્રતિકૂલ કર્મ કરવું નહિ’ એ પ્રમાણે સૂચના કરીને સમિધ્ લેવાને માટે ઘર છોડીને બહાર ગયો. એટલામાં એક બ્રાહ્મણ અતિથિ સુદર્શનને ઘેર આવ્યો અને ઓઘવતીને કહ્યું કે ‘મારે તારો સમાગમ કરવો છે.’ ઓઘવતીએ પતિની સૂચના પ્રમાણે તે અતિથિની માગણી સ્વીકારી. સુદર્શન સમિધ્ લઈને ઘેર આવ્યો. અતિથિએ સુદર્શનને બધી હકીકત કહી. સુદર્શને શાંતિથી જવાબ આપ્યો કે ‘આજે મારો ગૃહસ્થાશ્રમધર્મ પળાયો, કારણ કે મારે ત્યાં અતિથિનો સત્કાર કરવામાં આવ્યો છે.’ તે અતિથિએ પર્ણશાલાની બહાર જઈને પોતાના મૂલ સ્વરૂપમાં-ધર્મના સ્વરૂપમાં-પ્રકટ થઈને ઓઘવતીની ઘણી પ્રશંસા કરી અને સુદર્શનને કહ્યું કે ‘ઓઘવતી પવિત્ર છે; જગતને પવિત્ર કરવાને માટે તેનો એક ભાગ નદી થશે, અને બીજો ભાગ તારી સેવા કરશે અને તેનાથી તું નિત્યલોક પ્રાપ્ત કરીશ.’ અંતમાં ભીષ્મ આ ઉપાખ્યાનનું ફલ વર્ણવે છે.)

ધર્મરૂપી ફલ આપનાર ભજનમાં ભજન કરનાર પુરુષમાં દયા હોય છે, અને પ્રેમરૂપી ફલ આપનાર ભજનમાં ભજન કરનાર પુરુષમાં દેહનો સંબંધ હોય છે. આ બાબત ‘કરુણાઃ પિતરૌ’ એ શબ્દોમાં કહેવામાં આવેલી છે. જે પ્રાણીઓમાં સ્વાભાવિક દયા અને સ્નેહ હોતાં નથી તેઓ પણ ભજન ન કરનારનું ભજન કરે છે; તેથી દયા અને સ્નેહ એ ધર્મોનો અતિદેશ ‘યથા’ એ શબ્દ વડે કરવામાં આવેલો છે. જે સંસારી કૂર માણસો છે તેઓ પણ કોઈ વખત દયા લાવીને દીન પુરુષોનું ભજન કરે છે અને સ્નેહથી તેમના તરફ પ્રેમ દર્શાવે છે. આવા પ્રાણીઓનો સમાવેશ કરવાને માટે શ્લોકમાં ‘યથા’ શબ્દ મૂકવામાં આવેલો છે. (હાલમાં સ્નેહ હોય તો તેનાથી પૂર્વજન્મના સંબંધનું અનુમાન થાય છે, તેથી સામાન્ય રીતે ‘યથા’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. જેવી રીતે માતાપિતા સ્નેહ રાખે છે તેવી રીતે ભાઈઓ વિગેરે પણ સ્નેહ રાખે છે.) સંબંધ તો બીજા જન્મનો પણ હોય, તેથી ઉપમાન અને ઉપમેયનો અભેદ હોવાથી ઉદાહરણ એક જ પ્રકારનું આપવામાં આવેલું છે. (માતા, પિતા, ભાઈ, બહેન વિગેરેમાં ભાવનો ભેદ હોય છે છતાં પણ તે બધાંનો સ્નેહ નિરુપાધિક હોવાથી એક જ પ્રકારનો છે, એટલે મૂલ શ્લોકમાં એક જ દષ્ટાંત આપેલું છે. કરુણા દેખીતી રીતે એક જ હોય છે તેથી ઉપમાન અને ઉપમેય એ બંને એક જ છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે.)

મૂલ શ્લોકમાં ધર્મને ‘નિરપવાદ’ કહેવામાં આવેલો છે. ભજન કરનારના

ઉપર ઉપકાર કરવામાં આવે તો તે ભજન કરનારનો અપવાદ કહેવાય છે. આવા પ્રકારનો ઉપકાર કરવામાં ન આવે તો ધર્મ નિરપવાદ જ થાય છે. મૂલ શ્લોકમાં આવેલા ‘અત્ર’ પદનો અર્થ ‘આવા પ્રકારની બાબતમાં’ એ પ્રમાણે થાય છે. આ ઉપરથી એટલું સૂચિત થાય છે કે જ્યાં પ્રત્યુપકારનો સંભવ પણ હોય છે ત્યાં ધર્મ હોતો નથી. આ કારણથી જ કેટલાક લોકો પોતાના ઉપર ઉપકાર કરવામાં આવે છે તો પણ તે ઉપકાર સ્વીકારતા નથી. સ્નેહમાં પણ ધર્મ છે એ દર્શાવવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘ચ’ મૂકવામાં આવેલો છે. (સ્નેહમાં પણ દયાનો અંશ હોય છે એટલે સ્નેહમાં ધર્મ છે એમ કહી શકાય છે.) પોતાનાં વચનોમાં વિશ્વાસ ઉત્પન્ન કરવાને માટે ભગવાન્ ગોપીજનોને ‘સુમધ્યમાઃ’ એ પ્રમાણે સંબોધન કરે છે. ઉત્તમતા અને મધ્યમતાનો નિર્ણય ધર્મ વડે જ થાય છે. (પોતાના કરતાં શ્રેષ્ઠ અને ભજન ન કરનારા પુરુષોને જે લોકો ભજે છે તે ઉત્તમ કહેવાય છે. મધ્યમ લોકોને જે ભજે છે તે મધ્યમ કહેવાય છે. આ પ્રમાણે ધર્મથી જ ભજન કરનારાઓની ઉત્તમતા અને મધ્યમતાનો નિર્ણય થઈ શકે છે.) ૧૮.

ભજનને માટે ભજન કરનારા, સ્નેહથી ભજન કરનારા અને ધર્મથી ભજન કરનારા એ પ્રમાણે ભજન કરનારાઓના ત્રણ પ્રકારો થયા. તેમાં ધર્મથી ભજન કરનારાઓ વિષે તો શંકા જ નથી એટલે તેના વિષે ઉત્તર આપવાની આવશ્યકતા નથી. પરંતુ પહેલા બે પ્રકારના-ભજનને માટે ભજન કરનારા અને સ્નેહથી ભજન કરનારા-લોકોને કેટલાકો તો બીલકુલ ભજતા જ નથી; વળી ભજન ન કરનારાઓને-દીન અને ધર્મસાધક લોકોને-પણ તેઓ ભજતા નથી. બીલકુલ ભજન ન કરનારા લોકોનું સ્વરૂપ ‘ભજતોડપિ’ એ શ્લોકમાં ભગવાન્ વર્ણવે છે :

ભજતોડપિ ન વૈ કેચિદ્ ભજન્ત્યભજતઃ કુતઃ ।

આત્મારામ દ્વાપ્તકામા અકૃતજ્ઞા ગુરુદ્વલઃ ॥૧૯॥

કેટલાક લોકો ભજન કરનારાઓને પણ ભજતા નથી, તો પછી ભજન ન કરનારાઓને તો ક્યાંથી જ ભજે? આવા લોકો કાં તો આત્મારામ હોય છે, અથવા આપ્તકામ હોય છે, અથવા કૃતદ્ધન હોય છે, અથવા તો ગુરુદ્રોહી હોય છે. ૧૯.

કેટલાક મહાપુરુષો ભજનારને પણ ભજતા નથી, તો પછી ન ભજનારને તો ક્યાંથી ભજે? તેઓ પૂર્વોક્ત ન્યાયથી ચાર પ્રકારના હોય છે. તેમાં બે પ્રકારે સારા છે અને બીજા બે સારા નથી. જે લોકોના ભજનથી દયા અને ધર્મ સિદ્ધ થાય છે એવા લોકોને જે ભજતા નથી તે અધમ છે; અને જે લોકો સ્નેહ વિગેરે લૌકિક નિમિત્તથી જ ભજન કરે છે તે લોકોનું જે ભજન કરતા નથી તે ઉત્તમ છે. આ ચાર



પ્રકારના લોકોના ધર્મોમાં ગોટાળો ન થાય એટલા માટે ભગવાન ‘આત્મારામા:’ ઈત્યાદિ પદો વડે તેમની ગણના કરે છે. આત્મામાં જ રમે છે તે આત્મારામ કહેવાય છે. બીજાઓનું જેનું ભજન કરે છે એવા દેહ વિગેરે આત્મભિન્ન પદાર્થોની આત્મારામ પુરુષોને જરૂર હોતી નથી, એટલે તેઓ બીજાઓએ કરેલા ભજનને જ માનતા નથી. બીજાઓ જે ભજન કરે છે તે ભજનને માટે સાધનભૂત થએલા એવા પોતાના દેહ વિગેરે પદાર્થોને પણ આત્મારામ પુરુષો માનતા નથી.

ન ભજન કરનારા કેટલાક બીજાઓ આપ્તકામ હોય છે. જેમણે કામ-ઈચ્છા-પ્રાપ્ત કરેલો છે તે આપ્તકામ કહેવાય છે. કોઈ ભોજન કરેલા માણસને કહે કે ‘તું ભોજન કર’ અથવા તો ‘તું ભોજન કરીશ નહિ’. તેમાં પહેલા પક્ષમાં જમેલા માણસની ભોજન વિષે પ્રવૃત્તિ થશે નહિ, કારણ કે તે જમેલો છે; જ્યારે બીજા પક્ષમાં તે જમેલો હોવાથી ભોજન કરવાનો નથી એટલે ભોજન ન કરવાની વાતનો અનુવાદ થાય છે. આ બંનેય પ્રકારોમાં ‘તું ભોજન કર’ અથવા ‘તું ભોજન કરીશ નહિ’ એ વચન વ્યર્થ થાય છે. માણસ જમેલો છે એ જાણીને પણ જો કોઈ તે માણસને જમવાનું કહે તો તેને ધર્મનું ફલ મળશે; અને જો તેને ન જમવાનું કહે તો ફલમાં અજ્ઞાન મળશે.

બીજા બે પ્રકારો તો અધમ છે એમ હવે ભગવાન કહે છે. કરેલો ઉપકાર જે લોકો જાણતા નથી તેઓ પ્રત્યુપકાર કરવાને સમર્થ હોવા છતાં પણ દયાસાધક અને ધર્મસાધક એ બે પ્રકારના લોકોને પણ ભજતા નથી. તેમનું ભજન ન કરવામાં કારણ માત્ર અજ્ઞાન છે. જો જ્ઞાન હોય અને ભજન ન કરવામાં આવે તો ગુરુદ્રોહ થાય. જે કોઈ પોતાનો પુરુષાર્થ સાધી શકે તે ગુરુ છે; તે પૂજ્ય છે. ગુરુની આપત્તિમાં જો કોઈ પોતાની શક્તિ હોય છતાં પણ ગુરુની ઉપેક્ષા કરે તો તે ગુરુનો દ્રોહ કરે છે અને તેથી તે માણસ જ ગુરુનો દ્રોહ કરનારો થાય છે. આ પ્રમાણે બધાના ગુણ અને દોષનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. ૧૯.

ભજન ન કરનારાઓના ઉપર જણાવેલા ચાર પ્રકારોમાંથી ભગવાન કયા પ્રકારના છે એ જાણવાની ઈચ્છા ગોપીજનોના હૃદયમાં થઈ. ભગવાને ગોપીજનોનું ભજન કર્યું નથી તેથી અને ભજન કરવાનું સામર્થ્ય ભગવાનમાં હોવાથી બંનેય પક્ષોને-પરસ્પર ભજનનો પક્ષ અને ભજન ન કરનારના ભજનનો પક્ષ એ બે પક્ષોને-અહિં અવકાશ નથી.

અરે! બીજા પક્ષમાં-ભજન ન કરનારાઓનું ભજન કરવામાં આવે તે પક્ષમાં-ગોપીજનોએ જે ભજન કરેલું છે તે સ્નેહથી કરવામાં આવેલું છે એમ

માનીએ; તેથી ભગવાન્ ગોપીજનોના સ્નેહનો વિષય થાય છે એટલે આત્મારામ વિગેરે ચાર પ્રકારોમાં ભગવાનનો સમાવેશ થઈ શકશે નહિ. ભગવાન્ પોતે ઈશ્વર છે એટલે તે પ્રતિભજન-ભજન કરનારનું ભજન-કરે એ સંભવતું નથી. (અહિં પ્રતિભજનની શંકા ન હોવાથી આ પાંચમો પ્રકાર છે.) એટલે ઉપર જણાવેલા આત્મારામ વિગેરે ચાર પ્રકારોમાં ભગવાનની ગણના થઈ શકે એમ નથી. તો પછી આ વીસમા શ્લોકમાં તે બાબતનો વિચાર શા માટે કરવામાં આવે છે?

આ પ્રમાણે શંકા થાય તો શ્રીમહાપ્રભુજી સમાધાન કરતાં આજ્ઞા કરે છે કે આ શંકાને સ્થાન નથી. ગોપીજનો ભગવાનનો ભોગ્ય પદાર્થ છે એ વાત નિર્વિવાદ છે. ગોપીજનોએ પોતાનો દેહ વિગેરે ભોગ્ય પદાર્થો ભગવાનને સમર્પણ કર્યા છે અને તેમ કરવામાં જ તેઓ ક્ષીણ થઈ ગએલાં છે-અર્થાત્ ભગવાનના પ્રતિભજનની તેમને આવશ્યકતા નથી,-એટલે તેમનો વિચાર કરવાની જરૂર નથી. તેથી હવે ફક્ત ભગવાનનો વિચાર કરવાનો રહ્યો. ઈશ્વર પણ જો ફલને માટે સેવવામાં આવે તો પછી તેમનો વિચાર કરવો રહેતો નથી, (કારણ કે ઈશ્વરનું સેવન ફલને માટે કરવામાં આવેલું છે, તેથી ઈશ્વર પાસેથી ફક્ત ફલ મેળવવાનું રહે છે, તેમના પ્રતિભજનની અપેક્ષા રહેતી નથી. આ કારણથી તેમના ભજન અભજનનો વિચાર કરવાનો રહેતો નથી.) જો પશુ વિગેરે દષ્ટ ફલને માટે ઈશ્વરનું ભજન કરવામાં આવે તો પછી ઈશ્વર વિષેનો વિચાર કરવો પ્રાપ્ત થાય છે. તે વિચાર આ પ્રમાણે કરવાનો હોય છે-‘મારી સેવા ભગવાને સ્વીકારી કે નથી સ્વીકારી? જો સ્વીકારી હશે તો મારો મનોરથ સફળ થશે; જો નહિ સ્વીકારી હોય તો મારો મનોરથ સફળ નહિ થાય.’ આ પ્રમાણે બે વિકલ્પોનો વિચાર કરવાનો હોવાથી ઈશ્વર વિષે વિચાર કરવો પ્રાપ્ત થાય છે જ. ગોપીજનોએ સમર્પિત કરેલા પોતાના દેહ વિગેરે પદાર્થોનો ભગવાને પહેલાં સ્વીકાર કરેલો હોવાથી ભગવાન્ આત્મારામ કહી શકાય નહિ, તેમ પૂર્ણકામ પણ કહી શકાય નહિ. ભગવાને પ્રથમ એક વાર ગોપીજનોનો અંગીકાર કરેલો હોવાથી, હવે ભગવાનને તૃપ્તિ થઈ હોય છતાં પણ, ગોપીજનોનો ત્યાગ કરવો ઉચિત નથી. તેથી ભગવાનની ગણના ત્રીજા પક્ષમાં જ-અકૃતજ્ઞની કોટિમાં જ-કરવી યોગ્ય છે. પરંતુ અકૃતજ્ઞતા પણ સર્વજ્ઞ ઈશ્વરમાં અનુચિત છે, (તેથી તૃતીય પક્ષ પણ સંભવતો નથી.) ઈશ્વર ફલ આપનારા છે એટલે કદાચિત્ આ પ્રમાણે બને-આ શંકાનો પરિહાર ‘નાહં તુ સખ્યઃ’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

નાહં તુ સખ્યો ભજતોઽપિ જન્તૂન્ ભજામ્યમીષામ્ અનુવૃત્તિવૃત્તયે ।

યથા-ડધનો લબ્ધધને વિનષ્ટે તચ્ચિન્તયાન્ચન્નિભૃતો ન વેદ ॥૨૦॥

હે સખીઓ! મારું ભજન કરનારાં પ્રાણીઓનું ચિત્ત મારામાં રહે એટલા માટે હું મારું ભજન કરનારાઓને પણ ભજતો નથી. મેળવેલું ધન નષ્ટ થતાં જેમ નિર્ધન માણસ તેની ચિંતામાં ડુબેલો રહે છે અને તે વિના બીજું કંઈ જાણતો નથી (તેમ ગોપીજનો પણ પ્રાપ્ત કરેલા ભગવાનના તિરોધાનથી ભગવાનનું જ ચિંતન કરશે અને જગતને ભૂલી જશે.) ૨૦.

‘તુ’ શબ્દ ઉપર જણાવેલા પાંચ પ્રકારોની વ્યાવૃત્તિ કરે છે. વળી ઈશ્વર ગોપીજનોનું પ્રતિભજન કરશે એ પક્ષની પણ શંકા ન કરવી એમ દર્શાવવાને માટે ‘સખ્યઃ’ એ પ્રમાણે ભગવાન્ ગોપીજનોને સંબોધે છે. ગોપીજનો તો સખીઓ છે, રસમાં તુલ્ય છે અને એક જ પદાર્થમાં તેમનો અભિનિવેશ છે. (ગોપીજનોએ ફલને ઉદ્દેશીને મારું ભજન કર્યું નથી પણ શુદ્ધ પુષ્ટિમાર્ગની રીતે ભજન કરેલું છે, એટલે મેં પણ તેમને ફલ આપ્યું નહિ. વળી ગોપીજનોએ મારામાં ઈશ્વરબુદ્ધિ રાખી નથી અને ફક્ત સ્નેહથી જ રમણ કર્યું છે, એટલે તેમને મારા પ્રતિભજનની જરૂર રહેતી નથી.) મૂલ શ્લોકમાં ‘અહમ્’ પદ છે તેનો અર્થ ભગવાન્ છે, જીવ નહિ. (આ પ્રમાણે કહેવાથી અકૃતજ્ઞતા વિગેરે દોષો દૂર થઈ જાય છે.) જ્યારે કૃષ્ણ પોતે ભગવાન્ છે, જીવ નથી, ત્યારે તો આત્મારામ વિગેરે જીવને લગતા પક્ષો સંભવતા નથી. ભગવાન્ કહે છે કે હું ફક્ત રામ છું, સર્વત્ર રમણ કરું છું, આત્મારામ નથી. મારે આત્મા વિનાનો બીજો પદાર્થ ન હોવાથી આત્માથી ભિન્ન એવો બીજો પદાર્થ જ ત્યાગ કરવાને માટે રહેતો નથી. મારે કામ-ઈચ્છા-નથી એટલે હું આપ્તકામ પણ નથી. તેથી મારી વ્યવસ્થા ભિન્ન પ્રકારની જ છે, નહિ કે જીવના જેવી. (જીવોને આત્મા અને અનાત્માનો વિવેક કરવાનો હોય છે; ભગવાનને તો દેહાદિ અને બીજા બધા પદાર્થો આત્મરૂપ જ છે.)

‘નાહં તુ સખ્યઃ’ એ શ્લોકમાં ભગવાન્ પોતાની ભિન્ન વ્યવસ્થા વર્ણવે છે. ભજનારાં પ્રાણીઓનું પણ હું ભજન કરતો નથી. આ પ્રમાણે કરવામાં જુદો જ હેતુ છે અને તે ‘અમીષામનુવૃત્તિવૃત્તયે’ એ શબ્દોમાં કહેવામાં આવેલો છે. ‘અમીષામ્’ એટલે આ બધા જીવોનું. ‘જન્તુ’ એટલે બધાંય પ્રાણીઓ. ભગવાનને કોઈ પણ પ્રાણીનો ઉપયોગ નથી. ભગવાન્ ફલરૂપ છે તેથી બધાયને તેમનો ઉપયોગ છે. આ પ્રમાણે હોવાથી બધાં પ્રાણીઓ ભગવાનનું જે ભજન કરે છે તે ઈષ્ટ-ફલરૂપ ભજન-છે, અથવા તો ઈષ્ટના સાધન તરીકે-સાધનરૂપ ભજન-છે. જો ભજન સાધનરૂપ હોય તો તેમાં જો હું સાધન તરીકે, કામના પૂર્ણ કરવાને માટે, પ્રવેશ કરું તો ભજનનો જ હું નાશ કરું છું, કારણ કે કામભોગ કર્યા પછી ભજનમાં પ્રતિબંધ આવે

છે અને તેથી ભજન નાશ પામે છે, અને પહેલાં કરેલું ભજન નિત્ય ફલ આપતું ન હોવાથી વ્યર્થ થઈ જાય છે.

ભગવાનનો ચાર પ્રકારે ઉપયોગ થઈ શકે છે. ભગવાન્ ભોગ્ય થાય અથવા ભોક્તા થાય. ભગવાનનો જ્યારે ભોગ્ય તરીકે ઉપયોગ થાય ત્યારે તેમાં બે પ્રકાર સંભવે છે : ૧. આલિંગન વિગેરેથી કામિનીની અભિલાષા પૂરી કરવાથી, અને ૨. સ્વતંત્રતાથી, અર્થાત્ ભક્ત જે પ્રકારે ઈચ્છા કરે તે જ પ્રકારે તે સ્વરૂપાનંદનો અનુભવ કરે. ભગવાનનો જ્યારે ભોક્તા તરીકે ઉપયોગ થાય ત્યારે તેમાં પણ બે પ્રકાર સંભવે છે: ૧. ભક્તે સમર્પેલો પદાર્થ સ્વીકારીને ભક્તની ભક્તિ સિદ્ધ કરવી, અને ૨. સ્વેચ્છાથી ભોગ કરવો. પહેલા પક્ષમાં-ભગવાન્ કામિનીની અભિલાષા પૂર્ણ કરે છે તે પક્ષમાં-ભગવાન્ કામરૂપી અલ્પ ફલનું દાન કરે છે તેથી કામિની ભગવાનનું જે ભજન કરે છે તે નાશ પામે છે (કારણ કે કામ પૂર્ણ થતાં બીજું પ્રયોજન ન હોવાથી કામિની પછીથી ભગવાનનું ભજન કરતી નથી.) ભગવાન્ સ્વરૂપથી મહાન્ છે છતાં પણ કામનાનો વિષય-રમણ કાલથી મર્યાદિત છે (એટલે તે કાલ મર્યાદિત રમણથી મનોરથ પૂર્ણ થતાં પછીથી કામિનીથી ભગવાનનું ભજન થતું નથી.) બીજા પક્ષમાં-ભગવાન્ જ્યારે સ્વતંત્ર રીતે ભોગ્ય થાય છે તે પક્ષમાં-અતિભજનથી ભગવાન્ સ્વતંત્રતાથી ભોગ્ય બને છે. (રાત્રી દિવસ વિપ્રયોગ અને સંયોગના ભેદથી જો ભક્તો ભગવાનનું અતિભજન કરે તો ભગવાન્ સ્વતંત્રતાથી ફલરૂપે ભોગ્ય થાય. તેથી વિપ્રયોગનું દાન કરવાને માટે ભગવાન્ પોતે તિરોહિત થઈ ગયા. આ પ્રમાણે ભગવાનનો માર્ગ તદ્દન વિલક્ષણ જ છે, આત્મારામ વિગેરે ચાર પ્રકારોમાં તેમનો સમાવેશ થઈ શકે એમ નથી.) આ પ્રકારનું અતિભજન ગોપીજનોમાં નથી, તેથી તે સિદ્ધ કરવાને માટે ભગવાન્ ગાપીજનોનું હમણાં ભજન કરતાં નથી. (ચતુર્થ પક્ષ-ભગવાન્ વિષયત્વે સ્વેચ્છાથી ભોગ કરે એ પક્ષ-વિષે ભગવાન્ કહે છે કે) મારે કોઈ જાતની અપેક્ષા નથી એટલે હું વિષયન્યાયથી ભોક્તા થતો નથી. (તૃતીય પક્ષ-ભક્તિ સિદ્ધ કરવાને માટે ભક્તે સમર્પેલો પદાર્થ સ્વીકારવો એ પક્ષ-વિષે કહેવામાં આવે છે કે) ભક્તિ સિદ્ધ કરવાને માટે તો અભજન જ છે. (જ્યારે નિરંતર ભક્તિ સિદ્ધ થશે ત્યારે ભગવાન્ ભોક્તા થશે.) આ પ્રકારે સિદ્ધાંતનો સંગ્રહ કરવામાં આવ્યો છે.

ભગવાન્ જ્યારે ભક્તોનું અભજન કરે ત્યારે જે પ્રકારે ભક્તોની ભગવાનમાં એકાગ્રતા થાય તે પ્રકાર 'યથા અધન:' એ શબ્દોમાં ભગવાન્ કહે છે. પહેલાં એક માણસ ધન વિનાનો છે; પછીથી તેણે ધન મેળવ્યું; આ ધન જો નાશ પામે તો તેથી ચિંતામાં ને ચિંતામાં એકલી તે જ બાબતમાં મજ્ન થઈ જાય છે અને તે વિના બીજું એ

જાણતો નથી. આ વાત તો જગતમાં જ પ્રસિદ્ધ છે. તેવી જ રીતે ગોપીજનોને પણ પહેલાં ભગવાન્ પ્રાપ્ત થયા ન હતા; પછીથી ભગવાન્ જ્યારે પ્રાપ્ત થાય અને પછીથી તિરોહિત થઈ જાય ત્યારે ગોપીજનોનું ચિત્ત ભગવાનમાં જ લાગે અને જગતનું સ્મરણ થાય નહિ. જેમનું ચિત્ત ફક્ત ભગવાનમાં જ લાગેલું છે તેમનું ફલ તો પહેલાં-બીજા પક્ષમાં-કહેવામાં આવી ગયું જ છે, (અર્થાત્ ઉપર જણાવેલા બીજા પક્ષમાં કહ્યું તે પ્રમાણે ભગવાન્ સ્વતંત્ર રીતે તેવા ભક્તોના ભોગ્ય બને છે.) ૨૦.

આ પ્રમાણે ભગવાને પોતે ગોપીજનોનું જે અભજન કર્યું તેમાં (મર્યાદામાર્ગની દૃષ્ટિથી) હેતુ આપીને હવે ચાલતા પ્રસંગમાં (પુષ્ટિમાર્ગની દૃષ્ટિથી) અભજનનો અભાવ, અર્થાત્ ભજન છે, એમ ‘એવમ્’ શ્લોકમાં ભગવાન્ કહે છે :

**એવં મદર્થોઽભિજાત-લોકવેદસ્વાનાં હિ વો મય્યનુવૃત્તયેઽબલાઃ ।**

**મયા પરોક્ષં ભજતા તિરોહિતં માસૂચિતું માર્હથ તત્પ્રિયં પ્રિયાઃ ॥૨૧॥**

હે અબલાઓ! આ પ્રમાણે મારે માટે જ લોક, વેદ અને સગાં વહાલાંનો ત્યાગ કરનાર તમે મારામાં ચિત્તવૃત્તિ રાખો તેટલા માટે તમારું પરોક્ષ ભજન કરતાં હું તિરોહિત થઈ ગયો; માટે હે પ્રિયાઓ! પ્રિયની ઈર્ષ્યા કરવી તમને યોગ્ય નથી. ૨૧.

ગોપીજનોએ ભગવાનને જે કહ્યું હતું કે ‘વનમાં રાત્રીએ સ્ત્રીઓનો કેવી રીતે ત્યાગ થઈ શકે?’ તેને માટે જ આ શ્લોક કહેવામાં આવે છે. અહિં બે વસ્તુઓ કરવાની છે-એક તો ભક્તો હંમેશાં જ ભગવાનનું ભજન કર્યા જ કરે તેટલા માટે ભગવાને તેમનું અભજન કરવું, અને બીજું એ કે રાત્રીએ રક્ષણ કરવાને માટે ભગવાને તેમનું ભજન કરવું. આ બંનેય બાબતો જ્યારે પરોક્ષ રીતે ભક્તોનું ભજન કરે છે ત્યારે સિદ્ધ થાય છે એ વાત ભગવાન્ ‘મયા પરોક્ષં ભજતા તિરોહિતમ્’ એ શબ્દોમાં કહે છે.

ભગવાન્ ગોપીજનોનું ભજન કરે છે તેનું કારણ આપતાં કહે છે કે ‘એવમ્’. મારે જ માટે લોક, વેદ અને સગાં વહાલાંનો ત્યાગ જેમણે કર્યો છે એવાં ગોપીજનો છે. ગોપીજનોએ લોક, વેદ અને સંબંધીઓનો જે ત્યાગ કર્યો છે તે વૃથા નથી કર્યો, તેમ જ મોક્ષને માટે પણ નથી કર્યો એમ ભગવાન્ ‘મદર્થમઽભિજાત’ વિગેરે શબ્દોમાં કહે છે. પ્રથમ પક્ષમાં-લોક, વેદ અને સંબંધીઓનો વૃથા ત્યાગ કરવાના પક્ષમાં-જે ત્યાગ કરવામાં આવે છે તેનું ફલ અનિષ્ટ છે. બીજા પક્ષમાં-લોક, વેદ અને સંબંધીઓનો ત્યાગ મોક્ષને માટે કરવામાં આવે એ પક્ષમાં-મારે માથે ભાર રહેતો નથી. (યોજનાકાર લાલુભટ્ટજી ‘દ્વિતીયેન મમ ભારઃ’ એ પ્રમાણે પાઠ સ્વીકારે છે, અને તેનો અર્થ આ પ્રમાણે કરે છે:-દ્વિતીયથી એટલે મારે માટે ત્યાગ કરવાથી મારા

ઉપર તમારો ભાર-ઉપકાર-થયો; અર્થાત્ હું તમારો ઋણી થયો છું. આ ઋણ દૂર કરવાને માટે તમારું પરોક્ષ ભજન કરતાં હું તિરોહિત થઈ ગયો. આ બંને પાઠમાં 'દ્વિતીયે' એ પ્રમાણેનો પાઠ વધારે સારો છે.) લોક, વેદ અને સંબંધીઓ એમ ત્રણ પદાર્થોનો ત્યાગ કરવાનો હોય છે. લોકનો ત્યાગ કરવો બહુ કઠિન છે. આર્ય માર્ગ વૈદિક છે અને તે માર્ગનો ત્યાગ કરવો પણ બહુ કઠિન છે, કારણ કે મેં પોતે જ લોકમાં તે જ પ્રકારનું જ્ઞાન ઉત્પન્ન કર્યું છે. પતિ, પુત્ર વિગેરેનો પણ ત્યાગ કરવો બહુ કઠિન છે. ગોપીજનોએ આ બધાંનો જે ત્યાગ કર્યો તે મને મેળવ્યા પછી નહિ, પરંતુ મારે માટે જ, મને મેળવવાની ઈચ્છાથી જ કર્યો છે. જ્યારે આ પ્રમાણે મારે માટે સર્વનો ત્યાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે તે ભક્ત સર્વથી અધિક થાય છે અને તેને વિષે હું લીલા કરવાની ઈચ્છા રાખું છું. 'સર્વ ધર્મનો પરિત્યાગ કરીને મારે શરણે જે આવે છે' એ વાક્યમાં દર્શાવેલો ભક્ત પણ તેવા જ પ્રકારનો છે અને તેવા ભક્ત ઉપર જ મારો ભાવ રહે છે. આ પ્રમાણે લોક, વેદ અને સંબંધીઓ એ ત્રણનો જ્યારે ત્યાગ કરવામાં આવ્યો ત્યારે જ મેં ગોપીજનોનું ભજન કર્યું.

(ખરી રીતે તો મૂલ શ્લોકમાં 'સ્વ' પદ છે તેનો અર્થ પોતાનો આત્મા થાય છે. આ પ્રમાણે જો માનવામાં ન આવે તો પતિ, પુત્ર વિગેરેનો લોક અને વેદમાં અંતર્ભાવ થઈ જવાથી, લોક અને વેદ એ બે શબ્દોથી જ પતિ, પુત્ર વિગેરેની બાબત પણ પ્રાપ્ત થઈ જાય છે અને તેથી 'સ્વ' પદ અનર્થક થાય છે. તેથી 'સ્વ' પદનો અર્થ પોતાનો આત્મા જ કરવો. ગોપીજનોને પોતાના આત્મામાં સ્નેહ ન હતો તેથી તેમણે પોતાના આત્માનો ત્યાગ કર્યો કહેવાય. આનું તાત્પર્ય એ કે ગોપીજનોને પોતાના આત્મા વિગેરે ઉપર જે પ્રીતિ હોય તે એટલા માટે જ કે આત્મા વિગેરે ભગવાનના ઉપયોગમાં આવનાર છે.)

આ પ્રમાણેનો અર્થ યોગ્ય છે એમ મૂલમાં શ્લોકમાં આવેલું 'હિ' પદ સૂચવે છે. અર્થાત્ અનન્ય ભક્તોનું પાલન કરવું જોઈએ. 'વઃ' એટલે તમારું. મારામાં તમારા ચિત્તની એકાગ્રતા થાય એ એક ફલ છે. ભગવાન ગોપીજનોને 'અબલાઃ' એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તે એમ બતાવે છે કે જેમ સત્પુરુષોનું પ્રત્યક્ષ ભજન કરું છું તેમ તમારું પ્રત્યક્ષ ભજન હું કરી શકીશ નહિ.

અથવા તો શ્લોકના ત્રીજા પાદમાં આ પ્રમાણે અન્વય કરવો- 'પરોક્ષ ભજતા અતિરોહિતમ્'-તમારું પરોક્ષ ભજન કરતાં હું તિરોહિત થયો નથી. અથવા તો ભજન એટલે ભોગ. હું ભોક્તા હોઈને જ, ભોગ કરતો કરતો તિરોહિત થયો, અર્થાત્ તમે ગોપીજનોએ મને દીઠો નહિ. આ પ્રમાણે અર્થ કરવાથી ભગવાને

ગોપીજનોનું ભજન કર્યું નહિ એ પક્ષ દૂર થઈ જાય છે. ભગવાન્ ગોપીજનોનું ભજન ન કરે તો ઈર્ષ્યાનો સંભવ રહે છે. તેથી ભગવાન્ ગોપીજનોને કહે છે કે મારા ઉપર અકૃતજ્ઞતા વિગેરે દોષોનો આરોપ મૂકી મારી ઈર્ષ્યા તમારે કરવી જોઈએ નહિ, કારણ કે હું તમારો પ્રિય છું. જો પ્રિય દૃષ્ટ હોય તો તમે પોતે-ગોપીજન-પણ દૃષ્ટ હોવાં જ જોઈએ. હું તમને પ્રિય છું, કારણ કે તમે બધાં મારો ત્યાગ કરી શકતાં નથી. વળી, તમે મને પ્રિય છો. જ્યાં નિરુપધિ પ્રીતિ હોય છે ત્યાં કૃતજ્ઞતા વિગેરે ધર્મો હોતા નથી. જ્યાં ઔદાસીન્ય છે, -જ્યાં પ્રેમ નથી અને ઉપેક્ષાબુદ્ધિ હોય છે-ત્યાં જ કૃતજ્ઞતા વિગેરે ધર્મો સંભવે છે. ૨૧.

આ પ્રમાણે ગોપીજનોના મનનું સમાધાન કરીને ભક્તિમાર્ગનો વિરોધ દૂર કરવાને માટે ભગવાન્ ‘ન પારયેડહમ્’ એ શ્લોકમાં તેમની સ્તુતિ કરે છે:

ન પારયેડહં નિરવદ્યસંયુજાં સ્વસાધુકૃત્યં વિબુધાયુષાપિ વઃ ।

યા માભજન્ દુર્જરગેહશ્રૂજ્ખલાં સંવૃશ્ય તદ્ વઃ પ્રતિયાતુ સાધુના ॥૨૨॥

તમે મારું નિર્દોષ ભજન કરનારાં છો. તમારા ઉપકારનો બદલો બ્રહ્માના આયુષ્યથી પણ હું વાળી શકું એમ નથી. તોડવાને માટે બહુ કઠિન એવી ઘરરૂપી શુંખલાને તોડી નાખીને તમે મારું ભજન કર્યું છે. તમારા આ સત્કાર્યનો બદલો તમારા સંતોષથી જ થાઓ. ૨૨.

‘નિરવદ્યસંયુજામ્’ એટલે નિર્દોષ ભજનવાળાં. ‘સ્વસાધુકૃત્યમ્’ એટલે ગોપીજનો ઉપર પ્રત્યુપકાર કરવાની ક્રિયા. ‘વિબુધાયુષા’ એટલે બ્રહ્માના આયુષ્યથી; અથવા તો મન્વંતરના જેટલા આયુષ્યથી; અથવા તો વિશિષ્ટ જ્ઞાનીઓના અનંત આયુષ્યથી. આવા પ્રકારના આયુષ્યથી હું ઉપકાર વાળી શકું એમ નથી, કારણ કે ગોપીજનોએ કરેલું ભજન અને ભગવાને કરવાનો પ્રત્યુપકાર ભિન્ન પ્રકારનાં છે. તમે મારું જે ભજન કરો છો તે નિષ્કપટ છે, જ્યારે હું તમારું જે ભજન કરું છું તે કપટવાળું છે. મારવાડની ભૂમિમાં આવેલું ઝાંઝવાનું જલ બહુ હોય છતાં પણ વાસ્તવિક અલ્પ જલની તુલ્ય થઈ શકે નહિ. ભગવાનથી ખરેખરું ભજન તો થઈ શકે જ નહિ, કારણ કે સત્ય ભજન એ જીવનો ધર્મ છે. આમાં પણ વિશેષ જણાવતાં ભગવાન્ કહે છે કે ‘યા માભજન્’. ખરેખર! ઘરરૂપી સાંકળ તોડવી બહુ કઠિન છે, માણસ ઘરડો થાય તો પણ તેની આ ઘરરૂપી સાંકળ તૂટતી નથી. આવા પ્રકારની સાંકળને તોડીને તમે બધાં જે પ્રસિદ્ધ છો તેમણે મારું ભજન કર્યું છે. તમે બધાં પહેલાં આ સાંકળોથી બંધાએલા હતાં. તે વખતે તમે તમારા અર્થને માટે અને તેઓના અર્થને માટે તમારો આત્મા મને જ સમર્પ્યો. બહારની લોઢાની સાંકળો છોડી

પણ શકાય, પરંતુ જ્યારે ચારેય બાજુથી ઘેરાએલાં હોઈએ છીએ ત્યારે ઘરડપી સાંકળ છોડી શકાતી નથી. આ પ્રમાણે અલૌકિક કાર્ય કરનારાં તમે મારું જે ભજન કર્યું છે તે ભજનનો બદલો સાધુત્વથી જ થાવ. ‘સાધુના’ એ પદ ભાવવાચક છે, એટલે તેનો અર્થ ‘સાધુત્વેન’ થાય છે. સાધુ પુરુષો તો ખરેખર! મહત્ કૃત્ય કરીને પોતે જાતે જ સંતુષ્ટ થાય છે, પ્રત્યુપકારની અપેક્ષા રાખતા નથી. આ કારણથી હું કોઈનું ભજન કરતો નથી, કારણ કે ભજન કરવું એ જીવનો ધર્મ છે. તેથી આગળ ઉપર પણ જો તમે જાતે જ સાધુકૃત્ય કરીને સંતુષ્ટ થાવ તો મારું ભજન કરજો; જો સંતુષ્ટ ન થાવ તો તમને જેમ સુખ લાગે તેમ વર્તજો એમ ભાવ છે; કારણ કે કોઈ પણ માણસ અશક્ય કાર્ય કરી શકતો નથી.

(ભક્તિમાર્ગનો વિરોધ દૂર કરવા માટે ભગવાન આ શ્લોકમાં ગોપીજનોની સ્તુતિ કરે છે એમ આ શ્લોકના આરંભમાં શ્રીમહાપ્રભુજીએ આજ્ઞા કરી. આ વિષે શ્રીગોસ્વામિજી ટિપ્પણીમાં નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટતા કરે છે.

વાદી શંકા કરે છે:- ‘નાહં તુ સખ્ય:’ એ વીસમા શ્લોકમાં ‘જન્તુ’ પદ આવેલું હોવાથી એમ કહેવામાં આવ્યું કે ભગવાન સાધનમાર્ગીય ભક્તનું ભજન કરતા નથી. પ્રકૃત વિષયમાં ભગવાને ગોપીજનનું પરોક્ષ ભજન કર્યું એમ કહેવામાં આવ્યું, અને ગોપીજનોની ચિત્તવૃત્તિ ભગવાનમાં જ રહે તેટલા માટે ભગવાને ગોપીજનોનું જે પરોક્ષ ભજન કર્યું તેનું કારણ ‘એવં મદ્યર્થોઽભિજાત’ વિગેરે શબ્દોમાં આપવામાં આવેલું છે. તેથી ગોપીજનોએ ભગવાનનું જે ભજન કર્યું તે ભજનને અનુરૂપ ભગવાને ગોપીજનોનું ભજન કરવું ઉચિત છે, નહિ કે કોઈ પણ પ્રકારની મર્યાદા સ્થાપીને. જો ભગવાન કોઈ પણ પ્રકારની મર્યાદા સ્થાપે તો ભક્તિમાર્ગનો વિરોધ પ્રાપ્ત થાય. વળી, આવાં ગોપીજનોને ભગવાન પોતે દુઃખ આપે તે પણ ભક્તિમાર્ગથી વિરુદ્ધ છે.

સિદ્ધાંતી ઉપરની શંકાનો પરિહાર કરે છે- હે વાદી! તારી શંકા એવી છે કે સ્વામિનીઓએ ભગવાનનું જે પ્રકારે ભજન કર્યું તે ભજનને અનુરૂપ ભગવાને તેમનું ભજન કર્યું નહિ. ભક્તના ભજનને અનુરૂપ ભજન કરવું એ તો પ્રાવાહિક ધર્મરૂપ છે. આ જ વાત ભગવાને પણ ‘યે યથા માં પ્રપદ્યન્તે’ એ ગીતાના શ્લોકમાં કહી છે. આમ કહેવાનો ભગવાનનો આશય એ છે કે હું જે ફલ આપું તે ફલની આશા રાખનાર માણસ જે પ્રકારે મારું ભજન કરે છે તે પ્રકારનું તેને ફલ આપીને તેમાંથી હું મુક્ત થાઉં છું, અર્થાત્ નિશ્ચિંત થાઉં છું. ‘યે યથા મામ્’ એ શ્લોકનો આ જ અર્થ થાય છે કારણ કે તે શ્લોકમાં ‘યથા’ અને ‘તથા’ એ બે પદો મૂકવામાં આવેલાં છે અને તેથી ભક્તનું



અને ભગવાનનું એમ બે ભજનના બે પ્રકારો પણ એક છે. પ્રકૃત વિષયમાં ગોપીજનો ભગવાનનું જે ભજન કરે છે તેમાં દાસ્ય પ્રકાર છે, અને દાસ્ય પ્રકાર એ ભક્તનો જ ધર્મ છે, ઈશ્વરમાં તે સંભવતો નથી. ઈશ્વર કદાચિત્ દાસ્ય પણ દર્શાવે તો તે પણ અનુકરણ જેવું છે, કદાચિત્ મહારાજા પ્રસન્ન થઈને પોતાના સેવકના અંગનું મર્દન કરે તો તેમ કરવાથી મહારાજા દાસ થતા નથી. તેવી રીતે પ્રકૃત વિષયમાં પણ રસને લીધે ભગવાન ગોપીજનોના ચરણકમલની પરાગ લે તો પણ ભગવાન પતિ જ રહે છે, દાસ થતા નથી. આમ હોવાથી ગોપીજનો ઉપર પ્રત્યુપકારનો સંભવ ક્યાં રહ્યો? ગોપીજનોના ભજનને અનુરૂપ ભગવાનનું ભજન શી રીતે સંભવે? તેથી સિદ્ધ થાય છે કે પ્રત્યુપકારની દૃષ્ટિએ ‘ભગવાને ગોપીજનો ઉપર પ્રત્યુપકાર ન કર્યો’ એ પ્રમાણે ભગવાનને દોષ આપવો નહિ, કારણ કે પ્રત્યુપકાર અશક્ય જ છે.

અહિં વાદી શંકા કરે છે- તમે કહો છો તે પ્રમાણે હોય તો ભગવાને ગોપીજનોનું જે પરોક્ષ ભજન કર્યું તે બીલકુલ ઘટતું નથી. જેમના ભજનનો પ્રત્યુપકાર થઈ શકે એમ નથી એવાં ગોપીજનોનું પરોક્ષ ભજન કરીને તેમને ભગવાન દુઃખ આપે એ સંભવતું નથી.

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરે છે- પ્રભુ રસાત્મક છે એ વાત નિર્વિવાદ છે. રસ સંયોગ અને વિપ્રયોગ એમ બે પ્રકારનો છે. જો આ બેમાંથી એક પ્રકાર ન હોય તો રસ સંપૂર્ણ થાય નહિ. તેથી ભગવાને ગોપીજનોને સંપૂર્ણ રસનું દાન કર્યું; અને પછીથી જ્યારે ગોપીજનોએ ભગવાન ઉપર દોષનો આરોપ મૂક્યો ત્યારે શૃંગારરસનો તે વ્યભિચારી ભાવ થયો. આ વ્યભિચારી ભાવની શાંતિ ભગવાને વચનોથી કરી, કારણ કે ભગવાન ઉપર દોષ મૂકવો એ આગળ ઉપર રસનો જે અનુભવ થવાનો છે તેનો વિરોધી થાય છે (તેથી વચનોથી એ વ્યભિચારી ભાવની ભગવાને શાંતિ કરી.) આ પ્રકારે સમજવાથી આ બાબતમાં કોઈ પણ જાતનું અઘટિત થયું નથી એમ જણાશે. આવાં ગોપીજનોને ભગવાને જે દુઃખ આપ્યું તે ભક્તિમાર્ગથી વિરુદ્ધ છે એ શંકાનું પણ ખંડન આ રીતે જ થઈ ગયું.

વાદી શંકા કરે છે- આમ હોય તો પછી ગોપીજનોનું ભજન કરવાની ભગવાનની જે અશક્તિ છે તેમાં કારણ તો ભગવાનની ઈશ્વરતા છે અને તેથી આ બાવીસમા શ્લોકમાં ભગવાનની ઈશ્વરતાનું જ વર્ણન કરવામાં આવ્યું, ગોપીજનો ની સ્તુતિ કરવામાં આવી નથી.

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરે છે- જો કે ભગવાનની ઈશ્વરતાથી જ ઉપર જણાવ્યું તે પ્રમાણે ગોપીજનો ઉપર પ્રત્યુપકાર કરી શકતા નથી જ, છતાં પણ તર્ક

કરીને ભગવાન કહે છે-જો કોઈ પણ રીતે, લીલાથી, મારામાં દાસ્ય આવે તો પણ હે ગોપીજનો! તમારું નિરંતર દાસ્ય કરવાં છતાં પણ હું તમારા ઋણમાંથી મુક્ત થઈ શકીશ નહિ. આ પ્રમાણે ભગવાને ગોપીજનોની નિરવધિ શ્રેષ્ઠતા દર્શાવી, તો પછી આના આગળ બીજી કઈ સ્તુતિ હોઈ શકે? જો આ પ્રમાણે ન હોય તો ભગવાન 'વિબુધાયુષાપિ' -બ્રહ્માના આયુષ્યથી પણ-એમ કહેત નહિ, કારણ કે 'સ્વસાધુકૃત્યં ન પારયે' -તમારા ઉપકારનો બદલો હું વાળી શકું એમ નથી-એટલું જ કહેવાથી બધું પ્રયોજન સિદ્ધ થઈ જાય છે.

વાદી શંકા કરે છે- અરે! આ તો બીજા ભક્તોના જેવું જ જણાય છે. જુઓ. ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ એ ચારની ઈચ્છા રાખનારાઓને જે આપવામાં આવે તે પ્રત્યુપકારરૂપ હોય છે, છતાં પણ જેમણે આત્યંતિક ભક્તિયોગ પ્રાપ્ત કરેલો છે તેમને ભગવાનની સેવા વિના બીજા કોઈ પણ પદાર્થની અપેક્ષા રહેતી નથી તેથી તેમની બાબતમાં ભગવત્સેવા એ જ સ્વતંત્ર પુરુષાર્થ હોય છે એટલે ત્યાં કઈ વસ્તુ પ્રત્યુપકારરૂપ થઈ શકે? ગોપીજનોની બાબતમાં પણ તેમને દાસ્ય વિના બીજા કોઈ પણ પદાર્થની અપેક્ષા નથી એટલે તેમાં પ્રત્યુપકાર સંભવતો નથી; એટલે બીજા ભક્તોની બાબતમાં અને ગોપીજનોની બાબતમાં શો તફાવત રહ્યો?

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરે છે- જે વસ્તુની ભક્તને ઈચ્છા હોય તે વસ્તુ આપીને પ્રત્યુપકાર સંભવતો નથી. જો અપેક્ષિત વસ્તુ આપવાથી જ પ્રત્યુપકાર થતો હોય તો સ્વલ્પ કામ કરીને અધિકની ઈચ્છા રાખનાર, અને અધિક કાર્ય કરીને સ્વલ્પની ઈચ્છા રાખનાર, એમની બાબતમાં તે નિયમનો ભંગ થાય છે. તેથી સ્વરૂપની જ પૂર્વકૃતિને જે કાંઈ અનુરૂપ હોય તે ખોળવું. તેમાં અપેક્ષા હોય કે ન હોય એ વાત મહત્વની નથી. સ્વામિનીઓએ કરેલા ભજનને અનુરૂપ ભજન ઈશ્વરમાં પણ સંભવતું નથી તો પછી જીવમાં શી રીતે સંભવે? વાદીએ જે કહ્યું કે જેમણે આત્યંતિક ભક્તિયોગ પ્રાપ્ત કરેલો છે ઈત્યાદિ, તેના સંબંધમાં કહેવાનું કે આત્યંતિક ભક્તિયોગ પ્રાપ્ત કરનારા ભક્તો પહેલાં સકામબુદ્ધિથી અથવા નિત્ય કર્મની બુદ્ધિથી પ્રવૃત્ત થએલા, અને વચમાં ભગવાનના અનુગ્રહથી સેવારસનો અનુભવ થતાં બીજા બધા પદાર્થોની અપેક્ષા તે ભક્તોએ પોતાના સ્વાર્થને માટે છોડી દીધી, નહિ કે ભગવાનને માટે. તેથી ઉત્તરોત્તર તેવા પ્રકારની સેવા સિદ્ધ કરીને કેવલ ભગવત્સેવાથી જ સિદ્ધ થતું સુખ ભગવાન તે ભક્તોને આપે છે; અને આવા પ્રકારના સુખનું દાન તે જ ભગવાનનો ભક્તો ઉપર પ્રત્યુપકાર ગણાય છે. ગોપીજનોની બાબતમાં તો 'ત્વદ્દુપાસનાશાઃ' (ભાગ. ૧૦|૨૬|૩૮)-આપની સેવા કરવાની આશાથી, - 'એવં

મદર્થોઽભિલ્લત' ઈત્યાદિ (ભાગ. ૧૦૧૨૯૧૨૧)-આ પ્રમાણે તમે મારે માટે જ લોક, વેદ અને સંબંધીઓનો ત્યાગ કર્યો છે-ઈત્યાદિ વાક્યોથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ભગવાનની પ્રાપ્તિ થઈ તે પહેલાં જ ગોપીજનોએ બધાંનો ત્યાગ કર્યો છે. પ્રભુમાં તેમનો સ્નેહ સહજ હતો, એટલે પ્રભુના સુખમાં પોતાનો ઉપયોગ થશે એમ માનીને તેમાં વચ્ચે જેટલા પ્રતિબંધો આવતા હતા તે દૂર કરીને પોતાનું ભગવાનને નિવેદન કર્યું. તેથી જ અદ્ભવીસમા અધ્યાયમાં છેલ્લા શ્લોકમાં કોઈ રાજસતામસી ગોપીજન જે 'યત્તે સુજાતચરણામ્બુરુહં સ્તનેષુ' ઈત્યાદિ કહે છે તે બરોબર ઘટે છે. વળી, તે જ કારણથી 'એવં મદર્થોઽભિલ્લત' ઈત્યાદિ શ્લોકમાં 'સ્વ'નો ત્યાગ પણ કહેવામાં આવેલો છે. સ્વાર્થને માટે બીજા બધા પદાર્થોનો ત્યાગ તો લૌકિક અને અલૌકિક પુરુષો કરે એ સંભવે છે, પણ કોઈ પણ રીતે 'સ્વ'નો ત્યાગ કોઈ કરી શકતું નથી. આ 'સ્વ' પદનો અર્થ આત્મા કરવાનો છે. પોતાના આત્મામાં પોતાનો આત્મા તરીકે ગોપીજનોને સ્નેહ ન હોવાથી જ તેનો તેમણે ત્યાગ કર્યો છે. પોતાનો આત્મા અને દેહ વિગેરે ભગવાનને ઉપયોગી છે એ જ કારણથી ગોપીજનોને પોતાના આત્મા અને દેહ વિગેરે ઉપર સ્નેહ થતો હતો. આ કારણથી ગોપીજનોને પોતાનો આત્મા ભગવાનને લીધે જ પ્રિય હતો, નહિ કે આત્માને માટે ભગવાન, એમ સિદ્ધ થાય છે. ખંડિતા, માનિની વિગેરે નાધિકાઓની બાબતમાં પણ તે નાધિકાઓએ ભગવાનને માટે જે સુખ સિદ્ધ કરેલું તે સુખનો જ્યારે ભગવાન અંગીકાર કરે નહિ ત્યારે જ ખંડિતા નાધિકાને દુઃખ થાય, માનિનીને માન થાય. તેથી ભક્તો ભગવાનને માટે જે સુખ સિદ્ધ કરે છે તેનો બદલો કોણ વાળી શકે? ભગવાનને માટે સુખ સિદ્ધ કરવાનાં જે સાધનો હોય છે તે સાધનો ભગવાન પોતે મેળવી આપે અને ભક્તો ઉપર પ્રત્યુપકાર કરે એમ કોઈએ દલીલ કરવી નહિ; કારણ કે આ બાબતમાં ભક્તોનો ભાવ જ સાધનરૂપ છે; આ ભાવ પહેલેથી જ રહેલો છે, અને હંમેશાં એક જ પ્રકારનો અને નિત્ય હોવાથી સિદ્ધ થઈ શકે એવો નથી. વળી, ભાવના બલથી જ જે થાય છે તેમાં ભગવાનની કૃતિની અપેક્ષા રહેતી નથી, કારણ કે 'વશે કુર્વન્તિ માં ભક્ત્યા'-(ભક્તિથી ભક્તો મને વશ કરે છે-એ વાક્ય આમાં પ્રમાણ છે. વળી, 'નૈકાત્મતાં મે સ્પૃહયન્તિ' (ભાગ.૩૧૨૫૧૩૪)-મારા ભક્તો સાયુજ્યની સ્પૃહા કરતા નથી-એ પ્રમાણે કપિલદેવ આરંભ કરે છે; 'પશ્યન્તિ તે મે' (ભાગ.૩૧૨૫૧૩૫)-તેઓ મારા દર્શન કરે છે-એ શ્લોકમાં કપિલદેવ કહે છે કે સેવારસ અને કથારસમાં આસક્તિવાળા ભક્તો ભગવાનના સ્વરૂપરસનો અનુભવ કરે છે; અને પછીથી કહે છે કે 'ભક્તિરનિચ્છતો મે ગતિમર્ણવી પ્રયુક્તે' (ભાગ.૩૧૨૫૧૩૬), અનંત આનંદવાળાં સ્વરૂપોની ઈચ્છા ન

રાખનારાઓને મારી ભક્તિ સાયુજ્ય આપે છે. અહિં ગોપીજનોના પ્રસંગમાં તો રસમાર્ગની રીતે અંગીકાર કરવામાં આવે છે એટલે એમની ઈચ્છાને પ્રતિકૂલ કૃતિ કોઈ પણ વખત સંભવતી નથી, કારણ કે તે રસ તેવી જાતનો જ છે. વળી, બીજા ભક્તોનો માર્ગ ધર્મમાર્ગ છે, જ્યારે ગોપીજનોનો માર્ગ ધર્મિમાર્ગ છે, એટલે જેમ આગીઓ અને સૂર્ય એ બેની વચ્ચેનો તફાવત વર્ણવી શકાય એવો નથી તેમ ધર્મમાર્ગ કરતાં ધર્મિમાર્ગમાં આટલો ફેર એમ શી રીતે કહી શકીએ? (કારણ કે બેની વચ્ચે ઘણો જ ભેદ રહેલો છે.) તેથી જ ભગવાને જે કહ્યું કે ‘ન પારયે’—હું તમારો બદલો વાળી શકું એમ નથી—તે બરોબર છે.

ઘરરૂપી સાંકળ તોડવાનું કાર્ય ગોપીજનોના ભાવબલથી જ થયું છે, અને ભાવ કેવલ ભગવાનના અનુગ્રહથી જ પ્રાપ્ત થાય છે, એટલે ઘરની સાંકળ તોડવાનું કાર્ય પણ ભગવાને જ કરાવ્યું, તેથી જો કે ગોપીજનોની શ્રેષ્ઠતા સિદ્ધ થતી નથી, છતાં પણ ભગવાને આ ગોપીજનોને જ આ ભાવનું દાન કર્યું, બીજાને નહિ, એ દષ્ટિએ ગોપીજનોની શ્રેષ્ઠતા સિદ્ધ થાય છે. આ કારણથી જ ગોપીજનોને જે ભાવનું દાન કરવામાં આવ્યું તેને જ ભગવાન પ્રત્યુપકારરૂપે વર્ણવે છે.

વાદી શંકા કરે છે— જો આમ હોય તો પછી ભગવાન જે ‘ન પારયે’ એમ કહે છે તે બરોબર નથી; ઉલટું જ્યારે ભગવાને ગોપીજનોને આવા પ્રકારનું ભાવનું દાન કર્યું ત્યારે તેનો બદલો ગોપીજનો વાળી શકે એ સંભવિત નથી, એટલે વિપરીત વાત ઉપસ્થિત થઈ. ભગવાને ગોપીજનો ઉપર બદલો વાળવાની વાત તો આઘી જ ગઈ, પણ ગોપીજનોએ ભગવાનનો બદલો વાળવો જોઈએ, પણ તે તો સંભવિત નથી, એટલે બધી પરિસ્થિતિ જુદી જ થઈ જાય છે.

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરે છે— પ્રભુ સર્વ પૂર્ણ શક્તિઓવાળા છે છતાં પણ જ્યારે તે અમુક કાર્ય કરવાને અશક્ત હોય છે ત્યારે નિશ્ચય થાય છે કે તે કાર્ય જગતમાં કોઈ પણ દિવસ થઈ શકે એવું નથી. ભગવાનની પાસે સર્વ પ્રકારનું સામર્થ્ય છે છતાં પણ તે બીજો ઈશ્વર કરી શકવાને માટે સમર્થ નથી. આ કારણથી જ પ્રભુએ કહ્યું છે કે ‘અનંત હોવાથી મારાથી પણ ગણી શકાય એમ નથી’. તેવી જ રીતે આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ગોપીજનોનો કેવલ ભાવ રસાત્મક હોવાથી ભગવદાત્મક છે, અને તેથી તેને અનુરૂપ વસ્તુ ન હોવાથી ભગવાનની પ્રત્યુપકાર કરવાની અશક્તિ હોય એમાં શંકાને સ્થાન નથી. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ—અર્થાત્ બીજી અનુરૂપ વસ્તુ છે એમ માનીએ—તો ભગવાનનું ઈશ્વરત્વ જ ન રહે, કારણ કે તે પ્રમાણે માનવાથી ‘ન તત્સમશ્ચાભ્યધિકશ્ચ દશ્યતે’—ભગવાનના જેવો અથવા

તેમનાથી અધિક એવો બીજો પદાર્થ જોવામાં આવતો નથી-એ શ્રુતિમાં વર્ણવેલું ભગવાનનું સ્વરૂપ નષ્ટ થઈ જાય છે. વળી, વાદીએ જે દૂષણ બતાવ્યું કે વિપરીત સ્થિતિ-ગોપીજનો ભગવાન ઉપર ઉપકાર કરી શકતાં નથી એ સ્થિતિ-ઉત્પન્ન થાય છે, તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. કર્મ, જ્ઞાન અને સાધનમાર્ગીય (મર્યાદામાર્ગીય) ભક્તિ એ ત્રણ ભગવાને જીવોને માટે કર્યાં છે, જ્યારે ફલમાર્ગીય ભક્તિમાર્ગ પોતાને માટે પ્રકટ કર્યો છે; આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો પોતાના રસાત્મક સ્વરૂપાનંદનો અનુભવ ન થાય; અને શ્રુતિ કહે છે કે ‘તસ્માદ્દેકાકી ન રમતે’-તેથી ભગવાન એકલા રમતા નથી-. તેથી ભગવાને ગોપીજનોને જે ભાવનું દાન કર્યું તે પણ પોતાને માટે જ કરેલું હોવાથી વાદીએ દર્શાવેલું દૂષણ સંભવતું નથી.

વાદી શંકા કરે છે- અરે! આ પ્રમાણે તમે કહો છો તો પણ ભગવાન જે ‘ન પારયે’-હું બદલો વાળી શકું એમ નથી-એમ કહે છે તે ઘટિત નથી.

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરે છે- હે વાદી! તું કહે છે તે બરોબર નથી. આ આનંદ સ્વરૂપાત્મક છે છતાં પણ ગોપીજનો દ્વારા જ ભગવાનને તે આનંદનો અનુભવ થાય છે, અને આ અનુભવાએલી વસ્તુ જ એવા પ્રકારની હોવાથી ભગવાન જે કહે છે કે ‘ન પારયે’-હું બદલો વાળી શકું એમ નથી-તે તો રસાત્મક આનંદમય સ્વરૂપનું વર્ણન જ કરે છે. જેમ ‘વિસ્માપનં સ્વસ્ય ચ સૌભગર્હ્દ્ઃ’-પોતાનું અને સમૃદ્ધિનું વિસ્મરણ કરાવ્યું-એ સ્થલે જેમ વસ્તુના સ્વરૂપનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, તેમ અપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ સમજવું, એટલે કોઈ પણ જાતની શંકા રહેશે નહિ.) ૨૨.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં  
શ્રીમદ્વલ્લભદીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં  
બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલ પ્રકરણના શ્રી નિરૂપક  
૨૯ મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.



## ॥ अध्याय त्रीसमो ॥

गोपीजनो साथे भगवाननी रासक्रीडा;  
परीक्षितनी शंका अने शुक्रदेवञ्चअे करेवुं समाधान.

त्रिंशत्तमे हरिः प्रीतो लीलां कामकृतामपि ।

ईन्द्राद्विदुर्लभां यङ्के स्वानन्दार्थमितीर्यते ॥का. १॥

हरिअे प्रसन्न थईने ईन्द्र विगेरे देवताओने पणु दुर्लभ-वास्तविक रीते तो ब्रह्मा विगेरेने पणु दुर्लभ-अेवी अलौकिक प्रकारे अने कामशास्त्रमां जणुावेला लौकिक प्रकारे अेम बे प्रकारनी लीला पोताना आनंदने माटे लोकमां प्रकट करी; तेथी आ त्रीसमा अध्यायमां ते लीलानुं वर्णन करवामां आवे छे.

(जे के भगवाननी आ लीला अति गुप्त राभववा योज्य होवाथी तेनुं वर्णन करवुं उचित नथी, छातां पणु प्रभुअे लोकमां प्रकट लीला करी ते कारणथी ज आ अध्यायमां ते लीलानुं वर्णन करवामां आवे छे. अे प्रमाणे जे न होय तो श्रीमहाप्रभुञ्च कारिकामां 'ईति' पद्य मूकत नहि अने मात्र 'रासलीला ईर्यते' अेटवुं ज कहेत. आ लीला बे प्रकारनी छे. अेक तो अलौकिक यंद्रवाणी रात्रीओमां अलौकिक प्रकारवाणी लीला, अने तेनुं वर्णन आ त्रीसमा अध्यायना पञ्चीसमा श्लोक सुधी करवामां आवेवुं छे. बीञ्च लीला कामशास्त्रमां जणुावेला प्रकारे लौकिक यंद्रवाणी रात्रीओमां लौकिक प्रकारवाणी, अने तेनुं वर्णन आ अध्यायना छवीसमा श्लोकमां करवामां आवेवुं छे. विषयभोगमां ईन्द्रनो अधिकार होवाथी मूल श्लोकमां ईन्द्रनुं नाम आपवामां आवेवुं छे; वस्तुतः तो ब्रह्मा विगेरे देवोने पणु आ लीला दुर्लभ छे. कामशास्त्र प्रमाणे करवामां आवती लीला लोकने अनुसरनारी छे; अने ज्यारे आ लीला पणु ईन्द्र विगेरे देवोने दुर्लभ छे तो पछी अलौकिक लीला तेमने दुर्लभ होय तेमां पूछवुं ज शुं?) १.

अस्याः सर्वोपकाराय इलश्रुतिरुदीर्यते ।

लौकिक्यपि यदा दृष्टिः तदा सिद्धान्त ईर्यते ॥का. २॥

सर्व प्रकारना लोको उपर उपकार करवाने माटे आ लीलाना इलनुं वर्णन छेल्वा श्लोकमां करवामां आवे छे. आ लीलामां लौकिक दृष्टि राभवामां आवे त्यारे ते विषेनो सिद्धांत पणु कहेवामां आवे छे.

(ज्यां भगवाननी लीलानुं वर्णन करवामां आवे छे त्यां इलनुं वर्णन करवुं घटित नथी-अेम जे कोई शंका करे तो तेनुं समाधान आ कारिकामां करवामां आवे छे.

જગતમાં કામનું વર્ણન કામ ઉત્પન્ન કરનારું હોય છે એટલે કામની શંકાથી કોઈ વૈરાગ્યની ઈચ્છા રાખનારો પુરુષ ભગવાનની આ લીલાનું શ્રવણ કરે નહિ; તેમ જ ભક્તિની ઈચ્છા રાખનારો પુરુષ પણ વિચાર કરે કે માતાઓની ગુપ્ત વાતો સાંભળવી યોગ્ય નથી, કારણ કે એમ કરવાથી ચિત્તમાં વૈષમ્યરૂપી મહાનુ દોષ ઉત્પન્ન થાય, અને તેથી તે પુરુષ પણ ભગવાનની આ લીલાનું શ્રવણ કરશે નહિ. હવે બાકી રહ્યા વિષયી પુરુષો, અને તે જ આ લીલાનું શ્રવણ કરશે. આમ જો થાય તો ભગવાન ની લીલાનું શ્રવણ કરવાનો અધિકાર હીન પુરુષોને જ રહેશે અને તેને પરિણામે ભગવલ્લીલાની ઉત્તમતા રહેશે નહિ. આ બધી શંકાઓ દૂર કરવાને માટે આ અધ્યાયના છેલ્લા શ્લોકમાં ભગવલ્લીલાના શ્રવણનું ફલ વર્ણવવામાં આવ્યું છે. વિષયી માણસ પણ જો વિષયની ભાવનાથી પ્રથમ ભગવલ્લીલાનું શ્રવણ કરે તો પણ ભગવલ્લીલાની કથાનો સ્વભાવ જ એવા પ્રકારનો છે કે તે વિષયી માણસનો દોષ દૂર થઈ જાય છે અને તેને સ્વરૂપાનંદરૂપી પરમ પુરુષાર્થની પ્રાપ્તિ થાય છે.

જો કોઈ આ લીલાના સંબંધમાં ભગવાનમાં દોષ જુવે તો તેનો પણ નિર્ણય આ અધ્યાયના છેલ્લા ભાગમાં પરીક્ષિતના પ્રશ્ન અને શુકદેવજીના ઉત્તર વડે કરવામાં આવે છે. ભગવાનુ રસાત્મક છે અને આ બધાં ગોપીજનો ભગવાનના રસાત્મક સ્વરૂપમાં જ રહેલાં છે. ગોપીજનોનો ગોપો સાથે જો પ્રથમ વિવાહ કરવામાં ન આવે તો રસસ્વરૂપ જ સંભવે નહિ, કારણ કે તે રસસ્વરૂપની મર્યાદા તે પ્રકારની છે. આવા પ્રકારની બાબતમાં કોઈને એમ લાગે કે ભગવાનુ અને ગોપીજનો વિષય-વાસનાથી પ્રવૃત્ત થએલાં છે અને તેથી ભગવલ્લીલા અયોગ્ય છે. આવી શંકા કરનારની વાસ્તવિક રીતે તો ઉપેક્ષા જ કરવી યોગ્ય છે, છતાં પણ પ્રભુ સર્વના ઉદ્ધારક હોવાથી એવી શંકા કરનાર માણસની પણ જે પ્રકારે અલૌકિક બુદ્ધિ થાય તે પ્રકારે કહેવું જોઈએ એમ પરીક્ષિતના પ્રશ્નનું તાત્પર્ય છે. શુકદેવજી, ‘દુર્જનને પ્રથમ નમસ્કાર’ એ ન્યાય પ્રમાણે, લોકમતને અનુસરીને જ પરીક્ષિતના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે. જો આ પ્રમાણે ન માનીએ તો આગળ ‘ગોપીનાં તત્પતીનામ્’ એ છત્રીસમા શ્લોકમાં ભગવાને પરસ્ત્રીનો સમાગમ કર્યો એ વાતનું ખંડન કરવામાં આવેલું હોવાથી પરસ્ત્રીસમાગમનો દોષ ભગવાનને લાગતો નથી, તેથી ‘તેજયસાં ન દોષાય’ એમ ત્રીસમા શ્લોકમાં દોષનો જે નિષેધ કરવામાં આવ્યો છે તે અઘટિત થઈ જાય, અને વળી ‘નૈતત્ સમાચરેત્’ ઈત્યાદિ જે એકત્રીસમા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે તે પણ અઘટિત થઈ જાય. તેથી ‘કુત એવ બન્ધઃ’ એ પાંત્રીસમા શ્લોક સુધી શુકદેવજીએ લોકમતને અનુસરીને ઉત્તર આપ્યો છે, અને પછીથી છત્રીસમા શ્લોકથી

વસ્તુસ્થિતિને અનુસરીને ઉત્તર આપ્યો છે એમ સ્પષ્ટ જણાય છે.) ૨.

રસાત્મકસ્તુ યઃ કામઃ સોડત્યન્તં ગૂઢ એવ હિ ।

અતઃ શાસ્ત્રં પ્રવૃત્તં હિ તૃતીયં ભારતં તથા ॥કા.૩॥

પણ જે રસાત્મક કામ છે તે ખરેખર અત્યંત ગૂઢ છે; તેથી તૃતીય શાસ્ત્ર-કામશાસ્ત્ર-અને ભરતનું નાટ્યશાસ્ત્ર પ્રવૃત્ત થયાં છે.

(આ કારિકામાં ભગવાનના અલૌકિક પ્રકારના રમણમાં નૃત્ય, બંધ વિગેરે શા ઉપયોગમાં આવે છે તે કહેવામાં આવ્યું છે. ત્રણેય લોકમાં આ રસાત્મક કામ ગુપ્ત છે. દેવો વિગેરે પણ કામથી રસને ઉત્પન્ન કરીને તેનો અનુભવ કરે છે, પરંતુ તેમનો કામ રસાત્મક નથી. તેમાં પણ તેઓ રસના થોડા જ ભાગનો અનુભવ કરે છે, રસોનો અનુભવ કરી શકતા નથી. રસ એટલે આનંદ, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે બ્રહ્મના આનંદની જરા માત્રા ઉપર જ આ બધાં પ્રાણીઓ જીવે છે. એટલે ભગવાન જે રસનો અનુભવ કરે છે તે રસ ત્રણેય લોકમાં ન હોવાથી તેનું વર્ણન થઈ શકે એમ નથી, એટલે તે રસ ગુપ્ત કહેવાય છે. શ્રુતિ કહે છે કે ભગવાન રસ છે, એટલે ભગવાન જે રસનો અનુભવ કરે છે તે પોતાના સ્વરૂપથી ભિન્ન નહિ એવો આનંદ જ છે. આ ગૂઢ રસાત્મક કામનું જ્ઞાન આપવાને માટે વાત્સ્યાયન મુનિએ કામશાસ્ત્ર રચ્યું અને ભરતમુનિએ નાટ્યશાસ્ત્ર રચ્યું. ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ આ ચાર પુરુષાર્થો માં કામ ત્રીજો પુરુષાર્થ છે, તેથી કામશાસ્ત્રને તૃતીય શાસ્ત્ર કહેવામાં આવ્યું છે.) ૩.

અતોડત્ર ભગવાંશ્ચકે નૃત્યં કારિતવાંસ્તથા ।

સર્વાંઙ્ગેષુ તુ યો લીનઃ સ યથા વ્યક્તતાં પ્રજેત્ ॥કા.૪॥

આ અલૌકિક રસાત્મક કામ ગૂઢ હોવાથી તેને પ્રકટ કરવાને માટે ભગવાને નૃત્ય કર્યું અને ગોપીજનો પાસે નૃત્ય કરાવ્યું. બધાં અંગોમાં ગુપ્ત રહેલો આ અલૌકિક રસાત્મક કામ પ્રકટ થાય તેટલા માટે બધા બંધોનો ઉપયોગ કરવામાં આવે છે. (કામ નાયકના સ્વરૂપમાં રહેલો છે, અને નાયિકાનાં બધાં અંગોમાં રહેલો છે એ પ્રમાણે કામશાસ્ત્ર કહે છે.) ૪.

જલં વાયુશ્ચ સામગ્રી શ્રમાત્ શીતાચ્ચ જાયતે ।

અત્રૈવ લોકે પ્રકટમ્ આધિદૈવિકમ્ ઉત્તમમ્ ॥કા.૫॥

શ્રમથી અને શીતત્વથી જલ અને પવન એ બે રમણમાં સામગ્રી બને છે. (નૃત્ય અને બંધથી રસ જ્યારે પ્રકટ થાય ત્યારે ભોગ સિદ્ધ થઈ જ જાય છે, અને ભગવાને પોતાના સ્વરૂપથી જ ગોપીજનોને આનંદનું દાન કરેલું છે તો પછી 'તતશ્ચ કૃષ્ણોપવને' એ પચીસમા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં જલ અને વાયુ એ બેનો રમણમાં



ઉપયોગ ક્યાં રહ્યો? આ શંકાનું સમાધાન આ કારિકામાં કરવામાં આવે છે. રમણ બે પ્રકારનું હોય છે; એક જલમાં બીજું સ્થલ ઉપર. જલના રમણમાં જલ સામગ્રી હોય છે, જ્યારે સ્થલ ઉપરના રમણમાં પવન સામગ્રી હોય છે. સ્વામિની અને ભગવાન એ બેને રમણમાં શ્રમ થાય છે તેથી જ જલ અને પવન એ બે સામગ્રીનું કામ પડે છે. જલ અને પવન એ બેમાં રહેલા શીતત્વને લીધે જ તે બંને સામગ્રી થઈ શકે છે. કારિકામાં ‘જાયતે’-ઉત્પન્ન થાય છે, બને છે-એ જે પદ મૂકવામાં આવેલું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે આ અર્પણ સામગ્રી ભગવલ્લીલાને માટે જ તે જ વખતે ઉત્પન્ન થાય છે. ‘શીત’નો અર્થ ‘શીતત્વ’ કરવો, અર્થાત્ ‘શીતાત્’ એટલે ‘શીતત્વાત્. સોડમ્બસ્યલમ્’ એ ચોવીસમા શ્લોકમાં જ જલક્રીડા અને ‘તતશ્ચ કૃષ્ણોપવને’ એ પચીસમા શ્લોકમાં સ્થલક્રીડા વર્ણવી છે.) ૪૧.

આ લોકમાં જ જીવોનું આધિદૈવિકરૂપ જે રીતે પ્રકટ થાય તે રીતે કામ નામનું ઉત્તમ અને ઉત્કૃષ્ટ સુખ કૃષ્ણ ભોગવે છે, બીજો કોઈ નહિ.

(જીવોનું જે આધિદૈવિક રૂપ પ્રકટ થાય છે તે કામરહિત હોય છે, અર્થાત્ લૌકિક વાસનાત્મક લિંગ વિનાનું હોય છે, કારણ કે આ અધ્યાયના છેલ્લા શ્લોકમાં ‘હ્રદ્રોગમાશ્વપલિનોતિ’-તરત જ કામને દૂર કરે છે-એ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે. અર્થાત્ આધિદૈવિક રૂપ લૌકિક લિંગ વિનાનું જ છે. કામસુખને ઉત્તમ કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ કે તે ક્ષર અને અક્ષર બેથી ઉત્તમ છે, અર્થાત્ પુરુષોત્તમસ્વરૂપાત્મક છે. કામસુખને ઉત્કૃષ્ટ કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ કે તે મોક્ષસુખથી પણ ઉત્તમ છે. કામસુખ ભગવાનનું સ્વરૂપ જ હોવાથી ભગવત્સ્વરૂપ વિના બીજા કોઈથી તેનો ભોગ થઈ શકે એમ નથી. આ ભગવાને આ લીલા ભૂતલ ઉપર પ્રકટ કરી તેનું કારણ એ કે આ લોકમાં જ જીવોનું આધિદૈવિક રૂપ પ્રકટ થાય. જીવનું આધિદૈવિક રૂપ પ્રકટ થાય તો જ તે ભગવાનનું સાક્ષાત્ ભજન કરી શકે, અને સામાન્ય રીતે આ વ્યાપિવૈકુંઠમાં બને છે. પરંતુ ભગવાને કૃપા કરીને આ લોકમાં જ જીવો આધિદૈવિક રૂપ પ્રાપ્ત કરીને ભગવાનનું સાક્ષાત્ ભજન કરી શકે તેટલા માટે ભગવાને આ લીલા કરી છે એમ તાત્પર્ય છે. એટલું જ નહિ પણ જે કોઈ પણ માણસ ભગવાનની આ લીલાનું શ્રવણ કરે તે પણ આધિદૈવિક રૂપ પ્રાપ્ત કરીને ભગવાનનું સાક્ષાત્ ભજન કરી શકે છે.

વાદી શંકા કરે છે- ભરતમુનિએ જે નાટ્યશાસ્ત્ર રચ્યું અને વાત્સ્યાયન મુનિએ જ કામસૂત્ર રચ્યું તે તો વાસ્તવિક રીતે જીવોને માટે છે, કારણ કે વાત્સ્યાયનના કામસૂત્રના છેલ્લા ભાગમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે :

तदेतद् ब्रह्मचर्येण परेण च समाधिना ।

विलितं लोकयात्रार्थं न रागार्थोऽस्य संविधिः ॥

(કામસૂત્ર ૭૨।૫૭)

-જગતનો વ્યવહાર ચલાવવા માટે બ્રહ્મચર્ય પાળી અને ઉગ્ર સમાધિ કરીને આ કામશાસ્ત્ર મેં રચ્યું છે; આ શાસ્ત્ર રાગને માટે નથી-; આ પ્રમાણે ભરતના નાટ્યશાસ્ત્રમાં પણ જોવામાં આવે છે; અને વળી એમ પણ કહેવામાં આવ્યું છે કે બ્રહ્માએ ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ એ ચાર વિષયો ઉપર એક લાખ અધ્યાયો રચ્યા છે. (જુઓ કામસૂત્ર ૧।૧।૫). આ પ્રમાણે હોવાથી જે જીવ કામશાસ્ત્ર અને નાટ્યશાસ્ત્રની રીત પ્રમાણે વર્તે તેને પણ ઉત્તમ આનંદ મળે, એટલે ભગવાનની લીલામાં કોઈ જાતની વિશિષ્ટતા રહેતી નથી. ભગવલ્લીલામાં પ્રભુનું સ્વરૂપ જ વિશિષ્ટતા છે એમ જો કહેવામાં આવે તો તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે પ્રભુ પ્રકટરસાત્મક હોવાથી રસને પ્રકટ કરનારી સામગ્રીનું પ્રયોજન રહેતું નથી. ભગવલ્લીલામાં રસને પ્રકટ કરનારી સામગ્રીનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, તેથી ભગવાને પણ લોકને અનુસરીને લીલા કરી છે, પોતાના સ્વરૂપના પ્રાધાન્યથી લીલા કરી નથી. એટલે પ્રભુનું સ્વરૂપ ભગવલ્લીલામાં વિશિષ્ટતા છે એમ કહી શકાશે નહિ. વળી, જો ભગવલ્લીલામાં રસને પ્રકટ કરનારી રીતનો સ્વીકાર કરવામાં આવે તો રસનું ભગવદ્રૂપ નાશ પામે, અને જો ભગવદ્રૂપનો સ્વીકાર કરવામાં આવે તો રસને પ્રકટ કરનારી પદ્ધતિ વ્યર્થ થઈ જાય. આ પ્રમાણે બંનેય રીતે દોષ પ્રાપ્ત થાય છે.

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરે છે- હે વાદી, તું કહે છે તે યોગ્ય નથી. અહિં- નાટ્યશાસ્ત્ર અને કામસૂત્રમાં, અને આ કારિકામાં-ભગવાનના રસાત્મક સ્વરૂપનું જ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ રસાત્મક સ્વરૂપ તેને પ્રકટ કરનારી સામગ્રી સાથે જ પ્રકટ થાય છે, કેવલ સ્વરૂપ પ્રકટ થતું નથી. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો સ્વરૂપ રસાત્મક થાય નહિ, કારણ કે ભગવત્સ્વરૂપ જ તે પ્રકારનું છે. ભગવાનના આ રસાત્મક સ્વરૂપનું વિશેષ ભાન આપણને અજ્ઞાનને લીધે થઈ શકતું નથી, તેથી તેનું જ્ઞાન આપવાને માટે ભરત અને વાત્સ્યાયન મુનિએ નાટ્યશાસ્ત્રમાં અને કામશાસ્ત્રમાં ભગવાનનાં રસાત્મક સ્વરૂપનું વર્ણન કરેલું છે, દાખલા તરીકે, ભગવાને આ પ્રમાણે નૃત્ય કર્યું, આ પ્રમાણે રમણ કર્યું. જગતના જીવો તો જેમ બ્રહ્મનું વર્ણન કરનારી શ્રુતિને જીવ વિષે ઘટાવે છે તેમ ભગવાનના આ નૃત્ય અને રમણ એ બંને પણ જીવ વિષે ઘટાવે છે અને તે પ્રમાણે વર્તીને ઘણા દુઃખી થાય છે.

શ્રુતિમાં નીચે પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે. ‘અસદ્દા ઈદમગ્ર આસીત્, તતો

વૈ સદજ્ઞાયત; તદાત્માનં સ્વયમકુરત, તસ્માત્તસ્યુકૃતમુચ્યતે, યદ્વૈતત્સ્યુકૃતમ્, રસો વૈ સઃ, રસં હ્યેવાયં લબ્ધ્વા આનન્દી ભવતિ' (તૈત્તિરીય ઉપનિષદ્ ૨।૭)-આ પહેલાં અસત્ હતું, તેમાંથી સત્ ઉત્પન્ન થયું; બ્રહ્મ પોતે પોતાની જાતને જગદ્રૂપે કરી, તેથી તે સુકૃત કહેવાય છે; જે છે તે ખરેખર સુકૃત છે, પરમાત્મા ખરેખર રસ છે; જીવ આ રસ પ્રાપ્ત કરીને આનંદ પામે છે-. આ પ્રમાણે શ્રુતિમાં પૂર્વ સૃષ્ટિને અસત્-ખરાબ કહેવામાં આવ્યું છે, પછીથી બીજી સૃષ્ટિને સત્-સારી-કહેવામાં આવ્યું છે. બીજી સૃષ્ટિને સારી કહેવાનું કારણ એ કે તે સૃષ્ટિ બ્રહ્મનું સ્વરૂપ છે. તે બ્રહ્મ સુકૃત છે, સુકૃત રસ છે, અને રસ આનંદરૂપ છે એમ પણ ઉપરની શ્રુતિમાં કહેવામાં આવ્યું છે. આ બીજી સૃષ્ટિમાં રસને પ્રકટ કરનારી સામગ્રી અને પદ્ધતિની જરૂર ન હોત તો ભગવાને પોતાના આત્માને જ પોતે સૃષ્ટિરૂપે પ્રકટ કર્યો છે એમ શ્રુતિ કહેત નહિ. જો આ બીજી સૃષ્ટિ અન્ય સર્વ સૃષ્ટિઓના જેવી જ હોત તો પહેલી સૃષ્ટિને અસાધુ-ખરાબ-કહેત નહિ, અને આ બીજી સૃષ્ટિને સાધુ-સારી-કહેત નહિ. જો શ્રુતિમાં કહેલો રસ મનોવિકાર અથવા લૌકિક રસ હોત તો ભગવાને પોતાના આત્માને જ સૃષ્ટિરૂપે પ્રકટ કર્યો અને રસ આનંદરૂપ છે એમ શ્રુતિ કહેત નહિ. તેથી ભગવાનનું જે રસસ્વરૂપ છે તે રસને પ્રકટ કરનારી સામગ્રીવાળું છે એમ શ્રુતિને આધારે સિદ્ધ થાય છે.

વળી બ્રહ્મસૂત્રના 'અનુકૃત્યધિકરણ'માં (બ્રહ્મસૂત્ર ૧।૩।૨૨-૨૩) સર્વ પદાર્થો ભગવાનનું અનુકરણ કરે છે એમ 'તમેવ ભાન્તમનુભાતિ વિશ્વમ્'-જગત્ પ્રકાશમાન પરમાત્માનું અનુકરણ કરીને પ્રકાશે છે-એ વાક્યને આધારે સિદ્ધ કરવામાં આવ્યું છે. તેથી કામશાસ્ત્ર અને નાટ્યશાસ્ત્રમાં પણ જો લૌકિક રસનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે તો પણ તે લૌકિક રસનું સ્વરૂપ મૂલ ભગવદ્રસને અનુસરીને જ સિદ્ધ થાય છે, એટલે લૌકિક રસના દૃષ્ટાંતથી ભગવદ્રસનું પણ અનુમાન થઈ જાય. આ લૌકિક રસ પરિમિત છે, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે જીવો ભગવાનના આનંદની એક માત્ર ઉપર જ જીવે છે; જ્યારે અલૌકિક ભગદ્રસ અપરિમિત છે, કારણ કે તે પુષ્કળ અને વ્યાપક છે. લોકમાં પણ ભગવદ્રસના અનુકરણ તરીકે જ ભગવદ્રસનો આભાસ જ પ્રકટ થાય છે, ભગવદ્રસ પ્રકટ થતો નથી; તેથી જીવના લૌકિક રસને અવકાશ જ નથી. જો લૌકિક રસનો અનુભવ કરવામાં આવે તો પણ તેમાં ભગવદ્રસનો જરા પણ સંબંધ હોઈ શકતો નથી. ભરતમુનિએ અને વાત્સ્યાયન મુનિએ અનુક્રમે નાટ્યશાસ્ત્ર અને કામશાસ્ત્ર જે રચ્યું છે તે તો પરોક્ષ રીતે ભગવદ્રસનું જ્ઞાન આપવાને માટે જ છે. વાસ્તવિક રીતે તો પદ્મપુરાણના પાતાલખંડમાં રામાશ્વમેધ પ્રસંગે શેષ અને

વાત્સ્યાયનનો જે સંવાદ થએલો છે તે ઉપરથી જણાય છે કે વાત્સ્યાયન ઋષિ વૈષ્ણવ છે. તે જ પ્રમાણે ભરતમુનિ પણ વૈષ્ણવ છે, કારણ કે તેમણે નાટ્યશાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે જે માણસે નાટ્યશાસ્ત્રનું જ્ઞાન મેળવ્યું છે તેને મોક્ષ મળે છે. વળી, હનુમાને પણ નાટ્યશાસ્ત્ર રચેલું છે, અને આ હનુમાન્ પોતે રામચંદ્રજીનો પરમ ભક્ત છે. તેથી આવા મહાપુરુષોએ આ બધા ગ્રંથો રચવામાં જે આટલો બધો પ્રયાસ કરેલો છે તે ધર્મ, અર્થ અને કામ એ જીવના ત્રણ પુરુષાર્થો માટે નથી, પણ ઉપર જણાવ્યું તે પ્રમાણે મોક્ષ મેળવવાનાં સાધનો દર્શાવવાને માટે છે.

વળી, વાત્સ્યાયન મુનિ કામશાસ્ત્રમાં સાંપ્રયોગિક નામના બીજા અધિકરણમાં કહે છે કે “ઋચાં દશતયીનાં ચતુઃષ્ટિસંજિતત્વાદ્ ઈલાપિ તદર્થ-સમ્બન્ધાત્ પાઞ્ચાલસમ્બન્ધાચ્ચ બહુચૈઃ એષા પૂજ્ઞર્થ સંજ્ઞા પ્રવર્તિતા ઈતિ એકે” (કામશાસ્ત્ર - ૨।૨।૩) ‘દશ મંડલવાળા ઋગ્વેદને ‘ચતુઃષ્ટિ’ કહેવામાં આવે છે; આ કામશાસ્ત્રમાં પણ ઋગ્વેદના અર્થનો સંબંધ હોવાથી અને પંચાલ, બાભ્રવ્ય વિગેરે મહર્ષિઓએ કામશાસ્ત્રના વિષયની ચર્ચા કરેલી હોવાથી ઋગ્વેદીઓએ ‘ચતુઃષ્ટિ’ નામની સંજ્ઞા આદર દર્શાવવાને માટે કામશાસ્ત્રને આપેલી છે એમ કેટલાક કહે છે’. આ પ્રમાણે સૂત્ર રચીને વાત્સ્યાયન મુનિ એમ કહેવા માગે છે કે આલિંગન, ચુંબન વિગેરે દસ બાબતો ઋગ્વેદને આધારે જ સિદ્ધ કરવામાં આવેલી છે. “સર્વે વેદા યત્પદમ્ આમનન્તિ”-બધા વેદો જે પદનું વર્ણન કરે છે-એ શ્રુતિ, અને “વેદૈશ્ચ સર્વેઃ અહમેવ વેદઃ”-બધા વેદો મારું જ વર્ણન કરે છે-એ સ્મૃતિ સિદ્ધ કરે છે કે વેદ ભગવાનનું વર્ણન કરે છે. કામશાસ્ત્રમાં વેદનો જ અર્થ છે અને વેદમાં ભગવાનનું વર્ણન છે એટલે આ કામશાસ્ત્ર વેદની માફક લીલાસહિત ભગવાનનું પરોક્ષ રીતે પ્રતિપાદન કરે છે એમ સ્પષ્ટ સમજાય છે. વળી, નાટ્યશાસ્ત્રમાં નૃત્ય અને સંગીતનો ઉપયોગ થાય છે; સંગીત વિગેરે ગાંધર્વવિદ્યા સામવેદનો ઉપવેદ ગણાય છે; આ કારણથી પણ નાટ્યશાસ્ત્ર પણ લીલાસહિત ભગવાનનું જ વર્ણન કરે છે એમ સિદ્ધ થાય છે. માટે આ વિષયમાં કોઈ પણ પ્રકારની શંકાને સ્થાન નથી.) પાા.

આ પ્રમાણે પાછલા અધ્યાયમાં ગોપીજનોનો ભગવાનમાં સર્વાત્મભાવ થવાથી ભગવાને પ્રમાણથી- ‘નાહં તુ સખ્યઃ’થી આરંભીને ‘તદ્ઃ પ્રતિયાતુ સાધુના’ સુધીનાં વચનોથી-, અને પ્રમેયથી-પોતાના પ્રકટ સ્વરૂપથી-તેમનું દુઃખ દૂર કર્યું. ગોપીજનોનું આ દુઃખ જો અજ્ઞાનને લીધે થયું હોય તો તો તે દુઃખ તે જ વખતે દૂર થઈ જાય. જો તેમનું દુઃખ અજ્ઞાનને લીધે ન હોય તો ભગવાને જ તેમને દુઃખ આપ્યું એમ થાય. તેથી ભગવાન્ ગોપીજનોનો ત્યાગ કરીને જતા રહ્યા નહિ; એટલે

ગોપીજનોના દુઃખનું કારણ ભગવાન્ નથી પણ તેમનું પોતાનું અજ્ઞાન જ છે એમ સ્પષ્ટ થાય છે. તેથી ભગવાનનાં વાક્યોથી ગોપીજનોનું અજ્ઞાન જ્યારે દૂર થયું ત્યારે તે અજ્ઞાનનું કાર્ય દુઃખ પણ દૂર થઈ ગયું એમ ‘ઈત્યમ્’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે. (ભગવાનનાં વચનો શબ્દરૂપ હોવાથી ગોપીજનોમાં જ્ઞાન ઉત્પન્ન કરે છે. આ પ્રમાણે ભગવાનનાં વચનોથી ગોપીજનોનું અજ્ઞાન નાશ પામે છે અને તેથી વિરહરૂપી દુઃખ પણ નાશ પામે છે, અને પછીથી તેમનો તાપ દૂર થાય છે.)

॥શ્રીશુક ઉવાચ॥

ઈત્યં ભગવતો ગોખ્યઃ શ્રુત્વા વાચઃ સુપેશલાઃ ।

જહુર્વિરહજં તાપં તદ્દગ્ગોપચિતાશિષઃ ॥૧૧॥

શુકદેવજી કહે છે કે:- આ પ્રમાણે ભગવાનની અતિ મનોહર વાણી સાંભળીને, ભગવાનના અંગોના સ્પર્શથી જેમના મનોરથો પૂર્ણ થયા છે એવાં ગોપીજનોએ વિરહથી ઉત્પન્ન થએલા તાપનો ત્યાગ કર્યો. ૧.

ભગવાનનાં વચનો સાંભળીને ગોપીજનોએ વિરહથી ઉત્પન્ન થએલા તાપનો ત્યાગ કર્યો. તેમને જણાયું કે કેવલ ભ્રમથી જ અમને ભગવાનનો વિરહ થયો, (અને આ પ્રકારનું જ્ઞાન થતાં વાર જ ગોપીજનોનો તાપ નાશ પામ્યો. અહિં કોઈ શંકા કરે કે વિરહ એ શૃંગારરસનો બીજો પ્રકાર હોવાથી ભગવદ્રૂપ છે, એટલે તે ભ્રમથી ઉત્પન્ન થયો છે એમ શી રીતે કહી શકાય? આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. વાદી જે કહે છે તે વાત કેટલેક અંશે સત્ય છે. જે વિરહ ભગવદાત્મક છે તે જુદી જાતનો જ છે, અને તેનો કોઈ દિવસ નાશ થતો નથી; તે રસરૂપ છે. પણ જ્યાં ભક્તને એમ લાગે કે ભગવાન્ અમને છોડીને જતા રહ્યા અને તેથી ભગવાન્ સાથે અમારો સંબંધ નથી; જ્યાં ભક્તના હૃદયમાં ભગવાનની સ્ફૂર્તિ, અથવા તો ભગવાનનું રમણ, અથવા તો લીલાની સ્ફૂર્તિ સંભવતી નથી, પણ ભગવાન્ કૃતદ્ધન છે એ પ્રકારની બુદ્ધિ થતાં, ભગવાન્ પ્રકટ થએલા છે છતાં પણ તે ભક્ત સારી રીતે સુખ ભોગવી શકતો નથી; ત્યાં ભક્તને ભગવાનનો જે વિરહ થાય છે તે તેના અજ્ઞાનને લીધે જ થાય છે; અને તે અજ્ઞાન અને વિરહનો નાશ ભગવાનનાં વચનોથી થાય છે. ગોપીજનોને બંને પ્રકારના વિરહ હતા. તેમાં જે ભગવદાત્મક વિરહ હતો તે ભગવાન્ પ્રકટ થયા એટલે દૂર થઈ ગયો; અને જે અજ્ઞાનથી વિરહ હતો તે ભગવાનનાં વાક્યોથી નાશ પામ્યો એમ સમજવું. આ પ્રમાણે ગોપીજનોનો બીજા પ્રકારનો વિરહ અજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન થએલો હોવાથી વાસ્તવિક ન હતો, અને તેથી જ ભગવાને કહ્યું છે કે ‘તમારો તદ્દન વિયોગ કોઈ દિવસ મને થયો નથી’.)

અરે! ભગવાનનાં કેવલ વચનોથી ગોપીજનોનું અજ્ઞાન કેવી રીતે નાશ પામ્યું?—આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો શુકદેવજી કહે છે કે ‘ભગવતઃ’, આ વચનો ભગવાનનાં છે. શ્લોકમાં જે ‘ગોપ્યઃ’ પદ છે તે એમ સૂચવે છે કેમ ગોપીજનો નગરની સ્ત્રીઓ માફક ખોટા તર્ક કરનારી નથી. અરે! ભગવાનનાં તે વચનોએ ગોપીજનોના મનમાં સંદેહ કેમ ઉત્પન્ન ન કર્યો? (ભગવાનનાં વચનો ગોપીજનોના અનુભવથી વિરુદ્ધ હતાં અને એ વચનો કહેનાર ભગવાન વિશ્વાસ કરવા યોગ્ય હતા, એટલે સ્વાભાવિક રીતે સંદેહ થવો જ જોઈએ, તો પછી સંદેહ કેમ ઉત્પન્ન ન થયો?)—આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો શુકદેવજી કહે છે કે ‘સુપેશલાઃ’, અર્થાત્ ભગવાનનાં વચનો અતિમનોહર છે. મનમાં પરસ્પર વિરુદ્ધ જ્ઞાન થાય તો જ સંદેહ ઉત્પન્ન થાય. (આપણા ચાલતા વિષયમાં તો ભગવાનના વચનોના પ્રભાવથી ગોપીજનોને હમણાં લાગ્યું કે ભગવાન પહેલાં આપણી પાસે જ હતા; એટલે ગોપીજનોનો અનુભવનો વિરોધ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેથી ભગવાનનાં વચનોમાં સંદેહને સ્થાન નથી.) ભગવાનના શબ્દો મનોહર છે, અને તે સ્વભાવને લીધે જ ગોપીજનોના મનમાં સંદેહ ઉત્પન્ન થયો નહિ (કારણ કે ભગવાનના શબ્દોની મનોહરતાને લીધે ભગવાને ગોપીજનોનું જે પરોક્ષ ભજન કર્યું હતું તેનો અનુભવ ગોપીજનોના મનમાં થવા લાગ્યો.) તેથી ગોપીજનોએ ભગવાનના વિરહથી ઉત્પન્ન થએલા તાપનો ત્યાગ કર્યો; અર્થાત્ તેમણે જ્ઞાણને કે અમને ભગવાનનો વિરહ થયો નથી. જેમ સ્વપ્નમાંથી જાગી જનાર માણસ સ્વપ્નમાં અનુભવેલા દુઃખને માનતો નથી તેમ ગોપીજનોએ ભગવાનથી થએલા વિરહને માન્યો નહિ. ભગવાનનાં અંગોથી પૂર્ણ થયા છે મનોરથો જેમનાં એવાં ગોપીજનો છે. અર્થાત્ ભગવાને ગોપીજનોને સ્પર્શ વિગેરે ન કર્યો તો પણ ભગવાનના અવયવોથી જ ગોપીજનોના બધા મનોરથો પૂર્ણ થયા. (ઓગણત્રીસમા અધ્યાયના પંદરમા શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે હાસ્યસહિત લીલાયુક્ત દર્શનથી વિલાસ કરતી ભ્રુકુટી વડે ભગવાને કામને ઉદ્દીપન કર્યો, અને ગોપીજનો પોતાના ખોળામાં પધરાવેલા ભગવાનના ચરણોના સંબંધવાળા હસ્તોને લાડ લડાવતાં હતાં. તેથી ભગવાનની ભ્રુકુટી વિગેરે, ચરણ અને હસ્ત એ અવયવોથી જ ગોપીજનોના બધા મનોરથો પૂર્ણ થયા. ઉપર જણાવેલા શ્લોકમાં આ બધાં વિશેષણો આપેલાં હોવાથી ભવિષ્યના રમણનું તે વિશેષણો દ્વારા—અવયવો દ્વારા—સૂચન કરીને જ ભગવાન વચનો બોલ્યા છે, તેથી ભગવાનનાં અવયવો પણ વચનનું અંગ બને છે, એટલે અવયવોથી પૂરાતા મનોરથો વાણીથી જ પૂર્ણ થાય છે એમ સિદ્ધ થાય છે. તેથી હવે પછીના શ્લોકની

પ્રસ્તાવનામાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરશે કે ગોપીજનોના સુખમાં જે પ્રતિબંધ હતો તે ભગવાને વાણીથી દૂર કર્યો.) ૧.

આ પ્રમાણે ગોપીજનોના દુઃખના અભાવમાં પ્રતિબંધ કરનારનું-દુઃખનું-ભગવાને સ્વરૂપ વડે નિવારણ કરીને અને તેમના સુખમાં પ્રતિબંધ કરનારનું-અવયવોની કૃશતાનું-વચનો વડે નિવારણ કરીને ભગવાન પોતાના કર્તવ્યનો આરંભ કરે છે એમ 'તત્રારભત' શ્લોકમાં વર્ણન કરવામાં આવે છે: (ઓગણત્રીસમા અધ્યાયના 'સર્વાસ્તા:' ઈત્યાદિ નવમા શ્લોકમાં 'તાપં જહુ:'-ગોપીજનોએ તાપનો ત્યાગ કર્યો-એમ કહેવામાં આવ્યું છે. ત્રીસમા અધ્યાયના પહેલાં શ્લોકમાં પણ 'તાપં જહુ:' એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે તાપ બે પ્રકારનો છે એમ સિદ્ધ થાય છે. પ્રતિયોગી પદાર્થ અભાવનો પ્રતિબંધક છે; દાખલા તરીકે ઘટ એ ઘટાભાવનો પ્રતિયોગી કહેવાય છે અને તેથી ઘટાભાવનો તે પ્રતિબંધક થાય છે. તે પ્રમાણે દુઃખાભાવનો પ્રતિબંધ કરનાર દુઃખ છે, અને તે દુઃખને 'સર્વાસ્તા:' એ શ્લોકમાં તાપ કહેવામાં આવ્યું છે. આ તાપને ભગવાને પોતાના સ્વરૂપ વડે દૂર કર્યો એમ 'સર્વાસ્તા:' એ શ્લોકમાં કહેવામાં આવેલું છે, અને તેથી જ તે શ્લોકનાં સુબોધિનીજીમાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે ગોપીજનોનું અનિષ્ટ પણ જતું રહ્યું એમ શુકદેવજી 'જહુર્વિરલજમ્' એ શબ્દોમાં કહે છે. હવે જે સુખનું વર્ણન કરવાનું છે તે સુખમાં પ્રતિબંધ કરનાર અવયવોની કૃશતા વિગેરે છે, અને આ કૃશતા વિગેરેને આ અધ્યાયના પહેલા શ્લોકમાં તાપ કહેવામાં આવ્યું છે; અને તેથી જ ગોપીજનોને 'તદ્દુગ્ધોપચિતાશિષ:' એ પ્રમાણે વર્ણવવામાં આવ્યાં છે; અર્થાત્ ગોપીજનોનાં અવયવો ભગવાને વ્રતચર્યા પાળવાનું દાન કરીને કાલક્રમ વિના જ પૂર્ણ કર્યાં. ગોપીજનોના અવયવોની કૃશતા વિગેરે જે હોય તો રસ ક્ષીણ થઈ જાય, માટે અવયવોની કૃશતા વિગેરે દૂર કરવાની જરૂર રહે છે. આ પ્રકારે બંનેય પ્રકારના તાપની નિવૃત્તિ ભગવાનના સ્વરૂપના દર્શનથી અને તેમનાં વચનો શ્રવણ કરવાથી પોતાની મેળે જ સિદ્ધ થઈ ગઈ છે; બંને તાપ દૂર કરવાને માટે ભગવાનને કોઈ જાતનો પ્રયત્ન કરવો પડ્યો નથી.)

તત્રારભત ગોવિન્દો રાસક્રીડામ્ અનુવ્રતૈઃ ।

સ્ત્રીરત્નૈરન્વિતઃ પ્રીતૈઃ અન્યોન્યાબદ્ધબાહુભિઃ ॥૨॥

પ્રસન્ન થએલાં, પરસ્પર હસ્ત ઝાલીને ઉભાં રહેલાં, ભગવાનને જે રસ જોઈતો હોય તે રસને માટે ઉત્સુક થએલાં સ્ત્રીરત્નોથી વિંટળાએલા ગોવિંદે ત્યાં રાસક્રીડાનો આરંભ કર્યો. ૨.

આને-આધિદૈવિક રૂપ પ્રકટ કરવાને-માટે જ ભગવાન્ ઈન્દ્ર થયા, તેથી તેમને અસાધારણ ભોગની આવશ્યકતા છે. (આધિદૈવિક રૂપ પ્રકટ કરવાને માટે લીલા કરી, અને ભગવાન્ ગોવિંદ છે તે કારણથી પણ તેમણે લીલા કરી. ભગવાને ગોપીજનોનો અંગીકાર કરેલો હોવાથી તેમને ફલદાન કરવાને માટે ભગવાને રાસલીલા કરવી જોઈએ. 'ગોવિન્દ' પદનો અર્થ ઈન્દ્ર થાય છે, અને 'ઈન્દ્' ધાતુનો અર્થ પરમ ઐશ્વર્ય થાય છે, તેથી ભગવાનને અસાધારણ ભોગ આવશ્યક છે. 'ગોવિન્દ ઈતિ ચાલ્પ્યઘાત્' એ વાક્યમાં જે 'ચ' આવેલો છે તે ગોપેન્દ્ર, વ્રજેન્દ્ર, ગોકુલેન્દ્ર વિગેરે નામોનો બોધ કરે છે; તેથી ભગવાન્ ગોકુલેન્દ્ર હોવાથી તેના સંબંધવાળો અસાધારણ ભોગ તેમણે કરવો જોઈએ). ભગવાનને અનુસરતું વ્રત છે જેમનું એવા પ્રકારનાં સર્વોત્તમ સ્ત્રીઓથી-ગોપીજનોથી-વિંટળાએલા ભગવાને રાસક્રીડાનો આરંભ કર્યો. બહુ નાચનારીઓ જેમાં છે એવું જે વિશિષ્ટ પ્રકારનું નૃત્ય તે રાસ કહેવાય છે, કારણ કે તે નૃત્યથી રસ પ્રકટ થાય છે. નૃત્ય ખરેખર રસ પ્રકટ કરવાને માટે જ છે. રાસમાં પોતાની ક્રીડા-લીલા-તે રાસક્રીડા. ક્રીડામાં માનસિક આનંદ પ્રકટ થાય છે, અને નૃત્યમાં દેહનો આનંદ પ્રકટ થાય છે, (નૃત્યને રાસ પણ કહેવામાં આવે છે, તેથી રાસમાં આનંદ પ્રકટ થાય છે. આ પ્રમાણે ક્રીડા અને રાસ એ બે વચ્ચે ભેદ છે. જો કે 'રસ' શબ્દથી ઓળખાતો આનંદ મનમાં જ પ્રકટ થાય છે, છતાં પણ ભગવાનના પદાર્થો અલૌકિક હોવાથી સચ્ચિદાનંદરૂપ છે, તેથી આનંદ બધેય ઠેકાણે હોય છે, એટલે દેહમાં પણ આનંદ પ્રકટ થાય એ યોગ્ય છે.) (ક્રીડામાં નાચિકાનું પ્રાધાન્ય કહેવું જોઈએ છતાં પણ ભગવાનનું પ્રાધાન્ય જે વર્ણવવામાં આવે છે તેનું કારણ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) કામ તો ભોક્તામાં રહેલો છે એટલે ભોક્તાનું-ભગવાનનું-પ્રાધાન્ય ('ગોવિન્દઃ' એ પદ દ્વારા) વર્ણવવામાં આવ્યું છે. (રાસક્રીડા અનેક પ્રકારની છે છતાં પણ) આખા સમાજથી એક રસ ઉત્પન્ન થાય છે તેથી 'રાસક્રીડામ્' એમ એકવચન વાપરવામાં આવ્યું છે. જ્યારે સમાજ એકઠો થાય છે ત્યારે શેરડીના રસની માફક અથવા તો ભક્તિરસની માફક કામરસ અને નૃત્યરસ પણ એક જ ઉત્પન્ન થાય છે, અર્થાત્ ભગવાન્ બધાંને એક કરીને ભોગ કરે છે. (જેમ બહુ શેરડીઓમાંથી રસ નીકળ્યો હોય તો પણ તે શેરડીના રસ તરીકે એક જ રસ કહેવાય છે, જેમ ભક્તિરૂપી અધરસુધારસ અનેક સ્વામિનીઓના મુખારવિંદોમાંથી નીકળે છે છતાં પણ સુધારસ તરીકે તે એક જ હોય છે-અને આ કારણથી જ 'અન્તઃ પ્રવિષ્ટો ભગવાન્' એ કારિકામાં એકવચન જ વાપરવામાં આવેલું છે-, તેમ કામરસ પણ જો કે બધાં ગોપીજનોમાંથી નીકળેલો છે છતાં પણ



કામરસ તરીકે તે એક જ છે.)

ગોપીજનો રસને માટે યોગ્ય છે એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘અનુવ્રતૈઃ’-ભગવાનને અનુસરતું વ્રત છે જેમનું એવાં ગોપીજનો; તેથી તેમણે પણ રસ પ્રકટ કરવો જોઈએ. (જેમ ભગવાનને રમણ કરવાની ઉત્કંઠા થવાથી રસ પ્રકટ કરવાની જરૂર પડી તેમ આ ગોપીજનોને પણ રમણ કરવાની ઘણી તીવ્ર ઈચ્છા હોવાથી રસ ઉત્પન્ન કરવાની જરૂર રહે છે. અથવા તો આવાં અનુવ્રત ગોપીજનો ઉપર ભગવાનની પરમ કૃપા હોવાથી ભગવાને રસ પ્રકટ કરવો જ જોઈએ.) (‘અનુવ્રત’ શબ્દનો બીજો અર્થ આપતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) જે પ્રકારનો રસ ભગવાનને ગમે છે તે પ્રકારનો જ રસ ગોપીજનોને પણ ગમે છે (અને તેથી ગોપીજનો ભગવાનને જે રસ અનુકૂલ થઈ પડે તે જ રસ પ્રકટ કરે છે.)

શંકા - અરે! આ રસ અલૌકિક છે, અને તે લૌકિક અવયવોમાં રહેતો નથી તેથી આ બધો આરંભ વ્યર્થ છે; રેતીના ઢગલામાંથી કાંઈ તેલ નીકળવાનું નથી. (‘પાદન્યાસૈઃ’ એ આઠમા શ્લોકમાં જણાવેલા પ્રકારે બધા અવયવોમાંથી રસ બહાર કાઢવાને માટે રાસનો આરંભ થાય છે. તેથી ગોપીજનોનો આત્મા અલૌકિક હોવા છતાં તેમનાં અવયવો તો લૌકિક છે; નહિ તો જુદા જુદા અવયવોને ઉદ્દેશીને કરવામાં આવતો પચ્ચિની વિગેરે વ્યવહાર આ ગોપીજનોને વિષે થાય નહિ. કામશાસ્ત્રમાં પણ પચ્ચિની વિગેરે શબ્દોનું જ્ઞાન આપવાને માટે લૌકિક અવયવોને ઉદ્દેશીને જ પચ્ચિની વિગેરે સંજ્ઞાઓનું લક્ષણ આપવામાં આવ્યું છે. તેથી આ અલૌકિક રસ લૌકિક અવયવોમાં રહેતો નથી.)

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘સ્રીરત્નૈઃ’. સ્વર્ગ, મૃત્યુ અને પાતાલ એ ત્રણ લોકના ભેદથી સ્વભાવથી સ્ત્રીઓ ત્રણ પ્રકારની છે-તેમાં પણ મનુષ્યલોકની સ્ત્રીઓના પચ્ચિની વિગેરે ચાર જાતિભેદો છે, અને અશ્વના સ્વભાવવાળા વિગેરે ચૌદ વાસનાભેદો છે. આ બધીય સ્ત્રીઓમાં આ ગોપીજનો રત્નરૂપ છે; અર્થાત્ આ ગોપીજનો પોતાના પચ્ચિની વિગેરે અસાધારણ ધર્મોથી તે તે ધર્મોને પ્રકટ કરે છે. તેથી ગોપીજનો સર્વભાવથી રસની ઉત્પત્તિને માટે યોગ્ય છે. (ગોપીજનોના પચ્ચિની વિગેરે અસાધારણ ધર્મોમાંથી જરાક પણ ધર્મ જો લૌકિક સ્ત્રીઓના લૌકિક અંગોમાં મૂકવામાં આવે તો તે અંગોમાં પણ તે ધર્મ પચ્ચિની વિગેરેનો ધર્મ પ્રકટ કરે છે. આથી કાંઈ પચ્ચિની વિગેરે ધર્મ લૌકિક સ્ત્રીઓનો ધર્મ થતો નથી, પરંતુ તે તો આ ગોપીજનોના અવયવોનો જ ધર્મ રહે છે. જેમ શ્રી, પુષ્ટિ વિગેરેનો જરાક પણ ભાગ લૌકિક પદાર્થોમાં સ્થાપન કરવામાં આવે અને તેથી તે

લૌકિક પદાર્થો શ્રી, પુષ્ટિ વિગેરે ધર્મોવાળા છે એમ કહેવામાં આવે છે, વાસ્તવિક રીતે તો શ્રી, પુષ્ટિ વિગેરે લૌકિક પદાર્થોની શક્તિઓ નથી, પણ ભગવાનની જ શક્તિઓ છે; તેમ પશ્ચિમી વિગેરે ધર્મો ગોપીજનોના જ છે, લૌકિક સ્ત્રીઓના નથી.)

આવા પ્રકારનાં-રત્ન જેવાં-ગોપીજનોથી વિંટળાએલા ભગવાન છે. પોતે નાયકમણિ છે, અને આ બધાં ગોપીજનો ભગવાનને યોગ્ય મણિઓ છે. (જેમ કંકણો વિગેરે આભરણોમાં રહેલાં રત્નો ચક્રચકાટરૂપી પોતાના અસાધારણ ધર્મોથી કંકણો વિગેરે આભૂષણોમાં પણ પોતાનો ચક્રચકાટ પ્રકટ કરે છે, તેમ સ્ત્રીઓના રત્નરૂપી આ ગોપીજનો પણ ભગવાનમાં પોતાના અસાધારણ ધર્મો પ્રકટ કરે છે.) એક રસને માટે ભગવાન અને ગોપીજનો એક બીજાની સાથે મળ્યાં છે. આ પ્રમાણે જ્યારે ક્રીડાને માટે-અર્થાત્ કામને માટે-ભગવાન ગોપીજનોની સાથે મળ્યા છે એમ જે કહેવામાં આવ્યું તે ઉપરથી ‘રસ પ્રકટ કરવાને માટે શુલ્કદાસિકાઓ કામે ભગવાનને આપી’ એમ જે પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે તેનું પણ સમર્થન થઈ ગયું.

શંકા- અરે! આ ગોપીજનો તો જીવ છે, જ્યારે ભગવાન આનંદમય છે, તેથી તે બે વચ્ચે સરખાપણું ન હોવાથી રસની ઉત્પત્તિ શી રીતે થઈ શકે?

સમાધાન- ઉપરની શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘પ્રીતે:’. તે ગોપીજનો પણ ભગવાનના જેવાં જ થએલાં હતાં; (અર્થાત્ પ્રેમ એ આનંદનો ધર્મ હોવાથી ગોપીજનો આનંદરૂપ ભગવદ્રૂપ-થયાં); એટલે બધી રીતે તે પ્રસન્ન થએલાં હતાં.

ગોપીજનોની આસક્તિ કેવા પ્રકારની હતી તે દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘અન્યોન્યાબદ્ધબાહુભિ:’. ગોપીજનોએ પરસ્પર સંપૂર્ણ રીતે બંને બાજુએ હાથ ઝાલ્યા હતા, ભગવાનની સાથે હાથ ઝાલ્યો ન હતો. ૨.

ભગવાન તો ગોપીજનોના હસ્તમંડલની બહાર ઉભા રહીને જે પ્રકારે તેમના સંબંધમાં આવે તે પ્રકારે ઉભા એમ ‘રાસોત્સવ: સંપ્રવૃત્ત:’ ઈત્યાદી શ્લોકમાં (‘ગૃહીતાનાં કણ્ઠે’ એ ભાગ સુધીમાં) શુકદેવજી કહે છે:

રાસોત્સવ: સમ્પ્રવૃત્તો ગોપીમણ્ડલમણ્ડિત: ।

યોગેશ્વરેણ કૃષ્ણેન તાસાં મધ્યે દ્વયોર્દ્વયો: ।

પ્રવિદ્યેન ગૃહીતાનાં કણ્ઠે સ્વનિકટં સ્ત્રિય: ॥૩॥

યં મન્યેરન્ નભસ્તાવદ્ વિમાનશતસંકુલમ્ ।

દિવૌકસાં સદારાણામ્ ઔત્સુક્યાપહ્તાત્મનામ્ ॥૪॥

ગોપીજનોના મંડલોથી શોભા પામતો રાસોત્સવ યોગેશ્વર કૃષ્ણે શરૂ કર્યો,

બે બે ગોપીજનો વચ્ચે યોગેશ્વર કૃષ્ણે પ્રવેશ કર્યો, ગળામાંથી તેમને પકડ્યાં, અને ગોપીજનોએ ભગવાન્ પોતાની પાસે જ છે એમ માન્યું. તે સમયે પોતાની સ્ત્રીઓ સાથે આવેલા અને જેમની બુદ્ધિ ઉત્સુકતાથી હરાઈ ગઈ હતી એવા દેવોનાં સેંકડો વિમાનોથી આકાશ ભરાઈ ગયું હતું. ૩-૪.

રાસલીલામાં બધી જ વસ્તુઓ-કામલીલામાં આવતી ભેટવું ઈત્યાદિ વસ્તુઓ-મુખ્ય ન હોવાથી અને તેમાં રસ મુખ્ય હોવાથી રાસોત્સવનો જ સારી રીતે આરંભ થયો. ઉત્સવ એટલે બધી વસ્તુઓને ભૂલાવે એવો મનનો આનંદ. ઉત્સવ સિદ્ધ કરવાને માટે-રાસથી ઉત્પન્ન થતો આનંદ બીજા બધા પદાર્થો ભૂલાવી દે તેટલા માટે-એક જ જાતનો અનેક રસ ઉત્પન્ન કરવાને માટે જે વિશિષ્ટ પ્રકાર હતો તે દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ગોપીમણ્ડલમણ્ડિતઃ’, ગોપીજનોનાં અનેક પ્રકારનાં મંડલોથી શોભા પામતો રાસોત્સવ. ઉત્સવ પણ અનેક પ્રકારનાં બ્રાહ્મણ વિગેરેનાં મંડલોથી શોભા પામે છે. અહિં રાસમાં પણ સરખા સ્વભાવવાળાં ગોપીજનોને રસને માટે એકઠાં કરવામાં આવ્યાં હતાં અને તેમને જુદાં જુદાં મંડલો બનાવ્યાં; આ મંડલોથી પણ રાસોત્સવ શોભતો હતો. રાસોત્સવને પોષણ આપનારા રસો પણ રાસોત્સવમાંથી જ ઉત્પન્ન કરવામાં આવ્યા હતા, એટલે ઉત્તરોત્તર ક્ષણવાળાં મંડલોથી પૂર્વ પૂર્વ ક્ષણવાળા રસનું પોષણ થાય છે, તેથી આ રસ બીજે કોઈ સ્થલે હોઈ શકતો નથી. રાસોત્સવની સારી પ્રવૃત્તિ એટલે નિરંતર આવિર્ભાવ.

અરે! કાલ, કર્મ અને સ્વભાવ એ ત્રણ પ્રતિબંધ કરનારાં હોવાથી અનેક સ્થલે ઉત્પન્ન થતો રસ કેવી રીતે એક થઈ શકે? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યોગેશ્વરેણ’. યોગેશ્વર ભગવાન્ તો ખરેખર બધા ઉપાયો જાણનારા છે. બધી વસ્તુઓમાં રહેલા ભગવાનના ઐશ્વર્ય વિગેરે ધર્મોને ફક્ત યોગ જ પ્રકટ કરે છે, એટલે બધાં સાધનોમાં યોગ મુખ્ય છે. યોગમાં પણ બધાય સ્થલમાં રહેતો મૂલ રસ ઐશ્વર્યમાં ઉત્પન્ન કરી શકાય છે એ વાત તો સિદ્ધ જ છે. વળી, આ-યોગેશ્વર ભગવાન્-તો કૃષ્ણ છે, પોતે જ સદાનંદ છે. પ્રકટેલો અગ્નિ સર્વ સ્થલે ગુપ્ત રહેલા અગ્નિને ઉત્પન્ન કરી શકે છે. (‘તમદ્ભૂતં બાલકમ્’ એ શ્લોકમાં વર્ણન કરવામાં આવેલાં કાલ, કર્મ અને સ્વભાવ એ તત્ત્વો ભગવદ્રૂપ છે, પ્રાકૃત કાલ, કર્મ અને સ્વભાવ ત્યાં નથી એમ તો પહેલાં જ કહેવામાં આવેલું છે. વળી, અગ્નિનું જે દષ્ટાંત ઉપર આપવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ કે ‘તાસામાવિરભૂત્ શૌરિઃ’ એ બીજા શ્લોકનાં સુબોધિનીજીના આરંભમાં જ કહેવામાં આવ્યું છે કે ગોપીજનોની મધ્યમાં પણ ભગવાન્ ‘કૃષ્ણ જ થયા’, અને આ પ્રમાણે કહેવાનું રહસ્ય એ કે ભગવાને

ગોપીજનોની અંદર પોતાનો આનંદ સ્થાપ્યો.)

ભગવાન્ ગોપીજનોની મધ્યમાં કેવી રીતે ઉભા રહ્યા તે દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'તાસાં મધ્યે દ્વયોર્દ્વયોઃ'. મંડલાકારે ઉભાં રહેલાં જોટલાં ગોપીજનો હતાં તેમાંનાં બબ્બે ગોપીજનોનું યૂથ ભિન્ન છે એમ જાણવું. બબ્બે ગોપીજનોનાં બે યૂથોમાં એક ભગવાન્ છે એમ ન માનવું. (બે ગોપીજનોની ભાવના કરીને શ્રીકૃષ્ણની ભાવના કરવી, પછીથી ફરી બે ગોપીજનોની ભાવના કરીને શ્રીકૃષ્ણની ભાવના કરવી. આ પ્રમાણે ભાવના કરવાથી બધાં ગોપીજનોની એક બાજુએ ભગવાન્ ઉભા રહેલા હોય છે અને તેમની સાથે ગોપીજન ક્રીડા કરે છે; જ્યારે ભગવાનની ડાબી બાજુએ એક ગોપીજન ઉભેલાં છે અને તેમની સાથે ભગવાન્ ક્રીડા કરે છે, જમણી બાજુએ પણ એક ગોપીજન ઉભેલાં છે અને તેમની સાથે ભગવાન્ ક્રીડા કરે છે. આ પ્રમાણે ભગવાનનું એક સ્વરૂપ બે ગોપીજનો સાથે ક્રીડા કરે છે. બે ગોપીજનોના યૂથમાં ભગવાનનું એક સ્વરૂપ હોય છે; બીજાં બે ગોપીજનોના યૂથમાં ભગવાનનું બીજું સ્વરૂપ હોય છે. તેથી એક ગોપીજનની ડાબી બાજુએ અને બીજાં ગોપીજનની જમણી બાજુએ ભગવાન્ ઉભા રહેલા છે. શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે બબ્બે ગોપીજનોનાં યૂથો ભિન્ન ભિન્ન છે એમ ભાવના કરવી. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે જપ વિગેરે કરતી વખતે હંમેશાં જ આ પ્રકારના સ્વરૂપનું સ્મરણ કરવું.)

તેથી ગોપીજનોના મંડલમાં જ્યાં બે હાથ જોડાએલા રહે છે ત્યાં ભગવાનનું ઉદર-પેટ-આવે તેવી રીતે ભગવાન્ ઉભા થયા. આ પ્રકારે પ્રકટ થએલા ભગવાનનો બંને બાજુએ સંબંધ થયો એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે બબ્બે ગોપીજનોની વચમાં દાખલ થઈને ભગવાને ગોપીજનોને કંઠમાં પકડ્યાં; અર્થાત્ ભગવાને પોતાના બે હાથ વતી પાસે ઉભેલાં બે ગોપીજનોને ગળામાંથી પકડ્યાં. આ પ્રમાણે સોળ ગોપિકાઓની વચમાં આઠ કૃષ્ણ પ્રકટ થયા. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ, અને એમ માનીએ કે સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં સોળ કૃષ્ણ છે અથવા ચાર કૃષ્ણ છે, તો રસાભાસ થઈ જાય, કારણ કે કૃષ્ણ બે પ્રકારના જણાય. (જ્યારે સોળ કૃષ્ણ હોય તો એક જ ગોપીજનની બે બાજુએ ભગવાન્ પ્રકટ થાય, અને ભગવાનનાં બે સ્વરૂપોની સાથે એક ગોપીજનનો સંબંધ થતાં રસાભાસ થાય. આ પ્રમાણે સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં સોળ કૃષ્ણ એ પક્ષનું ખંડન કરવામાં આવ્યું. હવે સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં ચાર કૃષ્ણ પ્રકટ થયા એ બીજા પક્ષનું ખંડન કરવામાં આવે છે.) આ જ અર્થ-સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં આઠ કૃષ્ણ પ્રકટ થયા એ અર્થ-શુકદેવજી 'સ્વનિકટં સ્ત્રિયઃ યં મન્યેરન્' એ શબ્દોમાં કહે છે. બધાં ગોપીજનોએ ભગવાન્

પોતાની પાસે જ છે, બીજાની પાસે નથી, એમ માન્યું. (જો સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં ચાર કૃષ્ણ પ્રકટ થાય તો સોળ ગોપીજનોમાંથી આઠ ગોપીજનોને ભગવાનની સાથે સંબંધ થાય નહિ, અને તેથી મૂલ શ્લોકમાં જે એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ગોપીજનોએ-બબ્બે ગોપીજનોનાં દરેક યૂથે-એમ માન્યું કે ભગવાન્ અમારી પાસે છે, બીજાની પાસે નથી, તે વાતને વિરોધ આવે છે. માટે મૂલ શ્લોકની સાથેનો વિરોધ દૂર કરવાને માટે આપણે અવશ્ય માનવું જોઈએ કે સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં આઠ કૃષ્ણ પ્રકટ થાય છે એ પક્ષ યોગ્ય છે.) (સોળ ગોપીજનોનું એક મંડલ હોય છે. એવાં અનેક મંડલો છે. તેમાં સોળ ગોપીજનો ભગવાનની કલારૂપ છે. આ સોળ કળારૂપી ગોપીજનો સાથે શ્રીવૃંદાવનચંદ્ર ભગવાન્ પ્રકટ થયા છે. આ કારણથી જ સોળ જ ગોપીજનોની ગણના કરવામાં આવી છે, અને તેટલાં જ ગોપીજનોનું એક મંડલ થાય છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. દશમસ્કંધના તામસ પ્રકરણમાં અગીઆરમા અધ્યાયમાં વૃંદાવન જવાને પ્રસંગે ‘ગોપવૃદ્ધઃ’ ઈત્યાદિ દસમા શ્લોકથી માંડીને તે ‘રામમાધવયોર્નૃપ’ એ પચીસમા શ્લોક સુધીના સોળ શ્લોકોની સોળ સંખ્યા સૂચવે છે કે સોળ કલાથી પૂર્ણ ભગવાન્ શ્રીકૃષ્ણ વૃંદાવનના ચંદ્ર તરીકે શોભી રહ્યા છે. અહિં ફલપ્રકરણમાં જે કહેવામાં આવ્યું છે કે સોળ ગોપીજનોનું એક મંડલ થાય છે તે ઉપર જણાવેલી વૃંદાવનચંદ્રની ભાવનાને વધારે સ્પષ્ટ કરે છે.)

પોતાની સામે ઉભેલાં બીજાં ગોપીજનોના ગણે વળગેલા ભગવાનનાં દર્શન પણ ભગવાનની ઈચ્છાથી ગોપીજનોને થયાં નહિ. અમુક પ્રયોજનને માટે ભગવાન્ પોતાનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે છે. આ પ્રયોજન અડધી-સંખ્યાથી-આઠથી-જ સિદ્ધ થઈ જાય છે એટલે સોળ ગોપીજનોમાં જેટલી કૃષ્ણની સોળ સંખ્યાની અહિં જરૂર રહેતી નથી. ‘યાવતીર્ગોપયોષિતઃ’ (ભાગ. ૧૦|૩૦|૨૦), જેટલાં ગોપીજનો તેટલાં ભગવાનનાં સ્વરૂપ, એ પ્રમાણે આગળ ગોપીજનોના જેટલી જ ભગવાનના સ્વરૂપોની સંખ્યા શુકદેવજી કહેશે.

(ભલે, અહિં ભગવાનના સ્વરૂપની આઠ સંખ્યા હો; પરંતુ ભક્તોને જે પ્રત્યક્ષ થાય છે તે પ્રમાણ હોવાથી અને બિલ્વમંગલને ગોપીજનોના જેટલાં જ ભગવાનનાં સ્વરૂપોનું દર્શન થવાથી સોળ ગોપીજનોના મંડલમાં ભગવાનનાં આઠ જ સ્વરૂપ હોય છે એમ નિશ્ચયથી શી રીતે કહી શકાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે કે) કેટલાક જે કહે છે કે ‘અડ્ડનામડ્ડનામન્તરે માધવઃ’- દરેક ગોપીજનની પછી કૃષ્ણ છે-તેમાં પણ વિસર્ગવાળો પાઠ જાણવો. (કારણ કે સમય જતાં મૂલ પાઠમાં ફેરફાર થએલો લાગે છે, અથાત્ ‘અડ્ડના અડ્ડના અન્તરે

માધવ:’ એમ ખરો પાઠ હોવો જોઈએ. અહિં ‘અઙ્ગના:’ એ જે બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે મહત્વ દર્શાવવાને માટે છે, ખરી રીતે તે દ્વિવચનના અર્થમાં છે, એટલે તેનો અર્થ એ થાય કે બબ્બે ગોપીજનોની વચમાં કૃષ્ણ છે.) દ્વિવચનને બદલે બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે, અથવા તો શ્લોકનો પ્રચલિત પાઠ પ્રમાણ તરીકે સ્વીકારીએ તો ગોપીજનોનું અને ભગવાનનું તે રાસમંડલ જુદું જ છે, ભાગવતમાં વર્ણવવામાં આવ્યું છે તે નહિ, કારણ કે વચમાં વેણુનાદનું વર્ણન છે. અહિં તો-ભગવાનના રાસમંડલમાં તો-રસને માટે નૃત્ય છે એટલે વેણુનાદનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું નથી. ગાનને માટે વેણુનાદની જો જરૂર પડે તો પણ દેવો જ ગાન સિદ્ધ કરશે, એટલે વેણુનાદની આવશ્યકતા રહેતી નથી.

(આ અધ્યાયના વીસમા શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવે છે કે જેટલાં ગોપીજનો તેટલાં જ ભગવાનનાં સ્વરૂપનો, અર્થાત્ ગોપીજનોના જેટલી જ ભગવાનનાં સ્વરૂપોની સંખ્યા છે. વળી સાતમા શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવે છે કે ‘જેમ સુવર્ણના મણિઓની વચમાં મોટો મરકતમણિ શોભે છે તેમ ગોપીજનોની વચમાં ભગવાન્ શોભતા હતા’. અર્થાત્ બહુ ગોપીઓની વચમાં ભગવાનનું એક જ સ્વરૂપ નૃત્ય કરે છે. પહેલાં જે કહેવામાં આવ્યું કે બબ્બે ગોપીજનો વચ્ચે ભગવાનનું એક સ્વરૂપ છે તેનાથી ઉપર જણાવેલી બાબત વિરુદ્ધ છે; તો તે વિરોધ કેવી રીતે દૂર થઈ શકે? આનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ‘મધ્યે મણીનામ્ હૈમાનામ્’ એ સાતમા શ્લોકમાં જે વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે તે દર્શનને માટે આપવામાં આવેલું છે. દેવોએ અને ગંધર્વોએ ગોપીજનોને તે પ્રકારે જ જોયાં એટલે તેમાં કાંઈ અઘટિત નથી. (જેમ અહિં પણ ભગવદ્દિચ્છાને લીધે સામે ઉભેલાં ગોપીજનને કંઈ વળગેલા ભગવાનનાં દર્શન થતાં નથી, તેમ ‘યાવતીર્ગોપયોષિત:’ એ વીસમા શ્લોકમાં દેવોને ગોપીજનોના જેટલાં જ ભગવાનનાં સ્વરૂપોનાં દર્શન થયાં; તેથી કરીને આ શ્લોકમાં વર્ણવેલા રાસક્રીડામાં પણ તેટલી જ-ગોપીજનોના જેટલી જ-ભગવાનના સ્વરૂપોની સંખ્યા જોઈએ એમ સિદ્ધ થતું નથી. પહેલાં જે પ્રકારે ભગવાને ગોપીજનોના મંડલમાં રૂપ ધારણ કરીને પ્રવેશ કર્યો તે પ્રમાણે શુકદેવજીએ આ શ્લોકમાં ભગવાનનાં બહુ સ્વરૂપોનું વર્ણન કર્યું. ‘મધ્યે મણીનામ્’ એ સાતમા શ્લોકમાં જે પ્રકારે દેવોને ભગવાનનાં અને ગોપીજનોનાં દર્શન થયાં-બહુ ગોપીજનોની વચમાં એક જ ભગવાન્ નૃત્ય કરે છે એ પ્રમાણે દર્શન થયાં-તે જ પ્રકારે શુકદેવજીએ તે શ્લોકમાં વર્ણન કર્યું છે: એટલે આ શ્લોક અને બીજા શ્લોકો વચ્ચે કોઈ જાતનો વિરોધ રહેતો નથી. સાતમા શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે

જેમ સુવર્ણના મણિઓની વચમાં મોટો મરકતમણિ શોભે છે તેમ ગોપીજનોની વચમાં ભગવાન્ શોભે છે. દેવોએ તો ચારે બાજુ ઉભાં રહેલાં ગોપીજનોનાં જ દર્શન કર્યા, પણ તેમની કોઈ પણ અંતરંગ લીલાનાં દર્શન કર્યા નથી એમ સિદ્ધ થાય છે.)

આ પ્રમાણે રસ પ્રકટ કરવાને માટે સર્વ સામગ્રી વર્ણવવામાં આવી. આ બધી સામગ્રી તૈયાર થતાં તે અલૌકિક રસ બધાંયને (પોતાના અધિકાર પ્રમાણે) પ્રકટ થશે તેથી અલૌકિક જ્ઞાનવાળા દેવો વિગેરે સર્વે ભગવાનનાં દર્શન કરવાને માટે આવ્યા એમ શુકદેવજી ‘નભસ્તાવત્’ એ શબ્દોમાં કહે છે. તે સમયે આકાશ સેંકડો વિમાનોથી ભરાઈ ગયું. મંડપમાં નૃત્ય કરવામાં આવે તો તે ખરેખર રસ ઉત્પન્ન કરે છે. જો આકાશ વિમાનોથી ભરાઈ ગએલું ન હોત તો ઉપર વિચિત્રતા જણાત નહિ. તેથી વિચિત્રતા સિદ્ધ કરવાને માટે પણ (દેવોએ આવીને) આકાશને સેંકડો વિમાનોથી ભરી દીધું. જેમ રસ ઉત્પન્ન કરવાને માટે સ્ત્રીઓ અને પુરુષો અનેક પ્રકારના બંધ સાથે ચિત્રમાં જોડાએલાં ચીતરવામાં આવે છે તેમ રાસક્રીડામાં પણ રસ પ્રકટ કરવાને માટે ભગવાને દેવોને લગભગ ચિત્રના જેવા બનાવી દીધા. આ જ કારણથી શુકદેવજી આગળ કહેશે કે ‘ઔત્સુક્યાપહતાત્મનામ્’. (અરે! ઉત્સુકતાથી તો ભગવાનનાં દર્શન થાય છે, તો પછી તેનાથી-ઉત્સુકતાથી-દેવોના આત્મા શી રીતે હરાઈ ગયા? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ભગવાન્ પોતાની લીલાને માટે સર્વને તે તે પ્રકારે પ્રેરે છે, એટલે દેવોની ઉત્સુકતાથી અન્યથા સિદ્ધિ નથી, અર્થાત્ દેવોમાં ઉત્સુકતા હતી છતાં પણ તેઓ દોડીને ભગવાનની પાસે આવી શક્યા નહિ. દેવો તો ગોપીજનોના રસનું ગ્રહણ કરવાને માટે આવ્યા છે, પણ ભગવાનની ઈચ્છા તો તેમને ચિત્ર જેવા બનાવી દેવાની છે.

હવે શુકદેવજી ‘દિવૌકસામ્’ એ પદ વડે વિમાનોમાં બઠેલા મિથુનરસના સંબંધવાળા દેવોનું વર્ણન કરે છે. દેવો ‘દિવૌકસ્’ કહેવાય છે, કારણ કે સ્વર્ગમાં જ તેમનું સ્થાન છે. દેવો પોતાની સ્ત્રીઓ સાથે આવ્યા છે એમ કહેવાનું તાત્પર્ય એ કે દેવોને બીજો કોઈ ભાવ નથી. ‘સદારાણામ્’ એ પદમાં સ્ત્રીઓ ગૌણ બને છે; તેનું તાત્પર્ય એ કે દેવોને ગોપીજનોનો ભાવ છે. અર્થાત્ સ્વર્ગમાં રહેનારા રસ જાણનારા અને રસને યોગ્ય હોય છે.

અરે! ઈશ્વરની લીલાનાં દર્શન કરવાં જોઈએ નહિ, તો પછી ભગવલ્લીલાનાં દર્શનને માટે દેવો કેમ આવ્યા? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ઔત્સુક્યાપહતાત્મનામ્’. ઉત્સુકતાથી-વિચાર વિના લીલાથી ખયાએલા મનથી-હરાઈ ગયો છે આત્મા-સ્વરૂપ અથવા બુદ્ધિ-જેમનો એવા દેવો.

(ઉત્સુકતાથી દેવોનું મન વિચાર વિનાનું બન્યું હતું અને લીલાથી ખેંચાએલું હતું, એટલે તેમનો આત્મા-સ્વરૂપ અથવા બુદ્ધિ-હરાઈ ગયો.) તેથી દેવો પોતાના ધર્મથી જ ભગવલ્લીલાનાં દર્શન કરવા આવ્યા છે, તેમણે કાંઈ ભગવદ્ધર્મનો વિચાર કર્યો નથી. ૪.

પછીથી નૃત્યના આરંભમાં જે થવાનું તે થયું એમ ‘તતઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે :

તતો દુન્દુભયો નેદુઃ નિપેતુઃ પુષ્પવૃષ્ટયઃ ।

જગુર્ગન્ધર્વપતયઃ સસ્ત્રીકાસ્તદ્ યશોઽમલમ્ ॥૫૧॥

પછી દુન્દુભિઓનો નાદ થયો, પુષ્ટિવૃષ્ટિઓ થઈ, સ્ત્રીઓની સાથે ગંધર્વપતિઓએ ભગવાનના નિર્મલ યશનું ગાન કર્યું.

શરૂઆતમાં દુન્દુભિ વાગ્યાં, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ‘દુન્દુભિમાં જે વાણી છે તે શ્રેષ્ઠ છે’. પછી પહેલાં મંગલને માટે પુષ્પની વૃષ્ટિ થઈ. પુષ્પાંજલિનો અર્થ તો જાણીતો છે; અર્થાત્ પ્રકટ થતા રસનું અથવા તેના અધિષ્ઠાતા દેવનું પૂજન કરવામાં આવે છે એ ભાવથી પુષ્પવૃષ્ટિ થઈ. અનેક પ્રકારનાં પુષ્પોની જુદી જુદી વૃષ્ટિઓ થઈ, એટલે શ્લોકમાં ‘વૃષ્ટયઃ’ એ પ્રમાણે બહુવચન વાપરવામાં આવેલું છે. પછીથી બધાંએ ગાન કરવા માંડ્યું એમ ‘જગુર્ગન્ધર્વપતયઃ’ એ શબ્દોમાં શુકદેવજી કહે છે. ભગવાન શ્રવણ કરશે એ હેતુથી ઉત્તમ ગંધર્વોએ જ ગાન કર્યું. વિશ્વાવસુ વિગેરે ગંધર્વપતિઓ છે. તે જ ઉત્તમ ગંધર્વો ગાનના ખરેખરા અધિકારીઓ છે, એટલે જેમ નાયનારી સ્ત્રીને શિક્ષણ આપનારા પુરુષો તે સ્ત્રીનો નાય જુએ તેમાં દોષ નથી, તેમ આ અધિકારી ઉત્તમ ગંધર્વો પણ ભગવાનની લીલાનાં દર્શન કરે તેમાં દોષ નથી. આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો ભગવાનના હસ્તમાં રહેલા ઈન્દ્ર વિગેરે દેવોને પણ દોષ પ્રાપ્ત થાય. (જેમ વિશ્વાવસુ વિગેરે ઉત્તમ ગંધર્વો નટોની માફક ભગવાનની બધીય લીલાઓમાં ઉપયોગી છે અને સાધારણ નટોથી ભિન્ન છે, તેમ ભગવાનનું એકાંતમાં બેસવું વિગેરે બધી બાબતોમાં ઉપયોગી જે ક્રિયાશક્તિ તે ક્રિયાશક્તિવાળા ઈન્દ્ર વિગેરે પણ દિશાઓના પાલકોથી-ઈન્દ્ર વિગેરે દેવોથી-ભિન્ન છે. તે તો ભગવાનના ભુજદંડ ઉપર જ આધાર રાખે છે. ભગવાનના ભુજદંડ રસરૂપ હોવાથી જેમનામાં રસાત્મક ક્રિયાશક્તિ મુખ્ય છે તેઓ જ ત્યાં રહે તે યોગ્ય છે.) ‘અર્થ અને દ્રવ્યના વિરોધમાં અર્થ બલવાન છે’ (જૈમિનિસૂત્ર ૬।૩।૩૯) એ મીમાંસાના ન્યાયથી પણ સિદ્ધ થાય છે કે ગંધર્વો ભગવલ્લીલાનાં દર્શન કરે છે તેમાં દોષ નથી. છતાં પણ તેમને કદાચિત્ (મર્યાદામાર્ગ વિગેરેની રીત અનુસરીને) બીજા પ્રકારની બુદ્ધિ થાય; તેથી



શુક્રદેવજી ‘સસ્ત્રીકાઃ’ એ પ્રમાણે વિશેષણ મૂકે છે. (આ વિશેષણ મૂકવાનું રહસ્ય આ પ્રમાણે છે. ગંધર્વો પોતે જેમ ભગવલ્લીલાનાં દર્શન કરે છે તેમ પોતાની સ્ત્રીઓ પણ ભગવાનનાં દર્શન ભલે કરે, અને તેમનો ઉપયોગ ભગવલ્લીલામાં ભલે થાવ. આ પ્રમાણેનો ભાવ ગંધર્વોને સ્ફુરે છે, તેથી તેઓ ભક્તિમાર્ગીય છે, એટલે મર્યાદામાર્ગને અનુસરીને તેમની બુદ્ધિ ફરશે નહિ.)

(ગંધર્વો ભગવલ્લીલાનાં જ્યારે દર્શન કરે ત્યારે કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ ઉત્પન્ન થતો નથી એમ સિદ્ધ કરવામાં આવ્યું; છતાં પણ પોતાની સ્ત્રીઓ વિષે ગંધર્વોનો કામ ઉત્પન્ન થશે, તો) તે વિષયસંબંધી દોષ દૂર કરવાને માટે શુક્રદેવજી કહે છે કે ‘અમલં તદ્યશઃ’, તેમણે તો ભગવાનના અમલ યશનું ગાન કર્યું. ભગવાનનો યશ મલને દૂર કરનારો છે. તેથી ગંધર્વની સ્ત્રીઓને અને ગંધર્વોને તે સમયે ઉપયોગી પદાર્થથી બીજો ભાવ ઉત્પન્ન થતો નથી. (ગંધર્વ સ્ત્રીઓને પોતાના પતિ વિષે કામભાવ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમ જ ગંધર્વોને પણ ભગવાનના પરિરકર વિષે તથા પોતાની સ્ત્રીઓ વિષે કામભાવ ઉત્પન્ન થતો નથી.) પ.

આ પ્રમાણે બાહ્ય ગીત, વાદ્ય વિગેરેનું વર્ણન કરીને હવે નૃત્યમાં રસને ઉપયોગી વાદિત્રોનું ‘વલયાનામ્’ એ શ્લોકમાં શુક્રદેવજી વર્ણન કરે છે :

વલયાનાં નૂપુરાણાં કિંકિણીનાં ચ યોષિતામ્ ।

સપ્રિયાણામ્ અભૂત્ શબ્દઃ તુમુલો રાસમણ્ડલે ॥૬॥

રાસમંડલમાં શ્રીકૃષ્ણ સહિત ગોપીજનોના નૃત્યથી કંકણોનો, નૂપુરોનો, અને કિંકિણીઓનો ભારે શબ્દ થઈ રહ્યો. ૬.

ત્રણ સ્થાનમાં વાદિત્રોની ખરેખર જરૂર હોય છે; નીચલા સ્થાનમાં, જાણે ભૂમિ ઉપર; મધ્યમાં અને ઉપરના ભાગમાં. તે જ પ્રમાણે તાલના ભેદો હોય છે. તેથી અહિં પણ ઉપરના ભાગમાં કંકણોનો શબ્દ થયો; નીચે નૂપુરોનો શબ્દ થયો, અને મધ્યમાં કિંકિણીઓનો શબ્દ થયો. ગોપીજનો પરસ્પર હાથ ઝાલીને ઉભાં હતાં અને તેમાં વચમાં વચમાં બે હાથ મેળવતાં હતાં, એટલે કંકણોનો શબ્દ થતો હતો. અથવા તો આગળ ‘પાદન્યાસૈઃ’ એ આઠમા શ્લોકમાં શુક્રદેવજી શબ્દ ઉત્પન્ન કરવાને માટે પ્રકારનું વર્ણન કરશે. ‘સપ્રિયાણામ્’ એટલે પ્રિયની સાથે, કૃષ્ણની સાથે. તેથી જ બધાં ગોપીજનોને ભગવાનની સાથે સંબંધ થાય તેટલા માટે સર્વ પ્રકારનું લાસ્ય-કોમલ નૃત્ય-સિદ્ધ થયું. (કુલીન સ્ત્રીઓને નૃત્યનો અભ્યાસ સંભવિત હોતો નથી; તેથી ગોપીજનોને જે આ પ્રકારનું નૃત્યનું જ્ઞાન થયું તે ભગવાનના પ્રતાપથી જ થયું એમ જણાય છે. આ જ તાત્પર્યથી શ્લોકમાં ‘સપ્રિયાણામ્’ એ વિશેષણ મૂકવામાં

આવ્યું છે.) શ્લોકમાં જે ‘ચ’ મૂકવામાં આવેલો છે તે બીજા પણ કૃજિત શબ્દોનું અને મુખના શબ્દોનું વર્ણન કરે છે. બધાય પ્રકારના શબ્દો એકઠા થયા અને પરિણામે અવાજ ઘણો મોટો થયો, કે જેથી દૂર ઉભા રહેલા માણસો વચમાંના શબ્દો ગ્રહણ કરી શકે નહિ.

આ પ્રમાણે થવાથી શું થાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘રાસમાણ્ડલે’, રસોના સમૂહરૂપ રાસના મંડલમાં. જેમ શૂદ્રો વેદનું શ્રવણ કરવાને માટે અધિકારી નથી, અને છતાં જો તે વેદનું શ્રવણ કરે તો તે વેદનું અધ્યયન કરનારની અને મંત્રની શક્તિ નાશ પામે છે, અને શૂદ્રને પાપ લાગે છે, તેમ આ ભક્તોથી અન્ય પુરુષોનો આ શબ્દ શ્રવણ કરવામાં પણ અધિકાર નથી, અને આ રસ અલૌકિક હોવાથી, જો અનધિકારી પુરુષ તેનું શ્રવણ કરે તો મંડલમાં સર્વનો રસ ચાલ્યો જાય. જો અનધિકારી શ્રવણ કરે તો તે આ શબ્દને શોધવા તૈયાર થાય, અને તેમ કરવામાં તેમને જ અનિષ્ટ થાય; અને આ અનિષ્ટ જ પાપરૂપ છે. ૬.

આ પ્રમાણે નૃત્યની મધ્યમાં દાખલ થએલા ભગવાન્ ગૌણ હોવાથી કદાચિત્ ન જણાય એમ શંકા થતાં શુકદેવજી ‘તત્ર’ એ શ્લોકમાં કહે છે કે ભગવાનની શોભા તે વખતે બધાને જણાઈ:

તત્રાતિશુશુભે તાભિર્ભગવાન્ દેવકીસુતઃ ।

મધ્યે મણીનાં હૈમાનાં મહામારકતો યથા ॥૭॥

સુવર્ણના મણિઓની વચમાં જેમ મોટો મરકતમણિ શોભે છે તેમ ભગવાન્ દેવકીપુત્ર શ્રીગોપીજનોની વચમાં અતિશય શોભા પામ્યા. ૭.

ભગવાન્ સ્વભાવથી શોભતા હતા છતાં પણ તે વખતે વધારે શોભવા લાગ્યા. આ જ વાત ‘શક્તિઓ સાથે ભગવાન્ અધિક શોભે છે’ એ શબ્દોમાં કહેવામાં આવેલી છે. ભગવાન્ કદાચિત્ પોતાની મેળે જ શોભા પ્રકટ કરે એ શંકાને દૂર કરવાને માટે શુકદેવજીએ કહ્યું કે ‘તાભિ:’.

અરે! ભગવાન્ તો સ્વાભાવિક રીતે જ શોભાવાળા છે, તો પછી ગોપીજનોને લીધે તે વધારે શોભા પામ્યા એમ કેવી રીતે કહી શકાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ભગવાન્’. પ્રભુ જેમ છ ગુણોને લીધે ભગવાન્ કહેવાય છે તેમ ગોપીજનોને લીધે તેમની શોભા વધે છે. અરે! ઐશ્વર્ય, વીર્ય વિગેરે છ ગુણો તો સર્વોત્તમ છે, જ્યારે આ ગોપીજનો સર્વોત્તમ નથી—આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘દેવકીસુતઃ’. જેમ ભક્તિને લીધે ભગવાન્ દેવકીના પણ પુત્ર થયા. ભગવાન્ તો સ્ત્રીઓના જ ઉપર ઉપકાર કરવાને માટે પ્રકટ થયા છે, એટલે

તેમણે ગોપીજનોને પણ પોતાનું જ સામર્થ્ય આપીને શોભા પ્રાપ્ત કરી.

જે કુદરતી રીતે શોભાયમાન છે તેની શોભા કૃત્રિમ પદાર્થોથી થશે નહિ-આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી દષ્ટાંત આપે છે કે ‘મધ્યે મણીનામ્’. ગરુડોદ્ગારી મોટો મરકતમણિ સ્વાભાવિક શોભાયમાન હોય છે; સુવર્ણના મણિઓ કૃત્રિમ-બનાવટી-છે; છતાં પણ સુવર્ણના મણિઓ જ્યારે ચારે બાજુ ગોઠવવામાં આવે છે ત્યારે તેઓ સ્વાભાવિક મણિને પણ વધારે શોભાવે છે. ૭.

આ પ્રમાણે પૂર્વપીઠિકાનું વર્ણન કરીને શુકદેવજી ‘પાદન્યાસૈઃ’ એ શ્લોકમાં મુખ્ય નૃત્યનું વર્ણન કરે છે. (ગયા શ્લોકમાં ભગવાનને ‘દેવકીસુત’ કહેવામાં આવ્યા છે, તેથી તેમણે ગોપીજનોને પોતાનું સામર્થ્ય આપીને તેમની પાસેથી શોભા મેળવી એમ સિદ્ધ થાય છે. તેથી નૃત્ય સમયે પાદન્યાસ વિગેરે જે કરવામાં આવે છે તે જ ભગવાનની શોભા વધારનારું તત્ત્વ છે એવો આ શ્લોકનો અર્થ થાય છે.)

પાદન્યાસૈર્ભુજ-વિધુતિભિઃ સસ્મિતૈર્ભૂવિલાસૈઃ

ભજ્યન્મધ્યૈશ્ચલ-કુચ-પટૈઃ કુણ્ડલૈર્ગણ્ડ-લોલૈઃ ।

સ્વિદ્યન્ મુખ્યઃ કબર-રશનાડગ્રન્થયઃ કૃષ્ણવધ્વો

ગાયન્ત્યસ્તં તડિત ઈવ તા મેઘચક્રે વિરેજુઃ ॥૮॥

અનેક પ્રકારે ચરણોને મૂકવાથી, હાથ હલાવવાથી, મંદહાસ્યવાળાં કટાક્ષો અને ભ્રમરના વિલાસોથી, વાંકી કટિઓથી, કંપતા સ્તનો ઉપરનાં વસ્ત્રોથી, ગાલ ઉપર હાલતાં કુંડલોથી, શ્રીકૃષ્ણનો ઉપભોગ કરનાર ગોપીજનો-જેમનાં મુખ પરસેવાવાળાં છે અને જેમના અંબોડાની અને કટિના કંદોરાની ગ્રંથિઓ શિથિલ થઈ ગઈ છે એવાં ગોપીજનો-પ્રભુનાં ગુણગાન કરવા લાગ્યાં અને વાદળોના સમૂહમાં જેમ વિજળી શોભે છે તેમ શોભી રહ્યાં. ૮.

પાદન્યાસ એટલે બધાય પ્રકારે ચરણો મૂકવાની અને ફેરવવાની ક્રિયા. (ચારી અને કરણ એ નાટ્યશાસ્ત્રના પારિભાષિક શબ્દો છે. એક પગને ફેરવવામાં આવે તો તે ચારી કહેવાય છે, અને બે પગને ફેરવવામાં આવે તો તે કરણ કહેવાય છે.) હાથોને હલાવવાથી (નાટ્યશાસ્ત્રમાં જણાવેલા) હાથના સર્વ ભેદો સિદ્ધ થાય છે; અર્થાત્ એક અવયવની સાથે બાકીના અવયવો તે રીતે જોડાએલા છે-પોતાનું યોગ્ય કાર્ય કરી રહ્યા છે-એમ જાણવું. (ગોપીજનો જ્યારે અનેક પ્રકારે પોતાનાં ચરણો નૃત્ય વખતે જે પ્રકારે ફેરવે છે ત્યારે સંગીતશાસ્ત્રમાં જણાવેલા પ્રકારે હસ્ત પણ હાલે છે; આ જ વખતે નેત્રોનો વ્યાપાર હોવો જોઈએ તેવો જ વ્યાપાર-કટાક્ષ અને ભમરોને ઊંચે નીચે ફેરવવાનો વ્યાપાર-પણ થાય છે, કારણ કે ભગવાનનો જે

પરિકર છે તે પરમ અલૌકિક છે.) મંદહાસ્યવાળાં બધાંય કટાક્ષો અને ભમરોના ભેદોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે જ્યારે અનેક પ્રકારનો રસ હૃદયમાં પ્રવેશ કરે છે ત્યારે આ બધી ક્રિયાઓ પોતાની મેળે જ થાય છે. (નૃત્યમાં ખરેખર સંયોગચુંગારનો અભિનય કરવામાં આવે છે, પણ તે સંયોગની સ્ફૂર્તિ વિના સંભવતો નથી; તેથી તે સમયે યાદ આવતો જે પ્રકારનો સંયોગરસ હૃદયમાં પ્રવેશ પામે છે તે જ પ્રકારનો વ્યાપાર થાય છે. એટલે ગોપીજનોના હૃદયમાં ભગવાનનો સંયોગ દાખલ થએલો હતો. આ ભગવત્સંયોગ સર્વગુણવાળો હતો, તેથી ગોપીજનોનાં બધાંય અવયવો પોતપોતાનું યોગ્ય કામ કરે છે.)

ગોપીજનોના શરીરનો મધ્યભાગ-કટિ ભંગવાળો છે, ઉપરના ભાગમાં ચારે બાજુ ફરતો છે. રસને માટે મંડલમાં અભિન્નિવેશવાળાં ગોપીજનોનાં સર્વ અવયવો બહુ ભ્રમણ કરતાં હોવાથી રસ એક થાય છે. (અર્થાત્ ગોપીજનોનાં અવયવોમાં રહેલો રસ નૃત્ય સમયે ફરવાથી એક થાય છે. નૃત્યમાં બધાંય અવયવો ઘણાં હાલે ચાલે છે, અને તેથી એ બધાં સચ્ચિદાનંદરૂપ અવયવોમાં રહેલો આનંદ એક થાય છે.) અથવા તો ગોપીજનોના શરીરનો ઉપરનો ભાગ ચારે બાજુ ફરે છે અને બીજી બધી ક્રિયાઓ કરે છે તેથી જ હાલતાં સ્તનો ઉપરનાં વસ્ત્રો પણ હાલે છે. (પરિવર્તન વિગેરેથી જ અંદર રહેલા રસનો અનુભવ થાય છે, અવયવોમાં રહેલો રસ એક થાય છે એમ નહિ. આ તાત્પર્ય સૂચવવાને માટે જ સુબોધિનીજીમાં ‘પરિવર્તનાદિભિરેવ’ એમાં ‘એવ’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે.) આ પ્રમાણે બધાય પ્રકારના કંપનનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું.

“કુણ્ડલૈઃ ગાણ્ડલોલૈઃ” એ શબ્દો વડે બધાય પ્રકારના શિરોભેદોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. શિરોભેદનું-અનેક પ્રકારે માથાના હાલવાની ક્રિયાનું-વર્ણન કરવાને બદલે કુંડલો હાલે છે એમ જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે વિજળીની માફક શોભે છે એ બતાવવાને માટે છે. (ગોપીજનોનાં કુંડલોનો ભગવાનના ગાલ સાથે જ્યારે સંબંધ થાય છે ત્યારે શ્યામ અને ગૌર તેજ એક બીજાની સાથે મળે છે, એટલે વાદળોમાં જેમ વિજળી શોભે છે તેમ તે વખતે શોભા થાય છે.) ગોપીજનોનાં કુંડલો ભગવાનના ગાલને જ્યારે અડકે છે ત્યારે કુંડલોનો પોતાની સુંદરતાનો ગર્વ જતો રહે છે, કુંડલોની બધી શોભા ભગવાનના ગાલની શોભામાં જ જતી રહે છે, એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘ગાણ્ડલોલૈઃ’. (ભગવાનના ગાલને ગોપીજનોનાં કુંડલો અડકે છે કે તરત જ કુંડલો હાલવા માંડે છે, અને આમ થાય તે યોગ્ય છે, કારણ કે શ્રેષ્ઠ પદાર્થ આગળ હલકો પદાર્થ હંમેશા હાલવા માંડે છે.)

ભગવાનનાં ગાલમાં તો રસ કેવલ છે. (શુદ્ધ છે, અધર વિગેરેની માફક કામ વિગેરે ધર્મવાળો નથી. તેથી જ માતા પિતા વિગેરે પણ ગાલ ઉપર જ ચુંબન કરે છે. સ્નેહવાળાં અઘાંચ મનુષ્યો ગાલ ઉપર ચુંબન કરીને તેમાં રહેલા રસનું પાન કરે છે. તેથી ગાલમાં રહેલો રસ સર્વસાધારણ છે, અધરમાં રહેલા રસ જેવો નથી, કારણ કે અધરમાં રહેલો રસ તો ફક્ત શૃંગારરસવાળી સ્ત્રીઓ જ ભોગવી શકે છે, આ જ કારણથી ગોપીજનોને ભગવાનમાં બાલ્યભાવ છે છતાં પણ તે ભગવાનના ગાલ ઉપર ચુંબન કરે છે. અર્થાત્ ભગવાનના ગંડસ્થલમાં રહેલો રસ સર્વસાધારણ છે.) અધરમાં રહેલો પાન કરવા યોગ્ય રસ પણ ભગવાનના ગંડસ્થલમાંથી જ પીવાય છે. કુંડલો જે શોભી રહ્યાં છે તે પાન કરવા યોગ્ય રસને પ્રકટ કરવાને માટે જ. (ગોપીજનોનાં કુંડલો ભગવાનના ગંડસ્થલને અડકે છે અને ત્યાં જ અધરરસ પ્રકટ કરે છે. નૃત્યમાં કેવલ-શુદ્ધ-રસનું જ પાન કરવામાં આવે છે, કામ વિગેરે ધર્મોવાળા રસનું નહિ. ‘શુદ્ધ રસ નાટ્યમાં પ્રસિદ્ધ છે’ એમ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવેલું છે તેથી, અને નૃત્યમાં લોભ વિગેરેનું ગ્રહણ અસંભવિત હોવાથી, કેવલ રસને જ પ્રકટ કરવાને માટે ભગવાનનાં ગંડસ્થલમાં શોભી રહ્યાં છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. અર્થાત્ ભગવાનના ગાલોની શોભા જોઈને જ ગોપીજનો અને તેમનાં કુંડલો નાચે છે. જ્યારે કામલીલા હશે ત્યારે તો બધુંય વર્ણવવામાં આવશે જ.)

પછીથી અંદર રહેલો રસ પુષ્ટ થઈને પ્રકટ થાય છે એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘સ્વિઘ્નમુખ્ય:’. સ્વેદવાળાં-પરસેવાવાળાં-મુખ છે જેમનાં એવાં ગોપીજનો. અંબોડાની અને કટિના કંદોરાની ગાંઠો પણ શિથિલ થઈ ગઈ. સર્વ અવયવોમાં રહેલા અને એક થઈ ગએલા રસને-આનંદને-લીધે દેહ સૂક્ષ્મ થઈ ગયો; તેથી વાળની અંદર અને કટિમેખલામાં જે ગાંઠ હતી તે શિથિલ થઈ ગઈ. (ગોપીજનોનો દેહ સચ્ચિદાનંદરૂપ હોવાથી તેમના આખા દેહમાં આનંદ છે. આ આનંદ જ્યારે એક સ્થલમાં આવે છે ત્યારે બાકીનાં બીજાં સ્થલોમાં સૂકાટ થાય છે. તેથી શરીરની જાડાઈને અનુસરીને માથાના વાળમાં અને કંદોરામાં જે ગાંઠ બાંધવામાં આવેલી તે પાછળથી શરીરના સૂકાટને લીધે શિથિલ થઈ જાય છે.)

અરે! આ પ્રમાણે કરવાથી શ્રમ કેવી રીતે થાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કૃષ્ણવધ્વ:’. ગોપીજનો તો સદાનંદ ફલરૂપ પ્રભુનો ઉપભોગ કરનારાં છે, તેથી ઉપભોગરૂપી ક્રિયામાં તેમને શ્રમ થાય જ. (ગોપીજનો લૌકિક માણસોની માફક કેવલ રસનો જ અનુભવ કરતાં નથી, પરંતુ મૂર્તિમંત આનંદનો ક્રિયારૂપ ઉપભોગ કરે છે. ઉપભોગ કરવાનો ધર્મ પુરુષોનો છે, પણ તે ધર્મ રસની

અધિકતા થતાં ગોપીજનોમાં આવ્યો; એટલે ઉપભોગ કરવામાં ગોપીજનોને શ્રમ થાય છે એમ જે કહેવામાં આવ્યું તે યોગ્ય છે.) ગોપીજનો આવા પ્રકારનાં હતાં છતાં પણ તેમણે અંતઃકરણમાં સંતોષ થવાથી ગાન કરવા મંડી પડ્યાં. આ પ્રમાણે શરીર વિગેરેના શ્રમથી પણ ગોપીજનો વિરાજ્યાં, અતિ શોભાવાળાં થયાં.

અરે! લોકોની શોભા તો બીજા માણસો તેમને જુએ ત્યારે જણાય; તો પછી આ બધાં ગોપીજનોને બધાંએ-ગોપીજનોએ પરસ્પર તથા ભાવુક લોકોએ-કેવી રીતે જોયાં? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તડિત ઈવ તા:’. ખરેખર! વિજળી લાંબા કાલ સુધી જોઈ શકાતી નથી, પરંતુ વાદળોના સમૂહમાં શોભાજ અર્પે છે. આ પ્રમાણેજ કૃષ્ણના સમૂહમાં ગોપીજનો ભગવાનથી વીંટળાએલાં હતાં. ગોપીજનો આજુબાજુ કદાચિત્ પ્રકટ થતાં કેટલેક અંશે તેમનાં દર્શન થતાં. તેથી તેમની શોભા દોષવાળી નથી, પરંતુ વિશિષ્ટ પ્રકારની જ થઈ એમ જાણવું. ૮.

(ગયા શ્લોકમાં ‘ગાયન્ત્ય:’ એ પદ વડે જણાય છે કે ત્યાં ગાન ગૌણ હતું. આ શ્લોકમાં ગાન અને નૃત્ય એ બે સમાન છે.) ગાઠ નૃત્યનું વર્ણન કરીને હવે ‘ઉચ્ચૈર્જગુ:’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી મધ્ય નૃત્યનું વર્ણન કરે છે:

ઉચ્ચૈર્જગુર્નૃત્યમાના રક્તકણ્ઠયો રતિપ્રિયા: ।

કૃષ્ણાભિમર્શમુદિતા યદ્ગીતેનેદમ્ આવૃતમ્ ॥૯॥

લોકોને આનંદ આપે એવા કંઠવાળાં, રતિ જ જેમને પ્રિય છે એવાં, શ્રીકૃષ્ણના સ્પર્શથી આનંદ પામનારાં ગોપીજનો નૃત્ય કરવા લાગ્યાં અને ઊંચેથી ગાન કરવા લાગ્યાં. ગોપીજનોના ગાનથી આ જગત્ વ્યાપ્ત થઈ ગયું. ૯.

ગોપીજનો નૃત્ય કરતાં કરતાં જ ઊંચેથી ગાન કરવા લાગ્યાં; અથવા તો પહેલાં તેમણે ઊંચેથી ગાન કર્યું અને પછીથી નૃત્ય કરવા માંડ્યું. આ બંનેનું-નૃત્ય અને ગાન એ બેનું-કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘રક્તકણ્ઠયો રતિપ્રિયા:’. રક્ત-લોકોને આનંદ આપે એવા સ્વરવાળો-કંઠ છે જેમનો એવાં ગોપીજનો; રતિ જ પ્રિય છે જેમને એવાં ગોપીજનો. ગાનથી અને નૃત્યથી ગોપીજનો વ્યામોહ કરે છે એ વાત પ્રસિદ્ધ છે. (રતિ કરનાર ભગવાનને વ્યામોહ કરવાને માટે ગોપીજનો નૃત્ય કરે છે.)

અરે! ગોપીજનોએ પહેલાં જે નૃત્ય કર્યું હતું તેનાથી તો થાકી ગયાં હતાં, તો પછી ફરીથી આ પ્રમાણે નૃત્ય કેવી રીતે કર્યું? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કૃષ્ણાભિમર્શમુદિતા:’, ભગવાને ગોપીજનોના શરીરને લુછવું વિગેરે

વિશિષ્ટ ક્રિયાઓથી સ્પર્શ કર્યો તેથી ગોપીજનોને આનંદ થયો, તેમનું અંતઃકરણ આનંદથી ભરાઈ ગયું, ભગવાન્ બીજી નાયિકાએ કરેલો નાદ ભૂલી જાય તેટલા માટે ઘણો મોટો નાદ થયો એમ શુકદેવજી ‘યદ્ગીતેનેદમાવૃતમ્’ એ શબ્દોમાં કહે છે. (પોતાના યુગલમાં ઉભા રહેલા ભગવાન્ બીજી ગોપીજનોના યુગલમાં થતો નાદ ભૂલી જાય તેટલા માટે પહેલા યુગલનો નાદ ઘણો મોટો કરવામાં આવ્યો.) ગોપીજનોના ગીતથી આ જગત્ વ્યાપ્ત થઈ ગયું; અથવા તો જેને માટે નૃત્ય વિગેરે કરવામાં આવ્યું તે સફળ થયું એમ શુકદેવજી ‘યદ્ગીતેન’ એ શબ્દો વડે કહે છે. જગતમાં લોકો (ભગવાનની જેમના ઉપર અતિ કૃપા છે અને જે ભગવલ્લીલાનું પાન કરી રહ્યા છે એવા ગોવિંદદાસજી જેવા મહાનુભાવી ભક્તો) ભગવલ્લીલાને પ્રકટ કરતું જે ગાન કરે છે તેના રસથી આ જગત્ વ્યાપ્ત થઈ ગયું; અર્થાત્ જગતમાં રસ પ્રકટ કરવાને માટે જ આ ગાન કરવામાં આવ્યું. (આ જગતમાં જ જીવોનું આધિદૈવિક સ્વરૂપ પ્રકટ થાય અને તે ભગવદ્રસનો અનુભવ કરે એટલા માટે જ ગાન કરવામાં આવ્યું. આ ગાન ગોપીજનો ભગવાનની સાથે કરે છે એમ દસમા શ્લોક ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે.) ૯.

ગોપીજનોએ ઉત્પન્ન કરેલો નાદ અમૃતમય થાય એટલા માટે ભગવાને પણ નાદ કર્યો. આ નાદ મધુર કરવો જોઈએ, અને તેનાથી જગત્ ભરાઈ જવું જોઈએ. પણ તે તો ઘટતું નથી; એટલે જગતમાં નાદ વ્યાપી જાય તેટલા માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘કાચિત્’.

(નાદ બે પ્રકારનો છે, આહત અને અનાહત. તેમાં જે અનાહત નાદ છે તે પ્રાણનો ઘોષ છે, અને તે લોકોને આનંદ આપતો નથી. આહત નાદ લોકોને આનંદ આપે છે. આહત નાદ ઉત્પન્ન થવાનો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે: આત્માને જ્યારે બોલવાની ઈચ્છા થાય છે ત્યારે તે મનને પ્રેરે છે, મન દેહમાં રહેલા અગ્નિને પ્રેરે છે, અગ્નિ વાયુને પ્રેરે છે, બ્રહ્મગ્રંથિમાં રહેલો આ વાયુ ક્રમે ક્રમે ઊંચે આવે છે અને નાભિ, હૃદય, કંઠ, માથું અને મુખમાં ધ્વનિ પ્રકટ કરે છે. આ પાંચ સ્થાનમાં પ્રકટ થતો નાદ અનુક્રમે અતિસૂક્ષ્મ, સૂક્ષ્મ, પુષ્ટ, અપુષ્ટ અને કૃત્રિમ એ પાંચ નામે ઓળખાય છે. વ્યવહારમાં તો આ નાદ ત્રણ પ્રકારે ઓળખાય છે: હૃદયમાં મંદ્ર, કંઠમાં મધ્ય અને માથામાં તાર એ નામથી ઓળખાય છે અને ઉત્તરોત્તર બમણો હોય છે. તેના બાવીસ ભેદો છે, અને તે સંભળાય છે તેથી તેને શ્રુતિઓ કહેવામાં આવે છે. આ આસન્યાંશ લોકમાં પણ તુલ્ય છે તેથી તે અમૃતથી ભરેલો નથી; પરંતુ જ્યારે તે આસન્ય પ્રાણનો આત્મા, મૂલરૂપ પાપરહિત અને પૂર્ણ હોય છે ત્યારે તે અમૃતથી ભરેલો હોય છે.

હવે ભગવાનના નાદથી ગોપીજનોનું ગાન અમૃતમય કેવી રીતે થાય છે તે સમજાવવામાં આવે છે આ નાદ લૌકિક નથી, તેમ જ પહેલેથી સિદ્ધ થએલો નથી, પરંતુ અલૌકિક અને અપૂર્વ છે. ભગવાનનો ભાવ બીજામાંથી નીકળી જાય અને ફક્ત પોતાનામાં જ ઉત્પન્ન થાય એટલા માટે દરેક ગોપીજને નાદ કર્યો. ઉપર જણાવેલા ભાવને અનુકૂલ રીતે ગોપીજનોનો પણ ભગવાનમાં વિશિષ્ટ પ્રકારનો ભાવ ઉત્પન્ન થતાં તેઓ પણ આ નાદને લીધે ભગવદ્રસનો અનુભવ કરી શકે છે. ગોપીજનોનું ગાન ભગવાનના ગાનનું કારણ છે તેથી તે ગાન આખા જગતમાં વ્યાપી જાય છે. આ રીતે ગોપીજનોનું ગાન બે કાર્ય કરે છે; એક તો ભગવાનને ગાન કરવા પ્રેરે છે અને બીજું આખા જગતમાં તે વ્યાપી જાય છે. આ કારણથી જ ગોપીજનોનું ગાન અમૃતમય થયું એમ કહેવામાં આવે છે. ગોપીજનોનો ભગવાનને વિષે જ વિશિષ્ટ ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તે ભગવાનના નાદથી થાય છે, એટલે મૂલ આસન્યરૂપ નાદ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. કાર્ય ઉપરથી આમ છે એમ જાણવું. જો નાદ સામાન્ય હોત તો ભગવાન તે નાદને પોષત નહિ એ તર્કથી પણ એમ જાણવું. સ્વરના જુદા જુદા જાતિભેદો ઉંચા કરવામાં ગોપીજનો પ્રધાન છે અને ભગવાન ગોપીજનની સાથે રહીને નાદ કરે છે અને તેથી ગૌણ છે એમ જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે ગોપીજનનો નાદ ભગવાનના નાદ કરતાં વધારે મધુર છે. આમ જો ન હોય તો ભગવાનના તાર-ઉંચા-નાદથી ગોપીજનનો નાદ પાછળ પડી જાય અને તેથી રસાભાસ થાય અને આ બધું વ્યર્થ થઈ જાય. ગોપીજનનો અને ભગવાનનો નાદ સરખો હોય તો બંને જણ સ્વતંત્રતાથી નાદ કરે તેથી અને પરસ્પર અનુકૂલ ન થતાં તેઓ પરસ્પર રસમાં ઉપયોગી નહિ થાય એવો પ્રસંગ આવશે. પોતે નાદનું સ્વરૂપ જાણ્યા વિના ભગવાનનો નાદ સાંભળીને તેના જેવો જ જો ગોપીજન નાદ કરે તો પણ તે જ પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય. તેથી ભગવાને વિચારેલો ક્રમ પોતે જાણીને તે જ પ્રકારે સ્વરના જુદા જુદા જાતિભેદોને ગોપીજને ઉંચા કર્યા એમ જાણવું. ભગવાનમાં પૂર્ણ રસ પ્રકટ થયો છે એ પણ જણાવવાને માટે ભગવાન ગોપીજનને અધીન છે એ પણ જણાવવાને માટે આ પ્રમાણે-ગોપીજન પ્રધાન છે અને ભગવાન ગૌણ છે એમ-કહેવામાં આવ્યું છે, કારણ કે ગોપીજનોનું પ્રાધાન્ય એ આ રસનો સ્વભાવ છે. આ પ્રમાણે હોવાથી ઉચ્ચ નાદથી પૂરાતું જગત્ મધુર નાદથી પૂરશે નહિ. ભગવદ્ધર્મથી બીજા ધર્મો નિવૃત્ત થાય એટલે આનાથી જગત્ ખરેખર પૂરાશે. તેથી ભગવાનના આ સ્વરૂપનો રસ જાણનાર અને તેનું વર્ણન કરનાર આ ગોપીજનો જ છે એમ સિદ્ધ થાય છે. જેમ ‘તં ત્વૌપનિષદં પુરુષં પૃચ્છામિ’-હું ઉપનિષદ્માં



વણવિલા તે પુરુષ વિષે પૂછું છું-એ શ્રુતિને આધારે ઉપનિષદ્માં વણવિલું જ બ્રહ્મનું સ્વરૂપ હોય છે તેમ આ ગોપીજનોએ વણવિલા ધર્મવાણું જ પુરુષોત્તમનું સ્વરૂપ છે, બીજા ધર્મોવાણું નહિ, એમ સ્વીકારવામાં આવે છે. તેથી ગોપીજનોનું આ ગાન ઉપનિષદ્નાં વાક્યોના જેવું હોવાથી આ ગાનનું શ્રવણ કરવાથી ભગવાન્ પ્રાકૃત ધર્મથી રહિત છે એવું જ્ઞાન થાય છે, ભગવાનના સંબંધથી પોતાનામાં પણ ભગવદ્ધર્મ વિના બીજા ધર્મો રહેતા નથી, અને ભગવાનના નાદનું શ્રવણ થાય છે. ત્યાર પછી ભગવાનના આનંદનો અનુભવ થાય છે. આ બધું-ભગવદાનંદનો અનુભવ-પ્રભુએ જે ગાન કર્યું તેનું પરિણામ છે. આમ હોવાથી આનાથી જગત્ પૂરાશે જ એટલે સર્વ યોગ્ય છે.)

(ગોપીજનો જ રસનો અનુભવ કરી શકે તેટલા માટે ભગવાન્ જે નાદ કરે છે તેનાથી જગત્ પૂરાશે નહિ. વળી ભગવાન્ જે નાદ કરવાના છે તે મધુર જ છે, એટલે ગીત કરનારાઓ તેનું શ્રવણ કરી શકશે નહિ અને તેથી તેનું ગાન નહિ થવાથી પણ તેનાથી જગત્ પૂરી શકાશે નહિ. આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. ગીત કરનારાઓ ઉપનિષદ્ના શ્રવણની માફક ગોપીજનના નાદનું શ્રવણ કરે તો તેમના હૃદયમાં બીજા વિચારો આવે નહિ, પછીથી ભગવાનનો નાદ મધુર છે છતાં પણ તેઓ તેનું શ્રવણ કરે, પછીથી ભગવાનના આનંદનો અનુભવ કરે, પછીથી ભગવદાનંદને ગાનમાં વણવિ, અને તેનું શ્રવણ કરવાથી આપણા જેવાઓને પણ તે તે ફલ પ્રાપ્ત થાય. આ પ્રમાણે તે નાદથી આખું જગત્ પૂરાઈ જાય. અર્થાત્ ગોપીજનની કૃપાથી આ બધું થાય છે.)

કાચિત્ સમં મુકુન્દેન સ્વરજાતીરમિશ્રિતાઃ ।

ઉન્નિન્યે પૂજિતા તેન પ્રીયતા સાધુસાધ્વિતિ ।

તદેવ ધ્રુવમુન્નિન્યે તસ્યૈ માનં ચ બહ્વદાત્ ॥૧૦॥

કોઈ એક ગોપીજને પોતાના અમિશ્રિત સ્વરના જાતિભેદો મુકુંદના નાદ સાથે ઊંચા કર્યા; ભગવાન્ તેથી પ્રસન્ન થઈને ‘બહુ સારું, બહુ સારું’ એ પ્રમાણે તેમની પ્રશંસા કરી. બીજાં કોઈ ગોપીજને તે ઊંચો સ્વર ધ્રુવ નાદ સાથે યોજ્યો, અને ભગવાને તેમનું બહુ સન્માન કર્યું. ૧૦.

મુકુંદની સાથે કોઈ એક ગોપીજને પોતાના અમિશ્રિત-શુદ્ધ-સ્વરના ભેદો ઊંચા કર્યા. ‘કાચિત્’ એટલે કોઈક ગોપીજન જેમણે ભગવદ્ભાવ સારી રીતે પ્રાપ્ત કરેલો છે. (‘આ સ્વરજાતિને હું ઊંચી કરીશ’ એ પ્રમાણેનો ભગવાનનો આશય આ ગોપીજને જાણ્યો. નાદ સર્વસાધારણ છે, પણ ભગવાને વિચારેલો ક્રમ પ્રમાણે

સ્વરોને ઊંચા કરવાનું કામ આ જ ગોપીજન કરે છે એ પ્રમાણેનો ભાવ છે.)

ભગવાને નાદ કર્યો તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘મુકુન્દેન.’ મોક્ષ આપવાને માટે જ ભગવાને ઉપનિષદ્માં-ગોપીજનના ગાનમાં-પોતાનો નાદ પૂર્યો. (‘જ્યાં ખરેખર દ્વૈત જેવું હોય છે ત્યાં એક બીજાને જુએ છે, પણ જ્યાં આ બ્રહ્મવેત્તાને બધું જ આત્મરૂપ થઈ ગયું ત્યાં પછી કયા સાધનથી કોને જુએ, કોને જાણે’ ઈત્યાદિ શ્રુતિ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે મોક્ષમાં ફક્ત બ્રહ્મની જ સ્ફૂર્તિ થાય છે; તેથી જે રીતે ગોપીજનોને ફક્ત ભગવાનમાં જ આસક્તિ ઉત્પન્ન કરીને કેવલ શૃંગારરસરૂપ કૃષ્ણના અદ્વૈતની સ્ફૂર્તિ થાય તે રીતે ભગવાન ઉપાય કરવાની ઈચ્છા કરે છે. આ ઉપાય ભગવાનનો નાદ છે. નાદથી પરમ આનંદ ઉત્પન્ન થતાં બીજા બધા પદાર્થોનું વિસ્મરણ થાય છે એ વાત લોકમાં પ્રસિદ્ધ છે. આમ હોવાથી અહિં શૃંગારરસાત્મક કૃષ્ણના અદ્વૈતની સ્ફૂર્તિને મોક્ષ કહેવામાં આવ્યું છે. અર્થાત્ ‘મોક્ષ આપવાને માટે જ’ એનો અર્થ ‘શૃંગારરસાત્મક કૃષ્ણના અદ્વૈતની સ્ફૂર્તિ’ એ પ્રમાણે કરવાનો છે. ગોપીજનોના નાદને ઉપનિષદ્ કહેવામાં આવે છે, કારણ કે તે ભગવાન ના સ્વરૂપનો પ્રકાશ કરે છે. ગોપીજનોનો નાદ રસાત્મક પ્રભુના સ્વરૂપનું જ ગાન કરે છે. જે પ્રકારનું પ્રભુનું સ્વરૂપ આ ગોપીજનો ગાય છે તે જ પ્રકારનું પ્રભુનું સ્વરૂપ છે, કારણ કે પ્રભુનું સ્વરૂપ ફક્ત ગોપીજનો જ જાણી શકે છે.) ગોપીજનનો નાદ અને ભગવાનનો નાદ સરખા છે. મોક્ષરૂપી એક કાર્ય કરવાથી નાદમાં સરખાપણું છે. મોક્ષમાં બે કાર્ય હોય છે. પૂર્વ સંઘાતમાંથી નિવૃત્તિ કરાવવી અને બ્રહ્મની પ્રાપ્તિ કરાવવી. (પહેલું કાર્ય ગોપીજનના નાદથી થાય છે, જ્યારે બીજું કાર્ય ભગવાનના નાદથી થાય છે.) આ સિદ્ધ કરવાને માટે ભગવાન વિના બીજા બધા પદાર્થો દૂર કરવાને માટે રસાત્મક શ્રીકૃષ્ણના સ્વરૂપનું વર્ણન કરનારા ગોપીજનોના નાદરૂપી ઉપનિષદોનો ઉપયોગ છે. સ્વર એટલે સંગીતના ષડ્જ વિગેરે સાત સ્વરો. (ષડ્જ, ઋષભ, ગાંધાર, મધ્યમ, પંચમ, ધૈવત અને નિષાદ એ સાત સ્વરો છે. આ સ્વરો જુદા જુદા પ્રાણીઓના શબ્દોના જેવા હોય છે: દાખલા તરીકે મોરનો શબ્દ અને ષડ્જ સ્વર સરખા છે. તેથી મોર ષડ્જ સ્વર બોલે છે એમ કહેવાય છે. સ્વરની સાત શુદ્ધ જાતિઓ છે અને અગીઆર મિશ્ર જાતિઓ છે.) તેના જાતિભેદો હોય છે, જેમ કે મોર ષડ્જ સ્વર બોલે છે, તેમ જ બીજાંઓ પણ-પક્ષીઓ, મનુષ્યો-બોલે છે, બીજા જીવો પણ ષડ્જ સ્વર બોલે છે; તો પણ તેમની-સ્વરોની-પેટા જાતિઓ હોય છે. બ્રહ્માએ જે ક્રમથી જે રસ પ્રકટ થાય અને જે અભિપ્રાયથી જગતમાં સ્વરો ઉત્પન્ન કર્યા છે, તે સ્વરો તે જ પ્રમાણે જો વાપરવામાં આવે તો સ્વર અને તેની

જાતિઓ અમિશ્રિત-શુદ્ધ રહે. આ કામ ભગવાન્ કરી શકે છે, બીજો કોઈ કરી શકતું નથી. પણ જો ગોપીજનો આ સ્વરોને અને જાતિઓને ઊંચાં કરે તો ભગવાનને સંતોષ થાય એ યોગ્ય છે. આ વાત શુકદેવજી ‘પૂજિતા તેન’ એ શબ્દોમાં કહે છે. ‘તેન’ એટલે ભગવાનથી, અર્થાત્ તે ગોપીજન ભગવાનથી પૂજાઈ. ભગવાન્ પોતે બ્રહ્મ હોવાથી પોતાના વિચારેલા ક્રમ પ્રમાણે પોતે ગાન કરે તેમાં આશ્ચર્યનું કારણ નથી; પરંતુ બીજાઓ તો તેનું સ્વરૂપ પણ જાણતા નથી તો પછી તેનું ગાન ક્યાંથી કરશે (અથવા તો તેનું પૂજન ક્યાંથી કરશે?) આ કારણથી ભગવાને જ ગોપીજનોનું પૂજન કર્યું. વળી, ભગવાનનો ગોપીજનો વિષે ભાવ ઉત્પન્ન કરવાનું કાર્ય પણ સ્વરો ઊંચા કરવાથી થયું એ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘સાધુ સાધુ. પ્રીયતા’ એટલે પ્રીતિ કરતા ભગવાનથી (તે ગોપીજન પૂજાયાં). સ્વરૂપથી અને ફલથી ગોપીજન સારાં છે એ દર્શાવવાને માટે ‘સાધુ’ શબ્દનો બે વાર પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ભગવાનની ગોપીજન ઉપર પ્રીતિ થઈ તેનું કારણ એ કે તે તુલ્ય છે અને સર્વ પ્રકારે કાર્યને અનુકૂલ છે.

બીજી બાજુએ ઉભાં રહેલાં ગોપીજને તો પહેલાં ગોપીજને ઊંચે કરેલા સ્વર ભગવાન્ ફરીથી ગ્રહણ કરે તેટલામાં જ તે જ પ્રકારે ઊંચે કર્યો એમ શુકદેવજી ‘તદેવ’ એ શબ્દોમાં કહે છે. તે જ-ઊંચે કરેલો ધ્રુવ-જે પ્રકારે નિશ્ચલ થાય તે પ્રકારે આ બીજાં ગોપીજને ઊંચો કર્યો; અર્થાત્ તેમણે તે નાદને ધ્રુવનાદમાં યોજ્યો. ધ્રુવનાદ એ કારણનાદ છે અને તેથી તે સ્થાયી સ્વર કહેવાય છે. ‘જેમાં રાગ રહે છે તે સ્વર સ્થાયી કહેવાય છે’ એમ સંગીતશાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવેલું છે.

(સંગીતમાં ગાનક્રિયાને વર્ણ કહેવામાં આવે છે. તે ચાર પ્રકારનો છે: સ્થાયી, આરોહી, અવરોહી અને સંચારી. એક જ સ્વરનો રહી રહીને જે પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે સ્થાયી વર્ણ કહેવાય છે. સ્થાયી વર્ણનું આ પ્રમાણે બીજું લક્ષણ પણ છે; તો પછી આ ગાનમાં કયા પ્રકારનો સ્થાયી છે તે વિષે સંદેહ થાય છે. તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી બીજો પક્ષ દર્શાવતાં આજ્ઞા કરે છે કે) અથવા તો ભગવાનનો નાદ જ છે; અર્થાત્ ભગવાને તે જ પ્રમાણે ગાયું. (જે પ્રકારના નાદમાં ગોપીજનનો નાદ જોડવામાં આવે છે તે જ પ્રકારે ભગવાને ગાયું. સ્વરો ચાર પ્રકારના છે: વાદી, સંવાદી, વિવાદી અને અનુવાદી. તેમાં વાદી રાજા છે અને સંવાદી તેનો અમાત્ય કહેવાય છે. તેથી ભગવાનનો નાદ વાદી છે, રાજા છે; અને તેથી ધ્રુવ છે. ભગવાનના આ નાદમાં જ ગોપીજને સંવાદી નાદ જોડ્યો છે.)

‘તદેવ ધ્રુવમન્નિન્યે’ એ વાક્યનો કેટલાક ટીકાકારો એવો અર્થ કરે છે કે

ગોપીજને ધ્રુવતાલ વિગેરેમાં (પોતાનો નાદ) જોડ્યો. પરંતુ આ અર્થ ગળે ઉતરતો નથી. (કારણ કે તે પ્રકારનું કાર્ય સહેલું છે, એટલે તે ગોપીજનને માન આપવાનું કારણ ભગવાનને રહેતું નથી; અને તેથી ‘ભગવાને તેને બહુમાન આપ્યું’ એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તે ઘટતું નથી; વળી ટીકાકાર કહે છે તે પ્રમાણે જો અર્થ હોય તો શુકદેવજીએ ‘ધ્રુવમુન્નિન્યે’ ને બદલે ‘ધ્રુવે ઉન્નિન્યે’ એમ કહેવું જોઈતું હતું.)

આ પ્રમાણે ગોપીજને ધ્રુવમાં પોતાનો નાદ જોડ્યો એટલે ભગવાને તેમને બહુ જ સન્માન આપ્યું. શ્લોકમાં ‘ચ’ છે તેથી એમ પણ જણાય છે કે ભગવાને તે ગોપીજનને અભીષ્ટ વસ્તુ પણ આપી. આ પ્રમાણે ગોપીજનોમાં અંદરનું સામર્થ્ય આવ્યું, તો પછી બહારનું સામર્થ્ય આવ્યું તેમાં શું કહેવાનું રહ્યું એમ તાત્પર્ય છે. ‘બહુ’ એટલે સર્વ ગોપીજનોથી અધિક. આ પ્રમાણે ઐશ્વર્ય અને વીર્યરૂપ અને ઉપનિષદ્રૂપ આ બે ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. (આ બે ગોપીજનોમાં ભગવાને પોતાના ઐશ્વર્ય અને વીર્ય એ બે ધર્મો સ્થાપ્યા એટલે આ બે ગોપીજનો પણ ઐશ્વર્યરૂપ અને વીર્યરૂપ થયાં. ‘કાચિત્ સમં મુકુન્દેન’ એ શ્લોકમાં જે ગોપીજનનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે ગોપીજનમાં ભગવાન એકલાથી જ ઊંચે લેવાતા સ્વર અને જાતિને ઊંચે લેવાનું સામર્થ્ય છે, એટલે તે ગોપીજનમાં ઐશ્વર્ય છે એમ જાણવું, કારણ કે જે કાર્ય ઈશ્વર કરે છે તે કાર્ય તેમણે કર્યું છે. ‘તદેવ ધ્રુવમુન્નિન્યે’ એ શ્લોકમાં જે ગોપીજનનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તેમનામાં વીર્ય નામનો ધર્મ છે, કારણ કે ઊંચે લીધેલા સ્વર અને જાતિનું ભગવાન ફરીથી ગ્રહણ કરે તે પહેલાં જ આ ગોપીજને તેનું ગ્રહણ કરી લીધું. વીર્ય વિના ભગવાનની પહેલાં કોઈનાથી પણ આ પ્રમાણે ગ્રહણ થઈ શકે નહિ, તેથી આ ગોપીજનમાં વીર્યધર્મ છે એમ સ્વીકારવું જ જોઈએ.) બાકીનાં ચાર ગોપીજનો ક્રમથી કીર્તિ વિગેરે રૂપે જાણવાં. (ભગવાનના બાકીના ચાર ધર્મો-કીર્તિ, શ્રી, જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય-બાકીનાં ચાર ગોપીજનોમાં સ્થાપવામાં આવે છે એટલે તે ગોપીજનો તે તે રૂપે જણાય છે. આનું વર્ણન અનુક્રમે ૧૧ થી ૧૪ એ ચાર શ્લોકમાં કરવામાં આવેલું છે.) ૧૦.

(રાસક્રીડામાં ગોપીજનોના અને ભગવાનના એક યુગલે જે ગાન કર્યું તેનું વર્ણન અપાઈ ગયું. હવે બીજા યુગલે શારીરિક વ્યાપાર કર્યો તેનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. તેમાં શ્રીનો ભગવાન વિષે શારીરિક વ્યાપાર પ્રસિદ્ધ છે, એટલે શ્રીરૂપ ગોપીજનનો જ ભગવાનને વિષે જે કાયિક વ્યાપાર છે તેનું જ જો કે વર્ણન કરવું જોઈએ, છતાં કીર્તિ પણ ભગવાનને જ અવલંબીને રહેલી છે, એટલે કીર્તિરૂપ અને શ્રીરૂપ ગોપીજનોના શારીરિક વ્યાપારનું વર્ણન અગીઆર અને બાર એ બે શ્લોકોમાં

કરવામાં આવે છે.)

કીર્તિ ખરેખર ભગવાનને જ અવલંબીને રહેલી છે. તેથી કીર્તિરૂપ અને શ્રીરૂપ એ બે ગોપીજનોના શરીરની ક્રિયાનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કાચિત્’:

કાચિદ્ રાસપરિશ્રાન્તા પાર્શ્વસ્થસ્ય ગદાભૃતઃ ।

જગ્રાહ બાહુના સ્કન્ધં શ્વથદ્વલયમલ્લિકા ॥૧૧॥

રાસ રમવાથી થાકી ગએલાં અને જેમની કંકણના જેવી મલ્લિકાના પુષ્પોની માળા શિથિલ થઈ ગઈ હતી એવાં કોઈ એક ગોપીજને પાસે ઉભેલા ભગવાનનો ખભો પોતાના હાથથી ઝાલી લીધો. ૧૧.

રાસથી ઘણાં થાકી ગએલાં કોઈ એક ગોપીજને પોતાની એક બાજુએ ઉભેલા ભગવાનનો ખભો પોતાના હાથથી પકડી લીધો. ‘ગદાભૃત્’ એટલે ગદાને ધારણ કરનારા ભગવાન: તેમની સ્થિરતાને માટે આ ગોપીજને તેમનો ખભો પોતાના હાથ વતી પકડ્યો. સ્થિર ઉભા રહેવાને માટે ભગવાન્ ગદા વડે જો વધારે પ્રયત્ન કરે તો રાસનો ભંગ થઈ જાય. (ભગવાન્ કોઈક વખત ગદાનો આધાર લઈને ઉભા રહે છે અથવા તો ચાલે છે. રાસક્રીડામાં ભગવાનનું ચરણ આમતેમ ડગી ન જાય અને પોતે સ્થિર ઉભા રહે એટલા માટે આ ગોપીજને ભગવાનનો ખભો ઝાલ્યો અને તેથી ભગવાન્ સ્થિર રહીને પહેલાંની માફક મંડલ અને નૃત્ય ચાલુ રાખ્યું. ભગવાન્ ગદા ધારણ કરનારા છે, એટલે રાસક્રીડામાં ચરણ ખસી ન જાય એટલા માટે ભગવાન્ તે વખતે ગદાનું સ્મરણ કરે એ શંકા લાવીને ગોપીજને પોતે જ ભગવાનનો ખભો ઝાલી લીધો અને તેમને આધાર આપ્યો, જેથી ભગવાન્ પડી ન જાય. આ ગોપીજન થાકેલાં હતાં એટલે એમણે પોતાનો ભાર નાખ્યો એમ કહેવું જોઈએ, ફક્ત ભગવાનનો ખભો ઝાલવાને માટે નહિ, આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો તેનું સમાધાન એ કે જો ગોપીજન તે પ્રમાણે કરે તો રાસનો ભંગ થઈ જાય.)

આ ગોપીજનને જે થાક લાગ્યો છે તે રસ વધી જવાથી લાગ્યો છે (નહિ કે દેહની પીડાને લીધે) આમ જો ન માનીએ તો રસને માટે ગોપીજનની પ્રવૃત્તિ ન થાય. (ગોપીજન ભગવાનનો ખભો ઝાલે એટલે એમનો એક હાથ રાસમંડલથી છૂટો પડી જાય, અને તેથી મંડલનો ભંગ થતાં રાસનો ભંગ થાય; અથવા તો નૃત્યના આવેશમાં ગોપીજનનો હાથ છૂટી જાય અને તેથી મંડલનો ભંગ થાય; આ પ્રમાણે ન થાય તેટલા માટે શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) મંડલનો ભંગ થાય એટલે એ મંડલને પૂર્ણ કરવાને માટે ભગવાન્ પણ બીજાં ગોપીજનનો હાથ ઝાલે છે એ સંભવિત છે. (આ

પરિસ્થિતિમાં પાસે ભગવાન જ હોય છે, ભગવાનની પેલી બાજુએ રહેલાં ગોપીજન નહિ.) તેથી એક બાજુએ પાસે ભગવાન જ છે. પાસે ઉભા રહેલા ભગવાનનું કંઠમાંથી ગ્રહણ કરવાથી વૃક્ષાધિરૂઢ નામનું આલિંગન થાય છે. (જેમ માણસ ઝાડ ઉપર પોતાના પગ વારાફરતી મૂકીને ચઢી જાય છે તેમ નાપિકા પોતાના નાયકના ચરણમાં એક ચરણ લગાવીને બીજા ચરણથી નાયકના સાથળ ઉપર ચઢે છે ઈત્યાદિ વર્ણન રતિરહસ્ય નામના કામશાસ્ત્રના ગ્રંથમાં (પાદ-૧) આપવામાં આવેલું છે. આ પ્રકારના આલિંગનને વૃક્ષાધિરૂઢ કહેવામાં આવે છે.)

(આ અધ્યાયના ત્રીજા શ્લોકમાં જણાવવામાં આવ્યું છે તે પ્રમાણે) ભગવાને પહેલાં ગોપીજનનું કંઠમાંથી ગ્રહણ કર્યું; ગોપીજને પણ ભગવાનનું કંઠમાંથી જ ગ્રહણ કર્યું; એટલે ગોપીજન ભગવાનના મિત્ર જેવાં થશે. આ શંકાનું નિવારણ કરવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘શ્વથદ્વલયમલ્લિકા’. શિથિલ થઈ ગયાં છે કંકણના આકારનાં મલ્લિકાપુષ્પો-અર્થાત્ મલ્લિકાપુષ્પોની માલા-જેમનાં એવાં ગોપીજનો છે. અંબોડામાં કંકણના આકારવાળી મલ્લિકાપુષ્પોની માલા બાંધવામાં આવેલી હતી; તે શિથિલ થઈ ગઈ. આ પ્રમાણે ગોપીજનની વિકલવતા અને આપ્તતા દર્શાવવામાં આવી.

અંબોડાને પકડીને જે ચુંબન કરવામાં આવે છે તે રસના અતિમાદને લીધે થાય છે; એટલે ભગવાને ગોપીજનને આ પ્રકારે ચુંબન કરવાથી મલ્લિકાની માલા શિથિલ થઈ ગઈ. આ પ્રમાણે ભગવાને આ ગોપીજનને મહારસનું દાન કરીને તેની આપ્તતા-આ ગોપીજન મારાં આપ્ત છે એવી આપ્તતા-દર્શાવી. તેથી ભગવાનની આંગળીઓને લીધે પુષ્પો જ શિથિલ થયાં, માલા નહિ, એમ ભાવ છે. અથવા આપ્તતા બીજે પ્રકારે પણ સમજાવી શકાય છે: શુકદેવજીએ ભગવલ્લીલાનું જે વર્ણન કર્યું તે ઉપરથી તેમની આપ્તતા-જેવું જુએ તેવું જ કહેવું, અર્થાત્ સત્ય કહેવું એ પદ્ધતિ-દર્શાવવામાં આવે છે. અથવા તો આપ્તતાનો ત્રીજો અર્થ પણ સંભવે છે:- ક્રીડામાં પરસ્પર પોતાની શ્રેષ્ઠતાનું જ વર્ણન કરવામાં આવે છે, પોતાનો પરિશ્રમ નહિ; જ્યારે અહિં તો આ ગોપીજને ભગવાનનો ખભો પકડ્યો અને તે દ્વારા પોતાનો શ્રમ દર્શાવવાથી પોતાની શ્રેષ્ઠતા દર્શાવવામાં આવી નહિ; પરંતુ જે સ્વકીય ઈષ્ટ છે તેમનું જ અવલંબન કરવામાં આવે છે જ, અને તે રીતે ભગવાન મારા આપ્ત છે, ઈષ્ટ છે, એમ આ ગોપીજને દર્શાવ્યું.) ૧૧.

તત્રૈકાંસગતં બાહું કૃષ્ણસ્યોત્પલસૌરભમ્ ।

ચન્દનાલિપ્તમ્ આઘાય હૃદયરોમા ચુચુમ્બહ ॥૧૨॥

તે જ સમયે બીજાં એક ગોપીજને પોતાના ખભા ઉપર રહેલો, કમલના કરતાં વધારે સુગંધવાળો, ચંદનથી લેપાએલો ભગવાનનો હસ્ત સુંઘ્યો, એ આનંદમાં રોમાંચ થતાં તેનું ચુંબન કર્યું. ૧૨.

બીજી બાજુએ ઉભાં રહેલાં બીજાં કોઈ એક ગોપીજને પોતાના એક ખભા ઉપર આવેલા (ભગવાનના) બાહુને, કમલના કરતાં પણ અધિક સુગંધવાળા અને ચંદનથી લેપાએલા બાહુને, સુંઘ્યો, અને તેની સુગંધિ અંદર જતાં પૂર્ણ આનંદ પ્રાપ્ત કરીને આનંદનાં રોમાંચ ખડાં થઈ જતાં તે જ બાહુનું ચુંબન કર્યું. (બે બાજુએ ઉભાં રહેલાં ગોપીજનોનો વિનિયોગ જુદે જુદે સમયે થાય છે એમ સમજવું. આથી ‘ગોપીજનની પાસે ભગવાન જ છે’ એ વાક્યની સાથે વિરોધ નહિ આવે. ‘તે જ સમયે બંનેય ગોપીજનોનો વિનિયોગ થયો’ એ પક્ષ સ્વીકારવામાં આવે તો ભગવાનના માહાત્મ્યથી જ, જેમ બીજા યુગલમાં ઉભા રહેલા ભગવાનનું દર્શન થતું નથી તેમ, અન્યોન્યનું પણ દર્શન થતું નથી એમ સમજવું.)

રૂપ અને સ્પર્શ પહેલેથી જ હતો, (ભગવાનના રૂપનું દર્શન અને ભગવાનના શ્રીઅંગનો સ્પર્શ ગોપીજનોને પહેલેથી જ હતો,) એટલે આ શ્લોકમાં કહેવામાં આવે છે કે ભગવાનના ગંધ અને રસનો પણ અનુભવ આ ગોપીજને કર્યો. શ્લોકમાં આવેલો ‘હ’ આશ્ચર્ય દર્શાવે છે. ‘તત્ર’ એટલે તે જ સમયે, અથવા તો તે જ ભગવાનમાં. ભગવાનના શ્રીહસ્તને સુંઘનાર અને તેને ચુંબન કરનાર ગોપીજન ગયા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજનથી ભિન્ન છે એમ માનવાથી ભગવાનની બંનેય બાજુએ ઉભેલાં ગોપીજનોનો વિનિયોગ થયો એમ સિદ્ધ થયું. (પણ કેટલાક ટીકાકારો માને છે તે પ્રમાણે આ શ્લોકનાં ગોપીજન અને ગયા શ્લોકનાં ગોપીજન ભિન્ન નથી પણ એક જ છે એમ જો માનવામાં આવે તો બંને બાજુએ ઉભેલાં ગોપીજનોનો વિનિયોગ થાત નહિ.)

(પ્રથમ શ્રીમહાપ્રભુજીએ ‘એકાંસગતમ્’ને એક સમાસ માનીને અર્થ આપ્યો; હવે ‘એકા’ એમ પ્રથમા વિભક્તિવાળું પદ સ્વીકારીને અર્થ આપે છે.) અથવા તો એક ગોપીજને ખભા ઉપર રહેલા...એ પ્રમાણે અન્વય કરવો. કેટલાક ટીકાકારો એમ માને છે કે ગયા શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજને જ આ શ્લોકમાં બતાવ્યા પ્રમાણે કર્યું. (બીજા ટીકાકારોનો અભિપ્રાય સ્વીકારવામાં આવે તો કીર્તિ અને શ્રીનો પહેલાં જણાવેલો ભેદ ઘટી શકે નહિ, તેથી આ અભિપ્રાય શ્રીમહાપ્રભુજીને સંમત નથી એમ ‘કેચિત્’ પદ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે.) (ભગવાનના અધરમાં જે પ્રમાણે રસ રહ્યો છે તે પ્રમાણે તેમના બાહુમાં રસ નથી રહ્યો, તો પછી ગોપીજને અધરનું

ચુંબન કરવાને બદલે બાહુનું ચુંબન શા માટે કર્યું? આ શંકા દૂર કરવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ભગવાન્ સદાનંદ છે તેથી તેમના દરેક શ્રીઅંગમાં સરખા પ્રમાણમાં રસ રહેલો છે. ઉત્પલ નામનું કમલ રાત્રીએ વિકાસ પામે છે અને તે સ્ત્રીઓને બહુ ગમે છે. ગોપીજને ભગવાનના શ્રીહસ્તને સુંઘ્યો તેનું કારણ ચંદનની સુગંધિ જ છે એમ નથી. પરંતુ તેના કરતાં પણ વિલક્ષણ સામાન્ય માણસો ન જાણી શકે એવું કારણ છે, અને તે ચંદનની સુગંધિ કરતાં પણ વધારે સુગંધિવાળું છે, અને તેથી જેમનામાં અલૌકિક ભાવ હોય તે જ તે જાણી શકે છે. ભગવાનના શ્રીહસ્તમાં સ્વાભાવિક સુગંધિ રહેલી છે એ દર્શાવવાને માટે પણ ‘ચન્દનાલિપ્તમ્’ એ વિશેષણ મૂકવામાં આવ્યું છે. ભગવાનના શ્રીહસ્તને ચંદનનો જે લેપ કરવામાં આવેલો છે તે વિવેક અને ધૈર્યનો નાશ કરવાને માટે છે. (ચંદનનો લેપ વિગેરે અંગરાગ અનુભાવાત્મક હોવાથી ભગવાનને વિષે રહેલો વિશિષ્ટ પ્રકારનો ભાવ ઘણો વધે છે, અને તેથી વિવેક અને ધૈર્યનો નાશ થાય છે. બાહુનું ચુંબન કરવું એ જગતમાં પ્રસિદ્ધ નથી, તેથી સખીઓની સમક્ષ હું બાહુને શી રીતે ચુંબન કરી શકું? આ વિચારનું નામ વિવેક. ભગવાનની સાથે એકાંત સમય મેળવવાની રાહ જોઈને ઉભા રહેવું તે કાર્ય ધૈર્યનું છે.) ભગવાનનો શ્રીહસ્ત સુંઘવાથી અંદર પ્રવેશ થયો એ જ આ ગોપીજનની બીજાં ગોપીજનો કરતાં વિશિષ્ટતા છે. આ ગોપીજન શ્રીરૂપ છે. ૧૨.

કોઈ એક ગોપીજને ભગવાને ગ્રહણ કરેલું તાંબૂલ-પાન-જ્ઞાનની માફક ગ્રહણ કર્યું એમ શુકદેવજી ‘કસ્યાશ્ચિત્’ એ શ્લોકમાં કહે છે.

(આ શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજન ગયા અધ્યાયના ‘કાચિદ્બલિના’ (ભાગ. ૧૦|૨૯|૫) એ શ્લોકમાં વર્ણવેલાં ગોપીજનથી ભિન્ન નથી; આ પ્રમાણે જો ન માનીએ તો આ તેરમા શ્લોકમાં જે ‘પ્રાદાત્’-દાન કર્યું-પદ મૂકવામાં આવેલું છે તેનો વિરોધ થાય. ‘કાચિદ્બલિના’ શ્લોકમાં જે તાંબૂલનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે લક્ષ્મીજીએ ભગવાનને સમર્પણ કરેલું છે, જ્યારે આ શ્લોકમાં વર્ણવેલું તાંબૂલ આ ગોપીજને જ ભગવાનને અર્પણ કરેલું છે, કારણ કે આ શ્લોકમાં ‘કસ્યાશ્ચિત્’ એ પદમાં આવેલી છઠ્ઠી વિભક્તિ સંબંધ સૂચવે છે. જેમ શિષ્ય ગુરુની પાસે જઈને તેમની સેવા કરવાથી તેમની પાસેથી જ્ઞાન મેળવે છે તેમ આ ગોપીજન પણ ભગવાને ગ્રહણ કરેલું તાંબૂલ પોતાના ગાલ ભગવાનના ગાલ સાથે મેળવીને પ્રાપ્ત કરે છે. આ ગોપીજનને તાંબૂલનું દાન ભગવાન કરે છે એ વાત શુકદેવજી આ શ્લોકમાં કહે છે.

દ્વિતીય સ્કંધમાં નિરોધનું જ્યાં લક્ષણ આપવામાં આવેલું છે (‘નિરોધો અસ્ય અનુશયનમ્’ ભાગ. ૨|૧૦|૬) ત્યાં શ્રીમહાપ્રભુજી સુબોધિનીજીમાં આજ્ઞા



કરે છે કે નાડી રૂપી બૌંતેર દેહની શક્તિઓ છે, શ્રી વિગેરે પોતાની બાર શક્તિઓ છે, અને જાગ્રત્, સ્વપ્ન અને સુષુપ્તિના ભેદથી શયન ત્રણ પ્રકારનું છે; આ કારણથી દશમસ્કંધના ૮૭ અધ્યાય છે. આ વ્યાખ્યાન સ્થૂલ દૃષ્ટિએ કરવામાં આવેલું છે, કારણ કે પ્રશ્નોપનિષદ્માં શ્રુતિ કહે છે કે ‘આ હૃદયમાં એકસો એક નાડીઓ છે; તેમાં દરેક નાડીમાં બીજી સો નાની નાડીઓ છે; આ દરેક નાની નાડીમાં બૌંતેર હજાર નાની નાડીઓ છે’ (પ્રશ્ન ૩૧૬). વળી દશમસ્કંધમાં પણ વાક્ય, પ્રકરણ વિગેરે જે વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવેલું છે તેનો વિચાર કરતાં જણાય છે કે તે બધા વિષયો અનંત છે. આ પ્રમાણે ‘પરમાત્માની પરા શક્તિ વિવિધ જ છે’ એ શ્રુતિની અંદર એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ભગવાનની શક્તિ અનેક પ્રકારની છે. આ બધાં કારણોને લીધે ભક્તોના નિરોધમાં પણ ભગવાનના ગુણધર્મોના ભેદથી અનેક પ્રકાર પ્રાપ્ત થાય છે. બધાંયમાં જે ગોપીજનો અંતરંગ છે તે તો ધર્મરૂપ જ છે, કારણ કે તે ભગવદ્રૂપત્વનું જ્ઞાન આપે છે. અહિં વર્ણન કરવામાં આવતી ભગવલ્લીલામાં રહેલાં ગોપીજનો પણ અંતરંગ જ છે એમ સંખ્યાના બળથી નિશ્ચય થાય છે. તેમાં ઐશ્વર્ય, વીર્ય, યશ અને શ્રી એ ચાર પ્રકારનાં ગોપીજનોના સ્વરૂપનો પરિચય તેમનાં જુદાં જુદાં કાર્યો ઉપરથી જ થઈ જાય છે, એટલે તેમાં વિશેષની સ્પષ્ટતા કરવામાં આવતી નથી; પરંતુ આ શ્લોકના ગોપીજનની જ્ઞાનરૂપતા દર્શાવનારું કાર્ય અહિં અને આગળ ઉપર સ્પષ્ટ નથી, પણ તેમની યોગ્યતા જ સ્પષ્ટ છે, એટલે તે યોગ્યતાના બળથી તે ગોપીજન જ્ઞાનરૂપ છે એમ સ્પષ્ટતા કરવાની જરૂર રહે છે. જેમ ‘અજ્ઞલિના સક્તૂન્ પ્રદાવ્યે જુહુયાત્’ એ વાક્યમાં સક્તુ-સાથવો-હાથમાં રહી શકે એટલા માટે અજ્ઞલિ પહોળી રાખવામાં આવે છે એમ નિશ્ચય થઈ શકે તેમ આ ગોપીજનની યોગ્યતાને લીધે જ નિશ્ચય થઈ શકે છે કે આ ગોપીજન જ્ઞાનરૂપ છે. ઐશ્વર્ય વિગેરે ભગવદ્ધર્મો ભગવાનમાં નિત્ય છે અને બીજે સ્થલે આગંતુક-અનિત્ય-છે એ પ્રમાણે યુક્તં ભગૈઃ સ્વૈરિતરત્ર ચાઘુવૈઃ’ એ સ્થલે નિશ્ચય કરવામાં આવ્યો છે. આ કારણથી જ આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ગોપીજનો રસસ્વરૂપની અંદર પહેલાં હોવાથી અને ધર્મરૂપ હોવાથી ભગવાનથી ભિન્ન નથી, છતાં પણ અવતારને લીધે તેઓ ભગવાનથી ભિન્ન છે, એટલે તેમનામાં-ગોપીજનોમાં-રહેલાં ઐશ્વર્ય વિગેરે ધર્મો આગંતુક છે એમ તેમના કાર્ય દ્વારા પણ જણાવવામાં આવ્યું. આ પ્રમાણે હોવાથી આ ગોપીજનનું જ્ઞાન પણ આગંતુક છે; એટલે તેનું દાન કરવામાં દાન લેનારને-ગોપીજનને-સાધનથી અને સ્વરૂપથી યોગ્યતાનું દાન કરવામાં કારણભૂત જે ભગવાનનો અનુગ્રહ છે તેનું મૂલ શ્લોકમાં સૂચન કરવામાં

આવેલું છે.)

કસ્યાશ્ચિત્ નાટ્યવિક્ષિપ્ત-કુણ્ડલત્વિષમણ્ડિતમ્ ।

ગણ્ડં ગણ્ડે સન્દ્ધત્યા પ્રાદાત્ તામ્બૂલચર્વિતમ્ ॥૧૩॥

કોઈ એક ગોપીજને નૃત્યથી હાલતાં કુંડલોની કાંતિથી શોભતા પોતાના ગાલને ભગવાનના ગાલ સાથે લગાડ્યો, અને ભગવાને તેમને ચાવેલું પાન આપ્યું. ૧૩.

કોઈ એક ગોપીજનને ભગવાને ચાવેલું પાન આપ્યું. આ ગોપીજન પોતાનો ગાલ ભગવાનના ગાલ સાથે લગાડે છે તે ઉપરથી જણાય છે કે તેમને ભગવાનની અપેક્ષા છે, અને આ પ્રમાણે કરવામાં લાઘવ છે. ગોપીજન ભગવાનની સામે ઉભાં ન હતાં તો પણ લાઘવથી જ-સહેલાઈથી જ-તેમને ભગવાને ચાવેલા પાનનું દાન કર્યું. આ ઉપરથી-‘પ્રાદાત્’ એ પ્રમાણે દાનમાં પ્રકર્ષ હોવાથી-જણાય છે કે ભગવાને આ ગોપીજનને પોતાની વિદ્યાનું દાન કર્યું, માયાનિર્મિત વિદ્યાનું નહિ. (જેમ બધાં વેદાંતવાક્યોનું તાત્પર્ય બ્રહ્મવિદ્યા છે, તેમ ઉપનિષદ્ વિગેરે વાણીના અધિપતિએ, રસાત્મક ભગવાને, પોતાના અંતઃકરણને જ ભક્તો વિષેના સ્નેહના અંશથી પીલીને ચાવેલું પાન સ્થાપ્યું, અર્થાત્ ગોપીજનને ચાવેલું પાન આપ્યું. આ પ્રમાણે ભગવાનનું ચાવેલું પાન વિદ્યાના જેવું છે,) તેથી જ્યારે ભગવાન ગોપીજનોની પાસે નહિ હોય ત્યારે આ જ ગોપીજન તે બધાં ગોપીજનોને ઉપદેશ કરશે. (ગોપીજનોને જ્યારે ભગવાનનો વિરહ હોય હોય છે ત્યારે તેમનું મરણ થાય એવી સ્થિતિ થાય છે; આ મરણ દૂર કરવાને માટે આ ગોપીજન તેમને ઉપદેશ આપે અને તેમનો જીવ બચાવે. જેમ બ્રહ્મવિદ્યા બ્રહ્મની પ્રાપ્તિ કરાવે છે તેમ અહિં પણ આ ગોપીજન ભગવાનની પ્રાપ્તિ કરાવે છે. આ પ્રમાણે ભગવાન ભક્તોને વિપ્રયોગરસનો અનુભવ કરાવે છે અને આ ગોપીજનના ઉપદેશ દ્વારા તેમનું જીવન ટકાવે છે. વિદ્યારૂપી ચાવેલા પાનનું ગ્રહણ કરવાથી કવિત્વશક્તિ વિગેરે શક્તિઓ પ્રાપ્ત થાય છે એ વાત જગતમાં પણ પ્રસિદ્ધ છે, તેથી આ ગોપીજન પણ ભગવાને દાન કરેલા તાંબૂલથી ઉપદેશ કરી શકશે એમાં શંકાને સ્થાન નથી, શ્રીવિક્કલનાથજીએ પણ આ જ પ્રમાણે પોતાના પાનની પ્રસાદી ગોપાલદાસને આપી, અને તેથી ગોપાલદાસ એક મોટા કવિ થયા અને વલ્લભાખ્યાન વિગેરે કાવ્યો રચી શક્યા.)

આ ગોપીજન ભગવાને દાન કરેલી વિદ્યા ગ્રહણ કરવાને માટે યોગ્ય છે એ દર્શાવવા શુકદેવજી ‘નાટ્યવિક્ષિપ્તકુણ્ડલત્વિષમણ્ડિતમ્’ એ પદ વડે કહે છે કે આ ગોપીજનમાં લોકસિદ્ધ ક્રિયાશક્તિ અને જ્ઞાનશક્તિ છે. (સંયોગરસનો અનુભવ

કરાવનારી ક્રિયાશક્તિ અને જ્ઞાનશક્તિ આ ગોપીજનમાં છે. આ પ્રમાણે સંયોગરસનો અનુભવ કરવાનું સામર્થ્ય આ ગોપીજનમાં હોવાથી વિપ્રયોગરસનો અનુભવ કરાવનારી વિદ્યાનું ગ્રહણ કરવાની તેમનામાં યોગ્યતા છે એમ સિદ્ધ થાય છે. આ ગોપીજન ભગવાનનું જ્યારે અનુકરણ કરતાં હતાં ત્યારે તેમની શોભા જોઈને ભગવાન પ્રસન્ન થયા અને તેમણે ગોપીજનને તાંબૂલનું દાન કર્યું.) નૃત્યથી હાલતાં કુંડલોની કાંતિથી આ ગોપીજનનો ગાલ શોભતો હતો.

(હવે આધ્યાત્મિક દષ્ટિથી જે અર્થ સિદ્ધ થએલો છે તે કહેવામાં આવે છે. આ દષ્ટિથી જે અર્થ સિદ્ધ થશે તે અર્થ ઉપદેશ થયા પછી સાધન કરનાર પુરુષે ગ્રહણ કરવો.) નાટ્યમાં-નૃત્યમાં-ક્રિયાશક્તિ મુખ્ય છે, અને કુંડલમાં જ્ઞાનશક્તિ રહેલી છે. ('બિભર્તિ સાંખ્યં યોગં ચ દેવો મકરકુણ્ડલે' (ભાગ. ૧૨।૧૧।૧૨),-ભગવાન સાંખ્ય અને યોગરૂપી મકરના આકારનાં કુંડલો ધારણ કરે છે-એ વાક્ય ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ભગવાનનાં કુંડલો સાંખ્યરૂપ અને યોગરૂપ છે. અહિં પણ આ ગોપીજન ભગવાનની શક્તિરૂપ હોવાથી ભગવાનથી ભિન્ન નથી એટલે ગોપીજનનાં કુંડલો પણ સાંખ્ય અને યોગરૂપ છે. આ શ્લોકમાં ગોપીજનના એક જ કુંડલનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, પણ તે કુંડલ ડાબી બાજુનું છે કે જમણી બાજુનું છે એનો નિર્ણય થઈ શકતો નથી, તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી બંનેય રીતે-સાંખ્યની રીતે અને યોગની રીતે-વ્યાખ્યાન કરે છે. પ્રથમ સાંખ્યની રીતે વ્યાખ્યાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે કુંડલમાં જ્ઞાનશક્તિ રહેલી છે.)

નૃત્યમાં રહેલી ક્રિયાશક્તિથી વિક્ષેપ-ઘણો અભ્યાસ, આવૃત્તિ-થાય છે. (ગુરુની સેવા કરવામાં જે ક્રિયા રહેલી છે તેનાથી જે જ્ઞાન સારી રીતે મળે છે તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. સાંખ્યનું તાત્પર્ય જ્ઞાનમાં રહેલું છે. આ પ્રમાણે સાંખ્યની રીતે વિચાર કરતાં જણાય છે કે ભગવાને વિચારેલી રીત પ્રમાણે જ્ઞાનપૂર્વક કર્મ ઘણીવાર કરવામાં આવવાથી આ ગોપીજનની યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.)

(હવે યોગની રીતે અર્થ આપતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) અથવા તો ગોપીજનનું આ કુંડલ યોગરૂપ હોવાથી સાધનોનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. (આસન, પ્રાણાયામ વિગેરે ક્રિયાથી સિદ્ધ થતું જે યોગાત્મક સાધન-ચિત્તની એકાગ્રતા-તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે યોગાત્મક કુંડલ લઈએ તો શમ, દમ વિગેરે સાધનોના સમુદાયને લીધે ગોપીજનની યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે. આ પ્રકારના કર્મનું તાત્પર્ય જ્ઞાનમાં છે, અને જ્ઞાન પ્રકાશ કરનાર છે એમ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) જ્ઞાન અથવા કર્મની-યોગની-કાંતિ, અર્થાત્ પ્રકાશ

અથવા અનુભવ. આ જ્ઞાન અથવા કર્મથી શોભાયમાન જે ભક્તિ છે તે ભગવાનના પ્રેમ સાથે સંબંધમાં આવી છે. જેવી રીતે આ ગોપીજનનો પ્રેમ ભગવાનમાં હતો તેવી રીતે ગોપીજનમાં પણ ભગવાનનો પ્રેમ હતો. (રૂક્ષ-લુખા-જ્ઞાનનું તાત્પર્ય અક્ષર બ્રહ્મમાં હોય છે; પરંતુ આ આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં તો જ્ઞાન ભક્તિનું અંગ છે, એટલે સંપૂર્ણ યોગ્યતાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકારની યોગ્યતા ભગવાનનો અનુગ્રહ મેળવવામાં કારણ છે, અને ગોપીજનને ભગવાનનો અનુગ્રહ પૂર્ણ રીતે મળ્યો છે એમ સ્પષ્ટ જણાય છે. મૂલ શ્લોકમાં ‘મણ્ડિતં ગણ્ડમ્’ એ શબ્દોથી ભક્તિનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, કારણ કે મુખ ભક્તિરૂપ છે, અને ભક્તિ સ્નેહરૂપ છે. ગોપીજન પોતાનો ગાલ ભગવાનના ગાલ સાથે મેળવે છે એનું તાત્પર્ય એ છે કે ગોપીજન પોતાનો સ્નેહ ભગવાનના સ્નેહમાં સ્થાપે છે.)

તેમાં પણ આ ગાલ સાધ્યરૂપ ભક્તિ છે, (અર્થાત્ ભગવાનના ગંડસ્થલમાં રહીને તે દ્વારા ફલનો અનુભવ કરી શકાય છે, તેથી ગંડને સાધ્યરૂપ ભક્તિ કહેવામાં આવે છે.) ગોપીજનના કુંડલની તે શોભા પ્રતિ અથવા તો લક્ષ્મીજી જેવાં તે ગોપીજન પ્રતિ મૂલ-ગોપીજન વિષે રહેલા સ્નેહરૂપી ભગવાનનો ગાલ-ફરે છે તેથી ભગવાને ગોપીજનને તાંબૂલનું દાન કર્યું. (આ પ્રમાણે ‘તામ્બૂલચર્વિતમ્’નું રહસ્ય શ્રીમહાપ્રભુજીએ સમજાવ્યું. ‘તામ્બૂલ’ શબ્દમાંથી ‘તામ્’ અને ‘મૂલ’ એ પ્રમાણે બે શબ્દો કાઢીને અર્થ કરવામાં આવ્યો છે. આનો ભાવ એ છે કે ગોપીજનના કુંડલની શોભા જોઈને ભગવાને પોતાનો ગંડ ફરી ફરીને ત્યાં લગાડ્યો. જેવી રીતે ગોપીજને સ્નેહથી પોતાનો ગાલ ભગવાનના ગાલ ઉપર સ્થાપ્યો તેવી રીતે ભગવાને પણ પોતાનો ગાલ ગોપીજનના ગાલ ઉપર સ્નેહથી સ્થાપ્યો. આ ગોપીજનમાં લક્ષ્મીજીનો પ્રવેશ થવાથી તેમને લક્ષ્મીજી કહેવામાં આવ્યાં છે.) લક્ષ્મીજીવાળા ભગવાનની તરફ ગોપીજનનો ગાલ ફરી ફરીથી જાય છે, અથવા તો તે પ્રકારની શોભાવાળા ગાલ તરફ ભગવાનના મુખમાં રહેલું તાંબૂલ ફરી ફરીથી જાય છે, તેથી જ્ઞાન અને તાંબૂલ સરખાં છે. મૂલ શ્લોકમાં ‘ચર્વિતમ્’ પદ છે તે એમ સૂચવે છે કે ચાવવારૂપી સાધનનો પ્રયાસ નથી, તેથી સિદ્ધ દાન કરવામાં આવેલું છે. ભગવાને ચાવેલું જ પાન ગોપીજનને આપ્યું, એટલે ગોપીજનને તે પાન ચાવવાની જરૂર રહેતી નથી. (જ્ઞાનનો ઉપદેશ કરનાર ગુરુ પાસેથી જ્ઞાન મેળવીને જે પ્રકારે તે જ્ઞાન સમજાવવામાં આવે છે તે પ્રકારનું જ્ઞાન ફરીથી ગુરુના આગળ નિવેદન કરવામાં આવે છે અને તેથી જ્ઞાનમાં રહેલો સંદેહ દૂર થઈ જાય છે; તે જ પ્રમાણે આ ગોપીજન પણ સ્નેહથી ભગવાનના ગાલ ઉપર પોતાનો ગાલ ફરી ફરીથી સ્થાપે છે. જેમ જ્ઞાનવાળા

માણસ પાસેથી ઉપદેશ દ્વારા જ્ઞાન ગ્રહણ કરવામાં આવે છે તેમ લક્ષ્મીજીવાળા ભગવાન પાસેથી તેમના ગાલ ઉપર પોતાનો ગાલ સ્થાપીને ચાવેલું તાંબૂલ ગ્રહણ કરીને ‘ભગવાન મારામાં ઘણો સ્નેહ રાખે છે અને તે રસિકશિરોમણિ છે’ એ પ્રમાણેનું જ્ઞાન આ ગોપીજન મેળવે છે. લક્ષ્મીજી ભગવાનનું સ્વરૂપ જાણે છે અને તેનો ઉપદેશ કરે છે એમ કૂર્મપુરાણ વિગેરેમાં સિદ્ધ થએલું છે. સાધનપ્રકરણમાં જણાવવામાં આવ્યું છે કે બ્રહ્માનંદમાં ડૂબેલાઓનો ઉદ્ધાર કરવામાં આવ્યો છે; અને તેથી આ ગોપીજનોની યોગ્યતા છે એમ દર્શાવવાથી તેઓ લક્ષ્મીજી છે એમ સિદ્ધ થાય છે. જેમ ભગવાન વિષેનું જ્ઞાન મેળવ્યા પછી ભગવાનને ઉદ્દેશીને તેની આવૃત્તિ કરવામાં આવે છે, અનુસંધાન કરવામાં આવે છે, તેમ ગોપીજનને ઉદ્દેશીને વિદ્યાના ભૂલથી-ભગવાનના મનની-ફરી ફરીથી આવૃત્તિ કરવામાં આવે છે.

ભગવાને ગોપીજનને તાંબૂલ દ્વારા જ્ઞાનનું દાન કર્યું એમ પણ સિદ્ધ થાય છે. જેમ જ્ઞાન મેળવ્યા પછી તેની અનેકવાર આવૃત્તિ કરવામાં આવે છે તેમ પાનને પણ ચાવીને અનેકવાર મુખમાં ગાલ તરફ લઈ જવામાં આવે છે. આ દષ્ટિએ જ્ઞાન અને તાંબૂલ સરખાં છે.) ૧૩.

ભગવાનની બીજી બાજુએ ઉભાં રહેલાં ગોપીજને તો વૈરાગ્યાત્મક, ક્રિયારૂપ અને છિદ્રરહિત એવો ભગવાનનો શ્રીહસ્ત જ્ઞાનમાં મદદને માટે પોતાના હૃદય ઉપર સ્થાપ્યો એમ શુકદેવજી ‘નૃત્યતિ’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

નૃત્યતી ગાયતી કાચિત્ કૂજન્ નૂપુરમેખલા ।

પાર્શ્વસ્થાય્યુતહસ્તાબ્જં શ્રાન્તાઘાત્ સ્તનયોઃ શિવમ્ ॥૧૪॥

નૃત્ય અને ગાન કરતાં, જેમનાં નૂપુર અને મેખલાનો સુંદર શબ્દ થઈ રહ્યો છે અને જે થાકી ગએલાં છે એવાં બીજાં કોઈ ગોપીજને પોતાની પાસે ઉભેલા ભગવાનના કલ્યાણકારી હસ્તકમલને પોતાની છાતી ઉપર પધરાવ્યું. ૧૪.

(અતિ સ્નેહને લીધે ગોપીજન પોતે ભગવાનનો વિપ્રયોગ સહન ન કરી શકે તો બીજાં ગોપીજનોનું સમાધાન સંભવે નહિ; તેથી તે વખતે પણ બીજાં ગોપીજનોનું સમાધાન જે પ્રકારે થઈ શકે તે પ્રકારે ભગવાને પહેલાં દાન કરેલું જ્ઞાન સિદ્ધ કરવાને માટે આ ગોપીજને ભગવાનનો શ્રીહસ્ત પોતાના હૃદય ઉપર ધર્યો. ભગવાનનો શ્રીહસ્ત ક્રિયાશક્તિરૂપ છે; શ્રીહસ્ત અચ્યુત ભગવાનનો છે એટલે તે તે સમયે પણ કાર્ય કરી શકે એવો છે; શ્રીહસ્તમાં છિદ્ર નથી એટલે તે અવશ્ય ફલ આપે છે; શ્રીહસ્તને કમલ કહેવામાં આવેલું હોવાથી તે સમયે પણ શ્રીહસ્ત તાપ દૂર કરે છે. આવા પ્રકારનો શ્રીહસ્ત આ ગોપીજને પોતાના હૃદય ઉપર પધરાવ્યો. આ પ્રમાણે

વૈરાગ્યમાં તાપ દૂર કરવાની અને જ્ઞાનમાં મદદ કરવાની શક્તિ પ્રસિદ્ધ છે. ભગવાનના શ્રીહસ્તના સંબંધથી ઉપદેશમાં મદદ કરવારૂપી ભક્તનું કાર્ય થાય છે, એટલે તે દ્વારા ભગવાનના શ્રીહસ્તમાં વૈરાગ્ય છે એમ નિશ્ચય કરવો. વળી, શક્તિ, બાણ વિગેરે આયુધોના આગલા ભાગને જગતમાં ‘ફલ’ કહેવામાં આવે છે, હસ્ત ક્રિયાશક્તિરૂપી બાહુનો અગ્રભાગ છે, અને વૈરાગ્ય કર્મનું ફલ છે; આ કારણથી પણ એમ નિશ્ચય થાય છે કે ભગવાનનો શ્રીહસ્ત વૈરાગ્યરૂપ છે. ભગવાનનો શ્રીહસ્ત છિદ્રરહિત છે, કારણ કે તે તેમના બાહુનો અગ્રભાગ છે, અને છેડાના ભાગમાં જ છિદ્ર હોતાં નથી.

જો કે તે ભાવનો પ્રતિબંધ કોઈ કરી શકતું નથી, છતાં પણ પ્રભુના સંબંધથી જેમ તે ભાવનો પ્રતિબંધ થઈ શકતો નથી, તેમ ભગવાનના હસ્તકમલનો પ્રભુની સાથે સંબંધ છે. આ કારણથી જ આ ગોપીજને ભગવાનનું હસ્તકમલ પોતાના હૃદય ઉપર સ્થાપ્યું. આ પ્રમાણે પ્રભુસંબંધી ભાવ અને પ્રભુસંબંધી હસ્તકમલ એ બંનેની અનુવૃત્તિને લીધે ઉભયકાર્ય સંભવે, અને તેથી વિચિત્ર મહારસાત્મક ભાવ પ્રકટ થાય છે.

અરે! પાછલા શ્લોકનાં અને આ શ્લોકનાં ગોપીજનો પરસ્પર જો ભિન્ન હોય તો આ બધું ઘટી શકશે નહિ-આ પ્રમાણે જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. અહિં ઐશ્વર્ય ઈત્યાદિ છ ગુણોરૂપી આ ગોપીજનો જ છે, તેથી એમનાથી વિશિષ્ટ થએલા સ્વરૂપને જ ભગવાન કહેવામાં આવે છે. ધર્મોનો ભેદ આવશ્યક છે, છતાં પણ ધર્મો એક જ હોવાથી બધું ઘટે છે. આ ઉપરથી એટલું સિદ્ધ થયું કે ભગવાનના જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય એ બે ધર્મો વિયોગદશામાં ગોપીજનોને માટે જ ઉપયોગમાં આવે છે. આથી એમ જણાય છે કે વિયોગદશામાં પ્રભુ પણ રસાત્મક હોવાથી, ગોપીજનોથી થએલા વિરહને લીધે ઉત્પન્ન થએલા તેમના-ભગવાનના-ભિન્ન ભિન્ન ભાવની શાંતિ જ્ઞાન અને વૈરાગ્યથી થાય છે.

અહિં વાદી શંકા કરે છે- અરે! પતંજલિ મહર્ષિએ યોગસૂત્રમાં વૈરાગ્યનું લક્ષણ અને તેની અંતિમ સ્થિતિ બે સૂત્રોમાં વર્ણવી છે. “દટ્ટાનુશ્રવિકવિષય-વિતૃષ્ણસ્ય વશીકારસંજ્ઞા વૈરાગ્યમ્” (યોગસૂત્ર ૧।૧।૧૫)-જગતમાં જણાતા સ્ત્રી વિગેરે પદાર્થોમાં, અને વેદમાં જણાતા સ્વર્ગ વિગેરે પદાર્થોમાં દોષ જોઈને તેમની તૃષ્ણાથી રહિત થનારો પુરુષ દિવ્ય અને અદિવ્ય પદાર્થો પોતાની પાસે પડેલા હોય તો પણ પોતાના ચિત્તને વશ કરીને ઉપેક્ષાબુદ્ધિ રાખી જે એકાગ્રતા રાખવામાં આવે છે તેને વૈરાગ્ય કહેવામાં આવે છે-આ સૂત્રમાં વૈરાગ્યનું લક્ષણ આપવામાં આવેલું છે. “તત્પરં પુરુષખ્યાતેર્ગુણવૈતૃષ્ણમ્” (યોગસૂત્ર ૧।૧।૧૬)-પુરુષના દર્શનના

અભ્યાસથી જ્યારે ગુણોથી વિસ્કત થાય છે ત્યારે તે પર વૈરાગ્ય-અર્થાત્ વૈરાગ્યની અંતિમ સ્થિતિ-કહેવામાં આવે છે. આ સૂત્રમાં વૈરાગ્યની કાષ્ઠા, અંતિમ સ્થિતિ, વર્ણવવામાં આવેલી છે. અર્થાત્ જ્ઞાનની જ પરકાષ્ઠા વૈરાગ્ય છે અને વૈરાગ્યની પછી કૈવલ્ય અવશ્ય આવે છે. આ પ્રમાણે સત્ત્વ વિગેરે ગુણ સુધી જેટલા જેટલા વિષયો છે તે બધાની ઉપેક્ષા કરીને ચિત્તને આત્મામાં જ પરોવી રાખવું તેનું નામ વૈરાગ્ય એમ સિદ્ધ થાય છે. જ્યારે આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં ભગવાનમાં અને પરસ્પર રાગ અને માત્સર્ય છે એમ કહેવામાં આવેલું હોવાથી આત્મામાં એકતાનતા નથી, એટલે ભગવાનના શ્રીહસ્તમાં જે વૈરાગ્યનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે મુમુક્ષુ જનોના વૈરાગ્યથી ભિન્ન છે. આ ચાલતા પ્રસંગમાં ‘યતમાનસંજ્ઞા’ વિગેરે વૈરાગ્યના પ્રકારનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે એમ કહેવું નહિ, કારણ કે ‘યતમાનસંજ્ઞા’ વિગેરે વૈરાગ્યના ભેદોનાં જે લક્ષણો આપવામાં આવ્યાં છે તે લક્ષણો પણ અહિં ચાલતા પ્રસંગમાં જોવામાં આવતાં નથી. પરંતુ “સન્ત્યજ્ય સર્વવિષયાન્” (ભાગ. ૧૦૧૨૬૩૧), “યત્ પત્યપત્ય” (ભાગ. ૧૦૧૨૬૩૨), “કુર્વન્તિ હિ” (ભાગ. ૧૦૧૨૬૩૩) ઈત્યાદિ શ્લોકોમાં સ્પષ્ટ કહેવામાં આવેલું છે કે જગતમાં જેટલા પદાર્થો છે તેટલા પદાર્થોની તૃષ્ણા ગોપીજનોને નથી, અને ગોપીજનોની આ ભાવના જ વૈરાગ્ય છે એમ કહેવું જોઈએ. વળી, ગોપીજનોની જ્યારે વિપ્રયોગ દશા હોય છે ત્યારે તેઓ પોતાના આત્માની પણ ઈચ્છા કરતાં નથી અને ભગવાનમાં જ એકતાન રહે છે, તેથી તેમની આત્મામાં એકતાનતા છે છતાં પણ પહેલાં જણાવેલા વૈરાગ્યથી આ ભાવ જુદો છે. આ બંને વસ્તુઓ-બધા પદાર્થોની અપેક્ષા અને ભગવદેકતાનતા-બધાંય ગોપીજનોમાં જોવામાં આવે છે; તો પછી આ ચાલતા પ્રસંગમાં કયા પ્રકારના વૈરાગ્યનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે?

સિદ્ધાંતી શંકાનું સમાધાન કરતાં કહે છે કે શ્રીમદ્ભાગવતના નવમા સ્કંધમાં “નાહમ્ આત્માનમ્ આશાસે” (ભાગ. ૯૧૪૧૬૪)-હું આત્માની ઈચ્છા કરતો નથી-ઈત્યાદિ વાક્યોમાં સિદ્ધ થયું છે કે ભક્તો ઉપર ભગવાનની કૃપા થાય છે, અને ભક્તો વિના બીજા પ્રાણીઓ ઉપર કૃપા થતી નથી. તેમ જ વેણુગીતના અગીઆરમા શ્લોક ઉપરનાં શ્રીસુબોધિનીજીમાં ‘ઉત્કર્ષશ્ચાપિ વૈરાગ્યે’-ભગવાનની સેવા કરીને તેમને સુખ આપવાથી વૈરાગ્ય શ્રેષ્ઠ પ્રકારનો થાય છે-એ આઠમી કારિકામાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ભક્તિથી ભગવાનનો ક્લેશ દૂર કરે એવી સેવા કરવાથી વૈરાગ્યનો ઉત્કર્ષ-ઉત્તમતા-સિદ્ધ થાય છે. આમ હોવાથી પોતાના જેવાં બીજાં ગોપીજનોને જ્યારે ભગવાનથી વિયોગ થાય ત્યારે જો તેમની મૂર્છા વિગેરે અવસ્થા દૂર કરવામાં ન

આવે તો ભગવાનને ક્લેશ થવાનો સંભવ રહે છે, તેથી આ પ્રકારનો ક્લેશ આ ગોપીજન પોતે સહન કરીને પણ બીજાં ગોપીજનોનો તે ક્લેશ દૂર કરવાની સેવા કરે છે, અને આ સેવાત્મક જે વૈરાગ્યની ઉત્તમતા છે તે પહેલાં જણાવેલા ભગવાનના વૈરાગ્ય વિના સંભવતી નથી. તેથી આ પ્રકારના વૈરાગ્યનું જ આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, કારણ કે ભગવાનની કૃપા ભક્તો ઉપર છે, અને બીજાઓ ઉપર કૃપા નથી એ વાત સ્પષ્ટ છે.)

તે ગોપીજન નૃત્ય અને ગાન કરવા લાગ્યાં. તેમાં અભિનયમાં જેમ બીજાનો હાથ અથવા પોતાનો હાથ મૂકવામાં આવે છે તેમ તે ગોપીજને ભગવાનનો હાથ જ પોતાના હૃદય ઉપર સ્થાપ્યો. આ ગોપીજનમાં શબ્દનું જ્ઞાન છે (અર્થાત્ ગાવામાં આવતા પ્રબંધમાં જે પ્રકારનું નૃત્યનું સ્વરૂપ છે તે સ્વરૂપ આ ગોપીજન જાણે છે, આ ગોપીજન જ્ઞાનપૂર્વક ગાન કરે છે;) અને ગાવામાં આવતા પ્રબંધનો અર્થ-નૃત્ય-કરે છે, આ પ્રમાણે દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી આ શ્લોકમાં નૃત્ય અને ગાનની વાત કહે છે. (આ પ્રમાણે કહેવાથી સમજાય છે કે આ ગોપીજનનો વૈરાગ્યને માટે અધિકાર છે.) જેમનાં નૃપુર અને મેખલા સુંદર શબ્દ કરી રહ્યાં છે તે ગોપીજન ‘કૂજનૃપુરમેખલા’ કહેવાય છે. ઉપરના ભાગમાં ગાન પ્રમાણે અભિનય થાય છે, જ્યારે ચરણો નૃત્ય કરે છે. આ કારણથી જ નૃપુર અને મેખલામાં શબ્દ ઉત્પન્ન થાય છે. આ શબ્દ ભાવને વધારે છે. આ ઉપરથી સૂચિત થાય છે કે પોતાની ઈચ્છા પૂર્ણ થવાથી આ ગોપીજનની પહેલાંની બધીય ક્રિયાશક્તિ સફલ થઈ. આ ગોપીજન જ્યારે થાકી ગયાં ત્યારે પોતાનો તાપ દૂર કરવાને માટે તેમણે એક જ બાજુએ ઉભા રહેલા ભગવાનનો શ્રીહસ્ત પોતાનાં સ્તનો ઉપર પધરાવ્યો. કમલ તાપ દૂર કરે છે એ વાત પ્રસિદ્ધ છે અને ભગવાનનો શ્રીહસ્ત કમલ છે, (તેથી તે તાપ દૂર કરી શકે છે.) શ્રમ એ સુખનું સૂચન કરનાર છે. (ગોપીજનના નૃપુર અને મેખલાના સુંદર શબ્દથી ભગવાનનો ભાવ ઉદીપ્ત થયો અને બીજાઓ ન જાણે એવી રીતે પોતાના હસ્તથી ગોપીજનના અવયવોને સ્પર્શ કરીને ભગવાને ગોપીજનના બધા મનોરથો પૂર્ણ કર્યાં. તેથી આ ગોપીજનને સુખ થયું અને તેથી તેમને થાક લાગ્યો.) થાક લાગવાથી આ ગોપીજને પહેલાંની ક્રિયાનો-નૃત્યનો-જે ત્યાગ કર્યો તે તો ફક્ત બહારથી જ હતો; (હૃદયની અંદર તો ગોપીજનને નૃત્ય કરવાની ઈચ્છા હતી જ.) તેથી (ફરીથી નૃત્ય કરવાને માટે) ભગવાન એક બાજુએ ઉભા રહ્યા એમ કહેવામાં આવ્યું છે. ભગવાનની (નૃત્યરૂપી) ક્રિયાશક્તિનો નાશ થતો નથી એ સૂચવવાને માટે શુકદેવજી ‘અચ્યુત’ શબ્દનો પ્રયોગ કરે છે. આગળ ઉપર મુખ્ય રમણરૂપી સંબંધ પણ



કરાવવાનો છે તેથી અને તેનો નાશ ન થાય તેટલા માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘અચ્યુત’ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે. (આગળ મુખ્ય રમણમાં ન્યૂનતા વિગેરે દોષ દૂર કરવાને માટે, અને ભગવાનનો શ્રીહસ્ત વક્ષઃસ્થલ ઉપર પધરાવવાથી જ ગોપીજનનું કાર્ય સિદ્ધ થતાં આગળ મુખ્ય ભોગ નહિ થાય એ શંકા દૂર કરવાને માટે પણ ‘અચ્યુત’ પદ વાપરવામાં આવેલું છે.)

ભગવાન ફરીથી ગોપીજનમાં કામ વિગેરે જાગૃત કરે અને તેથી ગોપીજનના તાપનો નાશ કરી શકશે નહિ-આ પ્રકારની શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘શિવમ્’. ભગવાનનો શ્રીહસ્ત જ કલ્યાણરૂપ છે, કારણ કે ભગવાન આનંદરૂપ છે. (ભગવાનનો શ્રીહસ્ત શિવ-કલ્યાણરૂપ-છે તેથી તે આનંદનું સાધન છે, અને આ શ્રીહસ્ત ભગવાનનો છે તેથી તે આનંદરૂપ છે. એટલે ભગવાનનો શ્રીહસ્ત ગોપીજન માં તાપ ઉત્પન્ન કરશે નહિ.) ૧૪.

આ પ્રમાણે છ ગોપીજનોનાં સ્વરૂપનું વર્ણન કરીને બધાં ગોપીજનોની ભગવાનના સ્વરૂપ સાથેની સાધારણ લીલા શુકદેવજી ‘ગોપ્યઃ’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

ગોપ્યો લબ્ધ્વાચ્યુતં કાન્તં શ્રિય એકાન્તવલ્લભમ્ ।

ગૃહીતકણ્ઠયસ્તદ્દોભ્યાં ગાયન્ત્યસ્તં વિજહિરે ॥૧૫॥

ગોપીજનોએ લક્ષ્મીજીને અત્યંત પ્રિય એવા ભગવાનને જ કાન્ત તરીકે પ્રાપ્ત કર્યા; ભગવાને પોતાનો શ્રીહસ્ત તેમના ગળા ઉપર મૂક્યો, અને ગોપીજનો પ્રભુના ગુણગાન કરતાં વિહાર કરવા લાગ્યાં. ૧૫.

ભગવાન જ અચ્યુત-નાશ ન પામે એવા-કાન્ત છે. ભગવાન અંદર અને બહાર હંમેશાં આનંદ આપનારા છે. તેથી જ બધી સ્ત્રીઓનાં મૂલભૂત લક્ષ્મીજીને તે અત્યંત વલ્લભ-પરમ પ્રિય-છે. આવા પ્રકારના ભગવાનને કાન્ત તરીકે પ્રાપ્ત કરીને તેમના જ ગુણોનું ગાન કરતાં ગોપીજનો વિહાર કરવા લાગ્યાં.

અરે! પરમાનંદ જ્યારે પ્રાપ્ત થાય ત્યારે તો ક્રિયા જતી રહે એ જ યોગ્ય છે; કાંઈ ફરીથી ક્રિયા થઈ શકે નહિ. તો પછી ગોપીજનો ભગવાનની સાથે કેવી રીતે વિહાર કરી શક્યાં? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તદ્દોભ્યાં ગૃહીતકણ્ઠયઃ’, ભગવાને પોતાના હસ્તો ગોપીજનોના ગળા ઉપર મૂક્યા, ભગવાનની ક્રિયા જ ગોપીજનોમાં વ્યાપી હતી, ગોપીજનોની પોતાની કોઈ ક્રિયા નહિ. ભગવાને પોતાના હસ્તરૂપી ક્રિયા ગોપીજનોના ગળા ઉપર સ્થાપી તેથી ગોપીજનોનાં ગાન અને ક્રિયા સંભવી શકે છે. (ગાનનો આધાર કંઠ ઉપર છે, તેથી ગોપીજનની કર્મોન્દ્રિયરૂપ વાણીનો વ્યાપાર જે ગાન તે સિદ્ધ થાય છે. ભગવાનના

શ્રીલસ્તરૂપી ક્રિયાનું ગોપીજનના કંઠમાં સ્થાપન કરવાથી ગોપીજનની વિહારરૂપી ક્રિયા પણ સિદ્ધ થાય છે.) આ ક્રિયા શક્તિરૂપ-ભગવાનના સામર્થ્યરૂપ-છે, એટલે ગાન અને ક્રિયાની અંદર ગોપીજનોની સ્વતંત્રતાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ૧૫.

હવે પછી રાધા અને દામોદરના નૃત્યની માફક ભગવાને અને ગોપીજને જે નૃત્ય કર્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘કર્ણ’ એ શ્લોકમાં કરે છે. (ચૌદમા શ્લોકમાં નૃત્યની વાત કહેવામાં આવેલી છે છતાં ફરીથી આ શ્લોકમાં વાજંત્રોના શબ્દની સાથે નૃત્ય થયું એમ જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રથમના નૃત્ય કરતાં આ નૃત્યમાં કાંઈક વિશેષ છે, કારણ કે આ નૃત્ય રાધા અને દામોદરે જે પ્રકારે નૃત્ય કર્યું તે પ્રકારનું છે. આ નૃત્યમાં ભગવાન અને ગોપીજન તુલ્ય છે, અર્થાત્ ભગવાન અને ગોપીજનની તુલ્યતા જેમાં છે એવા પ્રકારનું આ નૃત્ય છે. આટલો જ બે નૃત્યો વચ્ચે ફેર છે, વધારે નહિ. નૃત્યના પ્રકારમાં ભેદ હોય છતાં તેના ફલમાં ભેદ ન હોય તો તે વાસ્તવિક ભેદ કહી શકાય નહિ, તેથી બે નૃત્યોનું તાત્પર્ય બીજી રીતે સમજાવવાની જરૂર રહે છે; અને તે આ પ્રકારે છે. રસના આવેશથી ઉત્પન્ન થએલી અને મર્યાદા વિનાની જે ક્રિયા તે વિહાર કહેવામાં આવે છે, અને આનું વર્ણન પંદરમા શ્લોકમાં ‘વિજહિરે’ એ પદ વડે કરવામાં આવેલું છે. પાછળથી જે વસ્તુ આવતી હોય તેના આરંભથી પહેલાંની વસ્તુનો નાશ થાય છે એ ન્યાયને અનુસરીને એમ બતાવી શકાય કે દ્વિતીય નૃત્યના આરંભથી પ્રથમ નૃત્યનો અંત આવી ગયો છે. આ પરિસ્થિતિમાં ફરીથી નૃત્યનું જે વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે યોગ્ય છે. જો આ દ્વિતીય નૃત્ય પ્રથમ નૃત્યના જેવું જ હોત તો પછી પ્રથમ નૃત્યનો ત્યાગ કરવામાં આવત નહિ. નૃત્ય રસને માટે જ કરવામાં આવ્યું છે, અને રસ વિના નૃત્યનો ત્યાગ સંભવતો નથી. તેથી અર્પૂર્વ રસને માટે જ અર્પૂર્વ નૃત્યનું જ વર્ણન કરવામાં આવે છે એમ જણાય છે. અર્થાત્ પંદરમા શ્લોકમાં જે વિહારનું વર્ણન છે તે વિહાર ઉત્પન્ન કરનાર રસ પ્રકટ કરવાને માટે પ્રથમ નૃત્ય કરવામાં આવ્યું, જ્યારે અર્પૂર્વ રસ પ્રકટ કરવાને માટે આ સોળમા શ્લોકમાં વર્ણવેલું દ્વિતીય નૃત્ય કરવામાં આવ્યું. આ પ્રમાણે ફલ અને પ્રકારમાં બંને નૃત્યો વચ્ચે ભેદ હોવાથી દ્વિતીય નૃત્યના વર્ણનમાં પુનરુક્તિનો દોષ આવતો નથી. અહિં સમુદાયરમણ અને પ્રત્યેકરમણનું વર્ણન કરવાનું છે; તેથી તે તે રમણને અનુકૂલ ભાવ પ્રકટ કરવાને માટે નૃત્ય પણ તે તે પ્રકારનું જ હોવું જોઈએ. સમુદાયનૃત્યનું વર્ણન પહેલાં થઈ ગયું છે; આ શ્લોકમાં પ્રત્યેકનૃત્યનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. તેમાં દરેક ગોપીજન પાસે ભગવાનનું એક એક સ્વરૂપ છે અને તે પ્રકારે નૃત્ય કરવામાં આવે છે. તેનું દષ્ટાંત રાધા અને દામોદરનું છે. પહેલાં સમુદાયરમણ

પછી યુગલ રસનો અનુભવ કરવાને માટે એક ગોપીજનને છૂટાં પાડીને ભગવાન્ લઈ ગયા એમ 'તતો ગત્વા' (ભાગ. ૧૦।૨૭।૩૭) એ શ્લોકની ટિપ્પણીજીમાં કહેવામાં આવ્યું છે. તે જ પ્રમાણે અહિં પણ યુગલરસના અનુભવને માટે આ નૃત્ય કરવામાં આવેલું છે. પરંતુ તેમાં થોડો ફેર છે. પહેલાં એક જ ગોપીજનને યુગલરસનો અનુભવ થયો હતો, અને બીજાં ગોપીજનોને વિરહનો અનુભવ થયો હતો, જ્યારે આ નૃત્યમાં બધાંય ગોપીજનોને યુગલરસનો અનુભવ થાય છે.)

કર્ણોત્પલાલક-વિટ્ક-કપોલ-ધર્મ-વક્ર-શ્રિયો વલય-નૂપુર-ઘોષ-વાદ્યૈઃ ।

ગોપ્યઃ સમં ભગવતા નનૃતુઃ સ્વકેશસ્તસ્રજો ભ્રમરગાયકરાસગોષ્ટ્યામ્ ॥૧૬॥

કર્ણમાં રહેલા કમલો સહિત કેશથી જેમના ગાલ શોભી રહેલા છે, આ ગાલ ઉપરના પરસેવાથી જેમનું મુખ શોભે છે અને જેમના કેશમાંથી માલા પડી જાય છે એવાં ગોપીજનો, ભમરાઓ જેમાં ગાનાર છે એવી રાસગોષ્ઠીમાં કંકણ અને નૂપુરના શબ્દરૂપી વાજાંત્રો સાથે, ભગવાનની સાથે નૃત્ય કરતાં હતાં. ૧૬.

રાસને માટે જ, રસનો સમૂહ ઉત્પન્ન કરવાને માટે જ, આ-બંનેનું નૃત્ય-પણ છે, પરંતુ દરેકનામાં રસ ઉત્પન્ન થાય છે તેથી શ્લોકમાં ફક્ત 'ગોષ્ઠી' કહેવામાં આવ્યું છે, કારણ કે બંનેનો ગાઠ નૃત્યમાં વિનિયોગ થએલો છે. (રસનો સમૂહ ઉત્પન્ન કરવાને માટે દરેક ગોપીજન આગળ ભગવાન્ પોતે પ્રકટ થયા એવો ભાવ છે. જેટલાં ગોપીજન તેટલાં ભગવાનનાં સ્વરૂપ પ્રકટ થયાં, તેથી દરેકનામાં તેમણે રસ ઉત્પન્ન કર્યો. આ રીતે બહુ નાચનારીઓ જેમાં હોય એવો રાસ સિદ્ધ થયો; પરંતુ એકત્રિત એક રસ ન હોવાથી પહેલાંની માફક, આ અધ્યાયના બીજા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે તેની માફક, અહિં 'ક્રીડામ્' એમ એક વચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો નથી, પણ દરેકનામાં રસ ઉત્પન્ન કરવાથી 'ગોષ્ઠી' પદ વાપરવામાં આવ્યું છે. ગોષ્ઠીની અંદર બધાં પોતાના અધિકાર પ્રમાણે ભિન્ન રસ અનુભવે છે.)

ભમરાઓ ગાન કરનાર છે. વાજાંત્ર તો પહેલાંની માફક જ હશે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'વલયનૂપુરઘોષવાદ્યૈઃ'. કંકણોનો શબ્દ, નૂપુરોનો શબ્દ અને ઘોષનો-નાની ઘુઘરીઓનો-શબ્દ, આ પ્રમાણે ત્રણ વસ્તુઓના શબ્દો જ વાજાંત્રના શબ્દોનું કાર્ય કરે છે. નૃત્યમાં અત્યંત આસક્તિ છે એ દર્શાવવાને માટે શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે ગોપીજનોના પોતાના કેશમાંથી માલાઓ છૂટી પડી જાય છે.

અથવા તો ગાન કરનાર તરીકે ભમરાઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, અને ભમરાઓને તો પુષ્પના રસની જરૂર હોય છે. આ રસ પુષ્પોમાં જ રહે છે. જ્યારે

પુષ્પો છૂટાં થઈ જાય છે ત્યારે તે રસ વિનાનાં થઈ જાય છે, તેથી આ ગોપીજનોએ પોતાના નૃત્યને અનુકૂલ રીતે ભમરાઓએ ગાન કરવાથી ભમરાઓ ઉપર પ્રસન્ન થઈને તેમને પુષ્પની માલાઓ જ આપી. જો આ પ્રમાણે માનવામાં ન આવે તો રસને માટે પાતાના કેશમાં શોભાને માટે ધારણ કરેલી માલાઓ માટે ગોપીજનો બેદરકારી રાખે નહિ. આ ઉપરથી જણાય છે કે ભમરાઓ ગાન કરવામાં હોંશિઆર હોય છે, અને પ્રભુની પ્રિયાઓ-ગોપીજનો-તે ગાન સમજી શકે છે.

નૃત્યના આરંભમાં ગોપીજનોની શોભાનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કર્ણ’. અન્યથા-જો શોભાનું વર્ણન કરવામાં ન આવે તો-પહેલાં વર્ણવેલા નૃત્યથી થાકી ગએલાં ગોપીજનો ફરીથી નૃત્ય કરે તે અયોગ્ય જ થાય, તેમ જ તે રસમય ન થાય. કર્ણ ઉપર કમલનું જે સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે તે કમલ પડી ન જાય એ પ્રકારની હોંશિઆરી દર્શાવવાને માટે છે. આ કમલની સાથે રહેનારા કેશો ભમરાની માફક રસનું પાન કરનારા છે. આ કેશોના વિટંક-અલંકારરૂપ સ્થાન, શોભા આપનારું સ્થાન-એવા બે ગાલ; તેના ઉપર નૃત્યમાં આસક્તિને લીધે ધર્મ-અંદર થએલા શ્રમથી ઉત્પન્ન થતો પરસેવો-થયો. જેમ મોતીને લીધે બે ગાલ શોભે છે તેમ આ બધાં કારણોને લીધે ગોપીજનોના મુખ ઉપર એક પ્રકારની અલૌકિક શોભા ઉત્પન્ન થઈ.

ગાલ ઉપર જે પરસેવો થયો તેનાથી ગોપીજનોનું મુખ શોભાયમાન થયું એમ કહેવાથી સ્પષ્ટ થાય છે કે ગોપીજનોના મુખ ઉપર શ્રમ-સ્વાનતા, કરમાઈ ગએલાપણું-ન હતો. ગોપીજનોની સાથે જ્યારે ભગવાન્ નૃત્ય કરે છે ત્યારે આ પરસેવો ગોપીજનના મુખની શોભા દર્શાવીને ચુંબન વિગેરેનો અનુભવ કરાવે છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનો પરસેવાથી શોભે છે અને તેમને થાક લાગતો નથી એમ કહેવાથી એટલું તો સૂચિત થાય છે કે રસના આવેશથી આ પણ નૃત્ય થાય છે, એટલે ભગવાનની હાજરીમાં પ્રથમની ક્રીડા પોતાની મેળે જ તિરોહિત થઈ જાય છે. (અથવા ‘ક્રીડાનિવૃત્તિ:’ એ સમાસમાં ‘ક્રીડા’ અને ‘અનિવૃત્તિ’ એ શબ્દો લેવા, અને આ પ્રમાણે અર્થ કરવો:- ગોપીજનોને શ્રમ નથી લાગ્યો એમ સૂચન કરવાથી ગોપીજનોની પ્રથમની ક્રીડા દૂર થઈ શકતી નથી એમ જણાય છે. લેખકાર વલ્લભજી ‘સ્વતો વા’નો સંબંધ ‘ક્રીડાનિવૃત્તિ:’ની સાથે કરતા નથી પણ સ્વતંત્ર વાક્ય તરીકે જ લે છે અને આ પ્રમાણે અર્થ કરે છે:- ગોપીજનોનું મુખ પરસેવાથી શોભે છે એમ કહેવાનું બીજું પણ પ્રયોજન છે અને તે એ કે આ નૃત્યમાં ભગવાન્ પ્રધાન છે. મૂલ શ્લોકમાં જે ‘સમમ્’ પદ છે તેનો અર્થ તુલ્ય કરવાનો છે.)

ભગવાનની સાથે ગોપીજનોએ નૃત્ય કર્યું એમ કહેવાથી જણાય છે કે

ગોપીજનોએ ભગવાનની માફક નૃત્ય કર્યું તે પોતાની મેળે નહિ, પહેલાં નૃત્યની તાલીમ લીધેલી હતી તેથી નહિ, (કારણ કે ગોપ જાતિમાં અને તેમાં પણ કુલીન સ્ત્રીઓમાં નૃત્યનું શિક્ષણ સંભવિત નથી), પરંતુ ભગવાનને લીધે જ કર્યું; અર્થાત્ તેમનામાં એવો રસ પ્રકટ થયો કે તેને લીધે જ તેમનામાં પોતાની મેળે જ નૃત્ય થયું. આ પ્રમાણે ગોપીજનો ભગવાનની તુલ્ય હોવાથી શુકદેવજી કહે છે કે ‘ભગવતા સમમ્’, જે જે પ્રકારે ભગવાન્ નૃત્ય કરવા લાગ્યા તે તે પ્રકારે ગોપીજનો પણ નૃત્ય કરવા લાગ્યાં. ૧૬.

આ પ્રમાણે રસ પ્રકટ થતાં તે રસ વધારે પ્રકટ થાય તેટલા માટે કામને સાક્ષાત્ પ્રકટ કરે છે એ પ્રમાણે કામશાસ્ત્રમાં વર્ણવેલી આલિંગન વિગેરે ચેષ્ટાઓનું વર્ણન શુકદેવજી ‘એવમ્’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

એવં પરિષ્વગ્-કરાભિમર્શ-સ્નિગ્ધેક્ષણોદામ-વિલાસ-હાસૈઃ ॥

રેમે રમેશો વ્રજસુન્દરીભિઃ યથાર્ભકઃ સ્વપ્રતિભિમ્બવિભ્રમઃ ॥૧૭॥

જેમ બાલક પોતાના પ્રતિબિંબ સાથે રમે છે તેમ લક્ષ્મીપતિ ભગવાને આલિંગન, હસ્તથી સ્પર્શ, સ્નેહવાળાં કટાક્ષ, ઉદામ વિલાસ, હાસ્ય વિગેરેથી ગોપીજનો સાથે રમણ કર્યું. ૧૭.

આલિંગન વિગેરેનું ત્યાં વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. આને માટે જ-રસ પ્રકટ કરવાને માટે જ-પરિષ્વંગ, આલિંગન, કરવામાં આવ્યું છે. પછીથી હસ્તથી સ્પર્શ કરવામાં આવ્યો; અર્થાત્ ગોપીજનના જુદા જુદા અવયવોનો ભગવાનના શ્રીહસ્તે સ્પર્શ કર્યો. પછીથી ભગવાને સ્નેહવાળાં કટાક્ષ-ભાવને પ્રકટ કરનારાં કટાક્ષ-કેંક્યાં. પછીથી ઉદામ વિલાસ-મર્યાદારહિત ભોગ-કરવામાં આવ્યો. પછીથી જેમના મનોરથો પૂર્ણ થયા છે એમનું હાસ્ય થયું. આ પ્રમાણે આલિંગનથી માંડીને હાસ્ય સુધીની બધી ક્રિયાઓ સર્વ ગોપીજન સાથે ભગવાને કરી.

અરે! ભગવાને પ્રાકૃત ગોપીજનો સાથે કેવી રીતે રમણ કર્યું? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘રમેશઃ’, ભગવાન્ રમાના-લક્ષ્મીજના-ઈશ છે. ભગવાનની આજ્ઞાથી લક્ષ્મીજીએ પણ સર્વ ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કર્યો. ગોપીજન પણ અધિષ્ઠાને માટે-લક્ષ્મીજીને પ્રવેશ કરવાને માટે-યોગ્ય છે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘વ્રજસુન્દરીભિઃ’.

અરે! ભગવાન્ તો આત્મારામ છે, તો તેમણે આ ગોપીજનો સાથે કેમ રમણ કર્યું? લક્ષ્મીજી તો બ્રહ્માનંદ છે, તેથી તેમની સાથે ભગવાન્ રમણ કરે તે તો યોગ્ય પણ છે; વળી આ ગોપીજનોમાં લક્ષ્મીજીનો આવેશ પણ અયોગ્ય છે, કારણ

કે ગોપીજનોમાં બ્રહ્મભાવ નથી. આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યથાર્ભકઃ.’ બાલક ખરેખર દર્પણ, જલ વિગેરે પોતાની સામે મૂકીને તેમાં પોતાની જાતને જોઈને રમે છે. તે જ પ્રમાણે ભગવાન્ પણ પોતાનું સામર્થ્ય-શક્તિ-અથવા પોતાનું સ્વરૂપ પોતાની આગળ મૂકીને રમણ કરે છે, અથવા તો બ્રહ્મ અને બ્રહ્માનંદને પ્રકટ કરીને રમણ કરે છે.

અરે! આ લક્ષ્મીજીએ જેમનામાં પ્રવેશ કરેલો છે એવાં ગોપીજનોની સાથે રમણ-પણ અયોગ્ય છે. આનાથી શું ફલ? આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યથાર્ભકઃ, ભગવાને જે પ્રમાણે બાલલીલા કરી તે પ્રમાણે આ લીલા પણ કરી એમ તાત્પર્ય છે.

અથવા તો શ્લોકનો બીજો અર્થ આ પ્રમાણે થઈ શકે. ભગવાનનું લક્ષ્મીજીની સાથેના અને ગોપીજન સાથેના રમણમાં કદાચિત્ સરખો પ્રકાર હોય, છતાં પણ આ રસનો અનુભવ લક્ષ્મીજીમાંથી મળી શકતો નથી, પરંતુ આ ગોપીજનોમાંથી જ મળી શકે છે એ દર્શાવતાં શુકદેવજી ‘રમેશો વ્રજસુન્દરીભિઃ’ એ બે પદ મૂકે છે. રમેશ એટલે રમાના ઈશ, સ્વામી, અર્થાત્ ભર્તા. ગોપીજનો તો વ્રજના સંબંધવાળી-અન્યની સાથે સંબંધવાળી-સુંદરીઓ છે, કાંઈ ભગવાનની પરણેલી સ્ત્રીઓ નથી. ભગવાન્ જ્યારે લક્ષ્મીજીની સાથે રમણ કરે છે ત્યારે આ પ્રકારના રસનો અનુભવ બંનેયને-ભગવાન્ અને લક્ષ્મીજીને-સંભવતો નથી, કારણ કે રસનું સ્વરૂપ જ તે પ્રકારનું છે. અરે! ઈશ્વરને વિષે આ પ્રકારનું રમણ અયોગ્ય છે; આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યથાર્ભકઃ. સમ્મુષ્ણન્ નવનીત-મન્તિકમણિસ્તમ્ભે સ્વભિમ્બોદ્ગમં દષ્ટ્વા’-માખણ ચોરતાં પાસેના મણિના સ્તંભમાં પોતાનું સ્વરૂપ જોઈને-એ વાક્યમાં જે પ્રમાણે ભગવાનની મુઝ લીલાનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, ભગવાન્ પૂર્ણજ્ઞાનવાળા છે છતાં પણ તે રસનું સ્વરૂપ તે પ્રકારનું હોવાથી તે મુઝલીલા કરે છે, તે પ્રમાણે આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ‘રસો વૈ સઃ’ એ શ્રુતિને આધારે આ બધું રસમાં મળેલું હોવાથી સ્વરૂપાત્મક જ છે, એટલે ભગવાને રમણ કર્યું એમ કહેવામાં આવ્યું છે, અને તેમાં કોઈ પણ જાતની અયોગ્યતા નથી, કારણ કે તે વિષે શંકા જ થતી નથી. આ ઉપરથી એટલું જ જણાય છે કે પ્રભુ અને પ્રભુનો ભાવ જે પ્રકારના છે તે જ પ્રકારનાં આ ગોપીજન અને તેમનો ભાવ છે, કારણ કે પ્રતિબિંબનો સ્વભાવ તે પ્રકારનો છે.

અહિં બધાંય ગોપીજનોનું રમણ એક જ વખતે થાય છે, અને બંને જણનું-ભગવાન્ અને એક ગોપીજનનું-રમણ પણ થાય છે. (નૃત્ય દરેકનું થાય છે,

અને રમણ સમુદાયથી થાય છે એમ ભાવ છે). રમણ પણ દરેકનું થશે એમ શુકદેવજી આગળ ઉપર કહેશે.

(આ પ્રમાણે સર્વભાવથી રમણ કરીને જે રસ પ્રકટ થાય છે તે તો બંને-ભગવાન્ અને ગોપીજન-તુલ્ય હોય તો જ બની શકે, પણ એક ન્યૂન હોય, અર્થાત્ ગોપીજન પ્રાકૃત હોય, અને બીજો અધિક હોય અર્થાત્ ભગવાન્ અપ્રાકૃત હોય, તો રસ પ્રકટ થઈ શકે નહિ. ‘ન તત્સમઃ’-કોઈ પણ પદાર્થ ભગવાનની તુલ્ય નથી-ઈત્યાદિ શ્રુતિ ઉપરથી જણાય છે કે આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં કોઈ પણ પદાર્થ ભગવાનની તુલ્ય નથી; તો પછી આ રમણમાં રસ શી રીતે પ્રકટ થશે? આ શંકાનું નિરાકરણ કરતાં શ્રીગોસ્વામિજી ટિપ્પણીમાં આજ્ઞા કરે છે કે લક્ષ્મીજી બ્રહ્માનંદરૂપ હોવાથી અપ્રાકૃત છે, ભગવાન્ રમાના ઈશ છે એટલે એકલા અપ્રાકૃત પદાર્થની સાથે જ રમણ કરવાનો ભગવાનનો સ્વભાવ છે; આ શ્લોકમાં પણ ભગવાનના રમણનું વર્ણન છે, એટલે સિદ્ધ થાય છે કે જે ગોપીજનો સાથે ભગવાને રમણ કર્યું તે ગોપીજનો પણ અપ્રાકૃત જ છે. મૂલ શ્લોકમાં ‘રમે રમેશઃ’ એ પ્રમાણે બે પદાર્થોનું સાથે વર્ણન કરેલું હોવાથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ભગવાનનો રમણ કરવાનો સ્વભાવ અસાધારણ છે; ભગવાન્ અપ્રાકૃત પદાર્થની સાથે જ રમણ કરે છે. ગોપીજનો અપ્રાકૃત છે એ બાબતમાં શંકાને સ્થાન જ નથી, કારણ કે લક્ષ્મીજી પણ આ ગોપીજનોના દ્વારા જ ભગવાનની સાથે સંબંધ પ્રાપ્ત કરી શક્યાં છે. ભગવાનની આજ્ઞાથી જ લક્ષ્મીજીએ ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કર્યો છે, અને એ બાબત ‘શ્રયત ઈન્દિરા’ (ભાગ. ૧૦|૨૮|૧) એ શ્લોકમાં કહેવામાં આવેલી છે. ભગવાનનો ગોપીજનો વિષે ઘણો પ્રેમ છે એ જોઈને લક્ષ્મીજી પોતે ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કરીને તેમના દ્વારા ભગવાનની સાથે સંબંધ પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા રાખતાં હતાં, છતાં પણ ગોપીજનો મહાન્ છે એવી સ્ફુર્તિ થવાથી લક્ષ્મીજીએ પોતે તેમનામાં પ્રવેશ કર્યો નહિ; પરંતુ લક્ષ્મીજીની આર્તિ જોઈને તે આર્તિ દૂર કરવાને માટે ભગવાને લક્ષ્મીજીને ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કરવાની આજ્ઞા કરી અને તેથી જ લક્ષ્મીજીએ ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કર્યો. ગોપીજનો લક્ષ્મીજીના પ્રવેશ માટે યોગ્ય છે એમ કહેવાથી ગોપીજનો લક્ષ્મીજીના કરતાં નીચાં છે એમ સમજવાનું નથી; આ પ્રમાણે કહેવાથી તો ગોપીજનોની લક્ષ્મીજીના કરતાં ઉત્તમતા સિદ્ધ થાય છે. જો નગરની સ્ત્રીઓની માફક ‘અમારા વિના બીજા કોઈની સાથે ભગવાનનો સંબંધ ન થાવ’ એવા પ્રકારની ગોપીજનોના હૃદયમાં કુટિલતા હોત તો લક્ષ્મીજી તેમનામાં પ્રવેશ કરી શકત નહિ. ભગવાને વ્રજનો સર્વ રીતે અંગીકાર કરેલો છે અને ગોપીજનો આ વ્રજમાં રહેનારાં

છે, એટલે તેમનામાં અતિ સૌજન્ય વિગેરે ગુણો રહેલા છે, અને તેથી તેમનું આરાધન સુખેથી થઈ શકે છે. તેથી જ લક્ષ્મીજી તેમનામાં પ્રવેશ કરી શકે છે. ગોપીજનો લક્ષ્મીજીના કરતાં હલકાં છે એ અભિપ્રાયથી જો એમ કહેવામાં આવ્યું હોય કે ગોપીજનો લક્ષ્મીજીના પ્રવેશ માટે યોગ્ય છે તો મૂલ શ્લોકમાં શુકદેવજી ‘વ્રજ’ પદ મૂકત નહિ, ફક્ત ‘કિલ સુન્દરીભિઃ’ એટલું જ કહેત. પણ મૂલ શ્લોકમાં ‘વ્રજ સુન્દરીભિઃ’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું હોવાથી લક્ષ્મીજીના કરતાં ગોપીજનોની ઉત્તમતા સ્પષ્ટ જણાઈ આવે છે. આ પ્રમાણે હોવાથી, જો કે ‘ન તત્સમઃ’-કોઈ પણ પદાર્થ ભગવાનની તુલ્ય નથી-ઈત્યાદિ શ્રુતિવાક્યોથી કોઈ પણ પદાર્થની ભગવાનની સાથેની તુલ્યતાનો નિષેધ કરવામાં આવેલો છે, છતાં પણ ‘નિરજ્ઞનઃ પરમં સામ્યમુપૈતિ’-જે નિર્લેપ હોય છે તે ભગવાનની સાથે પરમ તુલ્યતા પ્રાપ્ત કરે છે- (મુંડક ૩।૩) એ શ્રુતિને આધારે જ્યારે ભગવાન જીવનું વરણ કરે છે ત્યારે જીવ નિરંજન થઈને ભગવાનના જેવો જ થઈ જાય છે. તેથી ગોપીજનો ભગવાનની તુલ્ય છે, એટલે તેમની સાથેના રમણમાં રસ પ્રકટ થવામાં કોઈ જાતની હરકત નથી.

આ પ્રમાણે રસના પ્રાકટ્યનો વિચાર કરીએ ત્યારે જણાય છે કે ભગવાનનું રમણ બીજાઓને માટે છે, અને આવા પ્રકારનું રમણ તો છઠ્ઠીસમા અધ્યાયમાં જ ‘અરીરમત્’ એ પદ દર્શાવે છે; આ અધ્યાયમાં વર્ણન કરવામાં આવેલા રમણમાં તો ‘રેમે’ એમ આત્મનેપદનો પ્રયોગ થયેલો છે અને તે બતાવે છે કે રમણરૂપી ક્રિયાનું ફલ કર્તાને-રમણ કરનાર ભગવાનને-મળે છે; તેથી આ અધ્યાયનું રમણ ભગવાનને પોતાને માટે જ છે, બીજાને માટે નથી. આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો તેને દૂર કરવાને માટે મૂલ શ્લોકમાં બાલકનું દષ્ટાંત આપવામાં આવેલું છે. ગોપીજનો ભગવાનની માફક અપ્રાકૃત છે તેથી તે બેની વચ્ચે સરખાપણું છે, છતાં પણ ગોપીજનો ભગવાનથી ભિન્ન છે એટલે ભિન્ન પદાર્થની સાથે જો ભગવાન રમણ કરે તો ભગવાનનું આત્મારામપણું જતું રહે. આ શંકાનું સમાધાન એ કે ગોપીજનો લક્ષ્મીજીની માફક ભગવાનના ધર્મરૂપ છે, અને તેથી તે ભગવાનથી ભિન્ન નથી, એટલે ભગવાનના આત્મારામત્વનો ભંગ નહિ થાય. આ ઉપરથી એવો સિદ્ધાંત નીકળે છે કે જે પદાર્થ ભગવાનનો ધર્મ નથી તે પદાર્થની સાથે ભગવાન કોઈ દિવસ રમણ કરતા નથી.

આ રસ પ્રાપ્ત કરવાને માટે ભગવાને લક્ષ્મીજીને ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કરવાની આજ્ઞા આપી; પણ આ આજ્ઞા અસંભવિત છે, કારણ કે ભગવાન અને લક્ષ્મીજી એ બંનેયનો દંપતીભાવ જાગૃત રહેલો છે. આ પ્રમાણે હોવાથી ભગવાનમાં પણ પહેલાના કરતાં જુદા પ્રકારનો ભાવ ઉત્પન્ન થાય અને તેથી રસાભાસ થવાનો



પ્રસંગ આવે, એટલે ભગવાને લક્ષ્મીજીને ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કરવાની જે આજ્ઞા આપી તે પહેલાંના રસનો પણ ભંગ કરે છે. પોતાના બાવલાનો સ્પર્શ પણ જે ગાય સહન ન કરે તે શીકા ઉપર મૂકેલા દૂધને પણ પાણીમાં જેમ નાખી દે છે તેમ ભગવાનની આ આજ્ઞા પૂર્વ રસનો પણ નાશ કરનાર છે. વળી, બ્રહ્મભાવ હોય તો જ બ્રહ્માનંદનો આવિર્ભાવ થાય, લક્ષ્મીજી બ્રહ્માનંદરૂપ છે, પણ ગોપીજનો તો બ્રહ્માનંદથી અધિક એવા ભગવદ્રસવાળાં છે, તો પછી લક્ષ્મીજીનો ગોપીજનોની સાથે સંબંધ થાય એમ કહી શકાય એમ નથી. આ પ્રમાણે વાદી ‘નન્વેતદપ્યનુચિતમ્’ ઈત્યાદિ સુબોધિનીજીની પંક્તિમાં શંકા કરે છે. તેનું સમાધાન બાલકના દષ્ટાંત વડે કરવામાં આવે છે. દર્પણ વિગેરેમાં ઘર વિગેરે બીજા પદાર્થોનાં પ્રતિબિંબો પડેલાં છે છતાં પણ બાલક પોતાના પ્રતિબિંબને જુએ છે અને તેમાં જ રમણ કરે છે, પોતાના પ્રતિબિંબથી ભિન્ન પ્રતિબિંબોમાં રમતો નથી. આ હેતુથી જ મૂલ શ્લોકમાં પ્રતિબિંબના આગળ ‘સ્વ’-પોતાનું-એ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. તેવી જ રીતે ગોપીજનોમાં લક્ષ્મીજીનો સમાગમ થએલો છે છતાં પણ રસરૂપ ભગવાન જ્યાં રસાત્મક ભાવ જુએ છે ત્યાં જ-ગોપીજનોમાં જ-તેમના જેવા ભાવવાળી ચેષ્ટા કરીને રમણ કરે છે; તે વખતે ભગવાનને લક્ષ્મીજીની સ્ફૂર્તિ પણ થતી નથી, અને તેથી લક્ષ્મીજી પોતાની ભાર્યા છે એ જ્ઞાનથી પૂર્વરસનો નાશ થશે નહિ. આ રસનો સ્વભાવ જ એવા પ્રકારનો હોવાથી ભગવાન તે પ્રમાણે જ રમણ કરે છે, કારણ કે બાલકનો સ્વભાવ પણ તેવા જ પ્રકારનો છે, અને ભગવાન અહિં બાલકના જેવી જ લીલા કરે છે. લક્ષ્મીજીને તો ભગવાનમાં પતિ તરીકેનો ભાવ હોવાથી મુખ્ય રસ મળી શકતો નથી, અને તેથી જ ઉદ્ધવજી કહે છે કે ‘ભગવાનનો આ પ્રસાદ લક્ષ્મીજીને પણ મળતો નથી’ (ભાગ. ૧૦|૪૪|૬૧). જેમને વિષે પતિભાવ છે એવા પ્રિય ભગવાનના સંબંધમાં આવેલા વ્રજંગનાઓના સંબંધથી જ લક્ષ્મીજીને પહેલાં નહિ અનુભવેલો એવો અવર્ણનીય આનંદ પ્રાપ્ત થયો, અને તેથી તે બીજું બધું ભૂલી ગયાં. આ ઉપરથી સિદ્ધ થાય છે કે લક્ષ્મીજીના પ્રવેશથી ગોપીજનોના ભાવમાં કોઈ જાતની વિલક્ષણતા આવીને પૂર્વરસનો નાશ થતો નથી. વળી, દર્પણ વિગેરે જે પ્રતિબિંબનો આશ્રય છે તેને પ્રતિબિંબનું જ્ઞાન હોય એવું લોકમાં કોઈ પણ ઠેકાણે જોવામાં આવતું નથી, કારણ કે જ્ઞાન એ આત્માનો ધર્મ હોવાથી પ્રતિબિંબના આશ્રયમાં જ્ઞાન સંભવતું નથી. તેથી લક્ષ્મીજીના પ્રવેશનું અધિષ્ઠાન બનેલાં ગોપીજનોને લક્ષ્મીજી વિષેનું જ્ઞાન હોઈ શકે નહિ એમ સિદ્ધ થાય છે.

ભલે, ગોપીજનોને લક્ષ્મીજીના પ્રવેશનું જ્ઞાન ન હોય, પણ ભગવાન તો

સર્વજ્ઞ હોવાથી તેમને લક્ષ્મીજીના પ્રવેશનું જ્ઞાન ન હોય એ વાત ઘટતી નથી. ભગવાને આ ગોપીજનોને તાંબૂલનું દાન કર્યું છે તેથી તેઓને-ગોપીજનોને-પણ લક્ષ્મીજીના પ્રવેશનું જ્ઞાન ન હોય એ ઘટતું નથી. આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. ગોપીજનોને અને ભગવાનને લક્ષ્મીજીના પ્રવેશનું જ્ઞાન હોય તો પણ તેમાં કોઈ જાતની હાનિ નથી, કારણ કે રસાભાસ અને ભાવાભાસથી મુખ્ય રસનું પોષણ થાય છે. લક્ષ્મીજીએ ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કર્યો અને તેથી ગોપીજનોને એક ક્ષણ એમ લાગી જાય કે અમારામાં લક્ષ્મીજીએ પ્રવેશ કર્યો છે. ગોપીજનોનો આ પૂર્વક્ષણનો ભાવ ઉત્તર ક્ષણમાં ઉત્પન્ન થનારા વિશિષ્ટ પ્રકારના રસનો અનુભવ કરાવે છે, તેથી તે ઈષ્ટ જ છે. તેથી જેમ કોઈ અદ્ભુત ગાય પોતાના બાવલામાંથી નીકળતી દૂધની ધારાથી શીંકા ઉપર મૂકેલાં વાસણો પણ ખૂબ ભરી દે છે તેમ ભગવાને ગોપીજનોમાં પ્રવેશ કરવાની લક્ષ્મીજીને જે આજ્ઞા આપી છે તે સર્વ રીતે વધારે યોગ્ય છે.

ગોપીજનોમાં બ્રહ્મભાવ નથી તેથી બ્રહ્માનંદરૂપ લક્ષ્મીજીનો તેમની સાથે સંબંધ થઈ શકે નહિ એમ જે શંકા કરવામાં આવી હતી તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. લક્ષ્મીજી કાંઈ બ્રહ્મભાવરૂપી સાધનથી પ્રકટ થતો બ્રહ્માનંદ નથી, કારણ કે તે આનંદ તો સાધનવાળા પુરુષોમાં પણ પ્રકટ થાય છે. લક્ષ્મીજીનો ભાવ એકલા પુરુષોત્તમમાં જ છે; અને પુરુષોત્તમ રસાત્મક હોવાથી જે પ્રકારનો તે રસ હોય તે પ્રમાણે જ બ્રહ્માનંદનું વર્ણન કરવું જોઈએ. સ્નિગ્ધ દંપતીભાવ પણ રસનો એક પ્રકાર છે, તેથી લક્ષ્મીજી સ્નિગ્ધ દંપતીભાવરૂપી આનંદ પ્રકટ કરનારાં છે. વળી, ‘અર્ધો વા એષ આત્મનો યત્પત્ની’-પત્ની આત્માનો અર્ધો ભાગ છે-એ શ્રુતિને આધારે પણ સિદ્ધ થાય છે કે લક્ષ્મીજી પોતે પણ ભગવાનનો અર્ધો ભાગ હોવાથી આનંદરૂપ છે. બ્રહ્મની, પુરુષોત્તમની, જે શક્તિ તે રમા, અને રમાને જ બ્રહ્માનંદ કહેવામાં આવે છે. આ ઉપરથી જણાય છે કે આ પ્રકારનાં લક્ષ્મીજીનો ગોપીજનો સાથે સંબંધ કરવાની યોગ્યતા છે, એટલે તેમનો ગોપીજનમાં પ્રવેશ ઘટી શકે છે. ગોપીજન અને ભગવાનને લક્ષ્મીજીનું જ્ઞાન નથી એ પક્ષ સ્વીકારીને ‘બાલકો હિ’ એ શબ્દોથી આરંભીને ‘સ્થાપયિત્વા’ એ શબ્દ સુધીની સુબોધિનીજીની પંક્તિઓનું વ્યાખ્યાન કરવામાં આવ્યું. હવે ગોપીજન અને ભગવાનને લક્ષ્મીજી વિષેનું જ્ઞાન છે એ પક્ષ સ્વીકારીને ‘બ્રહ્મ’ ઈત્યાદિ પદો વડે સુબોધિનીજીમાં વર્ણન કરવામાં આવે છે. અહિં ‘બ્રહ્મ’ પદનો અર્થ આ પ્રમાણે છે:- ઉદ્દીપક અને અનુભવ કરાવનાર વાણી અને કૃતિથી પ્રકટ થએલો, અને વ્યભિચારિભાવથી પુષ્ટ થએલો, મુખ્ય રસ. આ રસ વિકારરહિત અને નિત્ય છે એ જણાવવાને માટે સુબોધિનીજીમાં ‘બ્રહ્મ’ પદ મૂકવામાં

આવેલું છે. ‘બ્રહ્માનન્દ’ પદનો અર્થ આ પ્રમાણે છે:- પહેલાં જણાવેલો, મુખ્ય રસને પોષણ આપનાર, લક્ષ્મીજીના આવેશથી ઉત્પન્ન થયેલો વિશિષ્ટ ભાવ. આ બધાનું તાત્પર્ય એ કે પ્રથમ પક્ષમાં-ભગવાનને અને ગોપીજનને લક્ષ્મીજી વિષેનું જ્ઞાન નથી એ પક્ષમાં-લક્ષ્મીજીનું ગોપીજનોમાં મૂર્તરૂપે સ્થાપન કરવામાં આવ્યું નથી, પરંતુ પોતાના-ભગવાનના-અમૂર્ત સામર્થ્યરૂપે અથવા પોતાના સ્વરૂપે સ્થાપન કરવામાં આવ્યું છે. દ્વિતીયપક્ષમાં-ભગવાનને અને ગોપીજનને લક્ષ્મીજી વિષે જ્ઞાન છે એ પક્ષમાં-મુખ્યરસને અને તેને પોષણ કરનારને પ્રકટ કરીને ભગવાને રમણ કર્યું.

ગોપીજનોમાં ભગવાન્ પોતાનું સામર્થ્ય વિગેરે સ્થાપીને જ રમણ કરે તો પછી ગોપીજનો પોતે ઉત્તમ નાયિકાઓ કહેવાય છે, અને ભગવાનને પોતાનું સામર્થ્ય વિગેરેનું સ્થાપન કરવું પડે છે તેથી તેમને ઉત્તમ રસનો અનુભવ ન થવાનો પ્રસંગ આવે છે; તેથી શ્રીમદાપ્રભુજી સુબોધિનીજીમાં બીજો પક્ષ આપે છે. ભગવાન્ ગોપીજનોમાં પોતાનું સામર્થ્ય વિગેરે મૂકીને રમણ કરે તો ભગવાનને ક્લેશ પ્રાપ્ત થાય તેથી તે યોગ્ય નથી. વળી, ગોપીજનોને માટે જ ભગવાન્ આ લીલા કરે છે, તો પછી લક્ષ્મીજીનો પ્રવેશ કરાવીને રમણ કરવામાં ભગવાને ગોપીજનોને શું ફલ આપ્યું? આ શંકાનું નિરાકરણ ‘યથાર્ભકઃ’ એ દષ્ટાંતથી કરવામાં આવે છે. જ્યારે યશોદા, રોહિણી વિગેરે હાજર હોય છે ત્યારે ભગવાનના મનમાં તેમની હાજરીથી સંકોચ થાય છે અને તેથી ગોપીજનો સાથે પોતે આલિંગન વિગેરે કરી શકતા નથી, પણ દુઃખી થતાં આ ગોપીજનોની આર્તિ દૂર કરવાને માટે ભગવાન્ બાલભાવ દ્વારા ગોપીજનોનાં વક્ષઃસ્થલ ઉપર અનેક પ્રકારના વિહાર કરે છે. આ વખતે રસમાર્ગની રીતે જ ગોપીજનોના રસની પૂર્તિ થાય છે અને તેમની આર્તિ દૂર થાય છે, જ્યારે બીજાં માણસોને તો ભગવાનની વિચિત્ર બાલચેષ્ટાનું ભાન થવાથી ફક્ત બાલલીલાના રસનો જ અનુભવ થાય છે. આ પ્રમાણે આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ ગોપીજનોને પોતાના રસના ભાવને અનુકૂલ જ રસનો અનુભવ થાય છે, જ્યારે લક્ષ્મીજીને તો આ પ્રસંગથી પોતાના ભાવને અનુકૂલ જ રસનો અનુભવ થાય છે. આ પ્રકારે શ્લોકમાં બે દષ્ટાંત આપવામાં આવેલાં છે. જેમ ભગવાન્ બાલભાવથી રમ્યા એ એક દષ્ટાંત; અને લૌકિક બાલકની માફક ભગવાન્ રમ્યા એ બીજું દષ્ટાંત. સાંનિધ્યને લીધે, પાસે હોવાને લીધે, ‘અર્ભક’-બાલક-નું જ દષ્ટાંત તે પ્રકારનું છે-લૌકિક-છે એમ દર્શાવવા ‘યથા’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. અહિં ‘અર્ભક’ પદની આવૃત્તિ કરવાની છે, અને તે આવૃત્તિથી બીજું લૌકિક દષ્ટાંત મળે છે. ‘અર્ભક’ પદ બે વાર વાંચવું; પહેલા ‘અર્ભક’ પદથી ભગવાનની બાલલીલાનો બોધ થાય છે, અને

બીજા ‘અર્ભક’ પદથી લૌકિક બાલકનું દષ્ટાંત મળે છે. લૌકિક બાલકના દષ્ટાંતનું વર્ણન શ્રીમહાપ્રભુજીએ પહેલાં આપેલું છે તેથી ફરીથી તે લૌકિક દષ્ટાંત આ સ્થલે આપતા નથી.

ઉપર જણાવ્યું તે પ્રમાણે પણ ગોપીજનોમાં લક્ષ્મીજનો પ્રવેશ થયો એમ સ્વીકારવામાં આવે તો લક્ષ્મીજનો ગોપીજનોમાં પ્રવેશ થયો તેથી જ ગોપીજનોની રમણને માટે યોગ્યતા સિદ્ધ થઈ એમ કોઈને શંકા થાય, તેથી શ્લોકનું બીજું તાત્પર્ય ‘યદ્વા’ ઇત્યાદિ શબ્દોમાં આપવામાં આવે છે.) ૧૭.

આ પ્રમાણે સર્વભાવથી ભગવાનનો અને ભગવાનના ધર્મોનો-સ્વરૂપાનંદનો અને ઐશ્વર્ય વિગેરે ભગવાનના ધર્મોનો-ગોપીજનોમાં પ્રવેશ થયો, એટલે ગોપીજનો પોતાનો દેહ વિગેરે ભૂલી ગયાં અને મહારસના અભિનિવેશને લીધે તેમને જે ફલ મળ્યું તેનું વર્ણન ‘તદ્દ્ગ’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કરે છે :

તદ્દ્ગ-સદ્ગ-પ્રમદાકુલેન્દ્રિયાઃ કેશાન્ દુકૂલં કુચપટ્ટિકાં વા ।

નામ્નઃ પ્રતિવ્યોદુમ્ અલં વ્રજસ્ત્રિયો વિસસ્તમાલાભરણાઃ કુરૂદ્દલ ॥૧૮॥

હે કુરુશ્રેષ્ઠ! ભગવાનના શ્રીઅંગના સંગથી ઉત્પન્ન થએલા મદને લીધે જેમની ઇન્દ્રિયો વ્યાકુલ થઈ ગઈ છે, અને જેમની માલા તથા આભરણ ખસી ગયાં છે એવાં ગોપીજનો પોતાનો કેશ, પહેરેલાં વસ્ત્ર અને ચોળીઓને પોતાના સ્થાન ઉપર બરોબર રાખી શક્યાં નહિ. ૧૮.

તેમના-ભગવાનના-શ્રીઅંગના સંગને લીધે જ પુષ્કળ મદ-દેહ વિગેરેને ભૂલાવે એવો ભાવ-ઉત્પન્ન થયો, તેથી જેમની ઇન્દ્રિયો આકુલ થઈ છે એવાં ગોપીજનો છે. અર્થાત્ બધાં ગોપીજનોને હવે શું કરવું એની સુઝ પડી નહિ. તેથી તે ગોપીજનો પોતાના સુંદર કેશ, પહેરેલાં વસ્ત્ર અને ચોળીઓને પોતે સારી રીતે યોગ્ય સ્થાન ઉપર રાખી શક્યાં નહિ. (મૂલ શ્લોકમાં ‘વ્યોદુમ્’ પદ છે. વાસ્તવિક રીતે ‘વિવોદુમ્’ પદ છે, અને તેમાંથી ‘વ’ નો છાંદસ પ્રકારે લોપ થતાં ‘વ્યોદુમ્’ પદ સિદ્ધ થએલું છે.)

ફરીથી થોડાક જ વિહારને લીધે ગોપીજનોની ઇન્દ્રિયો આકુલ થઈ ગઈ; તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘વ્રજસ્ત્રિયઃ’. (પંદરમા શ્લોકમાં નૃત્ય વિગેરે બંધ થયું એમ કહેવાથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ગોપીજનોની ઇન્દ્રિયો આકુલ થઈ ગઈ. સોળમા શ્લોકમાં પાછો ફરીથી ગોપીજનોનો ભાવ જાગૃત થયો. સત્તરમા શ્લોકમાં તેમણે વિહાર કર્યો એમ કહેવામાં આવ્યું; અને આ અઠારમા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું કે અલ્પ જ વિહારથી ગોપીજનોની ઇન્દ્રિયો આકુલ થઈ ગઈ. તેનું કારણ એ કે

ગોપીજનો વ્રજની સ્ત્રીઓ છે, અને વ્રજની સ્ત્રીઓમાં વિશુદ્ધ ભાવ હોય છે.)

ગોપીજનોને શ્રમ પણ થયો એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘વિન્નસ્તમાલાભરણા:’, ગોપીજનોની માલા અને આભરણ ખસી ગયાં. ગોપીજનોની ઈન્દ્રિયો આકુલ થએલી હોવાથી, રસોન્મુખ થવાથી, તેમને લૌકિક વિચાર થયો નહિ. (વસ્ત્ર ન હોય તો લોકની લાજ લાગવાનો સંભવ છે, પણ ગોપીજનોની ઈન્દ્રિયો આકુલ થએલી હોવાથી પોતાનાં વસ્ત્ર ખસી ગયાં છે તેનો વિચાર પણ તેમને થયો નહિ. આ વિચાર પ્રથમ છે.) ગોપીજનો પોતે વ્રજની સ્ત્રીઓ હોવાથી, ગોપિકાઓ હોવાથી, તેમને પારમાર્થિક વિચાર પણ થયો નહિ. (પારમાર્થિક વિચાર એ છેલ્લો વિચાર છે. જો કેશ છૂટા પડી જાય તો પરમાર્થના દોષનો સંભવ રહે છે; પરંતુ ગોપીજનો ગોપિકાઓ હોવાથી પ્રમેયમાર્ગને અનુસરનારાં હતાં, એટલે તેમને પોતાના વાળ છૂટા થઈ ગયા છે એનો પારમાર્થિક દષ્ટિએ વિચાર પણ થયો નહિ.) ગોપીજનો થાકી ગએલાં હતાં એટલે તેમને દૈલિક વિચાર પણ ન થયો. (દૈલિક વિચાર એ મધ્ય, બીજો, વિચાર છે. ચોળી ન હોય તો અવયવો-સ્તનો-આઘાં પાછાં થઈ જાય; પણ ગોપીજનોને શ્રમ થએલો હોવાથી પોતાની ચોળીઓ અવ્યવસ્થિત થઈ ગઈ છે એનો દૈલિક દષ્ટિએ વિચાર થયો નહિ.) તેથી આદિ, અંત અને મધ્યમાં (અર્થાત્ પહેરવાનું વસ્ત્ર, કેશ અને ચોળીઓ એ ત્રણના સ્થાનમાં) ગોપીજનોનાં વસ્ત્ર, કેશ અને ચોળીઓ જે હતાં તે ભગવાને જ ધારણ કરી રાખ્યાં, ગોપીજનોએ નહિ એ પ્રમાણે તાત્પર્ય છે. જો કે બીજા માણસો ને એમ લાગે કે વસ્ત્ર, કેશ અને ચોળીઓ ગોપીજનોએ જ ધારણ કરેલાં છે, પણ વાસ્તવિક રીતે ગોપીજનોએ પોતે તે બધું ધારણ કર્યું નથી, પણ ભગવાને જ તે બધાંને ટેકો આપીને ધારણ કરી રાખ્યાં છે.

શુકદેવજી ‘કુરૂદ્વલ’ એ પ્રમાણે જે સંબોધન કરે છે તે પરીક્ષિતને ભ્રમ ન થાય અને પોતે જે કહે છે તેમાં વિશ્વાસ આવે એટલા માટે છે. ૧૮.

આ પ્રમાણે સમુદાયલીલાનું વર્ણન કરીને, તે લીલાનું જ્ઞાન કોઈને પણ ન થયું એમ કહેવાને માટે શુકદેવજી ‘કૃષ્ણ’ એ શ્લોકમાં કહે છે કે દેવોની સ્ત્રીઓને અને ચંદ્રને વિસ્મય થયો. (ગંધર્વ વિગેરેને તો દર્શન જ થયાં નહિ, જ્યારે સ્ત્રીઓ અને ચંદ્રને વિસ્મય થયો; એટલે કોઈને પણ સમુદાયલીલાનું જ્ઞાન ન થયું.)

કૃષ્ણવિકીરિતં વીક્ષ્ય મુમુહુઃ ખેચરન્નિયઃ ।

કામાર્દિતાઃ શશાઙ્કશ્ચ સગણો વિસ્મિતોડભવત્ ॥૧૯॥

કૃષ્ણથી વિશેષ કીડા જોઈને આકાશમાં ફરનારા દેવોની સ્ત્રીઓ કામથી

પીડિત થઈને મોહ પામી; અને નક્ષત્ર સહિત ચંદ્ર પણ વિસ્મય પામ્યો. ૧૯.

ખરેખર, કોઈનો પણ પતિ પરમાનંદ-કૃષ્ણ-હોતો નથી. જેનામાં આનંદ નથી, અર્થાત્ જે આનંદમય શ્રીકૃષ્ણથી ભિન્ન છે, તે આનંદનું દાન, ખરેખર, કરી શકતો નથી, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ‘એષ હ્યેવાનન્દ્યાતિ’, આજ, આનંદ, પરમાત્મા, ખરેખર, આનંદ આપે છે. આ શ્રુતિમાં જે ‘એવ’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે તે આનંદથી, શ્રીકૃષ્ણ ભગવાનથી, ભિન્ન પદાર્થનો નિષેધ કરે છે. ભગવાનની ક્રીડામાં પણ વિશેષ ક્રીડા છે. ખરેખર, જીવ વિશેષ ક્રીડા જાણતો નથી. આકાશમાં ફરનારા દેવોની સ્ત્રીઓ-એ પ્રમાણે કહેવાથી સર્વનું દર્શન કરવાને માટે ભગવાને તેમને વરદાન આપ્યું છે. સ્ત્રીઓ ભગવલ્લીલાનું દર્શન કરે એમાં દોષ નથી. દેવોની સ્ત્રીઓને મોહ જ ઉત્પન્ન થયો, કાંઈ સમુદાયલીલાનું જ્ઞાન થયું નહિ, તેમ જ રસની પ્રાપ્તિ પણ થઈ નહિ. લૌકિક ચંદ્રે પણ દર્શન કર્યાં. રાસક્રીડામાં આવેલાં ગોપીજનોનાં ચંદ્રે દર્શન કર્યાં તેમાં ચંદ્રને દોષ પ્રાપ્ત થતો નથી), કારણ કે દેહ ચંદ્રરૂપ છે (અને તેથી ચંદ્ર અને ગોપીજનોના દેહ વચ્ચે ભેદ નથી. ‘આ જગત્ અગ્નિ અને ચંદ્રરૂપ છે’ એ શ્રુતિ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે દેહ ચંદ્રસ્વરૂપ છે. જેમ અલૌકિક ચંદ્ર ભગવદ્વાવાત્મક છે તેમ આ ચંદ્ર સ્વામિનીભાવાત્મક છે, સ્વામિનીઓના આત્મામાં સોમ હંમેશા રહેલો છે તેથી તેમનો દેહ સોમાત્મક છે. આ પ્રમાણે ચંદ્ર આધ્યાત્મિકરૂપે ગોપીજનોના દેહમાં જ રહેલો હોવાથી ચંદ્ર ગોપીજનોનું રમણ સમયે દર્શન કરે તેમાં કોઈ જાતનો દોષ નથી.) વળી, ‘સોમઃ પ્રથમો વિવિદે’-સોમે સ્ત્રીને પ્રથમ પ્રાપ્ત કરી-એ શ્રુતિ પણ એમ દર્શાવે છે કે ચંદ્રે સ્ત્રીઓના દેહનો પ્રથમથી જ ભોગ કરેલો છે તેથી ગોપીજનોનું દર્શન કરવામાં ચંદ્રને દોષ પ્રાપ્ત થતો નથી. સાધારણ સ્ત્રીઓએ-દેવોની સ્ત્રીઓએ-પણ દર્શન કર્યાં. (ગોપીજનોનો દેહ અલૌકિક હોવાથી તે સોમાત્મક શી રીતે કહી શકાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે રાસક્રીડામાં સાધારણ સ્ત્રીઓ પણ આવેલી હતી; ગોપીજનોના સિવાય બીજી સાધારણ સ્ત્રીઓ પણ રાસમાં આવેલી હતી. એકલા ભગવાન જ જેમનો ભોગ કરી શકે એવાં ગોપીજનો જ રાસક્રીડારૂપ પૂર્ણ ફલ સિદ્ધ કરવાને માટે રાસમાં આવ્યાં હતાં, જ્યારે રાસનાં દર્શન કરવાને માટે બહુ સાધારણ સ્ત્રીઓ પણ આવી હતી. તેથી જ બ્રહ્મવૈવર્તપુરાણમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે કે રાસક્રીડામાં બહુ ગોપીજનો આવ્યાં હતાં. તેથી સાધારણ ગોપસ્ત્રીનાં દર્શન કરવામાં ચંદ્રને દોષ આવતો નથી, કારણ કે આ સાધારણ સ્ત્રીઓનો દેહ લૌકિક છે અને તેથી તે દેહનો આત્મા સોમ છે.)

છતાં પણ-ચંદ્રે દર્શન કર્યાં તો પણ-તેણે, ચંદ્રે, જે દર્શન કર્યાં તે પોતાને-ચંદ્રને-જ લિત કરનારું નથી એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘શશાઙ્કઃ’. આ ચંદ્ર ખરેખર કલંકવાળો છે. (ભગવાનને ગોપીજનોનાં દર્શન કરવાથી જો કે દોષ પ્રાપ્ત થતો નથી છતાં પણ ચંદ્રને જ દોષ પ્રાપ્ત થાય છે. ગોપીજનોના પ્રાધાન્યથી જે રમણ તે ચંદ્રને લિતકારક છે; પરંતુ હમણાં અલૌકિક પ્રકારના રમણમાં તે સિદ્ધ થતું નથી. જેમાં અતિદેશ કરવામાં આવેલો છે-પહેલાંના જેવું જ જે રમણ છે-એવા લૌકિક રમણમાં તો નાચિકાના ચરણને પ્રણિપાત કરવું ઈત્યાદિનું વર્ણન આગળ કરશે જ. ચંદ્ર કલંકવાળો છે એનો ભાવ એ છે કે ‘આનન્દાદયઃ પ્રધાનસ્ય’ (બ્રહ્મસૂત્ર ૩।૩।૧૧)-પૂર્ણ આનંદ, ઐશ્વર્ય વિગેરે ધર્મો બ્રહ્મના જ છે-એ સૂત્રને અનુસરીને ચંદ્ર ભગવાનની પાસેથી જ આનંદની ઈચ્છા રાખે છે, કારણ કે તે પોતે-ચંદ્ર-સ્વામિનીના ભાવરૂપ છે; અર્થાત્ ચંદ્ર પોતે જ પૂર્ણ નથી. તેથી ચંદ્રને પોતાના લિતની આકાંક્ષા રહે છે જ.)

આનંદમય-અલૌકિક-ચંદ્રે પણ ભગવાનની ક્રીડાનાં દર્શન કર્યાં. (દેવતાઓની સ્ત્રીઓની માફક ચંદ્ર પણ કામથી પીડાયો એમ મૂલ શ્લોકમાં આવેલા ‘ચ’ ઉપરથી જણાય છે. અને અલૌકિક ચંદ્રનું વર્ણન પણ ‘ચ’ જ કરે છે.) લૌકિક ચંદ્ર પોતાના ગણ-નક્ષત્રો-સાથે ભગવાનની ક્રીડાનાં દર્શન કરે છે; તેથી ઉદ્દીપન હોવા છતાં પણ બીજી સ્ત્રીઓમાં તેનું-ચંદ્રનું-ચિત્ત સંભવતું નથી. મૂલ શ્લોકમાં ‘ચ’ છે તે એમ દર્શાવે છે કે લૌકિક ચંદ્રને પણ મોહ થયો. જેમ આ દેવોની સ્ત્રીઓને મોહ થયા પછી ફરી ફરીને દર્શન કર્યાંથી કામ ઉત્પન્ન થયો-ઘેર જઈને અમારે પણ કામરૂપે ક્રીડા કરવી જોઈએ એ પ્રમાણે કામથી પીડાયાં-તેમ લૌકિક ચંદ્ર પણ કામથી પીડાયો. (ચંદ્ર સ્વામિનીના ભાવરૂપ હોવાથી તેને-ચંદ્રને-દેવોની સ્ત્રીઓની માફક અભિલાષ થાય એ યોગ્ય છે.) અલૌકિક ચંદ્રે ભગવાનમાં પ્રવેશ કરવાને માટે યત્ન કર્યો તેથી તે કામથી પીડાયો. (દેવોની સ્ત્રીઓ અને લૌકિક ચંદ્ર ભગવદ્વિષયક કામથી પીડાયાં, જ્યારે અલૌકિક ચંદ્ર કામિનીવિષયક કામથી પીડાયો એ પ્રમાણે ભેદ છે.) આ પ્રમાણે આગળ ‘નિસર્ગથી સુખ’ એ પક્ષમાં ચંદ્રાંશનું નિવર્તનરૂપી યુક્તિ આપવામાં આવી, કારણ કે આજ ચંદ્રના અંશો-કિરણો-તેમાંથી પાછા ચાલ્યા જશે. (સિષેવ આત્મન્યુપરુદ્ધસૌરતઃ’ એ છવ્વીસમા શ્લોકમાં તો રમણનો અલૌકિક જ પ્રકાર છે, લોકને અનુસરનારો નથી. ‘નિસર્ગથી સુખ’ એ લૌકિક પક્ષમાં ચંદ્ર ભગવાનનું રેતોરૂપ હોવાથી ભગવાનમાં તે પ્રવેશ કરે એટલે નિસર્ગપક્ષની યુક્તિ આપવામાં આવી એમ ભાવ છે.) જો નિસર્ગનો અભાવ હોય તો ‘સહસ્રદર્શનથી

મુક્તિ થાય છે' એ સૂત્રનો વિરોધ આવે, કારણ કે એક સાથે સ્વણ નહિ થાય. (એવું પરિષ્વણ' એ સત્તરમા શ્લોકમાં રસશાસ્ત્રમાં જણાવેલી રીત પ્રમાણે રમણ થયું એમ વર્ણન કરવામાં આવેલું હોવાથી સહ-સ્વણ, એક સાથે સ્વણ, પણ પ્રાપ્ત જ થાય છે, કારણ કે રમણનો પ્રકાર જ તે જાતનો છે, પરંતુ અખંડરૂપ ભગવાનમાં સહસ્વણ પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પી શકાય એમ નથી અને તે ગુપ્ત રાખવા જેવું હોવાથી પ્રકટ વર્ણન કરી શકાય એમ નથી, તેથી શુકદેવજીએ આ પ્રકારે વર્ણન કર્યું એમ શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે. સોમ રેતોરૂપ છે એમ શ્રુતિથી સિદ્ધ થએલું છે, એટલે ચંદ્રના અંશનું નિવર્તન થવામાં કોઈ જાતનો દોષ નથી. અરે! ભગવાનનું સ્વરૂપ રસાત્મક હોવાથી જ બધું ઘટી શકશે, તો પછી ચંદ્રે ભગવાનમાં પ્રવેશ કરવાની શી જરૂર? આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. ચંદ્ર રેતોરૂપ છે, અને તે આધ્યાત્મિક રૂપે સ્વરૂપની અંદર રહેલો છે, એટલે તે રૂપે ચંદ્રે ભગવાનમાં પ્રવેશ કરવાની જરૂર છે. ચંદ્ર ભગવાનના સ્વરૂપમાં જ રહેલો હોવાથી તે પ્રવેશ કરે છે એ વાત બહુ સારી નથી- આ પ્રમાણે શંકા કરવી નહિ, કારણ કે આ લીલા રમણના પ્રકારનું જ્ઞાન આપે છે. આમ જો ન માનીએ તો રાત્રીએ આ લીલા ન થાય.)

વળી, ચંદ્ર 'સગણ'-પોતાના યૂથ સાથે-છે; ચંદ્ર અને પોતાની સ્ત્રી પણ વિસ્મય પામ્યાં. અર્થાત્ વિસ્મયરસ જ ઉત્પન્ન થયો, બીજો રસ નહિ. ૧૯.

આ પ્રમાણે આધિભૌતિકોનો-સ્વામિનીના દેહમાં રહેલો ચંદ્રાત્મક ભાવોનો અને આધિદૈવિકનો-ભગવદ્ભાવરૂપ અલૌકિક ચંદ્રનો ભગવાને ઉત્પન્ન કરેલા કામ-રસમાં અભિનિવેશ થયો, (લૌકિક અને અલૌકિક ચંદ્ર કામરસથી પીડાયા,) એમ વર્ણન કરીને, 'નન્દગોપસુતં દેવિ પતિં મે કુરુ'-હે દેવી! નંદગોપના પુત્રને મારા પતિ બનાવો (ભાગ. ૧૦|૧૯|૪) એ પ્રમાણે દરેક ગોપીજને પ્રાર્થના કરી વ્રત કર્યું, તેથી ભગવાને દરેક ગોપીજનની સાથે રમણ કર્યું એમ 'કૃત્વા' શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

કૃત્વા તાવન્તમ્ આત્માનં યાવતીર્ગોપયોષિતઃ ।

રેમે સ ભગવાંસ્તાભિઃ આત્મારામોડપિ લીલયા ॥૨૦॥

જેટલાં ગોપીજનો હતાં તેટલાં પોતાનાં સ્વરૂપ પ્રકટ કરીને ભગવાને, પોતે આત્મારામ હતા તો પણ, લીલાથી તેમની સાથે રમણ કર્યું. ૨૦.

ગોપજાતિની જેટલી સ્ત્રીઓ હતી તેટલાં સ્વરૂપો જુદે જુદે સ્થલે માયાથી પ્રકટ કરીને ભગવાન્ પ્રકટ થયા. આ મહાસૌરત-મહાન્ રમણ-કહેવાય છે. આ પ્રમાણે કરવાનું ભગવાનમાં સામર્થ્ય છે, કારણ કે તે ભગવાન્ છે. મૂલ શ્લોકમાં જે 'સઃ' પદ છે તે એમ દર્શાવે છે કે ભગવાન્ ગોપીજનોને માટે જ અવતરેલા છે. અહિં



ગોપીજનોના વ્રતને માટે ભગવાન્ તેમની સાથે જ રમ્યા, પહેલાંની માફક ભગવાન્ આત્મારામ થઈને ગોપીજનોથી ભિન્ન રહ્યા નથી. આ અર્થ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘આત્મારામોડપિ’. (પૂર્વ અધ્યાયમાં તો ભગવાને ગોપીજનોને જ રમણ કરાવ્યું અને પોતે તો આત્મારામ જ રહ્યા એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે; જ્યારે અહિં ગોપીજનોની સાથે જ ભગવાન્ રહ્યા, તેમનાથી દૂર ઉભા રહ્યા નહિ. આ અર્થ દર્શાવવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી સુબોધિનીજીમાં ‘તાભિઃ સલૈવ’ એમ ‘એવ’ પદ મૂકે છે.) (હવે ભગવાન્ પોતાના પ્રાધાન્યથી સ્વેચ્છાએ રમણ કરે છે એનું કારણ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ભગવાનમાં ચંદ્ર પ્રવેશ કરે છે તેથી રમણ સંભવે છે, (કારણ કે રેતસનું પોષણ ભાવનું પાષણ કરનાર છે.) આ દશામાં-સ્વતંત્ર લીલામાં-પણ ભગવાન્ આત્મારામ જ રહે છે, (કારણ કે પ્રમાણથી સિદ્ધ થએલું હોવાથી રમણ અને આત્મારામતા એ બેનો વિરોધ રહેતો નથી. વાસ્તવિક રીતે તો ભગવાનની લીલા સ્વરૂપાત્મક છે, એટલે ભગવલ્લીલાના અંદર ભાગ લેનારા પદાર્થો પણ સ્વરૂપાત્મક જ છે.) ભગવાન્ આત્મારામ રહે છે અને રમણ કરે છે એમાં ‘અધિકં તત્રાનુપ્રવિષ્ટં ન તુ તદ્દાનિઃ’-તેમાં અધિક પ્રવેશ થયું, પણ તેમાં કાંઈ હાનિ થઈ નથી-એ ન્યાય પ્રમાણે થયું છે. ભગવાને સ્વતંત્રતાથી ગોપીજનો સાથે રમણ કર્યું તેમાં પણ તેમનું આત્મરમણ જ મુખ્ય છે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘લીલયા’. (આત્મરમણ જ મુખ્ય હોવાથી શુકદેવજી આગળ ઉપર ‘ગોપીનાં તત્પતીનાં ચ’ એ શ્લોક (ભાગ. ૧૦|૩૦|૩૬) કહેશે.) જેમ મહાન્ પુરુષ પણ લીલાથી પોતાને યોગ્ય ન હોય એવું કરે છે, પગે ચાલનારની માફક પોતે મૃગયા કરવા જાય છે, જેમ બીજી પણ અવતારલીલાઓ કરે છે, તેમ આ લીલા પણ ભગવાને કરી એમ તાત્પર્ય છે. (ભગવાન્ પોતે ઈશ્વર છે, છતાં પણ નાયિકાનું પ્રાધાન્ય રાખીને, પોતે ગૌણ થઈને, રમણ કરે છે, કારણ કે તે રસ તે પ્રકારનો છે.) ૨૦.

પછીથી ગોપીજનોના રમણનો અંત આવ્યો એમ ‘તાસામ્’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે :

તાસામ્ અતિવિહારેણ શ્રાન્તાનાં વદનાનિ સઃ ।

પ્રામૃજત્ કરુણઃ પ્રેમણા શન્તમેનાડ્ગ પાણિના ॥૨૧॥

હે અંગ! દયાળુ ભગવાને અતિવિહારથી થાકી ગએલાં ગોપીજનોનાં મુખ સુખ આપનાર હસ્ત વડે પ્રેમથી લુછ્યાં. ૨૧.

અતિવિહારને લીધે, અનેક પ્રકારના બંધોને લીધે, ગોપીજનો બહુ થાકી ગયાં. તેથી આગળની લીલાને માટે ભગવાને પોતાના હસ્તથી તેમનાં-

ગોપીજનોનાં-મુખ લુછી નાખ્યાં, કારણ કે તે કૃષ્ણ છે; અર્થાત્ ભગવાન્ ગોપીજનોને માટે જ અવતરેલા છે. બધેય આ પ્રમાણે થયું, બધાંય ગોપીજનો અતિવિહારથી બહુ થાકી ગયાં, એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી શ્લોકમાં 'તાસામ્' એ પ્રમાણે બહુવચનનો પ્રયોગ કરે છે. ભગવાન્ ગોપીજનોનાં વદન લુછે છે તેનું કારણ એ કે ભગવાન્ પોતે કરુણ, દયાવાળા છે. આ કરુણા ઉદાસીન-ભાવરહિત-નથી એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'પ્રેમણા'; અર્થાત્ ભગવાને ગોપીજનોનાં મુખ પ્રેમથી લુછ્યાં. ભગવાન્ ગોપીજનોનાં વદન લુછે તેથી ગોપીજનોનો ક્લેશ નાશ થઈ જાય છે જ એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'શન્તમેન'. (લોકમાં વદન લુછવાથી ઈક્ત ક્લેશ જ દૂર થાય છે, અધિક સુખની પ્રાપ્તિ થતી નથી; પરંતુ ભગવાન્ ગોપીજનોનાં વદન લુછે છે તેમાં તો ગોપીજનોનો ક્લેશ દૂર થાય છે અને વધારામાં તેમને અધિક સુખ પણ મળે છે. આ ભાવ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે 'શન્તમેન'.) શ્લોકમાં 'અંગ' એ પ્રમાણે જે સંબોધન કરવામાં આવેલું છે તે દર્શાવે છે કે શુકદેવજી પરીક્ષિતને છેતરવાના નથી. આ પ્રમાણે ભગવાને ગોપીજનોનું દુઃખ દૂર કરીને તેમનામાં પરમાનંદનું સ્થાપન કર્યું. ૨૧.

બહુ આનંદ પામેલાં ગોપીજનોએ જે કર્યું તેનું વર્ણન હવે શુકદેવજી 'ગોપ્યઃ' એ શ્લોકમાં આપે છે :

ગોપ્યઃ સ્ફુરત્પુરટ-કુણ્ડલ-કુન્તલ-ત્વિઙ્-ગણ્ડશ્રિયા સુધિત-હાસ-નિરીક્ષણેન ।  
માનં દધત્ય ઋષભસ્ય જગુઃ કૃતાનિ પુણ્યાનિ તત્કરુહ-સ્પર્શ-પ્રમોદાઃ ॥૨૨॥

ઉજ્જવલ સુવર્ણનાં કુંડલોની અને કેશની કાંતિથી સુંદર બનેલા ગાલોની શોભાથી, અને ભગવાનના અમૃતમય હાસ્યસહિત નિરીક્ષણથી ગોપીજનોએ માન ધારણ કર્યું, અને ભગવાનના નખના સ્પર્શથી આનંદ પામીને ભગવાનનાં પુણ્ય કર્મોનાં ગુણગાન કરવા લાગ્યાં. ૨૨.

ગોપીજનો માન ધારણ કરીને ભગવાનનાં કર્મોનું ગાન કરવા લાગ્યાં. ગોપીજનોએ ભગવાનનાં કર્મોનું ગાન કર્યું તેનું કારણ એ કે તેમનામાં રજોગુણનો-માનનો-અભિનિવેશ થયો હતો. (ગયા શ્લોકમાં એમ દર્શાવવામાં આવ્યું કે ગોપીજનો સ્વાધીનભર્તૃક છે; અર્થાત્ ભગવાન્ ગોપીજનોને અધીન છે. આ શ્લોકમાં પણ એમ કહેવામાં આવ્યું કે ગોપીજનોનાં કુંડલ, કેશ અને ગાલની જે શોભા છે તે પોતાના પ્રિયના-ભગવાનના-હસ્તકમલના સ્પર્શથી જ સિદ્ધ થએલી છે. તેથી જ ગોપીજનોએ જે માન ધારણ કર્યું તેનું કારણ આ શોભા જ છે. આ શોભા ગોપીજનોમાં રહેલી હોવાથી સહજ, સ્વાભાવિક, કહેવાય છે. આ પ્રમાણે

ગાન ઉત્પન્ન કરનાર જે અસાધારણ ઉત્સાહ, માન, છે તેને રજોગુણ કહેવામાં આવે છે. પહેલાં માનને લીધે ગોપીજનોને દુઃખ થયું હતું, પણ આ પ્રસંગે તે પ્રમાણે નથી થયું એ દર્શાવવાને માટે એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ગોપીજનોએ ભગવાનના ગુણોનું ગાન કર્યું.)

માન ઉત્પન્ન કરવાને માટે શુકદેવજી શ્લોકમાં બે કારણો આપે છે. એક સહજ, સ્વાભાવિક; અને બીજું ભગવાને સિદ્ધ કરેલું. તેમાં પ્રથમ શુકદેવજી સહજ હેતુનું વર્ણન કરે છે. પ્રકાશ પામતું જે પુરટ-સુવર્ણ-અર્થાત્ અગ્નિમાંથી નીકળેલું અને ઉજ્જવલ બનેલું જે સુવર્ણ; તેનાં જે બે કુંડલો, અને કેશ; તેમની-કુંડલોની અને કેશની-શોભાવાળી જે ગાલોની કાંતિ. ગોપીજનોના ગાલનો રંગ ઉજ્જવલ અથવા પીળો હતો. (કેટલાંક ગોપીજનો વિજળીના જેવાં ગોરાં હતાં, એટલે તેમના ગાલનો રંગ ઉજ્જવલ હતો; બીજાં કેટલાંક ગોપીજનો ચંપાની કલી જેવાં પીળાં હતાં, એટલે તેમના ગાલનો રંગ પીળો હતો.) બાકીનાં બે-કુંડલો અને કેશ-અનુક્રમે ઉજ્જવલ અને નીલ હતાં. કુંડલો ઉજ્જવલ હતાં અને કેશ નીલ હતા. આ-ઉજ્જવલ અથવા પીળી, ઉજ્જવલ અને નીલ એમ-ત્રણ પ્રકારની શોભા સર્વના મૂલભૂત ભગવાનના ગુણોનું જ કાર્ય છે. (ભગવાનના ચાતુર્યનું જ કાર્ય છે. આ જગતમાં જેટલાં બધાં કાર્ય છે તે સર્વનું મુખ્ય કારણ ભગવાનના ચાતુર્ય વિગેરે ગુણો છે, અને ગોપીજનોની આ ત્રણ પ્રકારની શોભા પણ ભગવાનના આ ગુણોનું જ કાર્ય છે, બીજા કોઈનું નહિ.) તેથી ગોપીજનોની આ ત્રણ પ્રકારની શોભા સર્વમાં શ્રેષ્ઠતા-માન-સિદ્ધ કરવાને માટે યોગ્ય છે.

સુધિત એટલે અમૃતને જાણે પ્રાપ્ત કર્યું હોય એવું જે હાસ્યસહિત ભગવાનનું નિરીક્ષણ. અહિં પણ અંતઃકરણમાં રહેલો સ્નેહ, નિરીક્ષણ અને હાસ્ય એ ત્રણ પદાર્થોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ ત્રણ પદાર્થો ભગવાનના છે, એટલે માન ધારણ કરવામાં આ બીજો, ભગવત્કૃત, હેતુ છે.

આ પ્રમાણે આ બંને કારણોને લીધે-ગોપીજનોના કુંડલ વિગેરેની શોભા અને ભગવાનનું નિરીક્ષણ એ બે કારણોને લીધે-ગોપીજનોએ સન્માન અથવા અભિમાન ધારણ કર્યું, અને પોતાના હૃદયમાં થએલી વિપરીતભાવનાથી-અમે સર્વમાં શ્રેષ્ઠ છીએ એવી ભાવનાથી-ઉત્પન્ન થએલા અભિમાનરૂપી દોષને દૂર કરવાને માટે તેમણે ભગવાનનાં કાર્યોનું ગાન કર્યું. ભગવાનનાં કાર્યો ફક્ત પાપ જ દૂર કરે છે એમ નથી પરંતુ પુણ્યરૂપ, પુણ્ય ઉત્પન્ન કરનાર, પણ છે એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે 'પુણ્યાનિ'. ભગવાનનાં કાર્યો પાપને દૂર કરનારાં અને પુણ્યને

ઉત્પન્ન કરનારાં છે. (ગાનથી ઉત્પન્ન થએલો જે પુષ્ટ ભાવવિશેષ તે અલૌકિક ઈષ્ટ પદાર્થને સિદ્ધ કરનારો હોવાથી 'પુણ્ય' કહેવાય છે.) તેથી ગોપીજનોમાં દોષ નથી અને આગળની લીલામાં પુણ્યનો સંગ્રહ થાય છે એમ કહેવામાં આવ્યું.

પહેલાંનો ક્લેશ ભૂલી જવાને માટે આનંદ પ્રકટ થયો એમ શુકદેવજી કહે છે. (ગયા શ્લોકમાં જે 'શન્તમ' પદ હતું તે ઉપરથી એમ જણાણું કે ગોપીજનોને સુખ થયું અને ક્લેશ દૂર થયો. પરંતુ ગોપીજનો તે ક્લેશ ભૂલી જ ગયાં એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું ન હતું. આ શ્લોકમાં આનંદનો આવિર્ભાવ થતાં ગોપીજનો તે ક્લેશ ભૂલી ગયાં એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.) ભગવાનના જે નખો છે તેના સ્પર્શથી ગોપીજનોને જે પીડા થઈ તેથી તેમને સંભોગનું સ્મરણ થયું અને આનંદ થયો. ભગવાનનાં કાર્યોનું ગાન કરવાથી પણ ગોપીજનોનું અંતઃકરણ આનંદથી પૂર્ણ થયું એમ દર્શાવવાને માટે 'તત્કરસ્પર્શપ્રમોદાઃ' એ વિશેષણ શ્લોકને અંતે આપવામાં આવ્યું છે. ૨૨.

પછીથી ભગવાને પોતાના જેવાં ગોપીજનો સાથે જલક્રીડા કરી એમ 'તાભિર્યુતઃ' એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે. (ગોપીજનો ભગવાનની માફક નિર્દોષ, પૂર્ણ ગુણવાળાં, અને ભાવથી આનંદાત્મક છે, તેથી ગોપીજનો ભગવાનની તુલ્ય-બરોબર-છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનો ભગવાનના જેવાં હોવાથી જલક્રીડામાં તે ભગવાનના ઉપર જલ છાંટી શકશે અને ભગવાન તેમના ઉપર જલ છાંટી શકશે.)

તાભિર્યુતઃ શ્રમમ્ અપોહિતુમ્ અડ્ગસડ્ગ-ઘૃષ્ણજઃ સ્વકુચકુડકુમરજિતાયાઃ ।  
ગન્ધર્વપાલિભિરનુદ્રુત આવિશદ્ વાઃ શ્રાન્તો ગજ્જભિરિભરાડિવ ભિન્નસેતુઃ ॥૨૩।

જેમ કોઈ થાકી ગએલો અને પાણીની પાળો તોડી પાડતો મહાન્ હાથી પોતાનો થાક દૂર કરવાને માટે હાથણીઓની સાથે જલમાં પ્રવેશ કરે છે, તેમ થાકી ગએલા, ગોપીજનોના સ્તનના કુંકુમથી રંગાએલી અને અંગની સાથે સંબંધમાં આવતાં ચોળાઈ ગએલી પોતાની માલાની સાથે રહેલા શ્રેષ્ઠ ગંધર્વરૂપ ભમરાઓ જેમની પાછળ દોડે છે, અને જેમણે મર્યાદા તોડી છે તેવા ભગવાને, જેમાં અંગના સંબંધથી માલા ચોળાઈ ગઈ છે અને જે ગોપીજનોના સ્તનોના કુંકુમથી રંગાએલાં છે એવાં સ્વકીય યમુનાજીના જલમાં થાક ઉતારવાને માટે ગોપીજનો સાથે પ્રવેશ કર્યો. ૨૩.

બધાંય ગોપીજનો સાથે ભગવાને અડધી રાત્રે જલક્રીડાને માટે યમુનાજીમાં પ્રવેશ કર્યો. (રમણ બે પ્રકારનું છે: જલમાં અને સ્થલ ઉપર. આ બે પ્રકારનું રમણ સિદ્ધ કરવાને માટે આખી રાત્રીની જરૂર હોય છે. સ્થલ ઉપરનું રમણ પૂરું થતાં જલમાંના રમણનો આરંભ થાય છે; તેથી જલમાંનું રમણ અડધી રાત્રીએ શરૂ થયું

એમ શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે.) યમુનાજીના જલમાં ભગવાને ગોપીજનો સાથે જે પ્રવેશ કર્યો તેનું પ્રયોજન દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘શ્રમમપોહિતુમ્’; ગોપીજનોના બધાં અંગોનો શ્રમ જલક્રીડાથી જ દૂર કરવાને માટે ભગવાને યમુનાજીના જલમાં પ્રવેશ કર્યો. (ગોપીજનોનો ક્લેશ દૂર થયો હતો તો પણ શ્રમને લીધે કોઈ કોઈ સ્થલે રહેલા પરસેવાને દૂર કરવાને માટે ભગવાને તે પરસેવાને લુછી ન નાખ્યો, પણ જલક્રીડા જ કરી અને તે દ્વારા જ પરસેવો દૂર કર્યો.) ગોપીજનોની સાથે ભગવાન જતા હતા તે સમયની શોભાનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘સ્રજઃ ગન્ધર્વપાલિભિરનુદ્રુતઃ’, ભગવાનની માલા ઉપર ભમતા શ્રેષ્ઠ ગંધર્વોની માફક ગાન કરનારા ભમરાઓ જેમની પાછળ દોડે છે એવા ભગવાન; અથવા તો ‘અંગસંગઘૃષ્ટસ્રજઃ’ એને યમુનાજીના વિશેષણ તરીકે લેવું.

જે ગંધર્વોનું રક્ષણ કરનારા છે તે ગંધર્વપ કહેવાય છે; અર્થાત્ તે ઉત્તમ ગંધર્વો હોય છે. ભમરાઓ ઉત્તમ ગંધર્વો જેવા છે અને તે ભગવાનની પાછળ દોડે છે. આ પ્રમાણે જેમની પાછળ શ્રેષ્ઠ ગંધર્વોની માફક ગાન કરનારા ભમરાઓ દોડે છે એવા ભગવાને જલદીથી જઈને જલમાં પ્રવેશ કર્યો. (સંભોગનું સૂચન કરનારો આમોદ-ગંધ-સવારમાં રાખી શકાય નહિ, તેથી) તે ગંધને દૂર કરવાને માટે અને થાક ઉતારી નાખવાને માટે ભગવાને જલક્રીડા કરી. સંભોગથી પશ્ચિની સ્ત્રીઓને શ્રમ થતાં જે પરસેવો થાય છે તેની ગંધ કમલના જેવી હોય છે, (અને તેથી ગંધ સંભોગનું સૂચન કરી શકે છે.) ભમરાઓ અને ગોપીજનો ભગવાનને હરકત કરે છે તેથી ભગવાન જલદી પોતાનાં ચરણારવિંદો ઉપાડે છે, અને ભમરાઓ તેમની પાછળ દોડે છે. આ ભમરાઓ ભગવદીય જ છે એમ શુકદેવજી ‘અડ્ડા’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં કહે છે. બંને અંગના સંબંધથી ચોળાઈ ગઈ છે જે માલા, તેના સંબંધવાળા ભમરાઓ છે. અથવા તો ‘અડ્ડા’ ઈત્યાદિ પદનો સંબંધ યમુનાજી સાથે લઈએ તો) જેમાં, જે યમુનાજીમાં, બંને અંગના સંબંધથી માલા ચોળાઈ ગએલી છે એવા યમુનાજી પોતાની, અને ગોપીજનોના સ્તનોના કુંકુમથી રંગાએલી એવી ભગવાનની જ માલા. (‘સ્વકુચ’ ઈત્યાદિનો સંબંધ યમુનાજી સાથે લેવામાં આવે ત્યારે શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) યમુનાજી પણ ગોપીજનોના સ્તનોના કુંકુમથી રંગાએલા છે. ભગવાનની માલાની અંદર દેહની ગંધ, પુષ્પની ગંધ અને કુંકુમની ગંધ એમ ત્રણ પ્રકારની ગંધ રહેલી છે. માલા ભગવાનની છે એટલે તે અસાધારણ છે.

(‘અંગસંગઘૃષ્ટસ્રજઃ’ એ પદને યમુનાજીના વિશેષણ તરીકે લેવામાં આવે તો પણ ભમરાઓને ભગવાનની માલાનો સંબંધ છે એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજીએ

મૂલ શ્લોકમાં ‘ગન્ધર્વપ’ એ પ્રમાણે ભમરાઓનું વિશેષણ મૂકેલું છે.) આ ભમરાઓ આધિદૈવિક છે, અંતરંગલીલામાં રહેલા છે, અને તેથી તેઓ માલાની ગંધનો ભોગ કરે છે, સંભોગને લીધે ઉત્પન્ન થતી વનમાલાની દિવ્ય ગંધનો ભોગ કરે છે. (ભમરાઓ ગંધર્વપ છે, શ્રેષ્ઠ ગાન કરનારા છે; અર્થાત્ ભગવાનની અંતરંગલીલાના સમયે પણ હાજર રહીને ગાન કરવાને માટે આ ભમરાઓ લાયક છે.) આ સમયે ભગવાનને કોઈ પણ જાતનો વિચાર થતો નથી તેનું કારણ દર્શાવતા શુકદેવજી કહે છે કે ‘શ્રાન્ત ઈભરાડિવ’, થાકી ગએલા મહાન્ હાથીની માફક. શ્લોકમાં જે ‘શ્રાન્તઃ’ વિશેષણ મૂકવામાં આવેલું છે તે લીલાથી ગમન દર્શાવવાને માટે છે. દરેક ગોપીજનની સાથે ભગવાન્ સંભોગ કરે ત્યાં સુધી ભગવાનના અન્ય ભાવનું-ઉપર ચંદ્ર સ્થાપન કરવારૂપી ભાવનું-વર્ણન કરવામાં આવ્યું; અને જ્યારે તે ભાવ જતો રહે છે-ચંદ્ર જતો રહે છે-ત્યારે શ્રમલીલા પણ પ્રકટ થઈ. બીજા કારણથી શ્રમ થયો નથી એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘ગજિભિઃ’.

સેતુઓ-પાળાઓ-જલના રક્ષણને માટે બાંધવામાં આવે છે. તે બધા સેતુઓને થાકી ગએલો ગજરાજ તોડી નાખે છે. આ પ્રમાણે થવાથી ભગવાને પણ આત્મારામત્વરૂપી પોતાની બ્રહ્મમર્યાદા, અને નમ્રતાથી દાસ્ય કરવારૂપી જીવની મર્યાદા દૂર કરી, કારણ કે ભગવાને કામાત્મરૂપે ગોપીજનોનો સ્પર્શ-ભોગ-કર્યો અને બીજાઓની સ્ત્રીઓની સાથે સંગ કર્યો. (આ અધ્યાયની શરૂઆતમાં ‘અત્રૈવ લોકે પ્રકટમ્’ ઈત્યાદિ કારિકા આપવામાં આવેલી છે. અને તેમાં આધિદૈવિક, ઉત્તમ ‘કામ’ નામના સુખનું ભગવાન્ કૃષ્ણ જ ભોગ કરે છે. બીજો કોઈ નહિ, એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. ભગવાનનું સ્વરૂપ કામાત્મક છે. જ્યારે આ કામથી ભગવાને ગોપીજનોનો ભોગ કર્યો ત્યારે ભગવાનનું આત્મારામપણું જતું રહ્યું; અને જ્યારે પરસ્ત્રી સાથે તેમણે સંગ કર્યો ત્યારે નમ્રભાવે ભગવાનનું દાસ્ય કરવાની જીવની મર્યાદા નાશ પામી. ભગવાન્ નિજજનોને પોતાની સાથે સંગ કરવાનો અધિકાર આપે જ છે એ દર્શાવવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી ‘પરદારાણામ્’ એ પદમાં ‘પર’ શબ્દ વાપરે છે. વાસ્તવિક રીતે પરત્વ જો કે દોષરૂપ છે છતાં પણ રસને માટે ગોપીજનોમાં પરકીયાત્વનું સ્થાપન કરીને જ ભગવાને લીલા કરી છે. કોઈ પણ પ્રકારના વિકાર વિના રહેવું એ બ્રહ્મની મર્યાદા છે. જ્યારે શૃંગારરસાત્મક અનેક વિકારો ભગવાનમાં પ્રકટ થાય છે ત્યારે ભગવાનની અવિકૃતસ્વરૂપની મર્યાદા તિરોહિત થઈ જાય છે. જ્યાં સુધી રસમાં પરિપૂર્ણ વિકાસ થયો ન હતો ત્યાં સુધી ભગવાને ગોપીજનોને પોતાનાથી અભિન્ન જ માન્યાં અને તેમની સાથે ક્રીડા કરી, અને આ પ્રમાણે

ભગવાનનું આત્મારામત્વ જ રહ્યું; પણ જ્યારે શૃંગારરસનો સંપૂર્ણ વિકાસ થયો ત્યારે ગોપીજનો મારાથી ભિન્ન નથી એ પ્રકારનું ભગવાનનું જ્ઞાન નાશ પામ્યું, અને કેવલ આનંદ જ પ્રકટ થયો, અને તેથી ગોપીજનોમાં ભગવાનને આત્મત્વની સ્કૃતિ પણ થઈ નહિ, પરંતુ નાયિકાભાવની જ સ્કૃતિ થઈ. આ પ્રમાણે ભગવાનની આત્મત્વમર્યાદા પણ તિરોહિત થઈ ગઈ.) (ગયા અધ્યાયના અને આ અધ્યાયના રમણમાં ફેર છે એમ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) પહેલાં ગોપીજનોએ ભગવાનનો સ્પર્શ જ કર્યો હતો પણ ભગવાને તેમનો સ્પર્શ કર્યો ન હતો, કારણ કે ભગવાનમાં કામ ન હતો. (ગયા અધ્યાયમાં ‘કામો ન વિદ્યતે’, કામ નથી, એ કારિકામાં આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે; જ્યારે આ અધ્યાયના આરંભમાં આવેલી કારિકાઓમાં આર્થિક ઉત્તમ કામનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, તેથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે આ અધ્યાયમાં ભગવાન પોતે પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે ભોગ કરે છે. આ પ્રમાણે ગયા અધ્યાયના રમણમાં અને આ અધ્યાયના રમણમાં ભેદ છે.) ભગવાને દેશની અને કાલની મર્યાદાનો પણ ભંગ કર્યો. તેથી ભગવાને શ્રેષ્ઠ હસ્તીની માફક જલક્રીડા કરવાને માટે જલદેવતાને દૂર કરીને પોતે જલમાં પ્રવેશ કર્યો એમ તાત્પર્ય છે. (‘દેશ’ એટલે ગોપીજનોનાં અવયવો. શરીરના જુદા જુદા અવયવો ઉપર જુદી જુદી રીતે ચુંબન, દંશ વિગેરે દ્વારા જે ભોગ કરવામાં આવે છે તેનું વર્ણન રસશાસ્ત્રમાં કરવામાં આવેલું છે. આ પ્રકારના ભોગને ‘દેશમર્યાદા’ કહેવામાં આવે છે. ભગવાને ગોપીજનોના અવયવોનો સ્પર્શ પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે જ કર્યો, રસશાસ્ત્રના નિયમો પ્રમાણે નહિ; તેથી ભગવાને દેશની મર્યાદાનો ભંગ કર્યો એમ કહેવામાં આવ્યું છે. ૫૬વો વિગેરે જુદી જુદી તિથિઓએ જુદા જુદા બંધ વિગેરે કરવા, પશ્ચિમની સ્ત્રીઓના સાથે ચોથા યામમાં રમણ કરવું વિગેરે જે નિયમો રસશાસ્ત્રમાં વર્ણવવામાં આવ્યા છે તે ‘કાલમર્યાદા’ કહેવાય છે. ભગવાને આ નિયમોને પાલન કર્યા વિના પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે જ રમણ કર્યું તેથી તેમણે ‘કાલ’ની મર્યાદાનો ભંગ કર્યો એમ કહેવામાં આવ્યું છે. સુબોધિનીજીમાં ‘દેશકાલમર્યાદા’ શબ્દ પછી જે ‘ચ’ છે તેનો અર્થ પહેલાં જણાવેલી બ્રહ્મમર્યાદા થાય છે; અર્થાત્ ભગવાને બ્રહ્મમર્યાદાનો પણ ભંગ કર્યો. શ્લોકમાં આવેલા ‘આવિશત્’ પદમાં આવેલા ‘આ’ ઉપસર્ગનો અર્થ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે જલદેવતાને દૂર કરીને ભગવાને જલમાં પ્રવેશ કર્યો.) આ વિષયમાં શ્રીહરિરાયજી આ પ્રમાણે આજ્ઞા કરે છે. ૨૬ થી ૨૯ એ ચાર અધ્યાયોમાં વર્ણવેલી લીલામાં જો કે ભગવાને ગોપીજનોનો સ્પર્શ કરેલો છે, તો પણ ‘આત્મારામોઽપ્યરીરમત્’-

ભા.૧૦૧૨૬૧૪૨,-‘રેમે તયા ચાત્મરત આત્મારામોડપિ’-ભા.૧૦૧૨૭૧૩૪,-  
 ‘તાસામાવિરભૂત્’-ભા.૧૦૧૨૯૧૨,-,‘કાચિત્કરામ્બુજમ્’-ભા.૧૦૧૨૯૧૪,  
 વિગેરે વાક્યો ઉપરથી જણાય છે કે ગોપીજનોની ઈચ્છાને લીધે જ ભગવાને રમણ  
 કર્યું, પોતાનું બધું સામર્થ્ય પ્રકટ કરીને સ્વાર્થને માટે નહિ. આ જ કારણથી તે લીલામાં  
 ‘ત્રૈલોક્યલક્ષ્મ્યેકપદમ્’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું નથી, પરંતુ આ લીલાના  
 આરંભમાં જ તે પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે. તેથી જ શ્રીમહાપ્રભુજી આ ત્રીસમા  
 અધ્યાયના આરંભમાં ‘સ્વાનન્દાર્થમિતીર્યતે’ એ પ્રમાણે આજ્ઞા કરે છે. આ પ્રમાણે  
 પહેલાંના ચાર, ૨૬ થી ૨૯, અધ્યાયમાં ભગવાનનું રમણ છે પણ તેમાં શ્રમલીલા  
 પ્રકટ થઈ નથી. આ ત્રીસમા અધ્યાયમાં તો ભગવાને પોતાની ઈચ્છાથી જ સર્વ કર્યું  
 છે, એટલે ભગવાનને લૌકિકના જેવો કામભાવ થયો અને રમણનો અંત પણ  
 આવ્યો. અર્થાત્ ભગવાનમાં લૌકિકના જેવો કામ પ્રકટ થવાથી જેમ આત્મારામત્વ  
 વિગેરે મર્યાદાનો ભંગ થયો તેમ દેશની અને કાલની મર્યાદાનો ભંગ થયો. દેશ એટલે  
 રસનો અનુભવ કરવાનું સ્થાન; અને કાલ એટલે ધારણ કરવાનો સમય. તેથી જ  
 ભગવાને આ બધી મર્યાદાઓનો ભંગ કરીને જલક્રીડાને માટે જલમાં પ્રવેશ કર્યો.

આ વિષે શ્રીપુરુષોત્તમજી આ પ્રમાણે આજ્ઞા કરે છે. પહેલાની લીલામાં  
 હાથીનું દષ્ટાંત અને પાળાઓ-મર્યાદા-તોડ્યાની વાત આપવામાં આવેલી નથી,  
 એટલે આત્મારામત્વ અને ભક્તનો કલેશ એ બંને દષ્ટિમાં રાખીને જ ભગવાને લીલા  
 કરી છે. આ ત્રીસમા અધ્યાયમાં વર્ણવેલી લીલામાં તો હાથીનું દષ્ટાંત અને સેતુ  
 તોડ્યાની વાત આવેલી છે, એટલે આ લીલામાં ભગવાન આત્મારામત્વનો અને  
 ભક્તોના કલેશનો વિચાર કરતા નથી. આ કારણથી જ આ અધ્યાયની લીલા  
 લૌકિકના જેવી જણાય છે, એટલે પરીક્ષિત્ રાજાને પણ ધર્મની મર્યાદાનો ભંગનો  
 સંદેહ થયો અને તે વિષે તેમણે આ અધ્યાયમાં પ્રશ્ન કર્યો. વાસ્તવિક રીતે તો આ  
 શ્લોકમાં ગજરાજનું દષ્ટાંત આપેલું હોવાથી અને પહેલાં વીસમા શ્લોકમાં  
 ‘લીલયા’-લીલાથી-એ પ્રમાણે પ્રયોગ થએલો હોવાથી એમ જણાય છે કે ભગવાને  
 બ્રહ્મના ધર્મ વિગેરેનો ભંગ કર્યો છતાં પણ તેમાં આયાસ, શ્રમ, નથી, અને તેથી  
 ભગવાન અકિલષ્ટકર્મા છે એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે. તેથી જ મર્યાદાનો ભંગ છે છતાં  
 પણ ભંગ નથી એમ સિદ્ધ થાય છે. આ પ્રમાણે ભગવાનનું નિરંકુશ આત્મતંત્રત્વ  
 સિદ્ધ થાય છે; આમ જો ન હોય તો ભગવાનનું પોતાના ઐશ્વર્ય વિગેરે ધર્મને અધીન  
 એવું જે સ્વાતંત્ર્ય તે નષ્ટ થઈ જાય. રસના અનુભવમાં અને રસને ધારણ કરવામાં  
 જો ભગવાન અનુક્રમે દેશની મર્યાદાનું અને કાલની મર્યાદાનું પાલન કરે તો



ભગવાનના બ્રહ્મરૂપત્વનો નાશ થાય. તે પ્રમાણે ન થાય એટલા માટે દેશ અને કાલ એ બેની મર્યાદાનો ભગવાને ભંગ કર્યો.) ૨૩.

જલમાં પ્રવેશ કરીને ભગવાને જલક્રીડા પણ કરી એમ ‘સઃ’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

સોડમ્ભસ્યલં યુવતિભિઃ પરિષિચ્યમાનઃ પ્રેમગેક્ષિતઃ પ્રહસતીભિરિતસ્તતોડ્ગ્ગા! |  
વૈમાનિકૈઃ કુસુમવર્ષિભિરીડ્યમાનો રેમે સ્વયં સ્વરતિરાત્તગજેન્દ્રલીલઃ ||૨૪||

હે અંગ! વ્રજયુવતિઓ જલમાં આપને સર્વતઃ અભિષેક કરવા લાગ્યાં; હાસ્ય કરતાં ગોપીજનો આપનું પ્રેમથી દર્શન કરવા લાગ્યાં, પુષ્પોની વૃષ્ટિ કરતા અને વિમાનમાં બેઠેલા દેવો આપને અભિનંદન આપવા લાગ્યાઃ આ પ્રકારના, આત્મારામ અને પોતાને વિષે જ જેમની રતિ છે એવા ભગવાને ગજેન્દ્રની લીલાનો સ્વીકાર કરીને રમણ કર્યું. ૨૪.

‘સઃ’ એટલે જેમનું પહેલાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે એવા સ્ત્રીઓ સાથે રહેલા ભગવાન. જલની અંદર યુવતિઓએ ભગવાનનો ખૂબ અભિષેક કર્યો. પછીથી તે યુવતિઓએ પ્રેમથી ભગવાનની ઉપર દૃષ્ટિ નાખી. આ ગોપીજનોએ હસતાં હસતાં, કૌતુક વાળાં થઈને, ભગવાનનો ચારે બાજુથી અભિષેક કર્યોઃ અર્થાત્ જે ગોપીજનની સામે ભગવાન જાય તેમની સાથે ભગવાને રમણ કર્યું. આ પ્રમાણે બધાં ગોપીજનો સાથે ભગવાન રમ્યા. જેવી રીતે હું-શુકદેવજી-પોતે ભગવાનનું માહાત્મ્ય જાણીને પુષ્કળ સ્નેહથી નિર્દોષભાવે બોલું છું, તેવી જ રીતે પરીક્ષિત્ રાજા પણ શ્રવણ કરે છે એ જાણીને શુકદેવજી સ્નેહથી સૂચવે છે કે પરીક્ષિત્ પોતાનો અંતરંગ છે, અને તેથી તે પરીક્ષિતને ‘અડ્ગ’ એ પ્રમાણે સંબોધે છે. આ કારણથી જ-મારો તારામાં સ્નેહ છે તેથી જ-હું તને આ લીલા કહું છું એમ તાત્પર્ય છે.

(બહુ માણસો એક જ વખતે વગર વિચારે બીજાનો જલથી અભિષેક કરે તો તે માણસ વ્યાકુલ થઈ જાય છે એમ જગતમાં જણાય છે; તો પછી આ પ્રસંગે પણ તે પ્રમાણે થવાનો સંભવ હોવાથી ભગવાનના અંતરંગ ભક્તોએ ‘ભગવાનનો અભિષેક ધીમે ધીમે કરો, આ પ્રમાણે એક સામટો અભિષેક કરશો નહિ’ એ પ્રમાણે ગોપીજનોને વિનંતી કેમ ન કરી? આ શંકા દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) અરે! દેવોએ ગોપજનોને અટકાવ્યાં કેમ નહિ? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કુસુમવર્ષિભિર્વૈમાનિકૈરીડ્યમાનઃ’, પુષ્પોની વૃષ્ટિ કરતા અને વિમાનમાં બેઠેલા દેવોથી જેમની સ્તુતિ કરવામાં આવે છે એવા ભગવાન છે. બધા દેવો ભગવાનને અભિનંદન જ આપે છે, પણ કોઈને અટકાવતા નથી; અન્યથા-જો

નિવારણ કરવામાં આવે તો-લોકમાં કામરસ પ્રકટ થાય નહિ. (ભગવાન્ જ્યારે ગોપીજનો સાથે રમણ કરે છે ત્યારે બીજા ભક્તોને પણ તેમનાં દર્શન દુર્લભ છે; પરંતુ, પહેલાં આ અધ્યાયના ચોથા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે 'વિમાનશત-સહકુલમ્-આકાશ સો વિમાનોથી ભરાઈ ગયું હતું-', એટલે આકાશમાં વિમાનમાં રહેલા દેવોને ભગવાનનાં દર્શન થાય એ સંભવે છે. પણ આ દેવો તો પ્રભુની લીલામાં ઉપયોગી થઈ પડે એવા મંડપરૂપે આકાશમાં રહ્યા હતા, અને તે દ્વારા થએલા સંબંધથી જ દેવોને આનંદ થયો અને ભગવાનની ઈચ્છાથી પુષ્પની વૃષ્ટિ, ભગવાનની સ્તુતિ અને રસનો અભિનિવેશ એ ત્રણ જ દેવોને વિષે થયું, પરંતુ ભગવાનનાં દર્શન સરખાં પણ તેમને થયાં નહિ. જો કે દેવોને ભગવદ્રમણનાં દર્શન થાય તો પણ તેઓ ગોપીજનોને કાંઈ પણ કહી શકે એમ નથી, કારણ કે ગોપીજનોને કહેવાનો અધિકાર ભગવાન્ વિના બીજા કોઈનો નથી. છતાં પણ જે વસ્તુ બીજે સ્થલે દુઃખદાયક હોય છે તે વસ્તુને આ ગોપીજનોએ ભગવાનને ઘણું સુખ આપનારી બનાવી દીધી એ દર્શાવવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજીએ શંકા ઉઠાવી કે દેવોએ ગોપીજનોને કેમ અટકાવ્યાં નહિ. આ કારણથી જ શુકદેવજી કહે છે કે 'આત્મગજેન્દ્રલીલ:', ભગવાને ગજેન્દ્રની લીલા સ્વીકારી. તેથી, જ્યારે ગોપીજનો ભગવાનના ઉપર પાણી છાંટે છે ત્યારે ભગવાન્ પોતાના બે હાથ ઉંચા કરીને તે જલ અટકાવી શકે, પણ ભગવાન્ તેમ કરતા નથી; ભગવાન્ તો ઉલટા ગોપીજનોની સામે જ પોતાના બે બાહુઓ લંબાવે છે. આ હેતુથી શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે બધા દેવો અભિનંદન જ કરે છે, નિષેધ કરતા નથી. ભગવાનના બાહુઓ દેવતારૂપ હોવાથી બાહુના અવયવો-આંગળીઓ, હાથ વિગેરે-પણ દેવતારૂપ છે એમ ભાવ છે; ભગવાન્ જો પોતાના બાહુથી ગોપીજનોનું નિવારણ કરે તો ગોપીજનરૂપી લોકમાં કામરસ પ્રકટ થાય નહિ. આ પ્રમાણે શ્રીગોસ્વામિજી ટિપ્પણીમાં મૂલ શ્લોકના ત્રીજા ચરણના બે અર્થ આપે છે; એક પ્રત્યક્ષ અને બીજો પરોક્ષ. પ્રત્યક્ષ અર્થ વિમાનમાં રહેલા દેવો વિષે છે, અને પરોક્ષ અર્થમાં ભગવાનના બાહુને દેવો કહેવામાં આવે છે. દેવોનો અર્થ ભગવાનના બાહુ કરવામાં આવે ત્યારે 'વૈમાનિકૈઃ' અને 'કુસુમવર્ષિભિઃ' એ બે વિશેષણોનો સંબંધ ભગવાનના બાહુ સાથે કરવો નહિ.)

શ્લોકમાં જે 'યુવતિ' શબ્દ છે તે એમ દર્શાવે છે કે ગોપીજનો યુવતિઓ હોવાથી શૃંગાર રસના કૌતુકથી વગર વિચારે ભગવાનનો ચારે બાજુથી અભિષેક કરે છે. ભગવાનનો અભિષેક કરવામાં વીરરસ ન થાય એટલા માટે ગોપીજનોએ ભગવાનના ઉપર પ્રેમથી જ દષ્ટિ નાખી. શ્લોકમાં 'સ્વયમ્' પદ છે તે સૂચવે છે કે

ભગવાને બલાત્કારથી પણ રમણ કર્યું; તો પણ ભગવાનની રતિ પોતાનામાં જ હતી; પણ ભગવાને ગજેન્દ્રની લીલાનો સ્વીકાર કર્યો હતો. જેમ જેમ જલ છાંટવામાં આવે તેમ તેમ સુખ થાય એ દર્શાવવાને માટે લાથીનું દષ્ટાંત આપવામાં આવ્યું છે. મલાસૌરત પણ થયું એ દર્શાવવાને માટે પણ લાથીનું દષ્ટાંત આપવામાં આવ્યું છે. ૨૪.

પછી શુકદેવજી પુષ્પને એકઠાં કરવાની ક્રીડાનું વર્ણન 'તતઃ' શ્લોકમાં કરે છે:  
તતશ્ચ કૃષ્ણોપવને જલસ્થલ-પ્રસૂનગન્ધાનિલજુષ્ટદિક્તટે ।

ચચાર ભૂંગાપ્રમદાગણાવૃત્તો યથા મદચ્યુદ્ દ્વિરદઃ કરેણુભિઃ ॥૨૫॥

પછીથી, જેમ મદ છોડતો લાથી લાથણીઓની સાથે ખેલે છે તેમ જલ અને સ્થલના પુષ્પોના ગંધવાળો પવન સર્વ દિશાઓમાં ફરે છે એવા શ્રીયમુનાજીના ઉપવનમાં ભમરાઓ અને સ્ત્રીઓથી વિંટળાએલા ભગવાન ઈર્ષ્યા. ૨૫.

જલક્રીડા કર્યા પછી કૃષ્ણાના-શ્રીયમુનાજીના-ઉપવનમાં; જલ અને સ્થલના પુષ્પોની જે ગંધ તેના સંબંધવાળો વાયુ જ્યાં પ્રસરેલો છે એવા દિક્તટો-સર્વ દિશાઓના ભાગો-જેમાં છે એવા પ્રકારના (શ્રીયમુનાજીના) ઉપવનમાં ફરીથી ભગવાન ઈર્ષ્યા. (જલક્રીડા કરવાથી કુંકુમ, માલા વિગેરે જતું રહેલું હોવાથી ફરીથી ભમરાઓ જાય તેનું કારણ દર્શાવતાં શ્રીમલાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે 'પુનર્', ફરીથી.) ભમરાઓ અને સ્ત્રીઓના યૂથો ભગવાનને વિંટી વળ્યાં હતાં. ભમરાઓ ફરીથી ભગવાનની પાછળ ગયા એનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી મદ છોડતા લાથીનું દષ્ટાંત આપે છે. જે પ્રકારે મદચ્યુત-ગાલ અને બીજે સ્થલે મદ ઝરે છે એવો-લાથી લાથણીઓની સાથે, અને ભમરાઓની પણ સાથે ફરે છે તે પ્રકારે ભગવાન ઈર્ષ્યા. અંતઃકરણમાં રહેલો સ્વાભાવિક રસ જ પ્રકટ થયો તેથી ભમરાઓ ભગવાનની પાછળ દોડ્યા. 'ચચાર', ઈર્ષ્યા, એ પદ વડે સર્વ સ્થલે અનેક પ્રકારની લીલાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. જેમ મદવાળો લાથી કોઈક વખત લતાઓનો નાશ કરે છે, અને કોઈક વખત વૃક્ષની શાખાઓનો નાશ કરે છે, તેમ ભગવાને કોઈક વખત મર્યાદામાર્ગનો ભંગ કર્યો અને કોઈક વખત લૌકિકમાર્ગનો ભંગ કર્યો. આ-સ્થલની, જલની અને પુષ્પો એકઠાં કરવાની એમ-ત્રણ પ્રકારની ભગવાનની લીલા અતિ અલૌકિક છે. (લૌકિક પ્રકારની લીલાનું વર્ણન આવતા શ્લોકમાં 'કાવ્યકથા' પદ વડે કરવામાં આવશે.) પછીથી ભગવાને વગર વિચારે રમણ કર્યું. (પહેલાંની લીલામાં દેશ, કાલ અને નાધિકાનો વિચાર કરીને રમણ કરવામાં આવ્યું હતું; પણ પછીથી લીલામાં આવો વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી.) ૨૫.

આ પ્રમાણે ભગવાનની લીલાનું વર્ણન કરીને ‘એવમ્’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી ઉપસંહાર કરે છે:

એવં શશાઙ્કાંશુવિરાજિતા નિશાઃ સસત્યકામોઽનુરતાબલાગણાઃ ।

સિષેવ આત્મન્યુપરુદ્ધસૌરતઃ સર્વાઃ શરત્કાવ્યકથા રસાશ્રયાઃ ॥૨૬॥

સત્ય કામવાળાં ગોપીજનો જેમની સાથે છે અને જેમના વિષે સ્ત્રીઓ પ્રીતિ રાખે છે એવા ભગવાને પોતાનામાં જ રતિ સ્થાપીને ચંદ્રના કિરણોથી શોભતી રાત્રીઓનું અને રસના આશ્રયરૂપ અને શરદ્ ઋતુનું વર્ણન કરનારી સર્વ કાવ્યકથાઓનું આ પ્રમાણે સેવન કર્યું. ૨૬.

શશાંકના અંશુઓથી-લૌકિક ચંદ્રના કિરણોથી-જે રાત્રીઓ શોભતી હતી તેમાં આ પ્રકારે ભગવાને રમણ કર્યું. (પહેલાં એક રાત્રીનાં રમણનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું હતું; જ્યારે આ શ્લોકમાં બધીય રાત્રીઓના રમણનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. આ પ્રમાણે લૌકિક રાત્રીઓમાં અલૌકિક રાત્રીઓનું સ્થાપન કરીને બધી રાત્રીઓમાં ભગવાને રમણ કર્યું, કામલીલા કરી.) પહેલાં જણાવેલો પ્રકાર તો હંમેશાં લીલારૂપ છે અને તેનો કોઈ પણ પ્રકાર સાથે વિરોધ આવતો નથી. (પહેલાં નૃત્યથી અંદરનો ભાવ પ્રકટ થવાથી આંતર રમણનો પ્રકાર હતો. તેમાં જે ભાવ જે ગોપીજનની અંદર સ્થાપવામાં આવ્યો હતો તે ભાવનો અનુભવ તે ગોપીજન હંમેશાં કરે છે. તેથી જ્ઞાનરૂપી તાંબૂલ જે ગોપીજનની પાસે છે તે ગોપીજનનું કાર્ય ભગવાનની ગેરહાજરીમાં સર્વને ઉપદેશ આપવાનું છે એમ ત્યાં કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકાર ઘેર જવું ઈત્યાદિ પ્રકારોની સાથે વિરુદ્ધ નથી. આ કારણથી જ ‘સ્ત્રીષુ રેમે દ્વલર્નિશમ્’ એ પ્રમાણે છઠ્ઠીસમા અધ્યાયના આરંભની કારિકાઓમાં કહેવામાં આવેલું છે. અર્થાત્ તે રમણ દિવસે પણ હોવાથી તેમાં અલૌકિક રાત્રીઓનું સ્થાપન વિગેરે કરવામાં આવ્યું નથી.)

અરે! આ પ્રમાણે કામલીલાથી રમણ કરવામાં શો હેતુ છે? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘સસત્યકામઃ’, સત્ય છે કામ જેમનો એવાં ગોપીજનો સત્યકામ કહેવાય છે; ભગવાન્ આવાં સત્યકામ ગોપીજનોની સહિત છે એટલે ભગવાન્ ‘સસત્યકામ’ કહેવાય છે. (‘સઃ’ અને ‘સત્યકામઃ’ એમ બે પદ છૂટાં લઈને શ્રીમહાપ્રભુજી બીજો અર્થ આપતાં આજ્ઞા કરે છે કે) અથવા ‘સઃ’, એટલે ગોપીજનોએ જેમની તે પ્રકારે પ્રાર્થના કરી છે એવા પ્રભુ. આ પ્રમાણે અર્થ કરવાથી પણ ક્રીડામાં કામ સત્ય જ છે, ક્ષીણ થયો નથી, તેમ જ તે કામનો વિષય પણ ખરાબ નથી. (દશમસ્કંધના ઓગણીસમા અધ્યાયમાં કુમારિકાઓએ કાત્યાયનીને પ્રાર્થના

કરી કે ‘પતિ મે કુરુ’-નંદરાયજીના પુત્રને મારા પતિ બનાવો; આ પ્રકારે કુમારિકાઓ નો અભિલાષ કામપ્રકારક હતો. ‘કામિનીભાવમાસાધ’-કામિનીભાવ પ્રાપ્ત કરીને-એ વાક્યથી જણાય છે કે શ્રુતિરૂપા ગોપીજનોનો અભિલાષ પણ કામપ્રકારક હતો. અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનોનો અભિલાષ તો કામપ્રકારક હતો એ વાત સ્પષ્ટ જ છે. આ પ્રમાણે આ ત્રણેય જણના અભિલાષ સત્ય હોવાથી તે પૂરવાને માટે ભગવાને આ પ્રમાણે રમણ કર્યું. ભગવાનના ધર્મો નિત્ય હોવાથી ભગવાનનો કામ ક્ષીણ થતો નથી. ભગવાનના ધર્મો હંમેશા અસ્તિત્વમાં હોય છે, એટલે વિષયની દૃષ્ટિએ ભગવાનના કામનો સંબંધ અસત્-અવિદ્યમાન, ખરાબ-પદાર્થની સાથે થતો નથી.)

(લોકદૃષ્ટિથી ગોપીજનો બીજાઓની સ્ત્રીઓ હોવાથી ભગવાનના રમણનો વિષય અસત્ થાય એવી શંકા કરવામાં આવે જ. તેથી તે શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી ‘અનુરતાબલાગણ:’ એ વધારાનું વિશેષણ વાપરે છે. આ વાત સમજાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) સ્ત્રીઓના પૂથોની પ્રીતિ છે જેમના ઉપર એવા ભગવાન છે. (૧) જે કુમારિકાઓ ભગવાનમાં સર્વથા પ્રીતિ રાખે છે તે, (૨) નિત્યલીલામાં રહેલાં અને તેથી ભગવાનની સાથે નિત્ય સંબંધમાં આવેલાં જે શ્રુતિરૂપા અને અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનો, (૩) દ્વારકાની લીલામાં રહેલાં, અને ભગવાને પોતે જેમની સાથે વિવાહ કરેલો છે તે સ્ત્રીઓ, અને (૪) ભગવાનને સર્વથા શરણે ગએલાં ગોપના ઘરના સંબંધવાળાં જે ગોપીજનો-આ પ્રમાણે આ ચાર પ્રકારની સ્ત્રીઓ વિષે કોઈ પણ પ્રકારની દોષની શંકા સંભવતી નથી. (આ પ્રમાણે આ ચાર પ્રકારની સ્ત્રીઓ ભગવાનમાં પ્રીતિ રાખે છે એટલે ભગવાનના આત્મારામત્વનો ભંગ થતો નથી. આ પ્રકારનો અર્થ પ્રકાશકાર શ્રીપુરુષોત્તમજી કરે છે. લેખકાર શ્રીવલ્લભજી બીજા અર્થ કરે છે, અને તે આ પ્રમાણે છે. સ્ત્રીઓનાં પૂથો પહેલાં જણાવવામાં આવ્યું તે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારનાં છે, અને તેથી શ્રીસુબોધિનીજીમાં ‘ગણા:’ એમ બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. આ ત્રણેય પ્રકારની સ્ત્રીઓ ભગવાનમાં પ્રીતિ રાખે છે તે દર્શાવવા સુબોધિનીજીમાં ત્રણ વિશેષણો આપવામાં આવેલાં છે. શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો ભગવાનમાં સર્વથા સ્ત-પ્રેમવાળાં-છે, અંતર્ગૃહગતા ગોપીજનો ભગવાનની સાથે નિત્યસંબંધવાળાં છે, અને કુમારિકાઓ સ્વવિવાહિત છે, અર્થાત્ ભગવાને પોતે કુમારિકાઓ સાથે વિવાહ કર્યો છે. જે કે કુમારિકાઓનો લોકદૃષ્ટિથી વિવાહ થએલો નથી છતાં પણ તેમણે ‘પતિ મે કુરુ’ એ પ્રમાણે કાત્યાયનીને પ્રાર્થના કરેલી હોવાથી ભગવાને પોતે તેમની સાથે વિવાહ કરેલો છે. આ હેતુથી જ ‘સ્વવિવાહિતાસુ’ એ પદમાં ‘સ્વ’ શબ્દનો પ્રયોગ

કરવામાં આવેલો છે. અર્થાત્ ભગવાને પોતે જ કુમારિકાઓ સાથે વિવાહ કર્યો, લોકની હાજરીમાં નહિ. આ ત્રણ પ્રકારની સ્ત્રીઓના મનોરથ પૂર્ણ કરવાને માટે ભગવાને જે રમણ કર્યું તેમાં દોષની શંકા રહેતી નથી એ વાત સ્પષ્ટ છે. શ્રીમહાપ્રભુજી સાથે સાથે સાધારણ પક્ષ પણ દર્શાવતાં આજ્ઞા કરે છે કે જે સ્ત્રીઓ સર્વથા ભગવાનને શરણે ગએલાં છે તેમના વિષે શંકાને અવકાશ નથી. ભગવાનને શરણે જવારૂપી અનુરતત્વ સર્વસાધારણ છે.)

(તો પછી ભગવાને એકલું રમણ કરવું જ ઘટે છે, મર્યાદાનો ભંગ કરીને રમણ કરવું ઘટતું નથી. આ શંકા દૂર કરવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ભગવાને રમણ કરવામાં મર્યાદાનો જે ભંગ કર્યો તે આગળ ઉપર રસનું પોષણ કરવાને માટે છે. (ભગવાન જે મર્યાદાનો ભંગ કર્યા વિના રમણ કરે તો રસનો વિકાસ થશે નહિ, અને તેને પરિણામે રમણ પણ સિદ્ધ નહિ થાય.) આ જ વાત વાત્સ્યાયન મુનિના કામસૂત્રમાં કહેવામાં આવેલી છે. વાત્સ્યાયન મુનિ કહે છે કે ‘જ્યાં સુધી પુરુષોનો રસ મંદ હોય છે ત્યાં સુધી શાસ્ત્રોનું પાલન થઈ શકે છે; પરંતુ જ્યારે રતિચક્ર પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે શાસ્ત્ર હોતું નથી અને ક્રમ પણ હોતો નથી’ (કામસૂત્ર ૨।૨।૩૨). આ પ્રમાણે ભગવાને મર્યાદા વિનાનું રમણ કર્યું છતાં પણ ગોપીજનોમાં સત્ય જ કામ સ્થાપવામાં આવ્યો. આ સત્ય કામ મોક્ષ-નિત્યલીલામાં પ્રવેશ-આપનારો છે, અને આ કામથી ગોપીજનો ભગવાન મેળવશે જ.

આ પ્રમાણે ભગવાને રાત્રીઓનું સેવન કર્યું. પછીથી ભગવાને પોતાનામાં જ સૌરત-રતિ, વીર્ય-સ્થાપ્યું; તેમણે ગોપીજનોમાં રતિનું સ્થાપન કર્યું નહિ. (રમણમાં સહ-સ્રવણ થયું છતાં પણ ભગવાને ચંદ્રના કિરણોને પોતાનામાં જ સ્થાપ્યાં, ગોપીજનોમાં સ્થાપ્યાં નહિ. જેમ કોઈ પાત્રમાં રહેલું ઘી જ્યારે ઓગળી જાય છે ત્યારે તે જ પાત્રમાં રહે છે, તેમ ભગવાનમાં રહેલાં ચંદ્રના કિરણોનો સ્રાવ થયો તો પણ તે કિરણો ભગવાનમાં જ રહ્યાં.) જે ભગવાન ગોપીજનોમાં રતિનું સ્થાપન કરે તો તેમના વિષે ભગવાનથી પુત્રો ઉત્પન્ન થાય.

બધીય રાત્રીઓ ભગવાને આ પ્રમાણે ગાળી; શરદ્ ઋતુ પણ આ પ્રમાણે ગાળી; કાવ્યકથાઓ પણ આ પ્રકારે સેવી. કાવ્યોમાં વર્ણવેલા પ્રકારે, જ્યદેવે રચેલા ‘ગીતગોવિંદ’ નામના કાવ્યમાં વર્ણવેલા પ્રકારે, પણ, ભગવાને રમણ કર્યું. ગીતગોવિંદમાં વર્ણવેલા પ્રકારે રમણ કરવાનું પ્રયોજન દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘રસાશ્રયા:’. જ્યાં સુધી પુરુષ રસમાં ગૌણ ન બને ત્યાં સુધી તે રસિક થઈ શકતો નથી-આ પ્રકારનો કામરસ કાવ્યોમાં જ, રાત્રીની કથાઓમાં જ, પ્રસિદ્ધ છે. (હવે

‘શરત્’ વિગેરેનો બીજો અર્થ આપતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) અથવા તો શરદનું વર્ણન કરનારું જે કાવ્ય, તેમાં આવેલી જે કથાઓ, તેમના રસનો આશ્રય બનેલી રાત્રીઓ. આ પ્રકારની રાત્રીઓ જગતમાં પ્રસિદ્ધ નથી, પરંતુ કાવ્યમાં જ વર્ણવવામાં આવેલી હોય છે. (મમ્મટાચાર્યે ‘કાવ્યપ્રકાશ’ નામના પોતાના કાવ્યશાસ્ત્ર ઉપરના ગ્રંથમાં દર્શાવ્યું છે તે પ્રમાણે) કાવ્યમાં બ્રહ્માએ જગતમાં કરેલા નિયમો વિગેરે હોઈ શકતું નથી, તેમાં એકલો આનંદ જ હોય છે અને તે બીજાના ઉપર આધાર રાખતું નથી. આટલું જ નહિ પરંતુ (કાવ્યશાસ્ત્રમાં જણાવેલા) બીજા પણ ગુણો કાવ્યમાં હોય છે. અર્થાત્ ભગવલ્લીલાની રાત્રીઓ તે પ્રકારની થઈ. (લૌકિક કાવ્યોમાં પણ સરસ્વતી ભગવાનના સંબંધવાળા પદાર્થોનું જ વર્ણન કરે છે; ફક્ત લૌકિક માણસો જ કાવ્યોનો અર્થ જુદો કરીને સાંસારિક બાબતોમાં ઘટાવે છે. આ કારણથી જ પ્રાચીન મહાનુભાવી પુરુષો લૌકિક ગાથાઓમાં પણ જીવનું નામ દૂર કરીને ત્યાં ભગવાનનું નામ મૂકીને લોકો પાસે ગાન કરાવતા હતા.) ૨૬.

આ પ્રમાણે ભગવાનની આ લીલાનું શ્રવણ કરીને પરીક્ષિત્ રાજાને સંદેહ ઉત્પન્ન થયો. આ શંકાનું નિવારણ કરવાને માટે શુકદેવજી ‘સંસ્થાપનાય’ ઈત્યાદિ ત્રણ શ્લોકોમાં પરીક્ષિત્ રાજાની શંકાનું વર્ણન કરે છે. (કોઈ ભ્રાંતિ પામેલો મનુષ્ય એમ માને કે ભગવાનની આ લીલામાં વિષયની વાત છે, અને તેથી તે અયોગ્ય છે. આ કારણથી જ પરીક્ષિતને શંકા ઉત્પન્ન થઈ. રાજાની શંકાનું શુકદેવજી સમાધાન આપે છે તેથી બીજા કોઈને જો ભગવલ્લીલા વિષે ખોટી બુદ્ધિ થઈ હશે તો તે પણ દૂર થઈ જશે.)

॥રાજોવાચ॥

સંસ્થાપનાય ધર્મસ્ય પ્રશમાયેતરસ્ય ચ ।

અવતીર્ણો હિ ભગવાન્ અંશેન જગદીશ્વરઃ ॥૨૭॥

રાજા કહે છે : ધર્મને સારી રીતે સ્થાપવાને માટે અને અધર્મનો નાશ કરવાને માટે જગતના ઈશ્વર ભગવાન બલદેવજી સહિત અવતર્યા. ૧૭.

ભગવાનની લીલા અવતારથી વિરુદ્ધ છે, લોક અને વેદથી વિરુદ્ધ છે, અને પ્રમેયથી વિરુદ્ધ છે. ત્રણ પદાર્થોથી વિરુદ્ધ એવી આ પ્રકારની લીલા કરવામાં ભગવાનનો જે હેતુ હોય તે અવશ્ય કહેવો જોઈએ. ભગવાને આ પ્રકારની લીલા ન કરી હોત તો પણ તેમની લીલા સિદ્ધ હતી.

તેમાં પ્રથમ પરીક્ષિત્ અવતારથી વિરોધ દર્શાવે છે. ભગવાનનો અવતાર ધર્મનું સારી રીતે સ્થાપન કરવાને માટે છે, કારણ કે ‘ધર્મનું સંસ્થાપન કરવાને માટે

દરેક યુગમાં હું અવતાર લઉં છું’ એ પ્રકારનું ગીતાજીમાં ભગવાનનું વાક્ય છે. અધર્મનો નાશ કરવાને માટે પણ ભગવાનનો અવતાર છે. અર્થાત્ ધર્મનું સંસ્થાપન અને અધર્મનો નાશ એ બે પ્રયોજનને માટે જ ભગવાન અવતાર લે છે. દૈત્ય વિગેરેનો વધ કરવો અને પૃથ્વીનો ભાર દૂર કરવો એ બે કાર્ય અધર્મનો નાશ કરવાને માટે છે. આ પ્રયોજનને માટે જ ભગવાનનો અવતાર છે, બીજા પ્રયોજનને માટે નહિ એમ ‘હિ’ શબ્દ દર્શાવે છે. (દૈત્યોનો નાશ અને પૃથ્વીના ભારને દૂર કરવું એ બંને પણ ભગવાનના અવતારનાં કાર્ય છે, તો પછી આ બે કાર્યની માફક ભગવલ્લીલા પણ અવતારનું કાર્ય છે-આ પ્રમાણે કોઈએ શંકા કરવી નહિ, કારણ કે ભગવલ્લીલા અધર્મનો નાશ કરવામાં ઉપયોગી ન હોવાથી અધર્મના નાશને માટે તે નથી. આથી સ્પષ્ટ થાય છે કે ભગવલ્લીલા અવતારનું ગૌણ કાર્ય પણ નથી.) ઐશ્વર્ય વિગેરે ભગવાનના ગુણો જ લીલામાં સાધન છે એમ ‘ભગવાન’ શબ્દ દર્શાવે છે. જો ધર્મનું સ્થાપન કરવા રૂપી પ્રયોજન ન હોય તો પૂર્ણકામ ભગવાનનો અવતાર ઘટી શકે નહિ. વળી લોકોને મોક્ષ આપવા રૂપી ઉપકાર પણ ધર્મનું સ્થાપન અને અધર્મનો નાશ એ બેથી જ થાય છે. (‘ધર્મ’ એ ‘ભગ’ શબ્દના અર્થમાં જ આવી જાય છે; તેથી તે ધર્મનું રક્ષણ આવશ્યક હોવાથી એ રક્ષણ કરવાનું સાધન ભગવાનના ઐશ્વર્ય વિગેરે છ ભગ જ છે.) ‘અંશેન’ એટલે બલદેવજીની સાથે. ભગવાન અવતાર ધારણ કરીને, જગતમાં આવીને, ધર્મનું સ્થાપન અને અધર્મનો નાશ કરે છે, તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘જગદીશ્વર:’. ભગવાન, ખરેખર, સર્વનું રક્ષણ કરે છે; તેથી સર્વનું રક્ષણ કરવાને માટે ભગવાને બલભદ્રની સાથે અવતાર ધારણ કર્યો. ૨૭.

આ પ્રમાણે હોય તો તેથી શું? આ પ્રમાણે શંકા થતાં પરીક્ષિત્ ‘સ કથમ્’ એ શ્લોકમાં કહે છે કે આ પ્રમાણે થાય:

સ કથં ધર્મસેતૂનાં કર્તા વક્તાભિરક્ષિતા ।

પ્રતીપમ્ આચરદ્ બ્રહ્મન્! પરદારાભિમર્શનમ્ ॥૨૮॥

હે બ્રહ્મન્! ધર્મની મર્યાદાના બતાવનાર, કહેનાર અને સર્વ પ્રકારે રક્ષક એવા ભગવાને પરસ્ત્રી સાથે સંગ કરવા રૂપી ધર્મવિરુદ્ધ આચરણ કેમ કર્યું? ૨૮.

ભગવાન ધર્મની મર્યાદાનું રક્ષણ કરનારા મનુ વિગેરે ઋષિઓના કર્તા છે; ભગવાન પોતે ધર્મનો ઉપદેશ આપનાર છે, અને ધર્મનો નાશ થતો હોય તો તે વખતે તેનું સર્વ પ્રકારે રક્ષણ કરનાર છે. આવા પ્રકારના ભગવાને ધર્મવિરુદ્ધ આચરણ કર્યું. ધર્મનો નાશ, અધર્મનું સ્થાપન, અધર્મ કરવામાં આવ્યો, અધર્મનો ઉપદેશ કરવામાં આવ્યો અને અધર્મનું રક્ષણ કરવામાં આવ્યું; તેથી ભગવાનનું આ ધર્મવિરુદ્ધ



આચરણ અયોગ્ય છે. આ અયોગ્ય આચરણ કરવામાં પ્રયોજન કહેવું જોઈએ એમ દર્શાવવાને માટે પરીક્ષિત્ શુકદેવજીને ‘બ્રહ્મન્’ એ પ્રમાણે સંબોધે છે. ધર્મનો નાશ, અધર્મનું સ્થાપન, અધર્મનું આચરણ, અધર્મનો ઉપદેશ અને અધર્મનું રક્ષણ એ પાંચ પદાર્થો જે કહેવામાં આવ્યા છે તે બધાંનું સ્વરૂપ એક જ ઠેકાણે છે એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘પરદારાભિમર્શનમ્’, પરસ્ત્રી સંગ. (‘સંસ્થાપનાય ધર્મસ્ય પ્રશમાયેતરસ્ય ચ’ એ પંક્તિમાં ધર્મનું સ્થાપન અને અધર્મનો નાશ એ બે ભગવાનના અવતારનાં કાર્ય છે એમ કહીને ‘પ્રતીમાચરત્’ એમ જે કહેવામાં આવ્યું તે ધર્મનો નાશ અને અધર્મનું સ્થાપન એ બેનું વર્ણન કરે છે, ‘કર્તા વક્તાભિરક્ષિતા’ એ પ્રમાણે કહીને ‘પ્રતીપમાચરત્’ એમ કહેવામાં આવ્યું તે અધર્મનું આચરણ, અધર્મનો ઉપદેશ અને અધર્મનું સર્વ પ્રકારે રક્ષણ એ ત્રણનું વર્ણન કરે છે.) ૨૮.

અરે! ભગવાને કામથી આ પ્રમાણે કર્યું - આ પ્રકારની શંકા થતાં પરીક્ષિત્ કહે છે કે ‘આપ્તકામ:’:

આપ્તકામો યદુપતિઃ કૃતવાન્ વૈ જુગુપ્સિતમ્ ।

કિમ્ અભિપ્રાય એતં નઃ સંશયં છિન્ધિ સુવ્રત! ॥૨૯॥

આપ્તકામ યદુપતિ ભગવાને કયા હેતુથી આવું નિંદિત કામ કર્યું? હે સદાચારવાળા શુકદેવજી! મારી આ શંકા દૂર કરો. ૨૯.

ભગવાને પોતે જ બધા મનોરથો પ્રાપ્ત કર્યા છે, એટલે તે ‘આપ્તકામ’ છે. ભગવાન્ પોતે યદુપતિ છે એટલે જો તેમને ઈચ્છા હોય તો પણ અનેક સ્ત્રીઓ તેમને મળી શકે એમ છે. ભગવાન્ આવા પ્રકારના છે છતાં પણ તેમણે લોકો નિંદા કરે એવું પરસ્ત્રીસંગરૂપ કાર્ય કર્યું. આવું કરવામાં ભગવાનનો શો અભિપ્રાય હશે? પરસ્પર વિરુદ્ધ હોવાથી ધર્મ અને અધર્મ એ બેનો તેમાં સંભવ નથી. વળી, વિરુદ્ધ પદાર્થો એક જ સ્થલે રહી શકતા નથી. ભગવાનમાં વિરુદ્ધ સર્વ ધર્મો રહેલા છે, છતાં પણ ભગવાન્ આવું ધર્મવિરુદ્ધ કાર્ય કરે તેમાં પ્રયોજન બતાવવું જોઈએ. પરસ્ત્રીસંગરૂપી કાર્ય જગતને હિત કરનારું નથી, તેમ જ ભગવાનને પોતાને હિત કરનારું નથી, કારણ કે ભગવાન્ પોતે પૂર્ણ છે. લોકને તો મર્યાદા જ હિત કરનારી છે. તે પ્રમાણે ગોપિકાઓને પણ મર્યાદા જ હિત કરનારી છે. (ગોપીજનોનો કામ પૂર્ણ કરવો એ જ ભગવાનની લીલાનું પ્રયોજન છે એમ જો કહેવામાં આવે તો તેના જવાબમાં રાજા કહી શકે કે) ઈશ્વર અંતર્યામી છે અને તેથી તેમને કાંઈ પણ અસાધ્ય નથી, (અર્થાત્ ભગવાન્ અંતર્યામી હોવાથી ગોપીજનોને બીજે પ્રકારે જ પ્રેરણા કરીને તેમનામાં બીજો મનોરથ ઉત્પન્ન કરી શકે એમ છે.) (અથવા તો બીજે પ્રકારે પણ અર્થ સંભવે

છે. ભગવાને આ પ્રકારની લીલા નથી કરી એમ જ માની લો-એમ જો કહેવામાં આવે તો તેનો જવાબ એ કે) ભગવાન્ અંતર્યામી હોવાથી તેમને કાંઈ પણ અસાધ્ય નથી. (અંતર્યામી અને ઈશ્વર એ બે વિશેષણોનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે. જેમ અંતર્યામી હોઈને પણ ઈશ્વર બહાર પણ ફલનું દાન કરે છે, તેમ આ વિસ્ફુદ્ધ લીલા પણ અસાધ્ય નથી.) તેથી આ પરિસ્થિતિમાં ભગવાને કયા અભિપ્રાયથી આ લીલા કરી. કયો અભિપ્રાય છે જેમનો તે ભગવાન્ ‘કિમભિપ્રાયઃ’ કહેવાય છે. અમારા બધાયનો આ સંશય દૂર કરો. વળી, હે સુવ્રત! અર્થાત્ હે સદાચારી વ્રત કરનાર શુકદેવજી! જો ભગવાનની આ લીલા અદ્યટિત જેવી હોય તો આપે તેનું વર્ણન કરેલું ન હોય. જો ભગવાનની લીલા અધર્મ હોય તો આપને તેમાં રુચિ થાય નહિ. પણ ભગવાનની લીલા વિપરીત પ્રકારની દેખાય છે, માટે આપે તેનો નિર્ણય કહેવો જોઈએ એમ અર્થ છે. (ભગવાનની લીલા વિષે બે પ્રકારની શંકા છે; એક શંકા એ કે ભગવલ્લીલા નિંદિત છે, અને બીજી શંકા એ કે ભગવલ્લીલાનું પ્રયોજન શું. પહેલી શંકા બીજા બધાઓને છે, અને બીજી શંકા પરીક્ષિતને પોતાને પણ છે. બીજી શંકાનું સમાધાન ‘અનુગ્રહાય ભક્તાનામ્’ એ સાડત્રીસમા શ્લોકમાં આપવામાં આવેલું છે.) ૨૯.

પ્રથમ પરીક્ષિતે જે કહ્યું કે ભગવાને અવતારવિસ્ફુદ્ધ કાર્ય કર્યું તેનો ઉત્તર શુકદેવજી ‘ધર્મવ્યતિક્રમઃ’ એ શ્લોકમાં આપે છે:

॥શ્રીશુક ઉવાચ॥

ધર્મવ્યતિક્રમો દષ્ટ ઈશ્વરાણાં ચ સાહસમ્ ।

તેજ્યસાં ન દોષાય વહ્નેઃ સર્વભુજો યથા ॥૩૦॥

શુકદેવજી કહે છે કે :- ધર્મનું ઉલ્લંઘન અને સાહસ એ ઐશ્વર્ય ધર્મવાળાઓ માં જોવામાં આવે છે. જેમ સર્વનું ભક્ષણ કરનાર અગ્નિને કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ પ્રાપ્ત થતો નથી તેમ અતિ તેજસ્વી વ્યક્તિઓને દોષ પ્રાપ્ત થતો નથી. ૩૦.

તમે શું કહેવા માગો છો-તમારું કહેવું એવું છે કે ઐશ્વર્ય ધર્મવાળાઓમાં આ પ્રકારનું ચરિત્ર ન હોય, અથવા તો તમે એમ કહો છો કે એક કાર્યને માટે આવેલી વ્યક્તિ બીજું કાર્ય કરે છે. (આનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે.) એક કાર્ય કરવાને માટે આવેલો પુરુષ બીજા કાર્યનો નાશ નથી કરતો એમ નથી. અન્ય પ્રયોજનને માટે આવેલો પદાર્થ પોતાના ધર્મનો ત્યાગ કરતો નથી. પ્રકાશ આપવાને માટે આવેલો દીવો જો ઘરની સાથે સંબંધમાં આવે તો તે ઘરને બાળી જ નાખે છે. (અર્થાત્ દીવો પોતાના સ્વરૂપને ઘરમાં જોડે છે, ઘરને પોતાના જેવું બનાવે છે. તેવી જ રીતે ભગવાન્ પણ ધર્મનું સ્થાપન કરવાને માટે પ્રકટ થએલા છે. છતાં પણ જો તેમને કોઈ

પ્રેમભાવે ભજે તો ભગવાન્ તેનામાં સ્વરૂપાનંદનું સ્થાપન કરે છે જ. જેમ શિકાર કરવા ગએલો રાજા ઉપવનમાં વિહાર કરે છે, વિહાર કરતાં સેવકોને આજ્ઞા આપે છે તેમ ભગવાન્ પણ ધર્મનું સ્થાપન કરવા પ્રકટ થએલા છે છતાં પણ ભક્તોને સ્વરૂપાનંદનું દાન કરે છે. ‘નૃણાં નિઃશ્રેયસાર્થાય વ્યક્તિર્ભગવતો નૃપ’-હે રાજા! મનુષ્યોના કલ્યાણને માટે ભગવાનનું પ્રાકટ્ય છે-એ શ્લોકમાં ભગવાનના અવતારનું પ્રયોજન આપવામાં આવેલું છે. અવતારનું આ પ્રયોજન ભગવાનની લીલાથી પણ સિદ્ધ થાય છે જ. ધર્મનું સ્થાપન અને અધર્મનો નાશ એ બંને પણ મનુષ્યોના કલ્યાણને માટે જ છે; તેથી જો મનુષ્યોનું કલ્યાણ બીજે પ્રકારે સિદ્ધ થઈ શકતું હોય તો પછી ધર્મનું સ્થાપન અને અધર્મનો નાશ એ બેની જરૂર રહેતી નથી. તેથી ભગવાનની લીલા પોતાના અવતારથી વિરુદ્ધ નથી.)

(હવે શ્રીમહાપ્રભુજી જગત્ અને પ્રમેયનો વિરોધ દૂર કરતાં આજ્ઞા કરે છે કે) તેથી આ ઈશ્વરનો ધર્મ છે. આ પ્રમાણે જો કરવામાં ન આવે તો ઈશ્વરનું ઈશ્વરપણું જ ન રહે. (સાધનવિરુદ્ધ ફલનું દાન કરવાથી લીલા કરવાનો ધર્મ ઈશ્વરનો જ છે. ‘ન મય્યાવેશિતધિયામ્’-મારામાં બુદ્ધિ રાખનારાઓમાં કામ પોતાનું કાર્ય કરી શકતો નથી-(ભાગ. ૧૦|૧૯|૨૬) એ શ્લોકમાં આ જ વાત કહેવામાં આવી છે. આથી સ્પષ્ટ સમજાય છે કે વેદના પણ નિયામક ભગવાન્ છે, વેદ કાંઈ ભગવાનનો નિયામક નથી.) બધાં કાર્યોની અંદર ભગવાનને વણિકની માફક નિયમ હોતો નથી.

આ બધા ઈશ્વરના ધર્મો છે એમ કહીને શુકદેવજી ધર્મવ્યતિક્રમ, સાહસ ઈત્યાદિ એ પ્રમાણે તે ધર્મોની ગણના કરે છે. ધર્મવ્યતિક્રમ એટલે જે અસ્તિત્વમાં છે તેનું ઉલ્લંઘન. સાહસ એટલે જે અસ્તિત્વમાં નથી તે કરવું. આ બંને ધર્મો ઈશ્વરમાં જોવામાં આવે છે. ‘જે વસ્તુ જોવામાં આવતી હોય તે અસંભવિત હોય નહિ’ એ પ્રમાણે ન્યાય છે. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તે એમ સૂચવે છે કે ઈશ્વરના સેવકોમાં પણ, અથવા તો વીર્ય વિગેરે ધર્મોવાળાઓમાં આ પ્રમાણે જોવામાં આવે છે. અથવા તો આ જ-ધર્મનું ઉલ્લંઘન જ-સાહસ છે, કારણ કે તે એકદમ બલથી, વગર વિચારે, કરવામાં આવ્યું છે.

અરે! જો આ પ્રમાણે હોય તો પછી તે કર્મનું ફલ કેમ ન થાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તેજ્યસામ્’. અતિ તેજસ્વી પુરુષોમાં આ-ધર્મનું ઉલ્લંઘન-અધર્મ ઉત્પન્ન કરી શકતું નથી, કારણ કે વિધિ અને નિષેધવાક્યો, જેનું નિયમન વેદથી થાય છે તેવાઓને, ઉદ્દેશીને જ હોય છે. (વેદ ભગવાનનો નિયામક નથી, તેથી વેદમાં, શાસ્ત્રમાં, વિધિવાક્યો અને નિષેધવાક્યો ભગવાનને

લાગુ પડતાં નથી. આ પ્રકારે ભગવલ્લીલાનો વેદ સાથેનો વિરોધ દૂર કરવામાં આવે છે. અર્થાત્ ભગવલ્લીલા વેદવિરોધી નથી.) જે પ્રમાણે લોકમાં ઈશ્વર વિધિનિષેધ નો વિષય નથી તે પ્રમાણે વેદમાં પણ ઈશ્વર વિધિનિષેધનો વિષય નથી.

સર્વ કર્મને બાળી નાખવાની શક્તિવાળા અતિ તેજસ્વી પુરુષોને દોષ ઉત્પન્ન થતો નથી એ બતાવવાને માટે શુકદેવજી ‘વક્ત્રે: સર્વભુજ:’ એ દષ્ટાંત આપે છે. અગ્નિ સર્વને બાળે છે તેથી તેનો કાંઈ વધ થતો નથી, તેમ જ તે સર્વનું ભક્ષણ કરે છે છતાં પણ તે અભક્ષ્યનું ભક્ષણ કરનારો કહેવાતો નથી. તે પ્રમાણે અગ્નિ સર્વનું પાન કરે છે, સર્વ સ્થલે પ્રવેશ કરે છે અને સર્વના સંબંધમાં આવે છે છતાં પણ અગ્નિ તે તે પ્રકારે થતો નથી. મિથ્યાજ્ઞાનરૂપી જલથી સિંચાએલા જ અંત:કરણમાં કર્મનું બીજ ધર્મ અને અધર્મના અંકુર ઉત્પન્ન કરે છે, પણ તત્ત્વજ્ઞાનરૂપી તાપથી સૂકાઈ ગએલા જલને લીધે ઊપર-ખારી ભૂમિમાં ધર્મ અને અધર્મના અંકુર ઉત્પન્ન કરતું નથી. ૩૦.

અરે! ‘અતિ તેજસ્વી પુરુષોને પણ આ પરસ્ત્રીગમન કીર્તિ આપનારું નથી’ (ભાગ.૩૧૨.૩૧) એ ન્યાયને લીધે, અને ‘જે અતિ તેજસ્વી પુરુષોના ચરિત્રનું અનુકરણ કરીને લોકો કલ્યાણ પ્રાપ્ત કરે છે’ (ભાગ.૩૧૨.૩૧) એ વિરોધને લીધે ભગવાન આ પરસ્ત્રીસંગ કેવી રીતે કરી શકે? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘નૈતત્ સમાચરેત્’. (‘અતિ તેજસ્વી પુરુષોને પણ પરસ્ત્રીગમન કીર્તિ આપનારું નથી’ એ શંકાનું સમાધાન જો કે આ શ્લોકથી થતું નથી, છતાં પણ આ શ્લોકના ઉત્તરાર્ધમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ભગવાન વિના બીજો કોઈ માણસ આ પ્રમાણે કરે તો તેનો નાશ થાય છે અને ઐશ્વર્ય વિગેરે સંપત્તિવાળા ભગવાનનો આ પ્રમાણે કરવાથી નાશ થતો નથી; તેથી તે શંકાનું સમાધાન આ શ્લોકના ઉત્તરાર્ધથી થઈ શકે છે. આગળ ચોત્રીસમા શ્લોકનાં સુબોધિનીજીમાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરશે કે ‘અંતરંગ ભક્તો જ ભગવાનની આ લીલા જાણે છે, તેથી ભગવાનની કીર્તિનો નાશ થતો નથી’.)

નૈતત્ સમાચરેદ્ જાતુ મનસાપિ હ્યનીશ્વર: ।

વિનશ્યત્યાચરન્મૌઢ્યાદ્ યથાઽરુદ્રોઽધિજં વિષમ્ ॥૩૧॥

જે ઈશ્વર નથી તેણે મનથી પણ કોઈ દિવસ આ આચરણ કરવું નહિ. જેમ સ્ત્રી ભિન્ન કોઈ પુરુષ સમુદ્રના વિષનું ભક્ષણ કરે અને તેનો વિનાશ થાય તેમ જો મૂર્ખતાથી આવું આચરણ કોઈ બીજો કરે તો તેનો વિનાશ થાય છે. ૩૧.

આ ઈશ્વરે કરેલું આચરણ જે ઈશ્વર નથી તેણે કરવું જોઈએ નહિ. જેનામાં ઐશ્વર્ય છે તે જ માણસ આ પ્રમાણે કરે તો તે આચરણ તેને અનિષ્ટ કરતું નથી તેથી

‘જાતુ’-કોઈ દિવસ પણ, ઉત્સુકતાથી પણ-આવું આચરણ કરવું નહિ. વધારે શું કહેવું? મનથી પણ આવું આચરણ કરવું નહિ. જેમનામાં ઐશ્વર્ય છે તે પુરુષોની ક્રિયા ઐશ્વર્યના જેવી જ હોય છે. જે પુરુષ ઈશ્વર નથી તે જો ઐશ્વર્યની ઈચ્છા પણ કરે તો તેનો વધ કરવામાં આવે છે; મહારાજ્યનો અનધિકારી પુરુષ જો મહારાજ્યની ઈચ્છા કરે તો તેનો વધ કરવામાં આવે છે; તેથી મનથી પણ કોઈએ ઈશ્વરનું આચરણ કરવું નહિ. જો આ નિયમથી વિરુદ્ધ ચાલવામાં આવે તો તેમાં બાધક છે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘વિનશ્યતિ’. તે કર્મ-પરસ્ત્રીસંગ-ઐશ્વર્યની સાથે જ રહેલું છે એ વાત મૂર્ખતાને લીધે જાણ્યા વિના ફક્ત તે કર્મ-પરસ્ત્રીસંગ-જ કરનારો માણસ તે જ કર્મથી નાશ પામે છે.

અરે! એક જ કર્મ બીજા ધર્મની સાથે હોય તો નાશ કરતું નથી, પણ જ્યારે એકલું જ હોય ત્યારે નાશ કરે છે; આ શી રીતે બની શકે? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘અસ્દ્રઃ’ સ્દ્ર સિવાયનો કોઈ બીજો પુરુષ, સ્દ્રના જેવું પરાક્રમ જેની પાસે નથી એવો કોઈ પુરુષ, સમુદ્રમાંથી પ્રાપ્ત થએલું કાલકૂટ વિષ જો પૂરેપૂરું પી જાય તો તેનો નાશ થાય છે; તે જ પ્રમાણે જેનામાં ભગવાનનું ઐશ્વર્ય નથી તે જો ભગવાનની બીજી ક્રિયાઓનું અનુકરણ કરે તો તેનો નાશ જ થાય છે. નિંદિત કર્મ પણ કાલકૂટ ઝેરની માફક નાશ કરે છે. કાલકૂટ વિષ ઈશ્વરને જ શોભા આપનારું છે, જેથી મહાદેવ નીલકંઠ બને છે. તે જ પ્રમાણે ભગવાન પણ ગોપીજનો સાથે રમણ કરીને ગોપીજનવલ્લભ બને છે. ૩૧.

અરે! ‘જે અતિ તેજસ્વી પુરુષોના ચરિત્રનું અનુકરણ કરીને લોકો કલ્યાણ પ્રાપ્ત કરે છે’ (ભાગ. ૩।૧૨।૩૧) એ પ્રમાણે વિરોધ છે. આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ઈશ્વરાણામ્’ :

ઈશ્વરાણાં વચસ્તથ્યં તથૈવાચરિતં ક્વચિત્ ।

તેષાં સ્વચ્છન્દચરિતં બુદ્ધિમાન્ ન સમાચરેત્ ॥૩૨॥

ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોનું વચન સત્ય હોય છે; તેમ જ ક્વચિત્ આચરણ પણ સત્ય હોય છે. તેમના સ્વચ્છન્દ ચરિતનું આચરણ બુદ્ધિમાન પુરુષે કરવું નહિ. ૩૨.

ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોનું વચન જ સત્ય છે, અનુસરવા યોગ્ય છે, પણ તેમનું આચરણ તેવું નથી. (ભગવાનનું આચરણ લોકસંગ્રહને માટે નથી પણ પોતાનું નિરંકુશ ઐશ્વર્ય દર્શાવવાને માટે છે; તેથી ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોનું આચરણ બહારથી જેવું દેખાય છે તેવું સત્ય નથી, અનુસરવા લાયક નથી.) કોઈક વખત ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોનું આચરણ પણ સત્ય હોય છે, જો તે તેમના પોતાના વચનને અનુસરનારું

હોય તો. (ભગવાનનું આચરણ સત્ય છે એમ કહેવાનું તાત્પર્ય એ કે ભગવાનના જેવા બીજા ઐશ્વર્યવાળા પુરુષો તે આચરણને અનુસરી શકે છે, બીજા સાધારણ પુરુષો નહિ.) ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોના ઘણા ધર્મો હોય છે; જેવી રીતે તેમનામાં ઐશ્વર્ય હોય છે તેવી રીતે તેમનામાં ધર્માત્મતા હોય છે, દયા હોય છે. તેમાં ઐશ્વર્ય, જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય એ ત્રણ ધર્મોથી ઐશ્વર્યવાળા પુરુષો જે કરે તે સ્વચ્છંદ ચરિત કહેવાય છે. બુદ્ધિમાન્ પુરુષે આ સ્વચ્છંદ ચરિતનું આચરણ કરવું નહિ. (તેત્રીસમા શ્લોકમાં ‘એષામ્’ પદ વડે ઐશ્વર્યનું, અને ‘નિરહઙ્કારિણામ્’ એ પદ વડે જ્ઞાન અને વૈરાગ્યનું વિવરણ કરવામાં આવેલું છે. યોજનકાર લાલૂભદ્વજના અભિપ્રાયે ચોત્રીસમા શ્લોકમાં ‘ઈશિતુઃ’ એ પદ વડે ઐશ્વર્યનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે.) (ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોનું વચન સત્ય છે એમ દર્શાવવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) તેઓ, ખરેખર, અસત્ય બોલતા નથી, કારણ કે તેઓ બીજાઓના અધિકારનો વિચાર કરીને બીજાઓને માટે કહે છે. તેથી તેઓ બીજાઓના અધિકારથી વિરુદ્ધ કહેતા નથી. ૩૨.

અરે! ઐશ્વર્યવાળા પુરુષો જેમ બીજાઓને ખોટું કહેતા નથી, તેમ તેઓ પણ તે પ્રમાણે કેમ કરતા નથી? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કુશલાચરિતેન’:

કુશલાચરિતેનૈષામ્ ઇહ સ્વાર્થો ન વિદ્યતે ।

વિપર્યયેણ વાનર્થો નિરહઙ્કારિણામ્ પ્રભો ॥૩૩॥

હે રાજન્! અહંકાર વિનાના તે ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોને કુશલ આચરણ કરવામાં અહિં પોતાનું પ્રયોજન હોતું નથી, તેમ જ નિષિદ્ધ આચરણ કરવાથી તેમને અનર્થ થતો નથી. ૩૩.

એમને-ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોને-કુશલ આચરણથી અર્થ-પ્રયોજન-હોતો નથી, કારણ કે તેમણે તેના કરતાં પણ અનંત ફલ પ્રાપ્ત કરેલું છે. વિરુદ્ધ આચરણથી, અકુશલ આચરણથી, તેમને અનર્થ પણ થતો નથી. એકલા ઐશ્વર્યવાળા પુરુષોને જ નિષિદ્ધ કર્મ કરવાથી અનિષ્ટ થતું નથી એમ નહિ, પરંતુ જ્ઞાનીઓને પણ નિષિદ્ધ કર્મ કરવાથી અનિષ્ટ થતું નથી. આ પ્રમાણે જ્ઞાન અને વૈરાગ્યનું તુલ્ય સ્વરૂપ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘નિરહઙ્કારિણામ્’. અર્થાત્ અહંકારથી રહિત. કર્તા તરીકેનું અભિમાન ન હોવાથી તેમને કશાથી કાંઈ પણ થતું નથી. જેમનામાં ઐશ્વર્ય હોય છે તે જગતથી વિલક્ષણ હોય છે એમ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી પરીક્ષિતને ‘પ્રભો’ એ પ્રમાણે સંબોધન કરે છે. ૩૩.

જ્યાં જ્ઞાનની સાથે જ રહેલું તે કર્મ-પરસ્ત્રીસંગ-અનિષ્ટ કરતું નથી, તો પછી ઐશ્વર્યની સાથે જો તે કર્મ રહેલું હોય તો તે અનિષ્ટ કરી શકે નહિ એમાં શું કહેવું? આ વાત શુકદેવજી ‘કિમુત’ એ શ્લોકમાં કહે છે :

કિમુતાખિલસત્વાનાં તિર્યઙ્મર્ત્યદિવૌકસામ્ ।

ઈશિતુશ્ચેશિતવ્યાનાં કુશલાકુશલાન્વયઃ ॥૩૪॥

તો પછી સર્વ જીવોના-પશુ પક્ષી, મનુષ્ય અને દેવતાઓના-ઈશ્વર કૃષ્ણને પોતાના સેવકોએ કરેલા પુણ્ય અને પાપનો સંબંધ શી રીતે થાય? ૩૪.

ઈશ્વર સેવકને મારે અથવા તો તેમને એક સ્થિતિમાંથી બીજી સ્થિતિમાં મૂકે તો તેમાં ઈશ્વરને કોઈ પણ જાતની, જેમ લોકની તેમ પરલોકની, શંકા હોતી નથી. નિયામકની જ શંકા હોઈ શકે. ભગવાનનો તો બીજો કોઈ નિયામક નથી એમ જણાવવાને શુકદેવજી કહે છે કે ‘અખિલસત્વાનામ્’, અર્થાત્ બધાં પ્રાણીઓના (ઈશ્વર ભગવાન્ છે). પશુ પક્ષી, મનુષ્ય અને દેવો એ ત્રણ અનુક્રમે તમસ, રજસ અને સત્ત્વ એ ત્રણ ગુણનું કાર્ય છે (આ પ્રમાણે અર્થ કરીએ તો ‘તિર્યઙ્મર્ત્ય-દિવૌકસામ્’ એ ‘અખિલસત્વાનામ્’ નું વિશેષણ બનશે. આ બે પદને ભિન્ન માનીને પણ અર્થ કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) જીવ અને જડના (ઈશ્વર ભગવાન્ છે. ‘અખિલસત્વાનામ્’ એ પદ વડે જીવોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું અને ‘તિર્યઙ્’ પદ વડે જડ પદાર્થોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું.) (તેમ જ ‘અખિલ’ પદ અને ‘તિર્યઙ્’ પદ વડે અનુક્રમે વર્ણવવામાં આવેલા) અપ્રાકૃત અને પ્રાકૃત પદાર્થોના (પણ ઈશ્વર ભગવાન્ છે.) અર્થાત્ સર્વના જ ઈશ્વર પ્રભુ કૃષ્ણ છે. શ્લોકમાં ‘ચ’ છે તે દર્શાવે છે કે કૃષ્ણ આત્મા છે. (‘ઈશિતવ્યાનામ્’નો સંબંધ શ્લોકના ચોથા પાદ જોડે કરવાનો છે એમ જણાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ઈશિતવ્યોના-સેવકોના-સંબંધવાળો; અર્થાત્ સેવકોએ કરેલા ગુણ અને દોષને લીધે સર્વના ઈશ્વર કૃષ્ણને ઈષ્ટ અને અનિષ્ટનો સંબંધ ક્યાંથી હોય? પોતાના આત્મારૂપી દાસીઓ સાથે સંબંધ થતાં જો કોઈના નિયમનમાં ન રહી શકે એવા સર્વના ઈશ્વર કૃષ્ણને આ લોકમાં તથા પરલોકમાં કોઈ પણ પ્રકારનો અપકાર, ખરેખર સંભવતો નથી. (કૃષ્ણ સર્વના ઈશ્વર છે એટલે આ જગતમાં તેમનું કોઈ નિયમન કરી શકે એમ નથી. કૃષ્ણ આત્મા હોવાને લીધે બ્રહ્મ છે એટલે પરલોકની બાબતમાં પણ તેમનું કોઈ નિયમન કરી શકશે નહિ.) દાસીઓ સાથેનો ભગવાનનો સંબંધ ફક્ત અંતરંગ ભક્તો જ જાણે છે, (બીજા કોઈ નહિ), એટલે લોકોમાં ભગવાનની અપકીર્તિ થશે નહિ. વળી, કર્મમાર્ગના વિચારથી, કર્મ પ્રધાન છે એ પક્ષની દૃષ્ટિએ પણ ભગવાનમાં દોષની શંકા કરવી નહિ. ૩૪.

‘પરમેષ્ઠીનો આ યજ્ઞ ખરેખર પહેલાં હતો’, ‘આ, ખરેખર, પહેલાં બ્રહ્મ હતું, તેણે આત્માને જ જાણ્યો’ ઈત્યાદિ શ્રુતિઓમાં જેમ જ્ઞાન અને કર્મથી શ્રેષ્ઠતા દર્શાવવામાં આવી છે (પહેલી શ્રુતિમાં કર્મથી ઉત્કર્ષ અને બીજી શ્રુતિમાં જ્ઞાનથી ઉત્કર્ષ અતાવવામાં આવ્યો છે), તેમ ખરાબ જ્ઞાન અને કર્મથી અપકર્ષ-અધોગતિ પણ સંભવે છે. આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી ‘યત્પાદ’ થી સમાધાન કરે છે :  
 યત્ પાદ-પડ્કજ-પરાગ-નિષેવ-તૃપ્તા યોગ-પ્રભાવ-વિધુતાખિલ-કર્મબન્ધાઃ ।  
 સ્વૈર ચરન્તિ મુનયોઽપિ ન નહ્યમાનાઃ તસ્યેચ્છયાત્તવપુષઃ કુત એવ બન્ધઃ ॥૩૫॥

જે ભગવાનના ચરણકમલના પરાગના સેવનથી તૃપ્ત થએલા છે, યોગના પ્રભાવથી જેમનાં બધાં કર્મનાં બંધનો તુટી ગયાં છે એવા, અને મુનિઓ બંધન નહિ પામતાં પોતાની મરજી પ્રમાણે જ્યારે આચરણ કરે છે, ત્યારે તો પોતાની ઈચ્છાથી શરીર ધારણ કરનાર ભગવાનને બંધ ક્યાંથી જ હોય? ૩૫.

બધાય જીવોને સમાન કર્મથી સમાન ફલ મળતું નથી. આ પ્રમાણે જો ન હોય તો જ્ઞાનશાસ્ત્ર વિગેરે શાસ્ત્રો નકામાં થઈ જાય. (નિષિદ્ધ કર્મ કરીને જો કોઈ પ્રાયશ્ચિત્ત કરે તો તેને અનિષ્ટ થતું નથી. જો જ્ઞાની અથવા યોગી અથવા ભગવાનનો ભક્ત નિષિદ્ધ કર્મ કરે તો તેને તે નિષિદ્ધ કર્મથી પણ અનિષ્ટ થતું નથી. જો સાધારણ માણસની માફક પ્રાયશ્ચિત્ત કરનારાઓને, જ્ઞાનીઓને, યોગીઓને અને ભગવાનના ભક્તોને પણ અનિષ્ટ ફલ મળે તો પ્રાયશ્ચિત્તશાસ્ત્ર, ‘જ્ઞાનરૂપી અગ્નિ સર્વ કર્મોને બાળી નાખે છે’ ઈત્યાદિ શાસ્ત્ર, ‘યોગથી જ પાપને બાળવું’ એ શાસ્ત્ર, અને ‘પાપને બાળવામાં મારા નામની જેટલી શક્તિ છે તેટલું પાપ પાપી માણસ કરી શકતો નથી’ ઈત્યાદિ શાસ્ત્ર વ્યર્થ થઈ જાય.)

ઉત્તમ કર્મો વિગેરે કરનારો મનુષ્ય કોઈક વખત નીચ કર્મ કરે તો તેનાથી તે નીચ થતો નથી. તેમાં ત્રણ માર્ગ કારણભૂત છે. ત્રણેય માર્ગમાં પ્રવૃત્ત થએલો મનુષ્ય નીચલી કોટિમાં જતો નથી એમ શુકદેવજી કહે છે. તેમાં પ્રથમ ભક્તિમાર્ગમાં રહેલો, તેમાં પણ પુષ્ટ થએલો, ભક્ત કોઈ પણ કર્મથી નીચલી કોટિમાં જતો નથી. જે ભગવાનના ચરણકમલના પરાગરૂપ જે સેવકો, તેમની સેવાથી તૃપ્ત થએલા પુરુષો-ભગવાનના ભક્તો સાથે ભગવાનના ગુણોનું સ્મરણ કરીને જ જોએલા અને સાંભળેલા સુખના અંશના આભાસને જેઓ ભૂલી ગયા છે એવા પુરુષો-પોતાની મરજી પ્રમાણે ચાલે છે. (અહિં પ્રકાશકાર શ્રીપુરુષોત્તમજી આજ્ઞા કરે છે કે વર્તમાનકાળમાં જે અતાદશ લોકો-જે લોકો આવા નથી તે-માત્ર ભક્તિમાર્ગમાં પ્રવેશ જ કરીને પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે વર્તે છે તે દુષ્ટ છે એમ જાણવું.) આવા



પુરુષોને કર્મની શ્રેષ્ઠતા સાધક નથી, તેમ જ કર્મની નીચતા બાધક પણ નથી.

કર્મમાર્ગમાં પણ આ પ્રમાણે છે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યોગપ્રભાવ’. યોગ એ, ખરેખર, મહાનુ ધર્મ છે, કારણ કે સ્મૃતિ કહે છે કે ‘આ જ પરમ ધર્મ છે’. યોગનો પ્રભાવ એટલે અણિમા વિગેરે ઐશ્વર્યસંપત્તિ અને જ્ઞાન વિગેરે. તેનાથી જ સારી રીતે નાશ પામ્યાં છે બંધનો જેમનાં; અર્થાત્ પૂર્વ કર્મથી ઉત્પન્ન થએલાં બધાં કર્મનાં સાધનો પણ સારી રીતે નાશ પામેલાં છે. આવા પુરુષો પણ પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે ચાલે છે. જ્ઞાનમાર્ગમાં પણ આ પ્રમાણે છે એમ જણાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘મુનયોઽપિ સ્વૈરં ચરન્તિ’.

આ ત્રણેય પ્રકારના મનુષ્યો-ભક્તિમાર્ગ, કર્મમાર્ગ અને જ્ઞાનમાર્ગના મનુષ્યો-કર્મથી બંધાતા નથી. ‘નહ્યમાનાઃ’ એ પદમાં બંધનના અર્થવાળો ‘નહ’ ધાતુ છે. અર્થાત્ બધેય સ્થલે આ પુરુષોને કશાનો સંબંધ થતો નથી.

જ્યાં ભગવાને પ્રવર્તાવેલા માર્ગોમાં પણ આ વ્યવસ્થા છે તો પછી ભગવાનની બાબતમાં શું કહેવું? આ અર્થ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તસ્યેચ્છયા આત્તવપુષ’. ઈચ્છાથી ભોગને માટે પ્રકટ કર્યા છે સ્વરૂપો-‘જેટલાં ગોપીજનો’ તેટલાં સ્વરૂપો-જેમણે એવા ભગવાન. આવા ભગવાનને કયા કારણથી બંધ હોઈ શકે? જે એટલાં રૂપો પ્રકટ કરે છે અને કાર્ય કરીને પાછાં તે રૂપોને તિરોહિત કરે છે તેમને કયા કર્મથી બંધ થાય? (જે રૂપથી ભગવાન કર્મ કરે છે તે રૂપ અને કર્મનું આચ્છાદન, તિરોહાન, જ કરવામાં આવે છે; કાંઈ તે રૂપ અને કર્મની ઉત્પત્તિ અને વિનાશ થતાં નથી. આ પ્રમાણે બધાં ભગવાનનાં કર્મો નિત્ય છે, તેથી ઉચિત અને અનુચિત કર્મો ભગવાનમાં સર્વદા રહેલાં છે, એટલે ભગવાનને કયા કર્મથી બંધ થઈ શકે? કારણ કે ભગવાનમાં મોક્ષ આપનારાં કર્મો પણ રહેલાં છે. જે સ્થલમાં મોક્ષ આપનારાં કર્મ ન હોય તેવા સ્થલમાં જ બંધ કરનારાં કર્મ પુરુષનું બંધન કરે છે, પણ જે સ્થલે મોચક કર્મ હોય તે જ સ્થલમાં રહેનારાં બંધક કર્મ બંધ કરી શકતું નથી. તેથી ભગવાનમાં બંધનનો સંભવ નથી. આ પ્રમાણે ભગવાનનાં બધાં કર્મો નિત્ય હોવાથી ભગવાનનો બંધ તેમ જ મોક્ષ સંભવતો નથી.)

કર્મ, ખરેખર, દરેકને માટે નક્કી કરવામાં આવેલું છે. તેમાં જો ભિન્ન ભિન્ન જીવ હોય તો તેને તે કર્મથી પણ બંધ થાય. (બ્રાહ્મણે આ સમયે આ કર્મ કરવું, ક્ષત્રિયે આ સમયે આ કર્મ કરવું, આ અધિકારી પુરુષે આ સમયે આ કાર્ય ન કરવું એ પ્રમાણે દરેકને માટે કર્મની વ્યવસ્થા કરવામાં આવેલી છે. જો બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય વિગેરે પ્રકારથી-તે તે દેહને લીધે-જીવ ભિન્ન ભિન્ન થાય તો તે જીવને તે તે કર્મથી બંધ

થાય. પણ ભગવાનની બાબતમાં તો એવું છે કે ભગવાનને બહુ રૂપો હોય છે છતાં પણ તે જીવરૂપ ન હોવાથી, તે તે રૂપો પણ આત્મરૂપ હોવાથી, અને બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય વિગેરે દેહનો ભેદ ન હોવાથી ભગવાનને માટે કોઈ પણ કર્મનું વિધાન નથી તેમ જ નિષેધ નથી, એટલે ભગવાનને કોઈ પણ પ્રકારનો બંધ સંભવતો નથી. પ્રકાશકાર શ્રીપુરુષોત્તમજી બીજે પ્રકારે અર્થ કરે છે. તે આ પ્રમાણે છે. કર્મ, ખરેખર, અમુક અમુક સ્વરૂપને ઉદ્દેશીને જ હોય તો તે સ્વરૂપથી અથવા કર્મથી બંધ થાય.) આકાશની માફક ભગવાનનાં રૂપો પદે પદે જુદાં જ હોય છે. જેમ અન્નભેદ હોય છે છતાં પણ એક જ દેહ છે એવો વ્યવહાર કરવામાં આવે છે, તેમ દેશભેદ હોવા છતાં પણ સર્વતઃ જેમના હસ્ત અને ચરણો પહોંચેલા છે એવા ભગવાન પોતાની ઈચ્છાથી એક દેહની મર્યાદાથી પ્રકટ થાય છે. (અન્ન એટલે પૃથ્વી, કારણ કે ‘જે કૃષ્ણ છે તે અન્નનો વર્ણ છે’ એ શ્રુતિમાં તે પ્રમાણે સિદ્ધ થએલું છે. લૌકિક દેહમાં વધારો થાય છે, ફેરફાર થાય છે અને તેથી તે દેહમાં રહેલા પૃથ્વીના અંશો એકઠા થાય છે અને છૂટા પડે છે અને તેથી તે દેહમાં ભેદ પ્રાપ્ત થાય છે, છતાં પણ તે દેહ પહેલેથી છેવટ સુધી ચાલુ રહેતો હોવાથી અને તેમાં રહેલો જીવ પણ એક જ હોવાથી દેહ એક જ છે એવો વ્યવહાર કરવામાં આવે છે; તે જ પ્રમાણે અહિં પણ એક જ દેહ છે એવો વ્યવહાર કરવામાં આવે છે.)

(અરે! ભગવાનના હસ્ત અને ચરણ સર્વત્ર પ્રસરેલા છે, અને તે પ્રકારે જે સમાધાન આપવામાં આવ્યું તે ‘આત્તવપુષઃ’ એ પદથી વિરુદ્ધ છે. આ પ્રકારે કોઈને શંકા થાય તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી બીજે પ્રકારે સમાધાન આપે છે.) અથવા તો સ્વામિનીઓનાં રૂપો ભગવાને ઈચ્છાથી ધારણ કર્યાં. તેથી પ્રમાણ અને પ્રમેયની દૃષ્ટિએ વિચાર કરતાં પણ ભગવાનને બંધ સર્વથા સંભવતો નથી. (અહિં સુધી શુકદેવજીએ પરીક્ષિતની શંકાનું લૌકિક રીતે સમાધાન આપ્યું; હવે છત્રીસમા શ્લોકથી વસ્તુસ્થિતિને અનુસરીને સમાધાન આપવામાં આવે છે.) ૩૫.

અરે! તો પણ લોકની મર્યાદાનો ભંગ થવાથી ‘શ્રેષ્ઠ પુરુષ જે જે આચરણ કરે છે’ એ ન્યાયથી શબ્દબલના વિચારથી ભગવાનને બંધ થાય. પહેલાં ભક્તિમાર્ગ, કર્મમાર્ગ અને જ્ઞાનમાર્ગના જે અનુયાયીઓનો દાખલો આપવામાં આવ્યો તે તો, ખરેખર, અવધૂત છે, તે કાંઈ જગતના વ્યવહારના નિયામક નથી. એટલે તે દૃષ્ટાંત આપણા ચાલતા પ્રસંગની સાથે બંધ બેસતું નથી. આ પ્રકારની શંકા થતાં શુકદેવજી ‘ગોપીનામ્’ એ શ્લોકમાં સમાધાન કરે છે કે તે શંકા ફક્ત ભ્રાંતિ છે.

ગોપીનાં તત્પતીનાં ચ સર્વેષામપિ દેહિનામ્ ।

योऽन्तश्चरति सोऽध्यक्षः क्रीडनेनेह देहभाक् ॥३६॥

ગોપીઓ, તેમના પતિઓ તથા બધાય મનુષ્યોના જે અંતર્યામી છે તે જ ભગવાન્ ક્રીડા કરવાને માટે પ્રત્યક્ષ પુરુષનો દેહ ધારણ કરે છે. ૩૬.

પોતાને માટે પોતાના સ્પર્શનો કોઈ પણ ઠેકાણે નિષેધ કરવામાં આવ્યો નથી. પરસ્ત્રી એટલે બીજી સ્ત્રી અથવા તો બીજાની સ્ત્રી. આ બંને-બીજી સ્ત્રી અને બીજાની સ્ત્રી-પણ ભગવાનમાં હોતાં નથી, કારણ કે ભગવાન્ ગોપીઓના અને તેમના પતિઓના આત્મા છે. બધા બાંધવો અને લૌકિક પુરુષો તે પ્રમાણે માનતા નથી-એમ જો શંકા કરવામાં આવે તો તેનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે બધાય મનુષ્યોનો આત્મા ભગવાન્ છે. આ ભગવાન્ મુખ્યપ્રાણરૂપે અથવા જીવરૂપે સર્વની અંદર રહેલા છે. (ભગવાન્ ગોપીજનોના જીવરૂપ હોવાથી ગોપીજનોનો દેહ પણ ભગવાનનો જ દેહ છે, એટલે તેમાં કોઈ જાતનો દોષ નથી. આ દષ્ટિએ જ શ્રીમહાપ્રભુજીએ પ્રથમ આજ્ઞા કરી કે ‘પોતાને માટે પોતાના સ્પર્શનો કોઈ પણ ઠેકાણે નિષેધ કરવામાં આવ્યો નથી’.) બધા વાદીઓના સિદ્ધાંતનો સંગ્રહ કરવાને માટે શુકદેવજી ‘યોઽન્તશ્ચરતિ’ એ પ્રમાણે સામાન્ય વચનનો પ્રયોગ કરે છે. આ જ ભગવાન્ અધ્યક્ષ-પ્રત્યક્ષ-થઈને ક્રીડા કરવાને માટે નટની માફક પુરુષનો દેહ ધારણ કરે છે. વાસ્તવિક રીતે તો ભગવાન્ (દેહની દષ્ટિએ) પુરુષ નથી, સ્ત્રી પણ નથી, તેમ જ અન્ય કોઈ પણ નથી, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ‘તે સ્ત્રી નથી, ખણ્ડ નથી, પુરુષ નથી’. (ભગવાન્ તો પોતે જાતે જ પુરુષ છે, દેહને લીધે નહિ. તેથી જ શ્રુતિમાં એક જ વાક્યમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે ‘પુરુષં પુરુષવિદમ્’.) તેથી કોઈ પણ દષ્ટિએ વિચાર કરતાં ભગવાનમાં દોષ સંભવતો નથી.

અરે! છતાં પણ આ પ્રમાણે કરવામાં ભગવાનનો શો અભિપ્રાય છે? આ પ્રમાણે શંકા થાય તો તેનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘અનુગ્રહાય’ :

અનુગ્રહાય ભક્તાનાં માનુષં દેહમ્ આસ્થિતઃ ।

ભજતે તાદૃશીઃ ક્રીડાઃ યાઃ શ્રુત્વા તત્પરો ભવેત્ ॥૩૭॥

ભક્તોના ઉપર કૃપા કરવાને માટે મનુષ્ય દેહ ધારણ કરીને ભગવાને એવી ક્રીડા કરી કે જેનું શ્રવણ કરવાથી માણસ ભગવાનમાં લીન થઈ જાય. ૩૭.

ભગવાને ભક્તોના ઉપર કૃપા કરવાને માટે જ ભક્તોના જેવું રૂપ, મનુષ્યનો દેહ, ધારણ કર્યો; કારણ કે જો ભક્તોના રૂપ કરતાં બીજા પ્રકારનું રૂપ ભગવાન્ ધારણ કરે તો ભક્તોને જુદા રૂપમાં પ્રકટ થએલા ભગવાનમાં વિશ્વાસ રહે નહિ. તેથી જેમ મનુષ્યના ઉપર કૃપા કરવાને માટે ભગવાન્ મનુષ્યનો દેહ પ્રકટ કરે છે, તેમ

ગોપીજનોના ઉપર પણ કૃપા કરવાને માટે, ગોકુલમાં પોતાના સ્વરૂપાનંદનું દાન કરવાને માટે, ભગવાન્ તેવા પ્રકારની ક્રીડા કરે છે, કારણ કે ભગવાનના જુદા જુદા ધર્મોના પ્રવેશ વિના શ્રોતાઓના જુદા જુદા દોષ નાશ પામતા નથી. (જે ભગવાનની લીલાનું શ્રવણ કરવાથી પણ ભગવદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે તો પછી ભગવલ્લીલામાં રહેલા ભક્તોના સ્વરૂપ વિષે તો શું જ કહેવું?) અથવા તો ભક્તોના મનુષ્ય દેહ પ્રતિ જેમને આસ્થા થઈ એવા ભગવાન્. (આ પ્રકારે અર્થ કરવામાં આવે તો શ્લોકનો અર્થ આ પ્રમાણે કરવો:- ભક્તોના મનુષ્ય દેહ પ્રતિ આસ્થા રાખીને ભગવાને અનુગ્રહને માટે તેવા પ્રકારની ક્રીડા કરી.) ભગવાને ભક્તોના માનુષ્ય દેહ પ્રતિ આસ્થા રાખી છતાં પણ ભગવાન્ મહાન્ અને પૂર્ણકામ હોવાથી સર્વનું દાન કરી શકવાને માટે સમર્થ છે, પણ આ નિષિદ્ધ પ્રકારે આત્માનું-સ્વરૂપાનંદનું-દાન કરતા નથી. (જેમ જીવ ઈન્દ્રિયો દ્વારા સુખ ઉત્પન્ન કરે છે તેમ ભગવાને કર્યું નથી, ભગવાનના રમણમાં નિષિદ્ધ પ્રકાર નથી.) આ પ્રમાણે ભગવાનની લીલામાં નિષિદ્ધ પ્રકાર ન હોવાથી, જે મનુષ્ય ભગવાનની લીલા, જેમાં નિરોધ સિદ્ધ કરીને ન આપવા યોગ્ય પદાર્થનું-સ્વરૂપાનંદનું-દાન કરવામાં આવે છે એવી લીલા, શ્રવણ કરશે તે સર્વથા ભગવત્પર થાય એટલા માટે ભગવાને આ પ્રમાણે આચરણ કર્યું. આ વાત સમજાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘યા: શ્રુત્વા તત્પરો ભવેત્’. ૩૭.

અરે! છતાં પણ જગતના વ્યવહારમાં સ્ત્રીઓ બીજાઓને અધીન હોય છે, તેથી ન આપેલી વસ્તુ લેવી, ગોપોના મનમાં ખેદ અને ગોપોથી કરાતી ભગવાનની અપકીર્તિ આ ત્રણ દોષ પ્રાપ્ત થાય છે. આ પ્રકારની શંકા થતાં શુકદેવજી તેનું સમાધાન કરતાં કહે છે કે ‘નાસૂયન્’:

**નાસૂયન્ ખલુ કૃષ્ણાય મોહિતાસ્તસ્ય માયયા ।**

**મન્યમાના: સ્વપાર્શ્વસ્થાન્ સ્વાન્ સ્વાન્ દારાન્ પ્રજ્ઞૈકસઃ ॥૩૮॥**

ભગવાનની માયાથી મોહિત થએલા વ્રજવાસીઓએ પોત પોતાની સ્ત્રીઓ પોતાની પાસે જ છે એમ માનીને કૃષ્ણની ઈર્ષ્યા કરી નહિ. ૩૮.

તે ગોપ લોકોએ ભગવાનની ઈર્ષ્યા કરી નહિ, તેમણે ભગવાનના તરફ ઈર્ષ્યાથી જોયું નહિ. પોતાની સ્ત્રીઓ ભગવાનની પાસે ગએલી છે એવું ગોપો પ્રથમ જાણતા હતા છતાં પણ ભગવાનની માયાથી મોહિત થઈને તેમણે ભગવાનની ઈર્ષ્યા કરી નહિ. આગળ ઉપર તો ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ગયાં ત્યાંથી માંડીને તે પાછાં ઘેર આવ્યાં ત્યાં સુધી પોત પોતાની સ્ત્રીઓ પોતાની પાસે જ છે એમ ગોપ લોકો માનતા થયા, કારણ કે તેઓ વ્રજમાં રહેનારા હતા, અર્થાત્ પહેલાંનું અને

પછીનું અનુસંધાન કરી શકે એવા ન હતા. (ગોપોમાં અજ્ઞાન હોવાને લીધે ભગવાન ઉપર દોષનો આરોપ તેમણે મૂક્યો નહિ. આ પ્રમાણે માનવાથી ગોપોનો અંગીકાર ભગવાને કર્યો નથી એવું જણાય, અને તે બરોબર નથી, તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી ‘વ્રજૈકસઃ’ પદનો બીજો અર્થ આપતાં આજ્ઞા કરે છે કે) વ્રજમાં રહેનારા એટલે ભગવાનથી તેમનો સર્વથા અંગીકાર થએલો છે. આવા પ્રકારના-જેમનો ભગવાને અંગીકાર કરેલો છે એવા-ગોપો પ્રભુના ઉપર દોષનો આરોપ મૂકે એ સંભવિત નથી એમ તાત્પર્ય છે. આ અર્થ સર્વને જાણીતો છે એ બતાવવાને માટે શુકદેવજી શ્લોકમાં ‘બલુ’, ખરેખર, પદ મૂકે છે. (‘વ્રજૈકસઃ’ એ પદનો અર્થ ‘ભગવાને જેમનો સર્વથા અંગીકાર કરેલો છે’ એ પ્રમાણે કરવામાં આવે ત્યારે શ્લોકમાં આવેલા ‘માયા’ શબ્દનો અર્થ બુદ્ધિ કરવો; અને આખા શ્લોકનો અર્થ આ પ્રમાણે કરવો. ભગવાનની માયાથી-ભગવત્સંબંધી ઉત્કૃષ્ટત્વની બુદ્ધિથી-મોહિત થએલા, અતિસ્નેહવાળા, ગોપોએ ખરેખર ભગવાનની ઈર્ષ્યા ન કરી, પોતાની સ્ત્રીઓ પોતાની પાસે છે એમ માનીને માન આપ્યું.) ગોપીજનો ભગવાનની પાસે હતાં છતાં પણ ગોપોને મોહ થયો એમ કહેવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘તસ્ય’, ભગવાનની (માયાથી). ગોપોની ઈક્ત બુદ્ધિ જ (ભગવાનની માયાથી) ભ્રમને લીધે મોહિત થઈ; બાકીનું બધું ભગવાનનું જ રહ્યું. (અમારી સ્ત્રીઓ અમારી પાસે જ છે એ પ્રકારનો ભ્રમ ગોપોમાં ભગવાને ઉત્પન્ન કર્યો અને તેથી ગોપોની બુદ્ધિ જ ભગવાનની માયાથી મોહિત થઈ ગઈ. બાકીનું બધું-દેહ, ઈન્દ્રિય, પ્રાણ, અંતઃકરણ, જીવ, આપ્ત, ગૃહ વિગેરે-ભગવાનનું જ છે. અને આ પ્રમાણે રમણમાં વાસ્તવિક રીતે દોષ ન હોવાથી મનમાંથી જ બધા દોષો દૂર થઈ શકે છે. (ગોપીઓની બધી વસ્તુઓ ભગવદીય જ છે, અને ગોપો પણ પતિ તરીકે ગોપીજનોની વસ્તુઓ જ છે, એટલે ગોપોનું પણ ભગવાનને નિવેદન થઈ ગએલું જ છે; તેથી ગોપોને ભગવાનમાં દોષની સ્ફૂર્તિ થાય એ મહાન દોષ થાય; પણ જ્યારે ગોપોએ એમ માન્યું કે અમારી સ્ત્રીઓ અમારી પાસે જ છે ત્યારે ભગવાનમાં દોષનું આરોપણ થતું નથી, એટલે ગોપો પણ ભગવાન ઉપર દોષનો આરોપ કરવાડપી દોષ કરતા નથી. બુદ્ધિથી દોષનું આરોપણ પણ સંભવે છે તેથી બુદ્ધિ ભગવદીય નથી; એટલા માટે શ્રીમહાપ્રભુજી સુબોધિનીજીમાં ‘શિષ્ટમ્’-બીજું બધું, બુદ્ધિ વિનાનું અન્ય સર્વ-એ પ્રમાણે આજ્ઞા કરે છે.) આ પ્રમાણે જ્યારે ગોપો નિર્દોષ છે, ત્યારે નિર્દુષ્ટ પદાર્થના સંગથી આ ગોપીજનોમાં પણ કોઈ જાતનો દોષ આવતો નથી એમ સિદ્ધ થાય છે. (જો ગોપો દોષરહિત ન હોત તો તેમના સમાગમથી ગોપીજનોમાં પણ દોષ આવત.) ‘વ્રજૈકસઃ’ એ પદના

બે અર્થ આપવામાં આવેલા છે. જે ગોપો રાત્રીએ ગાન કરનારા છે તેમનો સમાવેશ બીજા પક્ષમાં-જેમનો ભગવાને સર્વથા અંગીકાર કરેલો છે એ પક્ષમાં-થાય છે, અને બીજાઓનો-અજ્ઞાનથી જે ગોપો ભગવાન ઉપર દોષનો આરોપ કરતા નથી એમનો-સમાવેશ પહેલા પક્ષમાં, વ્રજમાં રહેનારા એ પક્ષમાં, થાય છે.) ૩૮.

આ પ્રમાણે પ્રાસંગિક દોષનો પરિહાર કરીને વર્ણવવામાં આવેલી ભગવલ્લીલાનો શુકદેવજી 'બ્રહ્મરાત્રે' એ શ્લોકમાં ઉપસંહાર કરે છે :

બ્રહ્મરાત્ર ઉપાવૃત્તે વાસુદેવાનુમોદિતાઃ ।

અનિચ્છન્ત્યો યયુર્ગોપ્યઃ સ્વગૃહાન્ ભગવત્પ્રિયાઃ ॥૩૯॥

બ્રહ્મરાત્ર થતાં ભગવાનની આજ્ઞાથી ભગવાનને પ્રિય એવાં ગોપીજનો પોતાની ઈચ્છા વિરુદ્ધ પોત પોતાને ઘેર ગયાં. ૩૯.

અરુણોદયને બ્રહ્મરાત્ર કહેવામાં આવે છે. અરુણોદય જ્યારે બરોબર થયો ત્યારે ગોપીજનોના અંતર્યામી તરીકે પ્રવિષ્ટ થએલા ભગવાને ગોપીજનોમાં ઘેર જવાની ઈચ્છા ઉત્પન્ન કરી. તેથી ગોપીજનોને ભગવાનની આજ્ઞા મળી, કારણ કે ભગવાન મોક્ષનું દાન કરનારા છે. (દિવસે વિપ્રયોગ થતાં આર્તિ થાય અને સાંજે જ્યારે પ્રિયનો-ભગવાનનો-સમાગમ થતાં જે આનંદ મળે તે આનંદ ભગવાનનાં હંમેશાં દર્શન કરવાથી મળતો નથી. આ આનંદને-વિપ્રયોગ થયા પછી સમાગમને લીધે ઉત્પન્ન થતા આનંદને-અહિં મોક્ષ કહેવામાં આવે છે. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજાય છે કે અન્યપૂર્વા ગોપીજનોની માફક કુમારિકાઓ પણ ઘેર જાય છે.) ગોપીજનો જે સંધ્યાકાળ સુધી પોતાના અંતઃકરણમાં ભગવાનનું સ્મરણ કરે તો તેમને મોક્ષનો અધિકાર મળે; આ હેતુથી વાસુદેવ ભગવાને ગોપીજનોને ઘેર જવાની આજ્ઞા આપી. જો કે ગોપીજનોને ઘેર જવાની ઈચ્છા ન હતી, કારણ કે બધીય વસ્તુઓનો ત્યાગ કરીને તેમણે ભગવદ્ભજન કર્યું હતું, તેમને ઘરનું અથવા લોકોનું પ્રયોજન ન હતું, છતાં પણ તેઓ ગોપીજન હતાં, તેમને વિપરીત બુદ્ધિ તેમ જ હઠબુદ્ધિ ન હતી, એટલે તેઓ પોત પોતાને ઘેર ગયાં. ગોપીજનો પોત પોતાને ઘેર ગયાં છતાં પણ તેમને ઘર પ્રિય ન હતું, પરંતુ ભગવાન જ તેમને પ્રિય હતા. વળી, ગોપીજનોને સંસારનો ભય ન હતો, કારણ કે તે ભગવાનને પ્રિય હતાં. ૩૯.

ભગવાનનું આ ચરિત્ર મોક્ષ આપવાને માટે છે એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી 'વિક્રીડિતમ્' એ શ્લોકમાં આ ઉપાખ્યાનના શ્રવણનું ફલ કહે છે :

વિક્રીડિતં વ્રજવધૂભિરિદં ચ વિષ્ણુઃ શ્રદ્ધાન્વિતોઽનુશ્રુણુયાદ્ અથ વર્ણયેદ્ યઃ ।

ભક્તિં પરાં ભગવતિ પ્રતિલભ્ય કામં હ્રદ્રોગમાશ્વપહિનોત્યચિરેણ ધીરઃ ॥૪૦॥

ગોપીજનો સાથેનું ભગવાનનું આ રમણ જે કોઈ પુરુષ શ્રદ્ધા રાખીને શ્રવણ કરશે અને વર્ણન કરશે તે ભગવાનમાં પરા ભક્તિ પ્રાપ્ત કરીને હૃદયના રોગરૂપ કામનો જલદી નાશ કરશે અને સત્વર ધીર બનશે. ૪૦.

ગોપીજનો સાથેનું ભગવાનનું આ વિશિષ્ટ પ્રકારનું રમણ જો કોઈ શ્રદ્ધા રાખીને કથા દ્વારા શ્રવણ કરશે અથવા વર્ણન કરશે. શ્રવણ પછી જ કીર્તન હોઈ શકે તેથી શ્લોકમાં ‘અથ’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. શ્લોકમાં ‘યઃ’ પદ છે તે એમ દર્શાવે છે કે ભગવલ્લીલાનું શ્રવણ કરવામાં (બ્રાહ્મણ ઇત્યાદિ) વર્ણ વિગેરેનો નિયમ નથી, પરંતુ ગમે તે શ્રવણ કરે અને વર્ણન કરે (તે ભક્તિરૂપી ફલ પ્રાપ્ત કરશે જ). ભગવાનના માહાત્મ્યનું શ્રવણ કરવાથી (અથવા વર્ણન કરવાથી) ભગવાન તે પુરુષનામાં બીજા ગુણ ન હોય તો પણ તેને મોક્ષ આપે છે, અને ભક્તો ભગવાનને સર્વ રીતે શરણ જાય છે એમ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવેલું છે. ભગવલ્લીલાનું શ્રવણ અને વર્ણન કરનાર પુરુષ ભગવાનને વિષે પરા ભક્તિ પ્રાપ્ત કરે છે, અને પછીથી અંતઃકરણમાં સ્થિર થએલી ભક્તિને લીધે તે હૃદયના રોગરૂપ કામનો જલદીથી જ નાશ કરે છે. જે કામ પહેલાં હૃદયને બાધ કરતો હતો અને જલદીથી બાધ કરતો હતો તેને ભગવલ્લીલાનું ફક્ત શ્રવણ કરનાર પુરુષ જલદીથી જ નાશ કરે છે. પછી પૂર્વવાસનાને લીધે ફરીથી જો કામ ઉત્પન્ન થાય તો પણ ભગવલ્લીલાનું શ્રવણ કરનાર પુરુષ તરત જ ધીર થાય છે. તેથી ભગવાનની આ લીલાનું અભિપ્રાય, રહસ્ય સાથે શ્રવણ કરવું એમ ફલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે આ ફલપ્રકરણ છે. (શ્લોકમાં ‘આશુ’-જલદી-પદ છે તેનો સંબંધ ‘હૃદ્રોગમ્’ અને ‘અપહિનોતી’ એ બંને પદો સાથે કરવાનો છે.) ૪૦.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં  
શ્રીમદ્વલ્લભદીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં  
બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલ પ્રકરણના જ્ઞાન નિરૂપક  
૩૦ મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.



## ॥ अध्याय એકત્રીસમો ॥

સુદર્શન સર્પથી નન્દરાયજીની મુક્તિ; શંખચૂડનો વધ

એવં રૂપપ્રપચ્ચસ્ય પચ્ચધા રસવર્ણનમ્ ।

નિરૂપ્ય નામલીલાતો રસાર્થમ્ ઈદમ્ ઉચ્યતે ॥૧॥

(રાસલીલા થયા પછી વ્રજવાસીઓ કુતૂલલથી પણ ભગવાનથી અન્યનું ભજન કરે એ અયોગ્ય છે એવી શંકા કોઈને થાય, તો તે શંકા દૂર કરવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી પ્રથમ રાસપંચાધ્યાયીનો સાર આપીને એકત્રીસમા અને બત્રીસમા અધ્યાયનું તાત્પર્ય આપે છે અને તે રીતે સૂચવે છે કે આ બે અધ્યાયના પ્રકરણનો રાસપંચાધ્યાયીના પ્રકરણ સાથે કોઈ પણ પ્રકારનો સંબંધ નથી; અર્થાત્ આ પ્રકરણ રાસપંચાધ્યાયીના પ્રકરણથી ભિન્ન છે. આ અર્થ દર્શાવવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી આ અધ્યાયના આરંભમાં ચાર કારિકાઓ આપે છે.)

આ પ્રમાણે રાસપંચાધ્યાયીમાં ભગવાનના ભિન્ન ભિન્ન પ્રકારે રહેલા સ્વરૂપના રસનું (છઠ્ઠીસમા અધ્યાયના આરંભમાં આવેલી 'આત્મના પ્રથમા લીલા' ઈત્યાદિ કારિકાઓમાં વર્ણવેલા) પાંચ પ્રકારે વર્ણન કરીને, હવે નામલીલામાંથી, ગાનાત્મક શબ્દલીલામાંથી, જે રસ પ્રાપ્ત થાય છે તેને માટે (અન્યના ભજનની નિવૃત્તિ કરીને) આ પ્રકરણ કહેવામાં આવે છે. (જેમ ભગવાનની રૂપલીલા સ્વતંત્ર છે તેમ નામલીલા પણ સ્વતંત્ર છે એ જણાવવાને માટે આ પ્રકરણનો સ્વતંત્ર આરંભ કરવામાં આવેલો છે. ભગવાનથી અન્યના ભજનની નિવૃત્તિ કરીને ભગવાનના માહાત્મ્યનું જે જ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે તે નામલીલામાં અંગ છે, એટલે તેનું વર્ણન સ્વતંત્ર રીતે કરવામાં આવેલું છે.) ૧.

અવમુદ્ધૃતભક્તાસ્તુ યદ્યદ્યં સમુપાસતે ।

દુઃખભાજો ભવન્ત્યેવ મુચ્યન્તે હરિણૈવતુ ॥૨॥

આ પ્રમાણે (ઈન્દ્રના ભજનની નિવૃત્તિ કરાવીને) જે ભક્તોનો ભગવાને ઉદ્ધાર કરેલો છે તે ભક્તો જો ભગવાનથી અન્યનું ભજન કરે તો તે દુઃખી જ થાય છે, અને ભગવાન જ તેમને મુક્ત કરે છે. (રૂપલીલા અને નામલીલા એ બેની વચ્ચે એક ભેદ રહેલો છે. રૂપલીલાના રસનો જ્યારે અનુભવ કરવામાં આવે છે ત્યારે વૈષ્ણવ ધર્મોનો પણ ત્યાગ એ અંગ છે; પરંતુ જ્યારે નામલીલાના રસનો અનુભવ કરવામાં આવે છે ત્યારે ભગવાનથી અન્ય દેવતાના ભજનની નિવૃત્તિ અંગ છે, પણ શાસ્ત્રમાં આપેલા ભગવદ્ધર્મોનો પણ ત્યાગ કરવો એ અંગ નથી. વિધિ પણ નામલીલામાં જ



ગણાય છે, અને તે વિધિ મર્યાદા અને પુષ્ટિ એ બે પ્રકારની હોવાથી મર્યાદામિશ્ર-  
પુષ્ટિમાર્ગીય ભક્તોનું એકત્રીસમા અધ્યાયમાં વર્ણન કરવામાં આવે છે, જ્યારે શુદ્ધ-  
પુષ્ટિમાર્ગીય ભક્તોનું બત્રીસમા અધ્યાયમાં વર્ણન કરવામાં આવે છે. મર્યાદામાર્ગમાં  
દોષ રહેલો છે એ દર્શાવવાને માટે શંખચૂડનો પ્રસંગ એકત્રીસમા અધ્યાયમાં  
આપવામાં આવેલો છે. એકત્રીસમા અધ્યાયમાં નંદને અંબિકા વિગેરે અન્ય દેવોના  
ભજનને લીધે કલેશ થાય છે અને તેમાંથી ભગવાન જ તેમને મુક્ત કરે છે.) ૨.

એકત્રિંશે સર્વભાવાદ્ નિવૃત્તાનાં તુ પૂર્વવત્ ।

ગાનેન રમણં ચક્રે પ્રમાણાનન્દસિદ્ધયે ॥૩॥

બલભદ્રેણ સહિતો વેદરૂપેણ સર્વથા ।

તદ્દોષં નાશયામાસ હરિરિત્યુચ્યતે સ્ફુટમ્ ॥૪॥

પહેલાંની માફક (પહેલાં જેમ ભક્તો ઈન્દ્રયાગમાંથી નિવૃત્ત થયા હતા તેની  
માફક) ભગવદ્ભાવથી અન્ય સર્વ ભાવમાંથી નિવૃત્ત થએલા ભક્તોને પ્રમાણનો-  
વેદરૂપ બલદેવજીનો-આનંદ સિદ્ધ કરવાને માટે હરિએ, ભગવાને, વેદરૂપ  
બલદેવજીની સાથે, ગાન કરીને રમણ કર્યું, અને (મર્યાદાના મિશ્રણથી પ્રાપ્ત થએલા  
શંખચૂડરૂપી) દોષનો સર્વ રીતે નાશ કર્યો એમ એકત્રીસમા અધ્યાયમાં સ્પષ્ટ કહેવામાં  
આવે છે. (શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો મુખ્યત્વે પ્રમાણની દૃષ્ટિથી પુરુષોત્તમને ભજનારાં  
હતાં તેથી તેમને પ્રમાણરૂપ બલદેવજીની સાથે રહેલા પુરુષોત્તમના રમણના  
આનંદના અનુભવનું દાન કરવું જોઈએ, તેથી બલદેવજીની સાથે જ રહીને ભગવાને  
તે જ પ્રમાણે રમણ કર્યું. ‘શબ્દબ્રહ્મ પરં બ્રહ્મ મમોભે શાશ્વતી તનૂ’ એ વાક્ય ઉપરથી  
જણાય છે કે વેદરૂપ અને અક્ષરરૂપ એ બે ભગવાનનાં નિત્ય શરીર છે. ‘જગદ્ગુરું  
સાત્વતશાસ્ત્રવિગ્રહમ્’ એ વાક્યમાં પણ ભગવાનના વેદરૂપ શરીરની વાત કહેવામાં  
આવેલી છે.) ૩-૪.

શબ્દથી પણ (‘કદાચિદથ ગોવિન્દઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકથી) આનંદનું નિરૂપણ  
કરવાને માટે ભગવાન પ્રથમ ગોકુલમાં રહેનારાઓની અન્યાસક્તિ દૂર કરે છે. એમ  
‘એકદા’ ઈત્યાદિ વીસ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

॥શ્રીશુક ઉવાચ॥

એકદા દેવયાત્રાયાં ગોપાલા જાતકૌતુકાઃ ।

અનોભિરનડુદ્યુક્તૈઃ પ્રયયુસ્તેઽમ્બિકાવનમ્ ॥૧॥

શુકદેવજી કહે છે કે:- એક દિવસે દેવયાત્રાના સમયે ગોપાલો કૌતુકથી  
બળદોષી ગાડાં જોડીને અંબિકાવન ગયા. ૧.

લોકન્યાયથી પણ બીજે સ્થલે જવામાં અનિષ્ટ થાય તેથી યાત્રાના પ્રસંગનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. ‘એકદા’ એટલે એક દિવસે, શિવરાત્રીના સમયે. ગોપાલો દર વર્ષે જતા નથી તે બતાવવાને માટે ‘એકદા’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. દેવયાત્રા, ખરેખર, નિત્ય છે (તેથી ગોપાલોને અંબિકાવન જવાની બુદ્ધિ થઈ. જે ધર્મ કામ્ય હોય તેનો જ ત્યાગ થઈ શકે, નિત્ય ધર્મનો નહિ.) (ગોપીજનોના પ્રકરણમાં પણ અહિં ગોપાલોનું પણ જે વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તેનું કારણ ધર્મથી સામ્ય છે એમ જણાવવા શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ગોપાલો સાધારણ ધર્મમાં જ જોડાએલા હોય છે, તેમાં પણ તેમની ધર્મબુદ્ધિ પ્રાસંગિક હોય છે. (મુખ્ય સ્વામિનીની માફક તેઓ અસાધારણ પ્રમેય ધર્મમાં જોડાએલા હોતા નથી એમ તાત્પર્ય છે. વાસ્તવિક રીતે તો ભગવાન વિના બીજા દેવના સંબંધવાળા નિત્ય કર્મનો પણ શરણમાર્ગે જનારા મનુષ્યોએ ત્યાગ જ કરવો જોઈએ. વૈદિક મંત્રોમાં વર્ણવવામાં આવેલા દેવો તો ભગવાનનાં અવયવો છે, કારણ કે ‘દેવો નારાયણના અંગમાંથી ઉત્પન્ન થએલા છે’ એ પ્રમાણે વાક્ય છે. વેદમાં વર્ણવેલું કર્મ પણ ભગવાનની ક્રિયાશક્તિરૂપ જ છે. આ પ્રમાણે શ્રીમહાપ્રભુજી એ નિબંધમાં આજ્ઞા કરેલી છે. તેથી કામ્ય વૈદિક કર્મ જ વિકૃત હોવાથી ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. ભગવાન વિના બીજા દેવના સંબંધવાળા બંને પ્રકારના-નિત્ય અને કામ્ય-સ્માર્ત કર્મનો ત્યાગ કરવો જોઈએ, કારણ કે ‘બધા ધર્મોનો ત્યાગ કરીને’ ઈત્યાદિ ભગવાનની આજ્ઞા છે. શ્રાદ્ધ, તીર્થસ્નાન, દાન વિગેરે વિષ્ણુ ભગવાન પ્રસન્ન થાય એ સંકલ્પથી જ કરવું જોઈએ. જ્યાં વિષ્ણુ ભગવાન પ્રસન્ન થાય એવો સંકલ્પ સંભવતો નથી એવાં શિવરાત્રી વિગેરે વ્રતોનો શરણમાર્ગે જનારા મનુષ્યોએ ત્યાગ જ કરવો જોઈએ એવો સિદ્ધાંત છે.)

વાસ્તવિક રીતે તો ગોપાલોને કૌતુક થયું, અને તે કારણથી જ તેઓ પગે ચાલીને ગયા નહિ, પણ ગાડાં જોડીને ગયા. ગાડાંને પણ તેમણે ઘોડા જોડ્યા નહિ પણ બળદો જોડ્યા અને મોટા સમારંભથી, ઘરમાં પુરુષોને મૂકીને, મથુરાથી પશ્ચિમ દેશમાં અર્બુદાચલની પાસે આવેલા અંબિકાલય નામના તીર્થમાં તેઓ ચાલ્યા. (વ્રજ પણ મથુરામંડલમાં આવેલું છે.) ૧.

અંબિકાલયમાં જઈને ગોપાલોએ જે પ્રકારે પૂજા કરી તે પ્રકારનું વર્ણન ‘તત્ર સ્નાત્વા’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કરે છે:

તત્ર સ્નાત્વા સરસ્વત્યાં દેવં પશુપતિં પ્રભુમ્ ।

આનર્ચુરહૃણૌર્ભક્ત્યા દેવીં ચ નૃપતેડગ્નિકામ્ ॥૨॥

હે રાજન! ગોપાલોએ ત્યાં સરસ્વતીમાં સ્નાન કરીને પ્રભુ પશુપતિદેવની

અને અંબિકાની પૂજા કરવાનાં દ્રવ્યોથી પૂજા કરી. ૨.

ત્યાં સરસ્વતી પ્રકટ છે, એટલે પશુના પાશમાંથી મુક્ત થવાને માટે તેમાં સ્નાન કરીને (પૂજન કર્યું). ગોપાલો પોતે પશુના પાળનારા છે; એટલે પશુના અધિપતિ, પશુનું પાલન કરવા માટે ફલ આપનાર, પ્રભુ એટલે સર્વ વસ્તુનું દાન કરવાને માટે સમર્થ; એવા પ્રકારના દેવની પૂજા કરવાનાં સાધનોથી ગોપાલોએ પૂજા કરી, કાંઈ પામર પુરુષની માફક ત્યાં જઈને બેસી રહ્યા નહિ. અંબિકા દેવીની, પાર્વતીની, તેમણે પૂજા કરી. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તે એમ દર્શાવે છે કે પાર્વતીની આજુબાજુના દેવતાઓની પણ ગોપાલોએ પૂજા કરી. યાત્રામાં તે પ્રમાણે કરવામાં આવે છે એવું જ્ઞાન રાજાને હોવાથી આ બાબતમાં વિશ્વાસ રાખવો એમ જણાવવાને માટે ‘નૃપતે’ એ પ્રમાણે સંબોધન મૂકવામાં આવ્યું છે. ૨.

શુકદેવજી પૂજાનું વર્ણન કરીને દાનોનું પણ વર્ણન ‘ગાવઃ’ શ્લોકમાં કરે છે :

ગાવો હિરણ્યં વાસાંસિ મધુમધ્વન્નમ્ આદતાઃ ।

બ્રાહ્મણોભ્યો દદુઃ સર્વે દેવો નઃ પ્રીયતામ્ ઈતિ ॥૩॥

‘દેવ અમારા ઉપર પ્રસન્ન થાવ’ એ ભાવનાથી સર્વેએ બ્રાહ્મણોને ગાયો, સુવર્ણ, વસ્ત્રો, મધ અને મધુર અન્ન આદરસહિત આપ્યાં. ૩.

આ દાનોની ઈચ્છા સર્વને હોય છે. હિરણ્ય એટલે સુવર્ણ; અનેક પ્રકારના વસ્ત્રો; મધ અને મધુર અન્ન. ગામડામાં અને અરણ્યમાં બનતી વસ્તુઓ બ્રાહ્મણોને આપવી જોઈએ એ હેતુથી મધ અને મધુર અન્નનું દાન કર્યું. ગાયોથી સ્ત્ર પ્રસન્ન થાય છે; હિરણ્યથી અગ્નિ પ્રસન્ન થાય છે. અગ્નિ પણ સ્ત્ર જ છે, (કારણ કે તૈત્તિરીય સંહિતાના પ્રથમ અષ્ટકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે અગ્નિ રજ્યા એટલે તે સ્ત્ર કહેવાયા.) વસ્ત્રો સર્વ દેવોને માટે છે અથવા તો ચંદ્રને માટે છે. વસ્ત્રથી પાર્વતી અને શિવ પણ પ્રસન્ન થાય છે. આ પ્રમાણે આ પાંચ દાનો તેમણે આદરસહિત જ કર્યાં. જેમને દાન કરવામાં આવ્યું તે પાત્રની યોગ્યતા દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘બ્રાહ્મણોભ્યઃ’. સંગદોષ પણ દૂર કરવામાં આવ્યો છે એ જણાવવાને માટે ‘સર્વે’ એ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. દાન કરવામાં તે બધાંને કામના ન હતી એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘દેવો નઃ પ્રીયતામ્’. દેવ એટલે મહાદેવ; અથવા ગમે તે દેવ એ પ્રમાણે સામાન્ય વચન છે. ‘નઃ’ એટલે અમારા ઉપર. અમારા ઉપર દેવ પ્રસન્ન થાઓ એ જ ભાવના હતી, બીજી કોઈ પણ ભાવના નહિ. ૩.

શુકદેવજી આ પ્રમાણે યાત્રામાં જે કાર્ય કરવાનું તેનું વર્ણન કરીને તીર્થમાં જે વ્રતનું પાલન કરીને વાસ કર્યો તેનું વર્ણન ‘ઊષુઃ’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

ઉપુ: સરસ્વતીતીરે જલં પ્રાશ્ય ધૃતવ્રતા: ।

રજનીંતાં મહાભાગા નન્દસુનન્દકાદય: ॥૪॥

મહાભાગ્યવાનુ નંદ, સુનંદક વિગેરે વ્રત ધારણ કરીને, જલ પીને, તે રાત્રી સરસ્વતીને તીરે રહ્યા. ૪.

સરસ્વતી નદીના તીર ઉપર જ અંત:કરણની શુદ્ધિને માટે જલનું જ પાન કરીને તે રાત્રીએ તેમણે વાસ કર્યો. અર્થાત્ રાત્રીએ તેમણે કાંઈ પણ બીજું કર્યું નહિ. આટલો-ઉપવાસ સુધીનો સર્વ-ધર્મ સિદ્ધ થયો. આગળ ઉપરનું અનિષ્ટ ભગવાનુ દૂર કરશે એમ ‘મહાભાગા:’ પદથી સૂચિત થાય છે; અને આ પ્રમાણે કહેવાનું પ્રયોજન એ કે શ્રોતા પરીક્ષિતને આ બાબતમાં સંદેહ ન થાય. નંદ અને સુનંદક જેમાં અગ્રણી છે એવા ગોપો. અથવા તો ‘નન્દ’ એ મુખ્ય નામથી સર્વનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. સુનંદક છે મુખ્ય જેમાં એવા ગોપો; આ પ્રમાણે બધાય ગોપો નંદના જેવા છે. (આ અર્થ કરતી વખતે ‘નન્દાશ્ચ તે સુનન્દકાદયશ્ચ’ એ પ્રમાણે વિગ્રહ કરવો.) ભગવાનના સંબંધથી અતિ આનંદવાળો ગોપ સુનંદક કહેવાય છે. ઉપનંદ બીજો છે, અથવા તો ધર્મપ્રાધાન્યથી નંદનું જ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. (આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં આવે ત્યારે ‘નન્દશ્ચાસૌ સુનન્દકશ્ચ, તદાદય:’ એ પ્રમાણે વિગ્રહ કરવો.) ૪.

આ પ્રમાણે સર્વ રીતે ધર્મસંપત્તિવાળા પુરુષોનો ભગવદ્ભાવ જ્યારે તિરોહિત થઈ ગયો ત્યારે તેમનો નિરોધ કરવો જોઈએ તેટલા માટે ભગવાને, જે પ્રમાણે શકટભંજન લીલા કરી તે પ્રમાણે, અજગર પાસે નંદને ગણાવી દીધા એમ શુકદેવજી ‘કશ્ચિત્’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

કશ્ચિન્મહાન્ અહિસ્તસ્મિન્ વિપિનેડતિબુભુક્ષિત: ।

યદચ્છયાગતો નન્દં શયાનમ્ ઉરગોડગ્રસીત્ ॥૫॥

બહુ ભૂખ્યો કોઈ એક મોટો અજગર દૈવગતિથી તે વનમાં આવી ચઢ્યો અને સુતેલા નંદને ગળી ગયો. ૫.

મોટો સર્પ એટલે અજગર. તે ભૂખ્યો જ રહે છે. કોઈક વખત જ તેને અન્ન મળે છે. દૈવગતિથી તે જંગલમાં આહાર ન મળવાથી તે અજગર ઘણો ભૂખ્યો થઈ ગયો. અકસ્માત્ રીતે તેને નંદ મળી ગયા. અકસ્માતથી જ તે અજગર નંદની પાસે આવ્યો. નંદ પણ દૈવગતિથી ઉંઘતા હતા. વાસ્તવિક રીતે તો તીર્થમાં રાત્રીએ જાગતા રહેવું જોઈએ. તેથી સૂતેલા નંદને, મુખ્ય ગોપને જ, તે ઉરગ-આવે તે વખતે ખબર ન પડે એવો અજગર-ગળી ગયો. ૫.

પછીથી જે થયું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘સ ચુકોશ’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

સ ચુકોશાહિના ગ્રસ્તઃ કૃષ્ણ! કૃષ્ણ! મહાન્ અયમ્ ।

સર્પો માં ગ્રસતે તાત! પ્રપન્નં પરિમોચય ॥૬॥

અજગરથી ગળાએલા નંદે બૂમ પાડી: હે કૃષ્ણ! હે કૃષ્ણ! આ મોટો સર્પ મને ગળી જાય છે. હે તાત! હું તમારે શરણે આવેલો છું તે મને છોડાવો. ૬.

અજગરે ગળાની નીચેથી નંદને પકડ્યા હતા. પહેલાં નંદે ફક્ત આકંદ કર્યો. પછીથી ભગવાનના માહાત્મ્યનું સ્મરણ થતાં ‘કૃષ્ણ, કૃષ્ણ’ એ પ્રમાણે આદરથી અથવા ભયથી ભગવાનને સંબોધીને નંદે પોતાનું દુઃખ વર્ણવ્યું કે આ મોટો સર્પ મને ગળી જાય છે. ‘તાત’ એમ જે સંબોધન કરવામાં આવેલું છે તે સ્નેહથી વિકલવતાને લીધે છે. પોતાને મુક્ત કરવાનું કારણ કહેતાં નંદ પ્રાર્થના કરે છે કે ‘પ્રપન્નં પરિમોચય’, શરણે આવેલાને મુક્ત કરો. ૬.

પછી ભગવાન નંદને છોડાવે તે પહેલાંજ બીજા ગોપાલો નંદને છોડાવવાનો ઉપાય કરવા મંડી પડ્યા એમ શુકદેવજી ‘તસ્ય ચ’ એ શ્લોકમાં વર્ણન કરે છે :

તસ્ય ચાકન્દિતં શ્રુત્વા ગોપાલાઃ સહસોત્થિતાઃ ।

ગ્રસ્તં ચ દષ્ટ્વા વિભ્રાન્તાઃ સર્પં વિવ્યધુરુભુકૈઃ ॥૭॥

નંદનું આકંદ શ્રવણ કરીને ગોપાલો એકદમ ઉઠ્યા, નંદને ગળાએલા જોઈને ગભરાયા અને બળતા લાકડાથી સર્પને મારવા લાગ્યા. ૭.

નંદ ભગવાનનું માહાત્મ્ય જાણે છે અને બીજા ગોપાલો તે જાણતા નથી એ બતાવવાને માટે છદ્ધા શ્લોકમાં નંદની પ્રાર્થનાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું અને એ સાતમા શ્લોકમાં બીજા ગોપાલોએ નંદને છોડાવવાના જે ઉપાયો કર્યા તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. તેનું-નંદનું-આકંદ સાંભળીને એકદમ જ, વિચાર કર્યા વિના જ, ભગવાનને પૂછ્યા વિના જ, પોતે જ ઉઠ્યા. નંદને ગળાએલા જોઈને તેઓ બહુ ગભરાયા, અને ઠંડી દૂર કરવાને માટે સળગાવેલાં લાકડાંથી સર્પને તેમણે માર્યો. આ ઉપાયથી નંદ પણ મરી જાય, છતાં પણ અજ્ઞાનથી ભગવાન હાજર હતા છતાં જેમ ગોપાલોએ યાત્રા કરી તેમ, આ પણ કર્યું. ૭.

(ગોપાલો બળતા લાકડાથી અજગરને મારવા લાગ્યા) છતાં પણ તે બરાબર ઉપાય ન હોવાથી કાંઈ સિદ્ધ થયું નહિ એમ ‘અલાતૈઃ’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

અલાતૈર્દૈદ્યમાનોઽપિ નામુચ્ચત્તમુરુગમઃ ।

તમસ્પૃશત્ પદાભ્યેત્ય ભગવાન્ સાત્વતાં પતિઃ ॥૮॥

બળતા લાકડાથી બળતો હતો છતાં પણ તે અજગરે નંદને છોડ્યા નહિ.

સાત્વતોના પતિ ભગવાને આવીને પોતાના ચરણથી તે અજગરનો સ્પર્શ કર્યો. ૮.

અજગર, ખરેખર, ભક્ષણ કરવાનું જ જાણે છે, છોડવાનું નહિ, તેથી તેણે નંદને છોડ્યા નહિ. તેથી જે ઉચિત હતો તે ઉપાય ભગવાને કર્યો એમ જણાવતા શુકદેવજી કહે છે કે ‘તમસ્પૃશત્’. ભગવાને પોતે આવીને પોતાના ચરણથી તેનો સ્પર્શ કર્યો. તે અજગરના કર્મનો નાશ કરવાનો છે, અને તે જ્ઞાનથી અથવા ભક્તિથી થઈ શકે છે. જ્ઞાનમાં તો અધિકારવાળા શરીરની જરૂર હોય છે. ભક્તિ પણ અહિં પ્રમેયબલથી જ મળી શકે એમ છે. (તેથી જ ભગવાને અજગરનો ચરણથી સ્પર્શ કર્યો; આમ ન હોત તો ભગવાન અજગરને શ્રવણ વિગેરે આપત એમ ભાવ છે.) તેથી તે અજગરની ભક્તિ સિદ્ધ કરવાને માટે ભગવદીય શરીર પ્રાપ્ત કરવાને માટે ભગવાને અજગરનો ચરણથી સ્પર્શ કર્યો. ભગવાન પોતે ત્યાં આવ્યાં એમ કહેવાથી સિદ્ધ થાય છે કે અજગરને પણ સાધનની જરૂર ન હતી. (પ્રમેયને પણ પ્રપત્તિ વિગેરે સાધનની અપેક્ષા હોતી નથી એમ કહેવામાં આવ્યું.) (ભગવાનના ચરણમાં ભગવદીય શરીર પ્રાપ્ત કરાવીને ભક્તિ સિદ્ધ કરવાનું સામર્થ્ય રહેલું છે એનું કારણ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ભગવાનના ચરણમાં આ પ્રકારે કરવાનું સામર્થ્ય આવશ્યક છે એ દર્શાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘સાત્વતાં પતિ’. ભગવાન વૈષ્ણવોના પતિ છે, તેથી વૈષ્ણવના હિતને માટે તેમણે અજગરનો ચરણથી સ્પર્શ કર્યો. (ભગવાન વૈષ્ણવોના પતિ છે એટલે ઉત્તમ દેહ કરવાને માટે ભગવાનના ચરણમાં ઉત્તમ દેહ કરવાનું સામર્થ્ય આવશ્યક છે એમ તાત્પર્ય છે.) ૮.

પછીથી જે થયું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘સ વૈ’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

**સ વૈ ભગવતઃ શ્રીમત્પાદસ્પર્શહતાશુભઃ ।**

**ભેજે સર્પવપુર્હિત્વા રૂપં વિદ્યાધરાર્ચિતમ્ ॥૯॥**

ભગવાનના શ્રીવાળા ચરણના સ્પર્શથી તે અજગરનાં સર્વ અશુભોનો નાશ થયો, અને સર્પશરીરનો ત્યાગ કરીને તેણે વિદ્યાધરોથી પૂજાએલું સ્વરૂપ ધારણ કર્યું. ૯.

‘વૈ’ એટલે નિશ્ચયથી, નક્કી, તે અજગરે સર્પનું શરીર છોડીને વિદ્યાધરનું રૂપ ધારણ કર્યું. પણ આ રૂપ પહેલાંના કરતાં વધારે સારું હતું, કારણ કે તે ભગવદીય હતું. આ વાત જણાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘વિદ્યાધરૈરર્ચિતમ્’. આ અજગર વિદ્યાધરોના દેવરૂપ થયો. સર્પયોનિ સર્વથી હલકી યોનિ છે, અને ભગવદીય રૂપ સર્વથી ઉત્તમ છે. આ પ્રકારનો ભગવાનના ચરણનો પ્રભાવ છે. સર્વથી અધમ એવા અજગરને સર્વોત્તમ બનાવવામાં પ્રમેયબલ જ કારણ છે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે

છે કે 'ભગવતઃ'. દેહમાત્રમાં બધાય પ્રકારના દેહોમાં, આ જ યુક્તિ હોય છે. લોકમાં તે સર્પ સર્વોત્તમ અને તેટલા માટે શુકદેવજી ભગવાનના ચરણનું વિશેષણ આપતાં કહે છે કે 'શ્રીમત્પાદ'. ભગવાનના શ્રીવાળા ચરણના સ્પર્શથી જેનાં બધાં અશુભો, પાપો, નાશ પામ્યાં. સર્પના શરીરનો ત્યાગ કરવામાં પાપનો નાશ કારણ છે. સર્પને વિદ્યાધરનું જે શ્રેષ્ઠ રૂપ પ્રાપ્ત થયું તેમાં પણ ભગવાનના ચરણનો સ્પર્શ જ કારણ છે. પદાર્થનો અભિનિવેશ યથાયોગ્ય કરવો જોઈએ. ભગવાનના ચરણની રજ જ સામગ્રી સિદ્ધ કરે છે. ૯.

આ પ્રમાણે ભગવાને અયોગ્ય પ્રાણી ઉપર ઉપકાર કર્યો એવી શંકા કોઈને ન થાય એટલા માટે શુકદેવજી 'તમપૃચ્છત્' એ શ્લોકમાં કહે છે કે ભગવાને કરેલા ઉપકારનું જ્ઞાન પણ તે પુરુષને છે એ જણાવવા માટે ભગવાન પૂછે છે :

તમપૃચ્છદ્ હર્ષીકેશઃ પ્રણતં સમવસ્થિતમ્ ।

દીપ્યમાનેન વપુષા પુરુષં હેમમાલિનમ્ ॥૧૦॥

તેજસ્વી શરીરવાળા, સુવર્ણની માળાવાળા, પ્રણામ કરતા, પાસે ઉભેલા તે પુરુષને ભગવાને પૂછ્યું. ૧૦.

જો કે ભગવાન પોતે તે પુરુષનું સર્વ જ અંતઃકરણ જાણે છે, કારણ કે ભગવાન હર્ષીકેશ છે, છતાં પણ વચન દ્વારા તે પુરુષમાં શાસ્ત્રીય સામર્થ્ય સ્થાપવાને માટે પરિભાષણ કરીને તે પુરુષનું અંતઃકરણ ભગવાન જણાવે છે એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'હર્ષીકેશઃ'. ભગવાને આ પ્રમાણે તે પુરુષને પૂછ્યું તેનું કારણ એ કે તે પુરુષ 'પ્રણત' હતો, પ્રણામ કરતો હતો. તો પછી પહેલાં ભગવાને બીજે પ્રકારે કેમ કર્યું, (પહેલાં ભગવાને તે સર્પને જ્ઞાન આપ્યા વિના સર્પદેહનો ત્યાગ કરાવવારૂપી મરણ જ કેમ આપ્યું), આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'સમવસ્થિતમ્'. પહેલાં આ સર્પ ભગવાનની સામે બરોબર, નમ્રભાવે, ઉભો ન હતો, પરંતુ હમણાં તો તે નમ્રતાથી ભગવાનની સામે ઉભો છે. આ પુરુષનું અંદરનું સ્વરૂપ પણ સારું છે એ જણાવવાને માટે 'દીપ્યમાનેન વપુષા' એ શબ્દોમાં શુકદેવજી તેની બહારની શોભાનું વર્ણન કરે છે. જેવી રીતે ભગવદીયનું શરીર તેજની માફક પ્રકાશક હોય છે તેવી રીતે આ પુરુષ તેજસ્વી શરીરવાળો હતો. ઉત્તમ યોનિમાં પણ ભગવદીયત્વ હોય તો પણ તેમાં ન્યૂનાધિક પ્રમાણ હોય છે, તેથી કદાચિત્ આ સર્પ પક્ષી વિગેરેનું રૂપ અથવા સ્ત્રીનું રૂપ ધારણ કરે; આ પ્રકારની શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે 'પુરુષમ્'. તેમાં પણ આ પુરુષ સર્વગુણથી પૂર્ણ છે એમ જણાવવા માટે શુકદેવજી કહે છે કે 'હેમમાલિનમ્,' અર્થાત્ મહાન પુરુષ જ અલંકૃત થએલો હોય છે. ૧૦.

ભગવાન્ તે પુરુષને પ્રશ્ન પૂછે છે કે 'કો ભવાન્' :

કો ભવાન્ પરયા લક્ષ્મ્યા રોચતેઽદ્ભુતદર્શનઃ ।

કથં જુગુપ્સિતાં યોનિં વને વા પ્રાપિતોઽવશઃ ॥૧૧॥

તું કોણ છે? ઉત્તમ કાંતિથી તું શોભે છે; તારું દર્શન અદ્ભુત છે. કોને લીધે પરવશ થઈને આ નિંદિત યોનિ પ્રાપ્ત થઈ, અને વનમાં તને કોણ લાવ્યું? ૧૧.

'કઃ' એટલે કોણ? અર્થાત્ તેની જાતિ અને નામ વિષે પ્રશ્ન કરવામાં આવ્યો. જે સ્વભાવથી જ મહાન્ નથી તેને એકદમ જ સાધન કરવાથી મહત્વ, શ્રેષ્ઠત્વ, પ્રાપ્ત થતું નથી; તેથી ભગવાન્ પણ તે પુરુષનું વર્ણન કરતાં કહે છે કે 'પરયા લક્ષ્મ્યા રોચતે ભવાન્', તું ઉત્તમ કાંતિથી શોભે છે. વળી દેવો વિગેરે બધાય આવેલા છે, તેમનાં દર્શન પણ ઘણી વાર થએલાં છે, પણ તારું દર્શન તો અદ્ભુત છે. અદ્ભુત છે દર્શન જેનું તે 'અદ્ભુતદર્શનઃ' કહેવાય છે. અર્થાત્ તારા જેવો બીજો કોઈ તેજસ્વી પુરુષ અત્યાર સુધીમાં જોવામાં આવ્યો નથી. આવું અદ્ભુત દર્શન પૂર્વ પુણ્યના સમૂહ વિના હોઈ શકે નહિ! અને જો પૂર્વ પુણ્યનો સમૂહ હોય તો પછી આવી નિંદિત યોનિ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થઈ? અવશ્ય, કોઈએ આ યોનિ તને પ્રાપ્ત કરાવી હશે, એટલે શાપ જ તેનું કારણ હશે, તેથી ભગવાન્ તે પ્રમાણે- 'પ્રાપિતઃ', કોણે પ્રાપ્ત કરાવી, એ પ્રમાણે-કહે છે. તેમાં પણ વનમાં તને કોણ લાવ્યું? ૧૧.

આ પુરુષ પહેલાં પણ સર્પ જ હતો; ભગવત્કૃપાથી તેણે વિદ્યાધરનું સ્વરૂપ પ્રાપ્ત કર્યું; અને ફરીથી પાછો તે સર્પ જ થઈ ગયો. તેથી 'સર્પ ઉવાચ' એ પ્રમાણે શુકદેવજી કહે છે. આ સર્પ 'અહમ્' ઈત્યાદિ બે શ્લોકોમાં પોતાનું પૂર્વ વૃત્તાંત કહે છે :

॥સર્પ ઉવાચ॥

અહં વિદ્યાધરઃ કશ્ચિત્ સુદર્શન ઈતિ શ્રુતઃ ।

શ્રિયા સ્વરૂપસમ્પત્ત્યા વિમાનેનાચરન્ દિશઃ ॥૧૨॥

ઋષીન્ વિરૂપાનાઙ્ગિરસઃ પ્રાહસં રૂપદર્પિતઃ ।

તૈરિમાં પ્રાપિતો યોનિં પ્રલબ્ધૈઃ સ્વેન પાપ્મના ॥૧૩॥

સર્પ કહે છે :- હું સુદર્શન નામથી પ્રસિદ્ધ થએલો એક વિદ્યાધર હતો; લક્ષ્મી અને સ્વરૂપની સંપત્તિથી જ્યારે હું વિમાનમાં બેસીને દિશાઓમાં ફરતો હતો, ત્યારે સ્વરૂપના ગર્વથી મેં અંગિરસ ગોત્રના બેડોળ ઋષિઓની હાંસી કરી. ઉદ્દેગ પામેલા તે ઋષિઓએ મને મારા પાપને લીધે આ યોનિ પ્રાપ્ત કરાવી. ૧૨-૧૩.

વિદ્યાધરો એક જાતના દેવો છે. 'કશ્ચિત્' એટલે કોઈ એક, અપ્રસિદ્ધ. 'સુદર્શન' નામથી તે પ્રસિદ્ધ હતો. 'સુદર્શન' એ વૈષ્ણવ નામથી જ આગળ તેના



ઉપર ભગવત્કૃપા થઈ એ જણાવવાને માટે શ્લોકમાં ‘વિશ્રુતઃ’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે. તેની પાસે દેહની કાંતિ, ધન અને અદ્ભુત સામર્થ્ય એ ત્રણ ગુણો પહેલેથી જ હતા એમ જણાવવાને માટે શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે ‘શ્રિયા સ્વરૂપસમ્પત્યા વિમાનેન’. તે દસ દિશાઓમાં ચારે બાજુએ ફરતો હતો, અર્થાત્ બધેય સ્થલે તેની ગતિને કોઈ અટકાવનાર ન હતું. આ પ્રમાણે તે સર્પ પોતાના સ્વરૂપનું વર્ણન કરીને હવે પોતે કરેલો અપરાધ અને તે અપરાધનું ફલ એ બેનું વર્ણન કરતાં કહે છે કે ‘ઋષીન્’. અંગિરસ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થએલા ઋષિઓ અષ્ટાવકની માફક બેડોળ હતા. સર્પ પોતે તો પોતાના રૂપથી ગર્વ પામતો હતો અને તેથી તેણે, જેમ પ્રાકૃત બાલક હાંસી કરે તે પ્રમાણે, તે ઋષિઓની હાંસી કરી. પછીથી તે ઋષિઓના શાપથી આ સર્પ યોનિ મને પ્રાપ્ત થઈ. સર્પયોનિ પ્રાપ્ત કરવામાં વિશેષ હેતુ દર્શાવતાં તે સર્પ કહે છે કે ‘પ્રલબ્ધૈઃ’. પ્રલબ્ધ એટલે સર્પની વક્રોક્તિથી વંચિત થએલા, ઉદ્ધિન્ન થએલા. કોઈ પણ કારણ વિના, સ્વરૂપથી ઉદ્ભવ કરનાર સર્પ જ હોય છે; તેથી આ વિદ્યાધરે સર્પની યોનિ પ્રાપ્ત કરી. અરે! અપરાધ અલ્પ હતો છતાં પણ તે ઋષિઓએ તે વિદ્યાધરને આટલી મોટી શિક્ષા શા માટે કરી? આ શંકાનું નિવારણ કરતાં સર્પ કહે છે કે ‘સ્વેન પાપ્મના’. પહેલાં જ તેણે બ્રહ્મવૃત્તિ લઈ લીધી હતી; તેથી જે થવાનું હતું જ તેને જ ઋષિઓએ શાપ આપીને ફક્ત પ્રકટ કર્યું છે એમ તાત્પર્ય છે. ૧૨-૧૩.

આ પ્રમાણે તે સર્પ પોતાનો અપરાધ અને ઋષિઓએ આપેલો શાપ એ બેનું વર્ણન કરીને પોતે વૈષ્ણવ બને તેટલા સારુ પોતાની દીનતા દર્શાવતાં કહે છે કે ‘શાપો મે’ :

શાપો મેડનુગ્રહાયૈવ કૃતસ્તૈઃ કરુણાત્મભિઃ ।

યદ્ અહં લોકગુરુણા પદા સ્પૃષ્ટો હતાશુભઃ ॥૧૪॥

તે દયાળુ ઋષિઓએ મારા ઉપર કૃપા કરવાને માટે જ મને શાપ આપ્યો, કારણ કે જગતના ગુરુ ભગવાને પોતાના ચરણથી સ્પર્શ કર્યો અને મારાં પાપનો નાશ થયો. ૧૪.

પહેલાં વિદ્યાધર હોવાથી ક્યારે પણ મુક્તિ થાત, તેથી આ શાપ મારા ઉપર કૃપા કરવાને માટે જ છે. જો કે જગતમાં આ શાપ અનિષ્ટરૂપ છે, છતાં પણ તેણે તો મારા ઉપર અનુગ્રહ જ કર્યો છે; કારણ કે તે ઋષિઓ દયાળુ છે. ખરેખર, દયાળુ લોકોનો શાપ અનિષ્ટ ફલ આપતો નથી. તેમાં પણ આ શાપ પ્રસિદ્ધ ઋષિઓનો છે. આ વાત જણાવતાં સર્પ કહે છે કે ‘તૈઃ કરુણાત્મભિઃ’. આ શાપ અનુગ્રહરૂપ છે એ

દર્શાવતાં સર્પ કહે છે કે ‘યદહં લોકગુરુણા’. અરે! તો પછી તેનાથી ઈષ્ટસિદ્ધિ કેવી રીતે થઈ? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં સર્પ કહે છે કે ‘કૃતઃ’. આ શાપ તે ઋષિઓએ જ અપૂર્વ રીતે જ આપેલો છે. (ભગવાનનું દર્શન સિદ્ધ કરનાર આ શાપ છે. આવો શાપ પહેલાં ન હતો પણ ઋષિઓએ જ અપૂર્વ પ્રકારે, પહેલી જ વાર, આવો શાપ આપ્યો એમ તાત્પર્ય છે.) ભગવાનનાં દર્શન ઋષિઓની કૃપાથી થાય છે; તે ભગવદર્શન અહિં શાપથી જ થાય છે, એટલે શાપ અનુગ્રહરૂપ છે. વળી, લોકના ગુરુએ, ત્રણેય લોકને જ્ઞાનનો ઉપદેશ કરનાર ભગવાને, પોતાના ચરણથી મારો સ્પર્શ કર્યો. ગુરુની સેવાથી જ, ખરેખર, જ્ઞાન સિદ્ધ થાય છે. જ્યારે ગુરુ પોતે ચરણથી સેવકનો સ્પર્શ કરે ત્યારે એમ નિશ્ચય થાય કે ગુરુની સેવા બરોબર થઈ છે. ગુરુ પોતે પોતાના ચરણ વડે અતિવિશ્વાસુ અને પ્રીતિવાળા સેવકનો જ સ્પર્શ કરે છે. ભગવાનના ચરણના સ્પર્શથી જ અપરાધ અને પૂર્વનું પાપ પણ નાશ પામ્યાં એ જણાવતાં સર્પ કહે છે કે ‘હતાશુભઃ’, નાશ પામ્યું છે અશુભ જેનું એવો. ૧૪.

આ પ્રમાણે ભગવાનના ચરણથી પોતાના શરીરનો જે સ્પર્શ થયો તેને વધાવી લઈને, તે ચરણસ્પર્શથી જ જે ફલ થયું તેનું ‘તં ત્વાહમ્’ ઈત્યાદિ સાડા ત્રણ શ્લોકોમાં પ્રાર્થના દ્વારા સર્પ વર્ણન કરે છે:

તં ત્વાહં ભવભીતાનાં પ્રપન્નાનાં ભયાપહમ્ ।

આપૃચ્છે શાપનિર્મુક્તઃ પાદસ્પર્શાદ્ અમીવહન્ ॥૧૫॥

હે પાપનો નાશ કરનાર! આપના ચરણના સ્પર્શથી હું શાપથી મુક્ત થયો છું; અને, સંસારથી ભય પામેલા અને આપને શરણે આવેલાઓના ભયને દૂર કરનાર એવા આપની સાથે હું બોલું છું. ૧૫.

શરૂઆતમાં ફલરૂપ ભગવાનની રજા લેવાને માટે સર્પ પ્રાર્થના કરે છે. ‘તમ્’ એટલે તે, સર્વ ફલનું દાન કરનાર. ‘તં તુ’ એમાં ‘તુ’ શબ્દ વડે ‘કર્મથી પણ ફલ મળે છે’ એ પક્ષનું સર્પ ખંડન કરે છે. અથવા તો શ્લોકમાં ‘તં ત્વા’ એ પ્રમાણે વાંચવું. ‘ત્વા’ એટલે આપ. પહેલા અર્થમાં (‘તં તુ’ એ પ્રમાણે અન્વય કરીએ ત્યારે) ‘તુ’ અને ‘અહમ્’ એ બે પદની વચમાં ‘આ’ લેવો, અને તેનો સંબંધ ‘ભવભીતાનામ્’ એ પદ સાથે કરવો; અથાત્ ‘આ’ એટલે ચારે બાજુથી સંસારથી ભય પામેલાઓના (ભયને આપ દૂર કરનારા છો.) તરવાને માટે કઠિન એવા સંસારથી પણ જે કોઈ ભય પામેલા છે તેમનો પણ ભય, આપને શરણે આવવાથી જ, આપ દૂર કરો છો. ભગવત્સેવાને માટે, ખરેખર, તેમને સંસારમાં જન્મ આપવામાં આવે છે. તે બધા સંસારની માયાથી વિપરીત જ થઈ જાય છે, (અર્થાત્ ભગવાનની સેવા કરતા નથી.)

છતાં પણ, ‘હે કૃષ્ણ! હું આપનો છું’ એ મંત્ર વડે જ્યારે કૃષ્ણ પરમાત્માની પ્રાર્થના કરવામાં આવે છે ત્યારે ભગવાન્ કૃષ્ણ બધાય ભય દૂર કરે છે. તેથી અમારો પણ ભય આપ દૂર કરો. અમે અપરાધ કરેલો છું; નંદરાયજીને અમે ગળી ગયા. ભગવાન્ શું કરશે તે શંકા પણ ભગવાનના ચરણના જ સ્પર્શથી જતી રહી. તેથી હું આપની સાથે સર્વ રીતે સંભાષણ કરું છું. વચમાં આવેલો ઉપદ્રવ પણ નાશ પામ્યો. તેથી આગંતુક દોષ પણ નથી રહ્યો એમ જણાવવાને માટે સર્પ કહે છે કે ‘શાપનિર્મુક્ત:’. શ્લોકમાં ‘પાદસ્પર્શાત્’ એ જે પદ છે તે બંને બાબતોમાં-શાપમાંથી મુક્ત થવામાં અને પાપથી મુક્ત થવામાં-કારણ છે. છતાં પણ તે પુરુષનું સ્વાભાવિક પાપ અસ્તિત્વમાં હોવાથી ભગવાનની સાથે સંભાષણ કરવાની તેની યોગ્યતા કેવી રીતે હોઈ શકે? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં સર્પ કહે છે કે ‘અમીવહન્’. અમીવ’ એટલે પાપ; અમીવને-પાપને-જે હણે તે ‘અમીવહન્’ કહેવાય. ૧૫.

**પ્રપત્નોઽસ્મિ મહાયોગિન્! મહાપુરુષ! સત્પતિ! |**

**અનુજ્ઞનીહિ માં દેવ! સર્વલોકેશ્વરેશ્વર! ||૧૬||**

હે મહાયોગિન, હે મહાપુરુષ, હે સત્પતે, હું આપને શરણે આવેલો છું. હે દેવ! હે સર્વલોકના ઈશ્વરોના ઈશ્વર! મને આપનો સેવક જાણો. ૧૬.

છતાં પણ બીજાની પ્રેરણાથી ભગવાન્ મને શિક્ષા ન કરે, એ કારણથી સર્પને બીક લાગી, અને જલદીથી જવાની રજા આપવાની ભગવાનને પ્રાર્થના કરતાં તે સર્પ ફરીથી પ્રાર્થના કરે છે કે ‘પ્રપત્નોઽસ્મિ’, હું ફરીથી આપને શરણે આવેલો છું. ભગવાનને શરણે આવેલા પ્રાણીઓના બધા અપરાધો નાશ પામે છે. સર્પ ભગવાનને મહાયોગિન્ તરીકે જે સંબોધે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે નંદરાયજી વિગેરે આ બધા માણસો આપના પિતા વિગેરે સંબંધીઓ નથી, પણ આપ યોગના મહાન્ પ્રભાવને લીધે પુત્ર વિગેરેનું અનુકરણ કરો છો. (સર્પ હીનાધિકારી હોવાથી આ પ્રમાણે કહે છે.) કોઈ પણ માણસ આપને જાણતું નથી એ જણાવવાને માટે ભગવાનને મહાયોગી કહેવામાં આવ્યા છે. વળી, નાનો માણસ જ નાનાનો અપરાધ ગણે છે, પરંતુ આપ તો મહાપુરુષ છો. વળી, આપ સત્પુરુષોના પતિ છો. સત્પુરુષો, ખરેખર, સહનશીલ હોય છે; તેમના પતિ તો વધારે સહનશીલ હોય છે. તેથી આપે મારો અપરાધ જે સહન કર્યો તે સર્વ પ્રકારે યોગ્ય છે એમ ભાવ છે. તેથી જ મને આપ આજ્ઞા આપો, મને આપના સેવક તરીકે સ્વીકારો. સર્પ ભગવાનને ‘દેવ’ એ પ્રમાણે જે સંબોધે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે દેવયોનિમાં ઉત્પન્ન થએલા વિદ્યાધરનો ભગવાને જે પક્ષપાત કર્યો અને મનુષ્યયોનિનો જે પક્ષપાત ન કર્યો તે

યોગ્ય છે. અરે! હું તને રજા આપું છતાં પણ યમ વિગેરે તને કેમ હેરાન નહિ કરે, કારણ કે કાલ વિગેરે તો મારા ભક્તને વિષે અપરાધ કરવામાં આવે તો તે અપરાધીઓને અવશ્ય શિક્ષા કરશે જ. આ પ્રમાણે જો ભગવાન કહે તો તેના ઉત્તરમાં સર્પ કહે છે કે સર્વ લોકોના જે ઈશ્વરો છે તેમના પણ આપ ઈશ્વર છો. તેથી આપની કૃપા થતાં કોઈ પણ જાતની ચિંતા રહેશે નહિ એમ તાત્પર્ય છે. ૧૬.

બ્રહ્મદણ્ડાદ્ વિમુક્તોઽહં સદ્યસ્તેઽચ્યુત! દર્શનાત્ ।

યન્નામ ગૃહ્ણન્ અખિલાન્ શ્રોતાન્ આત્માનમેવ ચ ॥૧૭॥

સદ્યઃ પુનાતિ કિં ભૂયઃ તસ્ય સ્પૃષ્ટઃ પદા હિ તે ।

હે અચ્યુત! આપના દર્શનથી બ્રાહ્મણોના શાપમાંથી હું મુક્ત થયો છું. જેમનું નામ લેનાર પુરુષ, નામ લેતાં જ તરત, શ્રોતાઓને અને પોતાને પણ પવિત્ર કરે છે, તો પછી વારંવાર નામ લેનાર પવિત્ર થાય તેમાં શું આશ્ચર્ય? એવા આપના ચરણનો સ્પર્શ મને થયો છે. ૧૭।।

અરે! હું તો સર્વત્ર ઉદાસીન છું, કારણ કે શ્રુતિ કહે છે કે ‘મારો કોઈ શત્રુ નથી, તેમ જ કોઈ પ્રિય નથી;’ તેથી નિષિદ્ધ આચરણ કરવાથી કાલ વિગેરે બાધ કરનારા જ છે. આ પ્રમાણે જો ભગવાન કહે તો તેના ઉત્તરમાં સર્પ કહે છે કે ‘બ્રહ્મદણ્ડાત્’. આપના દર્શનથી જ બ્રહ્મદંડમાંથી મોક્ષ પ્રત્યક્ષ સિદ્ધ છે. જો કે આપ ઉદાસીન છો, છતાં પણ આપના ધર્મો ઉદાસીન નથી. આમ જો માનવામાં ન આવે તો આપના દર્શનથી જ બ્રહ્મદંડમાંથી મોક્ષ થાય નહિ. તેમાં પણ તરત જ મોક્ષ થાય છે. તેમાં પણ આપના દર્શનથી જ તરત જ મોક્ષ થાય છે. સર્પ ભગવાનને ‘અચ્યુત’ એ પ્રમાણે જે સંબોધન કરે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ભગવાનના ધર્મો કોઈક વાર કાર્ય કરે અને કોઈક વાર કાર્ય ન કરે એવા નથી. તેથી ભગવાનના ધર્મને લીધે જે નષ્ટ થયું તે નષ્ટ થયું જ. અરે! જેટલાની જરૂર હોય તેટલા પુરતું જ અનિષ્ટ દૂર થાય, પણ સર્વ અનિષ્ટ કેવી રીતે દૂર થઈ શકશે? આ પ્રમાણે શંકા થતાં સર્પ કહે છે કે ‘યન્નામ’. મારાં બધાં પાપો દૂર થઈ જવા વિષે મને સંદેહ નથી. જેમના નામનો ઉચ્ચાર કરવાથી જ મનુષ્ય તે નામનું શ્રવણ કરનારાઓને અને પોતાના આત્માને પાપરહિત બનાવે છે. તેમાં પણ કોઈ પણ જાતના અધિકારીની જરૂર રહેતી નથી, પણ સર્વને જ પવિત્ર કરે છે. શ્લોકમાં ‘એવ’ પદ છે તેથી જણાય છે કે ‘આત્મા’નો અર્થ જીવ કરવાનો છે. ફક્ત દેહના જ દોષો દૂર થાય છે એમ નહિ, પરંતુ અજ્ઞાન વિગેરે બધુંય દૂર થાય છે. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તે એમ દર્શાવે છે કે ભગવન્નામ શ્રોતાઓના આત્માને પણ પવિત્ર કરે છે. (અર્થાત્ ભગવાનનું નામ લેનાર માણસ પોતાના આત્માને, શ્રોતાઓને અને શ્રોતાઓના

જીવોને પવિત્ર કરે છે. વક્તાના દેહની શુદ્ધિ તો થાય છે જ એ દર્શાવવાને માટે શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે ‘ફક્ત દેહના દોષો જ દૂર થાય છે એમ નહિ, પરંતુ અજ્ઞાન વિગેરે સર્વ જ દૂર થાય છે’.) ભગવાનનું નામ લેનારની શુદ્ધિ તરત જ થાય છે એમ કહેવાનું તાત્પર્ય એ કે દેશ, કાલ વિગેરે શુદ્ધિ કરનારાં સાધનોની અહિં જરૂર રહેતી નથી. તેમાં પણ ભગવાનનું નામ વારંવાર ઉચ્ચાર કરનાર પુરુષ પોતાના આત્માને પવિત્ર કરે એમાં શું જ કહેવું? જ્યાં નામનું જ આ પ્રકારનું માહાત્મ્ય છે ત્યાં સ્વરૂપના માહાત્મ્યનું શું જ કહેવું? આ વાત દર્શાવતાં સર્પ કહે છે કે ‘તસ્ય પદા સ્પૃષ્ઠઃ’. ભગવાનના ચરણનો સ્પર્શ બહુ જ દુર્લભ છે; ચરણના સ્પર્શમાં પણ ભગવાન પોતાના ચરણ વડે સ્પર્શ કરે એ વધારે દુર્લભ છે, અને તેમાં પણ ભગવાનનો ચરણ જ સ્પર્શ કરે તે સૌથી વધારે દુર્લભ છે; (ભગવાને કાંઈ પોતાના હસ્ત વડે સેવકનો હસ્ત લઈને પોતાના ચરણમાં સ્થાપ્યો નથી); કારણ કે ભગવાનના ચરણમાં તેવા પ્રકારની રજ છે, ગંગા વિગેરે તીર્થો છે, અમૃતરસ છે અને ભક્તો છે, એટલે બધી વસ્તુઓ પાસે હોવાથી ભગવાનનું ચરણ સર્વ દોષને દૂર કરે એ યોગ્ય જ છે. આ અર્થ શ્લોકમાં આવેલા ‘હિ’ શબ્દમાંથી નીકળે છે. તેમાં પણ આપનું ચરણ; આપે સર્વ દોષનું નિવારણ કરવાને માટે જ અવતાર ધારણ કરેલો છે. ૧૭૩.

ભગવાનને કાંઈ કહેવાનું ન હતું તેથી, અને ભગવાને મૌન રાખ્યું છતાં પણ સર્પનો અંગીકાર સિદ્ધ થયેલો હોવાથી ભગવાનની રજા લઈને તે વિદ્યાધર પોતાની મેળે જ ચાલ્યો ગયો એમ ‘ઈત્યનુજ્ઞાપ્ય’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે:

॥શ્રીશુક ઉવાચ ॥

ઈત્યનુજ્ઞાપ્ય દાશાર્હ પરિક્રમ્યાભિવાદ્ય ચ ।

સુદર્શનો દિવં યાતઃ કૃષ્ણાત્ નન્દશ્ચ મોચિતઃ ॥૧૮॥

આ પ્રમાણે દાશાર્હ પ્રભુની આજ્ઞા લઈને, પ્રદક્ષિણા કરીને, પ્રણામ અને સ્તુતિ કરીને તે સુદર્શન સ્વર્ગમાં ગયો, અને નંદરાયજી દુઃખમાંથી છૂટયા. ૧૮.

ભગવાન દાશાર્હ-દાસને યોગ્ય-છે, એટલે તેમની સેવા કરવી જોઈએ; અર્થાત્ આવા ભાવવાળાએ જ-દાસ્યની ભાવનાવાળાએ જ-સ્વામીની સેવા કરવી જોઈએ. બધા પુરુષાર્થો સિદ્ધ કરવાને માટે વિદ્યાધરે સાધન પણ કર્યું એમ જણાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘પરિક્રમ્ય’. ‘પરિક્રમ્ય’ એટલે પ્રદક્ષિણા કરીને. સુદર્શન બધા પુરુષાર્થોને ચારે બાજુથી ફરી વળ્યો એટલે તેની સિદ્ધિ તેને પોતાને અધીન થઈ ગઈ. (આશીર્વાદ પ્રાપ્ત કરવાને માટે જે નમન કરવામાં આવે છે તેને અભિવાદન કહેવામાં આવે છે.) સુદર્શને ભગવાનનું જે અભિવાદન કર્યું તે ઉપરથી જણાય છે કે સુદર્શન

પોતે ફલથી સ્વતંત્ર છે અને પુરુષાર્થો સુદર્શનના અંગભૂત છે તેથી સુદર્શનનું આધિક્ય સિદ્ધ થાય છે. (નમન એ ક્રિયારૂપ છે, અને ‘ફલં ચ પુરુષાર્થત્વાત્’ (‘જૈમિનિસૂત્ર’ ૩।૧।૫)-ફલ પુરુષને માટે છે તેથી ફલ પુરુષનું અંગ છે-એ સિદ્ધાંત પ્રમાણે, પૂર્વકાંડની રીતે ક્રિયાનું અંગ બનેલો પુરુષ ફલથી સ્વતંત્ર છે; પુરુષાર્થો પુરુષને અધીન છે તેથી કર્મ કરનાર પુરુષનું આધિક્ય સિદ્ધ થાય છે.) શ્લોકમાં જે ‘ચ’ આવેલો છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે સુદર્શને સ્તુતિ કરીને ભગવાનને નમન કર્યું, અથવા તો ભગવાને સુદર્શનને રજા આપી, અથવા તો ભગવાને સુદર્શનને કહ્યું કે ‘તથા’, હા. અથવા તો ‘યે યથા માં પ્રપદન્તે’-જે લોકો જે પ્રકારે મારે શરણે આવે છે-એ ન્યાયે ભગવાને સુદર્શનને બધા પુરુષાર્થો આપ્યા. તેથી ‘સુદર્શન’ એ પ્રકારનું નામ હોવાથી તે વિદ્યાધર સ્વર્ગે ગયો, અર્થાત્ વિદ્યાધરલોકમાં જ ગયો, કારણ કે તેને કૃષ્ણમાંથી-સર્વ દોષમાંથી-મુક્ત કરવામાં આવ્યો હતો. નંદરાયજીને પણ તે પ્રમાણે દુઃખમાંથી મુક્ત કરવામાં આવ્યા હતા. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તેણે ભગવાનનો વૈભવ પણ જાણ્યો. ૧૮.

પછીથી તે ગોપો સર્વ પ્રકારે ભગવત્પરાયાણ થયા એમ ‘નિશામ્ય’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે :

નિશામ્ય કૃષ્ણસ્ય તદાત્મ-વૈભવં વ્રજૌકસો વિસ્મિત-ચેતસસ્તતઃ।

સમાપ્ય તસ્મિન્ નિયમં પુનર્વ્રજં નૃપ! યયુસ્તત્કથયન્ત આદતાઃ ॥૧૯॥

હે રાજા! કૃષ્ણના સ્વરૂપનો તે વૈભવ જાણીને વ્રજવાસીઓને મનમાં બહુ આશ્ચર્ય લાગ્યું; પછી આરંભેલું કર્મ કૃષ્ણને નિવેદન કરીને વ્રજવાસીઓ આદરસહિત તેમની કથા કરતા પાછા વ્રજમાં આવ્યા. ૧૯.

કૃષ્ણનો તે વૈભવ જાણીને બધાય વ્રજવાસીઓને મનમાં વિસ્મય થયો, કારણ કે (નંદરાયજીને બચાવવાને માટે) કૃષ્ણ ભગવાને પોતાનું અલૌકિક સામર્થ્ય પ્રકટ કર્યું હતું. અહિં જીવની ક્રિયાથી સિદ્ધ થાય એવું કાંઈ પણ ન હતું કે જેથી પહેલાં જીવે કરેલી ક્રિયાથી ભગવાનની આ ક્રિયા વ્યર્થ થઈ જાય. આ તો ભગવાનના અનુભાવરૂપી વૈભવ હતો. આમ જો ન માનીએ તો ભગવાનના ચરણથી સર્પને કરવામાં આવેલો સ્પર્શ બળતા લાકડાથી સર્પને મારવાની જે ક્રિયા થતી હતી તેના કરતાં કોમલ છે અને તેથી એવા કોમલ ચરણસ્પર્શથી નંદરાયજીને બચાવવાનું અને સર્પને પાપમાંથી મુક્ત કરવાનું કાર્ય શી રીતે થઈ શકે? આ વૈભવ કૃષ્ણનો હતો. પરમાનંદ સ્વાનુભવસિદ્ધ છે એટલે ધર્મી કૃષ્ણની શ્રેષ્ઠતા સિદ્ધ થાય છે. કૃષ્ણના સ્વરૂપનો જ આ વૈભવ હતો, તેમની શક્તિનો નહિ. આ ઉપરથી ભગવાનનું સ્વરૂપ

જ એવા પ્રકારનું છે કે જ્યાં ક્રિયા, જ્ઞાન વિગેરેનું પ્રયોજન હોતું નથી એમ સ્વીકારવું જોઈએ. શ્લોકમાં ‘વ્રજૈકસઃ’, વ્રજવાસીઓ, એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનો ભાવ એવો છે કે વ્રજવાસીઓ તો જે વસ્તુ પ્રત્યક્ષ જુએ તેને જ માનનારા છે, અર્થાત્ પ્રત્યક્ષ જોએલી વસ્તુમાં જ વધારે વિશ્વાસ રાખનારા છે. તેથી ભગવાનની ક્રિયાથી વ્રજવાસીઓ વિસ્મય પામ્યા હતા છતાં પણ ફરીથી ભગવાનના અનુભાવથી પણ તેમના મનમાં વિસ્મય થયો. તેથી વ્રજવાસીઓ પોતાનું કર્મ ભગવાનને નિવેદન કરીને ફરીથી વ્રજમાં ગયા. અર્થાત્ વ્રજવાસીઓએ પોતે આરંભેલું કર્મ ભગવાન કૃષ્ણને જ નિવેદન કર્યું. જો ગોપોએ આ પ્રમાણે પોતાનું કર્મ ભગવાનને નિવેદન ન કર્યું હોત તો તે કર્મથી તેમનો બંધ થાત. ગોપો ફરીથી વ્રજમાં જ ગયા, કારણ કે ત્યાં જ બધી સિદ્ધિ રહેલી છે. આ જ કારણથી ગોપોએ અન્ય સ્થલે જવાની મનથી પણ ઈચ્છા ન કરી. ‘નૃપ’ એ પ્રમાણે જે સંબોધન છે તેનો ભાવ એવો છે કે રાજાને આ બધી બાબતમાં વિશ્વાસ રહે, કારણ કે પ્રત્યક્ષ દેખાતી વસ્તુમાં જ રાજાઓને વિશ્વાસ હોય છે. ગોપો ભગવાનના તરફ આદર રાખીને તે જ બાબતનું વર્ણન કરતા વ્રજમાં ગયા. આ ઉપરથી જણાય છે કે ગોપોના ચિત્તમાં ભગવાનના અનુભાવનો અભિનિવેશ થઈ ગયો છે. ૧૯.

આ પ્રમાણે ભગવાનનું અનન્યભાવે ભજન સિદ્ધ કરવાને માટે ભગવાનના માહાત્મ્યનું વર્ણન કરીને, ગોપીજનો દ્વારા બધામાં શબ્દબ્રહ્મનો આનંદ પૂરવાને માટે શબ્દાત્મક બલભદ્રની સાથે રહીને પણ ભગવાને ગોપીજનો સાથે જે કીડા કરી તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘કદાચિત્’ ઈત્યાદિ તેર શ્લોકોમાં કરે છે. (રૂપાત્મક બ્રહ્મનો આનંદ ગોપીજનો દ્વારા પુરુષોમાં જે પૂરવામાં આવ્યો તેનું વર્ણન ૨૬-૩૦ એ પાંચ અધ્યાયમાં કરવામાં આવ્યું. અર્થાત્ આ પાંચ અધ્યાયમાં ભગવાનના સ્વરૂપથી ભક્તોમાં આનંદ પૂરવામાં આવ્યો છે. આ એકત્રીસમા અધ્યાયમાં ભગવાન વેદરૂપ બલદેવજીની સાથે રહીને રમણ કરે છે એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનો ભાવ એવો છે કે ભગવાનને શબ્દબ્રહ્મનો આનંદ ભક્તોમાં પૂરવો છે. ગયા પાંચ અધ્યાયની સ્વરૂપાનંદની લીલામાં જેમ કહેવામાં આવ્યું હતું કે ‘ગોપીજનો દ્વારા પુરુષોમાં સ્વરૂપાનંદ આવશે’, તેમ આ અધ્યાયની લીલામાં પણ સમજવું. અર્થાત્ ભગવાન શબ્દબ્રહ્મનો આનંદ ગોપિકા દ્વારા બધા પુરુષોમાં પણ પૂરશે.)

કદાચિદ્ અથ ગોવિન્દો રામશ્ચાદ્ભુતવિક્રમઃ ।

વિજહતુર્વને રાત્ર્યાં મધ્યે ગોવ્રજયોષિતામ્ ॥૨૦॥

પછી એક સમયે અદ્ભુત પરાક્રમવાળા ગોવિંદ અને બલદેવજી ગાયોવાળા

વ્રજની સ્ત્રીઓની મધ્યે વનમાં રાત્રીએ વિહાર કરતા હતા. ૨૦.

આ લીલા-શબ્દબ્રહ્મલીલા-કાલપ્રધાન છે; તેથી દૈત્યો આ લીલામાં બાધ કરે છે. દૈત્યો જ્યારે બાધ કરે છે ત્યારે ભગવાનના સામર્થ્યથી તે બાધ દૂર કરવામાં આવે છે, અને તે રીતે શબ્દના જ માહાત્મ્યનું વર્ણન થાય છે, તેથી ભગવાન શંખચૂડની પાસેથી મેળવેલો મણિ પોતાના મોટા ભાઈ બલદેવજીને જ આપે છે. ('ઉદિતે જુહોતિ', સૂર્યોદય વખતે હોમ કરવો, ઈત્યાદિ વાક્યો ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે જુદા જુદા કર્મો જુદે જુદે સમયે જ કરવાનાં હોય છે, અને તે રીતે કર્મ કાલને અધીન હોય છે. તેથી બલદેવજીને સાથે રાખીને ભગવાને જે લીલા-નામલીલા-કરી તે કાલપ્રધાન છે, કાલને અધીન છે. આ કાલ ઉપાધિરૂપ હોવાથી પોતે નાશવંત છે અને બીજાઓનો પણ નાશ કરે છે. દૈત્યો પણ નાશવંત છે, તેથી કાલ દૈત્યોના જેવો છે, એટલે કાલપ્રધાન માર્ગમાં દૈત્યો અવશ્ય બાધ કરનારા હોય છે જ. વળી, રાજસ માર્ગમાં-કાલપ્રધાન માર્ગમાં-તામસી દૈત્યો પોતાનો પ્રભાવ દર્શાવે એ યોગ્ય છે. આ પરિસ્થિતિમાં ભગવાનના માહાત્મ્યથી દૈત્યોનું નિવારણ થઈ જાય, છતાં પણ તેમાં નામલીલા-શબ્દબ્રહ્મલીલા-જ કારણભૂત હોવાથી, શબ્દનું માહાત્મ્ય તે નામલીલાનું જ માહાત્મ્ય બને છે એમ ભગવાન બલદેવજીને મણિ આપે છે તે ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે. તેથી જ આ નામલીલામાં શિવરાત્રી, સંધ્યાસમય અને તેની સ્તુતિનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. આ નામલીલામાં પરોક્ષ રીતે શાસ્ત્રાર્થનો ઉપદેશ કરવામાં આવેલો છે; અર્થાત્ અધ્યાત્મ પ્રકારે તેનો વિચાર કરવામાં આવેલો છે. વેદલીલા કાલને અધીન છે તેથી કાલની ઉપાસના કરનારા દૈત્યો વેદલીલામાં આવે છે. આ જ કારણથી શંખચૂડ પણ વેદલીલામાં આવ્યો છે. આ પ્રમાણે જ્યારે વેદલીલામાં-વેદમાં જણાવેલા કર્મોમાં-દૈત્યોના પ્રવેશનો સંભવ હોય છે ત્યારે રાક્ષસોનો નાશ કરનારા મંત્રોનો યજ્ઞ વિગેરે કર્મોમાં ઉપયોગ થાય છે. વેદના મંત્રો વિગેરેનો પાઠ કરવાથી, પોતાની આજ્ઞારૂપ વેદ સત્ય છે એ જણાવવાને માટે, ભગવાન દૈત્યોને દૂર કરીને વેદમાં જણાવેલાં કર્મોને વિધનમાંથી બચાવે છે. દૈત્યોના નિવારણને માટે ભગવાને પોતાનું સામર્થ્ય પ્રકટ કર્યું અને તેને પરિણામે દૈત્યો જતા રહ્યા, એટલે શબ્દનું જ-વેદના મંત્રોનું જ-માહાત્મ્ય જગતમાં પ્રકટ થાય છે. અર્થાત્ ભગવાન પોતાના સામર્થ્યથી સર્વ કરીને પણ વેદને જ યશ આપે છે. આ અધ્યાયમાં પણ ભગવાને શંખચૂડનો વધ કર્યો અને તેનો મણિ લઈને બલદેવજીના ઉપર સ્થાપ્યો. લોકો પણ બલદેવજીના મસ્તક ઉપર મણિ જોઈને બલદેવજીનું જ માહાત્મ્ય ગાય. આ પ્રકારે ભગવાને વેદરૂપ બલદેવજીને યશ આપ્યો.)



(બાધનું નિવારણ કરવાની જરૂર છે એમ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) ભગવાનનું લૌકિક અને અલૌકિક માહાત્મ્ય જ્યારે જાણવામાં આવે ત્યારે જ વેદોના સ્વતઃપ્રામાણ્યનું જ્ઞાન સિદ્ધ થાય છે. આ પ્રમાણે જો માનવામાં ન આવે તો જેમ ભ્રાંત મીમાંસક લોકો વેદને કલ્પનાપ્રધાન માને છે તેમ સર્વ વેદ કલ્પનાથી ભરેલો થઈ જાય. (ભગવાને શંખચૂડનો વધ કર્યો તે તેમનું લૌકિક માહાત્મ્ય છે; અને ચરણારવિંદના સ્પર્શથી જ બ્રાહ્મણોના શાપથી વિદ્યાધરને પ્રાપ્ત થએલી સર્પયોનિ નો નાશ અને અપૂર્વ રૂપની સંપત્તિ એ ભગવાનનું અલૌકિક માહાત્મ્ય છે. જગતના લોકો જ્યારે ભગવાનનું માહાત્મ્ય પ્રત્યક્ષ જુએ ત્યારે જ તેમને વેદના સ્વતઃપ્રામાણ્યનું જ્ઞાન થાય છે; પણ જો તેઓ ભગવાનનું લૌકિક અને અલૌકિક માહાત્મ્ય ન જાણે તો ફલનું વર્ણન કરનારી શ્રુતિના મુખ્ય અર્થને પ્રત્યક્ષપ્રમાણનો બાધ થાય અને તેથી શ્રુતિમાં ગૌણ અર્થની કલ્પના કરવી પડે. વેદમાં ‘યજમાનઃ પ્રસ્તરઃ’, યજમાન દર્ભની પૂળી છે, એ પ્રમાણે વાક્ય છે. યજમાન દર્ભની પૂળી છે એ કથન પ્રત્યક્ષથી વિરુદ્ધ છે, તેથી મીમાંસક લોકો કલ્પના કરે છે કે યજમાન અને દર્ભની પૂળી એ બંને યાગમાં ઉપયોગી હોવાથી યજમાનની ‘દર્ભની પૂળી’ તરીકે ઉત્પ્રેક્ષા, કલ્પના, કરવામાં આવેલી છે. વાસ્તવિક રીતે તો લૌકિક પ્રમાણને અનુસરીને વેદના અર્થનો બાધ કરનારા મીમાંસક લોકો ભ્રાંત જ છે, કારણ કે લૌકિક પ્રમાણ અલૌકિક અર્થ આપી શકવાને માટે સમર્થ નથી. તેથી જેવા પ્રકારનો અર્થ નીકળતો હોય તેવા જ પ્રકારના અર્થમાં શ્રુતિનું પ્રામાણ્ય છે એમ માનવું જોઈએ.)

(યોજનાકાર લાલૂ ભટ્ટજી આ વિષયમાં નીચે પ્રમાણે કહે છે. વેદમાં જણાવેલા કર્મથી લૌકિક પુત્રાદિરૂપ ફલ મળે ત્યારે વેદનું લૌકિક માહાત્મ્ય જણાય. ‘બધા વેદોથી હું જ જણાઉં છું’ ઈત્યાદિ વાક્યો ઉપરથી અને ‘ભગવાનનાં પરાક્રમો વડે ગાનારાઓ’ ઈત્યાદિ ઉપરથી જણાય છે કે વેદ ભગવાનના ગુણોનું ગાન કરે છે. આ પ્રમાણે જાણવાથી માલમ પડે છે કે વેદો પરમાર્થને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે. આ પ્રમાણે વેદનું અલૌકિક માહાત્મ્ય જણાય છે. આ રીતે વેદનું બંને પ્રકારનું-લૌકિક અને અલૌકિક-માહાત્મ્ય જાણવામાં આવે ત્યારે વેદનું સ્વતઃપ્રામાણ્ય સિદ્ધ થાય છે. હાલમાં મીમાંસક લોકો વેદમાં જણાવેલી બાબતમાં જ્યાં યુક્તિનો વિરોધ જુએ ત્યાં ઉત્પ્રેક્ષાની જ કલ્પના કરીને વેદના અર્થને બીજે પ્રકારે સમજાવે છે; પરંતુ જે લોકો વેદનો મહિમા સમજે છે તે તો માને છે કે વેદનું સામર્થ્ય વિલક્ષણ છે અને તેથી વેદનો અર્થ યુક્તિથી બેસાડી શકાય એમ નથી; એટલે વેદનો અર્થ જે પ્રકારનો હોય તે પ્રકારનો જ સ્વીકારવો જોઈએ. જો લોકોને વેદના માહાત્મ્યનું જ્ઞાન ન હોય તો વેદના

સ્વતઃપ્રામાણ્યનું જ્ઞાન તેમને ન હોય, અને તેથી વેદના અર્થમાં ઉત્પ્રેક્ષા વિગેરે દોષનો સંબંધ તેઓ સ્વીકારે. તેથી વેદનો મહિમા અવશ્ય જણાવવો જોઈએ. આ એકત્રીસમા અધ્યાયમાં પણ ભગવાને પોતાના મોટા ભાઈ બલદેવજીને શંભચૂડના મણિનું દાન કર્યું; તેથી મોટાભાઈ તરીકે પૂજ્ય ગણાતા બલદેવજીનો લૌકિક મહિમા જણાવવામાં આવ્યો. બલદેવજીએ દૈત્યને મારીને મણિ આણ્યો; તેથી બલદેવજી દેવોથી પણ વધારે બલવાન છે એવી રીતનો તેમનો અલૌકિક મહિમા પણ જણાવવામાં આવ્યો.)

‘કદાચિત્’ એટલે એક સમયે, જ્યારે શીતકાલ ન હતો ત્યારે. ‘અથ’ એ પદનો ભાવ એ છે કે હવે બીજી વાતનો આરંભ થાય છે. રાસપંચાધ્યાયીમાં જે ગોપીજનો હતાં તેનાથી ભિન્ન ગોપીજનો સાથે ભગવાન અને બલદેવજી હવે રમણ કરે છે. પહેલાં જે શાસ્ત્રને અનુસરનારાં અને લૌકિક ધર્મ પાળનારાં ગોપીજનો હતાં તેમને પણ ભગવાનના માહાત્મ્યના દર્શનથી અને બધીય વસ્તુ ભગવાનને અધીન છે એ જ્ઞાનથી ભગવાનની અને બલભદ્રની સાથે રમણ કરવાની ઈચ્છા થઈ. (પતિ વિના બીજા પુરુષની સાથે સંબંધ કરવો એ શાસ્ત્રમાં અયોગ્ય છે એમ જાણીને જે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ન ગયાં તે શાસ્ત્રપર કહેવાય છે. પતિ વિગેરેના ભયથી જે ગોપીજનો ભગવાનની પાસે ન ગયાં તે લૌકિક ધર્મને પાળનારાં કહેવાય છે. હવે આ બંનેય પ્રકારનાં ગોપીજનો ભગવાનની સાથે રમણ કરવા પ્રવૃત્ત થયાં તેનું કારણ એ કે જ્યારે શાસ્ત્રને અનુસરનારાં ગોપીજનોએ ભગવાનનું માહાત્મ્ય જોયું ત્યારે તેમને લાગ્યું કે આવા માહાત્મ્યવાળા ભગવાનની સાથે રમણ કરવું અયોગ્ય નથી, અને જ્યારે લૌકિક ધર્મને પાળનારાં ગોપીજનોએ જોયું કે પતિ વિગેરે સર્વ પદાર્થો ભગવાનને અધીન છે ત્યારે તેમને લાગ્યું કે ભગવાનની સાથે રમણ કરવામાં કોઈનો પણ ભય નથી, અને ભગવાનનું ભજન કરવામાં જો કોઈ પણ વૈદિક અથવા લૌકિક ભય આવશે તો ભગવાન તે બધું અનિષ્ટ દૂર કરશે.)

ભગવાન ગોવિંદ છે, તેથી તે ગોપીજનોના પણ ઈન્દ્ર છે; એટલે ભગવાન ક્રિયાશક્તિને મુખ્ય રાખીને રમ્યા. બલરામે પણ રમણ કર્યું. બલદેવજીની સાથે રમણ કરવામાં ચિત્તની પ્રસન્નતા થાય એટલા માટે ‘અદ્ભુતવિક્રમઃ’, અદ્ભુત છે વિક્રમ-પરાક્રમ-જેમનું, એ પ્રમાણે વિશેષણ મૂકવામાં આવ્યું છે. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તે આવેશનો સંગ્રહ કરવાને માટે છે. (ગોપીજનોની બલભદ્રની સાથે રમણ કરવાની ઈચ્છા હોવાથી અનન્યતાનો ભંગ થયો એટલે ભગવાન તેમની સાથે કેવી રીતે રમણ કરી શકે? આ શંકાનું સમાધાન એ છે કે ભગવાન ગોપીજનોના પણ સ્વામી છે, તેથી

તેમની સાથે તે રમણ કરે છે; પરંતુ આ ગોપીજનોનો પહેલાં વણવિલા રમણમાં અધિકાર ન હોવાથી ભગવાને નૃત્ય વિગેરે કરીને પોતાના ધર્મો તેમની અંદર સ્થાપીને બત્રીસમા અધ્યાયમાં-યુગલગીતમાં-વણવિલા ગુણગાનરૂપી જ્ઞાનશક્તિને મુખ્ય રાખીને અંદર રમણ કર્યું નહિ, પણ ભગવાન ઈન્દ્ર હોવાથી ક્રિયાશક્તિને પ્રધાન રાખીને બહાર જ રમ્યા. ભગવાન હાજર હતા છતાં પણ ગોપીજનોને બલભદ્રની સાથે રમણ કરવાની જે ઈચ્છા થઈ તેનું કારણ એ કે બલદેવજી પણ અદ્ભુત પરાક્રમવાળા હોવાથી વેદરૂપ છે, અને તેથી તેમની ક્રિયા પણ ભગવાનની જ ક્રિયા છે, એટલે તેમાં કાંઈ પણ અઘટિત નથી.)

આ પ્રમાણે પ્રમાણરૂપ બલદેવજીની સેવા કરનારાંઓનો પણ એક સામટો જ જે અંગીકાર કર્યો તે ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે મધ્યમ અધિકારીઓ વેદમાં જે નિષ્ઠા રાખે છે તેમાં દોષ નથી. જો આવેશનો અભાવ હોય તો વેદરૂપી પ્રમાણને અનુસરનારાઓના અનન્યભાવનો ભંગ થઈ જાય. (મધ્યમ અધિકારીઓનો અંગીકાર ભગવાન જ કરે છે તેથી તેમની અનન્યતાનો ભંગ થતો નથી એમ તાત્પર્ય છે.)

‘અદ્ભુત પરાક્રમ છે’ એમ કહેવાથી એવું સૂચન થાય છે કે કેવલ અર્થનો વિચાર કરનારાઓને આનો-ક્રિયાપ્રતિપાદક વેદનો અને ક્રિયાશક્તિપ્રધાન ભગવાનનો-ઉપયોગ છે. જો આ પ્રમાણે ન માનીએ તો ભગવાનમાં અથવા વેદમાં બે પ્રકારની વૃત્તિ-પોતાના વિના બીજાનું નિરાકરણ અને પોતાના અર્થનું નિરૂપણ એમ બે પ્રકારની વૃત્તિ-પ્રાપ્ત થાય. (‘અદ્ભુતવિક્રમઃ’ એ પદનો સંબંધ બલરામ અને ગોવિંદ એ બેની સાથે છે. લૌકિક યુક્તિથી રહિત એવો અદ્ભુત પદાર્થ મનને, ખરેખર, આનંદ આપે છે. આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં વેદરૂપ બલદેવજીનું પરાક્રમ ક્રિયાશક્તિફલરૂપ વિચિત્ર સ્વર્ગ છે. જે લોકો શ્રુતિનું તાત્પર્ય જાણતા નથી અને જેવો અર્થ આપવામાં આવ્યો હોય તેવો જ સ્વીકારે છે તેમને સ્વર્ગનું વર્ણન કરનારા વેદનો ઉપયોગ હોય છે. વાસ્તવિક રીતે તો શ્રીમહાપ્રભુજી તત્ત્વદીપનિબંધમાં આજ્ઞા કરે છે તે પ્રમાણે ‘જે દુઃખથી મિશ્ર નથી’ એ સ્વર્ગ છે; અર્થાત્ સ્વર્ગ એટલે આત્મસુખ. જે લોકો આ તાત્પર્ય જાણે છે તે અન્યનું ભજન કર્યા વિના પ્રભુનું જ ભજન કરે છે. જ્યારે ‘અદ્ભુતવિક્રમઃ’ એ પદનો સંબંધ વેદરૂપ બલદેવજીની સાથે કરવામાં આવે ત્યારે શ્રીસુબોધિનીજીમાં આવેલા ‘કેવલાર્થપરાણામ્’ એ પદનો અર્થ ‘યથાશ્રુતાર્થ-પરાણામ્’-જેવા પ્રકારનો અર્થ દેખાય છે તેવા પ્રકારનો અર્થ સ્વીકારનારા-એ પ્રમાણે કરવો. પણ જ્યારે ‘અદ્ભુતવિક્રમઃ’નો સંબંધ ગોવિંદની સાથે કરવામાં આવે ત્યારે ‘કેવલાર્થપરાણામ્’નો અર્થ ‘સ્વપ્રયોજનપરાણામ્’-પોતાના પ્રયોજનનો

વિચાર કરનારા, નિરુપધિ ભગવાનનો વિચાર કરનારા નહિ, એ પ્રમાણે કરવો. પોતાનું રક્ષણ અને કામસુખ એ બે પોતાનાં પ્રયોજનો છે. આ પ્રમાણે જેવો જેવો અધિકારી તેવું તેવું તેનું ભજન અને તેવું તેવું તેનું ફલ એ સિદ્ધાંત યોગ્ય છે એ જણાવવાને માટે બંને રૂપથી-ગોવિંદરૂપે અને બલદેવજીરૂપે-ક્રીડા કરવામાં આવી છે. બંને રૂપથી જો આ લીલા કરવામાં ન આવે તો શંખચૂડનો વધ અને ગોપીજનોનું પ્રયોજન પૂર્ણ કરવું એ બે કાર્ય એક જ રૂપથી સંભવે નહિ, એટલે ગોપીજનોના રક્ષણને માટે ભગવાને બીજું રૂપ પ્રકટ કરવું જોઈએ. નામલીલામાં શબ્દનું પ્રાધાન્ય માનીને શ્રીમહાપ્રભુજી ‘વેદે વા’ એ પ્રમાણે બીજો પક્ષ પણ આપે છે. જેવો અર્થ હોય તેવો અર્થ સ્વીકારનારા લોકો માટે જો વેદ સાધનરૂપે અર્થનું નિરૂપણ ન કરે, અને વેદનું તાત્પર્ય જાણનારા લોકો માટે જો વેદ ફલરૂપે પોતાના અર્થ વિના અન્યનું નિરાકરણ ન કરે તો ‘હિંસામાં જો રાગ હોય તો યજ્ઞનું વિધાન જ ન થાય’ એ વાક્યથી અને ‘જ્યાં સુધી મનુષ્યને ફલ વિષે વૈરાગ્ય નથી થતો ત્યાં સુધી તેણે કર્મ કરવાં, અથવા તો જ્યાં સુધી મારી કથાનું શ્રવણ વિગેરે કરવામાં તેને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થતી નથી ત્યાં સુધી તેણે કર્મ કરવાં’ (ભાગ. ૧૧ | ૨૦ | ૯) એ વાક્યથી યાગાદિ વિધિઓ યાગ સિવાયનાં કર્મોનો નિષેધ કરશે, પણ યાગનું વિધાન નહિ કરે; અર્થાત્ જેમ ‘પન્ન પન્નના ભક્ષ્યાઃ’-પાંચ પાંચ નખવાળા પ્રાણીઓનું ભક્ષણ કરવું-એ વાક્ય પાંચ પાંચ નખવાળા પ્રાણીઓ સિવાયના પ્રાણીના ભક્ષણનો નિષેધ કરે છે તેમ યાગવિધિઓ પણ યાગનું વિધાન ન કરતાં યાગ સિવાયના કર્મોનો નિષેધ કરશે. નિત્ય કર્મ કરવામાં જો ન આવે તો પ્રત્યવાયનું શ્રવણ હોવાથી નિત્ય કર્મો અવશ્ય કરવાનાં છે એમ જો વિધિ કહે તો પછી એક જ વિધિવાક્ય પોતાના અર્થનું વિધાન કરે અને તે સિવાયના પદાર્થનો નિષેધ કરે એમ એક જ વિધિવાક્યની બે પ્રકારની વૃત્તિ થાય.)

અર્થની માફક જ શબ્દની પણ લીલા છે તેથી ‘વને રાત્ર્યામ્’, વનમાં રાત્રીએ, એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. બંનેય જણે-ગોવિંદ અને બલદેવજીએ વિહાર કર્યો. આ બંને જણના રમણને માટે આ ગોપીજનો પહેલાંનાં ગોપીજનો કરતાં હીન છે, તેથી ‘ગોવ્રજયોષિતાં મધ્યે’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. જેમાં ગાયો મુખ્ય છે એવું વ્રજ છે; આ ગોપીજનો આવા પ્રકારના વ્રજના સંબંધવાળાં છે. ૨૦.

આ લીલામાં શબ્દનું પ્રાધાન્ય બતાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘ઉપગીયમાનો લલિતમ્’:

ઉપગીયમાનો લલિતં સ્ત્રીજનૈર્બદ્ધસૌહૃદૈઃ ।

## અલડકૃતાનુલિપ્તાડ્ગૌ સ્ત્રિણૌ વિરજામ્બરૌ ॥૨૧॥

બધી સ્ત્રીઓ પ્રેમભાવથી ભગવાન અને બલદેવજીનાં ચરિત્રો મનોહર રીતે ગાતી હતી; બંનેએ અલંકાર ધારણ કર્યા હતા અને શરીર ઉપર ચંદન વિગેરેનો લેપ કરેલો હતો; તેમણે ગળામાં માલાઓ પહેરી હતી અને શરીર ઉપર સ્વચ્છ વસ્ત્રો પહેર્યા હતાં. ૨૧.

બધી સ્ત્રીઓ અંતઃકરણમાં સ્નેહથી બંધાએલી હોવાથી ભગવાનના ગુણો નું ગાન કરવા મંડી પડી. આ રીતે તે સ્ત્રીઓના અંદરના અને બહારના ભાવનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. આ પ્રમાણે યોગ્ય ગોપીજનોની સાથે પોતાનો, સર્વોત્કૃષ્ટનો, જ ભાવ યોગ્ય છે તેથી શુકદેવજી ‘અલડકૃત’ ઈત્યાદિ સાડા ત્રણ શ્લોકોમાં બંનેના છ ગુણોનું વર્ણન કરે છે. પ્રથમ તો બંને-કૃષ્ણ અને બલદેવજી-અલંકૃત હતા, સર્વ આભરણોથી ભૂષિત હતા. શબ્દમાં શિક્ષા, કલ્પ, નિરુક્ત વિગેરે છ અંગો (વેદના) ઉત્તમ અલંકાર છે, અને અર્થમાં દેશ વિગેરે ઉત્તમ અલંકાર છે. આ પ્રમાણે જો ન હોય તો તેમાં પ્રેમ થાય નહિ. પછીથી, ચંદન વિગેરેથી તે બંનેનાં અંગો લિપ્ત થએલાં હતાં, કારણ કે લેપરૂપી સારી વાસના વિના બંનેય પદાર્થોમાં પ્રેમ થાય નહિ. બધાંય અંગોમાં સારી વાસના રહેલી છે તે જણાવવાને માટે શ્લોકમાં ‘અડ્ગ’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. બંનેએ માલા ધારણ કરેલી હતી, કારણ કે માલારૂપી કીર્તિની પણ તે બંનેયને અપેક્ષા રહેલી છે. ‘વિરજામ્બરૌ’ એટલે વિરજ, સ્વચ્છ, છે વસ્ત્રો જેમનાં એવા કૃષ્ણ અને બલદેવ; અર્થાત્ તે બંનેનાં વસ્ત્રો પણ સ્વચ્છ હતાં, કારણ કે સર્વદોષનો અભાવ અને શુદ્ધ માયાની તે બંનેને જરૂર છે. (વેદમાર્ગમાં, ખરેખર, બે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ હોય છે; જહ પુરુષની માફક ફક્ત કર્મ કર્યા કરવાં એ એક પ્રવૃત્તિ, અને ભગવાનની ઈચ્છા જાણીને ભગવત્પર રહેવું એ બીજી પ્રવૃત્તિ. આ બંનેય પ્રવૃત્તિઓમાં માયા મદદ કરનારી છે. તેમાં પહેલી પ્રવૃત્તિમાં રજસૂ અને તમસૂ એ બે ગુણવાળી માયા હોય છે, જ્યારે બીજા પ્રકારની પ્રવૃત્તિમાં એ બે ગુણોથી રહિત માયા હોય છે.) ૨૧.

## નિશામુખં માનયન્તાવુદિતોડુપતારકમ્ ।

## મલ્લિકાગન્ધમત્તાલિ-જુષ્ટં કુમુદવાયુના ॥૨૨॥

ચંદ્ર અને તારાઓનો જેમાં ઉદય થયો હતો, જેમાં મલ્લિકાની સુગંધથી મત્ત થએલા ભમરાઓ ગુંજારવ કરતા હતા અને જેમાં કમલનો સુગંધી વાયુ વાતો હતો એવા ઉત્તમ સંધ્યાકાળનું બંને જણ સન્માન કરતા હતા. ૨૨.

કર્મોને માટે રાત્રી જ મુખ્ય છે, અને સંધ્યાકાલે જ સંધ્યા, અગ્નિહોત્ર વિગેરે

કરવામાં આવે છે, તેથી રાત્રીના મુખનો સત્કાર કરવામાં આવ્યો એમ કહેવામાં આવ્યું છે. ('અડધી રાત્રીએ જાગીને બ્રહ્મા નામના ઋત્વિજની સાથે આચમન કરીને અધવર્યુ નામનો ઋત્વિજૂ 'અગ્ને નય' એ પ્રમાણે કહીને આગ્નીધ્ર નામના ઋત્વિજને સ્પર્શ કરે છે.' આ વાક્ય ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે કર્મને માટે રાત્રી જ પ્રધાન છે. વળી, અગ્નિહોત્ર કર્યા પછી 'રાત્રીએ ગાયને દોલે છે' એ વાક્યથી અમાવાસ્યાની રાત્રીએ ગાયને દોલવામાં આવે છે; તેથી પણ કર્મોને માટે રાત્રી મુખ્ય સમય છે એમ જણાય છે. સંધ્યાકાલે અગ્નિહોત્ર કરવામાં આવે છે, તેથી સંધ્યાનો પણ સત્કાર કરવામાં આવે છે. આ પ્રમાણે રાત્રી અને સંધ્યા એ બેનું પ્રાધાન્ય જણાવવાને માટે શ્લોકમાં 'નિશામુખ' પદ મૂકવામાં આવ્યું છે. અર્થાત્ નિશા અને નિશામુખ, રાત્રી અને સંધ્યા, એ બેનું સન્માન કરવામાં આવ્યું એમ સિદ્ધ થાય છે. જો આ પ્રમાણે ન હોય તો શ્લોકમાં 'નિશામુખં માનયન્તૌ' ને બદલે 'સન્ધ્યાં માનયન્તૌ' એ પ્રમાણે જ કહ્યું હોત. સંધ્યાકાલે અને રાત્રીએ અગ્નિહોત્ર વિગેરે કર્મો કરવાં એટલે સંધ્યા અને રાત્રીનો સત્કાર થયો એમ ગણાય.)

આવા ગુણવાળો કાલ આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં ઉપયોગી છે તેથી શુક્રદેવજી 'ઉદિતોડુપતારકમ્' વિગેરે શબ્દોમાં તેનું વર્ણન કરે છે. 'ઉદિતોડુપતારકમ્' એટલે જેમાં ચંદ્ર અને તારાનો ઉદય થયો છે એવો સંધ્યાકાલ. ચંદ્રનો ઉદય પૂર્ણિમારૂપી પર્વનું સૂચન કરનારો છે, અને નક્ષત્રોનો ઉદય સૂચવે છે કે આકાશમાં વાદળાં નથી. ('નિશામુખં માનયન્તૌ' એ પ્રમાણે કહીને ચંદ્રોદયની વાત કહેવામાં આવી, અને પૂર્ણિમાને દિવસે જ સંધ્યાકાલે ચંદ્રનો ઉદય હોય છે, તેથી અહિં પૂર્ણિમાનું સૂચન કરવામાં આવ્યું છે એમ સ્પષ્ટ જણાય છે. કર્મમાં દર્શપૂર્ણિમાસ નામની ઈષ્ટિમાં પૂર્ણિમા જ મુખ્ય છે એવો ભાવ છે.) ચંદ્ર પ્રમાણ છે અને નક્ષત્રો ફલ છે એમ પણ સૂચવવામાં આવ્યું. (અહિં બલદેવજી અને ભગવાનની લીલાનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. બલદેવજી પ્રમાણરૂપ છે અને ભગવાન ફલરૂપ છે. ચંદ્ર અને નક્ષત્રરૂપી સામગ્રી પણ તે જ પ્રકારની છે, પ્રમાણરૂપ અને ફલરૂપ છે, એમ વર્ણન કરવામાં આવે છે. અર્થાત્ ચંદ્ર રસનું જ્ઞાન આપનારો છે તેથી તે પ્રમાણ કહેવાય છે, અને 'આ જે નક્ષત્રો છે તે સારાં કર્મો કરનારાઓનું તેજ છે' એ શ્રુતિ ઉપરથી જણાય છે કે તારાઓ સારાં કર્મોનું ફલ ભોગવતી વખતે જે તેજ હોય છે તે તેજ છે; અને નક્ષત્રોનો ઉદય થયો એમ જ્યારે કહેવામાં આવે છે ત્યારે જણાય છે કે ફલનો ઉદય થયો.)

પુણ્ય વાયુ ફલનું સૂચન કરનારો છે, તેથી 'કુમુદવાયુના જુષ્ટમ્' એ પ્રમાણે

શુક્રદેવજી તેનું વર્ણન કરે છે. કમલના સંબંધવાળો વાયુ શીતલ અને મંદ હોય છે. ‘કુમુદવાયુના જુષ્ટમ્’ એ ‘નિશામુખ’નું વિશેષણ છે. ઉત્તમ અધિકારીઓએ પણ નિશામુખનું સેવન કર્યું છે એમ જણાવતાં શુક્રદેવજી કહે છે કે ‘મલ્લિકાગન્ધમતાલિ-જુષ્ટમ્’. મલ્લિકાની ગંધ સુંદર વાસવાળી હોય છે; તેથી મત્ત થએલા ભમરાઓ બીજાનું વિસ્મરણ કરાવતા હતા. (અર્થાત્ ભમરાઓના મધુર ગુંજારવના શ્રવણથી બીજાઓને પણ મદ થાય છે અને તેથી તેઓ ભમરાઓના ગુંજારવ સિવાયના બીજા બધા પદાર્થો ભૂલી જાય છે.) આવા પ્રકારના ભમરાઓ હતા. ભમરાઓ ‘ષટ્પદ’-છ પગવાળા-છે તેથી તે સર્વજ્ઞ છે. ગતિવાચક શબ્દોનો અર્થ જ્ઞાન પણ થઈ શકે છે, તેથી ભમરાઓના છ પગ એ છ જ્ઞાનસાધનો છે. આ છ જ્ઞાનસાધનો તે છ દર્શનશાસ્ત્રો જ છે. આ પ્રકારે ભમરાઓ સર્વજ્ઞ છે.) આવા સર્વજ્ઞ ભમરાઓએ નિશામુખનું સેવન કરેલું છે. આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારે ઉત્તમ કાલનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. આવા પ્રકારના કાલનો બંને જણ-બલદેવજી અને ભગવાન-સત્કાર કરતા હતા, અર્થાત્ ‘આ કાલ સારો છે’ એ પ્રમાણે તે કાલની સ્તુતિ કરતા હતા. આ પ્રમાણે કર્મના અંગભૂત કાલ વિષેની પણ ફલશ્રુતિ યોગ્ય છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું. (કાલ એ કર્મનું અંગ છે, અને એવા કાલની સ્તુતિ કરવામાં પણ પૂર્વકાંડમાં જે ફલશ્રુતિ આપવામાં આવેલી છે તે ખરેખર યોગ્ય જ છે, કારણ કે ભગવાને પણ આવા કાલની સ્તુતિ કરીને સત્કાર કર્યો છે.) ૨૨.

**જગતુઃ સર્વભૂતાનાં મનઃશ્રવણમડ્ગલમ્ ।**

**તૌ કલ્પયન્તૌ યુગપત્ સ્વરમણ્ડલમૂર્ચિતમ્ ॥૨૩॥**

એક જ સમયે સ્વરસમૂહની મૂર્છના કરતા બંને જણ સર્વ પ્રાણીઓના મન અને કર્ણને મંગલકારક એવું ગાન કરવા લાગ્યા. ૨૩.

તે સમયે બલદેવજી અને ભગવાને બધાય પ્રાણીઓનાં મન અને કર્ણને મંગલરૂપ ગાન કર્યું. આ ગાન અંતમાં ફલરૂપે ઉત્તમ હોવાથી મનને મંગલરૂપ હતું, અને સ્વરૂપમાં ઉત્તમ હોવાથી કર્ણને મંગલરૂપ હતું. તે ગાનનો વિશેષ જણાવતાં શુક્રદેવજી કહે છે કે ‘તૌ કલ્પયન્તૌ’. એક જ સમયે તે બંને જણે સ્વરસમૂહની મૂર્છના કરી, અને આ પ્રમાણે તે બંનેની-વેદરૂપ બલદેવજીની અને વેદના અર્થરૂપ ભગવાનની-એકમુખતાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. મૂર્છના વિના મન લીન થતું નથી, અને લય વિના સર્વ રીતે તલ્લીનતા થતી નથી, તેથી બંને જણે સ્વરસમૂહની મૂર્છના કરી. (સ્વર, મૂર્છના અને લય એ સંગીતશાસ્ત્રના પારિભાષિક શબ્દો છે. ષડ્જ, ઋષભ, ગાંધાર, મધ્યમ, પંચમ, ધૈવત અને નિષાદ એ સાત સ્વરો છે. તેમાં ષડ્જ,

ગાંધાર અને મધ્યમ એ ગ્રામ કહેવાય છે, અને તે દરેકને સાત મૂર્છના હોય છે. એટલે એકંદરે એકવીસ મૂર્છના છે. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાશે કે મૂર્છના એ ગ્રામનો સાતમો ભાગ છે. કેટલાકને મતે ષડ્જાતિ સ્વરથી ઋષભાદિમાં જ્યાં સ્વરનો વિરામ થાય છે તે મૂર્છના કહેવાય છે. નાટ્યશાસ્ત્રના રચનાર ભરતાચાર્યના અભિપ્રાયે ગાવા બજાવવામાં જ્યાં હાથનું કે ગળાનું કંપન થાય છે તે મૂર્છના કહેવાય છે. ત્રીજો પારિભાષિક શબ્દ લય છે. ગીત, વાદ્ય અને પાદન્યાસ એ ત્રણનાં ક્રિયા અને કાલની જે પરસ્પર સમતા તે લય કહેવાય છે.) ૨૩.

પછીથી તેનું-ગાનનું -ફલ પણ થયું એમ શુકદેવજી 'ગોપ્યઃ' એ શ્લોકમાં કહે છે :

ગોપ્યસ્તદ્ગીતમ્ આકર્ષ્યમૂર્ચ્છિતા નાવિદનૃપ! ।

સંસદ્દુકૂલમ્ આત્માનં સસ્તકેશસ્રજં તતઃ ॥૨૪॥

હે નૃપ! તે ગીત સાંભળીને ગોપીજનો મૂર્છિત થઈ ગયાં અને તેમને સરી પડતા અધોવસ્ત્રનું, પોતાના આત્માનું અને છૂટા થએલા કેશમાંથી પડી ગએલી માલાનું ભાન ન હતું. ૨૪.

બલભદ્રજી અને ભગવાનનું તે પ્રકારનું ગીત સાંભળીને ગોપીજનો મૂર્છિત થઈ ગયાં અને તેમને પોતાના આત્માનું ભાન રહ્યું નહિ. મૂર્છામાં પણ વાસના રહે છે તેથી વાસનાનો અભાવ જણાવવાને માટે 'ન અવિદનૃ' -તેમને ભાન ન હતું-એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. 'નૃપ' એ પ્રમાણે જે સંબોધન છે તે પરીક્ષિત્ ગીતરસનો જાણનાર છે એ બતાવવાને માટે છે. જે ભાવ સર્વથા ભૂલી જવાતો નથી તેનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે 'સંસદુકૂલમ્'. દુકૂલ અને શરીરના નીચલા ભાગમાં પહેરવાનું વસ્ત્ર. તે પણ જાણે નીચે ન પડતું હોય એમ થવા લાગ્યું. છૂટા થએલા કેશો અને તેમાં રહેલી સરી પડેલી માલાઓ જેમની એવાં ગોપીજનો છે. આ પ્રમાણે ગોપીજનોને દેહનું જે અત્યંત વિસ્મરણ થયું તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ૨૪.

પ્રમાણબલ માર્ગમાં દૈત્યોનો ઉપદ્રવ અવશ્ય થાય છે, તેથી તેનું વર્ણન કરવાને માટે 'એવં વિક્રીડતોઃ' એ શ્લોકમાં શુકદેવજી બલદેવજી અને ભગવાનની લીલાનો ઉપસંહાર કરે છે:

એવં વિક્રીડતોઃ સ્વૈરં ગાયતોઃ સમ્પ્રમત્તવત્ ।

'શંખચૂડ' ઈતિ ખ્યાતો ધનદાનુચરોડભ્યગાત્ ॥૨૫॥

આ પ્રમાણે બલદેવજી અને ભગવાન સ્વચ્છંદ રીતે ઉન્મત્ત મનુષ્યની માફક જ્યારે ગાતા હતા અને વિશેષ ક્રીડા કરતા હતા ત્યારે 'શંખચૂડ' નામનો કુબેરનો નોકર



આવી પહોંચ્યો. ૨૫.

સ્વચ્છંદ રીતે તે બંને જણ વિશેષ ક્રીડા કરતા હતા, કારણ કે જે મૂર્છિત જેવાં થઈ ગયાં છે, જે પ્રમત્ત જેવાં થઈ ગયાં છે, તેમની સાથેની ક્રીડા અત્યંત સ્વચ્છંદ હોય છે. વચમાં ક્રીડા, વચમાં ગાન એમ ક્રીડા અને ગાન એ બેનું વર્ણન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે તે બે જણ ક્રીડા અને ગાન કરતા હતા. જેવી રીતે ગોપીજનો પ્રમત્ત હતા તેવી રીતે બલદેવજી અને ભગવાન્ પણ પ્રમત્ત હતા એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘સમ્પ્રમત્તવત્’. આવેશ (બલદેવજી) અને અવતાર (ભગવાન્) એ બંને આવેશદશામાં તુલ્ય હોય છે એ જણાવવાને માટે બંનેનું સામાન્ય રીતે-એક જ પ્રકારે-વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે જ્યારે બધાંય ગાંડા જેવાં થઈ ગએલાં હતાં ત્યારે શંખચૂડ નામનો કોઈ એક કુબેરનો નોકર સ્ત્રીઓની કામનાવાળો હોવાથી ભગવાનને પ્રાકૃત મનુષ્ય માનીને તે સ્ત્રીઓને લઈ જવા પોતે આવ્યો એમ જણાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘શંખચૂડ:’. (નવ નિધિઓમાં શંખ એક નિધિ છે.) આ શંખનિધિ માથામાં હતો તેથી કુબેરનો આ નોકર શંખચૂડ કહેવાતો હતો. કુબેરના નોકર શંખચૂડે અતિક્રમણ કર્યું એમ કહેવાથી નલકુબર અને મણિગ્રીવને શાપ આપવામાં નારદજીનો પણ દોષ નથી એમ સિદ્ધ થયું. (‘નારદસ્યાપિ’ એમાં જે ‘અપિ’ પદ છે તે દર્શાવે છે કે શંખચૂડને મારવામાં ભગવાનને પણ કોઈ જાતનો દોષ પ્રાપ્ત થતો નથી.) જેમ પહેલાં કુબેરના પુત્ર નલકુબર અને મણિગ્રીવ ધનથી મત્ત હતા તેમ આ શંખચૂડ પણ પોતાની પાસે શંખનિધિ હોવાથી બહુ પ્રમત્ત બનેલો છે. ‘ધનદ’ એ નામથી લક્ષ્મીના મદરૂપી બધીય સામગ્રીનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું, કારણ કે જ્યાં ધન હોય છે ત્યાં જ સ્ત્રીઓ હોય એ યોગ્ય છે. બધીય શ્રુતિઓને લૌકિક અર્થમાં ઘટાવવી જોઈએ એમ પાખંડી લોકો માને છે. (જેમ પાખંડી લોકો ભગવાનનું વર્ણન કરનારા વેદોને પણ લૌકિક અર્થમાં ઘટાવે છે, તેમ આ શંખચૂડ પણ ભગવાનમાં લીન થએલાં શ્રુતિરૂપા ગોપીજનોને બીજે સ્થલે લઈ જવાની ઈચ્છા કરે છે, તેથી તે પાખંડી છે. કૃષ્ણોપનિષદ્માં કહેવામાં આવેલું છે કે લોભ, ક્રોધ વિગેરે દૈત્યો છે, અને તેથી જે ભગવાનથી વધ કરવા યોગ્ય છે તે લોભ વિગેરે દોષરૂપ હોય છે; એટલે શંખચૂડ આ બધા દોષોમાં પાખંડરૂપ છે.) ૨૫.

પછીથી શંખચૂડે જે કર્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘તયોર્નિરીક્ષતો:’ એ શ્લોકમાં કરે છે :

તયોર્નિરીક્ષતો રાજન્ તન્નાથં પ્રમદાજનમ્ ।

કોશન્તં કાલયામાસ દિશ્યુદીચ્યામ્ અશક્તિઃ ॥૨૬॥

હે રાજન્! બલદેવજી અને ભગવાન્ જોતા હતા એવામાં જ તે બંને જેમના નાથ છે એવા અને આકંદ કરતા સ્ત્રીવર્ગને તે શંખચૂડ કોઈ પણ પ્રકારની શંકા લાવ્યા વિના ઉત્તર દિશામાં કાલની માફક હરી ગયો. ૨૬.

રાજાઓ શત્રુઓની સ્ત્રીઓનું હરણ કરે છે તે સ્વાભાવિક છે, એટલે રાજાઓનો એ સ્વાભાવિક દોષ છે એમ જણાવવાને માટે શુકદેવજી ‘રાજન્’ એ પ્રમાણે પરીક્ષિતને સંબોધે છે. તે બે જણ જ-બલદેવજી અને ભગવાન જ-નાથ છે જેમના એવો સ્ત્રીવર્ગ. પ્રમદાઓ એટલે અમુક જાતની સ્ત્રીઓ; તેમનો જન એટલે સમૂહ, કારણ કે ‘જન’ એ સામાન્ય શબ્દ હોવાથી સમૂહવાચક છે. જો તે સ્ત્રીઓ કૃષ્ણ ભગવાન્ રૂપી વિશેષ પદાર્થમાં આસક્ત હોત તો તેઓ શંખચૂડની સાથે જાત નહિ એમ જણાવવાને માટે ‘જન’ એમ સામાન્ય વચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. (આ ગોપીજનો વેદરૂપ બલદેવજી અને વેદના અર્થરૂપ કૃષ્ણચંદ્ર એ બેમાં આસક્ત હતાં, તેથી તેમને શંખચૂડ લઈ ગયો અને તે ગોપીજનો શંખચૂડની સાથે ગયાં. પણ જો આ ગોપીજનો રાસપંચાધ્યાયીનાં ગોપીજનોની માફક ફક્ત પુરુષોત્તમમાં આસક્ત હોત તો તેઓ શંખચૂડની સાથે ગયાં ન હોત એમ તાત્પર્ય છે.)

‘કોશન્તમ્’-આકંદ કરતાં હતાં-એમ કહેવાથી એવું સૂચન થાય છે કે ગોપીજનોને શંખચૂડને માટે ઈચ્છા ન હતી અને શંખચૂડને કોઈનો ભય ન હતો. જે પ્રમાણે કાલના બલને કોઈ અટકાવી શકતું નથી અને તે કાલ સર્વનું જ હરણ કરે છે તે પ્રમાણે શંખચૂડ ગોપીજનોનું હરણ કરી ગયો. આ અર્થ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘કાલયામાસ’. પોતાના ઘરમાં બલ અધિક હોય તેટલા માટે શંખચૂડ ઉત્તર દિશામાં ગયો એ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘ઉદીચ્યાં દિશિ’. (શંખચૂડ એ કુબેરનો નોકર હતો અને કુબેરનો વાસ ઉત્તર દિશામાં હોવાથી શંખચૂડ ઉત્તર દિશામાં આવેલા પોતાને ઘેર ગયો એમ તાત્પર્ય છે.) તેથી જ, ભગવાન્ શું કરશે એવી શંખચૂડને શંકા થઈ નહિ એમ જણાવવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘અશક્તિઃ’. ૨૬.

પછીથી બલદેવજીએ અને કૃષ્ણે જે કર્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘કોશન્તમ્’ એ શ્લોકમાં કરે છે:

કોશન્તં કૃષ્ણ! રામેતિ વિલોક્ય સ્વપરિગ્રહમ્ ।

યથા ગાદસ્યુના ગ્રસ્તા ભ્રાતરાવન્વધાવતામ્ ॥૨૭॥

વાઘે અથવા ચોરે પકડેલી ગાયો જેમ ચીસો પાડે તેમ ‘હે કૃષ્ણ! હે

બલરામ!' એ પ્રમાણે ચીસો પાડતી પોતાની ગોપીજનોને જોઈને બંને ભાઈઓ તે શંખચૂડની પાછળ દોડ્યા. ૨૭.

જો તે ગોપીજનોએ 'હે કૃષ્ણ! હે રામ!' એ પ્રમાણે બૂમ પાડી ન હોત તો શંખચૂડને ભગવાન્ અટકાવત પણ નહિ. જેમનું ચિત્ત ભગવાનથી અન્ય પદાર્થમાં હોય છે તેમને ભગવાન્ અટકાવતા નથી. તેમાં પણ જો તે બીજાના સંબંધવાળો હોય તો તેને રોકે નહિ; પરંતુ આ ગોપીજન 'સ્વપરિગ્રહ' હતાં, અર્થાત્ ભગવાને પોતે પહેલેથી જ આ ગોપીજનનો સ્વીકાર કરેલો હતો. તેથી જેમનો પહેલેથી જ સ્વીકાર કરવામાં આવેલો છે એવાં ગોપીજનોને આક્રંદ કરતાં જોઈને તે બંને-બલદેવજી અને કૃષ્ણચંદ્ર-શંખચૂડની પાછળ દોડ્યા. 'ભ્રાતરૌ'-બંને ભાઈઓ-એ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે આ ગોપીજનોનો સ્વીકાર બંનેએ કરેલો છે, એટલે તે બંનેએ આ ગોપીજનોનું રક્ષણ કરવું જોઈએ. શંખચૂડે ગોપીજનોને પકડ્યા પછી જ બંને ભાઈઓ તેની પાછળ દોડ્યા એમ જણાવવાને માટે શ્લોકમાં 'અનુ' એમ મૂકવામાં આવ્યું છે. ૨૭.

દૂર લઈ ગએલાં ગોપીજનોને દૂરથી જ બંનેએ આશ્વાસન આપ્યું એમ શુકદેવજી 'મા ભૈષ્ટેત્યભયારાવૌ' એ શ્લોકમાં કહે છે:

મા ભૈષ્ટેત્યભયારાવૌ શાલહસ્તૌ તરસ્વિનૌ ।

આસેદતુસ્તં તરસા ત્વરિતં ગુહ્યકાઘમમ્ ॥૨૮॥

'ડરશો નહિ' એમ અભય વચન બોલતા બંને ભાઈઓ, હાથમાં સાગનાં ઝાડ લઈને પૂર વેગથી દોડીને, ઉતાવળે દોડી જતા તે નીચ યજ્ઞની પાસે જલદીથી પહોંચી ગયા. ૨૮.

'ડરશો નહિ' એ વચન ભય દૂર કરનારું છે. સાગના ઝાડ જેમના હાથમાં છે એવા બલદેવજી અને કૃષ્ણ ભગવાન્; આ પ્રમાણે કહેવાથી તે બંનેની મહાન્ શક્તિ દૂરથી જ દેખાડવામાં આવી; તેમને કાંઈ ઝાડનો કોઈ પ્રકારનો ઉપયોગ ન હતો. 'તરસ્વિનૌ' એટલે ઘણા વેગવાળા. શંખચૂડ વચમાંથી એક પણ ગોપીજનને પકડીને ચાલ્યો ન જાય, અથવા તેનો સ્પર્શ ન કરે, એટલા માટે જલદીથી તે બંને શંખચૂડની પાસે ગયા. 'આસેદતુ:'ને બદલે 'આસેઘતુ:' એ પાઠ જો સ્વીકારવામાં આવે તો તેનો અર્થ એ કે તે બંને ભાઈઓએ શંખચૂડને અટકાવ્યો. 'તમ્' એટલે શંખચૂડને (અટકાવ્યો). 'તરસા' એટલે વગર વિચારે જ. દેવ મનુષ્યના કરતાં વધારે બલવાન્ હોય છે તેથી શંખચૂડની સામે થતાં વિચાર કરવો પડે છે, (પણ આ વિચાર બે ભાઈઓએ કર્યો નહિ.) 'ત્વરિતમ્' એટલે નાસી જવાને માટે ઉતાવળ કરતો

(શંખચૂડ), કારણ કે શંખચૂડ યક્ષોમાં નીચ હતો. શંખચૂડ સ્ત્રીઓની લાલચથી આવ્યો તેનું કારણ એ કે તે યક્ષ હતો; અને તે નાસી જવા લાગ્યો તેનું કારણ એ કે તે અધમ હતો. ૨૮.

પહેલાં શંખચૂડ તે ગોપીજનોની સાથે જલદીથી જતો હતો, હમણાં તો પોતે જ નાસી જવાનો તેણે વિચાર કર્યો એમ શુકદેવજી ‘સ વીક્ષ્ય’ શ્લોકમાં કહે છે :

સ વીક્ષ્ય તાવનુપ્રાપ્તૌ કાલમૃત્યૂર્ઘવોદ્વિજન્ ।

વિસુજ્ય સ્ત્રીજનં મૃદઃ પ્રાદવજ્જવિનેચ્છયા ॥૨૯॥

કાલ અને મૃત્યુ જેવા તે બંનેને આવેલા જોઈને ઉદ્વેગ પામતો તે મૂર્ખ શંખચૂડ જીવવાની ઈચ્છાથી ગોપીજનોને છોડી દઈને જલદી દોડી ગયો. ૨૯.

બલદેવજી અને કૃષ્ણચંદ્રને પોતાની પાસે આવી પહોંચેલા જોઈને તે અલ્પ બુદ્ધિવાળો શંખચૂડ સ્ત્રીઓનો ત્યાગ કરીને દોડી ગયો. એ પ્રમાણે પદોનો સંબંધ છે. શંખચૂડને આ પ્રમાણે કરવાની બુદ્ધિ થઈ તેનું કારણ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘કાલમૃત્યૂર્ઘવાદ્વિજન્’. બે ભાઈઓમાંથી એક કાલ છે, પોતાના એટલે શંખચૂડના નાશનો સમય છે, જ્યારે બીજો શંખચૂડને મારનાર છે. આ બેમાંના એકનું પણ નિવારણ થઈ શકે એમ નથી, તો પછી જ્યાં બે ય હાજર હોય તો તેમાં શું જ કહેવું? ત્યાંથી નાસી જવામાં જીવવાની ઈચ્છા જ કારણભૂત હતી, કારણ કે જો તે જીવે તો ભોગ કરી શકે. અરે! શંખચૂડ તે બે ભાઈઓને શરણે કેમ ન ગયો? જો તે શરણે ગયો હોત તો જીવત, પણ નાસી જવું એ કાંઈ જીવવાનો ઉપાય નથી. આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘મૃદઃ’, તે શંખચૂડ મૂર્ખ છે. ભગવાનને શરણે જવાથી માણસ જીવી શકે છે એ વાત તે જાણતો નથી. ૨૯.

જે ઉપાય નથી તેને ઉપાય માનીને પ્રવૃત્ત થનારનું કાર્ય સિદ્ધ થતું નથી એમ શુકદેવજી ‘તમન્વધાવત્’ એ શ્લોકમાં કહે છે:

તમ્ અન્વધાવદ્ ગોવિન્દો યત્ર યત્ર સ ધાવતિ ।

જિહીર્ષુસ્તચ્છિરોરત્નં તસ્થૌ રક્ષન્ સ્ત્રિયો બલઃ ॥૩૦॥

જ્યાં જ્યાં શંખચૂડ દોડવા લાગ્યો ત્યાં ત્યાં ગોવિંદ ભગવાન્ તેના માથાનો મણિ લઈ લેવાની ઈચ્છાથી તેની પાછળ દોડ્યા, અને બલદેવજી સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરતા ઉભા રહ્યા. ૩૦.

ભગવાન્ ગોવિંદ છે એટલે ભક્તોના રક્ષણને માટે પોતાની ક્રિયાનો વિનિયોગ આવશ્યક છે. જો ભગવાન્ પોતાની ક્રિયાનો ઉપયોગ ભક્તોનું રક્ષણ કરવા માટે ન કરે તો ભગવાનનું ઈન્દ્રત્વ સિદ્ધ થાય નહિ. દોષનો મૂલમાંથી નાશ કરવામાં

આવે તો જ ભક્તોનું રક્ષણ થઈ શકે, પણ જો જરા પણ દોષ રહ્યો હોય તો ભક્તોનું રક્ષણ થઈ શકે નહિ. તેથી જ્યાં જ્યાં શંખચૂડ દોડતો હતો ત્યાં ત્યાં જ તેની પાછળ ભગવાન દોડ્યા. અરે! દૂરથી પણ ભગવાન શંખચૂડને મારી શકે એમ હતું તો પછી ભગવાન તેની પાછળ કેમ દોડ્યા? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘જિહ્વીષુસ્તચ્છિરોરત્નમ્. ભગવાન શંખચૂડને દૂરથી મારવા જાય તો શંખચૂડના સંબંધી યજ્ઞો તેને લઈ જાય અને શંખચૂડ મરાય નહિ. જ્યાં સુધી (શંખચૂડના માથામાં) મણિ હોય ત્યાં સુધી મણિની માફક શંખચૂડનો શસ્ત્રોથી પણ વધ કરી શકાય નહિ. તેથી ભગવાન પોતે જ (શંખચૂડની પાછળ) ગયા, કારણ કે જીવો શંખચૂડનો વધ કરી શકે એમ ન હતું. બલદેવજી સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરતા ઉભા રહ્યા. બલદેવજી જો સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરવાને માટે જો ત્યાં ન ઉભા રહ્યા હોત તો બીજો કોઈ પુરુષ તે સ્ત્રીઓને ત્યાંથી હરી જાત. શંખચૂડના માણસો ઘણા હતા, એટલે તેઓ સ્ત્રીઓને મારી જ નાખત. તેથી બલદેવજી અને કૃષ્ણ ભગવાન એ બેમાંથી એકે તો સ્ત્રીઓનું રક્ષણ કરવું જોઈએ. ઘણા માણસો સામા આવે તો પણ બલદેવજી રક્ષણ કરી શકશે એ ભાવ જણાવવાને માટે શુકદેવજીએ ‘બલ:’ એ પ્રમાણે શ્લોકમાં કહ્યું છે. સ્ત્રીઓનું તો, ખરેખર, રક્ષણ કરવું જ જોઈએ. ૩૦.

પછીથી ભગવાને જે કર્યું તેનું વર્ણન શુકદેવજી ‘અવિદૂર ઈવ’ માં કરે છે:

અવિદૂર ઈવાભ્યેત્ય શિરસ્તસ્ય દુરાત્મનઃ ।

જહાર મુષ્ટિનૈવાઙ્ગા! સહચૂડામણિ વિભુઃ ॥૩૧॥

હે અંગ! પાસે જ હોય તેમ તે શંખચૂડની સમીપ જઈને સમર્થ ભગવાને મુષ્ટિથી જ તે દુષ્ટના ચૂડામણિવાળા મસ્તકનું હરણ કર્યું. ૩૧.

જરાક દોડીને જ ભગવાન તે શંખચૂડની પાસે ગયા. ‘અવિદૂરે’ એટલે પાસે જ. ખરી રીતે તો શંખચૂડ દૂર ગએલો હતો, પરંતુ સમયનો વિલંબ ન થવાથી જાણે તે પાસે જ હોય તે પ્રમાણે ભગવાન તેની પાસે જઈ પહોંચ્યા અને તેનું મસ્તક હરી લીધું. અરે! જે માણસ નાશી જાય છે તેનો વધ નિષિદ્ધ છે, તો પછી ભગવાને આવું ક્લિષ્ટ કર્મ શા માટે કર્યું? આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘દુરાત્મનઃ’. શંખચૂડ, ખરેખર, દુષ્ટ હોવાથી તે વધ કરવા યોગ્ય જ હતો. વેદનો દ્વેષ કરનારા પુરુષોને મારી નાખવામાં જ આવે છે. શંખચૂડને મારી નાખવામાં નિમિત્ત તો સ્ત્રીઓનું જ હરણ છે જ, નહિ તો ભગવાન તેને પહેલાં જ મારી નાખત. ભગવાન જો હમાણાં શંખચૂડનો ત્યાગ કરે તો તે પાછો ફરીથી આવે (અને સ્ત્રીઓનું હરણ કરી જાય.) જો બલદેવજી એકલા જ ક્રીડા કરે તો શંખચૂડ ત્યાં આવીને ઉપદ્રવ કરે, કારણ

કે તેનું અંતઃકરણ દૃષ્ટ છે, આ કારણથી જ તે વધ કરવા યોગ્ય છે. તેથી શંખચૂડનું માથું જ-જેમાં જ્ઞાનશક્તિ મુખ્ય છે એવું માથું જ-ભગવાને મૂઠીથી જ હરી લીધું, પણ તેને ફોડી નાખ્યું નહિ; પરંતુ જેમ કોઈ ઢગલામાંથી મૂઠી વડે થોડા ચોખા લેવામાં આવે છે તેમ શંખચૂડના ઢગલારૂપી અવયવોને મૂઠીથી જ હરી લેવામાં આવ્યા. જે વખતે જ શંખચૂડે ગોપીજનોનું હરણ કરવાને માટે પ્રયત્ન કર્યો તે જ વખતે બધા અવયવોને એક બીજાની સાથે જોડી રાખનારા દેવો તે અવયવોમાંથી જતા રહ્યા; ફક્ત મણિના પ્રભાવથી અવયવી દેહ ટકી રહ્યો હતો. ભગવાને તો શંખચૂડનું ચૂડામણિવાળું મસ્તક હરી લીધું. શંખચૂડનાં અવયવો તેના પોતાના કર્મથી જ છિન્નભિન્ન થઈ ગયાં, તેથી ભગવાન્ અકલિષ્ટકર્મા જ રહ્યા. (અર્થાત્ ભગવાનનું કર્મ કલિષ્ટ નથી.) વળી, ભગવાન્ વિભુ છે, એટલે તે પોતે શંખચૂડના મણિનું સામર્થ્ય દૂર કરવાને સમર્થ છે. ૩૧.

જ્યારે ભગવાને શંખચૂડનું ચૂડામણિવાળું મસ્તક હરી લીધું ત્યારે શંખચૂડ મરી ગયો એમ ‘શંખચૂડં નિહત્ય’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી કહે છે :

શંખચૂડં નિહત્યૈવં મણિમ્ આદાય ભાસ્વરમ્ ।

અગ્રજ્ઞયાદદત્ પ્રીત્યા પશ્યન્તીનાં ચ યોષિતામ્ ॥૩૨॥

આ પ્રમાણે ભગવાને શંખચૂડને મારી નાખીને, તેનો પ્રકાશવાળો મણિ લઈને ગોપીજનોના દેખતાં મોટા ભાઈ બલદેવજીને પ્રીતિથી આપ્યો. ૩૨.

આ પ્રકારે ભગવાને શંખચૂડને માર્યો, બીજે પ્રકારે નહિ. શંખચૂડને મુક્તિ ન મળે એટલા માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘નિહત્યૈવ’. મરેલાનું દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવું જોઈએ નહિ એવી શંકા થતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘ભાસ્વરમ્’. ‘અયોગ્ય સ્થાનમાંથી ઉત્તમ મણિ ગ્રહણ કરવો’ એ વાક્યથી જણાય છે કે ભગવાને શંખચૂડનો પ્રકાશવાળો મણિ લીધો તેમાં દોષ નથી. મણિનું ગ્રહણ કરવાથી મણિમાં રહેલા દેવતાનું પણ ગ્રહણ થઈ ગયું. (મણિમાં અધિષ્ઠાતા દેવ ન હોય તો તે મણિ પ્રકાશવાળો ન હોય, અને શુકદેવજી ‘ભાસ્વરમ્’ એ પ્રમાણે મણિનું વિશેષણ પણ મૂકે નહિ. તેથી સ્પષ્ટ થાય છે કે મણિમાં તેનો અધિષ્ઠાતા દેવ રહેલો હતો.) બલદેવજીને સ્ત્રીઓની ઈચ્છા છે એ પક્ષમાં તેમની કામના સફલ કરવામાં આવી. ભગવાને શંખચૂડનો મણિ લઈ લીધો તેથી તેમણે શંખચૂડને મુક્તિ આપવી જોઈએ એમ કોઈ શંકા કરે તો તે શંકા દૂર કરવાને માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘અગ્રજ્ઞયાદદાત્’, ભગવાને પોતાના મોટા ભાઈ બલદેવજીને તે મણિ આપી દીધો. (ઉપભોગને માટે બલદેવજી બીજી સ્ત્રીઓની પણ કામના કરે છે એ જણાવવાને માટે સુબોધિનીજીમાં ‘તાઃ’ એ પ્રમાણે

બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે.) (અરે! આ પ્રમાણે જો હોય તો ભગવાને મણિના દેવતાનું જ ગ્રહણ કરવું ઉચિત હતું, મણિનું પણ ગ્રહણ કરવાની જરૂર ન હતી. આ પ્રમાણે શંકા થાય તો તેનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) બલદેવજી મણિમાં જ રહેલા દેવતાનો પણ ઉપભોગ ભલે કરે એ હેતુથી ભગવાને પ્રીતિથી જ બલદેવજીને તે મણિ આપ્યો, કાંઈ બલદેવજીએ તે મણિ માગ્યો ન હતો. (દરેક પદાર્થમાં રહેલો દેવ તે પદાર્થનું નિયમન કરે છે. મણિનું નિયમન કરવાનું કાર્ય તેમાં રહેલા દેવતાનું છે. આ અધિકાર દેવતાઓને ભગવાને આપેલો છે. તેથી દેવતાનું દેવતાપણું તે પદાર્થમાં રહેવાથી જ સિદ્ધ થાય છે.)

સ્ત્રીઓ ભગવાનને મણિ માટે પ્રાર્થના ન કરે એટલા માટે શુકદેવજી કહે છે કે ‘પશ્યન્તીનામ્;’ અર્થાત્ સ્ત્રીઓના દેખતાં જ ભગવાને બલદેવજીને મણિ આપી દીધો. શ્લોકમાં જે ‘ચ’ છે તે ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાને બધી સ્ત્રીઓને તે મણિ દેખાડ્યો, તે સ્ત્રીઓએ મણિનો સ્પર્શ કર્યો, અને ત્યાર પછી તે સ્ત્રીઓ અને બીજા દેવોના દેખતાં ભગવાને તે મણિ બલદેવજીને આપી દીધો. પ્રમાણની સિદ્ધિને માટે ભગવાન જે કરે છે તે સર્વ પ્રમાણના અધિષ્ઠાતા બલદેવજીને જ આપી દે છે એમ દર્શાવવામાં આવ્યું. (ભગવાન જે માર્ગના સંબંધી કાર્ય કરે છે તે તે માર્ગના અધિષ્ઠાતા દેવને આપે છે. આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં ભગવાને પ્રમાણમાર્ગના ફલરૂપ મણિનું હરણ કર્યું તેથી તેમણે તે મણિ પ્રમાણમાર્ગના અધિષ્ઠાતા બલદેવજીને આપ્યો.) (તો પછી, ભગવાન સર્વનું મૂલ હોવાથી આ મણિનું સ્થાપન ભગવાનના જ મસ્તક ઉપર થાય એ ઉચિત છે; વળી, શંખચૂડને ભગવાનના હસ્તનો સ્પર્શ થએલો છે, તો તેને મુક્તિ ન મળે એ પણ અઘટિત જ છે. આ પ્રમાણે શંકા થતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) આ પ્રસંગમાં પ્રમાણબલ જ મુખ્ય છે, તેથી પ્રમેયબલનો વિચાર કરીને કોઈ પણ બીજા અર્થની શંકા કરવી નહિ. ૩૨.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં  
શ્રીમદ્વલ્લભદીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં  
બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલ પ્રકરણના વૈરાગ્ય નિરૂપક  
૩૧ મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.



# ॥ अध्याय બત્રીસમો ॥

## યુગલગીત

દ્વાત્રિંશેઽન્તર્ગોપિકાનાં સ્વાનન્દં ભગવાન્ હરિઃ ।

પૂર્યામાસ યેનૈવ પૂર્ણાનન્દ ઈતીર્યતે ॥કા.૧॥

ગોપીજનોના અંતઃકરણમાં ભગવાન્ હરિએ (ગુણગાયન દ્વારા) પોતાના આનંદને પૂર્યો, અને તેથી જ ભગવાન્ પૂર્ણાનંદ થયા, એમ આ બત્રીસમા અધ્યાયમાં કહેવામાં આવે છે.

(જો કે બધેય ઠેકાણે આનંદ અંતઃકરણમાં જ અનુભવાય છે, તો પણ બાહ્ય રમણમાં શરીર અને ચેષ્ટાનું પ્રાધાન્ય હોવાથી, અને સ્વરૂપ મૂર્ત હોવાથી સ્વરૂપાત્મક આનંદ પણ મૂર્ત છે એ કારણથી શરીર, ઈન્દ્રિય વિગેરેમાં સ્વરૂપે સ્થાપેલા આનંદનો અનુભવ મનથી થાય છે. આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં તો ભગવાનની સાથે ગોપીજનો નો સંગ અંતઃકરણમાં થવાથી આનંદ પ્રકટ થયો અને તેથી બાહ્ય રમણમાં થાય છે તે પ્રમાણે શરીર, ઈન્દ્રિય વિગેરેમાં ધર્મો પ્રકટ થાય છે. આ હેતુથી શ્રીમહાપ્રભુજીએ કારિકામાં ‘અન્તર્’ એ પદ મૂકેલું છે.

અરે! ધર્મિસ્વરૂપના વિરહથી ઉત્પન્ન થતા દુઃખનું નિવારણ ધર્મરૂપ ગુણગાનથી કેવી રીતે સંભવે? અને તેમાં પણ ધર્મરૂપ ગુણગાન સ્વરૂપની માફક ગોપીજનોના અંતઃકરણમાં કેવી રીતે આનંદ પૂરી શકે? આ શંકાનું નિરાકરણ શ્રીમહાપ્રભુજી ‘યેનૈવ’ એ પદો વડે કરે છે. જે પ્રમાણે ભગવાનનું સ્વરૂપ પૂર્ણાનંદાત્મક છે તે પ્રમાણે ભગવાનની નામલીલા પણ પૂર્ણાનંદાત્મક છે, એટલે સર્વ ઘટી શકે છે. અર્થાત્ ભગવાન્ સ્વરૂપથી અને નામથી પૂર્ણાનંદ છે.

અથવા તો ‘યેનૈવ’નો અર્થ બીજે પ્રકારે પણ કરી શકાય એમ છે. ભગવાને જે સ્વરૂપથી પહેલાં રાસપંચાધ્યાયીમાં લીલા દ્વારા ગોપીજનોને આનંદ આપ્યો અને પોતે પૂર્ણાનંદ કહેવાયા તે જ સ્વરૂપથી-ગોપીજનોના અંતઃકરણમાં જ જે રહેલું હતું અને ભાવના પ્રબલ વેગને લીધે મુખકમલ દ્વારા જે બહાર આવ્યું તે જ સ્વરૂપથી-હમણાં પણ આ અધ્યાયમાં ભગવાને ગોપીજનોની અંદર આનંદ પૂર્યો. આ જ અર્થનું વિવરણ ‘અન્તઃપ્રવિષ્ટઃ’ ઈત્યાદિ પદોમાં કરવામાં આવેલું છે.

અથવા તો ‘યેનૈવ’નો ત્રીજો અર્થ પણ સંભવે છે. જેમ જેમ ભગવાન્ પોતાના વિષેની ભક્તોની આર્તિ જુએ છે તેમ તેમ તે હર્ષ પામે છે. જો કે પરમ કૃપાલુ ભગવાનના આવા સ્વભાવનું વર્ણન કરવું અઘટિત છે, છતાં પણ આ પ્રમાણે જે



કહેવામાં આવ્યું છે તેનો આશય આ પ્રમાણે છે. ભગવાનનો ભક્તોને વિષે પરમ અનુરાગ હોવાથી પરોક્ષમાં ભક્તોના હૃદયમાં પોતાનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરીને ગુણગાનના શ્રવણના આનંદનો અનુભવ કરવાની ભગવાનને ઈચ્છા થાય છે. ભગવાનની આ ઈચ્છા ભક્તોની આર્તિથી જ પૂર્ણ થાય છે. તેથી ભક્તોની આર્તિ જોઈને ભગવાનને ઘણો આનંદ થાય છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. વળી, દિવસે વિરહને લીધે ઉત્પન્ન થતી આર્તિવાણાં ગોપીજનો સાથે જ્યારે ભગવાન સાંપકાલે મળે છે ત્યારે ભગવાનને જે આનંદ થાય છે તે દિવસે ગોપીજનોના સમાગમમાં રહેવાથી થતો નથી. આવસ્તુસ્થિતિને લીધે પોતાના જે આનંદને લીધે ભગવાન પોતે પૂર્ણાનંદ છે એમ ભક્તો જાણે છે તેવો આનંદ ભગવાને ગોપીજનોની અંદર પૂર્યો. આ ત્રીજા પ્રકારના અર્થમાં પ્રયોજન પૂર્ણાનંદત્વ છે; તેનું અનુસંધાન કરીને ભગવાન પોતાનો આનંદ ગોપીજનોમાં પૂરે એ હેતુથી ગોપીજનો ભગવાનનાં ગુણગાન કરતાં નથી, પરંતુ ગોપીજનોનો ભગવાનની ઉપર જે ભાવ છે તે ભાવના સ્વભાવથી જ તેઓ ગુણગાન કરે છે, તેથી ભાવસંબંધી કાંઈ પણ પ્રયોજન દર્શાવવાની જરૂર રહે છે. આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો તેનું સમાધાન એ કે ગોપીજનોના ભાવની સ્થિરતા પણ થાય છે. અર્થાત્ ભાવના સ્વભાવથી ભાવને સ્થિર કરવાને માટે ગુણગાન છે. આ પ્રયોજન ભાવની અંદર જ રહેલું છે. પછીથી તે ગુણગાન વડે બંનેય પ્રયોજન-ગોપીજનોમાં ભગવાનનો આનંદ પૂરાય છે અને તેમનો ભાવ દૃઢ થાય છે એ પ્રયોજન-સિદ્ધ થાય છે. ગુણગાન એ ભાવનું કાર્ય છે, અને ભાવ ભગવદ્રૂપ છે તેથી શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે ભગવાને ગુણગાન દ્વારા ગોપીજનોમાં આનંદ પૂર્યો. ભગવાન પોતાનો આનંદ ભક્તોમાં જે પૂરે છે તે જ ભાવની સ્થિરતા કહેવાય છે.) ૧.

અન્તઃપ્રવિષ્ટો ભગવાન્ મુખાદ્ ઉદ્ઘૃત્ય કર્ણયોઃ ।

પુનર્નિવેશ્યતે સમ્યક્ તદા ભવતિ સુસ્થિરઃ ॥કા.૨॥

ગોપીજનોના અંતઃકરણમાં પ્રવેશ પામેલા ભગવાનને જ્યારે મુખમાંથી ગુણગાન દ્વારા બહાર કાઢીને ફરીથી ગુણગાનનું શ્રવણ કરીને કર્ણમાં સારી રીતે પ્રવેશ કરાવવામાં આવે છે ત્યારે તે સારી રીતે સ્થિર થાય છે.

(ભગવાન પોતાનો આનંદ ગોપીજનોમાં જે પૂરે છે તેનું વર્ણન આ બીજી કારિકામાં કરવામાં આવે છે. જો કે ગુણગાન ભાવના સ્વભાવથી જ થાય છે, કોઈ પણ પ્રયોજનને લીધે નહિ, તો પણ ગુણગાનથી પૂર્વ ભાવ પણ સ્થિર થાય છે. ભગવાન ભાવાત્મક છે. આ ભાવાત્મક ભગવાનના સ્વરૂપવાળી જે સુધા તે પહેલાં નાદ દ્વારા દાખલ થઈ, અને તેનું વર્ણન વેણુગીતમાં આવેલી ‘સ્ન્દ્યાન્વેણોરઘરસુધયા

પૂર્યન્' એ પંક્તિમાં કરવામાં આવેલું છે. બહાર ફલનો અનુભવ થાય ત્યાં સુધીના પહેલાં જણાવેલા પ્રકારોથી આ સુધા ધીમે ધીમે પુષ્ટ થઈ, પણ પોતાને પોષણ આપનારો અને પોતાનો વિષય બની શકે એવો બાહ્ય સંબંધ તેને ન મળ્યો. તેથી તે મેળવવાને માટે તે સુધા પોતે ગુણગાનરૂપે પ્રકટ થયા છતાં પણ તેને પોતાનો વિષય ન મળવાથી પોતાના પ્રાકટ્ય પહેલાં અંદર સાક્ષાત્ પ્રિય ભગવાનના પ્રાકટ્યને લીધે પોતાના અને ગોપીજનોના શ્રોત્ર દ્વારા ફરીથી અંદર જ તે સુધા દાખલ થઈ, અને ત્યાં પોતાના પોષક વિષયને પ્રાપ્ત કરીને સારી રીતે સ્થિર થઈ.) ૨.

શબ્દાર્થયોર્મુખ્યતાત્ર યુગ્મા શ્લોકાસ્તતોડત્ર હિ ।

સર્વેષુ ચૈવ માસેષુ યત્ કરોત્યુચ્યતે હિ તત્ ॥કા.૩॥

અતોડત્ર માસયુગ્મા હિ પ્રક્રમઃ ફલમેવ ચ ।

આદ્યન્તે ચાપરં યુગ્મં ત્રયોદશ ભવન્તિ તત્ ॥કા.૪॥

આ અધ્યાયમાં (નાદાત્મક) શબ્દ અને (નાદમાં વર્ણવેલા ભગવાનરૂપી) અર્થ એ બે મુખ્ય છે એ જણાવવાને માટે અહિં શ્લોકોનાં જોડકાં આપવામાં આવેલાં છે. ભગવાન્ વર્ષની અંદર બધા મહિનાઓમાં જે લીલા કરે છે તેનું અહિં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. તેથી આ અધ્યાયમાં બાર માસની સંખ્યાવાળાં શ્લોકનાં બાર યુગલો આપવામાં આવ્યાં છે. પહેલા શ્લોકમાં ગાનનો આરંભ છે અને છેલ્લા શ્લોકમાં ફલ છે. આરંભમાં અને અંતમાં મળીને શ્લોકોનું એક વધારાનું યુગલ થાય છે. આ પ્રમાણે આ અધ્યાયમાં એકંદરે તેર યુગલ છે.

(પહેલાં ગોપીજનોએ ભગવાનના વેણુનો ફક્ત નાદ અનુભવ્યો હતો, તેથી નાદની મુખ્યતા હોવાને લીધે તે ગોપીજનોએ વેણુગીતમાં ગાયું કે 'અક્ષણ્વતાં ફલમિદમ્' ઈત્યાદિ. હમણાં તો ગોપીજનોને નાદના ઉપરાંત ભગવાનના સ્વરૂપનો પણ અનુભવ થયો છે, તેથી નાદ અને સ્વરૂપ એ બંનેય મહારસરૂપ છે એ જણાવવાને માટે બબે શ્લોકોથી તે અનુભવનું વર્ણન કરવામાં આવે છે; અને આ નાદ અને સ્વરૂપ-શબ્દ અને અર્થ-એ બંનેય એકરૂપ છે એ જણાવવાને માટે બંને શ્લોકોની એકવાક્યતા છે. ભગવાન્ વર્ષે વર્ષે જે લીલા કરે છે તે બધી લીલાનું ગોપીજનો ક્રમે ક્રમે આ અધ્યાયમાં ગાન કરે છે. આ અધ્યાયમાં ભગવાનની જેટલી લીલા વર્ણવવામાં આવેલી છે તેટલી જ ભગવાનની લીલા નથી. એ જણાવવાને માટે, આખા વર્ષના બાર માસ હોવાથી, શ્લોકમાં બાર યુગલો આપવામાં આવ્યાં છે. આરંભમાં અને અંતમાં એક એક શ્લોક છે, અને તે મળીને એક વધારાનું શ્લોકનું યુગલ થાય છે. તેથી જણાય છે કે અધિક માસમાં પણ ભગવાન્ જે લીલા કરે છે તેનું

પણ ગાન ગોપીજનો કરે છે. આખા વર્ષના બાર માસ અને એક અધિક માસ એમ તેર માસને અનુસરીને આ અધ્યાયમાં શ્લોકનાં તેર યુગલો આપવામાં આવેલાં છે. તેરમા યુગલમાં જે વિષયનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે ‘પ્રક્રમઃ ફલમેવ ચ’. પહેલા શ્લોકમાં ગાનનો પ્રક્રમ-આરંભ-છે, અને છેલ્લા શ્લોકમાં ‘તશ્ચિત્તાઃ તન્મનસ્કાઃ’ એ પ્રમાણે ગાનનું ફલ છે.) ૩-૪.

આ પ્રમાણે ભગવાનની સાથે રાત્રીએ ક્રીડાનું વર્ણન કરીને, દિવસે ગોપીજનોની સંસારની પ્રવૃત્તિ થશે એ પ્રમાણે શંકા કરીને, દિવસે ભગવાનના ગુણોનું વર્ણન કરવામાં તત્પર થયાં એમ કહેવાને, ભગવાનના ગુણોનું વર્ણન આવશ્યક છે એ જણાવવાને માટે આરંભમાં દુઃખ અને અંતમાં સુખ છે એમ નિરૂપણ કરતાં શુકદેવજી ‘ગોપ્યઃ’ એ શ્લોકમાં પ્રથમ કહે છે કે પ્રથમ પ્રવૃત્તિમાં પણ-ગાનના આરંભમાં પણ-ગોપિકાઓને દિવસે પરમ દુઃખ થયું. (ગાનના આરંભમાં પણ જ્યારે ગોપીજનોને દુઃખ થયું ત્યારે ગાન ન કરે તો કેટલું દુઃખ થાય? આ ભાવ દર્શાવવાને માટે શ્રીસુબોધિનીજીમાં ‘અપિ’ શબ્દ મૂકવામાં આવેલો છે.)

॥શ્રીશુક ઉવાચ॥

ગોપ્યઃ કૃષ્ણે વનં યાતે તમનુદ્રુતચેતસઃ ।

કૃષ્ણલીલાઃ પ્રગાયન્ત્યો નિન્યુર્દુઃખેન વાસરાન્ ॥૧॥

શુકદેવજી કહે છે કે :- કૃષ્ણ ભગવાન જ્યારે વનમાં પધારતા હતા ત્યારે તેમની પાછળ જ જેમનું ચિત્ત લીન થઈ ગએલું હતું એવાં ગોપીજનો કૃષ્ણની લીલા ગાતાં દુઃખથી દિવસો ગાળતાં હતાં. ૧.

શ્લોકમાં ‘ગોપ્યઃ’ એટલું જ પદ હોવાથી પહેલાં રાસમંડલનાં ગોપીજનોનું જ અહિં ગ્રહણ કરવાનું છે. (એકત્રીસમા અધ્યાયના વીસમા શ્લોકમાં જે પ્રમાણે ‘ગોપ્રજયોષિતામ્’ કહીને ઉતરતી કોટિનાં ગોપીજનોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે પ્રમાણે આ શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું નથી, પણ ફક્ત ‘ગોપ્યઃ’ એ પ્રમાણે જ કહેવામાં આવ્યું છે. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે આ બત્રીસમા અધ્યાયનાં ગોપીજનો રાસમંડલનાં અધિકારી ગોપીજનો જ છે, એકત્રીસમા અધ્યાયનાં ગોપીજનો નથી.)

સદાનંદ-કૃષ્ણ-વનમાં ગયા ત્યારે ગોપીજનોનું ચિત્ત તેમની પાછળ જ દોડ્યું. અર્થાત્ ગોપીજનોનું ચિત્ત ભગવાનથી અન્ય વસ્તુનું ગ્રહણ કરવાને માટે અશક્ત બન્યું. શ્લોકમાં ‘દ્રુત’ શબ્દનો જે પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે, તે ઉપરથી જણાય છે કે ચિત્તનો (ભગવાનમાં) વિલય થયો. પછીથી તે ચિત્તે ચારે બાજુ પ્રસરી

અને સૂક્ષ્મભાવને પ્રાપ્ત કરીને કૃષ્ણાની લીલા ગ્રહણ કરી. (ચિત્ત ઓગળ્યું અને તેથી તેના અવયવો છૂટા પડ્યા. આનંદમય પ્રભુ બધામાં રહેલા હોવાથી તેમના અવયવો વિરલ-જરા જરા છૂટા-છે; તેથી આવા પ્રકારના પ્રભુનું ગ્રહણ કરવાને માટે તે જ પ્રકારનું-જેના અવયવો વિરલ છે એવું-ચિત્ત યોગ્ય છે એમ ભાવ છે.) તેથી ગોપીજનો કૃષ્ણાની લીલાઓ ઊંચેથી ગાવા લાગ્યાં. જેમ ભગવાનનું સ્વરૂપ સદાનંદરૂપ છે, તેમ તેમની લીલા પણ સદાનંદરૂપ છે; તેથી લીલા સ્વરૂપાત્મક જ છે એ જણાવવાને માટે શુકદેવજીએ ‘કૃષ્ણલીલા:’ એ પદમાં ફરીથી ભગવાનનું નામ વાપર્યું છે; આ પ્રમાણે જો પ્રયોજન ન હોત તો શુકદેવજી ‘કૃષ્ણલીલા:’ ને બદલે ‘તદ્લીલા:’ એ પ્રમાણે કહેત; અને જો શુકદેવજીએ ‘તદ્લીલા:’ એમ કહ્યું હોત તો લીલા ભગવાનના સંબંધવાળી છે એટલો જ અર્થ પ્રાપ્ત થાત, પણ લીલા ભગવત્સ્વરૂપ છે એ અર્થ પ્રાપ્ત થાત નહિ. અને લીલા ભગવત્સ્વરૂપ છે એ વાત તો અવશ્ય કહેવી જોઈએ.

ભગવાનના સ્વરૂપથી ગોપીજનોને જ્યારે વિયોગ થાય ત્યારે ભગવાન વિના બીજો કોઈ પણ પદાર્થ ગોપીજનોનું જીવન ટકાવી શકે નહિ, કારણ કે તે બધા પદાર્થો ભગવાનથી ઉતરતા છે; તેથી ગોપીજનોએ મનના ઘણા દુઃખથી ગમે તેમ કરીને દિવસો ગાળ્યા. પણ જ્યારે ગોપીજનોનું ચિત્ત ભગવાનના જુદાં જુદાં ચરિત્રોમાં સારી રીતે લીન થઈને એકભાવ પ્રાપ્ત કરશે ત્યારે તેમનો-ગોપીજનોનો-મનોરથ પૂર્ણ થશે. (ભગવાનનો સંબંધ કરી આપનારા ભાવને અહિં મનોરથ કહેવામાં આવ્યો છે. આ ભાવ પૂર્ણ થશે એટલે ભગવાનની સાથેનું આંતર રમણ સિદ્ધ થશે; અર્થાત્ ગુણગાનનું પહેલાં જણાવેલું પ્રયોજન-ભાવની સ્થિરતા-થશે.) હમણાં તો બધી સામગ્રી છિન્નભિન્ન થઈ ગઈ છે, અંદર જ રહેલી છે.) શ્લોકમાં જે ‘વાસર’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે રાત્રીને માટે ગોપીજનો ગમે તેમ કરીને (દિવસે) પોતાના પ્રાણ ધારણ કરી રાખે છે. ૧.

સર્વોત્તમા હરેલીલા વેણુનાદપુર:સરા ।

હેતુ: સર્વત્ર વાચ્યેઽર્થે પ્રથમેષુ નિરૂપ્યતે ॥કા. ૧॥

(ગોપીજનો શ્લોકોનાં જે યુગલો ગાય છે તેનો સાર આપતાં શ્રીમહાપ્રભુજી નીચે પ્રમાણે કારિકાઓમાં કરે છે.) ભગવાનની વેણુનાદપૂર્વક સર્વોત્તમ લીલા દરેક યુગલના બીજા શ્લોકમાં વર્ણવેલા અર્થનું-અપ્સરાઓ મૂર્છિત થઈ ગઈ ઈત્યાદિ અર્થનું કારણ છે, અને તેનું-લીલાનું વર્ણન દરેક યુગલના પહેલા શ્લોકમાં કરવામાં આવે છે. ૧.

દેવશ્ચિયસ્તથા ગાવ: સરિત: પાદપા લતા: ।

પક્ષિણશ્ચ તથા મેઘા બ્રહ્માદ્યા ગોપિકાસ્તથા ॥કા.૨॥

હરિણ્યોદેવગન્ધર્વા દ્વિધા ચ ભગવાન્ હરિઃ ।

ઉત્તરેષુ નિરૂપ્યન્તે રસજ્ઞા વેણુવાદને ॥કા.૩॥

અપ્સરાઓ, ગાયો, નદીઓ, વૃક્ષો અને લતાઓ, પક્ષીઓ, મેઘો, બ્રહ્મા વિગેરે દેવો, ગોપિકાઓ, હરિણીઓ, દેવગંધર્વો અને બે પ્રકારે-બે યુગલમાં- વણુવિલા ભગવાન્ હરિ, આ બધા વેણુનાદમાં રહેલા રસને જાણનારા છે, અને તેમનું વર્ણન દરેક યુગલના બીજા શ્લોકમાં કરવામાં આવે છે. ૨-૩.

જ્ઞાનાતિ ભગવાનેવ જ્ઞાનાત્યેવ હરિઃ સ્વયમ્ ।

અતોઽન્તે ભગવાનુક્તો વારદ્રયમનન્યધીઃ ॥કા.૪॥

(છેલ્લાં બે યુગલોનું તાત્પર્ય દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) વેણુનાદના રસને ભગવાન જ જાણે છે, અને હરિ પોતે પણ તે જાણે છે જ; તેથી આ અધ્યાયને અંતે અનન્યભક્તોને જેમનું જ્ઞાન થાય છે એવા ભગવાનનું બે વાર વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. (ભગવત્ત્વ જણાવવાને માટે કારિકામાં ‘ભગવાન્’ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે, અને તાપ હરણ કરે છે એ ભાવ દર્શાવવાને માટે ‘હરિઃ’ પદ મૂકવામાં આવેલું છે. ભગવાન જ આ રસ જાણે છે, તેથી દિવસનો તાપ દૂર કરીને રસનું દાન ભગવાન જ કરે છે, ચંદ્ર વિગેરે કરી શકતા નથી. તેથી જ સર્વ ભક્તોને સર્વ આશીર્વાદ આપવાની ઈચ્છાથી ભગવાન્ પોતે જ પધારે છે એ પ્રમાણે ત્રેવીસમા શ્લોકનો અર્થ સિદ્ધ થાય છે. આ કારિકામાં જે ‘એવ’ પદ આવેલું છે તે એમ દર્શાવે છે કે ચંદ્ર વિગેરે આ રસને જાણતા નથી. અરે! ભગવાન્ તો બાલક છે, તેથી જ્ઞાનપૂર્વક આવી અસાધારણ લીલા તે કેવી રીતે કરી શકશે? આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો તેનું નિરાકરણ ‘યદુપતિઃ’ ઈત્યાદિ પચીસમા શ્લોકમાં કરવામાં આવેલું છે. તેથી સિદ્ધ થાય છે કે ભગવાન્ આ રસને જાણે છે જ. અહિં ‘એવ’ પદ એમ દર્શાવે છે કે ભગવાન્ બાલક હોવાથી તેમનામાં આવું જ્ઞાન સંભવિત નથી એ અભિપ્રાય ખોટો છે. આ પ્રમાણે બંનેય પ્રકારનો નિયમ સિદ્ધ થાય એટલા માટે ત્રેવીસમા અને પચીસમા શ્લોકમાં એમ બે વાર ભગવાનનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ‘ભગવાન્’ પદ ભગવત્ત્વ દર્શાવે છે, અને ‘હરિ’ પદ તાપ દૂર કરવાનો ભાવ દર્શાવે છે.) ૪.

અનુભાવસ્તુ નાદસ્ય સ્ત્રીષુ પૂર્વમુદીર્યતે ।

ત્રિવિધાસુ તતઃ પુંસુ બ્રહ્મા ગોપી તથા મૃગી ॥કા.૫॥

ત્રયોઽત્ર ત્રિવિધાઃ પ્રોક્તાઃ પ્રકીર્ણાઃ સકલાઃ સુરાઃ ।

સર્વ એવાનભિજ્ઞા હિ વસ્તુસામર્થ્યસંયુતાઃ ॥કા.૬॥

એવં વેણુર્દ્વાદશઘાફલતીતિ નિરૂપિતઃ ॥૬૫॥

નાદનો પ્રભાવ તો પ્રથમ ત્રણ પ્રકારની સ્ત્રીઓમાં વર્ણવવામાં આવે છે, પછી વૃક્ષ, પક્ષી અને મેઘ એ ત્રણ પ્રકારના પુરુષોમાં વર્ણવવામાં આવે છે; (લતાઓનો સમાવેશ વૃક્ષોમાં થાય છે તેથી તેમની ગણતરી પુરુષોમાં કરવામાં આવેલી છે.) બ્રહ્મા, ગોપી અને હરિણીઓ એ ત્રણનું પણ વર્ણન કરવામાં આવે છે. અહિં આ ત્રણ સાત્ત્વિક, રાજસ અને તામસ એ ત્રણ પ્રકારનાં વર્ણવેલાં છે. (દેવની સ્ત્રીઓ વિગેરે ત્રણ રાજસ છે; વૃક્ષો, લતાઓ વિગેરે સાત્ત્વિક છે; અને બ્રહ્મા, ગોપી અને હરિણીઓ તામસ છે; આ પ્રમાણે સુબોધિનીજીમાં વિવેચન કરવામાં આવેલું છે.) (એકવીસમા શ્લોકમાં) સર્વ દેવોનું-નાના નાના દેવોના સમૂહનું-એક સાથે વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. આ બધાય ખરેખર રસના જ્ઞાન વિનાના છે, છતાં પણ વસ્તુના સામર્થ્યથી-ફલથી-જોડાય છે. આ પ્રમાણે વેણુ બાર પ્રકારે ફલે છે એમ તેનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. (દશ યુગલમાં જણાવેલાં દશય પહેલાં નાદરસ જાણતાં ન હતાં; પછી તેઓએ નાદનું શ્રવણ કર્યું, અને તેટલાથી જ મૂર્છા કરાવવી વિગેરે નાદનું જે સામર્થ્ય તેનાથી તેઓને ફલ મળ્યું; અર્થાત્ તેઓ નાદનો રસ જાણવા લાગ્યાં. આને જ નાદનો પ્રભાવ કહેવામાં આવે છે. નાદના રસનું જ્ઞાન થવામાં અહિં બીજું કંઈ પણ કારણ નથી, તેથી આ નાદનો જ પ્રભાવ છે એમ જણાવવા કારિકામાં 'હિ' પદ મૂકવામાં આવેલું છે. પહેલાં આ બાર રસને જાણનારાં છે એમ કહેવામાં આવ્યું હતું. તેમાં દશ પહેલાં રસથી અજાણ્યાં હતાં, અને પછી નાદના પ્રભાવથી રસને કાંઈક કાંઈક જાણવા લાગ્યા. એ પ્રકારવાળા ભગવાન્ તો સર્વ રીતે રસને જાણનારા છે, તેથી તે દશમાં અને ભગવાનમાં ભેદ રહેલો છે. પહેલા દશ યુગલમાં મૂર્છા કરાવીને વિગેરે પ્રકારથી, અગીઆરમા યુગલમાં તાપ દૂર કરવાના પ્રકારથી અને બારમા યુગલમાં અસાધારણ લીલાના પ્રકારથી-આ પ્રમાણે બાર પ્રકારે વેણુ ફલે છે.) ૫-૬૫.

તેમાં-બાર રસ જાણનારાઓમાં-સ્ત્રીઓ મુખ્ય છે, અને સ્ત્રીઓમાં દેવોની સ્ત્રીઓ મુખ્ય છે, તેથી દેવોની સ્ત્રીઓમાં વેણુના નાદનો પ્રભાવ જણાવવાને માટે, જે પ્રકારે વેણુનો નાદ ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રકાર 'વામબાહુકૃતવામકપોલઃ' એ યુગલમાં શુકદેવજી વર્ણવે છે:

વામબાહુકૃતવામકપોલો વલ્ગિતભ્રુરધરાર્પિતવેણુમ્ ।

કોમલાડ્ગુલિભિરાશ્રિતમાર્ગ ગોપ્ય ઈરયતિ યત્ર મુકુન્દઃ ॥૨॥

વ્યોમયાનવનિતાઃ સહ સિદ્ધૈર્વિસ્મિતાસ્તદ્વપધાર્ય સલજ્જાઃ ।

કામમાર્ગણસમર્પિતચિત્તાઃ ક્ષમલં યયુરપસ્મૃતનીવ્યઃ ॥૩॥

હે ગોપીઓ! ડાબા બાહુ ઉપર ડાબા ગાલને ટેકવી રાખીને ચંચલ ભ્રમર વાળા મુકુંદ ભગવાન્ જ્યારે કોમલ અંગુલીઓથી જેનાં છિદ્રો પૂરાએલાં છે અને અધર ઉપર જેને રાખવામાં આવેલો છે એવા વેણુને વગાડે છે, ત્યારે સિદ્ધોની સાથે જતી વિમાનમાં જનારા દેવોની સ્ત્રીઓ વિરમ્ય પામે છે, તે વેણુનાદને ઓળખીને લજ્જા પામે છે અને કામના બાણને ચિત્ત સમર્પણ કરી, ઘાઘરાને વિસરી મૂર્છા પામે છે. ૨-૩.

જ્યારે મુકુંદ ભગવાન્ અધર ઉપર રાખેલા વેણુને વગાડે છે ત્યારે, અર્થાત્ તે ક્ષણે, વિમાનમાં જનારાઓની સ્ત્રીઓ મૂર્છા પામે છે; આ પ્રમાણે આ યુગલમાં પદોનો સંબંધ છે. વેણુનો નાદ પાંચ પ્રકારે થાય છે:- (૧-૨) મુખની ડાબી બાજુએ અને જમણી બાજુએ, એમ બે પ્રકારે વેણુને ધારણ કરીને; (૩) સરખી રીતે વચમાંથી ધારણ કરીને, (૪) ઉપર ધારણ કરીને, અને (૫) નીચે ધારણ કરીને. તેમાં ડાબી બાજુએ ધારણ કરેલો વેણુ સ્ત્રીઓના કામને જાગૃત કરે છે. જમણી બાજુએ ધારણ કરેલો વેણુ સ્ત્રીઓ અને પુરુષોના કામને જાગૃત કરે છે. ઉપર ધારણ કરેલો વેણુ દેવોના કામને જાગૃત કરે છે. નીચે ધારણ કરેલો વેણુ હલકા પ્રાણીઓના કામને જાગૃત કરે છે. અને સરખી રીતે ધારણ કરેલો વેણુ સર્વ પ્રાણીઓના અને જડ પદાર્થોના કામને જાગૃત કરે છે. તેમાં ડાબી બાજુએ જ ધારણ કરેલો વેણુ દેવોની સ્ત્રીઓના કામને જાગૃત કરે છે, તેથી અહિં વર્ણન કરવામાં આવે છે.

(મનુષ્યભાવનું ઉલ્લંઘન કર્યા વિના ભગવાન્ લીલા કરે છે, તેથી હવે આ પ્રમાણે કહેવામાં આવે છે.) મનુષ્યના ભાવ કરતાં દેવનો ભાવ ઊંચો છે, તેથી મનુષ્યે વગાડેલા વેણુના નાદથી દેવોની સ્ત્રીઓને ભ્રમ થશે નહિ એવી શંકા થતાં તેનું સમાધાન કરવામાં આવે છે કે ‘તદ્ભુવિજૃમ્ભઃ પરમેષ્ઠિધિષ્ણ્યમ્’-તેમની ભ્રમરનો વિલાસ બ્રહ્માનું સ્થાન છે-(ભાગ. ૨।૧।૩૦) એ વાક્યને આધારે ભગવાને ભ્રમરના વિલાસને વેણુના નાદ સાથે જોડ્યો. આ જ બાબત શુકદેવજી ‘વામબાહુ’ ઈત્યાદિમાં કહે છે. ‘વામબાહુકૃતવામકપોલઃ’ એટલે ડાબા બાહુ ઉપર ટેકવેલો ડાબો ગાલ જેમણે એવા ભગવાન્. ‘વલ્ગિતભ્રુઃ’ એટલે નચાવેલી છે ભ્રમર જેમની એવા ભગવાન્. અહિં જે ભ્રમરનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે જમણી ભ્રમર જાણવી, કારણ કે તે જ પ્રમાણે અભિનય કરવામાં આવ્યો છે. ‘વલ્ગિતા’ એટલે ઊંચે ચઢાવેલી. ‘અધર’ એટલે પહેલાં જે લોભરૂપી અધરનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે તે. અધર ઉપર જો વેણુ રાખવામાં આવે તો તે પરમાનંદનું દાન કરતો નથી, પણ કામને જ જાગૃત કરે છે, કારણ કે અધર ઉપર ધારણ કરેલા વેણુના નાદને સાંભળીને પણ

દેવોની સ્ત્રીઓ વિરહથી ઉત્પન્ન થએલું દુઃખ જ પ્રાપ્ત કરે છે, પણ પરમાનંદ પ્રાપ્ત કરતી નથી. (વેણુ વગાડવા માટે તેને અઘર ઉપર રાખવાની જરૂર હોય છે. વેણુને લોભરૂપી અઘરનો સંબંધ થવાથી વેણુનાદથી દુઃખ જ પ્રાપ્ત થાય છે, પરમાનંદ પ્રાપ્ત થતો નથી એમ તાત્પર્ય છે.) અઘર ઉપર વેણુ રાખીને પણ જો ક્રિયાશક્તિ પુષ્ટ હોય, અર્થાત્ વેણુ જોરથી વગાડવામાં આવે, તો લોભરૂપી અઘરના સંબંધવાળા વેણુ પાસેથી પણ ફલની પ્રાપ્તિ થાય. (વેણુનો નાદ મોટો થતાં વધારે જ્ઞાન થાય અને તેથી અભિલાષા પૂર્ણ થાય એમ તાત્પર્ય છે.) પરંતુ તેમ પણ નથી એમ ‘કોમલાડ્ગુ-લિભિઃ’ ઈત્યાદિ શબ્દોમાં શુકદેવજી કહે છે. કોમલ અંગુલિઓથી પૂરાએલાં છે છિદ્રો જેનાં એવો વેણુ. આ પ્રમાણે કરવાનું કારણ એ કે આરંભમાં ધીરેથી જ વેણુનો નાદ કરવો યોગ્ય છે. ‘માર્ગ’ એટલે વેણુનાં છિદ્રો. આ છિદ્રોને જોરથી દબાવવાથી મોટો નાદ થાય, મધ્યમ રીતે દબાવવાથી મધ્યમ નાદ થાય અને ધીરેથી દબાવવાથી મંદ નાદ થાય. (વેણુનાં છિદ્રો કોમલ અંગુલિઓથી પૂરાએલાં હોવાથી વેણુનો નાદ ઊંચો ન હતો.) આ વિષય સર્વના અનુભવનો છે એમ દર્શાવવાને માટે ‘ગોપ્યઃ’ એ પ્રમાણે સંબોધન કરવામાં આવ્યું છે. અહિં ‘ઈરણ’ એટલે વેણુ વગાડવો તે. વેણુ વગાડવાનું પ્રયોજન દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘મુકુન્દઃ’. જો વેણુના નાદથી જગત્ શુદ્ધ થશે તો હું મોક્ષ આપીશ એ હેતુથી ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે. (અહિં જે વસ્તુ કહેવાની છે તે ગુપ્ત રાખવા યોગ્ય હોવાથી પરોક્ષ રીતે વાત કહેવામાં આવી છે. જગતની શુદ્ધિ એટલે ભગવદ્ભાવ સિવાયના બીજા ભાવથી મુક્ત રહેવું તે. મોક્ષ એટલે ભજનાનંદ. અર્થાત્ જો જગત્ ભગવદ્ભાવવાળું અને તે સિવાયના ભાવથી મુક્ત થશે તો હું તેને ભજનાનંદનો અનુભવ કરાવીશ.)

આ પ્રમાણે જો કે ભગવાન્ હિત કરવાને માટે વેણુ વગાડે છે, તો પણ જેઓ મોક્ષના અધિકારીઓ નથી તેઓને ભગવાનના વેણુનાદથી કામ જ ઉત્પન્ન થયો એમ ‘વ્યોમયાનવનિતાઃ’ એ શ્લોકમાં ગોપીજન કહે છે. આકાશમાં વાહનો છે જેમનાં, અર્થાત્ વિમાનમાં જનારા બધા દેવોનાં કુલો; તેમની સ્ત્રીઓ. આ સ્ત્રીઓ અધિકારવાળીઓ હોવાથી, સ્ત્રીઓ હોવાથી અને ભોગ કરવા યોગ્ય હોવાથી મુક્તિની અધિકારી નથી. સિદ્ધો ભગવાન્ સિવાયની અણિમા વિગેરે બધીય સિદ્ધિઓ આપવાને સમર્થ છે અને પોતે ગાનમાં ઘણા નિપુણ છે. (સિદ્ધો જ્યારે બધીય સિદ્ધિઓ આપી શકે એમ છે તો પછી તે બધી સિદ્ધિઓનો તે પોતે અનુભવ કરી શકે એમાં શું આશ્ચર્ય?) આવા સિદ્ધો સાથે હોવા છતાં પણ તે દેવની સ્ત્રીઓ



આરંભમાં વેણુનો નાદ સાંભળીને વિસ્મય પામી. પછી જ્યારે તેમનો કામ થોડો વધ્યો ત્યારે તેમણે વેણુનાદને ઓળખ્યો અને ‘અમારા પતિઓ જાણશે’ એવા વિચારથી તેઓ લજ્જા પામી. પછી જ્યારે કામ ઘણો વધ્યો, અને કામથી પોતાનું મરણ થશે એવી શંકા થતાં પોતાનું રક્ષણ કરવા માટે, જેમ બીકણ માણસો મારી નાખે તે પહેલાં પોતે જ પોતાની જાતનું પોતાના મારનારને સમર્પણ કરે છે તેમ, આ સ્ત્રીઓએ પોતાનું ચિત્ત કામનાં બાણોને સમર્પણ કરી દીધું. (ભગવાન્ કામરૂપ છે અને તેમની અંગુલીઓ બાણરૂપ છે. આ નાદ કેવી રીતે થાય છે એ શોધવા આ સ્ત્રીઓએ ભગવાનની અંગુલીઓમાં ચિત્ત પરોવ્યું, અને તેથી તેમને કાંઈક સ્વસ્થતા મળી.) પછીથી કામથી પીડાએલી આ સ્ત્રીઓ મૂર્છા પામી. આ મૂર્છા બહુ જ વિસ્મરણ કરાવનારી હતી એમ જણાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘અપસ્મૃતનીવ્યઃ’, અર્થાત્ કેટલે ઉપર રહેલું વસ્ત્ર વિસ્મરી ગઈ છે એવી સ્ત્રીઓ. આ પ્રમાણે વેણુનો નાદ કામને ઘણો જ જાગૃત કરનારો છે, તેથી આપણે-ગોપીઓ-મૂર્છા વિગેરે પામીએ એમાં શું આશ્ચર્ય? આ પ્રમાણે આ શ્લોકનું તાત્પર્ય છે. ૨-૩.

ગાયોને પણ વેણુના નાદથી તે પ્રમાણે થયું એમ જણાવવાને માટે ગોપીજન ‘હન્ત ચિત્રમ્’ એ યુગલમાં વેણુનાદની ઉત્પત્તિનું બીજે પ્રકારે વર્ણન કરે છે :

હન્ત ચિત્રમબલાઃ શુણુતેદં હારહાસ ઉરસિ સ્થિરવિદ્યુત્ ।

નન્દસૂનુરથમાર્તજનાનાં નર્મદો યર્હિ ક્ષ્જિતવેણુઃ ॥૪॥

વૃન્દશો પ્રજવૃષા મૃગગાવો વેણુવાદ્યહતયેતસ આરાત્ ।

દન્તદષ્ટકવલા ધૃતકર્ણાં નિદ્રિતા લિખિતચિત્રમિવાસન્ ॥૫॥

હે અબલાઓ! આ આશ્ચર્ય શ્રવણ કરો. જેમનું હાસ્ય હારના જેવું છે, જેમના વક્ત્રઃસ્થલ ઉપર વીજળી સ્થિર છે, જે દુઃખી પુરુષોને આનંદ આપનારા છે, એવા આ નંદના પુત્ર જ્યારે વેણુ વગાડે છે ત્યારે જથાબંધ પ્રજના આખલાઓ, જંગલી પશુઓ અને ગાયોનાં ચિત્ત દૂરથી આવતા વેણુનાદથી હરાઈ જાય છે, અને તેઓના દાંતથી કરડેલા કોળીઆઓ એમને એમ રહી જાય છે, તેઓ કાન માંડી નિદ્રામાં પડી જાય છે અને જાણે ચિત્રમાં આલેખેલાં હોય એવાં થઈ જાય છે. ૪-૫.

હે અબલાઓ! આ આશ્ચર્ય સાંભળો. જ્યારે નંદના પુત્ર વેણુ વગાડે છે ત્યારે આખલાઓના અને ગાયોના કોળીઆઓ દાંતથી કરડેલા રહે છે અને તેઓ નિદ્રામાં પડી જાય છે એ પ્રમાણે શ્લોકમાં પદોનો સંબંધ છે. પશુઓમાં એક જ જાતના પ્રાણીમાં કામ થાય છે, પોતાનાથી ઉત્તમમાં અથવા નીચમાં તેમનો કામ થતો નથી. (મનુષ્યો પણ પશુ છે એમ શ્રુતિમાં પ્રસિદ્ધ છે. દેવોની તો મનુષ્યસ્ત્રીઓમાં

પણ પ્રવૃત્તિ થાય છે એમ તાત્પર્ય છે.) ખચ્ચરમાં તો જુદી જ વ્યવસ્થા છે. (સૃષ્ટિના આરંભકાલથી જ આ પ્રમાણે પ્રસિદ્ધ છે; અર્થાત્ ઘોડાં અને ગધેડામાંથી ખચ્ચરની ઉત્પત્તિ થાય છે એ વાત પ્રસિદ્ધ છે. તેથી તેમને એક જાતનાં જ ગણવાં જોઈએ. આ ઉપરથી સિદ્ધ થાય છે કે તેમનામાં ભગવાનના વિષે કામ સંભવી શકતો નથી.) ઊંચી જાતના પ્રાણીને હલકા પ્રાણીઓ સાથે જો રમણ માટે સંબંધ થાય તો તેથી પણ રસનો આભાસ થાય છે, તેથી સંભોગરૂપ કામને દૂર રાખીને પશુઓને ઘણા જરૂરી ખોરાકને વેણુનાદથી અટકાવે છે. (આ ઉપરથી જણાય છે કે ભગવાનમાં તેમના વિષે કામ હોઈ શકે નહિ. સંભોગરૂપ કામ એમનામાં છે જ નહિ, તેથી તેનો બોધ ન કરતાં વેણુનો નાદ પશુઓને ખોરાક લેતાં અટકાવે છે. જેમ પહેલાં ત્રીજા શ્લોકમાં સંભોગરસનો અનુભવ ન થયો તેમ અહિં ભક્ષણરસનો અનુભવ ન થયો એમ તાત્પર્ય છે.) પહેલાં બીજા શ્લોકમાં આપેલું વર્ણન-ડાબા હાથ ઉપર ભગવાનનો ડાબો ગાલ રાખવામાં આવેલો છે એ વર્ણન-અહિં પણ ચાલુ છે. તેના જ પેટાભેદનું વર્ણન કરવાનું છે.

હન્ત-અરે-પદ ખેદ જણાવવા માટે વાપરવામાં આવ્યું છે. જ્યાં ગાયોની પણ સર્વ ક્રિયાઓ અટકી પડે છે ત્યાં આપણી-ગોપીજનોની-ક્રિયાઓ અટકતી નથી તે આશ્ચર્ય છે. (આપણી ક્રિયાશક્તિ જાગૃત જ થાય છે તેથી આપણને-ગોપીજનોને-ખેદ થાય છે એમ તાત્પર્ય છે.) પહેલાં, બીજા અને ત્રીજા શ્લોકમાં વર્ણવેલા આશ્ચર્યથી પણ અહિં વર્ણવેલું આશ્ચર્ય ઉત્તમ પ્રકારનું છે. કારણ કે દેવની સ્ત્રીઓ પુરુષોત્તમની કામનાવાળી હોય જ, પરંતુ આ-પશુઓની આસક્તિ-તો અતિ આશ્ચર્ય છે. પોતે વનમાં જઈને એવાં પશુઓનાં દર્શન કરી શકતાં નથી તેથી ‘અબલા:’- હે અબલાઓ-એ પ્રમાણે સંબોધન કરવામાં આવેલું છે. આ-જે કહું છું તે સાંભળો.

અહિં-આંતર રમણમાં-ગુણવાળી ગોપીઓ નવ પ્રકારની છે. ગુણાતીતના ત્રણ પ્રકાર છે; કર્મ, જ્ઞાન અને ભક્તિથી. શ્લોકોનાં યુગલ બોલનારા ગોપીઓની આ વ્યવસ્થા છે. (અહિં આ પ્રમાણે તાત્પર્ય છે. બાહ્ય રમણમાં સ્વરૂપ મુખ્ય છે, અને સ્વરૂપ છ ગુણવાળું છે; તેથી આ સ્વરૂપમાં જ ગોપીજનોની નિષ્ઠા હોવાથી તેઓ પણ છ ગુણવાળાં છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. પરંતુ અંદરના રમણમાં ભાવ મુખ્ય છે, અને સત્ત્વ વિગેરે દૃષ્ટાંતથી ભાવ નવ પ્રકારનો છે; તેથી ભાવમાં જ નિષ્ઠા રાખનારાં ગોપીજનો પણ નવ પ્રકારનાં છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે.)

પહેલાં ત્રણ ગોપીજનો રાજસી છે, રજોગુણના ભેદથી ભિન્ન ભિન્ન

પ્રકારનાં છે. આ ગોપીજન રાજસરાજસી-શુદ્ધ રાજસી-છે. (અર્થાત્ પહેલા યુગલની ગોપી રાજસસાત્વિકી, બીજા યુગલની ગોપી રાજસરાજસી, અને ત્રીજા યુગલની ગોપી રાજસતામસી છે. આ પ્રમાણે પહેલાં ત્રણ યુગલની ગોપી રાજસી છે.) પહેલાં વર્ણવેલું જેટલું જરૂરનું હોય તેટલું બધુંય હવે પછીના સર્વ યુગલોમાં છે એમ જાણવું.

પહેલાં ભગવાનનું જે સ્વરૂપ હું કહું છું તે સાંભળો. આ ગોપી ભગવાનનું ચાર પ્રકારે વર્ણન કરે છે: (૧) હારના જેવું જેમનું હાસ્ય છે, (૨) જેમના વક્ષઃસ્થલ ઉપર વીજળી છે, (૩) જે નંદના પુત્ર છે, અને (૪) જે બધાય દુઃખી પુરુષોને આનંદ આપનારા છે, (અર્થાત્ એકલા નંદને જ આનંદ આપનારા છે એમ નહિ પણ સર્વ દુઃખી જનોને આનંદ આપનારા છે.) (ભગવાન બધા દુઃખી પુરુષોને આનંદ આપે છે) તેનું કારણ દર્શાવતાં કહે છે કે ‘અયમ્’, આ (ભગવાનનું પ્રાકટ્ય જ સર્વને સુખ આપવામાં કારણભૂત છે.) જો આ પ્રમાણે ન હોત તો ભગવાન હમણાં આપણી સમક્ષ પ્રકટ ન થાત.

અથવા તો બીજા મૂર્ત્તમાં પ્રકટ થએલા ભગવાનને જોઈને આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં આવે ત્યારે દરેક મૂર્ત્તમાં યુગલો થાય છે, ગવાય છે. સવારની સંધ્યા અને સાંજની સંધ્યા એ બેની વચ્ચે બાર જ મૂર્ત્તો છે એમ સોમની ઉત્પત્તિમાં નિર્ણય કરવામાં આવ્યો છે. (જ્યાં સોમની ઉત્પત્તિનો નિર્ણય કરવામાં આવ્યો છે ત્યાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે અમાસને દિવસે સોમ દિવસના વખતમાં જુદે જુદે સ્થાને રહે છે. ‘ત્રણ મૂર્ત્ત સુધી સૂર્યમાં રહે છે, ત્રણ મૂર્ત્ત સુધી જલમાં રહે છે, ત્રણ મૂર્ત્ત સુધી ગાયોમાં રહે છે અને ત્રણ મૂર્ત્ત સુધી વનસ્પતિમાં રહે છે’ આ પ્રમાણે ત્યાં કહેવામાં આવ્યું છે. તેથી દિવસ બાર મૂર્ત્તનો છે; એટલે દરેક મૂર્ત્તમાં પ્રભુ જે જે લીલા કરે છે તે તે લીલાનું અહિં એક એક યુગલથી ગાન કરવામાં આવે છે, એમ ‘બાર’ની સંખ્યાથી જણાવવામાં આવે છે. ગોપીજનોના હૃદયમાં ભગવાન લીલાસહિત પ્રકટ થાય છે; તેથી પ્રિય, ભગવાન, જ્યારે જે લીલા કરે છે ત્યારે જ તે જ લીલા સ્વામિનીઓના હૃદયમાં સ્ફુરે છે. તેથી આ વિષયમાં કાંઈ પણ અઘટિત નથી.)

બીજાંઓનું હાસ્ય દોરડાની માફક એકસરખું હોય છે, પણ ભગવાનનું હાસ્ય મોતીના હારની માફક-જેમ રત્નોથી છૂટાં પહેલાં મોતીઓ હોય છે તેમ-દાંતોની કાંતિથી વિભક્ત હોય છે. (બીજાંઓના દાંતમાં પ્રભા હોતી નથી, તેથી તે દાંત હાસ્યમાં વિભાગ કરી શકતા નથી. ‘જેમ રત્નોથી છૂટાં પહેલાં મોતીઓ હોય’ એ

પ્રમાણે ભગવાનના દાંતના સંબંધમાં માણેકનું દષ્ટાંત કહેવામાં આવ્યું છે, તેથી ભગવાનના દાંતમાં પ્રભા હોવાથી તેઓ હાસ્યમાં વિભાગ કરે છે એમ તાત્પર્ય છે. વળી, જો હાસ્ય ફક્ત મોતીના હારની તુલ્ય હોય તો તેમાં વિચિત્રતા ન આવે. તેથી ‘જેમ રત્નોથી છૂટાં પહેલાં મોતીઓ હોય’ એ પ્રમાણે દષ્ટાંત આપવામાં આવેલું છે. નીચેના ઓઠની પ્રભાથી દાંતમાં રતાશ સ્વાભાવિક છે.) આ પ્રમાણે ભગવાન જગતને પ્રપંચમાં મોહ ઉત્પન્ન કરે છે એ વાત દઢ થઈ. (અહિં હાસ્યના વિભાગની સ્થિરતાથી સૂચવાએલા અર્થનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ભગવાન વિષેના સ્નેહથી સર્વ રીતે માયા વિગેરે દૂર થાય એ પ્રમાણબલ છે, અને એ માયાને સ્થિર કરવાથી તો એ પ્રમાણબલનું નિરાકરણ થાય છે. તેથી ભગવાનમાં સ્નેહ અને માયાનું કાર્ય-પ્રપંચમાં મોહ-એ બંને સાથે રાખવાથી, ભગવાનમાં જેમને સ્નેહ છે એવા પ્રજના જીવરૂપી જગતનો પણ ભગવાન પ્રપંચમાં મોહ ઉત્પન્ન કરે છે એમ તાત્પર્ય છે. આ પણ એક આશ્ચર્ય છે. ‘હન્ત’ એ ખેદદર્શક પદનો પ્રયોગ થએલો હોવાથી આ સૂચવેલા અર્થનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે જેમનો ભગવાનમાં સ્નેહ હોય છે તેઓનો જ્યારે ભગવાન વિના બીજા પદાર્થમાં પણ સ્નેહ જોવામાં આવે છે ત્યારે ભક્તોને અવશ્ય ખેદ થાય છે. જો આ પ્રમાણે ન હોય-ભક્તોને ભગવાન વિના બીજા પદાર્થમાં સ્નેહ ન હોય-તો ભગવાન વિષેના સ્નેહને લીધે તે ભક્તો સર્વ પદાર્થનો ત્યાગ કરે, એટલે તેમની સાથે ભગવાનની લોકમાં લીલા ન થાય. તેથી ભગવાન ભક્તોની વિષયરૂપ પ્રપંચમાં આસક્તિ કરાવે છે.)

સ્નેહની કલાઓથી માયા વિભક્ત થએલી છે એ શ્રુતાર્થાપત્તિ સર્વત્ર અર્થનું નિરૂપણ કરવામાં કારણ છે. જે જોવામાં આવે છે તેમાં કાંઈ પણ અઘટિત નથી; જે પ્રમાણે જોવામાં આવે છે તે જ પ્રમાણે સર્વ વ્યવસ્થા કરવામાં આવે છે, કારણ કે ‘જે જોવામાં આવે છે તેમાં કાંઈ અયોગ્ય નથી, નહિ તો વિરોધ આવે’ આ પ્રમાણે ન્યાય છે. આ પ્રમાણે-જે જોવામાં આવેલું છે તેનો વિરોધ કોઈ રીતે સ્વીકારવામાં આવતો નથી એ પ્રમાણે-લૌકિકમાં વ્યવસ્થા છે. તે પ્રમાણે વેદ માનનારાઓને શ્રુતિ પ્રમાણ છે. જેટલું કહેવાથી જ જેનું જ્ઞાન કરાવવાનું છે તે પદાર્થ જેટલા પ્રમાણથી સ્થિર થાય તેટલા જ પ્રમાણમાં તેને અનુકૂલ અર્થ આપવામાં આવે છે. આ પ્રમાણે સર્વત્ર વૈદિક વ્યવસ્થા છે. (લોકમાં આવા પ્રકારનું હાસ્ય સંભવતું નથી, તેથી આવું ભગવાનનું હાસ્ય સંભવતું નથી. આ પ્રમાણે જો કોઈને શંકા થાય તો તે શંકા દૂર કરવાને માટે શ્રુતાર્થાપત્તિથી સિદ્ધ કરવામાં આવે છે કે ભગવાનનું આવું હાસ્ય હોઈ શકે છે. આગળ પણ જ્યાં શ્રુતાર્થાપત્તિને પ્રમાણ તરીકે આપવામાં આવેલી છે ત્યાં પણ આ

પ્રમાણે જ અર્થ કરવો. 'હારના જેવું હાસ્ય' એ પદાર્થનું જ્ઞાન કરાવવાનું છે. તે પદાર્થ મોહ ઉત્પન્ન કરવા સુધીના તાત્પર્યથી સ્થિર થાય છે. આ પ્રમાણે જો પ્રયોજન ન હોત તો 'હારના જેવા હાસ્યવાળા' એ પદ કહેવામાં આવત નહિ.)

ફક્ત સંસારમાં પુત્ર વિગેરેમાં આસક્તિ હોય તેને જ પોતાની અંદર સ્થિર કરે છે એટલું જ નહિ, પણ ધન વિગેરેમાં આસક્તિ હોય તેને પણ પોતાનામાં સ્થિર કરે છે એમ 'સ્થિર વિદ્યુત્' એ પદ વડે કહે છે. સ્થિર છે વિજળી-લક્ષ્મી-જેમાં એ સ્થિરવિદ્યુત્ કહેવાય છે. (અલ્પ સમય રહેવાનો ગુણ વિજળી અને ધનમાં એક સરખો છે, તેથી વિદ્યુત્-વિજળી-શબ્દમાંથી ધનનો પણ અર્થ મળે છે. અથવા તો ભગવાનના વક્ત્રુસ્થલ ઉપર હારની પેઠે હાસ્યે સ્થિતિ કરેલી છે, તેથી વિભાગની સ્થિરતાથી પ્રપંચમાં જે આસક્તિ સૂચવી તેને પણ ભગવાન પોતાના સંબંધવાળી જ કરે છે. આથી પ્રપંચની અંદર પ્રપંચ વિષેનો જે મોહ છે તેને પોતાના સંબંધવાળો કરવો એ ગુણ ભગવાન પોતાની અંદર સ્થિર કરે છે એમ શ્રીસુબોધિનીજીનું તાત્પર્ય છે. ફક્ત પોતાના જ સંબંધવાળી આસક્તિ ઉત્પન્ન કરવાનો ગુણ જગતમાં બહુ જ અપ્રસિદ્ધ છે, તેથી આ બાબતમાં આશ્ચર્ય છે. આગળ પણ આ પ્રમાણે જ અર્થ સમજવો. આ પ્રમાણે અર્થ કરતી વખતે 'હન્ત'-'અરે-એ પદ હર્ષવાચક છે. આ વિષયમાં કોઈનું કોઈ પણ બલ ચાલતું નથી એ અર્થ જણાવવાને માટે 'અબલાઃ' એ પ્રમાણે સંબોધન કરવામાં આવેલું છે. 'હારહાસઃ' અને 'સ્થિરવિદ્યુત્' એ બે વિશેષણોનો મુખ્ય અર્થ ઘણો ગુપ્ત રાખવા જેવો છે તેથી શ્રીમહાપ્રભુજીએ તેનો અર્થ આપ્યો નથી. તેથી જ આ ગૂઢ અર્થનું જ્ઞાન થાય તેટલા માટે સ્વામિનીઓએ પણ સાવધાન રહીને સાંભળવું એમ દર્શાવવા 'ઈદં શ્રુણુત' એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. આ જ કારણથી અમે-શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી-પણ આ ગૂઢ અર્થ લખતા નથી, કારણ કે જેમના ઉપર ભગવાનનો અનુગ્રહ છે તેમને તો આ ગૂઢ અર્થ એની મેળે સ્ફુરે છે, અને જેમના ઉપર ભગવાનનો અનુગ્રહ નથી તેઓને આ ગૂઢ અર્થનું જ્ઞાન થવું યોગ્ય નથી. ફક્ત ભગવાન ઉપર જ જેમનો સ્નેહ હોય છે તેમના બીજા ધર્મો નિવૃત્ત થાય છે એ સ્વાભાવિક છે, તેથી પ્રમાણબલનો નિરાસ થાય છે.)

આ પ્રમાણે પ્રમાણબલનું નિરાકરણ કરવા 'હારહાસઃ' અને 'સ્થિરવિદ્યુત્' એ બે વિશેષણો કહીને, હવે પ્રમેયબલનું નિરાકરણ કરવા ભગવાને બે કાર્ય કર્યાં એમ કહે છે; કારણ કે (૧) આ ભગવાન જ નંદના પુત્ર થયા, અને (૨) ભગવાન પોતે જ આવીને દુઃખી પ્રાણીઓને સુખ આપે છે. આ પ્રમાણે જોવામાં આવે છે એ આ વિષયમાં પ્રમાણ છે. (પહેલાં જણાવેલી શ્રુતાર્થાપત્તિ પણ અહિં પ્રમાણ છે એ

દર્શાવવા ‘ચ’નો પ્રયોગ છે.) મોટા પુરુષ, ખરેખર, આ પ્રમાણે કરતા નથી, તેથી આ આશ્ચર્ય છે. આ જ અર્થને પ્રકટ કરતાં ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે; અથવા તો પહેલા કરતાં નીચું મુખ રાખવાની લીલાથી ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે. (આ બીજો અર્થ કરવામાં આવે ત્યારે ‘હારહાસે’ એ સપ્તમી વિભક્તિનું એકવચન છે અને ‘ઉરસિ’નું વિશેષણ બને છે.) હારના જેવું હાસ્ય છે જે વક્ત્રઃસ્થલ ઉપર તેની સ્થિરતા અને વિભાગોની સ્થિરતા એ આશ્ચર્ય છે. શ્રીવત્સ પણ ઘણો ઉત્તમ છે, તેથી શોભા માટે સ્થિરતાનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. આવા પ્રકારના ભગવાન્ જ્યારે નંદના પુત્ર થાય ત્યારે તેમનામાં સ્નેહ વધે છે. કૂજન એ વેણુને વગાડવાનો અમુક પ્રકાર છે. (વેણુને વગાડવાથી ઉત્પન્ન થએલો વેણુમાં રહેલો અમુક ધર્મ તે કૂજન કહેવાય છે.) સર્વની અંદર રહેલા પ્રાણના ધર્મનું પણ તે આકર્ષણ કરે છે.

જ્યારે વેણુકૂજન પશુઓના પણ પ્રાણ વિગેરે ધર્મોનું હરણ કરે છે તો પછી બીજાનું તો કહેવું જ શું? આ અર્થ દર્શાવવાને માટે ‘પશુઓના પ્રાણ હરે છે’ એમ વર્ણન કરવામાં આવે છે. એક પશુનો પ્રાણ બીજા કારણથી પણ હરાઈ જાય, તેથી ‘વૃન્દશઃ’-જથાબંધ-એ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ‘વૃન્દશઃ’ એટલે ટોળેટોળાં. વેણુના નાદનો જ્યાં પ્રવેશ પામ્યો ત્યાં બધા પશુઓના પ્રાણ તે હરે છે એમ તાત્પર્ય છે. વ્રજમાં રહેલા આખલાઓ છૂટા મૂકેલા આખલાઓની માફક મોટી ખૂંધવાળા મત્ત હોય છે અને ગાડાં વિગેરેને લઈ જાય છે. તેઓ વ્રજની પાસે જ રહે છે, તેથી ગામનાં પશુઓનો પણ સમાવેશ કરવાને માટે ‘વ્રજ’ શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે. જંગલી પશુઓ અને ગાયો વનમાં મળી આવે છે. વનનાં અને ગામનાં પશુઓની આવી સ્થિતિ થાય છે એમ જણાવવા ‘મૃગ’ શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે. વધારે શું કહેવું? વેણુના નાદને લીધે બધાંય પશુઓના ચિત્ત હરાઈ જાય છે. તેઓ ભગવાનની પાસે જવાને પણ શક્ત નથી, પરંતુ દૂરથી જ તેમનું ચિત્ત હરાઈ જાય છે. ‘આરાત્’-દૂરથી-એ પ્રમાણે કહેવાથી સિદ્ધ થાય છે કે ચિત્ત હરવાનો વેણુનાદનો ધર્મ સ્વાભાવિક જ છે, ભગવાનની સમીપ જવાથી કાંઈ પશુઓનું ચિત્ત હરાઈ ગયું નથી. ઘાસના કોળીઆઓને ફક્ત દાંતોથી કરડવામાં આવેલા હતા. કોળીઆઓનો ત્યાગ કરવાની અથવા તો તેમનું ભક્ષણ કરવાની શક્તિ પશુઓમાં ન હતી. પશુઓ કોળીઆઓને ફક્ત દાંતથી કરડતા હતા એમ કહેવાથી તેમનો પ્રયત્ન અટક્યો હતો, એટલે વેણુનાદને લીધે તેમનું બીજું કાર્ય બંધ રહ્યું એમ કહેવામાં આવ્યું છે. (વેણુનાદ સાંભળવામાં જે ઉપયોગી હોય તે વિના બીજું બધું કાર્ય બંધ રહ્યું એમ તાત્પર્ય છે. જો બધાંય કાર્ય બંધ રહે તો વેણુનાદ સાંભળવા કાન

પણ ન મંડાય. તેથી ‘બીજું’ કાર્ય બંધ રહ્યું એમ કહેવામાં આવ્યું છે.) પહેલાંની ક્રિયા ઘણી જરૂરી હતી એમ જણાવવા ‘કવલ’-કોળીઓ-એ શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે. (દાંતથી ઘાસ કરડ્યા પછી વેણુનાદ સાંભળ્યો. પછીથી ઘાસ ખાવાનું અને વેણુનાદ સાંભળવા કાન માંડવાનું એ બે કાર્ય કરવાનાં રહ્યાં. તેમાં પ્રથમ ઘાસ કરડવામાં આવેલું હોવાથી તેના સંબંધવાળી ઘાસ ખાવાની ક્રિયા જરૂરની હતી. વળી, ઘાસનો કોળીઓ પણ થએલો હોવાથી ખાવાની ક્રિયા બહુ જરૂરની હતી. છતાં પણ તે ક્રિયા ન થઈ એ વેણુનાદનું માહાત્મ્ય છે એમ તાત્પર્ય છે.)

જેમ દેવોની સ્ત્રીઓ મૂર્છા પામી તેમ આ પશુઓ મૂર્છા ન પામે એટલા માટે ‘ઘૃતકર્ણાઃ’-તેમણે કાન માંડ્યા-એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. બીજું બધું કાર્ય છોડી દઈને વેણુનાદનું શ્રવણ કરવામાં કાનરૂપી જે સાધન તે કાનને જ માંડ્યા. પછીથી પશુઓ બાહ્ય કાર્ય કરતાં અટકી પડ્યાં એમ ‘નિદ્રિતાઃ’ એ પદ વડે કહેવામાં આવે છે. પછીથી ચારે બાજુએ તેઓ નાદથી વ્યાપ્ત થયાં, અને પછી ચિતરેલી ગાયો વિગેરેની માફક તેઓ થઈ ગયાં; અર્થાત્ સ્થાવર પદાર્થ કરતાં પણ તેઓ સ્થિર થઈ ગયાં. આ અર્થ બીજા અને ત્રીજા શ્લોકમાં કહેલા અર્થથી પણ અધિક છે એ આશ્ચર્ય છે. (બીજા અને ત્રીજા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું હતું કે દેવોની સ્ત્રીઓને મૂર્છા થઈ, જ્યારે આ યુગલમાં તે પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું નથી; તેથી આ યુગલનો અર્થ પાછલા યુગલના અર્થ કરતાં અધિક છે, અને તેથી આશ્ચર્ય છે.) ૪-૫.

વેણુનાદથી ઘણી જ જડ એવી નદીઓને પણ ભગવાનના ચરણારવિંદની રજની ઈચ્છા થઈ એમ કહેવાને માટે ‘બર્હિણઃ’ ઈત્યાદિ શ્લોકમાં ફરીથી ગોપીજનો વેણુનાદનું વર્ણન કરે છે. (પહેલાં વર્ણવેલાં પશુઓને લીલાનું વિશેષ જ્ઞાન નહિ હોવાથી તેઓ જડ-મૂર્ખ-છે. નદીઓ તેમનાથી પણ વધારે જડ છે, કારણ કે તેમને જરા પણ જ્ઞાન નથી એમ તાત્પર્ય છે.)

બર્હિણઃ સ્તબકધાતુપલાશૈર્બદ્ધમલ્લપરિબર્હવિડમ્બઃ ।

કર્હિચિત્ સબલ આલિ સગોપૈર્ગાઃ સમાહ્યતિ યત્ર મુકુન્દઃ ॥૬॥

તર્હિ ભગ્નગતયઃ સરિતો વૈ તત્પદામ્બુજરજોડનિલનીતમ્ ।

સ્પૃહ્યતીર્વયમિવાબહુપુણ્યાઃ પ્રેમવેપિતભુજઃ સ્તિમિતાપઃ ॥૭॥

હે સખી! મોરનાં પીંછાંઓના ગુચ્છાઓ, ઘાતુઓ અને પાંદડાંઓ વડે મલ્લનો શૃંગાર ધારણ કરીને મુકુંદ ભગવાન જ્યારે કોઈકવાર બલભદ્ર અને ગોપોની સાથે ગાયોને બોલાવે છે ત્યારે જેમની ગતિ બંધ થઈ ગઈ છે એવી નદીઓ પવને આણેલી તેમના ચરણારવિંદની રજની ઈચ્છા કરે છે, આપણી પેઠે બહુ પુણ્યવાળી

નહિ હોવાથી પ્રેમથી ભુજાઓ કંપાવે છે અને સ્થિર જલવાળી થઈ જાય છે. ૬-૭.

પહેલાં આવેશ અને દેવવેશનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, હવે લીલાવેશનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. ('આ' એટલે સર્વ તરફથી, 'વેશ' એટલે વેશ; અર્થાત્ 'આવેશ' એટલે હંમેશનો વેશ. આ નિત્ય વેશનું વર્ણન પહેલા યુગલમાં કરવામાં આવ્યું છે. 'અવેશ:' એવો પાઠ જો હોય તો તેનો અર્થ 'અમુક પ્રકારની સ્થિતિ' એ પ્રમાણે કરવો, 'વેશ' એ પ્રમાણે ન કરવો. દેવનો-ક્રીડા કરનારનો વેશ એટલે દેવવેશ; અર્થાત્ ગાયો ચરાવવાને માટે બહાર જતી વખતે ભગવાન્ જે વેશ ધારણ કરે છે તે. આ વેશનું વર્ણન બીજા યુગલમાં કરવામાં આવ્યું છે. લીલાવેશ એટલે નૃત્યલીલા કરતી વખતનો વેશ. આ વેશનું વર્ણન આ ત્રીજા યુગલમાં કરવામાં આવ્યું છે.)

નદીઓની ક્રિયા હંમેશાં ચાલુ જ હોય છે, કારણ કે નિદ્રા, મૂર્છા વિગેરેમાં ચેતન પદાર્થની-જીવની-ક્રિયા તો બંધ થતી જોવામાં આવે છે, પણ નદીઓની ક્રિયા તો કોઈ પણ વખતે બંધ પડતી નથી. તેમાં પણ મોટી નદીઓની ક્રિયા તો બંધ પડતી જ નથી અને તેમનો બંધ પણ થતો નથી. આવી નદીઓની ક્રિયા પણ વેણુનાદથી અટકી પડી. ('સરન્તિ ઈતિ સરિત:', અર્થાત્ જે વહે તે નદીઓ એ પ્રમાણે વ્યુત્પત્તિ હોવાથી આ નદીઓ મોટી છે એમ સૂચન કરવામાં આવ્યું છે.)

બર્હીનાં-મોરનાં-સ્તબકો, અર્થાત્ ગુચ્છાઓ, મોરનાં પીંછાંના ગુચ્છાઓ. ધાતુઓ એટલે ગેરૂ વિગેરે પદાર્થો; અને પાંદડાઓ. અથવા તો પાંદડાંઓના આકારની ધાતુઓની આકૃતિઓ, કારણ કે કમલનાં પાંદડાંઓ પણ વેશને માટે બાંધવામાં આવે છે. આ બધા પદાર્થોથી મલ્લોનો પરિબર્હ-અલંકાર અર્થાત્ વેશ-રચવામાં આવ્યો છે. મોરનાં પીંછાંઓના ગુચ્છાઓ વિગેરેથી ગોઠવેલો જે આ મલ્લનો વેશ તેનું ભગવાન્ પોતે અનુકરણ કરે છે; અથવા તો મલ્લનું અનુકરણ કરવામાં આવેલું છે, કારણ કે નાટકના મલ્લની માફક અનુકરણ જ અસ્વાભાવિક હોય છે. આ પ્રમાણે નૃત્યના વેશનું અનુકરણ કરવામાં આવ્યું એમ કહેવાથી નૃત્યમાં ઉપયોગી જ આ નાદનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. (અર્થાત્ આ વેશ નૃત્યના સમયનો જ છે, બીજા સમયનો નથી એમ કહેવામાં આવ્યું.) વેશ નૃત્યના સમયનો છે એમ કહેવાથી નાદમાં રહેલી ક્રિયાશક્તિ બહાર નીકળેલી છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, અને તે નદીઓને આકર્ષણ કરવાનું કારણ બને છે. (નૃત્યમાં મોટો જ અવાજ થાય છે, એટલે આંગળીઓરૂપી ક્રિયાશક્તિ બહાર નીકળી, એટલે આંગળીઓ ઘણી દબાવેલી હતી એમ કહેવામાં આવ્યું.)

'કર્લિચિત્' એટલે ક્યારેક, જ્યારે ક્રિયાશક્તિમાં ઉત્સાહ હોય ત્યારે. (નૃત્ય



કરતી વખતે જ્યારે ઉત્સાહ થાય ત્યારે ભગવાન્ બલભદ્ર સાથે થાય છે એમ તાત્પર્ય છે.) તેથી જ ભગવાન્ ‘સબલઃ’ એટલે બલભદ્ર સાથે છે. આ અર્થ ગુપ્ત રાખવા યોગ્ય છે એમ કહેલો છે અને બીજા કોઈને આ વિષયમાં ભ્રાંતિ ન થાય તે માટે કહેવામાં આવેલો છે એમ દર્શાવવાને માટે ‘આલિ’, હે સખી!, એ પ્રમાણે સંબોધન કરેલું છે. (આ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે તેથી ભગવાન્ કોઈ વાર જ બલભદ્રની સાથે થાય છે, અને કોઈ વાર જ ગોપોની સાથે થાય છે એ પ્રમાણે વાક્યનો સંબંધ પણ જણાવવામાં આવ્યો. તેથી ભગવાન્ સદા એકાંતમાં જ આપણા-ગોપીજનોના-ભોક્તા છે એમ ‘સઃ’, તે, શબ્દથી જણાવવામાં આવ્યું છે.) ઘણું કરીને આ યુગલ બોલનારી ગોપી સ્નાન વિગેરેના બહાનાથી તે વખતે દર્શન કરવા ગએલી. (દરેક મુદ્દર્તમાં યુગલો ગવાય છે એ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં આવે ત્યારે આ પ્રમાણે બને છે. બીજા યુગલમાં ભગવાન્ બહાર જાય છે એમ કહેવામાં આવ્યું. આ ત્રીજું યુગલ છે. તેથી હમણાં ચિત્ત સર્વથા દ્રવતું નહિ હોવાથી અને કાંઈક તેવું થતું હોવાથી ‘પ્રાયેણ’, ઘણું કરીને, એ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલું છે. ભગવાન્ જ્યારે વનમાં પધારે ત્યારે ગોપીજનોનાં ચિત્ત દ્રવી જતાં હતાં એમ પહેલા શ્લોકમાં કહેવામાં આવેલું છે, તેથી આગળ જ્યારે ગોપીજનોનું ચિત્ત સર્વથા દ્રવશે ત્યારે એની મેળે જ લીલાનું જ્ઞાન થશે એમ તાત્પર્ય છે. અહિં સરિતાનો પ્રસંગ કહેલો છે તેથી ભગવાન્ નદીના તીરે રહેલા છે એમ જણાવવામાં આવ્યું છે. તેથી જ કહેવામાં આવ્યું છે કે સ્નાન વિગેરેના બહાનાથી નદીએ ગએલી ગોપીજનોએ ભગવાનનાં દર્શન કર્યાં.) આ પ્રમાણે સામગ્રી તૈયાર કરીને ભગવાન્, જે વાસ્તવિક રીતે આપણો-ગોપીજનો-ભોગ કરનાર છે અથવા ભોગ કરનાર થએલા છે તે, ગોપોની સાથે મળે છે. (કોઈક વખત જ ભગવાન્ ગોપોની સાથે પણ મળે છે. કોઈક સમયે જ ભગવાન્ બલભદ્ર અથવા ગોપો સાથે મળે છે એમ કહેવામાં આવેલું હોવાથી તે હંમેશાં એકાંતમાં રહે છે અને તે રીતે રમણની સામગ્રીનું સૂચન કરવામાં આવ્યું છે. ભગવાન્ ભોક્તા થયા એટલે ભોગ કર્યા પછી ભગવાન્ ગાયોને બોલાવે છે એવો અર્થ છે.) આ કારણથી અહિં વૈકુંઠમાં રહેલા ભગવાનની લીલા સૂચવવામાં આવેલી છે, કારણ કે અહિં પણ લક્ષ્મી રાત્રીએ આપણી સાથે અને દિવસે ગોપો સાથે રહે છે. તેથી જ ‘આલિ’ એ સંબોધન રહસ્ય સૂચવનારું છે. (દિવસે લક્ષ્મી અંતરંગ ગોપો સાથે જાય છે એમ તાત્પર્ય છે.)

તે સમયે ભગવાન્ વેણુનાદથી જ ગાયોને બોલાવે છે, કારણ કે આ પ્રકરણ વેણુનાદ વિષેનું છે. (ભોગ પછી બહિરંગ ગોપોની સાથે મળીને ભગવાન્ ગાયોને બોલાવે છે. કોઈક વખત જ ભગવાન્ બલદેવ અને ગોપોની સાથે હોય છે, હંમેશાં તો

ભગવાન્ એકાંતમાં ભોક્તા જ હોય છે. વાસ્તવિક રીતે ભગવાન્ આવા પ્રકારના છે. અથવા તો ભોગ કર્યા પછી શ્લોકના પૂર્વાર્ધમાં જણાવવામાં આવ્યું છે તે પ્રમાણે થઈને ભગવાન્ ગાયોને બોલાવે છે એ પ્રમાણે પદોનો અન્વય કરવો. ભગવાન્ વ્રજમાંથી નીકળી નદીના તીરે અને નિકુંજમાં પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે રમણ કરીને, તે સમયે પહેલાંનો વેશ બદલાવાથી નૃત્ય વિગેરેનો વેશ ધારણ કરીને ગાયોને કૃતાર્થ કરીને વનમાં પધારે છે. આવા પ્રકારના ભગવાનનું અહિં વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. કાલ ભગવદ્રૂપ હોવાથી અને ભગવાનને અધીન હોવાથી સર્વ ઘટી શકે છે. તે વખતે સ્નાન વિગેરેના બહાનાથી નદીએ ગએલી ગોપી તેવા પ્રકારના ભગવાનનાં દર્શન કરે છે, અને પોતે અંતરંગ હોવાથી ભગવાનની પહેલાંની અવસ્થા જાણી જાય છે, અને પછી અહિં આવીને તેનું વર્ણન કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.) વળી, ભગવાન્ ગાયોને વેણુથી બોલાવે છે એમ આગળ આઠમા શ્લોકમાં ગોપીજન કહેશે. અથવા તો ભગવાન્ વેણુના જેવા અવાજથી બોલાવે છે એમ દર્શાવવાને માટે આ યુગલમાં ‘વેણુ’ શબ્દ યોજવામાં આવ્યો નથી. ગાયોને બોલાવવાનું જે પ્રયોજન છે તે પ્રયોજન દર્શાવવા ‘મુકુન્દઃ’ એ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ગાયોને મોક્ષ આપવાનો છે તેથી, અને ગાયોને પોતાની પાસે મોક્ષ મેળવવાનું સાધન ન હોવાથી ભગવાન્ તેમને બોલાવીને મોક્ષ-માત્ર દર્શનનું સુખ-આપે છે; અથવા તો પોતાના રસનું સ્થાપન કરવાને માટે-ગાયોને સ્વરૂપરસનું ભાન કરાવવાને માટે-ભગવાન્ ગાયોને બોલાવે છે. બહાર નીકળેલી ક્રિયાશક્તિ-મોટો નાદ-મોટું જ કાર્ય કરે છે તેથી ભગવાન્ ગાયોને બોલાવે છે એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.

તે પ્રસંગે ‘ગો’ શબ્દનો યૌગિક અર્થ સમજીને, નદીઓ પણ હંમેશાં વહેતી હોવાથી, તેઓ પણ વહેતી અટકી ગઈ એમ ‘તર્હિ’ એ શ્લોકમાં કહેવામાં આવે છે. (ભગવાન્ જ્યારે ગાયોને બોલાવે છે ત્યારે નદીઓ કેમ વહેતી અટકી ગઈ? આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે. ‘ગચ્છન્તિ ઈતિ ગાવઃ’ એ પ્રમાણે ‘ગો’ શબ્દનો યૌગિક અર્થ છે; અર્થાત્ જે હંમેશાં જાય છે. ‘સરિત્’ શબ્દનો પણ યૌગિક અર્થ આ જ છે-‘સરન્તિ ઈતિ સરિતઃ’. આ પ્રમાણે ‘ગો’ શબ્દ અને ‘સરિત્’ શબ્દનો યૌગિક અર્થ એક જ છે; તેથી ભગવાન્ જ્યારે ગાયોને બોલાવે છે ત્યારે નદીઓ એમ સમજે છે કે ભગવાન્ અમને-નદીઓને-બોલાવે છે, અને તેથી નદીઓ જે હંમેશાં વહે છે તે અટકી જાય છે.) અર્થાત્ જે વખતે નદીઓએ ભગવાનના વેણુનો નાદ સાંભળ્યો તે જ ક્ષણે તેમની ગતિ બંધ થઈ ગઈ, કારણ કે ભગવાનની આજ્ઞાનું કોઈ પણ ઉલ્લંઘન કરી શકતું નથી. નદીઓનો સ્વભાવ ફક્ત વહેવાનો જ છે એ દર્શાવવાને માટે

‘સરિતઃ’ એ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. નદીઓને વૈષ્ણવ થવાની ઈચ્છા છે. નદીઓનો તો સમુદ્ર અધિપતિ છે; પણ ભગવાન્ પોતાના પતિ થાય એ હેતુથી આ નદીઓ ભગવાનના ચરણની રજની ઈચ્છા કરનારી થઈ, અર્થાત્ અભિલાષા રાખનારી થઈ. નદીઓ સ્થિર થઈ, પણ ભગવદીય દેહ પ્રાપ્ત કર્યા વિના ભગવાનનો સંબંધ થતો નથી, અને ભગવદીય દેહ ભગવાનના ચરણારવિંદની રજથી પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી ભગવાનનો સંબંધ સિદ્ધ કરવાને માટે નદીઓએ ભગવાનના ચરણારવિંદની ઈચ્છા કરવા માંડી એમ તાત્પર્ય છે.)

ભગવાનના ચરણારવિંદની રજનો સંબંધ કરવાનો ઉપાય દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘અનિલનીતમ્’, પવને આણેલી રજ. પવને પોતાને માટે આ રજ આણેલી છે; તેની સાથે પવનનો ગાઢ સંબંધ થાય છે અને પવન જલની ઈચ્છા રાખે છે. ભગવદીયો જ, અર્થાત્ ભગવાનના ચરણારવિંદની રજથી ઉત્પન્ન થએલા દેહવાળાઓ જ, ભગવાનનો સંબંધ પ્રાપ્ત કરે છે, તેથી રજ વિષેની ઈચ્છા દૂર અભિપ્રાયવાળી છે. નદીઓ દેવતાઓ હોવાથી અહિં તેમના મનમાં કામ જ ઉદેશ્ય છે. (ગાયોની બાબતમાં જેમ ખોરાક વિષેની ઈચ્છા હતી તેમ આ નદીઓની બાબતમાં નથી એ જણાવવાને માટે ‘એવ’ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે. વેણુગીતમાં ‘નદઃ’ એ પંદરમા શ્લોકમાં નદીઓ દેવતા હોવાથી તેમની સાથે બીજી લીલા સંભવતી નથી એમ કહેવામાં આવેલું છે. પરંતુ હમણાં તો ઈન્દ્રે ભગવાનનો અભિષેક કરેલો હોવાથી નદીઓની સાથે બીજી લીલા પણ સંભવે છે.) તેથી જ-કામ હોવાથી જ-આગળ ઉપર કાલિંદી કામની ઈચ્છાવાળાં થશે. (આધિદૈવિક યમુનાજી ભગવાન્ હોવાથી તેમનાં અનંત રૂપો છે. તેથી આ પણ રાજલીલામાંનું એક રૂપ છે. મુખ્ય રૂપ તો શ્રીયમુનાષ્ટકમાં વર્ણવવામાં આવેલું છે. વસ્તુતઃ ભગવાન્ અને શ્રીયમુનાજી એક હોવાથી ‘કૃષ્ણતુર્યપ્રિયામ્’-શ્રીકૃષ્ણનાં ચતુર્થ પ્રિયા-એ પ્રમાણે શ્રીયમુનાષ્ટકમાં કહેવામાં આવેલું છે. અહિં ‘સર્વાભેદાદન્યત્રેમે’-બ્રહ્મસૂત્ર ૩।૩।૧૦-એ ન્યાયનું અનુસંધાન કરવું. આ સૂત્રનો અર્થ એ છે કે લીલામાં આવેલા બધા પદાર્થો બ્રહ્મથી જુદા ન હોવાથી, અને બ્રહ્મ પોતે એક જ હોવાથી, ઉત્તરલીલામાં પણ પદાર્થો પૂર્વલીલાના સંબંધવાળા જ હોય છે.)

હમણાં તો તેવા થવાનું ભાગ્ય નથી એમ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘અબહુપુણ્યાઃ’, બહુ પુણ્યવાળાં નથી. જેમનું પુણ્ય બહુ નથી તે ‘અબહુપુણ્ય’ કહેવાય છે. જેવી રીતે દિવસે તરત જ ગાયનું રૂપ અથવા તો ગોપાલનું રૂપ થાય અને રાત્રે સ્ત્રીનું રૂપ થાય એવું બહુ પુણ્ય આ નદીઓને નથી, કારણ કે પુણ્ય વિના

ઈચ્છેલા પદાર્થની સિદ્ધિ થતી નથી. (પુણ્ય એટલે ભગવાનની તેવી કૃપા જેનાથી થાય તે ભાવ.)

નદીઓને આવા પ્રકારનો-કામનો-ભાવ છે એમ શી રીતે જણાય? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘વયમિવ’, અમારી માફક. જેવી રીતે આપણે બહુ પુણ્યવાળાં નથી તેવી રીતે આ નદીઓ પણ બહુ પુણ્યવાળી નથી. જો આપણે બહુ પુણ્યવાળી હોત તો દિવસે આપણે ગાયો અથવા ગોપ થાત. તેથી આપણા દષ્ટાંતથી જણાય છે કે આ નદીઓ કામની ઈચ્છા જ કરે છે, પરંતુ તેમનું કાર્ય સિદ્ધ થતું નથી. વળી, તેઓના સાત્ત્વિક ભાવથી પણ-તેમની અંદરની લાગણીને લીધે થએલી સ્થિતિથી પણ-તેમના હૃદયમાં રહેલો ભાવ જણાય છે એમ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘પ્રેમવેપિતભુજા:’, પ્રેમથી તેમની ભુજાઓ કંપે છે; અર્થાત્ પ્રેમથી જ તેમની ભુજાઓ કંપે છે, વાયુથી કંપતી નથી. તેથી આ નદીઓ વિરહના દુઃખવાળી હોય એમ જણાય છે. વળી, તેઓની સ્થિરતા પણ થઈ એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘સ્તિમિતાપ:’, તેમનાં જલ સ્થિર થઈ ગયાં. સ્તિમિત, સ્તબ્ધ, થઈ ગયાં છે જલ જેમનાં તે ‘સ્તિમિતાપ:’ કહેવાય છે. આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારના રજોગુણના ભેદો વર્ણવવામાં આવ્યા છે. ૬-૭.

સત્ત્વપ્રધાન ભેદવાળા લતા, પક્ષી અને મેઘનું વર્ણન કરવાને માટે ‘અનુચરૈઃ’ ઈત્યાદિ ત્રણ યુગલોમાં ગોપીજન ભગવાનનું પણ તે પ્રકારે-જુદા જુદા કાર્ય માટે ઉપયોગી રૂપ અને નાદવાળા તરીકે-વર્ણન કરે છે. લતા, પક્ષી અને મેઘ એ ત્રણ સાત્ત્વિક છે. આ ત્રણ વેણુના નાદથી ભક્તિથી પૂર્ણ થયાં. તેમાં પ્રથમ વૃંદાવનનાં લતાઓ અને વૃક્ષો જે વૈષ્ણવ છે તેમનામાં વેણુના નાદથી પ્રેમરસ પ્રકટ થયો એમ દર્શાવવા ગોપીજનો વેણુનાદનું બીજે પ્રકારે વર્ણન કરે છે. તેને માટે ભગવાનનું પણ બીજે પ્રકારે વર્ણન કરવું જોઈએ. અને આ વર્ણન ભક્તિને અનુસરીને અને લોક તથા વેદને અનુસરીને કરવું જોઈએ. તેમાં પ્રથમ ભક્તિને અનુસરીને ગોપીજન વર્ણન કરે છે :

અનુચરૈઃ સમનુવર્ણિતવીર્ય આદિપુરુષ ઈવાચલભૂતિઃ ।

વનચરો ગિરિતટેષુ ચરન્તીર્વેણુનાહ્વયતિ ગાઃ સ યદા હિ ॥૮॥

વનલતાસ્તરવ આત્મનિ વિષ્ણું વ્યઞ્ચન્ત્ય ઈવ પુષ્પફલાઢ્યાઃ ।

પ્રણતભારવિટપા મધુધારાઃ પ્રેમહૃદયતનવઃ સસૃજુઃ સ્મ ॥૯॥

સેવકોથી સારી રીતે વર્ણન કરાએલા વીર્યવાળા, આદિપુરુષની માફક અચલ લક્ષ્મીવાળા, વનમાં ફરતા તે ભગવાન્ જ્યારે પર્વતના શિખરો ઉપર ચરતી

ગાયોને વેણુથી બોલાવે છે, ત્યારે વનની લતાઓ અને વૃક્ષો પોતાની અંદર જાણે વિષ્ણુને દર્શાવતાં હોય તેમ પુષ્પો અને ફલોથી ભરપૂર થાય છે, તેમની શાખાઓ ભારથી પુષ્કળ નમી જાય છે, પ્રેમથી તેમને રોમાંચ થાય છે અને મકરંદની ધારાઓ વરસાવે છે. ૮-૯.

અનુચરોથી-સેવક ગોપોથી-સારી રીતે વર્ણન કરાએલાં છે વીર્યો જેમનાં એવા ભગવાન્ છે. આદિપુરુષ-પુરુષોત્તમ-ની માફક અનુચરોથી-વેદોથી-સારી રીતે, સર્વથી ઉત્તમ તરીકે, વર્ણન કરાએલાં છે જગત્કર્તૃત્વ વિગેરે વીર્યો જેમનાં એવા ભગવાન્ છે. ‘આદિપુરુષ ઈવાચલભૂતિ:’, આદિપુરુષની પેઠે અચલ લક્ષ્મીવાળા, એ પ્રમાણે ગોપીજન લોકને અનુસરીને ભગવાનનું સર્વોત્કૃષ્ટ માહાત્મ્ય વર્ણવે છે. અચલ છે વિભૂતિ, લક્ષ્મી, જેમની એવા ભગવાન્ છે. બધાય અનુચરોએ-દેવો વિગેરેએ-અચલ લક્ષ્મીવાળા તરીકે ભગવાનનું વર્ણન કરેલું છે. (‘સેવકોથી સારી રીતે વર્ણન કરાએલા વીર્યોવાળા’ એ પ્રમાણે ભક્તિને અનુસરીને વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ‘આદિપુરુષની માફક સેવકોથી, વેદોથી, સારી રીતે વર્ણન કરાએલા વીર્યોવાળા’ એ પ્રમાણે વેદને અનુસરીને વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ‘આદિપુરુષની માફક અચલ લક્ષ્મીવાળા’ એ પ્રકારે ‘સેવકોથી, દેવોથી, સારી રીતે વર્ણન કરાએલા વીર્યવાળા’ એ પ્રમાણે લોકને અનુસરીને વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ચતુર્થ યુગલમાં ભગવાન્ વૃંદાવનમાં પ્રવેશ કરે છે એ વાત ક્રમપ્રાપ્ત છે. તેથી જ ‘વનચર:’, વનમાં ફરતા, એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.)

લૌકિક પુરુષો, પોતાની સાથે ભગવાન્ સંબંધમાં આવતા હોવાથી, તેમની પુરુષોત્તમ સાથે સરખામણી જ કરે છે; તેથી દૃષ્ટાંત કહેવામાં આવ્યું છે. ભિન્નતાથી વર્ણન કરવાનો હેતુ દર્શાવવાને માટે કહે છે કે ‘વનચર:’. (પૂર્વ યુગલમાં વનચરનું કથન હોવાથી, અહિં જે સાત્ત્વિકભાવ ઉત્પન્ન થયો તે તાત્પર્યાર્થ તરીકે કહેવામાં આવ્યો છે.) ‘વૃંદાવનમાં ફરતા ભગવાન્’ એટલે સાત્ત્વિકભાવવાળા અને સત્ત્વભૂમિ માં રહેલા ભગવાન્. (વૃંદાવન રસનું ઉદ્દીપન કરનારું હોવાથી સ્તંભ વિગેરે સાત્ત્વિકભાવને ઉત્પન્ન કરે છે, તેથી ભગવાન્ તેવા ભાવવાળા થયા છે એમ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આદિપુરુષમાં આવો સાત્ત્વિકભાવ હોતો નથી એમ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવેલું છે, તેથી ભગવાનનું તેમનાથી ભિન્ન તરીકે જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે યોગ્ય છે એમ ભાવ છે.) ભગવાન્ પશુઓના હિતની ખાતર સપાટ પ્રદેશમાં રહીને પર્વતના શિખરો ઉપર વિષમ દેશમાં ફરતી ગાયોને સપાટ પ્રદેશમાં બોલાવે છે, અર્થાત્ અલૌકિક પ્રકારે વેણુથી જ તેમને બોલાવે છે, બીજા સામાન્ય માણસોની

માફક બોલાવતા નથી. વેણુદ્વારા ભગવાને તરુઓમાં પ્રવેશ કર્યો છે એમ આગળ વર્ણવવામાં આવતા ચરિત્રથી જણાય છે. (પોતાની અંદર વિષ્ણુને દર્શાવતા એમ જે નવમા શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે તે ઉપરથી એમ જણાય છે કે ભગવાને તરુઓમાં પ્રવેશ કર્યો છે.) જો આ પ્રમાણે ન માનવામાં આવે તો વૃક્ષ પોતાનામાં વિષ્ણુને દર્શાવી શકે નહિ. સઃ એટલે જે વનના પ્રદેશોમાં રમણ કરતા હતા તે પ્રદેશોમાં રહેલા ભગવાન્. (પાસેના નિકુંજમાં રહેલી ગોપીઓને કૃતાર્થ કરી, વનમાં પ્રવેશ કરી, જે સ્થલમાં આગલા દિવસોએ રમણ કરેલું તે સંકેતસ્થાનમાં રહીને વેણુથી ગાયોને ભગવાન્ બોલાવે છે. તે નાદથી તેમની અંદર રહેલા દેવતાઓ જાગૃત થાય છે. બીજાં બધાં પણ ભગવાનને ઉપયોગી એવો પોતપોતાની અંદર રહેલો રસ પ્રકટ કરે છે. પછી ગાઠ નિકુંજમાં જઈને ભગવાન્ રમણ કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.) જ્યારે ભગવાને બોલાવ્યા ત્યારે તરત જ મકરંદની ધારાઓ વરસાવી એ પ્રમાણે શ્લોકમાં પદોનો સંબંધ છે. આ અર્થ યોગ્ય જ છે. આ પ્રમાણે જો ન હોત તો વેણુનાદને ઓળખવો અને તેમાં પોતાના નામનો સંકેત જાણવો એ થાત નહિ. તેથી વેણુનાદ દ્વારા ભગવાને પ્રવેશ કર્યો છે, એટલે આગળ પણ તેવો અર્થ યોગ્ય જ છે. (ભગવાન્ એક જ વેણુનાદથી ભિન્ન ભિન્ન નામો બોલીને તે બધાંને પોતાનો અપેક્ષિત પદાર્થ જણાવે છે. અપેક્ષિત ફલ, પુષ્પ વિગેરે પ્રકટ ન કરવામાં પ્રયોજન ન હોવાથી ભગવાન્ તેમના નામનું ગ્રહણ કરે નહિ. તેથી વેણુ દ્વારા ભગવાન્ પ્રવિષ્ટ થયા અને તેથી પહેલાં પુષ્પફલરૂપ આનંદ પ્રકટ થયો, અને આગળ પણ મધુધારારૂપ આનંદ પ્રકટ થયો એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તે યોગ્ય જ છે.)

ભગવાન્ આપણી પાસે ફરે છે અને પોતાનાંને બોલાવે છે એમ જાણીને વનની લતાઓએ ભગવાનને અને સ્વકીયોને ભોગ પ્રાપ્ત થાય તે માટે પોતાનામાં રહેલો આનંદ પ્રકટ કર્યો. વૃક્ષોએ પણ તે પ્રમાણે કર્યું. જેમ ભગવદીય સ્ત્રીઓ અને પુરુષો, જ્યારે ભગવાન્ અને ભગવદીઓ પધારે છે ત્યારે, આનંદ પામે છે અને તેમના ભોગ માટે પોતાની વસ્તુ આપે છે, તેમ આ લતાઓએ અને વૃક્ષોએ પણ કર્યું.

અરે! આ પ્રમાણે પોતાની વસ્તુ આપવાનો ધર્મ તો જંગમ પ્રાણીઓનો છે, સ્થાવર પદાર્થોનો નથી. આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો ગોપીજન કહે છે કે ‘આત્મનિ વિષ્ણુ વ્યજ્જયન્ત્યઃ’, પોતાની અંદર વિષ્ણુને દર્શાવતા હતા. ભગવાનની ક્રિયાશક્તિ અને જ્ઞાનશક્તિ ચેતન પદાર્થોમાં જ પ્રકટ થાય છે, અને અનુક્રમે સત્, ચિત્ અને આનંદરૂપનો આવિર્ભાવ થાય છે. આ બધું ભગવાનનો પ્રવેશ થતાં થાય છે, અને અંદર પ્રવેશેલા ભગવાન્ પણ જ્યારે પ્રકટ થાય છે ત્યારે આ પ્રમાણે બને

છે. પાંચ ધર્મવાળાં આ વૃક્ષો વિગેરે પોતાની અંદર જાણે વિષ્ણુને દર્શાવતાં હોય એવાં થયાં. ('પશ્યતૈતાન્ મહાભાગાન્' એ દશમસ્કંધના ઓગણીસમા અધ્યાયના બત્રીસમા શ્લોકમાં જણાવેલા વૃક્ષોના ચાર ધર્મો અને પાંચમો ધર્મ ભગવદ્દીયપણું, એ પ્રમાણે વૃક્ષોના પાંચ ધર્મો છે.) તેમાં પ્રથમ ક્રિયાશક્તિનો આવિર્ભાવ થયો એમ 'પુષ્પફલાઢ્યાઃ' એ પદ વડે કહે છે. (ફલ અને પુષ્પ લીલામાં ઉપયોગી હોવાથી, વૃક્ષો તેમનાથી ભરપૂર થાય છે, અને આ પ્રમાણે વૃક્ષો ભગવાન ની ક્રિયાશક્તિ પ્રકટ કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.) કારણ કે જેમાં ભગવાન્ પ્રવેશ કરે છે તેમાં અવાંતર ફલ અને છેવટનું ફલ થાય છે. તેથી પુષ્પો અને ફલોથી ભરપૂર થવાના કાર્યથી આ વૃક્ષો પોતાની અંદર જાણે વિષ્ણુને દર્શાવતાં હોય તેવાં થયાં. પુષ્પો અવાંતર-મધ્યકાલનાં-ફલ છે, જ્યારે ફલ છેવટનું ફલ છે. આ બધાથી વૃક્ષો ભરપૂર થયાં. વૃક્ષોમાં ભગવાન્ તરફ સતનું આધિક્ય હતું, ઘણો સદ્ભાવ હતો, એમ 'પ્રણાતમારવિટપાઃ' એ પદ વડે કહેવામાં આવે છે. (સંતપુરુષો હરિનાં દર્શન થતાં તેમને નમે છે. તે પ્રમાણે વૃક્ષો પણ હાથરૂપી ડાળીઓથી ભગવાનને નમન કરે છે. આ રીતે વૃક્ષોમાં ભગવાન્ માટેનો સદ્ભાવ વધેલો છે એમ તાત્પર્ય છે.) વૃક્ષો ભારથી પણ નમી જાય એમ સંભવે, તેથી વૃક્ષો તેવી રીતે નમ્યાં ન હતાં એમ જણાવવા આરંભમાં 'પ્રણાત' શબ્દ મૂકવામાં આવેલો છે. અર્થાત્ વૃક્ષો ઘણાં નમેલાં હતાં અને તેમની ડાળીઓ ભારવાળી હતી એ પ્રમાણે વિગ્રહ કરવો.

'પ્રેમહૃદયનવઃ' પ્રેમથી હરખાએલા દેહવાળા, એ પદ વડે જ્ઞાનરૂપ ચિત્તના આધિક્યનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, કારણ કે ભક્તો જ પ્રેમને લીધે હરખાએલા અને રોમાંચવાળા થાય છે. (પુરુષોત્તમનું જ્ઞાન સર્વથી ઉત્તમ જ્ઞાન છે, અને તે ગીતા ૧૧।૫૪ પ્રમાણે અનન્ય ભક્તિથી જ થાય છે એમ તાત્પર્ય છે.)

(પહેલાં જે વૃક્ષો લીલાં ન હતાં તે પણ તે સમયે લીલાં થયાં, પહેલા કરતાં જાડાં થયાં, તેમનું દરેક અવયવ ફૂલ્યું, અને તેઓ વિશિષ્ટ પ્રકારની કાંતિવાળાં થયાં. આને જ અહિં 'પ્રેમહૃદયનુ', પ્રેમને લીધે હરખાએલાં અને રોમાંચવાળાં, કહેવામાં આવે છે. વળી, વેણુનાદમાં રહેલી સુધાનો સ્વાદ લેનારી સ્વામિનીઓ છે, તેઓ જ તેના ધર્મને શોધે છે, એટલે તેમની વાણીમાં બીજા પદાર્થનો વિચાર હોઈ શકે નહિ એ ઘણું યોગ્ય છે. તેથી અહિં વિશેષ લખવાની અપેક્ષા નથી.)

વૃક્ષોએ અને લતાઓએ મકરંદની ધારાઓ, અર્થાત્ પોતાની અંદર રહેલો આનંદ, ભગવાન્ માટે બહાર પ્રકટ કર્યો. તેમને આ સર્વનું સારી રીતે જ્ઞાન થયું એ જ ભગવાનની જ્ઞાનશક્તિ. (આ પ્રમાણે ભગવાનની જ્ઞાનશક્તિનો આવિર્ભાવ થયો.) ૮-૯.

પક્ષીઓને પણ વેણુનાદની અસર થઈ એમ દર્શાવવા તેમાં ઉપયોગી ભગવાનનું રૂપ અને વેણુના નાદનું ‘દર્શનીયતિલકઃ’ એ યુગલમાં ગોપીજન વર્ણન કરે છે. જો કે પક્ષીઓ મુનિઓ છે, અને તેમને ગીત વિગેરેથી ભગવદ્ભાવ થતો નથી, પરંતુ સ્વભાવથી જ હોય છે, છતાં પણ લોકને જોવાથી કદાચિત્ બીજા પ્રકારની બુદ્ધિ થઈ જાય, તેથી ભગવાનનાં રૂપ અને નાદથી તેમને ભજન સિદ્ધ થયું એમ અહિં વર્ણન કરવામાં આવે છે. (હંમેશાં ભગવદ્ભાવ હોય તો પણ લોકને-બીજા પદાર્થને-જોવાથી બીજા પદાર્થમાં જરા પણ ચિત્ત જાય; પણ ભગવાનના સ્વરૂપનું દર્શન થાય તો, અથવા વેણુના નાદનું શ્રવણ થાય તો, બીજા પદાર્થમાં જરા પણ ચિત્ત જાય નહિ એમ તાત્પર્ય છે.) તેમાં ‘દર્શનીયતિલકઃ’ એ શ્લોકમાં ગોપીજન ભગવાનના સ્વરૂપનું વર્ણન કરે છે :

દર્શનીયતિલકો વનમાલાદિવ્યગન્ધતુલસીમધુમત્તૈઃ ।

અલિકુલૈરલઘુગીતમભીષ્ટમાદ્રિયન્ યહિં કૂજિતવેણુઃ ॥૧૦॥

સરસિ સારસહંસવિહંગ્ગાશ્ચારુગીતહૃતચેતસ એત્ય ।

હરિમુપાસત તે યતચિત્તા હન્ત મીલિતદશો ધૃતમૌનાઃ ॥૧૧॥

વનમાલાની દિવ્ય ગંધવાળી તુલસીના મકરંદથી મત્ત થએલા ભમરાઓના સમૂહોએ કરેલાં મોટા અવાજવાળાં ગીતને તેમની ઈચ્છેલી રીતે આદર આપતાં, દર્શન કરવા યોગ્ય પદાર્થોમાં અતિસુંદર ભગવાન્ જ્યારે વેણુ વગાડે છે ત્યારે સરોવરમાં રહેનારા સારસ, હંસ અને બીજાં પક્ષીઓનાં ચિત્ત સુંદર ગીતથી હરાઈ જાય છે અને તેઓ આવીને હરિની ઉપાસના કરે છે, અને ચિત્તને વશ રાખી, ચક્ષુઓ બંધ રાખી, મૌન ધારણ કરે છે. ૧૦-૧૧.

જે દર્શન કરવા યોગ્ય છે તેમાં ભગવાન્ તિલકરૂપ, અતિસુંદર છે. પક્ષીઓ માં રૂપ મુખ્ય હોય છે, કારણ કે તેઓ રૂપના ભેદ જાણનારાં છે. (ભાગ. ૩૧૨૯૩૦ માં ‘રૂપભેદવિત્’-રૂપના ભેદને જાણનાર-એ પદ વડે પક્ષીઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. સ્વરૂપથી ભજન સિદ્ધ થાય છે એમ આ-‘દર્શનીયતિલકઃ’-વિશેષણથી કહેવામાં આવ્યું છે. નાદથી પણ ભજન સિદ્ધ થાય છે એમ આગળના ‘વનમાલા’ ઈત્યાદિ વિશેષણથી કહેવામાં આવ્યું છે અને આ વાત ‘કિન્ન’ ઈત્યાદિ પદો વડે કહેવામાં આવી છે.) વળી, જે વેણુનાદ છે તે પોતાના માણસોનું હિત કરનારો છે, અને સ્વકીયોના અપરાધને ગણતો નથી. (ભમરાઓમાં નાદ મુખ્ય છે, એટલે તેઓ નાદના સંબંધી છે. પક્ષીઓ વિવિધ પ્રકારના કૂજનથી ઉપકાર કરે છે, એટલે તેઓમાં પણ નાદ મુખ્ય છે. ‘અપરાધને ગણતો નથી’ એટલે વેણુનાદ તેના જેવો જ રણકાર કરે છે. જ્યારે



ભમરાઓનો ભગવાન્ આદર કરે છે ત્યારે સારસ વિગેરેનો આદર કરે એમાં શું આશ્ચર્ય? એમ તાત્પર્ય છે.) આ જ વાત ગોપીજન હવે કહે છે, કારણ કે વનમાલાની દિવ્ય ગંધવાળી તુલસીના મકરંદથી મત્ત થએલા ભમરાઓના સમૂહોને કરેલાં મોટો અવાજવાળાં ગીતનો પણ આદર કરતાં જ ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે. જે પ્રમાણે ભમરાઓ ઝંકાર કરે છે તે જ પ્રમાણે અવાજનું અનુકરણ કરતાં જ પછીથી કરેલા રણકારની માફક જ ભગવાન્ વેણુનો નાદ કરે છે. પક્ષીઓમાં ભમરાઓ હલકા અને અદમ છે. તેમનાં પણ કુલો-સમૂહો-અનેક પ્રકારની જાતિના ભેદવાળાં છે. તે બધા સમૂહોએ પણ મોટેથી અવાજ થાય તે પ્રમાણે ગીત કર્યું. આ ગીતનો આદર કરતાં ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે. તેમાં પણ ભમરાઓ મત્ત થએલા છે, અને આ મદ પણ જેનાથી ન થવો જોઈએ તેનાથી થએલો છે; કારણ કે તુલસી બીજાં પુષ્પોની માફક મદ કરનારી નથી. તેમાં પણ દિવ્ય ગંધવાળી તુલસી, તેમાં પણ ભગવાનની વનમાલામાં રહેલી તુલસી. આવા ભમરાઓનો પણ ભગવાન્ જો આદર કરે તો પછી સરોવર વિગેરેમાં જે રસવાળા-રસિકો અને દૂધ અને પાણીનો વિવેક કરનારા-રહે છે તેમનો આદર કેમ ન કરે? વનમાલાની જે દિવ્ય ગંધવાળી તુલસી તેના મકરંદથી ભમરાઓ મત્ત થએલા છે. વળી, ભગવાન્ ભમરાઓનો આદર પણ તેમને-ભમરાઓને-અભીષ્ટ થાય તે પ્રમાણે કરે છે, અર્થાત્ વનમાલા ઉપર આવેલા ભમરાઓને કાઢી મૂકતા નથી, પરંતુ જેમ તેમને ઉપદ્રવ ન થાય તેવી રીતે જ તેમનો આદર કરે છે. તેથી જ્યારે ભગવાન્ ભમરાઓનો આદર કરતાં જ વેણુ વગાડે છે ત્યારે જ (૧) સરોવરમાં રહેલા, જલમાં વાસ કરનારા, સારસો અર્થાત્ રસવાળા ભક્તોના સંબંધીઓ, (તે જ પ્રમાણે સંકેત હોવાથી ભક્તોના આગમનનું સૂચન કરનારા હોય છે એમ તાત્પર્ય છે.) (૨) દૂધ અને પાણીનો વિવેક કરનારા-(આવેલાઓમાં જુદા જુદા ભાવોનો વિવેક કરીને ભગવાનનો બોધ કરનારા)-હંસો અને (૩) ઊંચી ગતિવાળાં પક્ષીઓ-આ બધાનાં ચિત્ત ભગવાનના મનોહર ગીતથી હરાઈ જાય છે, કારણ કે તેઓ પુરુષ કરતાં ભગવાનના ભજનનાં વધારે અધિકારી છે. આ કારણથી જ ગોપીજન ‘ચારુગીતહતચેતસઃ’ એ પ્રમાણે તેમનું વિશેષણ આપે છે. તેઓ નિષ્કામ થાય તેવી રીતના સુંદર ભગવાનના ગીતથી હરાએલું, વશ થએલું, છે ચિત્ત જેમનું તેવાં સારસ વિગેરે પક્ષીઓ છે. (નિષ્કામ થવું એટલે ઈચ્છાઓ પૂર્ણ થવી. અહિં ભજનમાં નાદ મુખ્ય છે, એટલે નાદથી જ તેમની ઈચ્છાઓ પૂરાય છે; તેથી સારસ વિગેરે પક્ષીઓ પુરુષો કરતાં ઉત્તમ છે. પુરુષોને તો નાદથી ઉલટું વધારે ને વધારે ઈચ્છા થાય છે. અહિં ‘પુરુષ’ શબ્દ સ્ત્રી તથા પુરુષ એ બંનેને માટે વાપરવામાં આવેલો છે.)

સારસ વિગેરે પક્ષીઓ જે ભજન કરે છે તે ભક્તિમાર્ગને અનુસરીને કરે છે, પણ સ્થાનમાં રહેલા અંતર્યામિરૂપનું અથવા જ્ઞાનરૂપનું-બ્રહ્મ તરીકે જાણેલા આત્માનું-ભજન કરતા નથી. આ વાત હવે ગોપીજન કહે છે. ‘એત્ય’ એટલે આવીને તેઓ હરિની સમીપ રહે છે અને તેમની સેવા કરે છે, કારણ કે તેઓ ભગવાને કહેલા મુનિઓ છે. સારસ વિગેરેનું ભજન ભમરાઓના ભજનથી ઉત્તમ છે એમ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘યતચિતા:’. યત, વશ રાખેલું, છે ચિત્ત જેમનું તે ‘યતચિત્ત’ કહેવાય છે. (સારસ વિગેરે પક્ષીઓએ પોતાનું ચિત્ત વશ રાખેલું છે.) ચિત્તને વશ રાખીને કરવામાં આવેલું ભગવદ્ભજન મુખ્ય છે, પણ વિક્ષેપવાળા ચિત્તથી કરેલું ભજન મુખ્ય નથી. વળી, ‘હન્ત’ શબ્દ હર્ષના અર્થમાં વાપરવામાં આવેલો છે. હર્ષ થવાનું કારણ એ કે આવું ભાગ્ય આ પક્ષીઓનું જ છે. બહારની ક્રિયા વિનાના જે હોય તે ભજનમાં સર્વથી ઉત્તમ છે. બહારની ક્રિયાઓ બંધ કરવા માટે બે ચક્ષુઓ અને વાણીને પોતાને વશ કરવાં જોઈએ. જેમની આ બે ઈન્દ્રિયો વશ થએલી છે, અર્થાત્ જેમની વાણી ભગવાન્ વિના બીજા પદાર્થને બોલતી નથી અને જેમનાં ચક્ષુ ભગવાન્ વિના બીજા પદાર્થને જોતાં નથી, તેઓ સર્વથી ઉત્તમ છે. આ ભાવ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘મીલિતદશો ધૃતમૌના:’. બંધ કરેલી છે દષ્ટિ જેમની તે ‘મીલિતદશ:’ કહેવાય છે. ધારણ કરેલું છે મૌનવ્રત જેમણે તે ‘ધૃતમૌના:’ કહેવાય છે. (અર્થાત્ સારસ વિગેરે પક્ષીઓએ પોતાનાં ચક્ષુ બંધ કર્યાં અને મૌનવ્રત ધારણ કર્યું.) હમણાં આ પક્ષીઓ નાદમાં તદ્દીન થએલાં છે. તેથી દષ્ટિથી ચિત્ત કદાચિત્ બીજામાં જાય તેથી તેઓ ચક્ષુ બંધ કરે છે. આ પક્ષીઓ સાત્ત્વિક હોવાથી એમના ભાગ્યનું ગોપીજનોએ આ પ્રમાણે વર્ણન કર્યું. (‘સાત્ત્વિક’ એટલે શુદ્ધ સાત્ત્વિક. તેથી પહેલાં ચતુર્થ યુગલમાં વર્ણવેલા લતા વિગેરે પદાર્થો તમોગુણથી મિશ્ર સાત્ત્વિક ગુણવાળા હતા, અને હવે પછીના યુગલમાં વર્ણવેલો મેઘ રજોગુણથી મિશ્ર સાત્ત્વિક ગુણવાળો છે એમ ભેદ જાણવો.)

(હવે આ યુગલનો બીજો અર્થ આપતાં શ્રીગોસ્વામિજી શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી આજ્ઞા કરે છે કે) અથવા અહિં આ રહસ્ય છે. આ મુનિઓ ઘણા રસિક છે. પોતે પુરુષ હોવાથી લીલામાં પોતાનો ઉપયોગ નહિ થાય એમ માનીને, પક્ષીઓ બનીને, વિવિધ પ્રકારના પોતાના ટલુકાઓથી ભગવાનના અને ભક્તોના રસનું ઉદીપન કરતાં પોતાની કૃતાર્થતા થાય છે એમ માનીને તેઓ શબ્દને જ બહુ ઈષ્ટ માને છે. તેથી જેમાં શબ્દ મુખ્ય છે એવી કીર્તિરૂપી વનમાલાના ધર્મોનો જ અહિં ઉપયોગ કહેવામાં આવે છે. ‘જેમ સારી રીતે પુષ્પવાળા થએલા વૃક્ષની વાસ દૂરથી આવે છે તેમ

પુણ્યકર્મની વાસ દૂરથી આવે છે' આ શ્રુતિમાં કીર્તિ ગંધના જેવી છે એ પ્રમાણે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. વનમાલા કીર્તિરૂપ છે, તેથી તેનું નિરૂપણ કરનારાં ગીતો આવશ્યક છે; અને આવાં ગીતો તેના-કીર્તિમાં રહેલી મધુરતાના-રસનો સ્વાદ લીધા વિના થઈ શકે નહિ. તેથી આગળ અઢારમા શ્લોકમાં જેનું વર્ણન કરવામાં આવશે તેવી ગુણાતીત ભક્તિરૂપ ગંધવાળી તુલસી છે. (અઢારમા શ્લોકમાં એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે ગંધ ગુણાતીત ભક્તિનું નિરૂપણ કરનાર છે અને ભગવાનને તે પ્રિય છે.) આ તુલસીનો મકરંદ અતિ અલૌકિક ભક્તિના રસરૂપ છે અને બીજા રસને ભૂલાવનારો છે. તેથી તુલસીના મકરંદથી ભમરાઓ ઘણા મત્ત થયા, પોતાના દેહ વિગેરેનું ભાન ભૂલી ગયા, અને તેમને ઈશ્વરના ધર્મોનું પણ ભાન ન રહ્યું; તેથી તેઓ ભગવાનની પાસે જ મોટેથી ગાય છે. વાસ્તવિક રીતે તો ભમરાઓ આ પ્રમાણે મોટેથી ગાઈને પ્રભુનું ઉત્તમ આરાધન કરે છે; તેથી જ આ જ ગીત પ્રભુને સર્વ રીતે ઈષ્ટ છે.

(ગંધનો બીજો પ્રકાર દર્શાવતાં શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી આજ્ઞા કરે છે કે) 'ચારુ'-સુંદર-ઈત્યાદિ શબ્દો ન વાપરતાં ઉત્પત્તિ દર્શાવનાર પ્રત્યયવાળો 'દિવ્ય' શબ્દ ('દિવિ ભવમ્', સ્વર્ગમાં થએલો, તે 'દિવ્યમ્') વાપરવામાં આવેલો છે, ભગવાનની વનમાલામાં રહેલી તુલસીની ગંધ સ્વર્ગમાં ઉત્પન્ન થએલી નથી, આગળ બારમા શ્લોકમાં સ્વામિનીઓને વ્રજદેવીઓ કહેવામાં આવશે, અને 'દિવ્' ધાતુનો અર્થ ક્રીડા થાય છે-આ બધી બાબતો એક જ ઠેકાણે સાથે સાથે કહેવામાં આવેલી હોવાથી એમ જણાય છે કે આ ગંધ સ્વામિનીઓ સાથેની ક્રીડાથી ઉત્પન્ન થએલો છે. આ ઉપરથી એવો અર્થ સૂચવવામાં આવે છે કે જેમ સ્વર્ગમાં ઉત્પન્ન થએલો પદાર્થ બીજા લોકમાં રહેલા પુરુષોને પ્રાપ્ત થતો નથી, તેમ આ ગંધ ઘણી જ અંતરંગ લીલારૂપી જગતમાં રહેલા ભક્તોને જ પ્રાપ્ત થાય તેવો છે. તેથી જ આ ગંધથી પ્રભુનો ભાવ પણ જાગૃત થયો એમ દર્શાવવા પ્રભુએ કરેલું વેણું કૂજન કહેવામાં આવ્યું છે. વળી, 'વનમાલા માં રહેલાં પુષ્પોનો મકરંદ' એમ ન કહેતાં, 'તુલસીનો જ મકરંદ' એ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેથી, 'પ્રિય ગંધવાળી તુલસીની માલા' (ભાગ. ૧૦|૩૨|૧૮) એ વાક્યથી અને 'પ્રિયાના એક ખભા ઉપર બાહુ મૂકીને' (ભાગ. ૧૦|૨૭|૧૨) એ પ્રમાણે આરંભ કરીને 'તુલસીસંબંધી મદાંધ ભમરાઓનાં ટોળાં જેમની પાછળ ભમ્યા કરે છે' એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તે વાક્યથી એમ જણાય છે કે તુલસીનાં ગંધ, મકરંદ વિગેરેનું સ્વરૂપ પ્રભુ જ જાણે છે, તેથી તે ગુણ બીજાથી જાણી શકાતો નથી. (તુલસીનો જ મકરંદ કહેવામાં આવ્યો તેથી તે મકરંદમાં રહેલો ગુણ બીજા કોઈથી જાણી શકાતો નથી એ પ્રમાણે અન્વય છે. આ પ્રમાણે ગંધ ત્રણ પ્રકારે મદ

ઉત્પન્ન કરે છે એમ કહેવામાં આવ્યું.) ગંધ, મકરંદ વિગેરેનો ભોગ કરનારા ભમરાઓ પણ સાધારણ નથી, પરંતુ બીજાથી જુદા પ્રકારના, અતિ ઉત્તમ છે, એમ દર્શાવવા માટે જ શ્લોકમાં ‘કુલ’ પદ વાપરવામાં આવ્યું છે. તેથી જ ‘અલિ’ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ‘અલમ્’ શબ્દનો અર્થ પૂર્ણ થાય છે; તે-‘અલમ્’- જેની પાસે છે તે અહિં ‘અલિઃ’ કહેવાય છે. જેનામાં રસનો લય થતો નથી (અ+લી), અથવા જેનાથી રસનો નાશ થતો નથી તે ‘અલિઃ’ કહેવાય છે. જો કે આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં ‘અલી’ એમ દીર્ઘ સ્વરૂપવાળું રૂપ હોવું જોઈએ, તો પણ ‘આ દશસ્ત્ર નામનો છે; તે દશસ્ત્ર છે તો પણ તેને પરોક્ષ રીતે દશહોતા કહે છે; કારણ કે દેવોને પરોક્ષ પ્રકાર પ્રિય છે’ આ શ્રુતિના ન્યાયથી, અને ‘મને પરોક્ષ પ્રિય છે’ આ ભગવાન ના વાક્યથી પ્રભુને પોતાનો પ્રિય અર્થ ગુપ્ત રાખવો ગમે છે એમ જણાય છે. આપણા ચાલતા પ્રસંગમાં પણ પોતાના અંતરંગ ભક્તોના રસને પોષણ કરવાનો ગુણ ભમરાઓમાં ગુપ્ત રાખવા યોગ્ય છે, તેથી પરોક્ષ રીતે પ્રભુએ હરવ સ્વર જેને અંતે છે એવું ‘અલિ’ પદ પ્રકટ કર્યું. આ પ્રમાણે હોવાથી, આ જ અલિઓ, અને બીજા તો ભમરા જ છે. કોઈક વખત અમુક તાત્પર્ય દર્શાવવાને માટે આ અલિઓ માટે પણ બીજું નામ વાપરવામાં આવે છે એમ જાણવું.

‘તીણું’ અને ‘મોટું’ એમ ન કહેતાં જે નાનું નહિ તે (‘અલઘુ’) એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તે ઉપરથી જણાય છે કે આ ગીતના રસનો ભાર ખેંચવા પ્રભુ વિના બીજો કોઈ સમર્થ નથી. ‘મોટું’ કહેવામાં આવે તો તેમાં પણ હદ નથી જ એમ દર્શાવવા ‘અલઘુ’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે હોવાથી ભગવાન તેનો આદર કેમ ન કરે?

‘યર્હિ’, જ્યારે, એ પદથી એમ જણાય છે કે ભગવાન તે ગીતના રસના પાનથી પરવશ થઈ ઘણા કાલ સુધી શાંત જ રહે છે, અને કોઈ વાર તે રસના આધિક્યને લીધે જ વેણુ વગાડે છે. આગળ ‘ચારુગીત’ ઈત્યાદિમાં ‘ગીત’ કહેવામાં આવેલું છે, તેથી પહેલાં ભમરાઓના ગીતથી જાગૃત થએલા ભાવને લીધે પોતાની પ્રિયાઓના ભાવને જાગૃત કરવા માટે ભગવાને તે જ પ્રમાણે કર્યું, અર્થાત્ વેણુનાદ કર્યો. તેથી એમ જણાય છે કે જ્યારે ભગવાનનો રસ પૂર્ણ થયો ત્યારે તેમણે વેણુ વડે ગાન કર્યું. ભગવાન અતિ સુંદર છે એમ વર્ણન કરતાં તેમને જે ‘તિલક’ કહ્યા તે ઉપરથી જણાય છે કે જેમ તિલક ભાગ્યના સ્થાનમાં-કપાળમાં-રહે છે તેમ ભગવાનનું આ સ્વરૂપ પણ પરમ ભાગ્યવાળીઓમાં જ રહે છે. અહિં કર્મધારય સમાસ જાણવો, (અર્થાત્ ‘દર્શનીયશ્ચાસૌ તિલકશ્ચ દર્શનીયતિલકઃ’ એ પ્રમાણે

સમાસ જાણવો), કારણ કે સ્વામિનીઓના હૃદયમાં પ્રિય ભગવાન્ વિના બીજો કોઈ પદાર્થ સુંદર છે એવી સ્ફૂર્તિ થતી નથી. અહિં જો કે બંને-રૂપ અને નાદ-મુખ્ય છે, તો પણ નાદ રૂપથી અધિક છે એમ કહેવામાં આવે છે; જો આ પ્રમાણે ન હોય, જો નાદ રૂપથી અધિક ન હોય, તો ચક્ષુઓ બંધ કર્યાનું કહેવામાં આવત નહિ. તેનું કારણ આ છે. સરોવરમાં રહેલાઓએ જ તેમણે વેણુના ગીતનું શ્રવણ કર્યું, અને આ ગીત સુંદર હોવાથી મનને હરવાના જ સ્વભાવાળું હતું. તેથી વેણુના નાદને અધીન થઈને જ તેઓ ભગવાનની સમીપ આવ્યાં. નાદના કારણરૂપ સ્વરૂપના સૌંદર્યનું આરંભમાં જ વર્ણન કરવામાં આવેલું હોવાથી તેઓ નાદના રસમાં જ સ્વરૂપના રસનો પણ અનુભવ કરે છે એમ જણાવવામાં આવ્યું છે. આ પણ અતિ વિચિત્ર છે કે મત્ત થએલા ભમરાઓના ગીતને અનુસરીને ભગવાને કરેલા રણકારરૂપી ગીતથી સારસ વિગેરેનું ચિત્ત વશ થયું અને તેમની સર્વ ઈન્દ્રિયોની વૃત્તિઓ રોકાઈ ગઈ. આ સારસ વિગેરે પક્ષીઓની ગીતના રસનું પાન કરવાની સ્થિતિ છે, તેથી તેમની આ દશા જ થાય, તેમનું ચિત્ત વશ થાય અને તેમની ઈન્દ્રિયોની વૃત્તિઓ રોકાઈ જાય, એ પણ યોગ્ય છે, કારણ કે આ વેણુનો નાદ મત્ત થએલા ભમરાઓના ગીતથી ઉત્પન્ન થએલો હોવાથી તે ગીતની પછીના કાલનો છે, (અર્થાત્ ભમરાઓનું ગીત પહેલું અને વેણુનાદ પછી.) ભમરાઓના સમૂહોની પણ તુલસીની ગંધના મકરંદના પાનથી થએલી દશા આ પક્ષીઓની દશાના જેવી જ છે. પછીથી તે મધુના સ્વભાવથી ભમરાઓ મત્ત થાય છે એ વિશેષ છે એમ જણાય છે. પક્ષીઓ મુનિઓ હોવાથી ભવિષ્યમાં પણ તેઓ અંદરથી હંમેશાં આ રસમાં જ મગ્ન રહેવાના છે, તેથી તેમની મત્તતા કહેવામાં આવી નથી. અથવા તો પ્રભુના રસના સ્વભાવને લીધે પ્રભુરસમાં મગ્ન રહેવાની સ્થિતિ કહેવામાં આવી નથી છતાં પણ સિદ્ધ જ છે, તેથી તે સ્પષ્ટ શબ્દોમાં કહેવામાં આવી નથી. તે સમયે આ પક્ષીઓની પણ ભમરાઓના સમૂહના જેવી દશા થશે. વાસ્તવિક રીતે તો વર્ણન કરવામાં આવેલા સ્વરૂપના રસમાં મત્ત થએલા ભમરાઓનું અલઘુ-નાનું નહિ એવું-ગીત ઘણું પ્રિય હોવાથી, ચિત્તને ઘણું નિયમમાં રાખીને જ પ્રભુ તેનો અનુભવ કરતાં વેણુનું કૂજન અને ગાન કરે છે; તેથી તેનું શ્રવણ થતાં પક્ષીઓ પણ તે જ પ્રમાણે-ચિત્તને વશ રાખીને રસમાં મગ્ન-થાય એ વધારે યોગ્ય છે, કારણ કે તે આવશ્યક છે. આ પ્રમાણે અમને-શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી ને-યોગ્ય લાગે છે. છતાં પણ આરંભમાં ('દર્શનીયતિલકઃ' એ પ્રમાણે) ભગવાનના સ્વરૂપના સૌંદર્યનું જ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, તેથી તેનાં દર્શન કરવાની પોતાની-ગોપીજનોની-તીવ્ર ઈચ્છાને લીધે, પક્ષીઓને ભગવાનના સ્વરૂપના સૌંદર્યનાં દર્શન

પ્રાપ્ત થતાં તેમણે પોતાનાં ચક્ષુઓ બંધ કરી તે સ્વરૂપદર્શનમાં પ્રતિબંધ કર્યો એમ સ્મરણ થવાથી ગોપીજનોને કાંઈક ખેદ થયો એમ દર્શાવવા 'હન્ત' પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ૧૦-૧૧.

મેઘ સર્વનું હિત કરનારો છે. તેને પણ વેણુના નાદને લીધે જે ભાવ ઉત્પન્ન થયો તેનું વર્ણન પદેલાંની માફક 'સહબલઃ' એ યુગલમાં ગોપીજન કરે છે :

સહબલઃ સગવતંસવિલાસઃ સાનુષુ ક્ષિતિભૃતો વ્રજદેવ્યઃ ।

હર્ષયન્ યદિં વેણુરવેણુ જાતહર્ષ ઉપરમ્ભતિ વિશ્વમ્ ॥૧૨॥

મહદતિક્રમણશક્તિચેતા મન્દમન્દમનુગર્જતિ મેઘઃ ।

સુહૃદમભ્યવર્ષત્ સુમનોભિશ્ચાયયા ચ વિદધત્ પ્રતપત્રમ્ ॥૧૩॥

હે વ્રજદેવીઓ! બલદેવજીની સાથે, પુષ્પગુચ્છરૂપ કર્ણાભિરણના વિલાસવાળા અને આનંદ પામેલા ભગવાન્ જ્યારે પર્વતના શિખરો ઉપર વિશ્વને આનંદ પમાડતાં વેણુના નાદથી ભરી દે છે, ત્યારે મોટાના અપરાધથી ભયભીત થએલા ચિત્તવાળો મેઘ મિત્ર ઉપર પુષ્પોની વૃષ્ટિ કરતાં અને છાયાથી છત્ર ધારણ કરતાં મંદ મંદ ગર્જના કરે છે. ૧૨-૧૩.

હે વ્રજની દેવીઓ! હે વ્રજની દેવતારૂપ ગોપીઓ! 'દેવી' શબ્દના પ્રયોગથી એમ જણાવવામાં આવ્યું કે આ વર્ણવવામાં આવતી વાતમાં ગોપીજનોને વિશ્વાસ રહેશે. ('દેવી' શબ્દમાં 'દિવ્' ધાતુ છે, અને 'દિવ્' ધાતુનો અર્થ 'ક્રીડા કરવી' એ પ્રમાણે થાય છે. તેથી 'દેવી' શબ્દ લીલામાં રહેલી ગોપીજનોનું સૂચન કરે છે. લીલામાં રહેલી ગોપીજનોનો તે પ્રકારનો અનુભવ હોવાથી ભગવાન્ વેણુનાદથી વિશ્વને ભરી દે છે એ બાબતમાં તેમનો વિશ્વાસ રહેશે એમ તાત્પર્ય છે.) જ્યારે ભગવાન્ વેણુના નાદથી વિશ્વને પૂરે છે, ત્યારે મોટાના અપરાધથી ભયભીત થએલા ચિત્તવાળો મેઘ મિત્રના-ભગવાનના-ઉપર વૃષ્ટિ કરે છે, અને પોતાના દેહની છાયાથી છત્ર ધારણ કરે છે, અથવા છત્ર ધારણ કરીને તે વૃષ્ટિ કરે છે. આ વેણુનો નાદ ઘણા બલવાળો છે, અર્થાત્ બહુ મોટો છે, અને વિશ્વમાં રહેલા બધાય ધર્મોને દૂર કરીને પોતે જ તેમાં ભરાય છે. (અહિં 'વિશ્વ' એટલે વેણુનો નાદ શ્રવણ કરનાર સર્વ. નાદ શ્રવણ કરતી વખતે શ્રવણ કરનારાઓને બીજા પદાર્થની સ્ફૂર્તિ થતી નથી, પરંતુ તેમની અંદર અને બહાર સર્વ સ્થલે નાદ જ ભરાઈ રહે છે.) તે સમયે ધૂમાડો વિગેરેના સમૂહરૂપ અને (શ્યામતાને લીધે) ભગવાનના જેવા દેખાતા મેઘે પણ, વિશ્વ ભગવાનથી જ કૃતાર્થ થયું એટલે પોતાનું-મેઘનું-કાર્ય થઈ ગએલું હોવા છતાં પણ, પોતાનો જન્મ સફલ થાય તે માટે ભગવાન્ ઉપર જ વૃષ્ટિ કરી. (મેઘનું કાર્ય વૃષ્ટિ વિગેરેથી જગતનો તાપ

દૂર કરવાનું છે; પણ તાપ તો ભગવાને જ વેણુનાદથી આનંદ ભરી દઈ દૂર કર્યો છે; તેથી મેઘનું પ્રયોજન સિદ્ધ થઈ ગયું હતું. મેઘ આભાસ હોવાથી ભગવાનથી ઉતરતી કોટિનો છે, અને તેનું પ્રયોજન સિદ્ધ થઈ ગયું છે, છતાં પણ પોતાના જન્મની સફલતા માટે તે મેઘે ત્યાં રહીને ભગવાન ઉપર વૃષ્ટિ કરી. ભગવાનને તો મેઘની વૃષ્ટિનું કાંઈ પણ પ્રયોજન ન હતું. આ પ્રમાણે અહિં તાત્પર્ય છે.) તે સમયે જે પ્રકારના વેણુનાદથી આવું કાર્ય થાય છે તેવા વેણુનાદના કરનાર ભગવાનનું ચાર વિશેષણોથી ગોપીજન વર્ણન કરે છે. જો આ પ્રમાણે કરવામાં ન આવે તો વિશ્વને પૂરવાની ક્રિયા અર્થવાદરૂપ થઈ જાય. (ભગવાન બાલક હતા, તેથી તે નાદથી વિશ્વને ભરી દે એ વાચ્ય અર્થમાં વિરોધ આવે, તેથી માત્ર નાદથી ચિત્ત હર્યા એવો કોઈ ગુણ દર્શાવવામાં આવ્યો છે, આ પ્રમાણે ગુણવાદરૂપી અર્થવાદ થાય, કારણ કે 'વિરોધ ઉત્પન્ન થતાં ગુણવાદ થાય છે' એ પ્રમાણે પૂર્વમીમાંસાશાસ્ત્રનો સિદ્ધાંત છે. ભગવાને વાસ્તવિક રીતે વિશ્વને વેણુનાદથી ભરી દીધું છે એ જણાવવાને માટે જ ભગવાનને માટે ગોપીજન ચાર વિશેષણો વાપરે છે એમ તાત્પર્ય છે.)

તેમાં-વેણુનાદ કરવામાં-ક્રિયાશક્તિ સંપૂર્ણ છે એમ દર્શાવવા 'સહબલ:', બલભદ્રસહિત, એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. સૃષ્ટિ રચવાની ક્રિયા કરતાં પણ આ ક્રિયા મોટી છે એ જણાવવાને માટે પણ 'સહબલ:' એ વિશેષણ વાપરવામાં આવ્યું છે. (ભાગ. ૨।૨।૧૨માં આવેલા 'અદીન' શબ્દનો અર્થ 'સર્ગ' છે, અને 'લીલા' શબ્દનો અર્થ 'વિસર્ગ' છે એમ ભાગ. ૨।૭।૨૬નાં શ્રીસુબોધિનીજીમાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે. આ પ્રમાણે સર્ગની પછી લીલા કહેવામાં આવેલી હોવાથી સર્ગ કરતાં લીલા મોટી છે એમ સિદ્ધ થાય છે.) માલારૂપ, પુષ્પના ગુચ્છારૂપ, જે અવતંસ-કર્ણનું આભરણ, -તેમાં વિલાસ છે જેમનો એવા ભગવાન છે. આ પ્રમાણે આ બીજા વિશેષણથી લીલાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. (શાસ્ત્રની રીતે પણ લીલા મોટી છે એમ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) માલા કીર્તિરૂપ છે. દશ દિશાઓ કર્ણ છે. (અવતંસ એટલે કર્ણનું આભરણ. આ અર્થમાં દિશાઓ કર્ણ છે. આભરણમાં વિલાસ એટલે તેને તેના પોતાના સ્થાનમાં સ્થાપન કરવું તે. આ પ્રમાણે કીર્તિરૂપ દિશાઓના આભરણમાં વિલાસ કહેવામાં આવેલો હોવાથી, કીર્તિરૂપ આભરણનું દિશાઓમાં સ્થાપન કર્યું એમ કહેવામાં આવ્યું છે.) (અહિં આ વિશેષણ કહેવામાં આવેલું છે, અને તેની સાથે સાથે જ ઉપરંભણની વાત શ્લોકમાં કહેવામાં આવી છે, તેથી ભગવાન ઉપરંભણથી આ પ્રમાણે કરે છે એ આશયથી શ્રીમહાપ્રભુજી હવે આજ્ઞા કરે છે કે) જેણે-વેણુનાદથી વિશ્વને ભરી

દેવાની ક્રિયાએ-કીર્તિને દિશાઓમાં પૂરી તે સર્વથી ઉત્તમ છે જ. અથવા તો ભગવાનની કીર્તિનું વર્ણન કરનાર ભાગવત વિગેરે શાસ્ત્ર સર્વ વેદોમાં આભરણરૂપ છે; તેની અંદર વિલાસવાળી અને જેનું વર્ણન તેમાં કરવામાં આવેલું છે એવી ભગવાનની ક્રિયા છે. (કર્ણના પોલાણમાં રહેલા આકાશને શ્રોત્ર, કર્ણ કહેવામાં આવે છે. શબ્દ આકાશનો ગુણ હોવાથી આકાશનું આભરણ છે. તેથી ‘અવતંસ’નો અર્થ ભાગવતશાસ્ત્ર થાય છે. આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં આવે ત્યારે ‘સ્રગવતંસઃ’ એ સમાસનો વિગ્રહ ‘સ્રકપ્રતિપાદકઃ અવતંસઃ’, સ્રક નું પ્રતિપાદન કરનાર અવતંસ, એ પ્રમાણે કરવો. વળી, ભગવાનનો વિલાસ કહેવામાં આવેલો હોવાથી ભગવાનમાં રહેલા ‘વેણુનાદથી વિશ્વને પૂરવાના’ ગુણનો પણ વિલાસ કહેવામાં આવ્યો.)

આ પ્રમાણે ઉપરંભણક્રિયાનું સ્વરૂપથી અને ગુણથી માહાત્મ્ય વર્ણવવામાં આવ્યું છે. (સ્વરૂપ એટલે બલદેવજી. ‘સહબલઃ’ એ વિશેષણ સ્વરૂપથી ક્રિયાશક્તિનું વર્ણન કરે છે. દિશાઓમાં કીર્તિ પૂરવી એ ગુણ છે. ‘સ્રગવતંસવિલાસઃ’ એ વિશેષણ ગુણથી ક્રિયાશક્તિનું વર્ણન કરે છે.) આ ક્રિયાશક્તિની સાથે કામ કરનારી ઈચ્છાનું મહત્ત્વ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ભગવાન્ પોતે આનંદ પામેલા છે અને સર્વને આનંદ પમાડે છે.) સુખનો ધર્મ ઈચ્છા છે. અહિં લર્ષ કહેવામાં આવેલો હોવાથી ધર્મીનો પણ આવિર્ભાવ કહેવામાં આવ્યો; તેથી માહાત્મ્ય કહેવામાં આવ્યું.) આ પ્રમાણે વેણુનાદની કારણભૂત ક્રિયાની શ્રેષ્ઠતા વર્ણવીને, ‘ક્ષિતિભૂતઃ સાનુષુ’ એ શબ્દોમાં દેશથી પણ તેની શ્રેષ્ઠતા ગોપીજન કહે છે. સર્વના આધારરૂપ પૃથ્વીને જે ધારણ કરે છે તે પર્વતોના પણ ઉચ્ચ પ્રદેશો ઉપર તે નાદ પહોંચે છે, તો પછી તે વિશ્વને કેમ ભરી ન દે? ‘રવ’ એટલે પાછળથી થતો ગંભીર રણકાર, (નવા ઘરમાં જેવી રીતે પડઘો પડે છે તેવી રીતે પાછળથી થતો રણકાર.) ભગવાન્ વિશ્વને નાદથી ભરી દે છે, એ પ્રમાણે ભગવાનની મેઘથી પણ અધિક ક્રિયાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું. તે જ સમયે મોટા પુરુષની-વાસુદેવની-ઉપર જતો મેઘ, ભગવાનનો અપરાધ કરવાથી, ભયભીત થએલા ચિત્તવાળો થયો; અને ઉપર જ રહીને તે મેઘ આગળ જવા તૈયાર થયો અને નીલ મેઘના જેવા શ્યામ અને વિશ્વને જીવાડનાર ભગવાનને પોતાના મિત્ર જાણીને, તે મિત્ર ઉપર પુષ્પરૂપ પોતાના બિંદુઓથી વૃષ્ટિ કરી, અર્થાત્ મેઘે ભગવાનની પુષ્પોથી પૂજા કરી. મેઘે ભગવાનની ફક્ત પૂજા જ કરી એટલું જ નહિ, પરંતુ રાજ્ય પણ આપ્યું એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘આતપત્રં દઘત્’, છત્ર ધર્યું. (ભાગ. ૧૦|૨૪|૧૮-૨૩ શ્લોકોમાં વર્ણવ્યા પ્રમાણે જેમ સુરભિએ ગોવિંદનો અભિષેક કર્યો, તેમ આ મેઘે પણ ભગવાનને પોતાના



અધિપતિ તરીકે પસંદ કર્યા. તેથી આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.) મેઘે ભગવાનને રાજ્ય જ આપ્યું એટલું જ નહિ, પરંતુ આત્મનિવેદન પણ કર્યું એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘છાયયા’. સૂર્ય જ્યારે નીચે રહેલો હોય ત્યારે તેની ઉપર રહેલા મેઘથી છાયા થાય નહિ, તેથી છાયાની વાત જુદી કહેવામાં આવી છે. ૧૨-૧૩.

ત્રણ પ્રકારના ઉત્તમ અધિકારીઓનું વર્ણન કરવાને માટે, તેમણે પણ વેણુનાદથી કાંઈક થયું એમ કહેવા માટે ‘વિવિધગોપચરણેષુ’ ઈત્યાદિ ત્રણ યુગલોમાં ગોપીજન વેણુનાદનું અને ભગવાનનું વર્ણન કરે છે. (યથાર્થ જ્ઞાન નહિ હોવાથી તામસત્વ કહેવામાં આવ્યું છે; પણ ભક્તિમાર્ગમાં તો તે ગુણ જ છે, એટલે તામસ ઉત્તમ ગણાય છે.)

વિવિધગોપચરણેષુ વિદગ્ધો વેણુવાદ્ય ઉરુઘા નિજશિક્ષાઃ ।

તવ સુતઃ સતિ યદાધરભિમ્બે દત્તવેણુરનયત્ સ્વરજાતીઃ ॥૧૪॥

સવનશસ્ત્રદ્વપધાર્ય સુરેશાઃ શક્યર્ષવપરમેષ્ટિપુરોગાઃ ।

કવય આનતકન્ધરચિત્તાઃ કશ્મલં યયુરનિશ્ચિતતત્ત્વાઃ ॥૧૫॥

હે સતિ! ગોપોની વિવિધ ચાલોમાં નિપુણ તમારા પુત્ર જ્યારે અધરના બિંબ ઉપર વેણુ રાખી વેણુરૂપી વાજિંત્ર ઉપર ઘણા પ્રકારથી પોતાનાથી જ જેનું શિક્ષણ થાય તેવા જુદા જુદા સ્વરોને ઉત્પન્ન કરે છે, ત્યારે જેમની ગરદન નમેલી છે અને જેમનાં ચિત્ત વશ થએલાં છે એવા કવિઓ, અને ઈન્દ્ર, શંકર અને બ્રહ્મા જેમના અગ્રેસર છે એવા દેવો દિવસના ત્રણેય સવનના સમયે તેનો વિચાર કરીને તત્ત્વનો નિશ્ચય થતાં મૂર્છા પામે છે. ૧૪-૧૫.

લોકમાં ઉત્પન્ન થતો અલૌકિક પ્રકાર સંદેહ ઉત્પન્ન કરે છે.

અરે! જે વેદમાં કહેવામાં નથી આવ્યું એવું કાંઈ પણ રૂપ ઈશ્વરમાં નથી, અને બ્રહ્મા સર્વ વિદ્યાઓના સ્થાનને જાણનારા છે; તેથી તેમને-બ્રહ્માને-સંદેહ કેમ થાય? આ પ્રમાણે શંકા થતાં ગોપીજન સમાધાન કરે છે કે ‘વેણુવાદ્ય ઉરુઘા નિજશિક્ષાઃ’, વેણુરૂપી વાજિંત્ર ઉપર ઘણા પ્રકારથી પોતાનાથી જ જેનું શિક્ષણ થાય એવા જુદા જુદા સ્વરોને ઉત્પન્ન કરે છે. વેણુ એ એક પ્રકારનું રાડું છે. તેના પણ પ્રકારો શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવેલા છે, અને બ્રહ્મા તેને જાણે છે. પણ ભગવાન જે વેણુ વગાડે છે તેના પ્રકારો તો ઘણા છે. ‘નિજશિક્ષાઃ’ એટલે પોતાનાથી જ શિક્ષણ, રાગ કાઢવાનો પ્રકારો, જેની અંદર છે તેવા સ્વરોને ભગવાન ઉત્પન્ન કરે છે. આથી-બ્રહ્માને પણ તેનું જ્ઞાન નથી એમ કહેવાથી-એમ જણાવ્યું કે નાદબ્રહ્મ નિત્ય છે. (નાદ બ્રહ્માની પણ પહેલાં હતો એટલે બ્રહ્માને તેનું જ્ઞાન નથી એમ તાત્પર્ય છે.

‘નવીન ઉત્પન્ન કર્યો’ એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તે તો બીજાના જ્ઞાનની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે.)

તેમાં, નાદ ઉત્પન્ન કરવામાં, ક્રિયાશક્તિ-આંગળી વેણુ ઉપર ફેરવવી વિગેરેરૂપ ક્રિયાશક્તિ-સાધન છે, અને તે સાધન લૌકિક હોવાથી તેનાથી ઉત્પન્ન થતો નાદ કેવી રીતે અલૌકિક થશે? આ પ્રમાણે શંકા થાય, તેથી તે સાધન પણ અલૌકિક છે એમ જણાવવા ગોપીજન કહે છે કે ભગવાન ગોપોની વિવિધ ચાલોમાં પ્રવીણ છે. ગોપની ચાલો વેદમાં કહેવામાં નથી આવી, પરંતુ લૌકિક છે. ગોપોના કેટલાક સંચારો બીજા બ્રહ્માંડમાં પણ રહેલા હોય, તે બીજા લોકમાં પ્રસિદ્ધ ન હોય, તેમ જ વેદમાં પણ પ્રસિદ્ધ ન હોય. (ગોપોના જે સંચારો બીજા બ્રહ્માંડમાં રહેલા હોય તે આ બ્રહ્માંડમાં પ્રસિદ્ધ ન હોય. આ બ્રહ્માને તો આ બ્રહ્માંડમાં જે હોય તેનું જ જ્ઞાન હોય. તેથી આ લોકમાં પ્રસિદ્ધ ન હોવાથી અને વેદમાં જણાવેલું નહિ હોવાથી બ્રહ્માને તેનું જ્ઞાન નથી એમ તાત્પર્ય છે.) ભગવાન તો બધાયમાં પ્રવીણ છે, તેથી આ બ્રહ્મા જે પ્રકાર જાણતા નથી તે જ પ્રકાર ભગવાન કરે છે.

અરે! બ્રહ્માની સૃષ્ટિમાં પ્રકટ થએલા ભગવાન બ્રહ્મા પણ ન જાણે એવા સ્વરના પ્રકારો કેવી રીતે કરી શકે? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘તવ સુતઃ’, ભગવાન તમારા પુત્ર છે. સ્ત્રીઓના મંડલમાં આવેલાં યશોદાને આ ગોપીજનો ‘તવ સુતઃ’ એ પ્રમાણે કહે છે. તેથી જ અહિં કામ વિગેરેની વાત નથી, પણ નિષેધ કરવામાં આવ્યો નથી એવી ઉત્તમતા જ ભગવાનમાં જણાવવામાં આવી છે. જેમ શ્રીકૃષ્ણ તમારા-યશોદાજીના-પુત્ર છે, છતાં પણ તમારા મનથી પણ જેનો વિચાર ન થઈ શકે એવું કાર્ય તે કરે છે, તેમ બ્રહ્માંડમાં ઉત્પન્ન થએલા હોવા છતાં પણ બ્રહ્માથી પણ વિચાર ન કરી શકાય એવું કાર્ય તે કરે છે. યશોદાજીને વિશ્વાસ રહે તે માટે ‘સતિ’ એ પ્રમાણે સંબોધન કરવામાં આવેલું છે. બ્રહ્મા વિગેરેને જ્ઞાન નથી તેનું કારણ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘અધરબિમ્બે દત્તવેણુઃ’, અધરના બિંબ ઉપર ભગવાને વેણુ રાખ્યું. અધર લોભરૂપ છે એમ પહેલાં કહેવામાં આવેલું છે, તેથી તે અધર લોકમાં પ્રસિદ્ધ નથી, કારણ કે ભગવાને તેનો રસ કોઈને આપેલો નથી. વળી, તે અધર પણ બિંબરૂપ, સૂર્યની માફક પ્રકાશનારો, છે. આ પ્રકાશ કરનારો અધર કોઈ જાણતું નથી. કારણ કે જેમનો પ્રકાશ થાય છે તે પોતાનો પ્રકાશ કરનારનું સ્વરૂપ જાણતા નથી. આવા અધરના કરતાં પણ વેણુ ઉત્તમ છે એ જણાવવાને માટે ભગવાને તે અધર ઉપર વેણુને રાખ્યો હતો. (જ્યાં ભગવાનના અધરનું જ જ્ઞાન થઈ શકે એમ નથી, તો પછી તે અધર ઉપર રાખેલા વેણુનું જ્ઞાન તો જરા પણ ન જ થઈ

શકે. આ પ્રમાણે ઉત્તમનો અર્થ અપ્રેમ્ય-જેનું જ્ઞાન થઈ શકે નહિ-એ પ્રમાણે થાય છે.) ‘સ્વરજાતી:’ એટલે ષડ્જ વિગેરે સ્વરોની જુદી જુદી જાતોને ભગવાન જ્યારે ‘અનયત્’, નવીન ઉત્પન્ન કરે છે, ત્યારે તે જાણવાને માટે દેવો પોતાનામાં ત્રણ ગુણો પ્રધાન છે છતાં પણ ત્રણેય કાલમાં એકઠા થાય છે. (મૂલ શ્લોકમાં તો ‘જુદા જુદા સ્વરોને ઉત્પન્ન કરે છે’ એમ કહેવામાં આવેલું છે, અને ‘નિજશિક્ષા:’, પોતાનાથી જ જેનું શિક્ષણ થાય, એમ કહેલું હોવાથી તે અપૂર્વ-પહેલાં ન જાણાએલા-છે એમ જાણાય છે, પરંતુ નવા ઉત્પન્ન કરવામાં આવેલા નથી. છતાં પણ અહિં ‘નવીન ઉત્પન્ન કરે છે’ એમ જ કહેવામાં આવ્યું છે તે બીજાના જ્ઞાનની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે, અર્થાત્ દેવો વિગેરેની દષ્ટિએ આ જુદા જુદા સ્વરો નવીન ઉત્પન્ન થએલા જાણાય છે. તેથી પહેલાં ‘નાદબ્રહ્મ નિત્ય છે’ એમ જ કહેવામાં આવેલું છે તેનો વિરોધ પણ થતો નથી.)

(જે કાલમાં દેવો વિગેરે એકઠા થાય છે) તે કાલ પણ આધિદૈવિક છે એમ જાણાવવા માટે મૂલ શ્લોકમાં ‘સવન’ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે. (આ સાતમું યુગલ છે, તેથી આ યુગલમાં કહેલી લીલા મધ્યાહ્ન કાલની હોવાથી ‘સવન’ પદ મધ્યાહ્નના અર્થમાં વાપરવામાં આવેલું છે. દિવસમાં ત્રણ સવન હોય છે:- પ્રાતઃ સવન, માધ્યંદિન સવન અને તૃતીય સવન. ‘સવન’ શબ્દ વૈદિક કર્મને લગતો હોવાથી તે આધિદૈવિક કાલનું સૂચન કરે છે.) દેવો વિગેરે દિવસના ત્રણેય કાલમાં તે વેણુનાદનો વિચાર કરીને (તે ન જાણવાથી મૂર્છા પામે છે.) ઈન્દ્ર સાત્વિક છે, મહાદેવ તામસ છે, અને બ્રહ્મા રાજસ છે, આ ત્રણ જે દેવોના અગ્રેસરો છે તે બધાય દેવો ત્રણ ગુણોવાળા છે. કવિએ નાદમાં નિપુણ હોય છે, (છતાં પણ મૂર્છા પામે છે.) ઈન્દ્ર, ખરેખર, ત્રણ લોકનો અધિપતિ છે, અને તેનું ચિત્ત હંમેશા નાદમાં રહેલું હોય છે. મહાદેવ તો નાદશાસ્ત્રના રચનાર છે. બ્રહ્મા તો બંનેયના ગુરુ છે, તેથી જ બ્રહ્માને માટે ‘પરમેષ્ઠી’ એ પદ વાપરવામાં આવ્યું છે. આ બધા દેવોનું ચિત્ત બીજામાં ન હતું એમ જાણાવવા માટે ગોપીજન કહે છે કે ‘આનતકન્ધરચિત્તા:’, જેમની ગરદન નમેલી છે અને જેમનું ચિત્ત વશ થએલું છે. અંદરની ભાવના બહાર દેખાડવાને માટે ‘આ’ ચારે તરફથી ‘નતા’ નમેલી છે ‘કન્ધરા’ ગરદન જેમની, અને વશ થએલું છે ચિત્ત જેમનું એવા દેવો છે. ચિત્ત ગ્રહણ કરનારું છે. અહિં સર્વ તરફથી નમન કહેવામાં આવેલું છે. આ બધા દેવો પણ તત્ત્વનો નિશ્ચય કરી શક્યા નહિ. ‘તેઓ બેદરકારીથી કેટલોક વખત વિચાર કરી, જ્ઞાન નહિ થતાં છાનામાના બેસી રહ્યા હશે’ એમ પણ ન માનવું, કારણ કે તેઓ ચિંતાથી મૂર્છા પામ્યા, અથવા તો વેણુનાદથી મોહિત થઈ મૂર્છા પામ્યા. તેથી જ ‘આ

નાદનો આભાસ હશે' એ પક્ષનું પણ અંડન થઈ ગયું, કારણ કે આ નાદ અલૌકિક રસ ઉત્પન્ન કરનારો છે. ('આ નાદનો આભાસ છે, ગ્રામ્ય નાદ છે, તેથી દેવો જેવા મહાન્ પુરુષોની આમાં પ્રવૃત્તિ થતી નથી'—આ પ્રમાણેની કલ્પના ખોટી છે, કારણ કે આ નાદ દેવો વિગેરેને મોહ ઉત્પન્ન કરે છે. દેવોને આ નાદનું જ્ઞાન થતું નથી તેનું કારણ એ છે કે આ નાદ અલૌકિક રસ ઉત્પન્ન કરે છે. આ નાદ અલૌકિક રસ ઉત્પન્ન કરે છે તેથી જ દેવોનું તેનું જ્ઞાન થતું નથી, કાંઈ નાદમાં ન્યૂનતા નથી.) ૧૪-૧૫.

બીજાઓની વાત જવા દો; અધર રસને જાણનારાં એવાં આપણામાં જ વેણુનાદ ફેરફાર કરે છે એમ પહેલાંની માફક 'નિજપદાબ્જદલૈઃ' એ યુગલમાં ગોપીજન કહે છે :

નિજપદાબ્જદલૈર્ધ્વજવજનીરજાકૃતિવિચિત્રલલામૈઃ ।

પ્રજભુવઃ શમયન્ ખુરતોદં વર્ષધુર્યગતિરીરિતવેણુઃ ॥૧૬॥

પ્રજતિ તેન વયં સવિલાસવીક્ષણાર્પિતમનોભવવેગાઃ ।

કુજગતિં ગમિતા ન વિદ્યામઃ કશ્મલેન કબરં વસનં વા ॥૧૭॥

ઘજા, વજા અને કમલની આકૃતિ જેમાં છે તેવા વિચિત્ર ચિહ્નોવાળા પોતાના ચરણકમલના તળીઆંના ભાગથી પ્રજભૂમિને પશુઓની ખરીથી થએલી પીડા મટાડતા, અને ઉત્તમ આખલાના જેવી ગતિવાળા ભગવાન્ જ્યારે વેણુ વગાડતા ફરે છે, ત્યારે વિલાસવાળી દૃષ્ટિથી આપવામાં આવેલો છે કામનો વેગ જેમને અને તે વેણુનાદથી વૃક્ષની ગતિ પ્રાપ્ત થઈ છે જેમને એવાં આપણને મૂછાને લીધે અંબોડાનું કે વસ્ત્રનું ભાન રહેતું નથી. ૧૬-૧૭.

ભગવાન્ જ્યારે વેણુ વગાડતા ફરે છે ત્યારે તે નાદને લીધે વૃક્ષની ગતિને, સ્થાવરપણાને, પ્રાપ્ત થએલી આપણે બધી ગોપીઓને મૂછાને લીધે પહેરેલા વસ્ત્રનું કે કેશના અંધનું ભાન નથી, એ પ્રમાણે શ્લોકમાં પદોનો સંબંધ છે. આ વેણુનાદ આપણા માટે જ થાય છે એમ તેમની ચેષ્ટાથી અને આપણા અનુભવથી જણાય છે. (ભગવાનના કૃત્યથી તેમણે વિચારેલું પ્રયોજન જ સિદ્ધ થાય છે; તેથી જો આપણા માટે ભગવાને નાદ કર્યો ન હોત તો આપણને નાદના રસનો અનુભવ થાત નહિ. આ અભિપ્રાયથી 'અનુભવથી' શબ્દ કહેવામાં આવ્યો છે.) તેમાં જે ચેષ્ટા ગોકુલમાં રહેનારાઓ માટે જ થાય છે તે ચેષ્ટાથી વ્યાપી રહેલા ભગવાન્ બીજાઓનું-ગોકુલમાં ન રહેનારાઓનું-કાર્ય કેવી રીતે કરે? (ભગવાન્ પશુઓની ખરીથી થએલી ભૂમિની પીડાને જે મટાડે છે તે ત્યાં રહેનારાઓ સાથે ક્રીડા કરવા માટે જ મટાડે છે એમ તાત્પર્ય છે.) તેથી ગોપીજન કહે છે કે ભગવાન્ પ્રથમ-ગાય અને ગોપીઓની પહેલાં-

ગોકુલનું હિત કરનારા છે. ('ગોકુલનું' એટલે ગાયોનાં કુલો-સમૂહો જ્યાં છે તે સ્થલનું એવો અર્થ છે.) પોતાનાં જ જે બે ચરણારવિંદ તેમનાં દલોથી, દશ આંગળીઓથી અથવા તળીઆંના ભાગથી, નિરંતર પશુઓના ફરવાથી જેને દુઃખ થાય છે તેવી વ્રજભૂમિની પશુઓની ખરીથી થએલી પીડા મટાડતાં ભગવાન ફરે છે-એમ ધીરે ધીરે લીલાથી કરેલી ભગવાનની ગતિનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ('તળીઆંના ભાગથી' એટલે ચરણની અંગુલીઓને લીધે પડેલા તળીઆંના ભાગથી. 'ધીરે ધીરે' એટલે કે ધીરે ગતિથી જ પીડા દૂર થાય છે એમ તાત્પર્ય છે.) ખરીઓથી ઘવાએલા ભાગનું નિવારણ ગતિના વિલાસવાળા ચરણારવિંદના સ્પર્શથી કરવામાં આવેલું છે. (બધાં દુઃખનું નિવારણ આ બધાથી થાય છે; દુઃખના જુદા જુદા ભાગોનું નિવારણ ચરણના અંશોથી-ધ્વજા વિગેરે અંશોથી થાય છે.) આધ્યાત્મિક વિગેરે અંશનું નિવારણ ધ્વજા વિગેરેથી કરવામાં આવ્યું છે. આધિભૌતિક તામસ અંશનું નિવારણ ધ્વજાથી કરવામાં આવે છે, આધ્યાત્મિક રાજસ અંશનું નિવારણ વજ્રથી કરવામાં આવે છે, અને આધિદૈવિક સાત્ત્વિક અંશનું નિવારણ કમલની આકૃતિવાળા ચિહ્નથી કરવામાં આવે છે. (ધ્વજા નિર્ભયતા સૂચવે છે; તેથી દૈત્યોની સેનાએ કરેલી પીડાની સંભાવનાથી જે દુઃખનો અંશ થાય છે તેનું નિવારણ ધ્વજાથી થાય છે. વજ્ર પાપરૂપી પર્વતોનો નાશ કરે છે, તેથી પાપની સંભાવનાથી જે દુઃખનો અંશ થાય છે તેનું વજ્રથી નિવારણ થાય છે. કમલ એમ સૂચવે છે કે ભગવાનની સેવા સુખથી કરી શકાય એવી છે, તેથી સેવામાં દુઃખની સંભાવનાથી જે દુઃખનો અંશ થાય છે તેનું કમલથી નિવારણ થાય છે.) આ જ ચરણનાં પગલાંઓમાં વિચિત્ર ચિહ્નો છે. વ્રજભૂમિને ખરીઓથી થતી પીડા આ ચિહ્નોથી લૌકિક અને અલૌકિક રીતે-દષ્ટ પ્રકારથી અને અદષ્ટ પ્રકારથી-દૂર કરવામાં આવે છે.

વ્રજમાં ત્રણ મુખ્ય છે:- ભૂમિ, ગાયો અને ગોપીઓ. તેમાં ભૂમિનું દુઃખ ગતિથી દૂર કર્યું એમ વર્ણન કરીને, ગતિથી અને કાર્યથી ભગવાન ગાયોના દુઃખનું નિવારણ કરે છે એમ 'વર્ષ્મધુર્યગતિ:', ઉત્તમ આખલાના જેવી ગતિવાળા, એ વિશેષણથી ગોપીજન કહે છે. 'ઉત્તમ આખલો' એટલે ખાંધવાળો મોટો આખલો. તે જેમ લહેરથી ધીરે ધીરે જાય છે તેમ ભગવાન પણ લહેરથી ધીમે ધીમે જતા ગાયોનું પણ જાણે દુઃખ હરનારા હોય એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે 'ઈરિતવેણુ-વ્રજતિ', વેણુ વગાડતા ફરે છે. તે સમયે આપણ ગોપીઓને વેણુનાદથી કામ ઉત્પન્ન થતાં સ્થાવરપણું વધારામાં પ્રાપ્ત થયું એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે 'તેન'. વેણુનાદના સ્વભાવથી જ આપણને-ગોપીઓને-કામ થયો. તેમાં પણ

વિલાસવાળી દષ્ટિથી આપવામાં આવેલો છે કામનો વેગ જેમને એવાં આપણે થયાં. તેથી કામના વેગથી આપણે સ્તબ્ધ થયાં, ક્રિયા વિનાનાં થયાં, અને તે રીતે વૃક્ષની ગતિ પ્રાપ્ત કરી. વૃક્ષોને અંદરથી જ્ઞાન હોય છે, પણ આવું જ્ઞાન આપણને નથી એ જણાવવા ગોપીજન કહે છે કે ‘ન વિદામઃ’, અમને ભાન રહેતું નથી. ગાઢ નિદ્રામાં પણ લોકોને પદાર્થનું ભાન રહેતું નથી, તેથી ગોપીજનોને ગાઢ નિદ્રાથી તેવું થયું નથી એમ દર્શાવવા ગોપીજન કહે છે કે ‘કસ્મલેન’, મૂછાને લીધે. કસ્મલથી એટલે મૂછાથી. વસ્ત્રનું અને અંબોડાનું ભાન રહેવું એ સ્ત્રીઓને ઘણું જરૂરી છે. વેણુનાદના આરંભમાં જ આ થયું, તેથી ભગવાનની ગતિ, દષ્ટિ વિગેરેથી જે થયું તેનું અહિં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ૧૬-૧૭.

વેણુનાદથી હરિણીઓને જે ભાવના થઈ તે કહેવા પહેલાંની માફક ‘મણિધરઃ’ એ યુગલમાં ગોપીજન વેણુનાદનું વર્ણન કરે છે:

મણિધરઃ ક્વચિદાગણયન્ માલયા દયિતગન્ધતુલસ્યાઃ ।

પ્રણયિનોડનુચરસ્ય કદાસે પ્રક્ષિપન્ ભુજમગાયત યત્ર ॥૧૮॥

ક્વણિતવેણુરવવચ્ચિતચિત્તાઃ કૃષ્ણમન્વાસત કૃષ્ણગૃહિણ્યઃ ।

ગુણગણાર્ણમનુગત્ય હરિણ્યો ગોપિકા ઈવ વિમુક્તગૃહાશાઃ ॥૧૯॥

મણિ ધારણ કરનાર, કોઈ વાર ગાયોને ગણતાં, પોતાને પ્રિય ગંધવાળી તુલસીની માલા ધારણ કરનાર અને પ્રેમવાળા સેવકના ખભા ઉપર શ્રીહસ્ત રાખીને જ્યારે ભગવાન્ કદાચિત્ ગાન કરે છે, ત્યારે વગાડેલી વેણુના નાદથી જેમનાં ચિત્ત હરાએલાં છે એવી કૃષ્ણસાર હરણની સ્ત્રીઓ, હરિણીઓ, શ્રીકૃષ્ણની પાસે બેસે છે, અને ગુણોના સમૂહના સાગરની પાછળ જઈ ગોપીઓની માફક ઘરની આશા છોડી દઈને પ્રભુપરાયણ થઈ જાય છે. ૧૮-૧૯.

મણિઓ ગાયોનાં આધિદૈવિક રૂપ છે. (જેવા જેવા ગાયોના રંગ છે તેવા તેવા રંગના મણિઓ ભગવાનની વૈજયંતી માલામાં રાખવામાં આવેલા છે. તેથી મણિઓ ગાયોનાં આધિદૈવિક, એટલે દેવના સંબંધવાળા, સ્વરૂપો છે એમ તાત્પર્ય છે.) આ મણિઓને ભગવાન્ પોતાની અંદર રાખે છે તેથી તે ‘મણિધરઃ’, મણિ ધારણ કરનાર, કહેવાય છે. અથવા તો પ્રિયાઓનું સ્મરણ થાય તે માટે ભગવાન્ મણિ ધારણ કરે છે, કારણ કે મણિઓ પોતાની પ્રિયાઓનું સ્મરણ કરાવનારા છે. તેથી-મણિઓ ગાયોનાં આધિદૈવિક રૂપો હોવાથી-ભગવાન્ કોઈવાર મણિઓથી ચારે તરફથી ગાયો ગણે છે. આ ઉપરથી એમ સૂચવાય છે કે ગાયો અને તેમના ધર્મો ભગવાનમાં જ રહેલા છે, અને તેથી તેમને-ગાયોને-સંસાર રહેલો નથી.

તેથી જ ગોપિકાઓને પણ સંસાર રહેલો નથી. તેથી જ-ગાયોનાં આધિદૈવિક રૂપ ભગવાને ધારણ કરેલાં છે તેથી જ-હરિણીઓને પણ સંસાર રહેલો નથી. જ્યારે ભગવાન્ ગામનાં પશુઓનો ઉદ્ધાર કરે છે તો પછી તે વનનાં પશુઓનો પણ સારી રીતે ઉદ્ધાર કરશે, કારણ કે તે પણ પશુઓ જ છે, તેથી વનનાં પશુઓ શ્રીકૃષ્ણમાં આસક્ત થાય એ યોગ્ય છે.

પોતાને પ્રિય ગંધવાળી તુલસીની માલાથી ભગવાન્ જણાઈ આવે છે. જેમ ભગવાનને શ્યામ રંગ પ્રિય છે, સ્ત્રીઓનો સ્પર્શ પ્રિય છે, વેણુનો શબ્દ પ્રિય છે અને માખણનો રસ પ્રિય છે તેમ તુલસીની ગંધ પ્રિય છે. (આનંદનો રંગ શ્યામ હોવાથી ભગવાનને તે રંગ પ્રિય છે. સ્ત્રી અને વેણુ સુધાના આધાર હોવાથી ભગવાનને તેમનો સ્પર્શ તથા નાદ પ્રિય છે. માખણ એ અમૃતનું પાન કરાવનારી ગાયના દૂધનો સાર છે, તેથી તે ભગવાનને પ્રિય છે; અને તુલસીની ગંધ દિવ્ય છે તેથી તે ભગવાનને પ્રિય છે.) આ તુલસીની ગંધમાં રહેલી ઉત્તમતા કોઈ સાત્ત્વિક પુરુષોને અનુભવથી જણાએલી છે. આ પ્રમાણે તુલસી આવા ઉત્તમ ગંધવાળી છે, તેથી ભગવાન્ તેની માલા ધારણ કરે છે. તેથી-તુલસી પ્રિય હોવાથી ભગવાન્ તેની માલા ધારણ કરે છે તેથી-જ્યારે આપણે પણ ભગવાનને પ્રિય થઈશું ત્યારે ભગવાન્ આપણને અથવા આપણા ધર્મોને પણ ધારણ કરશે, આવા હેતુથી કૃષ્ણસાર હરણની સ્ત્રીઓની અહિં જણાવેલી પ્રવૃત્તિ થાય છે. કૃષ્ણસાર હરણનો તો વેદમાં ઉપયોગ થએલો છે, તેથી ભક્તિમાં વિનિયોગ કરવાને માટે તેમની સ્ત્રીઓની-હરિણીઓની-પ્રવૃત્તિ થાય છે.

વળી, પ્રણયીના-ઘણા પ્રેમવાળા-સેવક ગોપના ખભા ઉપર ભગવાન્ શ્રીહસ્ત રાખે છે. (પ્રેમવાળાના ખભા ઉપર ભગવાન્ શ્રીહસ્ત રાખે છે, તેથી આપણે-ગોપીઓ-પ્રિય થઈશું ત્યારે આપણને પણ ધારણ કરશે એમ તાત્પર્ય છે.) ‘કદા’ એટલે કદાચિત્ (ભગવાન્ એ પ્રમાણે શ્રીહસ્ત રાખે છે.) અથવા તો ‘આશા હોય ત્યારે ભૂતકાલની માફક’ (પાણિનિ ૩।૩।૧૩૨) એ સૂત્ર પ્રમાણે ‘ભગવાન્ ક્યારે ગાન કરે’ એમ ગોપાલ મધ્યમાં ગાનની ઈચ્છા કરે છે. જેમ ગોપાલમાં ભગવાન્ માટે તેવો સ્નેહ અને સેવાધર્મ હોવાથી ભગવાન્ તે પ્રમાણે કરે છે, અર્થાત્ તેમના ખભા ઉપર શ્રીહસ્ત રાખે છે, તેમ અમારા પણ સ્નેહ અને સેવાધર્મને લીધે તે પ્રમાણે થશે-અમને અથવા અમારા ધર્મને ધારણ કરશે-એમ ગોપિકાઓની માફક હરિણીઓ પણ તેમ થાય તે માટે સ્નેહથી ભગવાનનું ભજન કરે છે. હરિણીઓને દેહનું સ્મરણ નહિ રહેવાથી, ભગવાન્ વિજાતીય છે તેથી તેમની સાથે કામ ન થાય એવું ભાન તેમને નથી. તે જ સમયે વેણુ વગાડ્યો. અકસ્માત્ મનને હરણ કરનારો અમુક શબ્દ થાય તે

કવણન, વેણુનો નાદ, કહેવાય છે. તે શબ્દ જ્યારે વેણુમાંથી નીકળ્યો ત્યારે તેના-વેણુના-સંબંધથી બીજા પણ શબ્દો ચિત્તને હરનારા થશે, એ હેતુથી ‘રવ’ પદ વાપરવામાં આવ્યું છે. (જે અવાજ પાછળથી થાય છે તે ‘રવ’ કહેવાય છે. પહેલાંનો અવાજ ચિત્તને હરનારો હોવાથી પછીનો પણ અવાજ તેવો જ છે એમ જણાવવા ‘રવ’ શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે એમ તાત્પર્ય છે.) શબ્દથી હરણો વશ કરવામાં આવે છે એ વાત પ્રસિદ્ધ જ છે. હમણાં જ આપણો ઉપયોગ થશે એવી દૃઢ માન્યતા વેણુના નાદથી ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તે વેણુનાદ મનને ઠગનારો, હરનારો, છે. (‘ઉપયોગ’ એટલે નાચિકાના જેવો ઉપભોગ એ પ્રમાણે અર્થ છે. વેણુનાદનો એવો પ્રભાવ છે કે હરિણીઓમાં પણ આવો ભાવ થાય છે તો પછી બીજી સ્ત્રીઓની વાત જ શી કરવી? એમ તાત્પર્ય છે.) તેથી વેણુનાદથી જેમનાં ચિત્ત હરાએલાં છે એવી હરિણીઓ શ્રીકૃષ્ણની પાસે બેઠી, જેમ મરણ પામતા સુધી ઉપવાસ કરીને માણસ બેસે છે તેમ તે હરિણીઓ શ્રીકૃષ્ણની પાસે બેઠી.

અરે! બીજાની સ્ત્રીઓ બીજાને ઘેર બીજાની પાસે કેમ બેઠી? આ પ્રમાણે શંકા થાય તો તેનું સમાધાન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘કૃષ્ણગૃહિણ્ય:’, આ હરિણીઓ કૃષ્ણની, કૃષ્ણસાર મૃગની, ગૃહિણીઓ છે. આ કૃષ્ણ છે તેથી તેઓ કૃષ્ણનાં ગૃહિણી થયાં. (કૃષ્ણસાર હરણ કૃષ્ણ-કાળો-છે, અને ભગવાન્ પણ કૃષ્ણ-કાળા-છે, તેથી હરિણીઓ કૃષ્ણ ભગવાનની ગૃહિણીઓ થઈ એમ તાત્પર્ય છે.) અથવા તો હરિણીઓનાં ચિત્ત હરાએલાં હોવાથી તેઓ રૂપને ભૂલી માત્ર શબ્દમાં આસક્ત થઈ. અથવા તો પ્રભાવવાળા વેણુનાદને લીધે કાળાં હરણમાં પણ ‘આ કૃષ્ણ છે’ એવી બુદ્ધિ થવાથી હરિણીઓ શ્રીકૃષ્ણની પાસે જ બેઠી.

અરે! ‘કૃષ્ણસાર’માં-કાળા હરણમાં-પણ કૃષ્ણનો ભ્રમ થાય છે તેથી અને તેમાં ‘કૃષ્ણ’ શબ્દ પણ રહેલો છે તેથી તે કૃષ્ણસાર હરણને ત્યજીને શ્રીકૃષ્ણની પાસે આ હરિણીઓ કેમ આવી? આ પ્રમાણે શંકા થતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ગુણગણાર્ણમ્’, ગુણોના સમૂહોના સાગર. (આ=ચારે તરફ, ઋણમ્=જલ; ચારે તરફ જેમાં જલ છે તે આ+ઋણ= આર્ણ= સમુદ્ર કહેવાય છે.) કૃષ્ણસાર હરણમાં એક અથવા બે ગુણો હોય, (પણ ભગવાન્ તો ગુણોના સાગર છે.) તેથી જ્યાં ભગવાન્ જાય છે ત્યાં જ તેમની પાછળ જઈને બધીય હરિણીઓએ ઘરની આશા ત્યજી દીધી, અર્થાત્ ‘અમે ઘેર જઈશું’ એવી આશાનો પણ તેમણે ત્યાગ કર્યો.

(હરિણીઓએ ભગવાનની પાસે રહીને ભગવદ્રસનું પાન કર્યું; તેથી તેમને ભગવદ્રસનો સ્વાદ પ્રાપ્ત થવાથી ગોપીઓની માફક તેઓ તેમાં જ-ભગવાનમાં જ-



આસક્ત થઈ ગઈ. આ હરિણીઓનાં નેત્રો પોતાની પ્રિયાઓનાં નેત્રો જેવાં છે એમ જોવાથી ભગવાન્ જેવા ભાવથી પોતાની પ્રિયાઓને જુએ છે તેવા જ ભાવથી આ હરિણીઓને પણ જુએ છે. તેથી આ હરિણીઓમાં પણ તે ગોપીઓના જેવો જ ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, અને તે જ પ્રમાણે ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે. તેથી જ આ નાદ માટે ‘રવ’ શબ્દ વાપરવામાં આવ્યો છે. ‘ર’ એટલે અગ્નિ, અને ‘વ’ એટલે અમૃત; અર્થાત્ ‘રવ’ શબ્દથી અગ્નિ અને અમૃતનો અર્થ જણાવવામાં આવ્યો છે, કારણ કે તે રવનું શ્રવણ થતાં ઘણી જ આર્તિ (અગ્નિ) થાય છે અને તે તાપની શાંતિ (અમૃત) પણ થાય છે. તેથી ગોપીજનો અહિં ‘ગોપિકા ઈવ’ એ પ્રમાણે પોતાનો દાખલો આપે છે તે યોગ્ય છે.) ૧૮-૧૯.

આ પ્રમાણે નવ પ્રકારે વેણુનાદનું વર્ણન કરીને, ગુણાતીત પ્રકારે ત્રણ રીતે તેનું વર્ણન કરતાં ગોપીજન ‘કુન્દદામ’ એ યુગલમાં કહે છે કે ભગવાને વેણુનાદથી જગતને જ વશ કર્યું. (‘હે ગૌતમ! વાયુ તેનું સૂત્ર છે’ બૃ.ઉ. ૩।૭।૨ એ શ્રુતિ પ્રમાણે વાયુ સર્વનું મૂલ છે, અને તેથી વાયુ વશ થતાં જ આખું જગત્ જ વશ થાય એમ તાત્પર્ય છે.)

**કુન્દદામકૃતકૌતુકવેશો ગોપગોધનવૃતો યમુનાયામ્ ।**

**નન્દસૂનુરનઘે તવ વત્સો નર્મદઃ પ્રણયિનાં વિજહાર ॥૨૦॥**

**મન્દવાયુરૂપવાત્યનુકૂલં માનયન્ મલયજસ્પર્શેન ।**

**બન્દિનસ્તમુપદેવગણા યે વાદ્યગીતબલિભિઃ પરિવદ્રુઃ ॥૨૧॥**

હે પાપરહિત યશોદા! ડોલરની માલાથી જેમણે રમતનો વેશ ધારણ કરેલો છે, ગોપ અને ગાયોરૂપી ધનથી જે વીંટાએલા છે, અને પોતાનામાં સ્નેહ રાખનારને જે સુખ આપનારા છે એવા નંદના પુત્ર અને તમારા વત્સ જ્યારે યમુનાજીમાં વિહાર કરે છે ત્યારે ચંદનના સ્પર્શવાળો મંદ વાયુ સન્માન કરતો અનુકૂલ રીતે વાય છે, અને જે ઉપદેવના સમૂહો છે તેઓ બંદિજનો થઈ વાજિંત્ર, ગીત અને પૂજાનાં સાધનો સહિત તેમની આસપાસ વીંટાઈ જાય છે. ૨૦-૨૧.

જ્યારે ભગવાન્ યમુનાજીમાં વિહાર કરતા હતા ત્યારે ગંધર્વ વિગેરે ઉપદેવના સમૂહો વીંટાઈ ગયા એ પ્રમાણે શ્લોકમાં પદોનો સંબંધ છે. જ્યારે ભગવાન્ યમુનાજીમાં વિહાર કરે છે ત્યારે પણ પહેલાંની સ્થિતિમાં અર્થાત્ રમતનો વેશ ધારણ કરવાની સ્થિતિમાં, અને પછીની સ્થિતિમાં અર્થાત્ જલક્રીડા વિગેરે વિહારની સ્થિતિમાં જેની જરૂર છે એવો વેણુનાદ ભગવાન્ કરે છે, કારણ કે આ વેણુનાદનું પ્રકરણ છે. અને વેણુનાદનો જુદો પ્રકાર નહિ હોવાથી તે-વેણુનાદ-સ્પષ્ટ શબ્દોમાં

કહેવામાં આવ્યો નથી. ‘યમુનાયામ્’, યમુનાજીમાં, એ સાતમી વિભક્તિ સમીપપણા ના અર્થમાં વાપરવામાં આવેલી છે, અથવા તો સ્થાનના અર્થમાં વાપરવામાં આવેલી છે. કારણ કે ઉનાળામાં ગાયો અને ગોપાલો જલમાં રહે એ સંભવે છે. યમુનાજીમાં વિહાર એટલે ગોપો સાથે જલક્રીડા, અને ગાયોને નવરાવવાનું વિગેરે કાર્ય. ઉદ્દેગની શાંતિ થાય તે માટે સર્વત્ર વેણુનાદ સહકારી-સાથે કાર્ય કરનારો-છે.

તે સમયે ભગવાને અલંકારો ધારણ કરેલાં નહિ હોય એમ શંકા થતાં ગોપીજન ‘કુન્દદામ’ ઈત્યાદિ શબ્દોથી અલંકારનું વર્ણન કરે છે. વસ્ત્ર, આભરણ વિગેરે અલંકારો તો હશે જ પરંતુ પુષ્પના અલંકારો નહિ હોય (સવારમાં શૃંગાર કરતાં પુષ્પોના અલંકાર ધરેલા હોય, પણ તે કરમાવાથી ઉતારી લીધા હશે, તેથી પુષ્પના અલંકારો નહિ હોય એમ ભાવ છે); આ પ્રમાણે શંકા થાય, તેથી પુષ્પના અલંકારોનું જ વર્ણન કરવામાં આવે છે. ડોલરની માલાથી કરેલો છે રમતનો વેશ જેમણે એવા ભગવાન છે. (‘કરેલો’ શબ્દ એમ બતાવે છે કે ભગવાને પુષ્પોના બીજા અલંકારો ધારણ કરેલા છે.) માલાઓ બાજુબંધ વિગેરે અનેક પ્રકારની હોય છે. આ માલાઓ થી એવા પ્રકારનો-શૃંગાર રસમાં ઉપયોગી-વેશ કરવામાં આવે છે કે તે વેશ ઘણો અદ્ભુત થાય. અહિં તો જેનાથી હાસ્ય રસ ઉત્પન્ન થાય તેવો જ વેશ કરવામાં આવે છે. (શ્લોકમાં જે ‘કૌતુક’ પદ છે તે એમ સૂચવે છે કે આ વેશ હાસ્યરસમાં ઉપયોગી છે.)

અરે! ભગવાને આવી પ્રાકૃત-ગામડીઆઓની-લીલા કેમ કરી? આ પ્રમાણે શંકા થતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘નન્દસૂનુઃ તવ વત્સઃ’, નંદના પુત્ર અને તમારા વત્સ. જે લીલાથી ભગવાન નંદના પુત્ર થાય છે તે જ લીલાથી પ્રાકૃત લીલા પણ કરે છે. (‘એવં નિગૂઢાત્મગતિઃ’, ભાગ. ૧૦।૧૨।૧૯, એ શ્લોકમાં કહેવામાં આવ્યું છે કે ભગવાન ગોપના પુત્ર છે અને આવી ગ્રામ્યલીલા કરે છે.) યશોદાજીને માટે ‘અનઘે’, હે પાપરહિત સ્ત્રી, એ પ્રમાણે જે સંબોધન કરવામાં આવ્યું છે તેનું પ્રયોજન એ કે યશોદાજીને ક્રોધ ન થાય અને વિશ્વાસ રહે. (પ્રજરાજકુમાર ગાયોને નવરાવવાનું વિગેરે કાર્ય કરે છે-આ પ્રમાણે કહેવાથી યશોદાજીને ક્રોધ અને અવિશ્વાસ થાય. આ ન બને એટલા માટે ગોપીજનો ‘અનઘે’ એ પ્રમાણે સંબોધન કરે છે, કારણ કે જે ‘અનઘા’-પાપરહિત-છે તેને ક્રોધ અને અવિશ્વાસ થતો નથી એમ તાત્પર્ય છે.) વળી, જે લીલાથી ભગવાન નંદના પુત્ર થયા તે લીલાથી જ તમારા વત્સ પણ થયા છે. આ ઉપરથી એમ સૂચવાય છે કે તમે-યશોદાજી-ગાયરૂપ છો અને તેથી સર્વ ગુપ્ત રસને જાણતાં નથી. જો તેમ ન હોત-જો યશોદાજી ગુપ્ત રસને જાણતાં હોત-તો ભગવાનનું માહાત્મ્ય જાણવાથી તે ભગવાનને ખાંડણીઆ સાથે બાંધવાની લીલા ન

કરત. ‘અનઘે’-હે પાપરહિત, નિર્દોષ, સ્ત્રી-એ સંબોધન ‘નન્દસૂનુઃ’ અને ‘તવ વત્સઃ’ એ બેની વચ્ચે મૂકવામાં આવેલું હોવાથી એમ જણાય છે કે નંદ અને યશોદાજી એ બંનેય દોષરહિત છે. ભગવાન્ આવાં નિર્દોષ યશોદાજીના પુત્ર છે એમ કહેવાથી ભગવાન્ પણ દોષરહિત છે એમ જણાવવામાં આવ્યું છે.

‘પ્રણયિનાં નર્મદઃ’ એ આગળનું વિશેષણ એમ દર્શાવે છે કે ભગવાન્ પૂર્ણગુણવાળા અને અધિક છે. (પોતાનામાં સ્નેહ રાખનારને સુખ આપવું એ પુરુષોત્તમનો ધર્મ છે, તેથી તે પૂર્ણગુણવાળા છે એમ તાત્પર્ય છે. આ તો ‘પ્રણયિનાં નર્મદઃ’ એ વિશેષણનો તાત્પર્ય આપવામાં આવ્યો. હવે તેનો વાચ્યાર્થ આપવામાં આવે છે.) વળી, ભગવાન્ ‘પ્રણયિનાં નર્મદઃ’ છે, અર્થાત્ જેઓ ભગવાનમાં સ્નેહવાળા છે તેઓ જે લીલા કરવાથી ભગવાનમાં સ્નેહવાળા થાય તે જ લીલા ભગવાન્ કરે છે. (ભગવાન્ નંદના પુત્ર છે તેથી તે પ્રાકૃત લીલા કરે છે; અને ભગવાન્ પોતાનામાં સ્નેહ રાખનારને સુખ આપે છે તેથી પણ તે પ્રાકૃત લીલા કરે છે. આ પ્રાકૃત લીલા કરવાનાં બે કારણો દર્શાવવામાં આવ્યાં છે.) આથી સર્વજ્ઞ-નંદસૂનુત્વમાં પણ-કારણ કહેવામાં આવ્યું. લીલામાં આસક્તિથી ભગવાન્ જે ક્રીડા કરે છે તે જ વિહાર કહેવામાં આવે છે. અહિં આ વિહાર જલક્રીડા, નૃત્યક્રીડા અને વેણુ વગાડવાની ક્રીડારૂપે છે એમ જાણવું. આમ જો ન હોય તો-આ ત્રણેય ક્રીડા કહેવી ન હોય અને ફક્ત જલક્રીડા જ કહેવી હોય તો-વાજિંત્ર વિગેરેનો ઉપયોગ થાય નહિ. વિદ્યાવાળાઓને વશ કરવાના છે; તેમાં વિદ્યા ઉત્પન્ન કરનાર વાયુ છે, (જ્ઞાન વિદ્યાથી પ્રાપ્ત થાય છે તેથી જ્ઞાન પણ વિદ્યા છે. વાયુ વિદ્યાવાળાઓમાં વિદ્યા ઉત્પન્ન કરનારો-ગાન ઉત્પન્ન કરનારો-છે. મૈત્રી ઉપનિષદ્માં અને સંગીતશાસ્ત્રમાં જણાવ્યા પ્રમાણે વાયુથી શબ્દની ઉત્પત્તિ થાય છે.) અને દેવો તેના આધાર થએલા છે, (અર્થાત્ ગાનના આધારભૂત, ગાન કરનારાઓ થએલા છે.) તેમાં પણ ઉપદેવના સમૂહો અને બંદીઓ બહાર વિદ્યા પ્રકટ કરવામાં તત્પર હોય છે. (દેવોમાં પણ આ ઉપદેવો બહાર જઈને સર્વ સ્થલે આજીવિકાને માટે વિદ્યા પ્રકટ કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.) તેથી બીજાઓ કરતાં તેમનામાં વિશેષ-ખાસ ગુણ-કહેવામાં આવેલો છે.

વિદ્યાનું કારણ બનેલા વાયુનું ગોપીજન પ્રથમ વર્ણન કરે છે. મંદ વાયુ જેવી રીતે અનુકૂલ થાય તેવી રીતે વાય છે. અનુકૂલ એટલે યમુનાજીના તટની પાસે અને હિત કરનાર. આ વિશેષણથી વાયુની શીતલતા વર્ણવવામાં આવી. ‘ચંદનના સ્પર્શવાળો’ એ વિશેષણથી વાયુના સુગંધિપણાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. આ ઉપરથી એમ જણાય છે કે આ વાયુ દક્ષિણ દિશાનો છે. અથવા તો ભગવાનના

સ્વરૂપને લગાડેલા ચંદનના સંબંધથી વાયુને વધારે શીતલતાવાળો જણાવેલો હોવાથી તે અનુકૂલ થાય છે. વાયુને ચંદનનો સ્પર્શ થાય છે અથવા તો ચંદનના જેવો સ્પર્શ થાય છે. આ પ્રમાણે હોવાથી તે વાયુ ત્યાં રહેલા-ભગવાનની પાસે રહેલા-બધાયને ભગવદ્ભાવ પ્રાપ્ત કરાવશે. ('અનેન'થી આરંભીને 'ઈતિનિરૂપિતમ્' સુધી એક પક્ષ જણાવવામાં આવ્યો છે, અને 'ભગવત્સ્વરૂપે' ઈત્યાદિમાં બીજો પક્ષ જણાવવામાં આવ્યો છે. પહેલાં પક્ષમાં સુગંધિપણું જણાવવામાં આવ્યું, અને બીજા પક્ષમાં શીતલતા અને સુગંધિપણું એ બે જણાવવામાં આવ્યાં છે. તેથી તે વાયુ અનુકૂલ છે, અર્થાત્ દિત કરનારો છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. પહેલા પક્ષમાં વાયુને ચંદનનો સ્પર્શ થાય છે, તેથી તે સુગંધિ થાય છે એમ તાત્પર્ય છે. બીજા પક્ષમાં વાયુને ચંદનના જેવો સ્પર્શ થાય છે, તેથી તે શીતલ અને સુગંધિ થાય છે. પહેલા પક્ષમાં આ વાયુ ભગવાન માં પણ ભાવ જાગૃત કરે છે; જ્યારે બીજા પક્ષમાં ભગવાનની પાસે રહેલા બીજાઓમાં જ ભાવ જાગૃત કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.)

'માનયન્' એટલે સન્માન કરતો (વાયુ). પોતાના ત્રણ ગુણોથી જેવી રીતે ભગવાનનું સન્માન થાય તેવી રીતે જ તે વાયુ વાય છે, આ પ્રમાણે તે વાયુ ભગવાનને ઘણો વશ છે એમ જણાવવામાં આવ્યું. ઉપદેવના સમૂહો-ગંધર્વો વિગેરે-બંદીઓ એટલે કીર્તિનું નિરૂપણ કરનારા થયા, અને ગાન કરનારા પણ થયા. ('ગાયકાશ્ચ' એમાં 'ચ' છે તેથી એમ જણાય છે કે ગંધર્વો વિગેરે વાજિંત્ર વગાડનારા અને પૂજા કરનારા પણ થયા. વાજિંત્ર વિગેરે સાહિત્ય કહેવામાં આવેલું છે, તેથી ગંધર્વો તેવા થઈને ભગવાનની ચારે બાજુ વીંટાઈ ગયા એમ તાત્પર્ય છે.) 'યે', જે, પદ એમ જણાવે છે કે ગંધર્વો વિગેરે ભગવદીય છે. તે ગંધર્વો તામસ વાજિંત્ર, રાજસ ગીત અને સાત્ત્વિક પૂજાનાં સાધનો સહિત ભગવાનની આસપાસ વીંટાઈ ગયા, અને સર્વ સ્થલે જરૂરી હોય એવી સેવા કરવા લાગ્યા. ૨૦-૨૧.

આ પ્રમાણે ગુણાતીતના ત્રણ પ્રકારમાં પ્રકીર્ણ-પરચુરણ-પ્રકાર વર્ણવીને ગોપીજન 'વત્સલઃ' ઈત્યાદિ બે યુગલમાં ફક્ત ભગવાનનું જ ચરિત્ર કહે છે. (ગુણાતીતના ત્રણ પ્રકાર વર્ણવવાના હતા. તેમાંનો એક પરચુરણ પ્રકારનો ભેદ ગયા યુગલમાં વર્ણવવામાં આવ્યો. અહિં ભાવના ભેદથી યુગલ બોલનાર ગોપીજનોમાં ભેદ છે. સ્વરૂપથી ભેદ તો સામાન્ય રીતે હોય છે એમ પહેલાં પણ કહેવામાં આવ્યું હતું. તેથી 'નિરૂપ્ય આહુઃ' એમાં સમાન કર્તા છે એમ જાણવું.)

વત્સલો વ્રજગવાં યદગધ્રો વન્દ્યમાનચરણઃ પથિ વૃદ્ધૈઃ ।

કૃત્સ્નગોધનમુપોહ્ય દિનાન્તે ગીતવેશુરનુગેડિતકીર્તિઃ ॥૨૨॥

ઉત્સવં શ્રમરુચ્યાપિ દશીનામુત્તયન્ ખુરજશ્શુરિતસ્રક્ ।

દિત્સયૈતિ સુહૃદાશિષ એષ દેવકીજઠરભૂરુડુરાજઃ ॥૨૩॥

પર્વત ધારણ કરનારા હોવાથી વ્રજ અને ગાયો ઉપર પ્રેમવાળા, રસ્તામાં વૃદ્ધો જેમનાં ચરણારવિંદને નમન કરે છે તેવા, વેણુ વગાડતા, સેવકો જેમની કીર્તિની પ્રશંસા કરે છે એવા, ગાયોની ખરીઓની રજથી છવાઈ ગએલી માલાવાળા, દેવકીના જઠરમાં રહેલા આ ચંદ્ર દિવસના અંતે સર્વ ગોધનને પાસે લાવી, શ્રમની કાંતિથી પણ ગોપીઓની દૃષ્ટિને ઉત્સવ કરતા મિત્રોને આશીર્વાદ આપવાની ઈચ્છાથી પધારે છે. ૨૨-૨૩.

ભગવાન્ ગાયોના સમૂહને ગોષ્ઠમાં-નેસડામાં-જે લાવે છે તે કૃપાને લીધે લાવે છે. જો આમ ન હોય-જો ભગવાન્ તેવી કૃપા ન કરે-તો એક જ લીલામાં આસક્ત થએલી ગાયોને મોક્ષ મળે, અને ગોપિકાઓને પણ મોક્ષ મળે. (પ્રત્યેક ભગવાનની દૃષ્ટિ વિગેરે લીલાનો રસ અંત વિનાનો મહારસ છે, તેથી એક રસમાં લીન થએલીઓને પોતાનું પણ ભાન ન રહે તો પછી બીજાનું તો ભાન ક્યાંથી જ રહે એમ તાત્પર્ય છે. ‘વ્રજગવામ્’ પદમાં ‘વ્રજ’ શબ્દનો અર્થ ગોપીઓ છે એવા આશયથી શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે ગોપિકાઓને પણ મોક્ષ મળે.) પરંતુ ભગવાન્ કૃપાને લીધે જ તેઓને-ગાયો અને ગોપીજનોને-ભજનાનંદનો અનુભવ કરાવવા તે પ્રમાણે કરે છે. આનું કારણ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘યદગધઃ. યત્’ જે કારણને લીધે ‘અગં’ પર્વતને ‘ધારયતિ’ ભગવાન્ ધારણ કરે છે તે કારણથી દિવસના અંતે ગાયોને વ્રજમાં લાવે છે. જો ગાયો અને ગોપીજનોને ભજનાનંદ આપવો ન હોત તો ભગવાન્ ગોવર્ધન પર્વતને ધારણ ન કરત. આ-ગોવર્ધન ધારણ કરવારૂપી-ભગવાનનું માહાત્મ્ય સર્વને જાણીતું છે એમ દર્શાવવા માટે ગોપીજન કહે છે કે ‘પથિ વૃદ્ધૈર્વન્ધમાનચરણઃ’, રસ્તામાં વૃદ્ધો જેમનાં ચરણારવિંદને નમન કરે છે એવા ભગવાન્ છે. વૃદ્ધો સર્વ પ્રકારે નિપુણ હોય છે. જે બહુ જાણનારાઓ છે તે જ ભગવાનની સેવા કરી શકે. તેથી બધાંય ગોધનને વનલીલામાંથી છૂટું પાડી અથવા પાસે એકઠું કરીને ભગવાન્ દિવસને અંતે પધારે છે. ‘દિનાન્તે’ એટલે દિવસને અંતે (ભગવાન્ પધારે છે), કારણ કે પછીથી રાત્રીએ વનમાં રહેવું યોગ્ય નથી, અને ભગવાનને બીજી લીલા-રાત્રીઓ વનમાં સ્વામિનીઓ સાથે લીલા-કરવાની ઈચ્છા છે. શ્રમ દૂર કરવા માટે અને વ્રજમાં રહેલાંઓને પોતે પધારે છે એમ જણાવવા ભગવાન્ વેણુ વગાડે છે. આ વેણુનાદનું કાર્ય-દિવસનો તાપ મટાડવાનું કાર્ય-આગળના યુગલમાં કહેવામાં આવશે.

ભગવાન્ ઇક્ત ગોપીઓને જ કૃતાર્થ કરે છે એમ નથી, પરંતુ ગોપોને પણ કૃતાર્થ કરે છે એમ દર્શાવવા ગોપો ભગવાનની સ્તુતિ કરે છે એમ ‘અનુગેડિતકીર્તિઃ’, સેવકોથી જેમની કીર્તિની પ્રશંસા થાય છે, એ વિશેષણથી ગોપીજન કહે છે. અનુગોથી-સેવકોથી-પ્રશંસા કરાએલી છે જેમની એવા ભગવાન્ છે. આથી કહેવામાં આવ્યું કે જેમ દિવસે ગોપીઓ ભગવાનની કીર્તિનું ગાન કરે છે તેમ રાત્રે ગોપો પણ કરે છે. જો આ પ્રમાણે ન હોય તો બધાંનો નિરોધ થાય નહિ.

આવા ભક્તોનું કાર્ય ભગવાન્ પોતે જ જાણે છે તેથી તે પોતે જ કરે છે, નાદથી કરતા નથી, એમ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ઉત્સવમ્’. શ્રમની કાંતિથી વ્રજમાં રહેલાંઓની દષ્ટિને ઉત્સવ કરતા આશીર્વાદ આપવાની ઈચ્છાથી ભગવાન્ પધારે છે, આ પ્રમાણે શ્લોકમાં પદોનો સંબંધ છે. શ્રમવાળી કાંતિ. ભગવાનને શ્રમ ન થાય એ મત પ્રમાણે ભગવાનનો શ્રમ માત્ર દેખાડવાનો જ છે, ખરેખરો નથી. ભગવાનને શ્રમ થાય છે એ સિદ્ધાંત છે, કારણ કે ‘ભર્તા હોઈ ભરાતાં ધારણ કરે છે’. ‘એક દેવ બહુ પ્રકારે રહેલા છે’ ‘જ્યારે ભારથી તંદ્રા થાય છે ત્યારે તે ભાર ધારણ કરવા માટે કોઈને નીમી અદશ્ય થઈ જાય છે’ ઈત્યાદિ શ્રુતિઓ અને ભગવાન્ સર્વ ધર્મનો આશ્રય છે તે સિદ્ધાંત તે પ્રમાણે સિદ્ધ કરે છે. ભગવાન્ વિરુદ્ધ સર્વ ધર્મનો આશ્રય છે, તેથી તેમને શ્રમ નથી પણ હોતો, પરંતુ ભગવાન્ માત્ર શ્રમરહિત જ છે એમ નથી. કેટલાક કહે છે કે આ શ્રમ સુખ કરનારો છે. આવા શ્રમના સંબંધવાળી કાંતિ તે શ્રમની કાંતિ. (શ્રમ સુખ કરનારો છે એ મત પ્રમાણે આમ કહેવામાં આવ્યું છે.) નાયકમાં રહેલી શ્રમની કાંતિ સ્ત્રીઓનું હિત કરનારી નથી હોતી, છતાં પણ અમારું તો હિત કરનારી જ થઈ એમ દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘દશીનામુત્સવમુત્રયન્’, દષ્ટિને ઉત્સવ કરતા ભગવાન્. ‘દશિ’ એટલે દર્શન. જો ભગવાન્ થાકી ગયા ન હોય તો તે જલદીથી પધારી જાય, અને તેથી દષ્ટિનો પરમાનંદ, દર્શનથી થએલો પરમાનંદ, ટકી રહે નહિ. (અહિં ‘નેત્રાણામ્’, નેત્રોનો, એ પદ અધ્યાહાર છે. અર્થાત્ મૂલ શ્લોકમાં ‘દર્શનના સંબંધવાળો નેત્રોનો ઉત્સવ’ કહેવામાં આવેલો છે. ભગવાનનાં દર્શનથી ગોપીજનોને પરમાનંદ થાય છે. ભગવાન્ જલદીથી પોતાના ધામમાં પધારી જાય તો એ પરમાનંદ વધારે સમય ટકી ન રહે; પરંતુ ભગવાન્ શ્રમવાળા હોવાથી ધીરે ધીરે પધારે તો પરમાનંદ લાંબો સમય ટકી રહે. આ રીતે શ્રમવાળી કાંતિ પણ ગોપીજનોનું હિત કરનારી છે.) સંઘાતમાં દર્શનનો જે આનંદ જેટલો છે તેનાથી પણ અધિક આનંદ ભગવાને કર્યો એ દર્શાવવા ગોપીજન કહે છે કે ‘ઉત્ત્રયન્, ઊર્ધ્વમ્’ ઊંચે ‘નયન્’ લઈ જતા.

ભગવાનની કીર્તિ સર્વ પુરુષાર્થો આપનારી છે એ જણાવવા પ્રકાર દર્શાવતાં ‘ખુરજશ્ચુરિસ્રક્’ એ શબ્દોથી ગોપીજન પ્રભુનો શ્રમ યોગ્ય છે એમ જણાવે છે. (કીર્તિરૂપ માલામાં સર્વ પુરુષાર્થ કહેવાના છે; તેથી માલામાં પુરુષાર્થ રાખી ભગવાન્ તે પુરુષાર્થનું દાન કરે છે એમ તાત્પર્ય છે. ભગવાન્ માલામાં પુરુષાર્થ રાખે છે તે પુરુષાર્થવાળી લીલાનો અનુભવ કરાવવા રાખે છે. ભગવાનને શ્રમ ન હોય તો તે જલદી પધારી જાય, એટલે તેવો અનુભવ ન થાય; તેથી ભગવાનને શ્રમ છે તે યોગ્ય જ છે. આ તાત્પર્યથી શ્રીમહાપ્રભુજી શ્રમનું સમર્થન કરે છે.) ગાયોની ખરીઓથી ઉડેલી રજથી છવાઈ ગએલી છે માલાઓ જેમની એવા ભગવાન્ છે. (ગયા યુગલમાં માલાઓ બહુ પ્રકારની કહેવામાં આવેલી છે, તેથી અહિં ‘માલા:’, માલાઓ, એમ બહુવચનનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલો છે.) વાયુથી ઉડેલી રજ સ્થિર હોતી નથી, તેમ જ એક જ સ્થલે રહેનારી હોતી નથી; પણ ખરીઓથી ઉડેલી રજ તો તેવી-સ્થિર અને એક સ્થલે રહેનારી-હોય છે. ખરીઓ જ ગાય છે, (ખરીઓ જ ગાયોને બીજા પદાર્થોથી જુદી પાડીને ઓળખાવનાર છે), અને ગાયોનો જ પ્રસંગ ચાલતો હોવાથી શ્લોકમાં ‘ગાય’ પદ મૂકવામાં આવ્યું નથી. (અર્થાત્ ‘ખુરજ:’ ઈત્યાદિ જ કહેવામાં આવ્યું છે, ‘ગોખુરજ:’ એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું નથી.) વળી ‘પશુઓ, ખરેખર, એક ખરીવાળાં છે’ એ શ્રુતિમાં આવો જ નિર્ણય-ખરી એ જ ગાયોનો અસાધારણ ધર્મ છે એવો જ નિર્ણય-કરવામાં આવેલો છે. આથી-ગાયો કહેવામાં આવી તેથી-એમ જણાવવામાં આવ્યું કે આ ખરી ધર્મ છે. (ગાય ધર્મ છે, ખરી એ ગાયનો અસાધારણ ધર્મ હોવાથી ગાયના અર્થમાં વપરાય છે, એટલે ખરી એ ધર્મ છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે.) રજ અર્થ છે. છવાઈ જવું એ કામ છે. ભગવાનને વ્રજમાં પધારવાનું જે પ્રયોજન છે તે દર્શાવતાં ગોપીજન કહે છે કે મિત્રોને-બધાય સંબંધીઓને-બધાય મોક્ષરૂપ આશીર્વાદો આપવાના છે. આ પ્રમાણે એમ કહેવામાં આવ્યું કે ગોપીજનો દ્વારા બધામાં આનંદનો પ્રવેશ થશે. ‘એષ:’, આ, આવા પ્રકારના ભગવાન્ એમ ગોપીજનો ભગવાનને દેખાડીને કહે છે, કારણ કે ભગવાને પોતાની અંદર લીલા જણાવેલી છે.

સામાન્ય રીતે બધાના તાપનો નાશ થાય તે માટે ભગવાનમાં રહેલો અસાધારણ ધર્મ ‘દેવીકીજઠરભૂરુડરાજ:’, દેવકીના જઠરમાંથી ઉત્પન્ન થયેલો ચંદ્ર, એ શબ્દોમાં ગોપીજન કહે છે. ‘અદિતિ દેવકી છે, અદિતિ આકાશ છે, અદિતિ અંતરિક્ષ છે’ એ શ્રુતિ પ્રમાણે દેવકી અદિતિનો અવતાર હોવાથી આકાશરૂપ છે. તેમાં ચંદ્રના ઉદયની અવશ્ય જરૂર છે જ. વળી, દેવકીએ વિશિષ્ટ પ્રકારનું રૂપ ધારણ કર્યું

તેથી (તેમાં ઉદય પામેલો) ચંદ્ર પણ વિશિષ્ટ, ઉત્તમ કાર્ય કરે છે. તાપ લૌકિક-ગરમીથી ઉત્પન્ન થનારો-છે; અને ભગવાનના વિરલથી થનારો તપ ત્રણ પ્રકારનો છે. (ભગવાનના વિરલથી થએલો તાપ (૧) આધિભૌતિક, દેહમાં રહેલો, (૨) આધ્યાત્મિક, ઈન્દ્રિયમાં રહેલો, (૩) અને આધિદૈવિક, આત્મામાં રહેલો-એમ ત્રણ પ્રકારનો છે.) આ ભગવદ્રૂપ ચંદ્ર ત્રણેય તાપનો નાશ કરે છે. (જ્યારે લૌકિક ચંદ્ર ફક્ત લૌકિક તાપનો જ નાશ કરે છે.) તેથી આનંદ આપવાનું ભગવાનનું કાર્ય જે પહેલાં કહેવામાં આવેલું છે તે યોગ્ય છે એમ સિદ્ધ થાય છે. દેવકીના જઠરમાં રહે તે 'દેવકીજઠરભૂઃ'. તે જ ઉદુરાજ-નક્ષત્રોનો રાજા ચંદ્ર-છે. જેમ ચંદ્ર ઉદયગિરિ ઉપર ઉદય પામે છે, પરંતુ પતિ તો નક્ષત્રોનો જ થાય છે, તેમ ભગવાન દેવકીમાંથી પ્રકટ થયા છે, પરંતુ આપણને જ-ગોપીઓને જ-સુખ આપે છે. આ બધું કાર્ય વેણુનાદથી સિદ્ધ થાય છે એમ વેણુનાદના પ્રકરણ ઉપરથી જાણવું.

(અથવા તો આ યુગલનો અર્થ આ પ્રમાણે કરવો એમ શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી આજ્ઞા કરે છે.) આ ગોપીજનો તો ભગવાનના વિરલથી પીડાએલાં છે; તેથી પોતાના ઈચ્છેલા પ્રકારથી ભગવાનના અંગના સંગ વિના આમને-ગોપીજનોને-ઉત્સવ થતો નથી; તેથી તે દુઃખી જ રહેલાં છે. પરંતુ ચક્ષુઓને દર્શન મુખ્ય છે તેથી દર્શનથી જ ઉત્સવ કરવાનું કહેવામાં આવે છે. આ પ્રમાણે 'આર્તાનામ્' અમો દુઃખીઓની 'દશીનામ્' દષ્ટિઓનો ઉત્સવ એમ સમાસ છે એમ જાણવું. (શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી 'આર્તદશીનામ્' એવો પાઠ સ્વીકારતા હોય એમ જણાય છે.) 'આર્તા'ને બદલે જે હ્રસ્વ સ્વરવાળો 'આર્ત' શબ્દ વાપરવામાં આવ્યો છે તે પણ વૈદિક પ્રયોગ છે.

અહિં ફક્ત દષ્ટિઓ જ પીડાએલી છે એવું તાત્પર્ય નથી, કારણકે સ્વામિનીઓ બીજે પ્રકારે પણ ભગવાનના સ્વરૂપના રસનો સ્વાદ લેનારી હોવાથી તેમની-સ્વામિનીઓની બધીય ઈન્દ્રિયો પીડિત થાય એ સંભવે છે. તે જ સમયે-ભગવાન દષ્ટિને ઉત્સવ કરતાં વનમાંથી પધારે છે તે જ સમયે-જો બધીય ઈન્દ્રિયોને ઉત્સવ થાય તો પછી જે આશિષો આપવાની છે તેની ઈચ્છા ગોપીજનોને ન રહે અને તેથી આગળ આશિષો આપવાની ઈચ્છાનું જે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે ઘટી શકે નહિ.

દષ્ટિનો ઉત્સવ બહારથી થાય છે. અંદરનો ઉત્સવ તો મનમાં થાય છે. મન તૃપ્ત થએલું ન હોવાથી અંદરનો ઉત્સવ આ સમયે થતો નથી, પરંતુ ભવિષ્યમાં સંભોગ સમયે ભગવાનનાં દર્શન થશે ત્યારે તે-અંદરનો ઉત્સવ થશે એમ જણાવવા 'ઉત્ત્રપન્' પદમાં 'ઊર્ધ્વમ્' ઉંચે એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. 'દર્શનની ઈચ્છા જેમની દષ્ટિને છે એવી અને એકત્ર થએલી ગોપીઓ ભગવાનની આસપાસ ફરી



વળી', (ભાગ. ૧૦|૧૨|૪૨) એ શ્લોકમાં જેમ ગોપીજનોને ભગવાનનાં દર્શન થયા પછી પણ તેમની દષ્ટિ ભગવાનનાં દર્શન કરવાની ઈચ્છાવાળી જ રહી, તેમ અહિં પણ જાણવું. તેથી જ દષ્ટિનો (ઉત્સવ) એ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. 'દશીનામુત્સવમ્' એમાં 'દશીનામ્' એ પદમાં સંબંધના અર્થમાં છટ્ટી વિભક્તિનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે એમ માનવામાં આવે તો પણ ઉત્સવ દષ્ટિના સંબંધવાળો જ થાય છે. તેમાં પણ આ ઉત્સવ ભગવાને કરેલો છે એમ કહેવામાં આવેલું હોવાથી તે ગોપીજનોનો બહારનો ઉત્સવ પણ પ્રિય ભગવાને કરાવેલો છે, એટલે ભગવાનના દર્શનના સ્વભાવથી ઉત્સવ થએલો છે, પરંતુ સ્વતઃ થએલો નથી એમ જણાવવામાં આવે છે. તેથી જ શ્રમની કાંતિ પણ ઉત્સવનું સાધન બને છે એ વાત ઘટે છે. જો આ પ્રમાણે ન હોય તો લાંબા સમય સુધી ભગવાનના આગમનની ઉત્કંઠાવાળી આ ગોપીજનોને, પ્રિયતમ ભગવાનને થએલો શ્રમ જોઈને ભવિષ્યમાં (શ્રમને લીધે) રસ પ્રાપ્ત કરવામાં પ્રતિબંધ થશે એવા ભયથી, ઉત્સવ થાય નહિ, પરંતુ પહેલાના કરતાં વધારે ખેદ જ થાય. વળી, 'આપણા-ગોપીજનના-વિના બીજા કોઈની પાસે પ્રિયતમ ભગવાન પોતાનો શ્રમ દૂર કરાવતા નથી, હવે આપણે તેમનો શ્રમ ઉતારીશું'-આવા વિચારથી શ્રમવાળી કાંતિ ઉત્સવ કરનારી થાય છે એ વાત યોગ્ય જ છે. શ્રમની કાંતિ એ પ્રમાણે વર્ણન કરવામાં આવેલું છે, તેથી પણ સૂચવાય છે કે પોતાના-ગોપીજનોના-મનોરથમાં તે-શ્રમની કાંતિ-અડચણ કરનારી ન હોવાથી ઉત્સવ કરાવનારી છે.

અરે! ભગવાનનો શ્રમ પણ બીજી નાયિકાના સંબંધવાળો હોય તો તે શ્રમ ગોપીજનોની દષ્ટિને કેવી રીતે ઉત્સવ કરાવે? આ પ્રમાણે જો શંકા થાય તો ગોપીજન 'ખુરજજ્જુરિતસ્રક્', ખરીઓની રજથી છવાઈ ગએલી માલાવાળા ભગવાન, એ શબ્દોમાં કહે છે કે ના, તે પ્રમાણે નથી. જો ભગવાનનો શ્રમ બીજી નાયિકાના સંબંધવાળો હોત તો ભગવાનની માલા ઉપર અંગરાગ-શરીર ઉપર લગાડેલો પદાર્થ-જ હોત, પણ ગાયોની ખરીઓની રજ ન હોત. રજ પણ ભગવાન વનમાંથી પધારે છે તે સમયની હોય તો તેમ-શ્રમ બીજી નાયિકાના સંબંધવાળો છે તેમ-પણ સંભવે, પણ આ રજ લાંબા સમયની છે એમ જણાવવા 'જુરિત', છવાઈ રહેલું, એમ કહેવામાં આવેલું છે, કારણ કે થોડા સમયમાં રજ માલા ઉપર બધે છવાઈ રહે એ સંભવતું નથી. વળી, જો રજ બીજી નાયિકાના સંબંધવાળી હોય તો માલા પણ ન હોત, કારણ કે માલા ક્રીડામાં વિઘ્ન કરનારી છે. તેથી એમ જણાય છે કે ભગવાન આપણા મિત્રોને આશિષો આપવા પધારે છે.

‘એતિ’, ભગવાન્ પધારે છે, એ પધારવાની ક્રિયાનું કર્મ કહેવામાં નથી આવ્યું, તેથી પણ તેમ-આપણને આશીષ આપવા પધારે છે તેમ-જણાવવામાં આવે છે. અહિં આ ભાવ છે. કર્તાને જે વધારે ઈષ્ટ હોય તે કર્મ. તેથી અહિં ભગવાન્ કર્તા હોવાથી તેમને સર્વથી ઈષ્ટ આપણે જ છીએ, બીજું કોઈ નથી. આમ જો ન હોય તો ‘વ્રજમેતિ’, વ્રજમાં પધારે છે, એમ કહેત. જો કે ભગવાને તો બધાયનો નિરોધ કરવા ઈચ્છેલો છે, તેથી વ્રજ પણ તેમને ઈષ્ટ છે, છતાં પણ ‘વધારે ઈષ્ટ હોવારૂપી’ વિશેષતા-ઉત્તમતા-તો આપણામાં જ છે, તેથી તે પ્રમાણે-અમને આશીષો આપવા ભગવાન્ પધારે છે એ પ્રમાણે-કહેવામાં આવ્યું છે. તેનો દાખલો જ ગોપીજન ‘એષઃ’ એ પ્રમાણે આપે છે. આમ જો ન હોત-આપણે ભગવાનને ઘણાં જ ઈષ્ટ ન હોત-તો ભગવાન્ આપણને દર્શન કેમ આપત?

ભગવાન્ દક્ષિણ નાયક હોવાથી તેમના અંદરના ભાવમાં વિષમતા નથી એમ જણાવવા ગોપીજન કહે છે કે ‘દેવકીજઠરભૂઃ’, દેવકીના જઠરમાં રહેલા એવા ભગવાન્. દેવકી, ખરેખર, સર્વ રીતે દોષરહિત છે; તેમના ઉદરમાં પ્રકટ થએલા ભગવાન્ પણ દોષરહિત છે એમ અર્થ છે. આવા વિષમતા-ભેદ ભાવ-વિનાના ભગવાન્ તમારા ઉપર શું વિશેષ કરે? આવી શંકા થતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘ઉદુરાજઃ’ ભગવાન્ ચંદ્ર છે. જેમ ચંદ્ર દૂરથી જ બધાનો તાપ હરે છે, પરંતુ પતિ તરીકે પાસે રહીને નક્ષત્રોનો જ તાપ હરે છે, તેમ આ ભગવાન્ પણ દૂરથી જ સર્વનો તાપ હરે છે, પરંતુ પતિ તરીકે આપણા-ગોપીજનના-જ તાપ હરે છે; આ પ્રકારે અમારા ઉપર ઘણો વિશેષ-અતિ કૃપા-થાય છે. જેમ ચંદ્ર નક્ષત્રોના મંડલમાં રહીને તેમનાથી જ પ્રકાશતો તેમના સર્વ તાપ દૂર કરે છે, તેમ આ ભગવાન્ પણ આપણા મંડલમાં રહીને આપણાથી જ પ્રકાશતા આપણો તાપ દૂર કરે છે એમ ‘ઉદુરાજ’ પદથી જણાય છે. ૨૨-૨૩.

સાધારણ લીલા કહીને, ગોપીજનોમાં જ વેણુએ કરેલી અને ભગવાને જ ઉત્પન્ન કરેલી લીલા ‘મદ’ એ યુગલમાં ગોપીજન કહે છે:

મદવિઘ્નિર્ણિતલોચન ઈષન્માનદઃ સ્વસુહૃદાં વનમાલી ।

બદરપાણુવદનો મૃદ્ગણ્ડં મણ્ડયન્ કનકુણ્ડલલક્ષ્મ્યા ॥૨૪॥

યદુપતિદ્વિરદરાજવિહારો યામિનીપતિરિવૈષ દિનાન્તે ।

મુદિતવક્ત્ર ઉપયાતિ દુરન્તં મોચયન્ વ્રજગવાં દિનતાપમ્ ॥૨૫॥

મદથી ઘેરાએલાં લોચનવાળા, પોતાના મિત્રોને અલ્પ માન આપનાર, વનમાલા ધારણ કરનાર, બોરના જેવા પીળા વદનવાળા, સવુર્ણના કુંડલની કાંતિથી

મૃદુ ગાલને શોભાવતા, ગજરાજ જેવા વિહારવાળા અને આનંદિત મુખવાળા આ યદુપતિ દિવસના અંતે વ્રજ અને ગાયોના દિવસના અંત વિનાના તાપને દૂર કરતા, રાત્રીના પતિની પેઠે પાસે પધારે છે. ૨૪-૨૫.

આનંદિત મુખવાળા યદુપતિ પાસે પધારે છે એમ શ્લોકમાં પદોનો સંબંધ છે. પહેલાં વર્ણવવામાં આવેલા જ વેણુનાદો અહિં સમજવાના છે. (વેણુનાદે બીજાંઓમાં જે અસર કરી તે પહેલાં કહેવામાં આવેલી છે, અહિં તો તેણે ગોપીજનો માં જે અસર કરી તે જ કહેવામાં આવે છે, આટલો તક્ષાવત છે.) પહેલાં ભગવાનની દશ લીલાઓનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે; તે બધી ભગવાને આપણા માટે જ કરી છે એમ જણાવવા ગોપીજન ભગવાનનું દશ પ્રકારે વર્ણન કરે છે. બંને સ્થલે-ગયા યુગલમાં અને આ યુગલમાં-ભગવાન એક જ છે, તેથી આ યુગલ જુદું હોવા છતાં તેમાં બહુ ભેદ નથી. ‘ભગવાન જ જાણે છે, અને હરિ જાણે છે જ’ એમાં જેવો ભેદ છે તેટલો જ ભેદ અહિં છે એમ તાત્પર્ય છે.) (હવે ભગવાને કરેલી સર્વ લીલાઓ ગોપીજન માટે કરેલી છે એમ દર્શાવતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે વેણુનાદમાં બધેય સ્થલે રજોગુણ મુખ્ય હેતુ છે, તેથી તે અમારે માટે જ ફળ્યો છે એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘મદવિઘ્નિર્ણિતલોચન:’, મદથી ઘેરાએલાં છે નેત્રો જેમનાં એવા ભગવાન છે. (રજોગુણ એટલે ઉદ્દીપન થએલો રસનો ભાવ. જ્યારે તે રસભાવ ઉદ્દીપ્ત થાય ત્યારે જ તે વેણુનાદ થાય છે. તે નાદ અમારા માટે ફળેલો છે તેથી તેનું કાર્ય પણ અમારા માટે જ થએલું છે, બીજાને તો પ્રાસંગિક ફલ મળે છે એમ તાત્પર્ય છે.)

(૧) પહેલું વિશેષણ ‘મદવિઘ્નિર્ણિતલોચન:’ છે. મદથી ઘેરાએલાં છે નેત્રો જેમનાં તેવા ભગવાન છે. અહિં મદ એટલે પોતાનામાં પહેલાં અનુભવેલો આનંદ રહેલો હોવાથી થતું પૂર્ણજ્ઞાન. (અહિં રજોગુણ અને પૂર્ણજ્ઞાન એક જ છે એમ જાણવું. શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી મદનો બીજો અર્થ આપતાં આજ્ઞા કરે છે કે મદ એટલે ઘણો જ કામભાવ.) તે જ્ઞાનમાર્ગમાં-નેત્રોમાં-જ થાય એમ પ્રકટ કરવા, સર્વ વિષયોને દૂર રાખવાને-મદ વિનાના રાખવાને-માટે ‘ઘેરાએલાં લોચનવાળા’ એમ કહેવામાં આવ્યું છે. આ ભગવાનમાં રહેલો ધર્મ જણાવવામાં આવ્યો છે. (પહેલાં અનુભવેલા જુદી જુદી નાયિકાઓ સાથેના જુદા જુદા વિલાસોના સ્મરણની પરંપરાથી ઉત્પન્ન થએલા આનંદના સમૂહના અનુભવને ‘પૂર્ણજ્ઞાન’ કહેવામાં આવ્યું છે. તે બીજા બધાને ભૂલાવે છે તેથી મદરૂપ છે. તેવો મદ જેમ તમારામાં-ગોપીજનોમાં-છે તેમ મારામાં પણ છે. તમારી સાથેના સંબંધનું સ્મરણ થવાથી જ વનમાં પણ મને આનંદ થાય છે, પરંતુ બીજી નાયિકા સાથેની ક્રિયાથી તો આનંદ થતો નથી એમ જણાવવા જ્ઞાન પ્રાપ્ત

કરાવનાર નયનોમાં જ ભગવાન્ મદ દેખાડે છે. જ્ઞાન પણ ફક્ત તમારા વિષેનું જ છે, બીજા કોઈના વિષેનું નથી એમ જણાવવા લોચનો ‘ઘેરાએલાં’ છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. આમાં લોચનો બહાર પ્રસરતાં નહિ હોવાથી તેઓ ઘેરાએલાં છે એમ કહ્યું છે.)

(૨) ભગવાનનું બીજું વિશેષણ ‘ઈષન્માનદઃ’, અલ્પ માન આપનાર, એ છે. આવા-ઉપર જણાવેલા-ભગવાન્ પણ સ્વરૂપ ટકી રહે તે માટે અલ્પ માન આપનાર થાય છે, અર્થાત્ માન આપે છે. ભગવાન્ સન્માન કરે છે, તેથી એમ જણાય છે કે આપણાથી તેમની પાસે જઈ શકાય તેવા છે. (ભગવાનની પાસે જઈ શકાય છે કારણ કે તે આપણું સન્માન કરે છે; હમણાં જ આપણે-ગોપીજનો-ત્યાં જતાં નથી તેનું કારણ એ કે તે અલ્પ જ સન્માન કરે છે. આ પ્રમાણે સૂક્ષ્મ ભેદ છે.) અથવા માન એટલે અભિમાન. રજોગુણ-ઉદ્દીપન થએલો રસભાવ-પ્રકટ થવાથી ભગવાન્ આપણને-ગોપીજનને-અભિમાન આપે છે, અભિમાન કરાવે છે; અથવા તો આપણા અભિમાનનો નાશ કરે છે. અર્થાત્ રજોગુણ-મદ-જ્ઞાનમાં (નેત્રમાં) પ્રકટ થવાથી ભગવાન્ ગોપીજનને અભિમાન કરાવે છે, અથવા તો તેમના અભિમાનનો નાશ કરે છે. આ ત્રણેય પક્ષમાં ભગવાન્ તે તે કાર્ય અલ્પ જ કરે છે. ((૧) ભગવાનમાં જેમને ઘણો જ પ્રેમ હોય, અને તેમાં પણ દિવસે ભગવાનના વિરહથી દુઃખી થએલાં હોય એવાં ગોપીજનોને સાંજે ભગવાનનાં દર્શન થાય ત્યારે ભગવાનમાં જ તેમનો પ્રવેશ થઈ જાય; આ પ્રમાણે ન થાય તે માટે ભગવાન્ તેમને-ગોપીજનોને-અલ્પ જ માન આપે છે. જેટલા માનથી ગોપીજનોની સ્થિતિ જુદી રહે અને ભગવાનમાં તેમનો પ્રવેશ ન થઈ જાય તેટલું જ માન ભગવાન્ તેમને આપે છે. આ હેતુથી શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે ‘સ્વરૂપસ્થિત્યર્થમ્’ ઈત્યાદિ. અથવા તો (૨) આટલા સમય સુધી ભગવાન્ છૂટા, જુદા, રહ્યા તેવા જ્ઞાનથી ગોપીજનને માન થાય એ સંભવે છે, છતાં પણ ‘ભગવાન્ મારી સાથેના સંબંધનું જ સ્મરણ કરતા હતા’ ઈત્યાદિ ઉપર જણાવેલી બાબતોના જ્ઞાનથી ગોપીજનોને અલ્પ જ માન થાય છે. તેથી ભગવાનને ‘ઈષન્માનદઃ’ કહેવામાં આવ્યા છે. અથવા તો (૩) ઉપર જણાવેલી બાબત જણાવીને ભગવાન્ ગોપીજનના થોડા જ માનનો નાશ કરે છે એમ અર્થ છે. આ પ્રમાણે અહિં ત્રણ પક્ષો કહેવામાં આવ્યા છે:- (૧) સન્માન આપવું, (૨) અભિમાન આપવું, અને (૩) અભિમાનનું ખંડન કરવું. ભગવાનના સ્વરૂપથી જેમને આસ્વાસન મળેલું છે તેવાં ગોપીજનોને ભગવાન્ પોતાનાં સ્મિત, દષ્ટિ વિગેરેથી આસ્વાસન આપે તે અલ્પ જ સન્માન છે. સ્વરૂપ ફક્ત જુદું રહે એ અલ્પ માન છે. જે પૂર્ણ પ્રેમવાળાં છે તેમના સર્વ માનનું ખંડન કરવામાં આવે તો તેઓ પૂર્ણ

પ્રેમવાળાં હોવાથી લોક વિગેરેની તેમને દરકાર ન રહે અને તેથી તેઓ તે જ સમયે પોતાને યોગ્ય સર્વ કાર્ય કરે, (દેહનો પણ ત્યાગ કરે.) તેથી ભગવાન્ ગોપીજનોના એટલા જ માનનું ખંડન કરે છે કે જેથી તેઓ લોકમાં નિંદા થાય એવું કાર્ય કરે નહિ.)

અરે! પૂર્ણ ભગવાન્ તમારા પ્રતિ આમ કરે તેનું શું કારણ? આ પ્રમાણે શંકા થતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘સ્વસુહદામ્’, પોતાના મિત્રોને. ‘સ્વ’, પોતાના, એ પદથી અસાધારણપણું જણાવવામાં આવ્યું છે. તેથી આ ગોપીજનો ભગવાનનાં પોતાનાં જ મિત્રો છે. મોટાએ પણ મિત્રનું કાર્ય કરવું જોઈએ તેથી પૂર્ણ ભગવાન્ અમારા-ગોપીજનોના-પ્રતિ આવું વર્તન રાખે છે. (માન આપવાથી થતું આશ્વાસન વિગેરે કાર્ય અસાધારણ છે, અને તેથી તે પોતાના મિત્રો પ્રતિ જ પ્રકટ થાય છે. તેના અલ્પભાવથી થતું કીર્તિ પ્રકટ કરવાનું કાર્ય સાધારણ છે, અને તેથી તે સર્વ લોક પ્રતિ પ્રકટ થાય છે.)

(૩) ભગવાનનું ત્રીજું વિશેષણ ‘વનમાલી’ છે, અને તે વિશેષણ વડે ગોપીજન ભગવાનના સાધારણ કાર્યનું વર્ણન કરે છે. ભગવાન્ કીર્તિરૂપ વનમાલા પ્રકટ કરે છે, એ તેમનું સાધારણ કાર્ય છે. (આવા ભગવાને પોતાની પ્રિયાઓનું-ગોપીજનોનું-પૂર્ણ જ સન્માન કરવું જોઈએ; છતાં પણ માર્ગમાં બીજાઓ પણ જુએ, તેથી જેટલું સન્માન કરવાથી તેમને અયોગ્યતાનું ભાન ન થાય-આ અયોગ્ય થાય છે એમ ન જણાય-તેટલું જ સન્માન ભગવાન્ કરે છે. તેથી ભગવાનને ‘ઈષન્માનદઃ’, અલ્પ માન આપનાર, કહેવામાં આવેલા છે. આમ કરવાનું-અલ્પ સન્માન આપવાનું-કારણ એ કે ભગવાન્ કીર્તિવાળા છે. ભગવાન્ જો આ પ્રમાણે ન કરે-અલ્પ સન્માન આપે-તો લોકો અપકીર્તિ કરે. આ હેતુથી ભગવાનને ‘વનમાલી’, વનમાલાવાળા, કહેવામાં આવ્યા છે.)

(૪) ભગવાનનું ચોથું વિશેષણ ‘બદરવત્ પાણુવદનઃ’, બોરના જેવા પીળા વદનવાળા, છે. અહિં બોરનો અર્થ ફળ છે. તે, ખરેખર, તાપથી દરેક ક્ષણે જુદી જુદી કાંતિ ધારણ કરે છે. તેમાં પણ જ્યારે બોર અડધું પાકું હોય ત્યારે પીળા રંગનું હોય છે. પછી તે જરા લાલ થાય છે; તે પ્રમાણે ભગવાન્ હમણાં અડધા રમણ કરનાર છે, પરંતુ ભવિષ્યમાં ઘણા રમણ કરનાર થશે. આ પ્રમાણે ‘અલ્પ માન આપનાર’ છે, અને પછીથી પૂર્ણ માન આપનારા થશે તેથી અહિં ભેદ છે એમ તાત્પર્ય છે. ભવિષ્યમાં ભગવાન્ ઘણું રમણ કરશે, તેથી પહેલાં (૧) જે થોડું માન આપતા હતા, અથવા (૨) થોડું અભિમાન કરાવતા હતા, અથવા (૩) થોડું અભિમાનનું ખંડન કરતા હતા; તેથી ભેદ છે એમ ભાવ છે.) સાધન-હમણાં તેવી

અધિક કૃપા નહિ કરવાનું કારણ-કીર્તિ છે, તેથી વચમાં-‘ઈષન્માનદઃ સ્વસુહદામ્’ અને ‘બદરપાણુવદનઃ’ એ બે વિશેષણોની વચમાં-‘વનમાલી’ એ બીજું વિશેષણ મૂકવામાં આવેલું છે. અથવા તો અહિં ‘પાણુ’ શબ્દથી ‘અલ્પ રક્ત ગુણ’ જ કહેવામાં આવેલો છે. ‘પાણુ’ શબ્દનો જ્યારે આ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં આવે ત્યારે વદનના, વક્રના, અધરામૃતનું પાન થાય છે એમ જણાવવામાં આવે છે. (વક્ર એટલે ‘મુખની અંદર રહેલો અધર’ એવો અર્થ છે. અધર જરા લાલ હોવાથી, અનુરાગ-પ્રેમ-થાય ત્યારે જ તેમાં રહેલા અમૃતનું પાન થાય એમ જણાવવામાં આવ્યું છે.) અથવા તો વનવાસીઓએ આ અધરામૃત ઉપભોગ કરવા જેવું હોવાથી, વનમાં જઈને આનો ઉપભોગ કરવો એમ આ ગોપીજનો બીજાં બધાં ગોપીજનોને જણાવે છે. (વદન, વક્ર=અધર, બોરના જેવું હોવાથી, અને બોર વનમાં ઉત્પન્ન થતું હોવાથી આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે.)

(૫) ભગવાનનું પાંચમું વિશેષણ ‘કનકકુણ્ડલલક્ષ્મ્યા મૃદ્ગુણું માણ્યન’, સુવર્ણના કુંડલની કાંતિથી મૃદ્ગ ગાલને શોભાવતા, એ છે. આ વિશેષણથી ગોપીજનો તેથી પણ વિશેષ કહે છે. (પોતાને માટે ભગવાન પધારે છે એવો નિશ્ચય પોતાના રજોગુણનું ઉદ્દીપન થવાથી કહેવામાં આવ્યો છે. માથાને હલાવવું વિગેરે કહેવામાં આવેલું હોવાથી એ નિશ્ચય વધારે દઢ થાય છે એમ જણાવવામાં આવ્યું.) ભગવાનના ગાલ ઉપર દાઢી ઉગેલી નહિ હોવાથી અને તે આનંદનું સ્થાન હોવાથી ભોગને માટે-અમુક રસનો અનુભવ થઈ શકે તે માટે-મૃદ્ગતાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે ગાલમાં જ રસની સમાપ્તિ થાય છે. (જે રસનો અનુભવ કરવાનો છે તે આ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલો છે. ‘દાઢી નહિ ઉગેલા ભગવાન સાકરવાળા ઉકળેલા દૂધ જેવા છે; પછી દાઢી ઉગેલા ભગવાન મીઠું અને પાણીવાળી છાશ જેવા છે; પછી ઘોળી દાઢીવાળા ભગવાન ઉકળતા ગુગળની માફક ઉદ્ભેગ કરનારા છે’. આ ત્રણ ભાવો હરિણીના જેવાં નેત્રવાળી સ્ત્રીઓના પ્રિયતમને વિષે થાય છે.) ‘કનક’ શબ્દ બીજો રંગ જણાવવાને માટે વાપરવામાં આવ્યો છે. (ભગવાનના ગાલનો રંગ શ્યામ છે, અને સુવર્ણનો રંગ પીળો છે.) ઉત્તમ પરમાનંદે પણ આપણા માટે કામરસને જાગૃત કરેલો છે, તેથી એવો નિશ્ચય થાય છે કે ભગવાન સર્વથા આપણા માટે જ પધારે છે, કારણ કે જો તેમ ન હોત તો આપણી સમક્ષ માથામાં ફેરફાર ન કરત. (ભગવાન ભક્તિરૂપ ગાલ ઉપર સુવર્ણની કાંતિ યોજે છે તેથી તે ઉત્તમ છે. સુવર્ણ માટે બધા ઈચ્છા કરે છે તેથી તે કામરૂપ છે. બંને ગાલ ઉપર કુંડલની કાંતિ સ્થાપવી-અર્થાત્ કુંડલો પહેરવાં-તે માથું હલાવવાથી જ થાય છે એમ તાત્પર્ય છે.)

(૬) (ભગવાનનું છટું વિશેષણ ‘યદુપતિઃ’ છે.) અરે! ભગવાન્ જો કે મોટા છે, છતાં પણ બાલક છે, નંદના પુત્ર છે, તો પછી આવી અસાધારણ લીલા કેવી રીતે કરશે? આ શંકાનું નિવારણ કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘યદુપતિઃ’. આ ભગવાન્ યાદવોના પતિ છે, અને યાદવો ઘણી પત્નીવાળા હોય છે.

(૭) (ભગવાનનું સાતમું વિશેષણ ‘દ્વિરદરાજવિહારઃ’ છે.) ભગવાનની લીલા મર્યાદા વિનાની છે એમ જણાવવા ગોપીજન કહે છે કે ‘દ્વિરદરાજવિહારઃ’, ગજરાજ જેવા વિહારવાળા ભગવાન્ છે. મહા સુરતમાં-રમણમાં-ભગવાન્ ગજરાજના જેવા મોટા છે, કારણ કે તેના વિના લીલામાં પૂર્ણતા થતી નથી.

(૮) (ભગવાનનું આઠમું વિશેષણ ‘યામિનીપતિરિવ’ છે.) ગજરાજના કરતાં પણ ભગવાન્ અધિક છે, કારણ કે તે આરંભમાં પહેલાંના તાપને દૂર કરશે એમ જણાવતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘યામિનીપતિરિવ’, રાત્રીના પતિની પેઠે. (પહેલાંનો તાપ દૂર કરવાનો ગુણ ગજરાજમાં નથી, જ્યારે ભગવાનમાં છે, તેથી ભગવાન્ ગજરાજના કરતાં અધિક છે.) આ ભગવાન્ સંપૂર્ણ રાત્રીના પતિ છે; તેથી તેમની પાસે ગએલીઓને વિશેષ પ્રકારે-તાપ દૂર કરીને-સુખ આપનારા છે. અરે! ભગવાન્ તો દિવસના પણ પતિ છે, તો પછી તે ‘રાત્રીના પતિની પેઠે’ એમ કેમ કહેવામાં આવે છે? (ચંદ્રના દષ્ટાંતથી દિવસે સુખ આપનાર થવાય નહિ, કારણ કે ચંદ્ર દિવસે સુખ આપનારો નથી. ભગવાન્ તો દિવસે પણ સુખ આપે છે, તેથી ચંદ્રનું દષ્ટાંત કેવી રીતે ઘટે? આ પ્રમાણે શંકાનું તાત્પર્ય છે.) આ શંકાનું સમાધાન કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘એષઃ’, આ. સર્વના શૃંગારરૂપ થએલા ભગવાન્ ત્યાં રહેલા છે. હમણાં તો તે થાકી ગએલા જેવા છે. હમણાં દિવસના અંતે આ ભગવાન્ રાત્રીના પતિ-ચંદ્ર-ની માફક દૂરથી જ તાપ મટાડે છે, પણ પછી રાત્રીએ રાત્રીના પતિ જેવા થશે. ઉપર જણાવેલી શંકાનો સ્વીકાર કરીને ઉત્તર આપવામાં આવે છે. ભગવાન્ સર્વ ગોપીજનોના શૃંગારરૂપ થઈ તેમના સમૂહોમાં રહે છે. જે ભગવાન્ ગોપીજનોને ત્યજી એકલા રહેવા શક્તિવાળા નથી, ગોપીજનો પરસ્પર ભગવાનના જે ગુણો ગાય છે તેનું શ્રવણ થતાં તેઓના ભાવના અનુભવથી થતા આનંદના સમુદ્રની લહેરોથી ઘણા જ ભીંજાય છે, અને જે તેમના રસનું પોષણ કરવા દિવસે પ્રકટ થયા વિના તેમની પાસે રહે છે તે ભગવાન્ ‘આ’ છે એમ તેમને ગોપીજનો દેખાડે છે. આથી પણ ભગવાન્ તેમના આનંદને પોષે છે એમ જણાય છે. જેમ ગોપીજનો પોતાના ભાવના બલથી ભગવાનની બીજી લીલાઓ જાણે છે તેમ ભગવાનની સ્થિતિ-દિવસે ભગવાન્ અપ્રકટ તેમની વચમાં રહે છે તે સ્થિતિ-પણ જાણે છે; પણ આવું

જ્ઞાન તેમને કોઈક વાર જ થાય છે. જો હંમેશાં થતું હોય તો ગાન કરવાનો આનંદ જ તેમને થાય નહિ. અર્થાત્ ભગવાન્ દિવસે પાસે જ અપ્રકટ રહીને જુદા પ્રકારે ગોપીજનોને સુખ આપે છે; દિવસના અંતે તો પ્રકટ થઈ, ચંદ્રની પેઠે, દૂરથી જ તેમના તાપનો નાશ કરે છે. ‘યામિનીપતિ:’ એ શબ્દ જણાવે છે કે જેમ ચંદ્ર પૂરી રાત્રીનો સાક્ષાત્ ભોગ કરે છે તેમ ભગવાન્ પણ અમારો ભોગ કરશે. દિવસે ભગવાન્ અપ્રકટ રહીને ગોપીજનોને સુખ આપે છે; દિવસના અંતે ચંદ્રની પેઠે દૂરથી જ તાપનો નાશ કરે છે, અને પછી રાત્રીએ યામિનીપતિ જેવા થઈ ગજરાજની માફક વિહાર કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.)

(૯) (ભગવાનનું નવમું વિશેષણ ‘મુદિતવક્ર:’ છે.) ‘યામિનીપતિ:’ પદ ઉપર જણાવેલો અર્થ દર્શાવે છે, કારણ કે ‘મુદિતવક્ર:’, પ્રસન્ન વદનવાળા, થઈને ભગવાન્ પાસે આવે છે. (ગયા યુગલમાં ચંદ્રનું દૃષ્ટાંત કહેલું હોવાથી અહિં તે જ વાત ફરીથી કહેવામાં આવે તો પુનરુક્તિ દોષ થાય-આવી શંકા જો થાય તો તેનું સમાધાન કરતાં શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે) આ ભાવ ગોપીજનોને જ હિત કરનારો છે, તેથી પહેલાં સાધારણપણું કહેવામાં આવ્યું હતું. (ગયા યુગલમાં ‘શ્રમવાળી કાંતિવાળા’ ભગવાન્ સાધારણ રીતે સર્વના તાપનો નાશ કરે છે, પણ આ યુગલમાં વર્ણવેલા ‘આનંદિત મુખવાળા’ ભગવાન્ ખાસ કરીને આ ગોપીજનોના તાપનો જ નાશ કરે છે એમ તાત્પર્ય છે.)

(૧૦) (ભગવાનનું દસમું વિશેષણ ‘મોચયન્ વ્રજગવામ્’ છે.) ઉપસંહાર કરતાં ગોપીજન કહે છે કે ‘મોચયન્ વ્રજગવામ્’. વ્રજને અને ગાયોને આખા દિવસમાં જેટલો તાપ થયો તે બધાય તાપને ભગવાન્ દૂર કરે છે. (અહિં જે ગાયોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે થોડા સમય ઉપર જ વીઆએલી ગાયો છે, કારણ કે આવી ગાયો વનમાં ચરવા જતી નથી. એટલે દિવસના અંતે ભગવાન્ જ્યારે પાછા પધારે ત્યારે જ આવી ગાયોનો દિવસે થએલો વિરહનો તાપ દૂર કરે છે. અથવા તો ગાયો એટલે સ્વામિનીઓ. જેમ ગાયોને રાત્રે વિરહથી થએલા તાપનો દિવસે સ્વરૂપથી અને વેણુના નાદથી નાશ કરે છે, તેમ વ્રજમાં રહેનારા સર્વનો તાપ તે દૂર કરે છે, કારણ કે વ્રજમાં રહેનારા સર્વના ભગવાન જ નાથ છે, તે સર્વનું પોષણ કરનારા ભગવાન જ છે, અને તેમના પ્રાણ વિગેરે ધર્મો ભગવાનને જ અર્પીને છે. વળી, જેમ ગાયોના દેહ, પ્રાણ વિગેરેની રક્ષા માટે ભગવાન્ દિવસે તેમને વનમાં લઈ જાય છે, તેમ વ્રજમાં રહેનારાં ગોપીજનના દેહ, પ્રાણ વિગેરેનું રક્ષણ કરવા માટે તેમને રાત્રે ભગવાન્ વનમાં લઈ જાય છે. તેથી ગોપીજનો ગાયો જેવી જ છે.) ૨૪-૨૫.



આ પ્રમાણે સ્ત્રીઓના નિરોધનું વર્ણન કરીને, ઉપસંહાર કરતાં તેમની દ્વારા આ પ્રકરણવાળા બધાયના નિરોધનો ‘એવમ્’ એ શ્લોકમાં શુકદેવજી ઉપસંહાર કરે છે. (ગોપીજનો તામસ ભક્તોમાં મુખ્ય છે, એટલે તેમના નિરોધના ઉપસંહારથી બધાય તામસ ભક્તોના નિરોધનો ઉપસંહાર થયો એમ તાત્પર્ય છે.)

॥શ્રીશુક ઉવાચ॥

એવં વ્રજસ્ત્રિયો રાજન્ કૃષ્ણલીલાનુગાયતીઃ ।

રેમિરેકલઃ સુતચ્ચિત્તાઃ તન્મનસ્કા મહોદયાઃ ॥૨૬॥

શુકદેવજી કહે છે કે :- હે રાજન્! આ પ્રમાણે શ્રીકૃષ્ણની લીલાનું અનુક્રમે ગાન કરતી, તેમનામાં ચિત્તવાળી અને તેમનામાં મનવાળી મોટા ભાગ્યવાળી વ્રજની સ્ત્રીઓ દિવસોએ આનંદ કરતી હતી. ૨૬.

‘રાજન્’, હે રાજન્! એ સંબોધન પરીક્ષિત્ રાજને વિશ્વાસ રહે તે માટે કહેવામાં આવ્યું છે. વ્રજમાં રહેનારી સ્ત્રીઓ પણ આ પ્રકારે દિવસોએ-ભગવાનનો સંબંધ ન હોય તેવી સ્થિતિમાં પણ-શ્રીકૃષ્ણની લીલાનું જ, અનુક્રમે ઘણા સમય સુધી સ્મરણ રહે તે માટે, અનુક્રમે ગાન કરતી આનંદ કરતી હતી. પોતાની મેળે-ફલદાન કરીને નહિ પણ સાક્ષાત્-(ભગવાનની) આનંદરૂપ કીર્તિ, લીલાનું ગાન અથવા કીર્તન, તે સ્ત્રીઓને વિષે થઈ; તેથી તેમની ક્રિયાશક્તિ અને જ્ઞાનશક્તિ પણ ભગવાનમાં જ રહી એમ દર્શાવતાં શુકદેવજી કહે છે કે ‘તન્મનસ્કાઃ તચ્ચિત્તાઃ’ તેમનામાં મનવાળી અને તેમનામાં ચિત્તવાળી એવી સ્ત્રીઓ. ચિત્તનો મુખ્ય વિષય જ્ઞાન છે, અને મનનો મુખ્ય વિષય કર્મ છે. આ પ્રમાણે સર્વ પ્રકારથી જગતનું વિસ્મરણ અને ભગવાનમાં આસક્તિ એ બેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું.

અરે! આ સ્ત્રીઓનો નિરોધ આ પ્રકારે કેવી રીતે થયો? આ પ્રમાણે શંકા થતાં શુકદેવજી તેનું સમાધાન કરતાં કહે છે કે ‘મહોદયાઃ’. મોટો જ છે અભ્યુદય-ભાગ્યનો રાશિ-જેમનો એવાં તે ગોપીજનો છે. તેથી તેમનો નિરોધ થયો તે સર્વ યોગ્ય જ છે. ૨૬.

આ પ્રમાણે શ્રીભાગવત સુબોધિનીમાં

શ્રીમદ્વલ્લભટીક્ષિતવિરચિત દશમસ્કંધના વિવરણમાં

બીજા તામસ પ્રકરણના અવાન્તર પ્રકરણ ફલ પ્રકરણના ધર્મા નિરૂપક

૩૨ મા અધ્યાયનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.

